भारतवर्षीय

प्राचीन चरित्रकोश

(श्रुति, स्मृति, पुराण, सूत्र, वेदांग, उपनिषद्,
बौद्ध एवं जैन साहित्य में निर्दिष्ट व्यक्तियों
की साधार जानकारी प्रस्तुत करनेवाला ग्रंथ)

महामहोपाध्याय विद्यानिधि
सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव



पु र स्का र :
श्री. भक्तदर्शन
उपशिक्षामंत्री, भारत सरकार, नयी दिल्ली.



१९६४ ई. स.

भारतीय चरित्रकोश मण्डळ, पूना ४

BHARATAVARSHIYA PRACHIN CHARITRAKOSHA

(Dictionary of Ancient Indian Biography, in Hindi)

by M. M. Sidheshwar Shastri Chitrao

Published by Bharatiya Charitrakosha Mandal, Poona 4.

कापडा बांधणी रु. ८०

Price : Rs. 60/-

कापडा बांधणी रु. ८०.

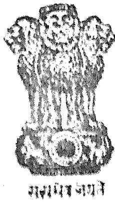
कापडा बांधणी रु. ८०.

मूल्य : रु. ६०

कापडा बांधणी रु. ८०.

प्रकाशक :
विनायक सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव,
कार्यवाह, भारतीय चरित्रकोश मंडल,
१२०६ अ/४५ जंगली महाराज पथ, पूना ४.

मुद्रक :
विद्याधर नीलकंठ पटवर्धन,
साधना प्रेस,
४३०-४३१ शनिवार पेठ, पुना २.



उपशिक्षामंत्री
भारत
DEPUTY EDUCATION MINISTER
INDIA
नयी दिल्ली-२

पुरस्कार

मुझे यह ज्ञान कर हर्ष हुआ कि भारतीय चरित्रकोश मण्डल, पूना, ने मराठी के 'प्राचीन चरित्रकोश' का हिन्दी संस्करण तैयार कर लिया है, और वह शीघ्र ही प्रकाशित हो रहा है।

मुझे ज्ञात हुआ है कि वह कोश तीस चालिस वर्ष पहले मराठी में प्रकाशित हो चुका है, और ख्याति प्राप्त कर चुका है। इसका हिन्दी संस्करण निकाल कर मण्डल ने बहुत ही सराहनीय कार्य किया है।

कोश के कुछ छपे हुए पृष्ठ मैंने देखे, और मुझे लगा कि यह कोश कई दृष्टियों से बहुत उपयोगी है। इस कोश के द्वारा पहली बार हमको एक स्थान पर अनेक पौराणिक चरित्र-नायकों की संक्षिप्त जीवनियां उपलब्ध हो जायेंगी।

इसी प्रकार के कोशों और संदर्भग्रंथों द्वारा हमको ज्ञान-विज्ञान की सामग्री सामान्य पाठकों के लिए सुलभ बनानी है। पिछले कुछ वर्षों में हिन्दी का संदर्भ-साहित्य समृद्ध हुआ है। कोशों और संदर्भ-ग्रंथों के निर्माण की इस परम्परा में मैं 'प्राचीन चरित्रकोश' का विशेष रूप से स्वागत करता हूं, और आशा करता हूं कि, मण्डल भविष्य में भी इस प्रकार के विशिष्ट कोशों और संदर्भ ग्रंथों से हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाने में योगदान देगा।

भक्तदर्शन

(भक्तदर्शन)

२०-११-६९

प्राक्कथन

आधुनिक युग वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित अनुसंधान और अनुशीलन का युग है; अतः ज्ञान का एक निश्चित युक्तिसंगत रूप ही आज हमें ग्राह्य है। ज्ञान की एक पूर्वज्ञात शृंखला से हम आज नवोपलब्ध ज्ञान की नवीन शृंखला को जोड़ते जाते हैं, और इस प्रकार सभ्यता के विकास के पथ पर हम आगे बढ़ते जाते हैं।

प्राचीन ज्ञान का कितना अंश हमारे लिए ग्राह्य है, यह भी एक विचारणीय विषय है। फिर भी ज्ञान और विद्या की अनेक शाखाएँ हैं, जिनकी सामग्री प्राचीन भारतीय साहित्य में भरी पड़ी है। परन्तु यह बात सर्वज्ञात नहीं है। अधिकांशतः तो लोग प्राचीन भारतीय ज्ञान की विविध शाखाओं से भी परिचित नहीं हैं। अतः अनेक प्रकार से उन्हें निश्चित, संक्षिप्त एवं व्यवस्थित रूप में उपलब्ध कराना प्रत्येक भारतीय विद्वान् का कार्य है।

इस दिशा में अनेक संस्थाएँ एवं व्यक्तिगत रूप में अनेक विद्वान् कार्य कर रहे हैं। पूना नगर का 'भारतीय चरित्रकोश मण्डल' ऐसी ही संस्थाओं में से एक संस्था है, जो महामहोपाध्याय श्री. सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव की अध्यक्षता में कार्य कर रही है। इस संस्था को अन्य अनेक कुशल विद्वानों का सहयोग एवं परामर्श भी प्राप्त है।

'भारतीय चरित्रकोश मण्डल' के द्वारा अभी तक मराठी में 'प्राचीन चरित्रकोश,' 'मध्ययुगीन चरित्रकोश' तथा 'अर्वाचीन चरित्रकोश' प्रकाशित हुए हैं। परन्तु ऐसे कार्य की अखिल भारतीय उपयोगिता को ध्यान में रख कर इस प्रकार के कोशों एवं और ग्रंथों को हिन्दी में भी प्रकाशित किया जाये, यह निर्णय किया गया, जिसके परिणामस्वरूप 'प्राचीन चरित्रकोश' अपने संशोधित एवं परिवर्धित रूप में हिन्दी में प्रस्तुत है।

हिन्दी के कोश-साहित्य के क्षेत्र में भी इधर कुछ वर्षों से महत्त्वपूर्ण कार्य हुआ है। इसके अन्तर्गत 'विश्वकोश' का संपादन-प्रकाशन कार्य चल रहा है। इसके अतिरिक्त 'साहित्यकोश,' 'साहित्य सारकोश,' 'पात्रकोश,' 'मानक शब्दकोश,' 'पारिभाषिक शब्दकोश' आदि प्रणीत एवं प्रकाशित हुए हैं। अन्य अनेक शब्दकोशों का भी निर्माण हुआ है; फिर भी सांस्कृतिक एवं दार्शनिक ज्ञानकोश, एवं चरित्रकोश-निर्माण के कार्य हिन्दीभाषी क्षेत्र में अभी नहीं हुए। इस प्रकार के कार्य यहाँ पूना नगर में मराठी में चल रहे हैं, और वे हिन्दी में रूपान्तरित होकर भी प्रकाशित होंगे। महामहोपाध्याय श्री. सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव-द्वारा संपादित, प्रस्तुत 'प्राचीन चरित्रकोश' द्वारा एक प्रकार से इस कार्य का श्रीगणेश हो रहा है।

जहाँ तक मुझे ज्ञात है, इस विषय को लेकर अब तक हिंदी में एक ही ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है, वह है चतुर्वेदी पंडित द्वारिकाप्रसाद शर्मा-कृत 'भारतीय चरिताम्बुधि'। यह बहुत पहले लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस से प्रकाशित हुआ था, तथा अब वह अनुपलब्ध है। उस ग्रन्थ में विवरण थे, पर संदर्भ नहीं। परंतु प्रस्तुत 'प्राचीन भारतीय चरित्रकोश' तो १२०४ पृष्ठों का एक विशालकाय परिपूर्ण चरित्रकोश है। इस कोश की विशेषता इस बात में है कि, इसके अंतर्गत प्रत्येक चरित्र एवं चरित्रगत प्रसंगों के समस्त संदर्भ भी दिये गये हैं। इसके कारण यह कोश सामान्य सूचनात्मक कोश न रह कर एक विशिष्ट प्रामाणिक ज्ञानकोश बन गया है, जिसकी संदर्भ-सामग्री अनुसंधित्सु विद्वानों के लिए उनके शोधकार्य के हेतु उपयोगी संदर्भ-संकेत प्रस्तुत करती है। मेरा अपना विचार है कि, इस दृष्टि से यह कार्य अद्वितीय उपादेयता से युक्त है। इसके लिए हिंदी संसार शास्त्रीजी का बड़ा ऋणी रहेगा।

इस मंडल के अंतर्गत दूसरे अन्य कोश ग्रंथ भी हिंदी में शीघ्र ही प्रणीत एवं प्रकाशित होनेवाले हैं, जिनमें प्रमुख हैं:— 'प्राचीन स्थलकोश' तथा 'प्राचीन ग्रंथकोश'। इन ग्रन्थों के प्रकाशित होने पर हमें प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं इतिहास-संबंधी ज्ञान सरलता से उपलब्ध हो सकेगा। अभी तक हम अपने प्राचीन इतिहास तथा संस्कृति को विदेशी आँखों या चश्मों से देखते रहे हैं; परंतु इस प्रकार के प्रामाणिक एवं निश्चित सूचना देनेवाले ग्रन्थों से हम स्वयं उसके संबंध में अनेक उपयोगी सूचनायें प्राप्त कर सकेंगे।

इन सूचनाओं तथा प्राचीन भारत की संस्कृति, साहित्य एवं इतिहास-संबंधी ज्ञान को व्यापक प्रसार देने के उद्देश्य से ही इन ग्रन्थों का प्रणयन तथा प्रकाशन किया जा रहा है। यदि विद्वानों तथा जिज्ञासुओं के द्वारा इन ग्रन्थों का स्वागत तथा उपयोग हो सका, तो हमें विशेष प्रसन्नता तथा प्रोत्साहन प्राप्त होगा, तथा 'मण्डल' अपना कार्य अधिक उत्साह से कर सकेगा। हम अपनी ओर से विद्वानों के सुझावों तथा सम्मतियों का सहर्ष स्वागत करेंगे।

पूना विश्वविद्यालय पूना ४-११-६४	**भगीरथ मिश्र** प्रधान परामर्शकार, हिंदी विभाग, भारतीय चरित्रकोश मण्डल, पूना

प्रस्तावना

इतिहासोत्तमादस्मात् जायन्ते कविबुद्धयः ।
नवीनराष्ट्रनिर्माणं संस्कृतेः प्रसरस्तथा ॥

(इतिहास के अध्ययन से मनुष्य बुद्धि प्रगल्भ हो जाती है। संस्कृति के प्रचार एवं नवीन राष्ट्र के निर्माण की प्रेरणा भी इतिहास के अध्ययन से प्राप्त होती है) ।

भूमिका——मानवीय बुद्धि को प्रगल्भ, क्रियाशील एवं उदयशील बनाने के लिए इतिहासाध्ययन जैसा अन्य कोई भी साधन नहीं है। यह तत्त्व महाभारत–रामायण-काल से ही समस्त भारतीय वाङ्मयों में दुहराया गया है। इतिहास का बाह्यावरण यद्यपि राजवंशों के नामा–वलियों अथवा रक्त की नदी बहा देनेवाली दुर्भाग्यपूर्ण लड़ाइयों के वृत्तान्त से बना है, फिर भी उसकी आत्मा संस्कृति की स्थापना एवं प्रसार से संबंध रखती है। इसी श्रद्धा से भारत के प्राचीन इतिहास के अध्ययन एवं संशोधन का कार्य स्वातंत्र्योत्तर काल में प्रारंभ हुआ है। उसी परंपरा में 'प्राचीन चरित्रकोश' को एक इतिहास ग्रंथ के रूप में हिन्दी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने में आज मुझे अपार हर्ष हो रहा है।

महाभारत में ज्ञान को चर्मचक्षु से बढ़ कर अधिक श्रेष्ठ ' चक्षु ' कहा गया है (नास्ति विद्यासमो चक्षुः म. शां. ३१६.६)। प्राचीन भारतीय इतिहास के संबंध में ऐसे ही ' चक्षु' का कार्य करने में इतिहास ग्रंथों से सहायता मिलती है। यदि इस ग्रंथ से इस कार्य की थोड़ी सी भी पूर्ति संभव हो सकी, तो मैं अपने प्रयास को कृतकृत्य समझूँगा।

प्राचीन भारतीय इतिहास——भारतीय इतिहास के पृष्ठ अत्यंत उज्वल हैं। जब इजिप्त, रोम आदि पश्चिमी सभ्यताओं का जन्म भी नहीं हुआ था, उस समय यहाँ की सभ्यता एवं संस्कृति चर्मोत्कर्ष पर थी। ईसा से हजारों वर्ष पूर्व का भारतीय इतिहास वैदिक, पौराणिक, बौद्ध एवं जैन साहित्य में उपलब्ध है। भारत का परंपरागत इतिहास चंद्रगुप्त मौर्य से प्रारंभ माना जाता है, तथा भारत का पहला साम्राट वही माना जाता है। उसके उत्तरकालीन अनेकानेक शिलालेख, ताम्रपत्र तथा अन्य साहित्य विविध रूपों में उपलब्ध हैं, जो इतिहास लेखन को सुलभ बनाते हैं। किंतु चंद्रगुप्त मौर्य के पूर्वकालीन इतिहास की सामग्री वैदिक, पौराणिक, बौद्ध एवं जैन साहित्य मात्र में ही उपलब्ध है।

इस लिए हमारे परंपरागत वेद, पुराण एवं बौद्ध-जैन आदि के धार्मिक ग्रंथ केवल धार्मिक साहित्य ही नहीं हैं, बल्कि उनमें इतिहास की भी प्रचुर उपयोगी सामग्रियाँ संचित हैं। यह तथ्य अब सभी विद्वानों द्वारा स्वीकार कर लिया गया है। उपरोक्त साहित्य में राजनीतिक, भौगोलिक एवं ऐतिहासिक ही नहीं, वरन् सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक सभी प्रकार की शोध सामग्रियाँ उपलब्ध हैं।

मैक्स मूलर, रोथ, ओल्डेनबर्ग आदि ने वैदिक साहित्य के, पार्गिटर, हाज़रा आदि ने पौराणिक साहित्य के, डॉ. रामकृष्ण भाण्डारकर, डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल आदि ने पाणिनीय व्याकरण के, एवं डॉ. राईस डेविड्स ने बौद्ध साहित्य के संबन्ध में युगप्रवर्तक संशोधन पिछली शताब्दी में किये हैं, एवं इन्हीं संशोधक विद्वानों के अथक परिश्रम के कारण इन ग्रन्थों का अद्वितीय महत्त्व भारतीय इतिहास की सामग्री के लिए सिद्ध हो चुका है।

आधुनिक दृष्टिकोण की आवश्यकता——यद्यपि प्राचीन भारतीय साहित्य में संचित सामग्री अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, फिर भी उनका विश्लेषण एवं समीक्षा आधुनिक इतिहास संशोधन की तर्कपूर्ण दृष्टि से यदि नहीं किया जाय तो उनका वर्तमान युग में कोई महत्त्व नहीं रह जाता है। इस महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त का प्रतिपादन भी उपर्युक्त विद्वानों के द्वारा ही किया गया है। इस प्रकार इन ग्रन्थों के अध्ययन का एक नया युग उपर्युक्त संशोधकों के संशोधन के कारण प्रारंभ हुआ है।

किसी भी देश का इतिहास प्रायः व्यक्ति चरित्रात्मक रहता है। इसी कारण इतिहास में निर्दिष्ट व्यक्तियों का सर्वांगीण अध्ययन करना इतिहास के अध्ययन का एक सब से अधिक लाभप्रद मार्ग है, यह तथ्य इतिहास के अध्येताओं एवं संशोधकों के बीच प्रस्थापित हो

चुका है। इसी ऐतिहासिक सामग्री को आधुनिक इतिहाससंशोधन की दृष्टि से जाँच कर, एवं इनसे संबंधित आज तक हुए महत्त्वपूर्ण शोध का यथायोग्य उपयोग कर 'प्राचीन चरित्रकोश' आज पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है। प्राचीन भारतीय व्यक्तिविषयक सामग्री को इतने व्यापक, परिपूर्ण एवं प्रामाणिक संदर्भों सहित संकलित करनेवाला भारतीय भाषाओं में यह सर्व प्रथम कोश कहा जा सकता है।

प्राचीन चरित्रकोश—इस ग्रन्थ में वेद, स्मृति, पुराण आदि प्राचीन भारतीय साहित्य में निर्दिष्ट व्यक्तियों के जीवनचरित्र, एवं तद्विषयक संदर्भसहित सामग्री अकारादि क्रम से एवं सप्रमाण प्रस्तुत की गयी हैं। इस ग्रन्थ में संग्रहित चरित्रों की संख्या लगभग बारह हजार से भी अधिक है, एवं उनमें राजा, ऋषि, रानी, ऋषि-पत्नी, देवता, पितर, नाग, सर्प, यक्ष, राक्षस, गंधर्व, किन्नर, भूत, अप्सरा, राजनीतिज्ञ, सूत्रकार, धर्मशास्त्रकार, गोत्रकार, मंत्रकार आदि विभिन्न प्रकार के चरित्रों का समावेश है। व्यक्तिचरित्रों के अतिरिक्त लोकसमूह, जातिसमूह, गणराज्य एवं देशों की जानकारी भी व्यक्तिचरित्रों का ही अंगभूत भाग मान कर दी गयी है।

कालमर्यादा—ऐतिहासिक दृष्टि से इस ग्रंथ की कालमर्यादा यद्यपि चंद्रगुप्त मौर्य तक ही सीमित है, फिर भी वेद, वेदांग एवं पुराणआदि ग्रंथ, जिनके आधार पर इस ग्रन्थ की रचना की गयी है, उनकी कालमर्यादा को ही यहाँ स्वीकार किया गया है। उदाहरणस्वरूप—मत्स्य, वायु आदि पुराणों में चंद्रगुप्त मौर्य के उत्तरालीन 'भविष्यवंशों' की दी गयी जानकारी को इस कोश में समाविष्ट किया गया है।

बौद्ध एवं जैन साहित्य—यद्यपि वेद, पुराण, महाभारत आदि को आधार मान कर इस ग्रन्थ की रचना की गयी है, फिर भी इन ग्रन्थों में अनुपलब्ध गौतम बुद्ध, वर्धमान महावीर, सिकंदर आदि व्यक्तियों, एवं उनके समकालीन अन्य लोगों की जानकारी समकालीनत्व के कारण इस ग्रन्थ के परिशिष्ट में सम्मिलित की गयी है। पौराणिक राजाओं एवं ऋषियों की जानकारी उनके वंशों के जानकारी के बिना अर्थहीन प्रतीत होती है। इसी कारण इन वंशों की सविस्तृत जानकारी भी परिशिष्ट में दी गयी है। व्यक्तियों एवं ग्रन्थों के कालनिर्णय से संबंधित एक स्वतंत्र परिशिष्ट भी अंत में जोड़ दिया गया है।

हम आशा करते हैं कि, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के प्रत्येक विद्यार्थी, जिज्ञासु, संशोधक एवं सर्वसाधारण पाठक के लिए यह ग्रन्थ अत्यधिक उपादेय सिद्ध होगा।

आभारप्रदर्शन—इस ग्रन्थ का मराठी संस्करण आज से बत्तीस वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआ था, और मराठीभाषियों के बीच अत्यंत लोकप्रिय हुआ था। मराठी में प्रकाशित 'प्राचीन चरित्रकोश' के इस परिवर्धित और परिमार्जित हिन्दी संस्करण में मूल मराठी ग्रन्थ से अधिक ५५० पृष्ठों की जानकारी दी गयी है।

भारत सरकार एवं महाराष्ट्र सरकार के शिक्षा-मंत्रालयों के आर्थिक सहयोग से ही इतने परिवर्धित रूप में यह ग्रंथ आज प्रकाशित हो सका है। इसलिए मैं उनका एवं विशेष कर केंद्रीय सरकार के हिन्दी-निदेशालय का आभारी हूँ।

भारत सरकार के उपशिक्षामंत्री माननीय श्री. भक्तदर्शन ने 'पुरस्कार' लिख कर इस ग्रंथ का गौरव बढ़ाया है, इस लिए मैं उनका अत्यंत आभारी हूँ।

इस ग्रंथ के सृजन के हर स्तरों पर भारतीय चरित्रकोश मण्डल के कार्यकारिणी के अध्यक्ष श्री. पाण्डुरङ्ग जयराव चिन्मलगुन्द, आइ. सी. एस्. एवं मण्डल के हिन्दी विभाग के प्रमुखपरामर्शकार डॉ. भगीरथ मिश्र एम. ए., पी. एच्. डी. से महत्त्वपूर्ण सहायता मिली है, जिनकी कृतज्ञता ज्ञापन करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ।

मण्डल के अन्य सदस्य श्री. के. पां. जोशी, वकील, डॉ. ग. रं. धडफले एवं श्री. वसंत अ. गाडगील का इस ग्रंथ के निर्माण में महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा है।

इस ग्रंथ के निर्माण में प्रा. गोवर्धन परीख, रेक्टर, बम्बई विश्वविद्यालय, तर्कतीर्थ श्री. लक्ष्मणशास्त्री जोशी, अध्यक्ष, महाराष्ट्रराज्य साहित्य संस्कृति मंडळ, श्री. चिं. रा. ढोंद्रे, डॉ. वा. वि. मिराशी, श्री. बा. ना. तडवलकर, एवं डॉ. ना. कृ. भिडे, नयी दिल्ली के रचनात्मक सुझाव उपयोगी रहे।

इस ग्रंथ के अनुवादकार्य में प्रा. मुधारक रामचंद्र गोलवलकर, एम. ए., राजकुमार कॉलेज, रायपुर का सहयोग उल्लेखनीय है। प्रा. चारुचन्द्र द्विवेदी, एम. ए. एवं श्री. बलिराम सिंह के योगदान भी उपयोगी रहे।

इस ग्रन्थ के पुनर्लेखन, संपादन एवं मुद्रण के कार्य में चरित्रकोश मण्डल के श्री. विनायक चित्राव, श्री. अरविंद जामखेडकर एम. ए., श्रीमती प्रिया चित्राव, बी. ए., एवं कुमारी कुंदा जामखेडकर के अथक परिश्रम के फल

स्वरूप ही यह ग्रन्थ इस रूप में आ पाया है। मैं इन सभी सहयोगियों का हृदय से आभारी हूँ।

ग्रन्थ की रूपसज्जा के लिए साधना प्रेस पूना के श्री. ह. म. गद्रे, श्री. वि. नी. पटवर्धन एवं श्री. दत्तोबा टिबे मेरे धन्यवाद के पात्र हैं।

अंत में, सन १९६१ ई. के मूठा नदी के पानशेत बाढ़ का उल्लेख कर देना अनावश्यक नहीं होगा, जिसमें भारतीय चरित्रकोश मण्डल को डेढ लाख से भी अधिक मूल्य की क्षति उठानी पड़ी। इस बाढ़ में मण्डल की दुर्लभ ग्रंथ सामग्रियों के अतिरिक्त 'प्राचीन स्थलकोश' की पाण्डुलिपि भी नष्ट हो गयी। महाराष्ट्र सरकार एवं अनेकानेक हितैषियों के सहयोग से मण्डल के पुनरुत्थान का प्रयत्न जो पिछले तीन वर्षों में हुआ है, इस ग्रंथ का प्रकाशन उसकी एक कड़ी मात्र है। निकट भविष्य में ही 'प्राचीन स्थलकोश' भी प्रकाशित होगा, ऐसी में आशा रखता हूँ। इस पुनरुत्थानकार्य में सहायता पहुँचानेवाले हर व्यक्ति का में सदैव ऋणी रहूँगा।

भारतीय चरित्रकोश मण्डल
पूना ४.
५-११-१९६४

सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव

कोश कैसे देखें ?

(१) इस कोश में वेद, उपवेद, पुराण, उपनिषद् आदि प्राचीन साहित्य में निर्दिष्ट व्यक्तियों के जीवन-चरित्र वर्णमाला के क्रम से दिये गये हैं। इन साहित्यों में निर्दिष्ट प्राचीन भारतीय इतिहास चंद्रगुप्त मौर्य के राज्यकाल तक निर्दिष्ट है। इसी कारण, प्रागैतिहासिक काल से चंद्रगुप्त मौर्य तक के व्यक्तियों के जीवनचरित्र इस कोश में दिये गये हैं। फिर भी इस कोश की काल-मर्यादा अधिकतर प्राचीन भारतीय साहित्य से संबद्ध है। इसी कारण उस साहित्य में निर्दिष्ट चंद्रगुप्त मौर्य के उत्तरकालीन कई व्यक्तियों के जीवनचरित्र भी पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट होने के कारण समाविष्ट किये गये हैं।

इसी काल में समाविष्ट होनेवाले गौतम बुद्ध, वर्धमान महावीर एवं सिकंदर के एवं उनके समकालीन व्यक्तियों के जीवनचरित्र क्रमशः परिशिष्ट १, २, ३ में दिये गये हैं (पृष्ठ १११७-११३८)।

(२) इस कोश में व्यक्तियों के जीवनचरित्र के साथ प्राचीन साहित्य में निर्दिष्ट जातिसमूह, मानवसमूह, देवता-समूह, यक्ष, राक्षस, वानर आदि के चरित्र भी सम्मिलित किये गये हैं।

(३) उपर्युक्त सभी समूहों की जानकारी उनके परि-वार एवं वंशों की जानकारी के बिना अपूर्ण सी प्रतीत होती है। इसी कारण, इन सारे समूहों के वंशों की सविस्तृत जानकारी परिशिष्ट ४,५,६ में दी गयी है (पृष्ठ ११३९-११६९)।

(४) हर एक व्यक्ति की जानकारी देते समय उसके निवासस्थान, कालनिर्णय एवं कर्तृत्व की समीक्षा पर विशेष जोर दिया गया है। इनके कालनिर्णय की जानकारी के लिए, कालनिर्णयकोश का स्वतंत्र परिशिष्ट (परिशिष्ट ७) दिया गया है, जिसमें व्यक्ति एवं काल-निर्णय के ग्रंथों के संबंध में उपलब्ध जानकारी संक्षिप्त रूप में दी गयी है (पृष्ठ ११६९-११८०)।

व्यक्तियों के कर्तृत्व का यथायोग्य मूल्यमापन करने के लिए, उनका ग्रंथकर्तृत्व, तत्त्वज्ञान, संवाद, पूर्वाचार्य, शिष्यपरंपरा, सूक्तकर्तृत्व आदि की साधनभूत जानकारी दी गयी है। जहाँ आवश्यक समझा गया वहाँ रामायण, महाभारत एवं पौराणिक साहित्य आदि मूल ग्रंथों के उद्धरण भी अर्थ के सहित दिये गये है। विशेष स्पष्टीकरण के लिए २४ तालिकाएँ भी ग्रंथ में समाविष्ट की गयी हैं, जिनकी अनुक्रमणिका ग्रंथ के आरंभ में ही प्राप्य है।

(५) जैसे पहले ही कहा जा चुका है, इस ग्रंथ में दिये गये व्यक्तिचरित्र, वर्णमाला के क्रम से दिये गये हैं। कोश के प्रायः सभी आधारभूत ग्रंथ संस्कृत भाषा के होने के कारण, इस ग्रंथ का सारा वर्णानुक्रम संस्कृता-नुसार रखा गया है। लिपि एवं अंकक्रम देवनागरी पद्धति से दिये गये हैं।

वर्णमाला के हर एक वर्गों के अक्षरों के पूर्व के अनुस्वार उसी वर्ग के अनुनासिक ही होंगे, यह मान कर व्यक्ति चरित्रों का क्रम रखा गया है। किन्तु छपाई की

सुविधा के लिए सर्वत्र अनुस्वार का प्रयोग किया गया है (उदा. 'अंग', 'विभांडक')।

य, र, ल, व, श, ष, स— इनके पहले आनेवाले अनुस्वार, तथा श, ष, स, ह इन अक्षरों के पूर्व में आनेवाले विसर्गयुक्त शब्द, हर एक वर्ण के पहले अनुस्वार एवं विसर्ग, इस क्रम से दिये गये हैं। 'क्ष' का अंतर्भाव 'क' वर्ण में, एवं ज्ञ का अंतर्भाव 'ज' वर्ण में किया गया है।

(६) व्यक्तिनामों के मूलशब्द चरित्र के प्रारंभ में मोटे अक्षरों में दिये हैं, एवं उनके पाठभेद भी वहाँ कोष्ठक में दिये गये हैं। पाठभेद जब एक से अधिक संख्या में प्राप्त है, वहाँ उनका स्वतंत्र निर्देश भी चरित्र के सर्वप्रथम परिच्छेद में दिया गया है।

(७) व्यक्तिनामों के बाद कोष्ठक में दिये गये 'सो. कुरु,' 'सो. पूरु' जैसे 'संकेत' वंश से संबंधित है, जिनका सविस्तृत स्पष्टीकरण एवं संदर्भ अंत में दिये गये परिशिष्ट ४ एवं ५ (पृष्ठ ११३९-११६५) में प्राप्त हैं।

(८) इस कोश में चरित्रों की जानकारी प्रायः माता-पिता, जन्म, शिक्षा, विवाह, कार्य, वैशिष्ट्य, परिवार, ग्रंथपरिचय, वंशावलि, गोत्रकार आदि के क्रम से दी गयी है। संबंधित प्राचीन साहित्य में प्राप्त संदर्भ वहीं के वहीं निर्दिष्ट किये गये हैं।

(९) इस ग्रंथ के चरित्र, सर्वप्रथम वैदिक सामग्री, एवं बाद में पौराणिक साहित्य में प्राप्त सामग्री पर आधारित प्रस्तुत किये गये हैं। इस प्रकार चरित्रों में प्राप्त विवरण **ऋग्वेदसंहिता, अन्य वैदिकसंहिता, उपनिषद, सूत्र, वेदांग,** वायु, ब्रह्मांड आदि प्राचीनतर पुराण, एवं पद्म, स्कंद आदि उत्तरकालीन पुराण इस क्रम से दिये गये हैं।

(१०) एक ही नाम के अनेक व्यक्तियों को उनके कालक्रम के अनुसार २,३,४ अंकों के साथ प्रस्तुत किया गया है।

(११) जानकारी एवं विवरण की पुनरावृत्ति से बचने के लिए अथवा परस्परसंबंध एवं साम्यता दिखाने के लिए 'विशिष्ट शब्द देखिये' ऐसा निर्देश कोष्ठकों में किया गया है।

(१२) 'पुत्र' इस शब्द का प्रयोग 'उत्तराधिकारी' के रूप में किया गया है। मातृक एवं पैतृक ये विशेषण नाम की व्युत्पत्ति के अनुसार प्रयुक्त किये गये हैं। किंतु इस संबंध में सारी जानकारी केवल तर्काधिष्ठित ही हो सकती है।

(१३) जातिसमूह एवं व्यक्ति के नाम जहाँ एक-सरीखे हों, वहाँ दोनों की जानकारी स्वतंत्र रूप से प्रस्तुत की गयी है।

(१४) प्रायः सभी व्यक्तिचरित्र उनके मूल संस्कृत नाम से प्रस्तुत किये गये हैं, किंतु व्यक्तियों के मूल संस्कृत नाम जहाँ अनुपलब्ध हैं, वहाँ उनके उपलब्ध नाम से ही जानकारी प्रस्तुत की गयी है। उदाहरण में निम्न-लिखित नामों का निर्देश किया जा सकता है:—अहीना आश्वत्थ्य, तोंडमान, बम्बाविश्वावयस् आदि।

(१५) इस ग्रंथ के लिए प्रयुक्त आधारग्रंथ, उनके संस्करण, एवं उनके लिए कोश में प्रयुक्त किये गये संकेत ग्रंथ के आरंभ में दिये गये हैं।

(१६) ग्रंथ के अंत में व्यक्तिसूचि एवं विषयसूचि दी गयी है, जिस में प्रमुख व्यक्तियों एवं विषयों की जानकारी संकलित की गयी है।

आधार ग्रंथ, उनके लिए प्रयुक्त संकेत एवं संस्करण

संकेत	संपूर्ण नांव	संस्करण
अग्नि.	अग्निपुराण	आनंदाश्रम, पूना
अध्या. रा.	अध्यात्मरामायण	गोरखपुर
अ. प्रा.	अथर्वप्रातिशाख्य	ह्विटनेप्रत
अ. रा.	अद्भुतरामायण (उत्तर कांड)	मोरकृन प्रेस, आवृत्ति तीसरी
अ. वे.	अथर्ववेद	
आदि.	आदिपुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस
आप. ध.	आपस्तंबधर्मसूत्र	विद्यामुद्राक्षरशाला कुंभकोणम्
आप.श्रौ.	आपस्तंबश्रौतसूत्र	क्रिष्टल संस्करण
—आ. रा.	आनंदरामायण	
—सार.	१—सारकांड	

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
--यात्रा.	२--यात्राकांड	
याग.	३--यागकाड	
--विलास.	४--विलासकांड	
--जन्म.	५--जन्मकांड	
--विवाह.	६--विवाहकांड	
--राज्य.	७--राज्यकांड	
-- १	-- --(पूर्वा)	
-- २	-- --(उत्तरार्ध)	
--मनोहर.	८--मनोहरकांड	
--पूर्ण.	९--पूर्णकांड	
आश्व. गृ.	आश्वलायन गृह्यसूत्र	निर्णयसागर प्रेस
आश्व. श्रौ.	आश्वलायन श्रौतसूत्र	आनंदाश्रम पूना
आ. ब्रा.	आर्षेयब्राह्मण	बर्नेलप्रत
ई. उ.	ईशावास्य उपनिषद्	अष्टेकर मंडली
ऋ.	ऋग्वेद	मॅक्स मुल्लर २री आवृत्ति
ऋ. प्रा.	ऋग्वेदप्रातिशाख्य (सूत्रांक, क्वचित् पटल एवं श्लोक)	मॅक्स मुल्लर संस्करण
ऐ. आ.	ऐतरेय आरण्यक	आनंदाश्रम
ऐ. उ.	ऐतरेय उपनिषद्	आनंदाश्रम
ऐ. ब्रा.	ऐतरेयब्राह्मण	आनंदाश्रम
क. उ.	कठ उपनिषद्	अष्टेकर मंडली
क. सं.	कठसंहिता	लिपझिक, १९१२
कापि. सं.	कापिष्ठलसंहिता	
कालि.	कालिकापुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस
कूर्म.	कूर्मपुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस
के. उ.	केन उपनिषद्	
कै. उ.	कैवल्य उपनिषद्	
कौ.	कौशिकसूत्र	अमेरिकन ओरि.सो.सी.
कौ. अ.	कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र	
कौ. उ.	कौषीतकि उपनिषद्	
खा. गृ.	खादिर गृह्यसूत्र	
खा. श्रौ.	खादिर श्रौतसूत्र	म्हैसूर सीरीज
गणेश.	गणेशपुराण	मोदवृत्त मुद्रणालय, शक १८२८
गरुड.	गरुडपुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस
ग. सं.	गर्गसंहिता	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस
गो. गृ.	गोभिल गृह्यसूत्र	
गो. ब्रा.	गोपथ ब्राह्मण	बिब्लिओथिका इंडिका
गौ. गृ.	गौतम गृह्यसूत्र	आनंदाश्रम
गौ. ध.	गौतम धर्मसूत्र	”
छां. उ.	छांदोग्य उपनिषद्	”
जै. अ.	जैमिनि अश्वमेध	पुराण प्रकाशक मंडल, वाई
जै. उ. ब्रा.	जैमिनीय उपनिषद्-ब्राह्मण	लाहोर, १९२१
जै. गृ.	जैमिनिगृह्यसूत्र	पंजाब संस्कृत सीरीज
--१	--पूर्वार्ध	
--२	--उत्तरार्ध	
जै. ब्रा.	जैमिनीय ब्राह्मण	
तां. ब्रा.	तांड्य ब्राह्मण (इसे पंचविंश, एवं प्रौढ ब्राह्मण भी कहते है)	[illegible]
तै. आ.	तैत्तिरीय आरण्यक	आनंदाश्रम
तै. उ.	तैत्तिरीय उपनिषद्	आनंदाश्रम
तै. प्रा.	तैत्तिरीय प्रातिशाख्य	म्हैसूर सीरीज
तै. ब्रा.	तैत्तिरीय ब्राह्मण	आनंदाश्रम
तै. सं.	तैत्तिरीयसंहिता	आनंदाश्रम
दे. भा.	देवी भागवत	
द्रा. श्रौ.	द्राह्यायण श्रौतसूत्र	
ना. उ.	नारायण उपनिषद्	आनंदाश्रम, पूना।
नारद.	नारद पुराण	वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई।
--१	--पूर्व भाग	
--२	--उत्तर भाग	
नि.	निरुक्त	वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई।
नृसिंह.	नृसिंहपुराण	गोपाळ नारायण प्रेस।
पद्म.	पद्मपुराण	वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई; आनंदाश्रम (क्वचित)
--सृ.	१--सृष्टिखंड	
--भू.	२--भूमिखंड	
--स्व.	३--स्वर्गखंड	
--ब्र.	४--ब्रह्मखंड	
--पा.	५--पातालखंड	
--उ.	६--उत्तरखंड	
--क्रि.	७--क्रियायोग	
पं. ब्रा.	पंचविंश ब्राह्मण	
परा. मा.	पराशर माधव	निर्णयसागर प्रेस, बंबई

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
पा. गृ.	पारस्कर गृह्यसूत्र	गुजराथ प्रेस, बंबई. १९१७
पा. सू.	पाणिनिसूत्र–अध्याय, पाद, सूत्र	
प्र. उ.	प्रश्न उपनिषद्	आनंदाश्रम, पूना
बृ. उ.	बृहदारण्यक उपनिषद् (काण्व)	
बृहदे.	बृहद्देवता	राजेंद्रलाल मित्र
ब्रह्म. सू.	ब्रह्मसूत्र	
बौ. ध.	बौधायन श्रौतसूत्र	
ब्रह्म.	ब्रह्मपुराण	आनंदाश्रम, पूना
ब्रह्मवै.	ब्रह्मवैवर्तपुराण	आनंदाश्रम, पूना
–१	ब्रह्मखंड	
–२	प्रकृति खंड	
–३	गणपति खंड	
–४	कृष्णजन्म खंड	
ब्रह्मांड.	ब्रह्मांड पुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई
–१	—प्रक्रियापाद	
–२	—अनुषंगपाद	
–३	—उपोद्घात पाद	
–४	—उपसंहार पाद	
भवि.	भविष्यपुराण	वेंकटेश्वर प्रेस बंबई
–ब्राह्म	१—ब्राह्मपर्व	
–मध्यम	२—मध्यमपर्व	
–प्रति	३—प्रतिसर्गपर्व	
–उत्तर	४—उत्तरपर्व	
भवि उ.	भविष्योत्तर पुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई
भा.	भागवत	निर्णयसागर प्रेस श्रीधरी एवं विजयध्वजी टीकाओं का उपयोग भी किया गया है; गोरखपुर संस्करण
भा. श्रौ.	भारद्वाजश्रौतसूत्र	
भा. सा.	भारतसावित्री	चित्रशाला प्रेस, पूना
म.	महाभारत	भांडारकर संहिता। (*चिन्ह से भांडारकर संहिता के पाठभेद में दिये गये श्लोकों का निर्देश अभिप्रेत है। महाभारत के कुंभकोणम्, कलकत्ता, मुंबई एवं चित्रशाला प्रेस पूना के द्वारा प्रकाशित संस्करणों का उपयोग भी किया गया है। इनमें से चित्रशाळा संस्करण में नीलकंठ चतुर्धर टीका प्राप्त है। अनुशासनपर्व के सारे संदर्भ चित्रशाला संस्करण के लिये गये है।
–आ.	१–आदिपर्व	
–स.	२–सभापर्व	
–व.	३–वनपर्व	
–वि.	४–विराटपर्व	
–उ.	५–उद्योगपर्व	
–भी.	६–भीष्मपर्व	
–द्रो.	७–द्रोणपर्व	
–क.	८–कर्णपर्व	
–श.	९–शल्यपर्व	
–सौ.	१०–सौप्तिकपर्व	
–स्त्री.	११–स्त्रीपर्व	
–शां.	१२–शान्तिपर्व	
–अनु.	१३–अनुशासनपर्व	
–आश्व.	१४–आश्वमेधिकपर्व	
–आश्र.	१५–आश्रमवासिकपर्व	
–मौ.	१६–मौसलपर्व	
–महा.	१७–महाप्रस्थानिकपर्व	
–स्व.	१८–स्वर्गारोहणपर्व	
मत्स्य.	मत्स्यपुराण	आनंदाश्रम, पूना
महा.	महाभाष्य १-३ खंड,	कीलहार्न संस्करण
मां. उ.	मांडूक्य उपनिषद्	
मा. गृ.	मानव गृह्यसूत्र	
मार्कं.	मार्कंडेय पुराण	मोदवृत्त प्रेस, एवं पार्गिटर का इंग्रजी अनुवाद
मा. श्रौ.	मानवश्रौतसूत्र	
मिता.	मिताक्षरा	याज्ञवल्क्य स्मृति पर आधारित
मुं. उ.	मुंडक उपनिषद्	आनंदश्रम, पूना
मुद्गल.	मुद्गल पुराण	हस्तलिखित
मै. उ	मैत्री उपनिषद्	
मै. सं.	मैत्रायणी संहिता	
याज्ञ.	याज्ञवल्क्य स्मृति	निर्णयसागर
यो. वा.	योगवासिष्ठ	
र. वं.	रघुवंश	निर्णयसागर
रेणु.	रेणुकामाहात्म्य	हस्तलिखित
ला. श्रौ.	लाट्यायन श्रौतसूत्र	वाल्मीकि प्रेस कलकत्ता
लिंग.	लिंगपुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.
व. ध.	वसिष्ठ धर्मसूत्र	

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
वं ब्रा.	वंश ब्राह्मण	कलकत्ता
वराह.	वराहपुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.
वामन.	वामनपुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.
–१	–पूर्वार्ध	
–२	–उत्तरार्ध	
वायु.	वायुपुराण	आनंदाश्रम, पूना.
वा. रा.	वाल्मीकि रामायण	
–बा.	१–बालकांड	
–अयो.	२–अयोध्याकांड	
–अर.	३–अरण्यकांड	
–कि.	४–किष्किंधाकांड	
–सुं.	५–सुंदरकांड	
–यु.	६–युद्धकांड	
–उ.	७–उत्तरकांड	
वारा. श्रौ.	वाराह श्रौतसूत्र	
वा. सं.	वाजसनेय संहिता	महीधर उवट भाष्य, निर्णयसागर प्रेस.
विष्णुधर्म.	विष्णुधर्मोत्तर पुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.
वै. श्रौ.	वैखानस श्रौतसूत्र	
श. ब्रा.	शतपथ ब्राह्मण (माध्यंदिन)	वेबर संस्करण, अनुवाद जे. एगलिंग (सेक्रेड बुक्स ऑफ दि ईस्ट)
शा.	(अभिज्ञान) शाकुंतल	निर्णयसागर प्रेस, बंबई
शिव.	शिवपुराण	श्यामकाशी प्रेस, मथुरा
–विद्या	१. विद्येश्वर संहिता	
–रुद्र	२. रुद्र संहिता	
—स.	(अ) सृष्टि खंड	
—स.	(आ) सती खंड	
—पा.	(इ) पार्वती खंड	
—कु.	(ई) कुमार खंड	
—यु.	(उ) युद्ध खंड	
–शत.	(३) शतरुद्रसंहिता	
–कोटि.	(४) कोटिरुद्रसंहिता	
–उमा	(५) उमासंहिता	

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
–पू.	(अ) पूर्वार्ध	
–उ.	(आ) उत्तरार्ध	
–कैलास	(६) कैलाससंहिता	
–वायवीय	(७) वायवीयसंहिता	
शु. प्रा.	शुक्लयजुर्वेद प्रातिशाख्य	चौखंबा संस्कृत सीरीज वाराणसी
श्वे. उ.	श्वेताश्वतर उपनिषद	आनंदाश्रम, पूना
ष. ब्रा.	षड्विंश ब्राह्मण	
स. गृ.	सत्याषाढ गृह्यसूत्र	
स. श्रौ.	सत्याषाढ श्रौतसूत्र	आनंदाश्रम, पूना
सां. आ.	सांख्यायन आरण्यक	आनंदाश्रम, पूना.
सां. गृ.	सांख्यायन गृह्यसूत्र	ओल्डेनबर्ग (सेक्रेड बुक्स ऑफ दी ईस्ट)
सां. ब्रा.	सांख्यायन ब्राह्मण	
सां. श्रौ.	सांख्यायन श्रौतसूत्र	
साम.	सामवेद	
सांब.	सांबपुराण	श्री. वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई
सू. सं.	सूतसंहिता	आनंदाश्रम, पूना.
स्कंद.	स्कंदपुराण	
–माहेश्वर	(१) माहेश्वर खंड	
–१	(अ) केदारखंड	
–२	(आ) कौमारिका खंड	
–३	(इ) अरुणाचल महात्म्य	
	–१. पूर्वार्ध	
	–२. उत्तरार्ध	
–वैष्णव	(२) वैष्णव खंड	
–१	(अ) वेंकटाचल माहात्म्य	
–२	(आ) जगन्नाथक्षेत्र माहात्म्य	
–३	(इ) बदरिकाश्रम माहात्म्य	
–४	(ई) कार्तिकमासमाहात्म्य	
–५	(उ) मार्गशीर्षमासमाहात्म्य	
–६	(ऊ) श्रीमद्भागवतमाहात्म्य	
–७	(ओ) वैशाखमासमाहात्म्य	
–८	(औ) अयोध्यामाहात्म्य	
–९	(अं) वासुदेवमाहात्म्य	
–ब्रह्म	(३) ब्रह्म खंड	
–१	(अ) सेतुमाहात्म्य	
–२	(आ) धर्मारण्यखंड	

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
–३	(इ) ब्रह्मोत्तरखंड	
–काशी	(४) काशी खंड	
–१	(अ) पूर्वार्ध	
–२	(आ) उत्तरार्ध	
–अवंती	(५) अवंती खंड	
–१	(अ) अवंतीक्षेत्रमाहात्म्य	
–२	(आ) चतुरशीतिलिंगमाहात्म्य	
–३	(इ) रेवाखंड	
–नागर	(६) नागर खंड	
–प्रभास	(७) प्रभास खंड	
–१	(अ) प्रभासक्षेत्रमाहात्म्य	
–२	(आ) वस्त्रापथक्षेत्रमाहात्म्य	
–३	(इ) अर्बुदाचलमाहात्म्य	
–४	(ई) द्वारकामाहात्म्य	
स्मृतिचं.	स्मृतिचंद्रिका	
ह. वं.	हरिवंश	चित्रशाळा प्रेस, पूना
–१	(अ) हरिवंशपर्व	
–२	(आ) विष्णुपर्व	
–३	(इ) भविष्यपर्व	

अंग्रेजी आधारग्रंथ

(1) **Altindische Leben**—H. Zimmer, 1879, Berlin.

(2) **Ancient Indian Historical Tradition**—F. E. Pargiter. Delhi.

(3) **Cambridge History of India, Vol. I**—E. G. Rapson. 1922, Cambridge

(4) **Catalogous Catalogorum**—Theodore Aufrecht.

(5) **Chronology of Ancient India**—Dr. Sitanath Pradhan.

(6) **Concordance of Principle Upanishadas**—Col. A. A. Jacob.

(7) **Constructive Survey of Upanishadic Philosophy**—Dr. R. D. Ranade.

(8) **Dharmasutras of Apastamba, Gautama, Vasista and Baudhayana**—G. Buhler, Sacred Books of the East Vols. II and XIV.

(9) **Dictionary of Pali Proper Names (2 Vols.)**—G. P. Malalasekhara. 1960, London.

(10) **Geographical and Economic Studies in the Mahabharata—Upayana Parva**—Dr. Motichandra.

(11) **Grihyasutras of Sankhyayana, Ashwalayana, Paraskara, Khadir, Gobhila, Hiranyakeshin and Apastamba**—H. Oldenberg, Sacred Books of the East, Vols. XXIX and XXX.

(12) **History and Culture of Indian People, Vol. I—Vedic Age**—Dr. R. C. Majumdar, 1948, Bombay.

(13) **History of Ancient Sanskrit Literature**—Max Muller. 1912, Allahabad.

(14) **History of Dharmashastra, Vols. I-V**—Dr. P. V. Kane. Poona.

(15) **History of Indian Literature**—Dr. Albrecht Weber.

(16) **History of Indian Literature, Vol. I—Vedic Age**—M. Winternitz, 1927, Calcutta.

(17) **History of Sanskrit Literature**—A. A. Macdonell.

(18) **History of Sanskrit Literature**—C. V. Vaidya. 1930, Poona.

(19) **Index to the Names in Mahabharata**—S. Sorenson. 1960, Delhi.

(20) **India as described by Early Greek Writers**—B. N. Puri.

(21) **Kautilya's Arthashastra**—R. Shamashastri. 1961, Mysore

(22) **Markandeya Purana (English Translation with Notes)**—F. E. Pargiter.

(23) **Political History of Ancient India**—H. C. Raychaudhari. Calcutta.

(24) **Purana Index**—H. V. R. Dikshitar. Madras.

(25) **Puranic Dyanasties of Kali Age**—F. E. Pargiter. Benaras.

(26) **Studies in Epics and Puranas**—Dr. A. D. Pusalkar. Bombay.

(27) **Studies in Indian Antiquities**—H. C. Raychaudhari. 1958, Calcutta.

(28) **Studies in the Puranic Records on Hindu Rites and Customs**—Dr. R. C. Hazra. Calcutta.

(29) **Studies in the Upapuranas**—Dr. R. C. Hazra.

(30) **Twenty-five Hundred Years of Buddhism**—Ed. Dr. P. V. Bapat.

(31) **Vaishnavism and Shaivism**—Dr. R. G. Bhandarkar. Poona.

(32) **Vedic Index (2 Vols.)**—Dr. A. A. Macdonell & Dr. A. B. Keith. Benaras.

(33) **Vedic Mythology**—Dr. A. A. Macdonell. Benaras.

(34) **Vedische Studien**—R. Pischel and K. F. Geldner.

(35) **Vishnu Purana**—A System of Hindu Mythology and Tradition—H. H. Wilson. 1961, Calcutta.

अंग्रेजी संशोधन–पत्रिका

A.B.O.R.I.—**Annals of Bhandarkar Oriental Research Institute,**

I.A.—**Indian Autiquary.**

J.A.S.B.—**Journal of Asiatic Society of Bombay.**

J.R.A.S.—**Journal of Royal Asiatic Society of Great Britain.**

हिंदी आधारग्रंथ

(१) इतिहास प्रवेश–जयचंद्र विद्यालंकार, १९५७

(२) पाणिनिकालीन भारतवर्ष —डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल

(३) प्राकृत साहित्य का इतिहास–डॉ. जगदीशचंद्र जैन, १९६० वाराणसी

(४) भारतीय इतिहास–एक दृष्टि—डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन, १९६१ वाराणसी

(५) भारतीय इतिहास की रूपरेखा—जयचंद्र विद्यालंकार

(६) महाभारत की नामानुक्रमणिका— गीता प्रेस, गोरखपूर

(७) मार्कंडेय पुराण–एक सांस्कृतिक अध्ययन —डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, १९६१, इलाहाबाद

(८) रामकथा—रे. फादर कामिल बुल्के, १९६२, प्रयाग

(९) वैदिक वाङ्मय का इतिहास—पं. भगवद्दत्त

(१०) शैवमत—डॉ. यदुवंशी, १९५५, पटना

(११) संस्कृत व्याकरणशास्त्र का इतिहास—युधिष्ठिर मीमांसक

(१२) संस्कृत साहित्य का इतिहास—वाचस्पति गैरोला, १९६०, वाराणसी

मराठी आधारग्रंथ

(१) आर्या रामायण–के. वि. गोडबोले पूना
(२) ओरायन ऊर्फ आर्यांचे मूलस्थान–लो. बा. गं. टिळक पूना
(३) उपनिषद्रहस्य–डॉ. रा. द. रानडे पूना
(४) गीतारहस्य–लो. बा. गं. टिळक पूना
(५) दत्त सांप्रदायाचा इतिहास–रा. चिं. ढेरे पूना
(६) धर्मरहस्य—के. ल. दप्तरी नागपूर
(७) पुराण निरीक्षण–त्र्यं. गु. काळे पूना
(८) भारतीय ज्योतिषशास्त्राचा इतिहास–शं. बा दिक्षित पू
(९) भारतीय युद्धकाल निर्णय–के. ल. दप्तरी नागपू
(१०) महाभारताचा उपसंहार–चिं. वि. वैद्य पू
(११) रामचंद्र कालनिर्णय–के. ल. दप्तरी नागपू
(१२) रामायण समालोचना–महाराष्ट्रिय पू
(१३) संशोधनमुक्तावलि–डॉ. वा. वि. मिराशी, नागपू

अनुक्रमणिका

तालिका अनुक्रमणिका

अधिक जानकारी

पृष्ठ

१९ **अद्रि**—(सू. इ.) विश्वगश्व का पुत्र।

३२ **अरिष्टनेमि यादव**—इसकी कन्या सगरपत्नी प्रभा (सुमति) (मत्स्य. १२.४२)।

५१ **असित**—बाहु २०. देखिये

५२ **असितक्षणा**—(मलय २. देखिये)।

८४ **उद्दालकि २.**—इसका पुत्र नचिकेतस् (म. अनु. ७१)।

८५ **उपचिति**—(केतुमाल देखिये)।

१०४ **औपमन्यव**—ऊर्जयत् का पैतृक नाम।

११३ **कपिंजालि घृताची**—(वसिष्ठ परिवार देखिये)।

१३३ **कांपिजलय**—इंद्रप्रमति वसिष्ठ का नामांतर।

१३३ **कापिल्य**—(भृम्यश्व देखिये)।

१३९ **कालमार्ग**—(कालभीति देखिये)

१५८ **कृमिलाश्व**—(भृम्यश्व देखिये)।

१६० **कृष्ण**—अर्जुनद्वारा प्रणीत कृष्णचरित्रकथन महाभारत में प्राप्त है (म. व. १३; १०–३६)

१७० **कौसलय**—सुमनस् का पैतृक नाम।

१७२ **कौहल**—श्रवणदत्त का पैतृक नाम।

१८१ **गंदिनी**—इसकी कन्या वसुदेवा।

१८६ **गवेषण २.**—वसुदेव एवं श्रद्धादेवी का पुत्र (मत्स्य ४६.१९)।

पृष्ठ

१९८ **गोवासन** (शैब्य)—युधिष्ठिर का श्वशुर।

१९९ **घर्घरस्वन**—(मार्जारास्या देखिये)।

२०० **घृताची**—(कौशिकी)।

२१२ **चित्रशिखंडिन् २.**—यह स्वायंभुव नामक आद्य मन्वंतर का सप्तर्षिगण था। इनसे ही आठ मिल कर समस्त जाति एवं शास्त्रों का निर्माण हुआ।

२३९ **झषाक्ष**—रथाक्ष देखिये।

२४२ **तरसाहर**—रथंतर देखिये।

२७६ **दीर्घिका**—(मार्कंडेय २. देखिये)
२. कौशिक १४. देखिये

२७९ **दुर्दम ४.**—(पद्म. स. १५२)

२९३ **देवपक्ष**—(गोधय देखिये)।

२९९ **देवहोत्र**—योगेश्वर २. देखिये।

३०६ **द्रुपद के पुत्र**—भूतश्रव, शतानीक, श्रुतानीक, जयाश्व, श्रुत, वृषभ, भद्रदेव (म. द्रो. १२२)।

३२७ **ध्वजवती**—यह पश्चिम में रहती थी।

३५९ **नाडायनी**—इसे इंद्रसेना, नालायनी, एवं मुद्गलानी नामांतर भी प्राप्त थे।

३७१ **निर्ऋति घर्घरस्वन**—मार्जारास्या का पुत्र (आ. रा. सार. १३)।

मेरी स्वर्गीया पत्नी

सौ. यमुताई चित्राव

के पवित्र स्मृति मे

प्राचीन चरित्रकोश

भारतवर्षीय

प्राचीन चरित्र कोश

-:o:-

अ

अंश—अंशुमान आदित्य का नामांतर है।

२. (सो. यदु.) विष्णु के मत में यह पुरुहोत्र का पुत्र है।

३. तुषित नामक देवगणों में से एक है।

अंशपायन—ब्रह्मदेव के पुष्करक्षेत्र के यज्ञ में यह अध्वर्युगणों का उद्गाता था (पद्म. सृ. ३४)।

अंशु—अश्विनों ने इसकी रक्षा की थी (ऋ. ८.५. २६)।

२. कृष्ण तथा बलराम का गोकुल का सखा (भा. १०. २२. ३१)।

३. मार्गशीर्ष (अगहन) माह के सूर्य का नाम (भा. १२. ११. ४१)।

अंशु धानंजय्य—अमावास्य शांडिल्यायन का शिष्य (वं. ब्रा. १)।

अंशुमत्—एक आदित्य। इसे क्रिया नाम की स्त्री थी। यह आषाढ में प्रकाशित होता है। इसकी १५०० किरणें हैं (भवि. ब्राह्म. ७८)। अंश (१.) तथा यह एक ही है।

२. पंचजन का पुत्र (पद्म. उ. २१. ७)।

३. (सू. इ.) असमंजस का पुत्र। पितरों की मानस कन्या यशोदा इसकी स्त्री है। सगर का अश्वमेधीय अश्व ढूंढ लाने के लिये असमंजस ने इसे भेजा। मार्ग में इसे इसके पितृव्य कपिलाश्रम के पास मृत पड़े हुए दिखे। वहीं वह अश्व भी दिखा। तब इसने कपिल की स्तुति की। परंतु कपिल ध्यानस्थ था। अतएव उसने इसकी स्तुति न सुनी। इतने में उसका मामा गरुड वहां आया। भागीरथी के जल के स्पर्श से काम होगा, ऐसा बता कर वह चला गया। कपिल जागृत होने के बाद उसने अंशुमान को स्तुति करते हुए देखा। उसकी स्तुति से संतुष्ट होकर उसने इसे भागीरथी की स्तुति करने को कहा। बाद में यह अश्व ले गया तथा पहले अश्वमेध यज्ञ पूरा करवाया। सगर ने तुरंत ही इसे राज्य दिया तथा वह वन में गया। इसने भी अपने पुत्र दिलीप को राजसिंहासन पर बिठाया तथा उसे प्रधान के हाथ में सौंप कर भागीरथी के प्राप्त्यर्थ संपूर्ण जीवन तप में बिताने के लिये यह वन में गया। परंतु सिद्धि के पूर्व ही इसकी मृत्यु हो गई (म. व. १०८; वा. रा. बा. ४१-४२)। यह शिवभक्त था। इसने ३०,००० साल राज किया (भवि. प्रति. १.३१)।

४. द्रौपदी के स्वयंवर के लिये गया हुआ राजा (म. आ. १७७. १०)। इसे भारतीय युद्ध में द्रोणाचार्य ने मारा (म. क. ४०. ७)।

अंहोमुच् वामदेव्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १२६)।

अकपि—तामसमन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

अकपीवत्—तामसमन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

अकंपन—सत्ययुग का एक राजर्षि। इसको हरि नामक एक ही पराक्रमी पुत्र था। युद्ध में उसकी मृत्यु हो गई। अतीव दुख के कारण यह शोक कर रहा था। इतने में नारद ऋषि वहां आये तथा, मृत्यु अनिवार्य है ऐसा

भारतवर्षीय

प्राचीन चरित्र कोश

अ

अंश—अंशुमान आदित्य का नामांतर है।

२. (सो. यदु.) विष्णु के मत में यह पुरुहोत्र का पुत्र है।

३. तृषित नामक देवगणो में से एक है।

अंशापायन—ब्रह्मदेव के पुष्करक्षेत्र के यज्ञ में यह अध्वर्युगणों का उन्नायक था (पद्म. सृ. ३४)।

अंशु—अश्विनों ने इसकी रक्षा की थी (ऋ. ८. ५. २६)।

२. कृष्ण तथा बलराम का गोकुल का सखा (भा. १०. २२. ३१)।

३. मार्गशीर्ष (अगहन) माह के सूर्य का नाम (भा. १२. ११. ४१)।

अंशु धानंजय्य—अमावास्य शांडिल्यायन का शिष्य (वं. ब्रा. १)।

अंशुमत्—एक आदित्य। इसे क्रिया नाम की स्त्री थी। यह आषाढ में प्रकाशित होता है। इसकी १५०० किरणें हैं (भवि. ब्राह्म. १६८)। अंशु (३.) तथा यह एक ही हैं।

२. पंचजन का पुत्र (पद्म. उ. २२. ७)।

३. (सू. इ.) असमंजस का पुत्र। पितरों की मानसकन्या यशोदा इसकी स्त्री है। सगर का अश्वमेधीय अश्व ढूंढ लाने के लिये असमंजस ने इसे भेजा। मार्ग में इसे इसके पितृव्य कपिलाश्रम के पास मृत पडे हुए दिखे। वहीं वह अश्व भी दिखा। तब इसने कपिल की स्तुति की। परंतु कपिल ध्यानस्थ था। अतएव उसने इसकी स्तुति न सुनी। इतने में उसका मामा गरूड वहां आया। भागीरथी के जल के स्पर्श से काम होगा, ऐसा बता कर वह चला गया। कपिल जागृत होने के बाद उसने अंशुमान को स्तुति करते हुए देखा। उसकी स्तुति से संतुष्ट हो कर उसने इसे भागीरथी की स्तुति करने को कहा। बाद में यह अश्व ले गया तथा पहले अश्वमेध यज्ञ पूरा करवाया। सगर ने तुरंत ही इसे राज्य दिया तथा वह वन में गया। इसने भी अपने पुत्र दिलीप को राजसिंहासन पर बिठाया तथा उसे प्रधान के हाथ में सौंप कर भागीरथी के प्राप्त्यर्थ संपूर्ण जीवन तप में बिताने के लिये यह वन में गया। परंतु सिद्धि के पूर्व ही इसकी मृत्यु हो गई (म. व. १०६; वा. रा. बा. ४१-४२)। यह शिवभक्त था। इसने ३०८०० साल राज किया (भवि. प्रति. १.३१)।

४. द्रौपदी के स्वयंवर के लिये गया हुआ राजा (म. आ. १७७. १०)। इसे भारतीय युद्ध में द्रोणाचार्य ने मारा (म. क. ४.६७)।

अंहोमुच् वामदेव्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १२६)।

अकपि—तामसमन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अकपिवत्—तामसमन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अकंपन—कृतयुग का एक राजर्षि। इसको हरि नामक एक ही पराक्रमी पुत्र था। युद्ध में उसकी मृत्यु हो गई। अतीव दुख के कारण यह शोक कर रहा था। इतने में नारद ऋषि वहाँ आये तथा, मृत्यु अनिवार्य है ऐसा

समझा कर उसका समाधान किया (म. द्रो. परि. १. ८. पंक्ति. ३५. ३५९) ।

२. एक राक्षस । यह रावण का दूत था । जनस्थान में खरादिक राक्षसों के राम द्वारा वध की प्रथम सूचना रावण को इसने ही दी थी (वा. रा. अर. ३१) । इसने सीता को चुरा कर लाने की सलाह रावण को दी । रावण ने युद्ध के संबंध में इसकी स्वतंत्र सिफारिश की थी (वा. रा. युद्ध. ५५. २; ९; २८) । रामरावणयुद्ध में हनुमान के द्वारा इसकी मृत्यु हुई (वा. रा. युद्ध. ५६. ३०) ।

३. कश्यप तथा खशा का पुत्र ।

अकर्कर—एक सर्प (म. आ. ३१. १५) ।

अकर्ण—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र ।

अकल्मष—तामस मनु के पुत्रों में से एक ।

अकृतव्रण—हिमालयस्थ शान्त ऋषि का पुत्र । एक बार व्याघ्र के आक्रमण से भयभीत हो कर यह चिल्लाता हुआ भागने लगा । इसी समय परशुराम, शंकर को प्रसन्न कर के वापस आ रहे थे । इसे भागते हुए देख कर परशुराम ने इसे अभय दिया तथा व्याघ्र को मार डाला । व्याघ्र के द्वारा इस बालक के शरीर पर व्रण न किये जाने के कारण इसका नाम अकृतव्रण प्रचलित हुआ । बाद में परशुराम ने इसको अपना शिष्य बनाया । यह निरंतर परशुराम के साथ रहता था (ब्रह्माण्ड ३. २५. ६६) ।

२. युधिष्ठिरद्वारा किये गये राजसूय यज्ञ में यह उपद्रष्टा था । (भा. १०. ७४.९) । इसने रोमहर्षण से सब पुराणों का अध्ययन किया (भा. १२. ७. ५-७; अंश देखिये) ।

३. कृतयुग का एक ब्राह्मण । यह एक बार, जब सरोवर में स्नान कर रहा था, तब एक नक्र ने इसका पैर पकड़ा तथा उसे जल में खींचने लगा । इस लिये इसने उस सरोवर के जल को एवं जलदेवता को शाप दिया कि, जो कोई इस पानी को स्पर्श करेगा वह तत्काल व्याघ्री हो जायेगा । आगे पांडवों का अश्वमेधीय अश्व इस सरोवर में जलपान के लिये उतरने के कारण व्याघ्री बन गया (जै. अ. २१) ।

अकृताश्व वा **अकृशाश्व**—(सू. इ.) मत्स्य के मत में यह संहताश्व का पुत्र है ।

अकृष्टमाष—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. ८६. १-१०; ३१-४०) ।

अकोप—दशरथ के अष्टप्रधानों में से एक (वा. रा. बा. ७) । इसका अशोक नामान्तर भी प्राप्त है ।

अक्रिय—(सो. रंभ.) गंभीर का पुत्र । इसकी संतति तप से ब्राह्मण बन गई थी (भा. ९. १७. १०)

अक्रूर—(सो. वृष्णि.) श्वफल्क को गांदिनी से उत्पन्न पुत्र । इसको आसंग आदि ग्यारह बंधु तथा सुचिरा नामक भगिनी थी (भा. ९. २४; १५. १८) । आहुक की कन्या सुतनु इसकी पत्नी थी (म. स. १३. १२) । इस पर कंस तथा राम-कृष्ण का समान ही विश्वास था । राम-कृष्ण का कांटा दूर करने के उद्देश्य से कंस ने उन्हे मथुरा लाने के लिये अक्रूर को भेजा । यह कार्य स्वीकार कर राम-कृष्ण को लेकर अक्रूर मथुरा आया । मार्ग में यमुना में स्नान करते समय डुबकी लगाने पर अक्रूर को राम-कृष्णका साक्षात्कार हुआ (भा. १०. ३९. ४१; ह. वं. २.२६) ।

उसी प्रकार, धृतराष्ट्र पांडवों से अच्छा व्यवहार करता है या नहीं इसे बारीकी से देखने के लिये कृष्ण ने अक्रूर को ही हस्तिनापुर भेजा था (भा. १०. ४९) । कुन्ती ने भी अपनी स्थिति मुक्तहृदय से इसको बताई थी । उसी प्रकार, धृतराष्ट्र को भी कुछ उपदेश इसने दिया था, परंतु उसका कुछ लाभ न होगा, यह इसे धृतराष्ट्र के भाषण से मालूम हो गया (भा. १०.४८) ।

कृष्ण ने स्यमन्तक मणि के लिये शतधन्वा की हत्या की, इसकी सूचना मिलते ही भय से अक्रूर ने मथुरा का त्याग कर दिया । अक्रूर मथुरा से कहाँ गया, इसका उल्लेख यद्यपि भागवत में नहीं है, तथापि वह काशी गया था ऐसी आख्यायिका है । काशीस्थित वर्तमान अक्रूरघाट से इस आख्यायिका की पुष्टि होती है । उस समय कृष्ण ने सौम्यता से अक्रूर को बताया कि, मेरे पास स्यमन्तक मणि है ऐसा संशय लोगों को है, इस लिये मणि दिखा कर तुम सब का संशयनिवारण कर दो । तब अक्रूर ने मणि दिखा कर सब का संशयनिवारण किया (भा. १०. ५६-५७) ।

द्रौपदी के स्वयंवरार्थ आये हुए राजाओं में अक्रूर था (म. आ. १७७-१७) । युधिष्ठिर के दरबार में बैठनेवाले राजाओं में भी इसका उल्लेख है (म. स. ४. २७; १३.३२) । एक बार सूर्यग्रहण के पर्वकाल में यह स्यमन्तपंचकक्षेत्र में गया था (भा. १०. ८२. ५) । यादवी के समय अक्रूर एवं भोज में युद्ध हो कर दोनों मृत हो गये (भा. ११. ३०. १६) । बभ्रु यह अक्रूर का नामान्तर है, ऐसा कहने के लिये आधार है (बभ्रु (१०.) देखिये) । कई स्थानों पर इसको दानपति कहा गया है

(भा. १०. ३६. २८; ४९. २६)। इसको देववत् एवं उपदेव नामक दो पुत्र थे (भा. ९. २४. १८)।

२. कद्रूपुत्र।

अक्रोधन—(सो. पूरु.) अयुतानायिपुत्र। इसकी माता भासा। इसकी पत्नी का नाम कण्डू। इसका पुत्र देवातिथि (म. आ. ९०. २०)। भविष्य के मत में यह अयुतायू का पुत्र है। इसनें १०५०० वर्षों तक राज्य किया।

अक्ष—रावण को मन्दोदरी से उत्पन्न पुत्र। अशोकवन के ध्वंस समय रावण ने हनुमान को पकडने के लिये पांच सेनापति भेजे थे। हनुमान द्वारा वे मारे जाने पर इसको भेजा गया। आठ अश्वों से युक्त रथ में बैठ कर यह अशोकवन में गया तथा हनुमान से युद्ध करते अन्त में उसी के हाथों मारा गया (वा. रा. सुं. ४७)।

अक्ष मौजवत— सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ३४)।

अक्षपाद—शिवावतार सोम का शिष्य। (गौतम देखिये)।

अक्षमाला—वसिष्ठ की पत्नी (म. उ. ११५. ११)। अरुंधती का नामान्तर।

अक्षीण—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ४. ५०)।

अगस्ति—(स्वा.) पुलस्त्य को हविर्भू से उत्पन्न पुत्र।

२. अगस्त्य, दृढद्युम्न और इंद्रबाहु को अगस्ति संज्ञा है (मत्स्य १४५. ११४-११५)।

अगस्त्य—वसिष्ठ के समान यह भी मित्रावरुणों का पुत्र है (ऋ. ७. ३३. १३)। उर्वशी को देख कर मित्रा-वरुणों का रेत कमल पर स्खलित हुआ तथा उससे वसिष्ठ एवं अगस्त्य उत्पन्न हुए (बृहद्दे. ५. १३४)। ऋग्वेद में अगस्त्य के काफी सूक्त तथा मंत्र हैं (ऋ. १. १६५. १३-१५; १६६-१६९; १७०.२, ५, १७१-१७८; १७९.३-४; १८०-१९१)। अगस्त्य कुलनाम होने के कारण अगस्त्य कुल के लोगों द्वारा रचित सूक्त अगस्त्य के नाम से प्रसिद्ध हैं। एक स्थान पर अगस्त्य का सुमेधस् नाम आया है (ऋ. १.१८५.१०)। मान्य तथा मान्दार्य ये पैतृक नाम भी अगस्त्य के लिये दिये हुए मिलते हैं (ऋ. १.१६५.१४-१५; १६६.१५)। मरुतों के लिये लाये गये पशु का इन्द्र ने हरण किया, तब वे वज्र लेकर इन्द्र को मारने के लिये उद्युक्त हुए। उस समय, अगस्त्य ने मरुतों का सांत्वन किया तथा इन्द्र-मरुतों में मैत्रीभाव निर्माण किया। जिस सूक्त के द्वारा यह मैत्रीभाव सिद्ध किया वह अगस्त्य का कयाशुभीय सूक्त है (ऐ. ब्रा. ५. १६)। कयाशुभीय सूक्त में इन्द्र-मरुतों का विवाद है (ऋ. १. १६५) तथा अन्त में मरुतों का सांत्वन है। यह विवाद वैदिक ग्रंथों में काफी प्रसिद्ध प्रतीत होता है (तै. सं. ७. ५. ५. २; तै. ब्रा. २. ७. ११. १; मै. सं. २. १. ८; क. सं. १० . ११; पं. ब्रा. २१. १४. ५)। इन्द्र पर भी इसका काफी प्रभाव था (ऋ. १. १७०)।

इसकी पत्नी का नाम लोपामुद्रा (ऋ. १. १७९.४)। ऋग्वेद के इस सूक्त में अगस्त्य-लोपामुद्रा संवाद है। वहाँ यह वृद्ध है तथा लोपामुद्रा इसे संभोग के लिये प्रवृत्त कर रही है।

यह खेल नृप का पुरोहित होगा (ऋ. १.११८.१)। अगस्त्यशिष्य (ऋ. १.१७९.५-६) तथा अगस्त्यस्वसृ (ऋ. १०. ८०. ८) के नाम पर कुछ ऋचाएँ हैं। ऋषियों में वृद्धतम जान कर इन्द्र ने इसे गायत्र्युपनिषद का उपदेश दिया तथा इसने वह उपदेश इषा को बता कर परंपरा प्रारंभ की (जै. उ. ब्रा. ४. १५. १; १६. १)। जैमिनीय उपनिषद्-ब्राह्मण ही गायत्र्युपनिषद् है।

पौराणिक वाङ्मय मे उपरोक्त बर्णन के विरुद्ध कुछ विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती है। समुद्र में छिपे हुए असुरों नें इन्द्रादिकों को जब सताना प्रारंभ किया तब देवताओं ने अग्नि तथा वायु को समुद्र का शोषण करने को कहा। परन्तु समुद्र के प्राणियों का नाश होने की संभावना से उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया। तब इन्द्र के द्वारा दिये गये शाप से मित्रावरुणों के वीर्य से यह कुंभ में उत्पन्न हुआ। उनमें से अगस्त्य, अग्नि है। इसी कारण इसको मैत्रावरुणि तथा कुंभयोनि नाम मिले (मत्स्य ६१.२०१; पद्म. सृ. २२. २२; म. व. ९६; द्रो. १३२; १८५; शां. ३४४; ब्रह्माण्ड. ३.३५)।

अगस्त्य विरक्त था तथापि पितरों की आज्ञानुसार विदर्भाधिपति की कन्या लोपामुद्रा के साथ इसका विवाह हुआ (लोपामुद्रा देखिये)। वह राजकन्या होने के कारण उसे अगस्त्य की अपेक्षा ऐश्वर्य में विशेष रुचि थी। अपने तपःसामर्थ्य से जो चाहे वह प्राप्त करने की शक्ति होते हुए भी तप का व्यय करने की अगस्त्य की इच्छा न थी। परन्तु लोपामुद्रा की तीव्र इच्छा देख कर श्रुतर्वन्, ब्रध्न्यश्व तथा त्रसदस्यु इन तीन राजाओं के पास से संपत्ति प्राप्त करने का इसने प्रयत्न किया; परन्तु इसे यश प्राप्त नहीं हुआ। तथापि त्रसदस्यू ने अगस्त्य को इल्वल की अपरंपार संपत्ति का वर्णन बताया। तब तीनों राजाओं को साथ ले कर यह इल्वल के पास गया तथा अपने अतुल सामर्थ्य से इल्वल की संपत्ति प्राप्त कर इसने लोपामुद्रा को संतुष्ट किया।

समुद्र में रहनेवाले कालकेयों ने लोगों को काफी त्रस्त करना प्रारंभ किया तब इसने समुद्र का प्राशन कर लिया। तदनंतर देवताओं ने कालकेयों की हत्या कर के सब को यातनामुक्त किया। परन्तु इसको समुद्र को बाहर निकालने की सूचना देने पर इसने बताया कि, वह उदर में हजम हो गया। (पद्म. सृ. १९.१८६; म. व. १०३)।

अग का अर्थ है पर्वत। पर्वत का स्तंभन करनेवाला ऐसी अगस्त्य शब्द की व्युत्पत्ति है (वा. रा. अ. ११)। यह विंध्य का गुरु था। अगस्त्य के दक्षिण जाने के समय विंध्य ने इसे नमस्कार किया। तब इसने विंध्य को कहा कि, मेरे लौटते तक तुम इसी प्रकार पडे रहो। इस कथनानुसार विंध्य नम्र बन कर पडा रहा तथा उत्तर का दक्षिण से आवागमन प्रारंभ हुआ (म. व. १०२; दे. भा. १०. ३. ७)। यह प्रथम काशी में रहता था परंतु विंध्याचल से मार्ग निकाल कर आवागमन को प्रारंभ करने के लिये, इसने काशीवास का त्याग किया। इस प्रसंग में अगस्त्य को दिये हुए अभिवचन के अनुसार काशी–विश्वेश्वर, रामेश्वर में आ कर रहने लगे (आ. रा. सार. १०)। काशी क्षेत्र में रहने की इच्छा अपूर्ण रह जाने के कारण, उन्तीसवें द्वापर युग में यह व्यास बन कर काशी में वास करेगा, ऐसा वरदान इसे गोदावरी तट पर लक्ष्मी ने दिया (स्कंद ४. १. ५)। दक्षिण में आने के बाद, इसने एक द्वादशवर्षीय सत्र मनाया। इस सत्र के ब्राह्मणों को पिप्पल तथा अश्वत्थ नामक असुर खा डाला करते थे। उनका नाश शनी ने किया (ब्रह्म. ११८)।

नहुष ने वाहन बना कर इसका अपमान करने के कारण अगस्त्य की जटा में स्थित भृगु ने, नहुष को दस हजार वर्षों तक साँप बन कर जीवन यापन करने का शाप दिया (म. अनु. १००.२५; स्कन्द. १. १. १५)।

बनवास के समय दाशरथी राम इसके दर्शन के लिये आया था। अगस्त्य ने राम को सोने तथा हीरों से सुशोभित सुन्दर धनुष, अमोघ बाण, अक्षय तूणीर तथा स्वर्ण के खड्गकोष सहित स्वर्ण का खड्ग् दिया (वा. रा. अर. १२. ३१–३५)। अगस्त्य के आश्रम में ब्रह्मा, अग्नि, विष्णु, इन्द्र, सूर्य, सोम, भग, कुबेर, धाता, विधाता, वायु, नागराज, अनन्त, गायत्री, अष्टवसु, पाशहस्त, वरुण, कार्तिकेय तथा [illegible] के लिये योजित विभिन्न स्थान, राम को दृष्टिगो[illegible]८ (वा. रा. अर. १२. १७. २१)। इसने [illegible]ी गीता सुनाई (वराह. ३५) इसने [illegible] लिये निकाला हुआ कमलकन्द एक भूखे चांडाल को दिया (पद्म. सृ. १९)। प्रजाहित के हेतु से अगस्त्य ने समस्त मृग देवताओं के लिये प्रोक्षण किये। इसीसे देवकार्य एवं पितृकार्य में मृग मांस अर्पण करने के लिये कुछ आपत्ति नहीं है (म. अनु. ११५)। परन्तु आगे अगस्त्य ने द्वादशवर्षीय सत्र का प्रारंभ किया तथा पशुहिंसा टाल कर इन्द्र को वर्षा करने के लिये विवश किया (म. आश्व. ९५)।

लोपामुद्रा को इध्मवाह नाम से प्रसिद्ध दृढस्यु नामक पुत्र था (म. व. ९७. २३–२४)। दृढस्यु को, दृढद्युम्न, इन्द्रबाहु इ. नामान्तर होने चाहिये (मत्स्य. १४५. ११४)।

पुलस्त्य, पुलह तथा क्रतु अगस्त्य गोत्रीय न होने हुए भी, इनकी संतति अगस्त्य गोत्रीय मानी जाती है। क्यों कि वैवस्वत मन्वन्तर का क्रतु निपुत्रिक होने के कारण उसने अगस्त्यपुत्र इध्मवाह को दत्तक लिया था। पुलह की संतति राक्षस थी अतएव उसने अगस्त्यपुत्र दृढस्यु को दत्तक लिया। पौलस्त्य ने भी इसी प्रकार अगस्त्य-पुत्रों में से दत्तक लिया (मत्स्य. २०२. ८. १२)।

परन्तु ब्रह्माण्डपुराण में अय, दृढायु तथा विध्मवाह नामक पुत्रों का वर्णन है (२. ३२. ११९)। अगस्त्य की गोत्र परंपरा आगे दी गई है। उसे ही अगस्त्यवंश कहा गया है (मत्स्य. २०२. ६)। यह मंत्रकार तथा ऋषिक था (वायु. १. ५९. ९२–९४)।

अगस्त्य का संबंध नित्य दक्षिण से ही आता है (वा. रा. अर. ११; ब्रह्म. ८४. ११८. २)। लंका के साथ भी अगस्त्य का संबंध आया है। इसे लंकावासी कहा गया है (मत्स्य. ६१. ५१)। अगस्त्य को दक्षिण का स्वामी तथा विजेता कहा गया है (ब्रह्म. ११८. १५९)। अगस्त्य का आश्रम दक्षिण में मलय पर्वत पर था (मत्स्य. ६१. ३७; पद्म. सृ. २२; वा. रा. कि. ४१. १५-१६)। पाण्ड्य तथा महानदी के पास महेंद्र के साथ भी अगस्त्य का संबंध है (वा. रा. कि. ४१)। आजकल अगस्त्य के मंदिर, जावा इ. द्वीपों में प्राप्य है। वहाँ प्राप्य महाभारत भी दाक्षिणात्य पाठसे मिलता जुलता है। अगस्त्याश्रम नाशिक के पास है (म. व. ९४. १)। दुर्जया तथा मणिमती वातापी के नगर थे (म. आर. ९४. १-४)। वातापी का स्थान दक्षिण में है, ऐसा अभी तक समझा जाता है। वातापी ही बदामी है। परन्तु नन्दलाल डे ने बेकल के पास का स्थान दिया है। विंध्य की कथा से दक्षिण का संबंध स्पष्ट है। विदर्भ (महाराष्ट्र) दक्षिण का देश है तथा वहाँ

के राजा की कन्या लोपामुद्रा इसकी पत्नी है। यह सब प्रसंग इसका दक्षिण के साथ अधिक संबंध दर्शाते है। यह दक्षिण का ही वासी था ऐसा भी कहा जा सकता था, परन्तु उत्तर की ओर यमुना, प्रयाग, गंगा इ. के साथ इसका संबंध आया है (मत्स्य. १०३; म. आ. २३५. २; व. ९५.११)। इससे यह विंध्याचल को नम्र बना कर दक्षिण में आया, इस कथा की पुष्टि होती है। अगस्त्य नामक तारा भाद्रपद माह में दक्षिण की ओर उदित होता है तथा इसके उदय के बाद पानी निर्दोष हो जाता है, इस कथा का संबंध अगस्त्य व्यक्ति से जोड़ा गया है (मत्स्य. ६१)।

अगस्त्यद्वारा रचित ग्रंथ— १. वराहपुराण में पशुपालोख्यान में प्राप्त अगस्त्यगीता, २. पंचरात्र की अगस्त्य संहिता, ३. स्कन्दपुराण की अगस्त्य संहिता, ४. शिवसंहिता (८.८), ५. भास्कर संहिता का द्वैधनिर्णयतंत्र (ब्रह्मवै. २.१६)।

अगस्त्य वंश के गोत्रकार–

करंभ (करंभय), कौशल्य (ग), क्रतुवंशोद्भव, गांधारकायन, पौलस्त्य, पौलह, मयोभुव, शकट (करट), सुमेधस ये गोत्रकार अगस्त्य, मयोभुव, तथा महेन्द्र इन तीन प्रवरों के हैं।

अगस्त्य (ग), पौर्णिमास (ग) ये गोत्रकार अगस्त्य, पारण, पौर्णिमास इन तीन प्रवरों के हैं (मत्स्य. २०२)।

अगस्त्यगोत्रीय मंत्रकार

मत्स्य. १४५.११४-११५; ब्रह्मांड. २.३२,११८-१२०

अगस्त्य	अगस्त्य
	अय
इन्द्रबाहु	दृढायु
दृढद्युम्न	विध्मवाह

इन में से अगस्त्य, इन्द्रबाहु तथा दृढद्युम्न को अगस्ति संज्ञा है (मत्स्य. १४५. ११४-११५)।

अगस्त्य की पत्नी लोपामुद्रा विदर्भराज निमि की कन्या थी। निमि ने उस को लोपामुद्रा के साथ राज्य भी दिया था (म. अनु. १३. ११)। काशी का नृप प्रतर्दन का पोता तथा वत्स का पुत्र अलर्क ने लोपामुद्रा की कृपा से दीर्घायु प्राप्त की थी (वायु. ९२. ६७; ब्रह्माण्ड. ११. ५३)।

इस से ज्ञात होता है की अगस्त्य, निमि तथा अलर्क का समकालीन था।

अगस्त्यशिष्य—ऋग्वेद की कुछ ऋचाएँ इसके नाम पर हैं (ऋ. १. १७९. ५-६)।

अगस्त्यस्वसृ—मंत्रद्रष्ट्री (ऋ. १०. ९०. ९)।

अग्नि—इन्द्र का शिष्य । इसका शिष्य काश्यप (वं. ब्रा. २)।

२. एक आचार्य। इसने सोम की विशेष परंपरा सनश्रुत को कथन की (ऐ. ब्रा. ७. ३४)।

३. धर्म तथा वसु का पुत्र। इसको वसोर्धारा नामक पत्नी से द्रविणक इ. पुत्र हुए तथा कृत्तिका नामक पत्नी से स्कन्द नामक पुत्र हुआ (भा. ६. ६. ११)।

४. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (मनु देखिये)।

५. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (मनु देखिये)।

६. ब्रह्मदेव का मानसपुत्र। उसके कोपसे इसकी उत्पत्ति हुई (म. शां. ४८. १६)। दक्ष प्रजापती की कन्या स्वाहा इसकी पत्नी (म. व. २२०; भा. ४. १. ६०)। दूसरी पत्नी इक्ष्वाकुवंश के दुर्योधन राजा की कन्या सुदर्शना (म. अनु. २.२१)। प्रथम पत्नी स्वाहा माहिष्मती नगरी के राजा नीलध्वज की कन्या। नीलध्वज ने अपनी कन्या अग्नी को देते समय ऐसा करार किया था कि, वह निरन्तर नीलध्वज की नगरी में ही रहे, और जो भी शत्रु माहिष्मती नगरी पर आक्रमण करे, उसका सैन्य जला डाले। इस करार के कारण अग्नि अपने श्वसुरगृह में घर-जमाई बन कर रहने लगा। आगे चल कर जब अर्जुन की सेना से नीलध्वज को लड़ना पड़ा, तब अग्नि ने अर्जुन की सेना को जला दिया (जै. अ. १५); इसने सहदेव की सेना भी जलाई परंतु अन्त में सहदेव द्वारा स्तुति की जाने पर यह वापस लौटा (म. स. २८)। सप्तर्षियों का हविर्द्रव्य देवताओं को अर्पण कर के लौटते समय, सप्तर्षि की पत्नियाँ इसे दृग्गोचर हुईं। तब इसके मन में कामवासना उत्पन्न हुई, तथा उनकी प्राप्ति की इच्छासे गार्हपत्य में प्रविष्ट हो कर यह चिरकाल तक उनके पास रहा। परन्तु वे इसके वश में न आने के कारण, अत्यंत निराश हो कर देहत्याग का निश्चय कर के यह अरण्य में गया। परंतु उन [illegible] में से दक्षकन्या स्वाहा की प्रीती अग्नि से होने के [illegible] वह इसके पीछे वन में गई तथा उसने अन्य सप्तर्षि[illegible] का स्वरूप धारण कर के इसकी इच्छापूर्ति की (म. व. [illegible] ४); परन्तु वह अरुंधती का रूप न ले सकी।

प्राचीन काल में श्वेतकी ने अपरिमित यज्ञ किये। उसके द्वारा किये गये यज्ञसत्र में, बारह वर्षों तक, अग्नि लगातार हविर्द्रव्य भक्षण कर रहा था। इस कारण इसमें स्थूलता उत्पन्न हो कर, उसपर उपाय पूछने के लिये यह ब्रह्मदेव के पास गया। तब ब्रह्मदेव ने इसे खांडववन का भक्षण करने के लिये कहा। इसलिये इसने उसे जलाना प्रारंभ किया परन्तु इन्द्र ने लगातार पर्जन्यवृष्टि कर के सात बार इसका पराभव किया। अन्त में निराश हो कर यह पुनः ब्रह्मदेव के पास गया तथा सारा वृत्तान्त उन्हे निवेदित किया। तब भूलोक में जा कर कृष्णार्जुन से खांडववन मांगने की सलाह ब्रह्मदेव ने इसको दी। यह ब्राह्मणरूप से कृष्णार्जुन के पास आया तथा इसने भक्षण करने के लिये वह वन मांगा। तब अर्जुन ने कहा कि, हमारे पास युद्धसामग्री की न्यूनता है, वह अगर तुमने हमें दी तो हम इंद्र से तुम्हारी रक्षा करेंगे। अग्नि ने वरुण के पास से, श्वेतवर्णीय अश्वों से जुता हुआ तथा कपिध्वजयुक्त एक दिव्य रथ, गांडीव नामक धनुष तथा दो अक्षय तूणीर मांग कर, अर्जुन को दिये तथा श्रीकृष्ण को सुदर्शन चक्र तथा कौमोदकी नामक गदा दी। इससे वे दोनों संतुष्ट हुए तथा उन्होंने अग्नि के संरक्षण का वचन दे कर, उसे खांडववन का भक्षण करने के लिये कहा। तब अग्नि उस वन का भक्षण करने लगा। यह समाचार इन्द्र को मिलते ही, वह अग्नि का निवारण करने के लिये, वहाँ आ कर पर्जन्यवृष्टि करने लगा। परंतु कृष्णार्जुन ने उसका पराभव किया। पंद्रह दिनों तक खांडववन का आतुप्त भक्षण करने के बाद, अग्नि की स्थूलता नष्ट हुई। इस वन से तक्षकपुत्र अश्वसेन, मयासुर तथा महर्षि मन्दपाल के चार पुत्र शार्ङ्गक पक्षी केवल बचे (म. आ. २१७. १८)। इक्कीस दिन तक, अग्नि लगातार वह वन दग्ध कर रहा था (म. आ. २२५. १५)।

वृत्र को मारने के बाद, ब्रह्महत्या के भय से भागे हुए इन्द्र की खोज, बृहस्पति के कहने से इसने की (म. उ. १५.१६)। आगे चल कर उस ब्रह्महत्या से इन्द्र का छुटकारा करने के लिये ब्रह्मदेव ने उसके चार भाग किये। उसका चौथा भाग अग्नि ने ग्रहण किया (म. शा. २७३)।

एक बार जब भृगु समिधा लाने के लिये वन में गया था, तब दमन नामक राक्षस उसके तथा उसकी पत्नी के बारे में पूछताछ करने लगा। तब भयभीत हो कर अग्नि ने चुगली की तथा भृगुपत्नी का पता बता दिया। भृगु ने लौटने पर चुगली करने के कारण अग्नि को शाप दिया कि 'तुम सर्वभक्षक बनोगे'। इसपर अग्नि ने उःशाप मांगा। तब भृगु ने 'सर्वभक्षक होते हुए भी तुम पवित्र ही रहोगे' ऐसा उःशाप दिया (पद्म. पा. १४)। भृगु स्नान करने बाहर गया, यह देख कर उसके आश्रम में, पुलोमा नामक राक्षस प्रविष्ट हुआ तथा उसने अग्नि से पूछा कि, भृगुपत्नी पुलोमा को मैंने पहले मन से वरण किया यह सत्य है या असत्य। अग्नि ने बताया कि, यह सत्य है, इसलिये भृगु ने उसे उपरोक्त शाप दिया (म. आ. ५-७)। भृगु के इस शाप के कारण अग्नि जल में गुम हो गया। इससे देव-देवताओं के यज्ञयागकर्म बंद हो गये। देवताओं द्वारा इसका शोध होने पर मत्स्यों ने अग्नि दर्शाया। तब देवताओं ने इसकी स्तुति की जाने पर, यह बाहर आया तथा पूर्ववत् अपना कार्य करने लगा (म. आ. ७; शां. २७; व. २२४)।

ऋग्वेद में अग्नि के गुम होने का यह कारण बताया है। वषट्काररूप वज्र से बांधवों की मृत्यु होने के कारण, सौचीक नामक अग्नि, वषट्कार तथा हवि उठा ले जाने में डर गया तथा देवताओं से निकल कर जल में भाग गया (ऋ. १०. ५१)। यही अग्नि देव संवाद है।

ब्राह्मणों के श्रेष्ठत्व के संबंध में, अग्नी का इन्द्र से संवाद हुआ था (म. अनु. १४)। उसी प्रकार गाय, ब्राह्मण तथा अग्नि को पादस्पर्श करने वाले पर भयंकर आपत्ति आती है इस अर्थ का धर्मकथन इसने किया है (म. अनु. १२६)।

सीता को लंका से लाने के बाद, जब राम उसका स्वीकार नहीं कर रहा था, तब अग्नी ने बताया कि, सीता निरपराध है (म. व. २७५. २७)।

इसे स्वाहा नामक पत्नी से स्कन्द नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. व. २१४)। इसके अलावा, इसी पत्नी से पावक, पवमान व शुचि नामक तीन पुत्रों ने जन्म लिया (भा. ४. १. ६०-६१)। सुदर्शना नामक पत्नी से इसे सुदर्शन नामक पुत्र हुआ (म. अनु. २. ३७)। इसके सिवा, स्वारोचिष नामक इसके पुत्र का उल्लेख पाया जाता है (भा. ८. १. १९; आप् देखिये)।

अंगिरा की मांग के अनुसार, अग्नी ने उसे बृहस्पति नामक पुत्र दिया। अंगिरा की पत्नी तारा। इसी से अग्नि-वंश की वृद्धि हुई (म. व. २०७-२१२)। पावक, पवमान तथा शुचि इन अग्निपुत्रों से कुल ४९ अग्नि उत्पन्न हुए (भा. ४. १. ६०-६१; वायु. २९; ब्रह्मांड २-५२)।

अग्निपुत्रों के संख्या के बारे में और भी प्रकार दिये है (मत्स्य. ५१)। परंतु वस्तुतः यह अग्नि का वंश न हो कर स्वयं अग्नि के विभिन्न स्वरूप है (वैश्वानर देखिये)।

ऋग्वेदके एक सूक्त का द्रष्टा अग्नि बताया गया है (ऋ. १०.१२४) (सोमवान् और नीलध्वज देखिये)।

७. आगे होने वाले इन्द्रसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अग्नि-और्व-यह भार्गव था (ऋचीक तथा और्व देखिये)।

अग्नि गृहपति सहस्पुत्र—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१०२)।

अग्नि चाक्षुष—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. १०६. १-३; १०-१४)।

अग्नि तापस—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १४१)।

अग्नि धिष्ण्य ऐश्वर—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. १०९)।

अग्नि पावक—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १४०)।

अग्नि पावक बार्हस्पत्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१०२)।

अग्नि यविष्ठ सहःपुत्र—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१०२)।

अग्नि वैश्वानर—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७९-८०)। इसने सरस्वती नदी से पूर्व और उत्तर पांचाल देश जला दिया (श. ब्रा. १. ४.१०-१९)। यह, वैदिक धर्म का प्रसार कैसा हुआ, इसका प्रतीकात्मक वर्णन होगा।

अग्नि शार्मायण—कश्यप गोत्री ऋषिगण।

अग्नि सौचिक—सूक्तद्रष्टा (ऋ.१०.५१.२,४,६,८, ५२;५३.४-९-७-१०)।

अग्निकेतु—रावणपक्षीय राक्षस। राम के द्वारा युद्ध में यह मारा गया (वा. रा. यु. ४३.२९)।

अग्निजिव्ह—अंगिरागोत्री ऋषि।

अग्नितेज—धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अग्निप—वेदनिधि नामक ब्राह्मण का पुत्र। एक बार प्रमोदिनी, सुशीला, सुस्वरा, सुतारा तथा चन्द्रिका नामक गंधर्वकन्या इसपर मोहित हो कर, उन्होंने इसे अपने साथ विवाह करने के लिये कहा। परंतु ब्रह्मचारी होने के कारण इसने यह अमान्य किया। अन्त में क्रोधित हो कर इन्होंने परस्पर को पिशाच होने का शाप दिया। बाद में, इसके पिता ने इसकी मुक्ति के लिये लोमश मुनि की प्रार्थना की। तब लोमश के कथनानुसार, सब पिशाचों ने (ऊः) प्रयागतीर्थ में स्नान करने से पूर्वयोनि प्राप्त की। अन्त में लोमश की आज्ञानुसार, इसने उन पांचों गन्धर्वकन्याओं से विवाह किया तथा पितासमवेत अलकापुरी में रहने लगा (पद्म. उ. १२८-१२९)।

अग्निबाहु—भौत्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. भौत्य मनु का पुत्र।

३. स्वायंभुव मनु का पुत्र।

अग्निभाव—अमिताभ देवगणों में से एक।

अग्निभू काश्यप—इन्द्रभू काश्यप का शिष्य (वं. ब्रा. २)।

अग्निमाठर—बाष्कल का शिष्य। बाष्कल ने इसको ऋग्वेद की एक संहिता सिखाई। भागवत के अनुसार अग्निमित्र तथा ब्रह्माण्ड के अनुसार अग्निमातर पाठभेद है। (व्यास देखिये)

अग्निमातर—(अग्निमाठर देखिये)।

अग्निमित्र—स्वायंभुव मनु का पुत्र।

२. अग्निमाठर देखिये

३. शुंगराजाओं का प्रथम राजा। यह मौर्यराजाओं का अन्तिम राजा बृहद्रथ के बाद, सिंहासन पर बैठा (शुंग देखिये)।

अग्नियुत स्थौर—(अग्नियूप देखिये)।

अग्नियूप स्थौर—यह एक सूक्त का द्रष्टा है। अग्नियुत पाठभेद भी है (ऋ. १०.११६)।

अग्निवर्चस्—व्यास के पुराणशिष्यपरंपरा का शिष्य। विष्णु, ब्रह्मांड तथा वायु के मत से रोमहर्षण का शिष्य।

अग्निवर्ण—(सू. इ.) सुदर्शन राजा का पुत्र।

अग्निवेश—शिवावतार शूलिन् का शिष्य।

अग्निवेश्य—अंगिरागोत्री ऋषि।

२. (सू. नरिष्यन्त.) देवदत्त का पुत्र। इसे जातुकर्ण्य तथा कानीन ऐसे नामान्तर है। यह तपद्वारा ब्राह्मण बना था। इस कारण, इसके द्वारा उत्पन्न संतति को, अग्निवेश्यायन नाम प्राप्त हुआ (भा. ९. २. २३)।

३. अगस्त्य ऋषी का एक शिष्य (म. आ. १२२.२४)। द्रुपद तथा द्रोणाचार्य ने इसके पास से धनुर्वेद की शिक्षा तथा ब्रह्मशिर अस्त्र प्राप्त किया। यह पांडवों के समागम में कुछ काल तक द्वैतवन में था। यह द्रोणाचार्य का पितृव्य तथा भारद्वाज का छोटा भाई (म. आ. १२२. २४)।

अग्निष्टुत् अथवा **अग्निष्टोम**—चक्षुर्मनु का नड्वला से प्राप्त पुत्र।

अग्निष्वात्त—एक पितृगण। ब्रह्मदेव अपनी मानसकन्या सन्ध्या को देख कर काममोहित हुए। उस समय

उनके धर्म से यह उत्पन्न हुआ। इनकी संख्या चौसठ हज़ार है। ये नित्य मनोविग्रह कर के वैराग्य से रहते हैं (कालि. २)। ये काश्यपपुत्र हैं तथा देवों को पूज्य हैं (म. १४-१५; ह. वं. १)। इनकी पत्नी स्वधा (भा. ४·१)।

अग्निहोत्र— सविता तथा पृथ्वी का पुत्र (भा. ६·१८१)।

अग्नीध्र— स्वायंभुव मनु का पुत्र (आग्नीध्र देखिये)।

२. भौत्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. भौत्य मनु का पुत्र। (आग्नीध्र देखिये)।

अग्नीध्रक— रुद्रसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अग्रयायिन्— (सो.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

अघ— कंस का अनुचर। यह बकासुर तथा पूतना राक्षसी का भ्राता था। कंस ने इसे गोकुल में कृष्ण तथा बलराम के नाश के लिये भेजा। वहाँ इसने चार योजन लंबा सर्पदेह धारण किया। एवं कृष्ण तथा अन्य गोपों के गोचारण के मार्ग में, अपना शरीर फैला दिया। इसने अपना मुख इतना विस्तीर्ण बना दिया था कि, उसे गुफा समझ कर, गायें चराने के लिये योग्य स्थल समझ कर, गोप समस्त गायों के साथ उसमें प्रविष्ट हो गये। कृष्ण को यह वर्तमान ज्ञात होते ही, वह वहाँ आया तथा इसके मुख में प्रविष्ट हो कर, बड़ा स्वरूप धारण करके इसका मुँह फाड दिया। इस कारण इसकी तत्काल मृत्यु हो गई (भा. १०·१२)।

अघमर्ण—(अघमर्षण देखिये)।

अघमर्षण माधुच्छन्दस—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १९०)। विश्वामित्र वंश के गोत्रकार मधुच्छंद का पुत्र। इसे अघमर्ण भी कहा गया है।

अघोर—हिरण्याक्ष की सेना का एक असुर। इसका वध कार्तिकेय ने किया (पद्म. सृ. ७५)।

अंग—(स्वा. उत्ता.) उल्मुक को पुष्करणी से उत्पन्न पुत्र। यह अत्रि का वंशज है। इस अर्थ से इसे अत्रि का पुत्र कहा है (पद्म सृ. ८)। ब्रह्माण्ड में इसके माता-पिता के नाम ऊरु तथा षडाग्नेयी दिये गये हैं (ब्रह्माण्ड २·३६·१०८–११०)। यह कृतयुगान्त में प्रजापति था। एक बार स्वर्ग जानेपर, इन्द्र का वैभव देख कर, यह प्रसन्न हो गया तथा इन्द्र के समान वैभवशाली पुत्र की प्राप्ति के हेतु से, इसने विष्णु की उपासना की। तब भाग्यवान् पुत्र प्राप्ति के लिये कुलीन कन्या से विवाह करने की सूचना विष्णु ने इसको दी। इसने यमकन्या सुनीथा से गांधर्व-विधि से विवाह किया। इसे सुनीथा से वेन नामक पुत्र हुआ (पद्म. भू. ३०–३६)। वह अत्यंत दुष्ट होने के कारण, अंग राजा खिन्न हो कर गृहत्याग कर के वन में गया। इसको सुमनस्, ख्याति, क्रतु, अंगिरस् तथा गय नामक पांच भ्राता थे (भा. ४·१३·१७–१८)।

२. (सो. अनु.) बलि का ज्येष्ठ पुत्र। यह बलि की भार्या सुदेष्णा को दीर्घतम से हुआ। इसे वंग, कलिंग, पुण्ड्र तथा सुह्म नामक चार भ्राता थे (म. आ. ९८·३२· १०४२; विष्णु ४·१८·१; मत्स्य. ४८·२४-२५; ब्रह्म. १३·२९–३१)। इनके सिवा, इसे आंध्र नामक पांचवा भाई था। अंग आदि पांच पुत्रों को बली ने राज्याभिषेक किया था। इनके देशों को भी इन्हीं के नाम प्राप्त हुए (ह. वं. १·३१·३४)। इसका एक पुत्र था। उसका नाम विभिन्न स्थलों में दधिवाहन (मत्स्य. ४८. ९१; ब्रह्म. १३. ३७; ह. वं. १·३१·४३), खनपान (भा. ९. २३. ५) अथवा पार (विष्णु. ४. १८. २) दिया गया है। अंग राजा के बाद के राजा, अंगवंशीय राजाओं के नाम से प्रसिद्ध हुए (अनुवंश देखिये)। इसने काफी यज्ञ किये। इसका चरित्र नारद ने सृंजय को बताया (म. द्रो. ५७)। इसका मांधाता ने पराभव किया था (म. शां. २९·८१)।

३. (सो. अनु.) दधिवाहन का पौत्र तथा दिविरथ का पुत्र। जब परशुराम क्षत्रियों का संहार कर रहा था तब इस का गौतम ने गंगा नदी के तट पर संरक्षण किया (म. शां. ४९·७२)।

४. भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय म्लेच्छ राजा। इस का वध भीम ने किया (म. द्रो. २५·१४–१७)।

५. भारतीय युद्ध में नकुल द्वारा मारा गया हुआ म्लेच्छ राजा (म. क. १७·१५–१७)।

६. (सो. भविष्य.) मत्स्य के मत में जनमेजय का पुत्र।

अंग औरव—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०·१३८)।

अंग वैरोचन—अभिषिक्त राजाओं की सूचि में इस उदार राजा का उल्लेख है। इसके पास उदमय आत्रेय नामक पुरोहीत था (ऐ. ब्रा. ८·२२)।

अंगचूड—कुबेर सभा का एक यक्ष (म. स. १०·१६) हंसचूड पाठ है।

अंगजा—ब्रह्मदेव की कन्या (मत्स्य. ३·१२)।

अंगद—वालि को तारा से उत्पन्न पुत्र। यह रामचन्द्र की सहायतार्थ, बृहस्पति के अंश से निर्माण हुआ था अतएव भाषण कला में अत्यंत चतुर था। युद्ध में, राम के बाण से आहत हो कर धराशायी होने पर, अपने पुत्र अंगद की रक्षा करने की प्रार्थना वालि ने राम से की (वा. रा. कि. १८.४९-५३)। रामचन्द्र ने सुग्रीव को किष्किंधा की राजगद्दी पर अभिषिक्त कर तत्काल अंगद को यौवराज्याभिषेक किया (वा. रा. कि. २६)।

वानराधिपति सुग्रीव ने, दक्षिण दिशा की ओर जिन वानरों को सीता की खोज की हेतु से भेजा, उनका अंगद नायक था (वा. रा. कि. ४१. ५–६)। सीता की खोज करते समय, पर्वत पर एक बडे असुर से इस की मुलाकात हुई, तथा उसने अंगद पर आक्रमण किया। उस समय उसे ही रावण समझकर, अंगद ने एक मुक्का उसके मुँह पर मारते ही वह रक्त की उलटी करने लगा तथा भूमी पर निश्चेष्ट गिर गया (वा. रा. कि. ४८. १६–२१)। सीता की खोज में असफल होने के कारण, सब वानरों ने प्रायोपवेशन करने का निश्चय किया। इतने में संपाति ने सीता का पता बताया (वा. रा. कि. ५५–५८)। उसी समय समुद्रोल्लंघन कर, कौन कितने समय में पार जा सकता है, इसकी पूछताछ अंगद ने की। अंगद ने कहा कि, एक उडान में वह १०० योजन का अंतर पार कर सकता है (वा. रा. कि. ६५)। अन्त में यह काम हनुमान ने किया। रावण के साथ युद्ध करने के पूर्व, साम की भाषा करने के लिये राम ने अंगद को वकील के नाते भेजा था परंतु उससे कुछ लाभ नहीं हुआ (म. व. २६८; वा. रा. यु. ४१)।

इसने इन्द्रजित के साथ युद्ध कर के उसे जर्जर किया (वा. रा. यु. ४३)। कंपन के साथ युद्ध कर के उसका वध किया (७६)। नरांतक का (६९-७०), महापार्श्व का (९८) तथा वज्रदंष्ट्र का वध किया (५४)। कुंभकर्ण के साथ युद्ध करते समय, सब वानर उसका शरीर देख कर भयभीत हो गये। उस समय, वीररसयुक्त भाषण करके, सब वीरों को इसने युद्ध में प्रवृत्त किया (६६)। यह सारा कर्तृत्व ध्यान में रख कर, राज्याभिषेक के समय राम ने इसको बाहुभूषण अर्पण किये (१२८)। सुग्रीव के बाद इसने किष्किंधा पर राज्य किया।

२. दशरथपुत्र लक्ष्मण को उर्मिला से दो पुत्र प्राप्त हुए। उनमें से यह ज्येष्ठ पुत्र है। इसके द्वारा स्थापित नगरी को अंगदीया कहते हैं। वहाँ यह राज्य करता था (वा. रा. उ. १०२)।

३. भारतीय युद्ध में पांडवों के विरुद्ध कौरवों को इसने सहायता की थी (म. द्रो. २४.३६)।

अंगराज— इसे पालकाप्य ने हाथियों का वैद्यकशास्त्र सिखाया था (अग्नि. २९२)।

अंगार— (सो. द्रुह्यु.) मांधाता राजा के साथ इसका बडा युद्ध हुआ था (म. शां. २९.८१)। यह युद्ध दस माह तक चलता रहा। इसका अंगारसेतु नाम भी प्राप्त है। (ब्रह्म. १३.१४९)। इसे आरब्ध, आरद्वत्, शरद्वत् तथा अरुद्ध नाम प्राप्त हैं (वंशावलि देखिये)।

अंगारक— मंगल नामक ग्रह। यह पूर्वजन्म का शिवपार्षद वीरभद्र है (मत्स्य. ७१; म. स. ११.२०; मंगल देखिये)।

२. सौवीर देश का एक राजपुत्र (जयद्रथ ३. देखिये)।

३. जयद्रथ का भ्राता (म. व. २४९. १०–१२)।

४. सुरभि तथा कश्यप का पुत्र

अंगारपर्ण—एक गंधर्व। पांडव लाक्षागृह से मुक्त हो कर जब गुप्तरूप से रात्रि के समय यात्रा कर रहे थे तब यह कुंभीनसी आदि स्त्रियों के साथ मार्ग की एक नदी में क्रीडा कर रहा था। अर्जुन के साथ इसकी बोलचाल हो कर, अर्जुन का तथा इसका युद्ध हुआ। युद्ध में अर्जुन ने उसको जीत लिया। यह देख कर इसने अर्जुन को सूक्ष्मपदार्थदर्शक चाक्षुषीविद्या प्रदान की, तथा अर्जुन के पास से अग्निशिरास्त्रविद्या स्वयं ली। तदनंतर अर्जुन को इसने कहा कि, वे पुरोहित के विना न घूमें तथा धौम्य ऋषि को पुरोहित बनायें। इतना कह कर यह चला गया। आगे चल कर, इसने अपना पहला नाम छोड कर चित्ररथ नाम का स्वीकार किया (म. आ. १५८.४२; १७४.२)।

अंगिरस्—एक ऋषि। यह वज्रकुलोत्पन्न था (ऋ. १. ५१.४. सायण.)। इसका मनु, ययाति (ऋ. १.३१.१७) तथा भृगु के साथ उल्लेख है (ऋ. ८.४३.१३)। यहाँ यह, इन लोगों के समान मैं भी अग्नि को बुला रहा हूँ ऐसा कहता है तथा इतरों के समान अंगिरसों को भी प्राचीन समझता है। दध्यञ्च्, प्रियमेध, कण्व तथा अत्रि के साथ भी इसका उल्लेख मिलता है (ऋ. १.१३९.९)। अंगिरस के सत्र में इन्द्र ने सरमा को भेजा (ऋ. १.६२.३)। उसी प्रकार अंगिरस के द्वारा सत्र करते समय, वहाँ नाभानेदिष्ठ मानव, सत्र में लेने के लिये प्रार्थना कर रहे हैं (ऋ. १०.६२.१–६)। अन्य वैदिक ग्रन्थों में भी नाभानेदिष्ठ का अंगिरस के साथ संबंध है (ऐ. ब्रा. ५.१४;

तै. सं. ३.१.९.४)। अग्नि को अंगिरस नाम दिया गया है (ऋ. १.१.६)।

अग्नि को प्रथम अंगिरा ने उत्पन्न किया। अंगिरस सुधन्वा का निर्देश है (ऋ. १.२०.१)। बृहस्पति अंगिरा का पुत्र था (ऋ. १०.६७)। अंगिरसों ने देवताओं को प्रसन्न कर के एक गाय मांगी। देवताओं ने कामधेनु दी परन्तु इन्हें दोहन नहीं आता था। अतएव इन्हों ने अर्यमन् की प्रार्थना की तथा उसकी सहायता से दोहन किया (ऋ. १.१३९.७)। अंगिरस तथा आदित्यों में स्वर्ग में सर्वप्रथम कौन पहुँचता है, इसके बारे में शर्यत हुई। वह शर्यत आदित्यों ने जीती तथा अंगिरस साठ वर्षों के बाद पहुँचा ऐसा उल्लेख अंगिरसामयन बताते समय आया है (ऐ. ब्रा. ४.१७)। बहुवचन में प्रयुक्त अंगिरा शब्द, हमारे पितरों का वाचक है तथा ये हमारे पितर हैं ऐसा भी निर्देश है (ऋ. १.६२.२; १०.१४.६)। यहाँ इसे नवग्व, भृगु तथा अथर्वन् भी कहा गया है। अंगिरसों ने इन्द्र की स्तुति कर के संसार का अंधकार दूर किया (ऋ. १.६२.५)। (अथर्वांगिरस देखिये)।

यह अग्नि से उत्पन्न हुआ अतएव इसे अंगिरस कहते हैं (नि. ३.१७)।

अंगिरस के पुत्र अग्नि से उत्पन्न हुए (ऋ.१०.६२.५)। अंगिरस प्रथम मनुष्य थे। बाद में देवता बने तथा उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ (ऋ. ४.४.१३)। अंगिरस दिवस्पुत्र बनने की इच्छा कर रहे थे (ऋ. ४.२.१५)। अंगिरसों को प्रथम वाणी का ज्ञान प्राप्त हुआ तदनंतर छंद का ज्ञान हुआ (ऋ. ४.२.१६)। ऋग्वेद के नवम मंडल के सूक्त, अंगिरस कुल के द्रष्टाओं के हैं। ब्रह्मविद्या किसने किसे सिखाई, यह बताते समय, ब्रह्मन्–अथर्वन्–अंगिरस–सत्यवह–भारद्वाज–अंगिरस–शौनक ऐसा क्रम दिया है (मुं. उ. १.१.२–३; ३.२.११)। अंगिरस का पुराने तत्त्वज्ञानियों में उल्लेख है (शि. उ. १)। कुछ उपासनामंत्रों को अंगिरस नाम प्राप्त हुआ है (छां. उ. १.२.१०; नृसिं. ५.९.)। यह शब्द पिप्पलाद को कुलनाम के समान लगाया गया है (प्रश्नोप. १)। अथर्ववेद के पांच कल्पों में से एक कल्प का नाम अंगिरसकल्प है। कौशिकसूत्र के मुख्य आचार्यों में इसका नाम है। आत्मोपनिषद् में अंगिरस ने शरीर, आत्मा तथा सर्वात्मा के संबंध में, जानकारी बताई है (१)। अंगिरस कुल के लोग सिरपर पांच शिखायें रखते थे (कर्मप्रदीप)। अंगिरस मंत्रकार था। परंतु अंगिरस के नामपर मंत्र न हो कर, अंगिरस कुल के लोगों के मंत्र हैं।

यह स्वायंभुव मन्वन्तर में, ब्रह्मा के सिर से उत्पन्न हुआ। यह ब्रह्मिष्ठ, तपस्वी, योगी तथा धार्मिक था (ब्रह्माण्ड. २. ९. २३)। तथापि स्वायंभुव की संतति की वृद्धि न हुई। इस लिये ब्रह्मा ने स्त्रीसंतति उत्पन्न की। दक्ष की कन्या स्मृति इसकी पत्नी बनी। इसको स्मृति से सिनीवाली, कुहू, राका तथा अनुमति नामक चार कन्यायें तथा भारताग्नि एवं कीर्तिमत् नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्माण्ड. १.११.१७)। वैवस्वत मन्वन्तर में, शंकर के वर से यह पुनः उत्पन्न हुआ। यह ब्रह्मदेव का मानस पुत्र था। यह ब्रह्मदेव के मुख से निर्माण हुआ। इसे पैतामहर्षि कहते हैं। यह प्रजापति था। अग्नि ने पुत्र के समान इसका स्वीकार किया था, इसलिये इसे आग्नेय नाम भी प्राप्त है। अग्नि जब क्रुद्ध हो कर तप करने गया तब यह स्वयं अग्नि बना। तप से अग्नि का तेज कम हो गया। तब वह इसके पास आया। इसने उसे पुनेवन अग्नि बन कर, अंधकार का नाश करने को कहा। इसने अग्नि से पुत्र मांगा। वही बृहस्पति है (मत्स्य २१७–२१८)। इसके नाम की उपपत्ति अनेक प्रकारों से लगायी जाती है (मत्स्य १९५.९; बृहद्दे. ५.९८; ब्रह्माण्ड. ३. १.४१)। ब्रह्मदेव ने संतति के लिये, अग्नि में रेत का हवन किया, ऐसी भी कथा है (वायु. ६५.४०)।

दक्षकन्या स्मृति इसकी पत्नी (विष्णु. १. ७)। चाक्षुष मन्वन्तर के दक्षप्रजापति ने, अपनी कन्या स्वधा तथा सती इसे दी थी। प्रथम पत्नी स्वधा को पितर हुए तथा द्वितीय पत्नी सती ने, अथर्वांगिरस का पुत्रभाव से स्वीकार किया (भा. ६.६)। इसे श्रद्धा नामक एक पत्नी भी थी (भा. ३.१२.२४;३.२४.२२)। शिवा (शुभा) नामक एक पत्नी भी इसे थी (म. व. २१४.३)। सुरूपा मारीची, स्वराट् कार्दमी तथा पथ्या मानवी यह तीन स्त्रियां अथर्वन् की बताई गई है (ब्रह्माण्ड. ३.१.१०२–१०३; वायु. ६५.९८)। तथापि मत्स्य में सुरूपा मारीची, अंगिरस की ही पत्नी मानी जाती है (मत्स्य. १९६.१)। ये दोनों एक ही माने जाते होंगे। सुरूपा से इसे दस पुत्र हुए। इसने गौतम को तीर्थमाहात्म्य बताया (म. अनु. २५.६९)। इसने पृथ्वीपर्यटन तथा तीर्थयात्राएं की थीं (म. अनु. ९४)। इसने सुदर्शन नामक विद्याधर को शाप दिया था (भा. ४.१३)। इसका तथा कृष्ण का स्यमंतपंचक क्षेत्र में मिलन हुआ था (भा. १०.८४)। इसको शिवा से

बृहत्कीर्ति, बृहज्ज्योति, बृहद्ब्रह्मन्, बृहन्मनस्, बृहन्मन्त्र, बृहद्भास तथा बृहस्पति नामक पुत्र तथा भानुमती, रागा (राका), सिनीवाली, अर्चिष्मती (हविष्मती), महिष्मती, महामती तथा एकानेका (कुहू) नामक सात कन्याएं थीं (म. व. २०८)। बृहत्कीर्त्यादि सब बृहस्पति के विशेषण हैं, ऐसा नीलकण्ठ का मत है। इसके अलावा भागवत में सिनीवाली, कुहू, राका तथा अनुमति नामक इसके कन्याओं का उल्लेख है (भा. ४.१.३४)। इसके पुत्र बृहस्पति, उतथ्य तथा संवर्त हैं (म. आ. ६०.५; भा. ९.२.३६)। इसके अतिरिक्त वयस्य (पयस्य), शांति, घोर, विरूप तथा सुधन्वन् भी इसके पुत्र थे (म. अनु. १३२.४३)।

इसने चित्रकेतु के पुत्र को सजीव करके उस का सांत्वन किया (भा. ६.१५; चित्रकेतु १. देखिये)।

अंगिरस का धर्मशास्त्र—व्यवहार के अतिरिक्त अन्य सब विषयों में इसका उल्लेख पाया जाता है। याज्ञवल्क्य ने इसका उल्लेख किया हैं। अंगिरस के मतानुसार, परिषद् में १२१ ब्राह्मणों का समावेश होता है। (याज्ञ. १.९ विश्व.)। धर्मशास्त्र का अवलंब न करते हुए स्वेच्छा से किसीने अगर कृत्य किया तो वह निष्फल हो जाता है (याज्ञ. १.५०)। घोर पातक से अपराधी माने गये ब्राह्मणों के लिये, वज्र नामक व्रत अंगिरस ने बताया, ऐसा उल्लेख विश्वरूप में पाया जाता है (याज्ञ. ३.२४८)। प्रायश्चित्त के संबंध में, विश्वरूप ने (याज्ञ. ३.२६५) इसके दो श्लोक दिये हैं। इनमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, स्त्रीवध के संबंध में विचार किया गया है। कुछ पशुपक्षियों के वध के संबंध में भी प्रायश्चित्त बताया है (याज्ञ. ३. २६६)। इसी में भगवान् अंगिरस कहकर बडे गौरव से इसका उल्लेख किया गया है। परिषद् की घटना से संबंधित इसके तेरह श्लोक अपरार्क ने (२२-२३) दिये हैं। मिताक्षरा में शंख तथा अंगिरस के सहगमन-संबंध में काफी श्लोक दिये गये हैं (याज्ञ. १.८६)। अपरार्क ने (१०९.११२) सहगमन संबंध में, चार श्लोक दिये हैं जिसमें कहा है कि, ब्राह्मण स्त्री को सती नहीं जाना चाहिये। मेधातिथि ने (मनु. ५, १५७) अंगिरस का सती संबंध में यह मत दे कर, उसके प्रति अपनी अमान्यता व्यक्त की है। इसके अशौच संबंध के श्लोक, मिताक्षरादि ग्रंथों में तथा इतरत्र आये हैं। सप्त अंत्यजों के संबंध में, इसका एक श्लोक हरदत्त ने (गौतम २०.१) दिया है। विश्वरूप ने लिखा है कि, सुमन्तु ने अंगिरस का मत ग्राह्य माना है (याज्ञ. ३.२३७) शुद्धिमयूख में अंगिरस ने शातातप का मत ग्राह्य माना है। स्मृतिचन्द्रिका में उपस्मृतियों का उल्लेख करते समय अंगिरस का निर्देश है। वहाँ इसके गद्य अवतरण भी दिये हैं। अंगिरस ने मनु का धर्मशास्त्र श्रेष्ठ माना है (स्मृतिचं. आह्निक)। आनन्दाश्रम में १६८ श्लोकों की, प्रायश्चित्त बताने वाली अंगिरसस्मृति है। उसमें प्रायश्चित्त तथा स्त्री के संबंध में विचार किया गया है। मिताक्षरा में तथा वेदाचार्यों की स्मृतिरत्नावली में बृहद्अंगिरस दिया है। मिताक्षरा में मध्यम अंगिरस का कई बार उल्लेख आया है।

अंगिरस के देवपुत्र—आत्मा, आयु, ऋत, गविष्ठ, दक्ष, दमन, प्राण, सत्य, सद तथा हविष्मान्।

मुख्य गोत्रकार—अजस (अयस्य), उतथ्य, ऋषिज (उषिज), गौतम, बृहस्पति, वामदेव तथा संवर्त।

उपगोत्रकार—अत्रायनि, अभिजित्, अरि, अरुणायनि, उतथ्य, उपबिंदु, ऐरिडव, कारोटक, कासोरू, केराति, कौशल्य (ग), कौष्ठिकि, क्रोष्टा, क्षपाविश्वकर, क्षीर, गोतम, तौलेय, पाण्डु, पारिकारारिरेव (पारःकारिररेव), पार्थिव (ग), पौषाजिति (पौष्यजिति), भार्गवत, मूलप, राहुकर्णि (रागकर्णि), रेवाग्नी, रौहिण्यायनि, वाहिनीपति, वैशालि सजीविन्, सलौगाक्षि, सामलोमकि, सार्धनेमि, सुरैषिण, सोम तथा सौपुरि, ये सब उपगोत्रकार अंगिरा, उशिज, सुवचोतथ्य इन तीन प्रवरों के हैं।

अग्निवेश्य, आत्रेयायणि, आपस्तंबि, आश्वलायनि, उडुपति, एकेपि, कारकि (काचापि), कौचकि, कौरुक्षेत्रि, कौरुपति, गांगोदधि, गोमेदगंधिक, जैत्यद्रौणि, जैह्वलायनि, तृणकर्णि, देवरारि, देवस्थानि, द्याख्येय, धमति, (भूनित), नायकि, पुष्पान्वेषि, पैल, प्रभु, प्रावहि, प्रावेपि, फलाहार, बर्हिसादिन्, बाष्कलि, बालडि, बालिशायनि, ब्रह्मतन्वि (ब्रह्म तथा तवि), मत्स्याच्छाद्य, महाकपि, महातेज (ग), मारुत, मार्ष्टिपिंगलि, मूलहर, मौंजवृद्धि, वाराहि, शालंकायनि, शिलाग्रीविन्, शिलस्थलिसरिद्भवि साद्यसुग्रीवि, सालडि (भालुठिवालुठि), सोमतन्वि (सोम तथा तवि), सौटि, सौवेष्ट्य तथा हरिकर्णि ये सब उपगोत्रकार अंगिरा बृहस्पति तथा भरद्वाज इन तीन प्रवरों के हैं।

काण्वायन (ग), कोपचय (ग), क्रोष्टाक्षिन्, गाधिन् गार्ग्य, चक्रिन्, तालकृत, नालविद, पौलकायनि, बलाकिन् (बालाकिन्), बहुग्रीविन्, भाष्ट्रकृत, मधुरावह, मार्कटि, राष्ट्रपिण्डिन, लावकृत, लैन्द्राणि, वात्स्यतरायण, श्यामायनि, सायकायनि, साहरि तथा स्कंदस, ये सब उपगोत्रकार

अंगिरा, गर्ग, बृहस्पति, भरद्वाज तथा सैत्य इन पांच प्रवरों के हैं।

उरुक्षय, उर्व, कपीतर, कलशीकंठ, काव्य, कारीरथ, कुसीदकि, जलसंधि, दाक्षि, देवमति, धान्यायनि, पतंजलि, बिंदु, भरद्वाजि, भावास्थायनि, भूयसि, मदि, राजकेशिन्, लब्धिन्वौषडि, शंसपि, शक्ति, शालि, सोबुधि, व स्वस्तितर, ये सब उपगोत्रकार अंगिरा, उरुक्षय तथा दमवाह्य इन तीन प्रवरों के हैं।

अनेह (अनेहि), आर्पिणि (आर्पिणि), गार्ग्यहरि (गर्गिहर), गालव (गालवि), गौरवीति, चेनातकि, तंडि, तैलक, त्रिमार्ष्टिदक्ष, नारायणि (परस्परायणि), मनु, संकृति तथा संबंधि, ये सब उपगोत्रकार अंगिरा, गौरवीति तथा संकृति इन तीन प्रवरों के हैं।

कात्यायनि, कुणेराणि, कौत्स, पिंग, भीमवेग, माद्रि, मौलि, बात्स्यायनि, शाश्वदर्भि, हंडिदास तथा हरितक, ये सब उपगोत्रकार अंगिरा, जीवनाश्व (युवनाश्व) तथा बृहदश्व इन तीन प्रवरों के हैं।

बृहदुक्थ तथा बामदेव, ये उपगोत्रकार अंगिरा, बृहदुक्थ तथा बामदेव इन तीन प्रवरों के हैं।

अंगिरा, पुरुकुत्स तथा सदस्यु ये तीन प्रवर कुत्सों के है।

अंगिरा, विरूप, रथीतर ये तीन प्रवर रथीतरों के है।

कर्षण (कर्षिण), जतृण, पुत्र तथा विष्णुसिद्धि, वैरपरायण तथा शिवमति ये उपगोत्रकार अंगिरा, विरूप तथा वृषपर्व इन तीन प्रवरों के हैं।

तंबि, मुद्गल, सात्यमुग्रि तथा हिरण्य इन उपगोत्रकारों के प्रवर अंगिरा, मत्स्यदग्ध तथा मुद्गल।

अग्निजिह्व, अपांग्रेय, अश्वयु, देवजिह्व, परण्यस्त (ग), विमौद्गल, विराड्प (विडालज) तथा हंसजिह्व इनके प्रवर अंगिरा, तांडि तथा मौद्गल्य।

अपांडु, कटु (कंकट), गुरु, नाडायन, नारिन्, प्रागाथस (प्रागाथम), मरण (मरणाशन), मर्कटप (कटक), मार्कंड (मार्कंट), शाकटायन, शिव तथा श्यामायन ये उपगोत्रकार अंगिरा, अजमीढ तथा काटव इन तीन प्रवरों के हैं।

कपिभू, गार्ग्य तथा तित्तिरि ये अंगिरा, कपिभू तथा तित्तिरि इन प्रवरों के हैं।

ऋक्ष, ऋषिर्मित्रवर, ऋषिवान्मानव, भरद्वाज ये सब अंगिरा, ऋषिर्मित्रवर, ऋषिवान्मानव, भरद्वाज तथा बृहस्पति इन पांच प्रवरों के हैं।

भारद्वाज, शैशिरेय, शौंग तथा हुत, ये उपगोत्रकार अंगिरा, बृहस्पति, भारद्वाज, मौद्गल्य तथा शैशिर इन पांच प्रवरों के हैं (मत्स्य. १९६)।

अंगिरस वंश—(इसे अथर्वन वंश भी कहा जाता है)।

पथ्या—धृष्णि-सुधन्वन्-ऋषभ।

सुरूपा— १ आधासि, २ आयु, ३ मूल, ४ दनु, ५ दक्ष, ६ प्राण, ७ बृहस्पति–भारद्वाज, ८ सत्य, ९ हविष्य १० हविष्णु।

स्वराट्—१ अयास्य का कितव, २ उतथ्य का शरद्वान, ३ उशिज का दीर्घतमस्, ४ गौतम, धामदेव तथा बामदेव का बृहदुक्थ।

इनके अन्य भेद

अयास्य, आपंभ, उतथ्य, उशिज, कण्व, कपि, कितव, गर्ग, भारद्वाज, भरद्वाज, मुद्गल, रथीतर, रुक्ष, विष्णुवृद्ध, सांकृति, हरित (ब्रह्मांड. ३. १. १०४–११२)।

अंगिरस गोत्रीय मंत्रकार

वायु. ५९.९८-१०२;–अंगिरस्, अजमीढ, अंबरीष, अमूत, आयाप्य, आहार्य्य, उतथ्य, ऋषभ, औगज, कक्षीवान्, कण्व, गार्ग्य, त्रसदस्यु, दीर्घतमस्, पुरुकुत्स, पृषदश्व, पौरुकुत्स, बलि, बाष्कलि, बृहदुक्थ, भरद्वाज, भारद्वाज, मांधाता, मुद्गल, युवनाश्व, वाजश्रवस्, बामदेव, विरूप, वेधस, शेनी, संहृति, सदस्युमान्, सुवित्ति।

मत्स्य. १४५.१०१ १०५; – अंगिरस, अजमीढ, अपस्यौष, अंबरीष, अभ्यहार्य, उकुल, उतथ्य, ऋषिज, कक्षीवान्, कवि, काव्य, कृतवान्, गर्ग, गुरुवीत, त्रित, दीर्घतमस्, पुरुकुत्स, पृषदश्व, बृहत्, भरद्वाज, मांधाता, मुद्गल, युवनाश्व, लक्ष्मण, वाजिश्रव, वामदेव, विरूप, वैगम, शरद्वान्, शुक्ल, स्मृति संस्कृति, सदस्यवान्, सुचित्ति, स्वभव।

ब्रह्मांड. २.३२-१०७-१११; – अंगिरस्, अजमीढ, अंबरीष, अयास्य, आहार्य, उतथ्य, अशिज, कक्षीवान्, कण्व, कपि, कतवान्, गर्ग, चक्रवती, तुक्षय, त्रसदस्यु, दीर्घतमस्, पुरुकुत्स, पौरुकुत्स, बाष्कलि, बृहदुक्थ, भरद्वाज, मांधाता, मुद्गल, युवनाश्व, वाजश्रवस्, बामदेव, विरूपाक्ष, वृषादर्भ, शिनि, संकृति, दस्युमान्, सनद्वाज।

(आंगिरस तथा वसुरोचिष् देखिये)।

२. उत्तानपादवंशीय उल्मुक को पुष्करिणी से उत्पन्न पुत्र।

३. श्रावण माह के इन्द्र नामक सूर्य के साथ घूमनेवाला ऋषि (भा. ४. १३; ह. वं. १. १८)।

४. एक पितृगण।

अचल—शकुनि का भाई। यह युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में था (म. स. ३१. ७)। यह महाभारत के युद्ध में अर्जुन के हाथ से मारा गया (म. द्रो. २९. ११-१२)। यह एकरथ था (म. उ. १६५. १; शकुनि देखिये)।

२. (सो. वसुदेव.) वायु के मतानुसार वसुदेव का मदिरा से उत्पन्न पुत्र।

३. (मगध. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार महीनेत्र का पुत्र।

अच्छावाक् क्रतु—ब्रह्मदेव के पुष्कर तीर्थ के यज्ञ का होतृगणों का एक ऋत्विज (पद्म. सृ. ३४)।

अच्छोदा—बर्हिषद पितरों की मानसकन्या। अग्निष्वात्त पितरों की कन्या (ह. वं. १.१८. २६–२७)। इससे अच्छोद सरोवर बना। इसने अनजाने पितरों में से अमावसु को वरण किया; इसलिये यह योगभ्रष्ट हुई तथा द्वापारयुग में अमावसु की कन्या हुई (ब्रह्माण्ड. ३. १०. ५४–६४, म. आ. ७; परि. १. ३४. पंक्ति १४, २५; मत्स्य. १४.३–७)। आगे चल कर यही सत्यवती हुई।

अच्युत—विभिंदुकीयों ने किये सत्र में यह प्रतिहर्ता का काम करता था (जै. ब्रा. ३. २२३)।

अज—(सू. इ.) राजा रघु का पुत्र तथा दशरथ का पिता। पद्मपुराण में रघु का पौत्र तथा दिलीप द्वितीय का पुत्र (पद्म. ८)। अजा अर्थात् बकरी पालने के कारण, इसे अज नामांतर प्राप्त हुआ। इसने भैरवी का पूजन कर के सुख और ऐश्वर्य प्राप्त किया। उस भैरवी को अजातपालेश्वरी कहने लगे (स्कंद. ७. १. ५८)। इसका पुत्र दीर्घबाहु तथा उसका पुत्र दशरथ (पद्म. सृ. ८)।

२. प्रतिहर्ता को स्तुती से उत्पन्न दो पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र। इसका भाई भूमन् (भा. ५. १५. ५)।

३. (सू. निमि.) ऊर्ध्वकेतु जनक का पुत्र तथा पुरुजित् जनक का पिता।

४. (सो. पुरुरवस्.) विजयकुल में बलाकाश्व राजा का पुत्र। इसका पुत्र कुश अथवा कुशिक।

५. पांडव पक्षीय एक महारथी (म. उ. १६८. १२)।

६. दाशराज्ञ युद्ध में सुदास का शत्रु (ऋ.७.१८.१९)।

७. सुरभि तथा कश्यप का पुत्र।

८. उत्तम मनु का पुत्र।

९. एक ऋषि। इसके कुल में धनंजय, कपर्देय, परिकूट तथा पाणिनि ऋषि हुए (विश्वामित्र देखिये)।

१०. तुषित देवगणों में से एक।

११. इसकी लड़की पृश्नि (जंतुधना तथा शंड देखिये)।

१२. धर्म तथा मुहूर्ता का पुत्र।

अज एकपाद्—यह अग्नि है। दुर्गाचार्य इसका अर्थ 'सूर्य' ऐसा लेते हैं (नि. १२.२९)। इसका निवासस्थान स्वर्ग है (नि. ५.६)। इसे पेयनिषेक दिया जाता है (पा. गृ. २. १५.२)। यह एकादश रूद्रों में से एक है।

अजक—दनुपुत्र दानव (स्कंद. ३.२.८)।

२. (सो. अमा.) बलाकाश्व का पुत्र। इसका पुत्र कुश अथवा कुशिक। भागवत तथा वायुमत में सुहोत्रपुत्र तथा विष्णुमत मे यह सुजंतु का पुत्र है।

३. (सू. इ.) मत्स्य मत में दिलीप का पुत्र। यह नाम अज के लिये आया है।

४. (प्रद्योत. भविष्य.) विशाखयूपा का पुत्र।

अजकर्ण—मय और रंभा का पुत्र।

अजगंधा—कश्यप तथा मुनि की कन्या। यह अप्सरा थी।

अजन—तेरह सैंहिकेयों में से एक असुर (सैंहिकेय देखिये)।

अजब—वायु तथा ब्रह्मांड मत में व्यास के सामशिष्य परंपरा का हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)।

अजबिंदु—सौवीर देश का राजा। लोभ के कारण इसका नाश हुआ (कौ. अ. ६)।

अजमीढ—(सो. पुरु.) विकुंठन तथा दाशार्ही सुदेवा का पुत्र। उस को कैकेय्यी, नागा, गांधारी, विमला तथा ऋक्षा आदि पत्नीयाँ थी। इसको २४०० पुत्र हुए। उन मे वंश चलाने वाला संवरण था। संवरण-वैवस्वती तपती का पुत्र कुरु। (म. आ. ९०.३८-४०)।

२. (सो. पूरु) सुहोत्र और ऐक्ष्वाकी का ज्येष्ठ पुत्र। इसकी पत्नी के नाम धूमिनी, नीली और केशिनी। धूमिनी का ऋक्ष, नीली के दुःषन्त तथा परमेष्ठिन्, केशिनी के जह्नु, जन तथा रूपिन् ऐसे पुत्र थे। ये सब पांचाल थे (म. आ. ८९. २६–२९)।

वायुमें हस्ति के तीन पुत्रो में इसे ज्येष्ठ कहा है। इसकी नीलिनी, धूमिनी और केशिनी तीन पत्नियाँ थीं। इसका वंश चलाने वाले तीन पुत्र थे। उनके नाम ऋक्ष, बृहदिषु (बृहद्वसु) और नील। बृहदिषु से अजमीढ वंश प्रारंभ होता है। (वायु. ९९. १७०)

अजमीढ से, पांचाल देश में, पांचालवंशीय पुरुवंश का स्वतंत्र राज आरंभ हुआ। इस कारण इस वंश का नाम अजमीढवंश हो गया। पांचाल के दो भाग हुए। दक्षिण पांचाल तथा उत्तर पांचाल। दक्षिण पांचाल में अजमीढ-पुत्र बृहद्विषु तथा उत्तर पांचाल में अजमीढपुत्र नील राज करने लगे।

बृहद्विषु से भल्लाटपुत्र जनमेजय तक के वंश का उल्लेख, अनेक पुराणों में मिलता है। इस में प्रायः बीस पुरुष है।

जनमेजय के पश्चात्, उत्तर पांचाल का नीलवंशीय पृषत्पुत्र राजा द्रुपद, दक्षिण पांचाल का शासक बन गया। द्रुपद की कन्या द्रौपदी, पांडवों की पत्नी थी तथा पुत्र धृष्टद्युम्न, भारतीय युद्ध में पांडवों का सेनापति था।

भारतीय युद्ध के लिये, द्रुपद ही पांडव पक्ष का प्रधान तथा कुशल नियोजक माना जाता है।

दक्षिण पांचाल की राजधानी कांपिल्य थी तथा उत्तर पांचाल की राजधानी अहिच्छत्र। नीलवंशीय पृषत्पुत्र द्रुपद के समय दोनो पांचाल राज एकत्रित हुए।

द्रोण तथा द्रुपद के युद्ध के पश्चात्, उत्तरपांचाल का अधिपति द्रोण हो गया।

भारतीय युद्ध के पश्चात्, पांचाल राज का नाम कहीं नही मिलता।

मूलतः क्षत्रिय होते हुए भी आगे चल कर, इस वंश के लोग ब्राह्मण हुए (वायु. ९९. ११६)

अजमीढ, अंगिरा गोत्र में प्रवर और मंत्रकार है (ऋ. ४. ४३-४४)।

अजमीह्ळ सौहोत्र—सूक्तद्रष्टा। ऋग्वेद में इसके दो सूक्त है (ऋ. ४. ४३-४४)। आजमीह्ळासः ऐसा मंत्र में निर्देश है (ऋ. ४. ४४. ६)। पौराणिक उच्चार अजमीढ है।

अजमीह्ळ—अजमीढ का नामान्तर।

अजय—(शिशु. भविष्य.) भागवतमतानुसार दर्भक का पुत्र।

अजस्य—अंगिराकुल का गोत्रकार। अयस्य पाठ भी प्रचलित है।

अजात—(सो. विदूरथ.) मत्स्यमतानुसार हृदीक का पुत्र।

अजातशत्रु—युधिष्ठिर का नामांतर (भा. १. ८. ५; म. भी. ८१. १७)।

२. (शिशु. भविष्य.) ब्रह्मांडमतानुसार बिंबिसार राजा का पुत्र। विष्णुमतानुसार बिंदुसार का, मत्स्यमतानुसार भूमिमित्र का तथा वायुमतानुसार क्षेमवर्मन् का पुत्र।

अजातशत्रु काश्य अथवा **अजातरिपु**—काशी का राजा। गार्ग्य बालाकी नामक अभिमानी ब्राह्मण को इसने वाग्विवाद में हराया (बृ. उ. २. १. १; कौ. उ. ४. १)।

अजामिल—कान्यकुब्ज देश का एक ब्राह्मण। यह प्रथम सदाचारी था। परन्तु बाद में किसी वेश्या के मोह में फँसकर, इसने वृद्ध मातापिता तथा विवाहिता पत्नी का भी त्याग कर दिया। राहगीरों को लूटना, द्यूत खेलना, धोखा देना तथा चोरी करना इ. साधनों से यह चरितार्थ चलाता था। इस प्रकार इसने अठ्यासी वर्ष बिताये। इस वेश्या से इसे दस पुत्र हुए। उनमें से सबसे छोटे नारायण पर इसकी अधिक प्रीति थी। मरणसमय आने पर यह उसी को पुकारता रहा। केवल नामस्मरण के माहात्म्य से यमदूतों के हाथों से विष्णुदूतों ने इसे मुक्त किया। तब विष्णुदूत तथा यमदूतों का वार्तालाप इसने सुना। यमदूतों द्वारा कथित, वेदप्रतिपादित गुणाश्रित धर्म तथा विष्णुदूतो द्वारा प्रतिपादित शुद्ध भागवतधर्म सुन कर इसे कृतकर्म का पश्चात्ताप हुआ तथा हरि के प्रति भक्ति इसके मन में उत्पन्न हुई। अन्त में विरक्त हो कर, यह हरिद्वार को गया तथा गंगा में देहत्याग कर के मुक्त हो गया (भा. ६. १-२)।

अजामुखी—लंका के अशोकवन में, सीता के संरक्षण के लिये नियुक्त राक्षसियों में से एक (वा. रा. सु. २४. ४४)।

अजित्—स्वायंभुव मन्वन्तर के याम देवताओं में से एक।

२. चाक्षुष मन्वन्तर के वैराग्य तथा संभूति से उत्पन्न विष्णु का अवतार (मनु देखिये)।

३. भौत्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अजित—पृथुक देवों में से एक।

अजिन—ऊरु को षड्आग्नेयी से प्राप्त पुत्र।

अजिर—सर्प सत्र में यह सुब्रह्मण्य नामक ऋत्विज का कार्य करता था (पं. ब्रा. २५.१५)।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के जिदाजित् देवों में से एक।

अजिह—पारावत देवों में से एक।

अजिह्निका—अशोकवन की एक राक्षसी (म. व. २६४. ४४)।

अजीगर्त सौयवसि—भृगुकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण। इसे शुनःपुच्छ, शुनःशेप तथा शुनोलांगूल नामक तीन पुत्र थे। शुनःशेप को इसने वरुण को बलि देने के लिये, हरिश्चन्द्र को बेच दिया था (ऐ. ब्रा. ७. १५-५७)। (अम्बरीष तथा ऋचीक देखिये)

अजेय—पारावत तथा विकुंठ देवताओं में से एक।

अजैकपात्—भूत ऋषिको घोरा से उत्पन्न एक रुद्र। २. एक अग्नि, यह रुद्र भी था। (अज एकपाद् देखिये)।

अजैकपाल—शंकर के प्रसाद से प्राप्त पुत्र। इसका एक पैर मनुष्य का तथा दूसरा बकरे का था। बचपन में मृत्यु, रोगों के साथ इसे मारने के लिये आया। परंतु इसने मृत्यु को जीत लिया। इस कारण इसे मृत्युंजय नाम प्राप्त हुआ। यह अत्यंत सात्त्विक था (भवि. प्रति. ४. ११)।

अंजक—कश्यप को दनु से उत्पन्न एक दानव।

अंजन—(सू. निमि.) विष्णु के मत से कुणिपुत्र।

२. ऐरावण का पुत्र। यह यम का वाहन है (ब्रह्मांड. ३. ७. ३३०)।

अंजनपर्वन्--घटोत्कच का पुत्र (म. उ. १९५. १९०. ५९३)। यह रात्रियुद्ध में अश्वत्थामा के हाथों से मारा गया (म. द्रो. १३१. ५३)।

अंजना—यह पूर्वजन्म में पुंजकस्थली नामक अप्सरा थी। शाप के कारण यह पृथ्वी पर कुंजर नामक वानर की कन्या हुई। परंतु अन्य स्थानों पर, इसे गौतम ऋषि की कन्या माना गया है (शिव. शत. २०)। यह केसरी वानर की पत्नी थी (भवि. प्रति. ४. १३)। मतंग ऋषि के कहने से अंजनी ने पति के साथ वेंकटाचल पर जा कर, पुष्करिणीतीर्थ पर स्नान कर के, वराह तथा वेंकटेश को नमस्कार किया। तदनंतर आकाशगंगातीर्थ पर वायु की आराधना की। १००० वर्षों तक तप होने के बाद वायु प्रगट हुआ, तथा उसने कहा 'चैत्र माह की पौर्णिमा के दिन मैं तुम्हारी कामना पूर्ण करूंगा। तुम वरदान मांगो।' इसने पुत्र मांगा। बाद में वायुप्रसाद से इसे मारुती (हनूमान) उत्पन्न हुआ (स्कन्द. २. ४०)। इसे मार्जरा नामक सौत थी (आ. रा. सार. १३)। इसका अंजनी तथा अंजना दोनों नामों से उल्लेख आया है। यह काम-रूपधरा थी (वा. रा. कि. ६६)।

अटमान--(आंध्र. भविष्य.) मेघस्वाती का पुत्र।

अट्टहास—वर्तमान मन्वन्तर के बीसवें चौखाने में हिमालय के अट्टहास शिखर पर यह शिव का अवतार हुआ। वहाँ इसे निम्नांकित शिष्य थे—१. सुमन्तु, २. वर्वरी, ३. कबंध, ४. कुशिकंधर (शिव. शत. ५)।

अणि मांडव्य—मांडव्य ऋषी का नामान्तर।

अणीचिन् मौन—धार्मिक विधि के संबंध में एक तत्त्वज्ञ तथा जाबाल तथा चित्र गौश्रायणि का समकालीन (सां. ब्रा. २३. ५)।

अणुह--(सो. पूरु.) विभ्राज अथवा पार राजा का पुत्र। इसे नीप नामक दूसरा नाम है। इसकी पत्नी शुकाचार्य की कन्या कृत्वी अथवा कीर्तिमती। इसे ब्रह्मदत्त तथा अन्य भी सौ पुत्र थे।

अतिकाय--धान्यमालिनी से रावण को प्राप्त पुत्र। इसका शरीर अत्यंत स्थूल होने के कारण, इसे यह नाम मिला। इसने ब्रह्मदेव की आराधना कर के अस्त्र, कवच, दिव्य रथ तथा सुरासुरों से अवध्यत्व प्राप्त किया। इसी कारण, इसने इन्द्र का पराभव किया तथा वरुण को जीत कर उससे उसका पाश प्राप्त किया। कुंभकर्ण की मृत्यु के बाद यह युद्धार्थ आया तब लक्ष्मण ने इसका वध किया। (वा. रा. यु. ७१)।

अतिथि—(सू. इ.) कुश का पुत्र। इसका पुत्र निषध। भविष्य के मतानुसार इसने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

२. आद्य देवगणों में से एक।

अतिथिग्व— दिवोदास को इस नाम से संबोधित किया है। इसका संबंध इंद्रोत, पर्णय, करंज और तुर्वयाण से माना जाता है।

अतिधन्वन्—मशक का शिष्य। इसका शिष्य उदर शांडिल्य (वं. ब्रा. २)। इसने उदरशांडिल्य को उद्गीथ की उपासना के बारे में जानकारी बताई (छां. उ. १.९.३)।

अतिनामन्— चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अतिबाहु— स्वायंभुव मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

२. कश्यप को प्राधा से उत्पन्न एक गंधर्व।

अतिभानु— सत्यभामा तथा कृष्ण का पुत्र।

अतिभूति—(सू. दिष्ट.) विष्णु के मत में यह [illegible] का पुत्र है।

अतिरथ—(सो. पुरु.) मतिनार का पुत्र (म. आ. ८९. ११)।

अतिरात्र— चक्षुर्मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

अतिसाम एतुरेत— प्राणविद्या की रक्षा करने वाले तत्त्वज्ञानियों में से एक मान कर इसे नमन किया गया है (जै. उ. ब्रा. २६.१५)।

अतुलविक्रम— (सू. इ.) भविष्य के मतानुसार क्रोधदान का पुत्र।

अत्यंहस् आरुणि— प्लक्ष द्व्यांपति के पास सावित्राग्नि के बारे में प्रश्न करने के लिये इसने अपना शिष्य भेजा था। परंतु उस शिष्य की उसने काफी निर्भर्त्सना की (तै. ब्रा. ३.१०.९.३-५)।

अत्यराति जानंतपि— एक पृथ्वीजेता। राजा न होते हुए भी, वासिष्ठ सात्यहव्य ने इसे ऐन्द्र महाभिषेक किया। इस कारण, इसने सारी पृथ्वी जीती। वासिष्ठ सात्यहव्य ने जब पौरोहित्य का स्मरण दिला कर उसके लिये पुरस्कार मांगा, तब इसने कहा कि, "उत्तर कुरुओं को जीतने के बाद संपूर्ण पृथ्वी का राज्य आपको दे कर मैं आपका सेनापति बनूंगा"। इस पर सात्यहव्य ने कहा, "तुमने मुझको धोखा दिया। क्यों कि मानव उत्तर कुरुओं को नहीं जीत सकते।" तदनंतर सात्यहव्य ने इसे हतबल किया तथा शिबिराजा का पुत्र अमित्रतपन शुष्मिण शैब्य के द्वारा इसका वध करवाया (ऐ. ब्रा. ८.२३)। क्षत्रिय ने ब्राह्मण के साथ द्रोह नहीं करना चाहिये, इस लिये यह कथा बताई गई है।

अत्रायनि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

अत्रि—एक सूक्तद्रष्टा। ऋग्वेद में अत्रि की एक कथा का बार बार उल्लेख आता है। इसे अत्यधिक ताप हो रहा था तब अश्विनों ने इसे शांत किया (ऋ. १. ११२.७)। इसे कुछ कारणवश कारागृहवास करना पड़ा था। इसके कारागृहवास का कारण था, जनता का पक्ष लेकर राजा से लड़ाई। यह लोकशासित राज्य के लिये प्रयत्न करता था (ऋ. ५.६६)। इसे पांचजन्य कहा है (ऋ. १.११७.३)। यह अग्निकुंड में गिरा था अग्नी में झुलसा। उस अग्नी के दाह से अश्विनों ने इसे मुक्त किया (ऋ. १. ११८. ७; ११९. ६)। बहुधा कारागृह की यातनाओं की कल्पना व्यक्त करने के लिये ऐसा वर्णन किया होगा (ऋ. ५. ७. ८. ४; १०. ३९. ९)। पांचवें मंडल में अत्रिगोत्र के काफी सूक्तकारों का उल्लेख है (यजत तथा रातहव्य देखिये)। अत्रि ने चतूरात्र याग शुरू किया (तै. सं. ७. १. ८)। इसे ग्रहण के संबंध में प्रथम ज्ञान हुआ। इसी लिये ग्रहण लगने पर अत्रि सूर्य को वापस लाता है, ऐसा माना जाता था (ऋ. ५. ४०. ५-९. ब्रह्माण्ड. ३.८.७७; ह. वं. १.३१. १३-१४; प्रभाकर आत्रेय देखिये)।

स्वायंभुव मन्वन्तर में प्रजोत्पादनार्थ ब्रह्मदेव द्वारा निर्मित दस मानस पुत्रों में से यह एक था (वायु. १.९)। यह ब्रह्मदेव के नेत्र से या मस्तक से उत्पन्न हुआ था (भा. ३.१२. २४; मत्स्य. ३.६-८)। यह स्वायंभुव मन्वन्तर में ब्रह्मा के कान से उत्पन्न हुआ (वायु. ९.१०१; ब्रह्माण्ड. २.९.२१; ब्रह्मन् देखिये)। स्वायंभुव मनु का यह जामात। दक्ष ने सती एवं शंकर को न बुलाने के कारण, सती ने स्वयं को दग्ध कर लिया। इस क्रोध के कारण शंकर ने सब को दग्ध कर दिया। उसमें इसकी मृत्यु हो गई। दक्ष की कन्या अनसूया इसकी पत्नी। अत्रि को अनसूया से पांच पुत्र हुए। १. श्रुति (शंखपाद की माता तथा कर्दम पौलह प्रजापती की पत्नी), २. सत्यनेत्र, ३. हव्य, ४. आपोमूर्ति शनैश्चर, ५. सोम। इस मन्वन्तर में हजारों आत्रेय उत्पन्न हुए (ब्रह्माण्ड. २. ११. २५)। शंकर के वर से ही यह पुनः वैवस्वत मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ। यह एक प्रजापति था (म. स. ११. १५; शां. २०१; मत्स्य. १७१. २६-२७)। कर्दम प्रजापति के कन्याओं में से, अनसूया इसकी पत्नी थी (भा. ३. २४. २२)।

इसे अनसूया से दत्त, दुर्वास तथा सोम नामक तीन पुत्र हुए (ब्रह्मांड. ३.८.८२;८५; मार्क. १६; अग्नि २०.१२; भा. ४.१.१५;३३)। वायु पुराण में अत्रि को दत्त, दुर्वास ये दो पुत्र तथा ब्रह्मवादिनी कन्या उत्पन्न हुई ऐसा उल्लेख है (७०.५५-७६)। अत्रि को सोम तथा अर्यमा नामक दो पुत्र थे ऐसा उल्लेख महाभारत में दिया है (शां. २०१)। पुष्कल महर्षि इसका पुत्र था ऐसा भी उल्लेख प्राप्य है (म. आ. ६०.६)। इनके नेत्र से चन्द्रमा उत्पन्न हुआ (भा. ९.१४.२-३)।

स्वायंभुव मन्वन्तर में इसने उत्तानपाद को दत्तक लिया था (ब्रह्मांड. २.३६.८८-९०; ह. वं. १.२)। इसका गौतम ऋषि के साथ ब्राह्मणमहात्म्य पर संवाद हुआ था (म. व. १८३)। वायु का हैहय अर्जुन के साथ जब युद्ध चल रहा था तब राहू ने चन्द्र तथा सूर्य का पराभव कर के सर्वत्र अंधकार कर दिया। उस समय देवताओं की प्रार्थना मान्य कर के अत्रि स्वयं चन्द्र बना तथा अंधकार का नाश किया (म. अनु. २६१८)।

यह एक सूक्तकार था (वायु. ५९.१०४; ब्रह्मा. २. ३२; मत्स्य. १४५; बृ. उ. २.२.१.)। अत्रि को पैतामहर्षि कहा

जाता है (मत्स्य. १७१. २८)। यह शिवावतार गौतम का शिष्य है। यह स्वायंभुव तथा वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक था। उन्नीसवें द्वापर में यह व्यास था।

अत्रि का धर्मशास्त्र—आनंदाश्रम के स्मृति समुच्चय में अत्रिसंहिता तथा अत्रिस्मृति नामक दो ग्रंथ हैं। अत्रिसंहिता में नौ अध्याय तथा चारसौ श्लोक हैं तथा अनेक प्रायश्चित्त बताये हैं। वहाँ योग, जप, कर्मविपाक, द्रव्यशुद्धि तथा प्रायश्चित्त का विचार किया गया है।

अत्रिस्मृति में नौ अध्याय हो कर प्राणायाम, जपप्रशंसा तथा प्रायश्चित्त बताये हैं। मनु ने गौरव के साथ इसका मत लिया है (३.१६)। दत्तकमीमांसा में इसके मत का उल्लेख है। इसके लध्वत्रिस्मृति तथा बृहदात्रेयस्मृति नामक दो ग्रंथ भी उपलब्ध हैं। इसने वास्तुशास्त्र पर भी एक ग्रंथ रचा था (मत्स्य. २५२.१-४)।

अत्रिवंश के गोत्रकार—अर्धपण्य, उद्दालकि, करजिव्ह, कर्णजिव्ह, कर्णिरथ, कर्दमायन शाखेय (ग), गोणीपति, गोणायनि, गोपन (ग), गौरग्रीव, गौरजिन, चैत्रायण, छंदोगेय, जलद, तर्कबिंदु, तैलप, भद्रपाद, लैद्राणि, वामरथ्य, शाकलायनि, शारायण, शौण, शौक्रतव (शाक्रतव, शीक्रतव), सवैलेय (सचैलेय), सौनकर्णि (शौणव कर्णिरथ), सौपुष्पि तथा हरप्रीति (रसद्वीचि) ये गोत्रकार अत्रि, आर्चनानश (त्रिवरातम्) तथा श्यावाश्व इन तीन प्रवरों के हैं।

ऊर्णनाभि, गविष्ठिर, दाक्षि, पर्णवि, बलि, बीजवापि, भलंदन, मौंजकेश, शिरीष तथा शिलर्दनि, ये गोत्रकार अत्रि, गविष्ठिर तथा पूर्वातिथि इन तीन प्रवरो के हैं।

कालेय (ग), धात्रेय (ग), मैत्रेय (ग) वामरथ्य (ग) तथा सवालेय (ग) ये गोत्रकार अत्रि, पौत्रि तथा वामरथ्य, इन तीन प्रवरों के है (मत्स्य. १९७.१-५)। अत्रिपुत्र सोम के वंश में विश्वामित्र हुआ (मत्स्य. १९८)। अत्रि का वंश अनेक स्थानों पर आया है (ब्रह्माण्ड. ३.८.७४-८७; वायु. ७०. ६७-७८; लिङ्ग. १. ६३)। अन्यत्र भी विभागशः आया है (ब्रह्म. ९. १; ह. वं. १. ३१. १२-१७; प्रभाकर तथा स्वस्त्यात्रेय देखिये)।

अत्रिकुल के मंत्रकार—अत्रि, अर्चिसन, निष्ठुर, पूर्वातिथि, बल्गूतक, श्यामावान (वायु. ५९. १०४); अत्रि, अर्धस्वन, कर्णक, गविष्ठिर, पूर्वातिथि, शावस्य (मत्स्य. १४५. १०७-८); अत्रि, अर्चसन, आविहोत्र, गविष्ठिर, पूर्वातिथि, शावाश्व (ब्रह्माण्ड. २. ३२. ११३-११४)।

२. वसिष्ठगोत्र का एक प्रवर।

३. व्यासपुराण की शिष्यपरंपरा के वायु के अनुसार, यह रोमहर्षण का शिष्य है (व्यास देखिये)।

ऋग्वेद के एक सूक्त की दस ऋचाएं अनेक अत्रियों ने देखी है (ऋ. ९. ८६. ३१-४०)। इससे ज्ञात होता है कि, अत्रिकुल के लोग भी अत्रि नाम से व्यवहृत होते थे।

अत्रि भौम—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २७, ३७-४३; ७६; ७७; ८३-८६; ९. ६७. १०-१२; ८६. ४१-४५; १०. १३७. ४)।

अत्रि सांख्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४३)।

अथर्वन्—अश्वत्थ के दानस्तुति का दान ग्रहण करनेवाला (ऋ. ५. ४७.२४)। यह एक प्राचीन उपाध्याय था (ऋ. १०.१२०.९)। इसीने अग्निमंथन का प्रचार किया (ऋ. ६. १६.१३; तै. ब्रा. ३. ५. ११; वा. सं. ३०. १५)। इसके द्वारा उत्पन्न अग्नि, विवस्वत् का दूत बना (ऋ. १०. २१. ५)। इसीके नाम पर से अग्नि को अथर्वन् नाम प्राप्त हुआ (ऋ. ६. १६. १३)। अग्नि को इसकी उपमा दी गई मिलती है (ऋ. १०. ८७. १२; ८. ९. ७)। अथर्वन् का अर्थ अग्निहोत्री भी है (ऋ. ७. १. १) इसका तथा इन्द्र का स्नेह था। इन्द्र इसे सहायता करता था (ऋ. १. ४८. २)।इसकी देवताओं में गणना की गई है (बृ. उ. २. ६. ३; ४. ६. ३)। इसने इन्द्र को उद्देशित कर के एक स्तोत्र की रचना की है (ऋ. १. ८०. १६)। इसने यज्ञ कर के, स्थैर्य प्राप्त कर लिया (ऋ. १०. ९२. १०)। इसने यज्ञसामर्थ्य से मार्ग चौडा कर लेने पर, सूर्य उत्पन्न हुआ (ऋ. १. ८३. ५)। मनु तथा दध्यञ्च् के साथ इसने तप किया था (ऋ. १. १०. १६)। अथर्वांगिरस् शब्द प्राप्य है (अ. वे. १०.७.२०. श. ब्रा. ११. ५. ६७)। इसने इन्द्र को सोमरस दिया (अ. वे. १८. ३. ५४)। वरुण ने इसे एक कामधेनु दी थी (अ. वे. ५. ११; ७. १०४)। इसका देवताओं के साथ स्नेहसंबंध होने के कारण यह स्वर्ग में रहता था (अ. वे. ४. १. ७)।

यह आचार्य था (श. ब्रा. १४. ५. ५. २२; ७. ३. २८)। अथर्वांगिरस् ऋषि का प्रादुर्भाव वैशाली राज्य में हुआ। इस शब्द का अनेकवचन पितर अर्थ से आया है (ऋ. १०.१४.४-६; १०. १५. ८)। वे स्वर्ग में रहनेवाले देवता थे (अ. वे. ११. ६. १३)। एक अद्भुत मूली से ये दैत्यनाश करते थे (अ. वे. ४. ३७. ७)।

यह ब्रह्मदेव का ज्येष्ठ पुत्र। यज्ञ नामक इन्द्र इसका सहाध्यायी था। इन दोनों को ब्रह्मदेव से ब्रह्मविद्या प्राप्त हुई (मुं. उ. १. १. १-२)।

यह स्वायंभुव मन्वन्तर का ऋषि था। यह ब्रह्मदेव का मानसपुत्र था। इसे कर्दमकन्या शांति तथा चित्ति नामक दो पत्नियाँ थीं (भा. ४.१; १०. ७४. ९.)। इसे सुरूपा मारीची, स्वराट् कार्दमी तथा पथ्या मानवी ये तीन पत्नियाँ थीं (ब्रह्माण्ड. ३.१. १०२-१०३; वायु. ६५. ९८)। परंतु सुरूपा मारीची, अंगिरस् की पत्नी मानी गई है (मत्स्य. १९६.१)। भृतवत, दध्यन्च् तथा अथर्वशिरस् इसके पुत्र हैं। इन्हें आथर्वण कहते हैं।

यह युधिष्ठिर के यज्ञ में ऋत्विज था (भा. १०.७४. ९)। अंगिरस कुल का प्रथम कह कर, इसका उल्लेख किया गया है तथा अथर्ववेद से इसका संबंध है, ऐसा उल्लेख अथर्ववेद में पाया जाता है (म. उ. १८. ७-८; मुं. उ. १.१.१-२; वायु. ७४; ब्रह्माण्ड. ३.६५.१२; ह. बं. १.२५)। इसकी माँ का नाम सती था (भा. ६. ६. १९)। इसने समुद्र से अग्नि बाहर निकाला (म. व. २१२.१८)। नहुष, इन्द्रपद से भ्रष्ट होने के पश्चात पहला इन्द्र सिंहासन पर बैठा। तब अंगिरा ने आ कर अथर्ववेदमंत्रों से इन्द्र का सत्कार किया। तब इन्द्र ने इसे वरदान दिया कि, 'तुम्हारे वेद का नाम अथर्वांगिरस होगा, तुम्हें भी लोग अथर्वांगिरस कहेंगे तथा तुम्हें यज्ञभाग भी मिलेगा' (म. उ. १८.५-८; पणि देखिये)।

अथर्वशिरस्—यह अथर्वन् का पुत्र था (अथर्वन् देखिये)।

अथर्वांगिरस्—अंगिरस को इन्द्र द्वारा दी गई संज्ञा। अथर्वन् तथा अथर्ववेद की संज्ञा (तै. ब्रा. ३.१२.८.२; श. ब्रा. ११.५.६.७ मैत्र्यु. ६.३३; छां. उ. ३.४. १-२; प्र. उ. २.८)। अथर्ववेद शब्द सूत्र में आया है (कौ. सू. ३.१९)।

अथौजस्—वैशाखमास के सूर्य के साथ रहनेवाला यक्ष (भा. १२. ११. ३४)।

अदारि—सुरारि देखिये।

अदिति—मित्रावरुणों की (ऋ. ८.२५. ३; १०३. ८३) तथा अर्यमा की (ऋ. ८.४.७९) माता। इसीसे स्वाभाविकतः इसे राजमाता कहा जाता है (ऋ. २.२७. ७)। इसके आठ पुत्र हैं तथा वे अत्यंत बलवान् हैं (ऋ. १०. ७२. ८; ३.४.११; ८.५६. ११)। पौराणिक कथाओं में अदिति, दक्षकन्या तथा कश्यप पत्नी है। परंतु वेदों में उसे विष्णु की पत्नी कहा गया है (वा. स. २९. ६०; तै. सं. ७.५.१४)। अदिति, आप तथा पृथ्वी से देवता उत्पन्न हुए (ऋ. १०.६३.२)। अदिति की द्यौ तथा पृथ्वी से एकरूप कल्पना की गई है (ऋ. १.७२,९; अ. वे.१३. १. ३८)। तथापि कई स्थानों पर द्यावापृथिवी की अपेक्षा इसका पृथक् उल्लेख किया गया है (ऋ. १०. ६३.१०)। एक स्थान पर अदिति विश्वसृष्टि की मूर्ति दिखाई देती है (ऋ. १. ८९.१०)। अदिति, आदित्य की माता, अतएव तेज प्राप्त करने के लिये उसकी प्रार्थना की गयी है (ऋ. ४.२५.३; १०.३६.३)। उसके तेज का गौरव किया गया है। ऋग्वेद तथा अगले ग्रंथों में अदिति को गो कहा गया है (ऋ. ७.८२.१०)। उषा को अदितिमुख कहा है (ऋ. १.११५.३; ८.९०.१५; १०.११.१; वा. सं. १३.४३:४९)। संस्कार की गाय को सामान्यतः अदिति कहा जाता है। भूलोक के सोम की तुलना अदिति के दूध से की गई है (ऋ. १.९६.१५)। अदिति की नप्ती (कन्या) दूध को ही माना गया होगा। यह पात्र में गिरते हुए सोम के साथ एकजीव होती है (ऋ. ९.६९. ३)।

यह प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा आसिक्नी की कन्या तथा कश्यप प्रजापति की पत्नी थी। इससे पता चलता है कि, ऋग्वेद के एक सूक्त की द्रष्टी अदिति दाक्षायणी यही होगी (ऋ. १०. ७२)। मैनाक पर्वत के मध्य में स्थित विनशन नामक तीर्थ पर अदिति ने चरु पकाया था (म. व. १३५.३)। देवयुग में तीनों लोकों पर देवताओं का स्वामित्व था। उस समय इसने पुत्रप्राप्त्यर्थ सतत एक पैर पर खड़े हो कर अति कठिन तपश्चर्या की। उससे विष्णु उत्पन्न हुआ (म. अनु. ९३)। विष्णु के पहले इसे ग्यारह पुत्र हुए थे। विष्णु को मिला कर कुल बारह पुत्र हुए (कश्यप देखिये)। तैत्तिरीय संहिता में कहा गया है कि, इसे आठ ही पुत्र हुए। इसे सात की कामना थी अतएव आठवा गर्भ इसने फोड़ दिया। केवल सात पुत्र ले कर यह देवताओं के पास गई। आठवाँ मार्तांड अथवा विवस्वान् का इसने त्याग किया। ये आठ पुत्र ही अष्ट वसु हैं। भूमिपुत्र नरकासुर ने अदिति के कुंडलों का हरण किया तथा वह प्राग्ज्योतिष नगर में जा कर रहने लगा। आगे चल कर कृष्ण उन्हें जीत लाया तथा अदिति को उसने वे कुंडल दिये (म. उ. ४७)।

अदीन—(सो. क्षत्र.) सहदेव का पुत्र। इसका पुत्र जयत्सेन।

अदूर—रुद्रसावर्णि मनु का पुत्र।

अदृश्यंती—मैत्रावरुणी वसिष्ठपुत्र शक्ति की पत्नी तथा पराशर ऋषि की माता।

२. चित्रमुख ब्राह्मण की कन्या। इसका पिता पहले वैश्य था, परंतु तप से ब्राह्मण हो गया (म. अनु. ५३. १७)।

अद्ध—ब्रह्मांड के मत में, व्यास के यजुःशिष्यपरंपरा का, याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य।

अद्भुत—अग्निविशेष। इसकी पत्नी प्रिया। पुत्र का नाम विडुरथ (म. व. २१३.२५)।

२. दक्षसावर्णि मन्वन्तर में होनेवाला इन्द्र।

अद्रि—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अद्रिका—कश्यप तथा मुनि की कन्या अप्सरा। यह शाप से जल में मत्स्यी बनी। इसने मत्स्य नामक राजा तथा मत्स्यगंधा नामक कन्या को जन्म दिया (उपरिचर वसु देखिये; म. आ. ६४)। यह विमान में अमावसु नामक पितरों के साथ क्रीडा करते समय, अच्छोदा के मन में, अमावसु के प्रति कामेच्छा उत्पन्न हुई (ब्रह्माण्ड. ३.१०.५४-६४)।

अधच्छायामय—कश्यप गोत्र का एक ऋषिगण।

अधर्म—ब्रह्मदेव के पृष्ठभाग से उत्पन्न धर्मविरोधी पुरुष। इसकी पत्नी मृषा। मृषा से दंभ तथा माया यह मिथुन निर्माण हुआ (भा. ३.१२)। इसने वह अपने लिये लिया। आगे चल कर, उस मिथुन से लोभ तथा निकृति यह मिथुन उत्पन्न हो कर, आगे क्रमशः क्रोध तथा हिंसा, कलि तथा दुरुक्ति, मृत्यु तथा भय एवं निरय तथा यातना इस प्रकार संतति उत्पन्न हुई (भा. ४. ८. १-४)। हिंसा से इसे अमृत तथा निकृति उत्पन्न हुए। उनसे भय, नरक, माया तथा वेदना उत्पन्न हुए। माया से मृत्यु, वेदना से दुःख तथा मृत्यु से व्याधि, जरा, शोक, तृष्णा तथा क्रोध उत्पन्न हुए (पद्म. सृ. ३)।

२. वरुण को ज्येष्ठा से उत्पन्न पुत्र। इसे निर्ऋति नामक पत्नी थी। इसके पुत्र १. भय, २. महाभय तथा ३. मृत्यु (म. आ. ६७)।

अधितंस—(सो.) भविष्यमत में अनुतंस का पुत्र।

अधिपति—एक देव। यह भृगु का पुत्र है।

अधिरथ—(सो. अनु.) सत्कर्मा का पुत्र। यह सारथ्यकर्म करता था। एक बार गंगातट पर क्रीडा करते समय, कुंती ने कर्ण को रख कर नदी में छोडी हुई पेटी इसको मिली। तदनंतर कर्ण को बाहर निकाल कर, इसने उसका नालच्छेदन किया तथा उसे अपनी राधा नामक पत्नी को सौंप कर, पुत्र के समान उसका पालन किया (भा. ९.२३.१३; म. आ. ६७; १३७; व. २९३)।

अधिसामकृष्ण—(सो. पूरु. भविष्य.) वायु, विष्णु तथा मत्स्य पुराण में, इसके आगे भविष्यकालीन राजाओं का उल्लेख प्रारंभ हुआ है। इसके राज्य काल में वायु-पुराण लिखा गया (वायु. ९९.२५८)। हस्तिनापुर बह जाने पर, यह अपनी राजधानी कौशांबी में ले गया (वायु. ९९.२७१)। मत्स्य के मत में यह शतानीक-पुत्र है। विष्णु तथा मत्स्य पुराणों में अधिसोमकृष्ण ऐसा पाठ है। भागवत में असीमकृष्ण पाठ है। शतानीक-अश्वमेधदत्त-अधिसामकृष्ण ऐसा वंशक्रम पाया जाता है (वायु. ९९.२५७-२५८)।

अधिसोमकृष्ण—अधिसामकृष्ण देखिये।

अधीर—एक राजा। यह शंकर का परमभक्त था। एक बार गलती से इसने एक निरपराध स्त्री को देहान्त शासन दिया। उसी प्रकार, एक शिवमंदिर भी इसके हाथों जलाया गया। इन दो दुष्टकृत्यों के कारण मृत्यु के अनन्तर, यह पिशाच बना तथा इसके मुख से निरंतर अग्निज्वाला निकलने लगी। परंतु शंकर के प्रसाद से इसका यह कष्ट दूर हुआ तथा यह शिव गणों में से एक हुआ (पद्म. पा. १११)।

अधृति— अभूतरजस् देवों में से एक।

अधृष्ट वा **अधृष्णु**— सावर्णि मनु का पुत्र।

अध्रिगु— अश्वि तथा इन्द्र ने इसकी रक्षा की (ऋ. १.११२.२०; ८.१२.३)।

अध्वरीवत्— सावर्णि मनु का पुत्र।

अनग्नि— पितरों में से एक। इसकी पत्नी दक्षकन्या स्वधा। स्वधा से इसे वयुना तथा धारिणी नामक दो कन्याएँ हुई (भा. ४.१.६२-६४; पद्म. सृ. ९)।

अनघ— उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. एक गंधर्व (म. आ. ११४.४४)।

अनंग— कर्दम प्रजापति का पुत्र (म. शां. ५९. ९७)।

अनंत— कद्रूपुत्र (काश्यप देखिये)।

२. (सो. यदु.) वीतिहोत्र का पुत्र। इसका पुत्र दुर्जयामित्रकर्षण (ब्रह्म. १३)।

अनंतभागिन्— भृगु कुल का एक गोत्रकार।

अनंतसेन— देवों में से स्कंद अथवा रुद्र। इसने भीष्म के वध के लिये अंबा को माला दी। (अम्बा देखिये)।

अनंती— शतरूपा का नामान्तर।

अनपान— (सो. अनु.) वायु के मत में दधिवाहन का पुत्र (खनपान देखिये)। इस को अपान द्वार नही था। इस लिये यह नाम है।

अनपाया— कश्यप तथा मुनि की कन्या। यह एक अप्सरा थी।

अनमित्र— (सू. इ.) निघ्नराजा का पुत्र।

२. (सो. यदु.) वृष्णि को इस एक ही नाम के दो पुत्र थे। (सुमित्र देखिये)।

३. (सो. यदु.) शिनि राजा का पुत्र। यह बड़ा पराक्रमी था। भागवत में, इसे युधाजित् का पुत्र भी कहा है।

४. ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र।

अनरण्य— (सू. इ.) त्रसदस्यु का पुत्र (भा. ९. ७.४)। मत्स्य, ब्रह्माण्ड, वायु तथा लिंग पुराणों के मत में यह संभूत का पुत्र है। यह जब अयोध्या में राज्य कर रहा था, तब रावण ने इस पर आक्रमण किया। उस समय इसने रावण से घमासान युद्ध किया। परंतु रावण अधिक बलवान होने से, इसकी संपूर्ण सेना नष्ट हुई। इसने रावण के अमात्य, मारीच, शुक, सारण तथा प्रहस्त का पराभव किया। परंतु जल्द ही यह धरती पर गिरा तथा मरते-मरते इसने रावण को शाप दिया कि, यदि मेरा तप, दान, हवन सत्य होंगे, तो मेरे वंश का दशरथपुत्र राम समस्त कुल समवेत तुम्हारा नाश करेगा (वा. रा. यु. ६०; उ. १९)। युद्ध त्याग कर तप करते समय रावण ने इसका वध किया इसलिये इसने शाप दिया। इसका पुत्र त्रसदश्व। भविष्य के मत में यह निषादश्व का पुत्र है तथा इसने अठाईस हजार वर्षों तक राज्य किया।

२. (सू. इ.) सर्वकर्मा का पुत्र। इसका पुत्र निघ्न (पद्म. सृ. ८)।

अनर्वन्— वृत्रासुरानुयायी असुर (भा. ६.१०.१८–१९)।

अनर्शनि—इन्द्र का शत्रु (ऋ. ८. ३२.२.)।

अनल—धर्म को वसु से उत्पन्न पुत्र। इसके पुत्र, कुमार (कार्तिकस्वामी), शाख, विशाख तथा नैगमेय। यह एक वसु है। यह प्रस्तुत मन्वन्तर में आग्नेयी दिशा का स्वामी है। यह कुमार अनल एवं स्वाहा का पुत्र है (ब्रह्माण्ड. ३. ३. २१–२६; म. आ. ६७; विष्णु. १. १५)।

२. बिभीषण के अमात्यों में से एक (मालेय देखिये)।

३. गरुड का पुत्र (म. उ. ९९. ९)।

अनला—रोहिणी की दो कन्याओं में से दूसरी। इसकी कन्या शुकी।

२. माल्यवान् राक्षस को सुंदरी नामक स्त्री से उत्पन्न कन्या तथा विभावसु राक्षस की पत्नी। इसकी कन्या कुम्भीनसी (वा. रा. उ. ६१.१६)।

अनवद्या—कश्यप को प्राधा से उत्पन्न अप्सरा।

अनश्वन्—(सो. पूरु.) मिदूरथ का पुत्र। इसकी माँ मगध वंश की [illegible]। इसकी पत्नी का नाम अमृता। इसके पुत्र का नाम परीक्षित (म. आ. ९०. ४२)। अरुग्वत् ऐसा पाठभेद है।

अनसूय—कश्यप गोत्र का एक गोत्रकार।

अनसूया—स्वायंभुव तथा वैवस्वत मन्वन्तर के ब्रह्मा मानसपुत्र अत्रि ऋषि की पत्नी। यह कर्दम को देवहूती से हुई। यह दक्षकन्या भी थी (गरुड. ६)। ऋग्वेद के बाईसवें परिशिष्ट में केवल अत्रि की स्त्री ऐसा इसका उल्लेख है। पौराणिक वाङ्मय में पतिव्रता कह कर इसका उल्लेख है। इसने निराहार तीन सौ वर्षों तक तप कर के शंकर की कृपा संपादित की। इससे इसे दत्तात्रेय, दुर्वासस तथा चन्द्र नामक तीन पुत्र हुए। चित्रकूट की गंगा इसने प्रवृत्त की (शिव. कै. २. १९)।

राम वनवास को जाते समय अत्रि के आश्रम में आये थे। तब अत्रि ने निम्नोलिखित अनसूया का वर्णन कर के, सीता को, उसके दर्शनार्थ भेजने के लिये राम से कहा। दस वर्षोंतक पर्जन्यवृष्टि न होने पर लोग दग्ध होने लगे तब अनसूया ने फलमूल उत्पन्न कर के आश्रम में गंगा लाई। यह उग्र तपश्चर्या करनेवाली एवं कड़क नियमोंवाली है। दस हजार वर्षों तक इसने बड़ी तपस्या की है। इसके व्रतों से ही ऋषियों की तपस्या के मार्ग में आनेवाले विघ्न दूर हुए। देवकार्यों के लिये परिश्रम करते समय दस रातों की एक रात्रि इसने बनाई। सीता ने जब इसका दर्शन लिया तब इसके गात्र शिथिल हो गये थे। शरीर पर झुर्रियाँ पड़ गई थी। बाल सफेद थे। हवा से हिलनेवाली कदली के समान इसकी स्थिति हो गई थी। पतिसमवेत वनवास स्वीकारने के लिये, सीता की इसने प्रशंसा की तथा निरंतर ताजी रहनेवाली माला, वस्त्र, भूषण, उबटन, अनुलेपन इ. वस्तुएं दी। तदनंतर स्वयंवर के बारे में, प्रेम

से सीता के साथ बातें की। उसे अलंकार पहना कर बड़े प्यार से बिदा किया (वा. रा. अयो. ११७-११९)।

मांडव्य ऋषि को जब शूली पर चढाया गया था, तब उस शूल को अंधकार में एक ऋषिपत्नी का धोखे से धक्का लगा, तब मांडव्य ने उसे शाप दिया कि, सूर्योदय होते ही तुम विधवा हो जाओगी। तब उसने सूर्योदय ही नहीं होने दिया। इससे सारे व्यवहार बंद हो गये। उसकी अनसूया सखी होने के कारण, जब प्रार्थना की गई तब उसे वैधव्य प्राप्ति न होने देते हुए, इसने सूर्योदय करवा कर समस्त संसार को सुखी किया (मांडव्य देखिये)।

अनाधृष्टि--(सो. पुरु.) रौद्राश्व का पुत्र (म. आ. ८९.१०)। इसकी पत्नी एक अप्सरा थी।

२. (सो. यदु.) शूर राजाका पुत्र।

३. श्रीकृष्ण अनुयायी एक यादव (म. आ. २१३,२६; स. ३.५७; वि ६७.२१; उ. १४९.६२)।

अनाधृष्य--धृतराष्ट्र पुत्रों में से एक (म. आ. ६१. १०४)।

अनानत पारुच्छेप--एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.१११)।

अनायुष--इसके मान के कारण इसके पुत्र की मृत्यु हुई (मार्कं. २४.१६)।

अनायुषा--एक राक्षसी। इसे अररु, बल, विज्वर, वृत्र व वृष नामक पुत्र थे (ब्रह्माण्ड. ३.६.३१-३७)।

आनिकेत--यक्ष (म. स. १०.१७)।

अनिमिष--गरुड का पुत्र (म. उ. ९९.१०)।

अनिरुद्ध--(सो. यदु.)-प्रद्युम्न को रुक्मकन्या से उत्पन्न पुत्र। यह दस हजार हाथियों के बल से युक्त था (भा. १०. ९०. ३५-३६, विष्णु. ५. ३२.५)। पर्वत उखाड कर यह उससे शत्रु को मारा करता था। इसकी अनेक पत्नीयाँ थी तथा सुरा पी कर यह उनसे रममाण होता था (ह. वं. २.११८.७३; ११९. २६-२७)। इसे रुक्मिपौत्री रोचना से वज्र उत्पन्न हुआ (भा. १०, ६१)। इसेही प्राद्युम्नि ऐसा दूसरा नाम है। इसने अन्य यदु कुमारों के साथ अर्जुन के पास धनुर्वेद सीखी (म. स. ४.२९.५३)। इसने बाणासुर की कन्या उषा के साथ गांधर्व विधि से विवाह किया। यह राजसूय यज्ञ में था (म. स. ३१.१५)।

२. अठारह वास्तुशास्त्रकारों में से एक (मत्स्य. २५२. ३-४)।

अनिल--अष्टवसुओं में से एक। इसकी पत्नी का नाम शिवा। इसे मनोजव एवं अविज्ञानगति नामक दो पुत्र थे (म. आ. ६०. २४; ब्रह्माण्ड. ३. ३. २१; २६; विष्णु. १. १५. ११०-११५)।

२. एक क्षत्रिय। शैब्य अथवा वृषादर्भी का पुत्र। वृषादर्भी ने अपने एक यज्ञ में, इसे दक्षिणा कह कर, सप्तर्षियोंको अर्पण किया। परंतु अल्पायु होने के कारण, शीघ्र ही इसकी मृत्यु हो गई। उस समय भयंकर अवर्षण होने के कारण, अत्यंत क्षुधातुर सप्तर्षियों ने इसे स्थाली में पका कर खाने का विचार किया। परंतु यह पका नही अतएव वह कार्यरूप में न आ सका (म. अनु. ९३)।

३. मित्रविंदा से कृष्ण को प्राप्त पुत्रों में से एक (भा. १०. ६१. १६.)।

४. (सो. पूरु.) विष्णु के मत में तंसु का पुत्र।

५. गरुड़ का पुत्र (म. उ. ९९. ९)।

अनिल वातायन--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६८)।

अनिष्टकर्मन्--(आंध्र. भविष्य.) ब्रह्मांड के मतानुसार पटुमानपुत्र तथा भागवत मतानुसार अटमानपुत्र। विष्णु के मतानुसार अरिष्टकर्मन् पाठ है।

अनीकविदारण--जयद्रथ का बंधु (म. व. २४९. १२)।

अनील--कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

अनीह--(सू. इ.) भागवतमत में देवानीकपुत्र। इसे अहीनरादि नामांतर हैं।

अनु--दाशराज्ञयुद्ध में सुदास के शत्रुओं में से एक (ऋ. ७. १८. १४)। इन्द्र का रथ अनु ने बनाया (ऋ. ५. ३१. ४)। यह कारिगर तथा इन्द्र का उपासक था (ऋ. ८.४.१)।

२. (सो.) ययाति को शर्मिष्ठा से उत्पन्न तीन पुत्रों में से ज्येष्ठ (म. आ. ७०. ३२)। इसने यदु के ही समान, पिता का वृद्धत्व स्वीकार नही किया अतएव इसे मुख्य राज्याधिकार नही था। यह उत्तर में म्लेच्छों का राजा बना (मत्स्य. ३३. २२-२३)।

अनु से ले कर कर्णपुत्र वृषसेन तक का वंश भागवत में उद्धृत किया हैं (भा. ९. २३. १-१४)। अनु से आठवां पुरुष महामनस् को, उशीनर तथा तितिक्षु नामक दो पुत्र हुए। उशीनर शाखा से केकय तथा मद्रक निकले। ये भारत की वायव्य सीमा की ओर फैले तथा बलि के पुत्र, अंग, वंग, कलिंग, सुह्म, पुंड्र तथा आन्ध्र ये पूर्व भारत में सागर तक फैल गये। इनमें दशरथ का स्नेही रोमपाद पैदा हुआ। उसकी पुत्री शान्ता, ऋष्यशृंग की पत्नी। इसी ऋष्यशृंग के कारण दशरथ को रामादि पुत्र-

प्राप्ती हुई। इसी वंशस्थित अधिरथ ने कुन्तीपुत्र कर्ण का पालन कर के बडा किया। कर्णपुत्र वृषसेनादि तथा स्वयं कर्ण भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में थे। इस प्रकार यह अनुवंश, वायव्य सीमान्तर्गत केकय मद्रक से ले कर, पूर्व में आन्ध्र तक फैला हुआ था। अयोध्या, हस्तिनापुर आदि स्थान के राजाओं से इस वंश के निकट सम्बंध थे।

३. (सो. अंध.) क्रथकुल के कुरुवश का पुत्र (भा. ९.२४.३-६)।

४. (सो. कुकुर.) कपोतरोम का पुत्र। तुंबुरु इसका मित्र था (भा. ९.२४.२०)।

अनुकृष्ण—यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

अनुग्रह—भौत्य मनु का पुत्र।

अनुतंस—(सो.) भविष्य मत में समातंस का पुत्र।

अनुतापन—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अनुभूति—यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

अनुमत्—चाक्षुष के आप्य नामक देवगणों में से एक।

२. तुषित देवों में से एक।

अनुमति—अंगिरा ऋषि से श्रद्धा को उत्पन्न चार कन्याओं में से कनिष्ठ (भा. ४.१.३४;)। द्वादशादित्य के धातृ आदित्य की पत्नी (भा. ६.१८.३)।

२. भृगु गोत्र का एक गोत्रकार।

अनुम्लोचा—एक अप्सरा। यह भाद्रपद मास में आदित्य के साथ रहती है (भा. १२.११)।

अनुयायिन्—धृतराष्ट्र पुत्रों में से एक (म. आ. ६८)। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. १५८)।

अनुरथ—(सो. यदु.) विष्णु के मत में कुरुवश का पुत्र।

अनुराधा—दक्ष तथा असिक्नी की कन्याओं में से एक तथा सोमपत्नी।

अनुवक्तृ सत्य सात्यकीर्त—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १.५.४)।

अनुविंद्—आवंत्य राजा जयसेन को वसुदेवभगिनी राजाधिदेवी से प्राप्त कनिष्ठ पुत्र (भा. ९.२४.३९)। इसका पराजय कर, उसकी भगिनी मित्रविंदा से कृष्ण ने विवाह किया (भा. १०.५८.३०-३१)। इसको विंद नामक ज्येष्ठ भ्राता था।

ये दोनों भाई, मित्रविंदा-कृष्ण के विवाह के विरोध में थे। दिग्विजय में सहदेव ने इनको पराजित भी किया था। इसलिये वे दोनो दुर्योधन के पक्ष में चले गये (म. स. २८. १०; उ. १६३.६)। इसने पहले कुंतिभोज राजा के साथ युद्ध किया (म. भी. ४३. ७१)। अंत में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ७४.२९)।

२. कैकय राजा के दो पुत्रों में से कनिष्ठ। यह दुर्योधन के पक्ष में था। सात्यकि ने इसका वध किया (म. क. ९.६)।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। यह घोषयात्रा में था (म. आर. २३१.८) भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.९८)।

अनुव्रत—(मगध. भविष्य.) मत्स्य के मत में क्षेम का पुत्र।

अनुशाल्व—(सो. क्रोष्टु.) सौभपति शाल्वराजा का भाई। शाल्व को कृष्ण ने मारा इसलिये यह कृष्ण से वैर रखता था। यह कृष्ण का वध करने की संधि देख रहा था। पांडवों के अश्वमेध यज्ञ के समय, कृष्ण सहपरिवार हस्तिनापुर में आया हुआ था। यह संधि देख कर, अपने सुतार नामक सेनापति के द्वारा, इसने सेना एकत्रित करवाई तथा गुप्त रूप से हस्तिनापुर के पास आ कर रहने लगा। कृष्ण अश्वमेध के लिये लाया गया अश्व देख रहा है, ऐसी सूचना मिलते ही इसने बडी चपलता से घोडे को भगा लिया। तब भीमसेन सेना ले कर इसका पीछा करने लगा। प्रद्युम्न तथा वृषकेतु ने इसे पकड लाने का बीड़ा उठाया। आगे चल कर बडा युद्ध हो कर, प्रद्युम्न का पराभव हुआ, परंतु वृषकेतु इसे पकड लाया। आगे मृत्युभय से इसने कृष्ण के साथ मित्रता की, तथा अश्वमेध की सहायता करने का वचन दे कर यह स्वनगर लौट आया (जै. अ. १२-१४)।

अनुशिख—सर्पसत्र का पोता (पं. ब्रा. २५.१५)

अनुह्राद—हिरण्यकश्यपु को कयाधू से उत्पन्न चार पुत्रों में से एक। इसकी पत्नी सूर्मि। इसको इसे बाष्कल तथा महिष नामक दो पुत्र हुए (भा. ६.१८.१२-१३; १६)। यह क्रोध के कारण निपुत्रिक हुआ, ऐसा उल्लेख मदालसा द्वारा अलर्क को दिये गये उपदेश में आया है (मार्क २४.१५)

अनूचाना—कश्यप तथा प्राधा से उत्पन्न अप्सराओं में से एक (म. आ. ११४.५०)।

अनूदर—धृतराष्ट्र पुत्रों में से एक।

अनूहवत्—यह क्षत्रिय था परंतु तप से ब्राह्मण एवं ऋषि बन गया (वायु ९१. ११६-११७)।

अनेनस्--(सो. पुरूरवस्.) आयु राजा के पांच पुत्रों में से कनिष्ठ (भा. ९.१७. १-२) इसकी माता का नाम स्वर्भानवी (म. आ. ७०.२३)। इसका पुत्र प्रतिक्षत्र। इसका वंश दिया गया है (ह. वं. १.२९.१–५; ब्रह्म. ११.२७–३१)।

२. (सू. इ.) कुकुत्स्थ राजा का पुत्र। भागवत मत में पुरंजय का पुत्र। इसे पृथु नामक पुत्र था (म. व. १९३.२)।

३. (सू. निमि.) विष्णुमत में क्षेमारिपुत्र। इसका पुत्र मीनरथ।

अनेहहि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

अनोवैन—ब्रह्मांड के मत में व्यास के साम शिष्य-परंपरा का लौगाक्षी का शिष्य (व्यास देखिये)।

अनौपम्या—बाणासुर की पत्नी।

अन्तक--(शुंग. भविष्य.) सुज्येष्ठ का पुत्र।

अंतरिक्ष—(स्वा. प्रिय.) ऋषभदेव के सो पुत्रों में से नौ तत्वज्ञानियों में से एक। यह बड़ा भगवद्भक्त था। इसने जनक को उपदेश दिया था (भा. ५. ४. ९–१२; ११.३.३–१६)।

२. (सू. इ. भविष्य.)। मत्स्य के मत में किन्नराश्व का पुत्र; विष्णु तथा वायु के मत में किन्नरका पुत्र; तथा भागवत मत में पुष्कर का पुत्र।

३. मुरा के सात पुत्रों में से दूसरा। इसका वध कृष्ण ने किया (भा. १०. ५९)।

४. एक व्यास (व्यास देखिये)।

५. आद्य नामक देवताओं में से एक।

६. (सू. इ.) भविष्य के मत में केशीनर का पुत्र।

अंतर्धान—(स्वा. उत्तान.) पृथु के पुत्रों में से एक। विजिताश्व को, अंतर्हित होने की शक्ति के कारण, यह नाम दिया गया था।

अंतिक—(सो. यदु.) मत्स्य के मत में यदु पुत्र।

अंतिदेव—(सो. पूरु.) मत्स्य के मत में गुरुधिपुत्र।

अंतिनार—(सो. पूरु.) भद्राश्व का पुत्र। इसे तंसुरोध, प्रतिरथ तथा पुरस्ता नामक तीन पुत्र थे (अग्नि. २७८. ३–५)। ऋचेयु का पुत्र। इसे वसुरोध, प्रतिरोध तथा सुबाहु नामक पुत्र थे (ब्रह्म. १३.५१–५३)। तक्षककन्या ज्वलना से ऋचेयु को उत्पन्न पुत्र। इसे तंसु, प्रतिरथ तथा सुबाहु नामक पुत्र तथा गौरी नामक कन्या थी। यही मांधाता की माता थी (ह. वं. १.३२.१–३)। सन्नतेयु अथवा अनाधृष्टि इसका पुत्र। इसे तंसु, महान्, अतिरथ व द्रुह्यु नामक चार पुत्र थे (म. आ. ८९.११)। ऋतेयु का पुत्र। इसका पुत्र प्रतिरथ (गरुड. १४०. १–२)। ऋक्ष को तक्षककन्या ज्वलन्ती से उत्पन्न पुत्र। इसने सरस्वती नदी के किनारे द्वादशवार्षिक सत्र किया। सत्र समाप्त होने पर सरस्वती नदी स्त्री रूप में प्रगट हुई तथा अपने से विवाह करने के लिये उसने इसे अनुरोध किया। तब इसने उससे विवाह किया। उससे इसे तंसु नामक पुत्र हुआ (म. आ. ९०.१२; रंतिभार तथा मतिनार देखिये)।

२. (सो. यदु.) कंबलबर्हिष का पुत्र। इसका पुत्र तमोजा।

अंत्य--भृगुपुत्र। यह देवो में से एक है।

अंत्यायन--एक भृगुपुत्र।

अंधक--यह पार्वती के धर्मबिंदुओं से उत्पन्न हुआ। हिराण्याक्ष पुत्रप्राप्ति के लिये तपश्चर्या कर रहा था, उस समय शंकर ने उसे यह पुत्र दिया (लिङ्ग. १. ९४)। हिरण्याक्ष तथा हिरण्यकश्यपु की मृत्यु के पश्चात् यह गद्दी पर आया। परंतु अनन्तर पार्वती को हरण कर ले जाने की योजना इसने की, तब अवंती देश के महाकाल वन में, शंकर का इससे घनघोर युद्ध हुआ। इस युद्ध में, इसके प्रत्येक रक्तबिंदु से इसी के समान व्यक्ति उत्पन्न हो कर, अंधको से संपूर्ण संसार व्याप्त हो गया। तब शंकर ने अंधकों के रक्त को प्राशन करने के लिये, मातृका उत्पन्न कीया तथा उन्हें अंधक का रक्त प्राशन करने के लिये कहा। वे रक्त पी कर तृप्त हो जाने के बाद, पुनः रक्तबिंदुओं से अगणित अंधक उत्पन्न होने लगे। उन्होंने शंकर का अजगव धनुष्य भी हरण कर लिया (पद्म. सृ. ४६)।

अंत में शंकर त्रस्त हो कर विष्णु के पास गया। विष्णु ने शुष्करेवती उत्पन्न की, तथा उन्होंने सब अंधकों का नाश कर दिया। शंकर ने मुख्य अंधक को सूली पर चढाया, उस समय अंधक ने उसकी स्तुति की। तब शंकर ने प्रसन्न हो कर इसे गणाधिपत्य दिया (मत्स्य. १७९)। इसने पार्वती के लिये स्पष्ट मांग की, इसलिये शंकर का तथा इसका युद्ध हुआ। परंतु शुक्राचार्य संजीवनीविद्या से मृत असुरों को जीवित कर देते थे, इससे इसकी शक्ति कम न होती थी। तब शंकर ने शुक्राचार्य को निगल लिया तथा अंधक को गणाधिपत्य दे कर संतुष्ट किया (शिव. रुद्र. यु. ४८; पद्म. सृ. ४६. ८१)। गणों का मुख्य स्थान इसे देने के पश्चात् इसका नाम भृंगीरीटी रखा गया। इसके पुत्र का नाम आडि है।

कश्यप को दिति से उत्पन्न पुत्र। यह अत्यंत पराक्रमी था। अपनी उग्र तपश्चर्या के बल पर सब देवताओं को जीतने के लिये, इसने शंकर से वरदान मांगा। परंतु विष्णु तथा शंकर के सिवा सबको जीतने का वरदान उन्होंने दिया। तदनन्तर यह ससैन्य अमरावती में प्रविष्ट हुआ तथा इन्द्र इसकी शरण में आया। इसके बाद इन्द्रकी उच्चैःश्रवस, उर्वशी आदि अप्सरायें तथा इन्द्राणी को ले कर जब यह लौट रहा था तब देवताओं ने इसके साथ युद्ध किया। परंतु उसमें उनका पराभव हुआ। तदनंतर अंधक पाताल में रहने लगा। अन्त में देवताओं के कहने से, विष्णु ने इसके साथ युद्ध किया। उसमें इसका पराभव होने के पश्चात इसने विष्णु की स्तुति की, तथा शंकर से युद्ध करने की संधि प्राप्त होने के लिये वरदान मांगा। तब विष्णु ने इसे कैलाशपर्वत हिलाने को कहा। वैसा उसने करते ही शंकर का तथा इसका युद्ध प्रारंभ हुआ। उसमें शंकर को उसने मूर्च्छित कर दिया परंतु शंकर जागृत होते ही पुनः युद्ध प्रारंभ हुआ। अंधक के प्रत्येक रक्तबिंदु से पुनः दैत्य उत्पन्न होने लगा। उस समय शंकर ने चामुंडा का स्मरण करने पर, उसने इसका समस्त रक्त प्राशन कर लिया। तब इसने शंकर की प्रार्थना की। शंकर ने शिवगणों में इसकी स्थापना कर, इसका भृंगीश नाम रखा (स्कंद ५.३.४५)।

यह उज्जयिनी में राज्य करता था। इन्द्र के कथनानुसार शंकर ने इसके साथ युद्ध किया। उस में अपना पराभव हो रहा है, यह देखते ही इसने माया निर्माण कर, अंधकार उत्पन्न किया तथा देवताओं का हरण कर लिया। अंत में नरादित्य उत्पन्न हो कर, उसके द्वारा निर्मित प्रकाश की सहायता से, शंकर ने इसका वध किया। इसका पुत्र कनकदान (स्कंद. ५. २. ३६)।

महिषासुर की सेना का एक प्रमुख असुर। देवी के साथ हुए महिषासुर संग्राम में, विष्णु के साथ इसका अविरत पचास वर्षों तक संग्राम चल रहा था। अन्त में विष्णु ने अपने गदा प्रहार से इसे मूर्च्छित कर दिया (दे. भा. ५. ६)। यह आठवाँ सुप्रसिद्ध संग्राम है (मत्स्य. ४७. ४१-४४)। इस में शंकर ने असुरों को मारा (वायु. ९७. ८१-८४)।

२. (सो. यदु.) सात्वत तथा कौसल्या का पुत्र (ह. वं. १. ३७. २)। अंधक तथा काश्यदुहिता को कुकुर, भजमान, शमि तथा कम्बलबर्हिष ऐसे चार पुत्र हुए (ह. वं. १. ३७. १७)।

सात्वतपुत्र अंधक से अंधक वंश का प्रारंभ होता है। अंधकपुत्र महाभोज को दो पुत्र थे। प्रथम कुकुर तथा द्वितीय भजमान। याज्ञों में कुकुर वंश स्वतंत्र है। उस में उग्रसेन समाविष्ट हुआ। अंधक वंश भजमान शाखा की उपाधि है। इसी अंधकवंश में भारतीय युद्ध का प्रसिद्ध वीर कृतवर्मा उत्पन्न हुआ (भा. ९. २४. ७-२४; विष्णु. ४.१४.३-७)। सात्वतपुत्र भजमान का वंश उपलब्ध नहीं है। भजमान के पुत्र, अंधकपुत्र भजमान के वंश में शामील हुए ऐसा ह. वं. में लिखा है (१.३८.७-९)।

अंधिगु श्यावाश्व— कुछ ऋचाओं का द्रष्टा। (ऋ. ९.१०१. १-३)।

अंध्र—(सो. अनु.) बलि के छः पुत्रों में से कनिष्ठ। दुष्यन्तपुत्र भरत ने दिग्विजय के समय इसे जीता (भा. ९. २०.३०)।

२. (सू. इ.) यह वायु तथा ब्रह्मांड के मतानुसार दृढाश्व का पुत्र (हेतु देखिये)।

अन्नाद—कृष्णपत्नी मित्रविंदा का पुत्र (भा. १०. ६१.१६.)।

अन्यतरेय--स्वरों के विषय में मत देनेवाला एक आचार्य (ऋ. प्रा. २०९)।

अन्यादृश्--पांचवे मरुद्गणों में से एक।

अन्वग्भानु—(सो. पूरु.) मनस्यु को मिश्रकेशी नामक अप्सरा से उत्पन्न पुत्र (म. आ. ८८)।

अपनाप-- ब्रह्मांड के मतानुसार ऋषिशाप्य परंपरा में भरद्वाज का शिष्य (व्यास देखिये)।

अपरद्वारका— दूसरे ब्रह्मांड के द्वार पर स्थित एक देवता। नारद ने तपश्चर्या कर के इसे पश्चिम द्वार पर स्थापित किया। चैत्र कृष्ण नवमी को बलि दे कर जो इसकी पूजा करेंगे, वे पातकों में से मुक्त होंगे तथा उनकी समस्त इच्छाएं पूर्ण होंगी (स्कंद. १.२.५३)।

अपराजित— कृष्ण तथा लक्ष्मणा का पुत्र (भा. १०. ६१)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। इसका वध भीम ने किया (म. भी. ८४.२१)।

३. एकादश रुद्रों में से एक।

४. कश्यप तथा कद्रू के पुत्रों में से एक।

५. कालेयांश एक क्षत्रिय (म. आ. ६८)।

अपर्णा— महादेव की पत्नी। सती की दक्षयज्ञ में मृत्यु होने के बाद, हिमालय को मैना से जो कन्या हुई, वह अपर्णा। वहाँ इसने पूर्वपति की प्राप्ति के लिये, पत्ते भक्षण

कर, तपस्या प्रारंभ की। फिर भी उनकी प्राप्ति न होने के कारण उसने पर्णों का भी त्याग कर दिया तथा महादेव को पतिरूप में प्राप्त किया। इस लिये इसे उपरोक्त नाम प्राप्त हुआ। इसेही तप के पश्चात् उमा नाम प्राप्त हुआ। इसका दत्तक पुत्र उशनस् (ब्रह्माण्ड. ३.१०. १-२१; ह. वं. १. १८.१५-२०)।

अपवर्मन्--(सू. इ.) भविष्य के मतानुसार ध्रुवसंधि का पूत्र। इसने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

अपष्ठोम--औपलोम देखिये।

अपस्यौष--अंगिरस गोत्र का एक मंत्रकार।

अपहारिणी--ब्रह्मधान की कन्या।

अपाग्न्येय--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

अपांडु--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

अपान--तुषितदेवों में से एक।

अपांतरतम--एक ब्रह्मर्षि (सारस्वत देखिये)।

अपांनपात्--एक देवता (ऋ. २.३५)। यह निथुद्रुप अग्नि होगा। यह पानी में प्रकाशित होता हैं। इसे अग्नि कहा गया है। उसी प्रकार अग्नि को अपांनपात् कहा गया है।

अपाला--अत्रि की कन्या। यह ब्रह्मज्ञानी थी। इसके शरीर पर कोढ होने के कारण, पति ने इसका त्याग कर दिया था। पितृगृह में रह कर, इन्द्र को प्रसन्न करने के लिये, इसने तपस्या प्रारंभ की। इन्द्र को सोम अत्यंत प्रिय है, ऐसा ज्ञात होते ही, यह सोम लाने के लिये नदी पर गई। वहाँ प्राप्त सोम इसने मार्ग में ही चबा कर देखा। चबाते समय जो आवाज हुआ उसे सुन कर इन्द्र वहाँ आया। अपाला ने सोम इन्द्र को दिया। इन्द्र ने प्रसन्न हो कर इसकी इच्छायें पूर्ण की। इसकें पिता का गंजापन दूर किया, इसकी खेती उर्वरा बनाई (इसके गुह्यभाग पर केश उगाये), तथा इसका कुष्टरोग आख पर घिस कर नष्ट कर दिया। यह कथा सायणाचार्य ने शाठ्यायन ब्राह्मण से ली हैं। इसे मूलभूत मान कर ही ऋग्वेद का एक सूक्त बना होगा (ऋ ८.९१)। इस सूक्त में एकबार अपाला का निर्देश आया हैं।

अपास्य--अयोज्य देखिये।

अपि--सावर्णि मनु का पुत्र।

अपिकायति--भृगुकुल का एक गोत्रकार।

अपीतक--(आंध्र. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार लंबोदर का पुत्र।

अप्नवान--भृगु के वंश में से एक ऋषि (ऋ. ४.७. १; ८.१०२.४)।

अप्रातिपिन्--(मगध. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार श्रुतश्रवस् का पुत्र। (अयुतायु देखिये)।

अप्रतिम--ब्रह्मासावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अप्रतिमौजस्--ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अप्रतिरथ--(सू. इ.) कुवलाश्व का नामांतर (म. व. १९५.३०)।

२. (सो. पूरु.) भागवत के मतानुसार, रंतिभार के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र। इसका पुत्र कण्व।

अप्रतिरथ ऐन्द्र--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१०३; ऐ. ब्रा. ८.१०; श. ब्रा. ९.२.३.१-५)।

अप्रीत--यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

अभय--स्वायंभुव मन्वन्तर में धर्म को दया से उत्पन्न पुत्र।

२. (स्वा. प्रिय.) इध्मजिह्व के सात पुत्रों में से कनिष्ठ। यह प्लक्षद्वीप के सातवें वर्ष का अधिपति था।

३. विश्वामित्र गोत्र का एक गोत्रकार।

४. धृतराष्ट्रपुत्र। इसका वध भीम ने किया (म. द्रो. १०२.९६)।

५. (सो. पूरु.) विष्णु के मतानुसार मनस्युपुत्र। अभयद ऐसा अन्यत्र पाठ है।

अभिजित्--(सो. यदु.) नलराजा का पुत्र। इसका पुत्र पुनर्वसु।

२. अंगिरस गोत्र का एक गोत्रकार।

अभितंस--भविष्य मत में अधितंस का पुत्र।

अभितपस् सौर्य--सूक्तद्रष्टा (ऋ.१०.३७)।

अभिप्रतारिन् काक्षसेनि--कुरुवंश का एक राजपुत्र। यह तत्त्वज्ञानविवाद में निमग्न रहता था (पं. ब्रा. १०.५. ७; १४.१.१२.१५; जै. उ. ब्रा. १.५९.१; २.१.२२; २.२.१३; छां. उ. ४.३.५)। इसके जीवनकाल में ही इसके पुत्रों ने इसकी संपत्ति का बँटवारा कर लिया। इसका पुरोहित शौनक था (जै. उ. ब्रा. १.५९.२)।

अभिभू--(सो. क्षत्र.) काश्यपुत्र। यह द्रौपदी-स्वयंवर में होगा (म. आ. १७७.९)। भारतीय युद्ध में यह पांडव पक्ष में था (म. द्रो. २२.१९)। इसको वसुदानपुत्र ने मारा (म. क. ४.७४)।

अभिभूत--(सो. वृष्णि.) वायु के मतानुसार वसुदेव तथा रोहिणी का पुत्र ।

अभिमति--अष्टवसु में द्रोणवसु की पत्नी (भा. ६. ११)।

अभिमन्यु--(सो. कुरु.) अर्जुन का पुत्र । यह सोमपुत्र वर्चा के अंश से सुभद्रा के उदर में आया । जन्मतः यह निर्भय, भय उत्पन्न करनेवाला तथा महाक्रोधी प्रतीत होने के कारण, इसका नाम अभिमन्यु रखा गया (म. आ. २१३)।

दैत्यों के त्रास से भयभीत पृथ्वी को निर्भय करने के लिये, ब्रह्मदेव ने सब देवताओं को, अंशरूप से पृथ्वी पर जन्म लेने के लिये कहा । उस समय सोम ने देवकार्य के लिये अपने पुत्र को पृथ्वी पर भेजा । परंतु वर्चा इसका अत्यंत प्रिय होने के कारण, यह अधिक दिनों तक पृथ्वी पर नहीं रहेगा, केवल सोलह वर्ष ही रहेगा, ऐसा सोम ने सब देवताओं से वचन लिया था । इसीसे इसे सोलह वर्ष की आयु में मृत्यु प्राप्त हुई (म. आ. ६१. ८६. परि. १. ४२)।

शिक्षण—अभिमन्यु की अस्त्रशिक्षा तथा अन्य युद्धकलाशिक्षा, अर्जुन की खास देखरेख में हुई थी। यह अस्त्रविद्या में इतना प्रवीण था कि, इसके हस्तलाघव से तथा अस्त्रयोजना नैपुण्य से संतुष्ट हो कर, बलराम ने इसे रौद्र नामक धनुष दिया । यह अत्यंत पराक्रमी था तथा अपने पराक्रम के बल पर, अल्पवयीन होते हुए भी यह महारथी बना ।

युद्धप्रस्थान—भारतीय युद्ध में, द्रोण ने बडी कुशलता से अर्जुन को अन्य पांडवों से विलग किया तथा उसे सेना के बाहर, संशप्तकों की ओर संलग्न कर दिया । तदनंतर द्रोण ने भीमादि तीनों को युद्ध में व्यस्त किया । इस प्रकार, पांडव तथा अभिमन्यु को अपनी सेना समवेत युद्ध में मग्न देख कर, युधिष्ठिर चिन्ताग्रस्त हो गया । युधिष्ठिर को चिन्ताग्रस्त देख कर, अभिमन्यु ने उसे चिन्ता का कारण पूछा । उसपर युधिष्ठिर ने कहा कि, चक्रव्यूह का भेद करने वाला अपनी सेना में कोई न होने के कारण, मै चिन्ता कर रहा हूँ । यह सुनते ही, अभिमन्यू ने भीम की सहायता से, चक्रव्यूह का भेद करने का काम स्वीकार किया । चक्रव्यूह में प्रवेश करने की विधि ही केवल अभिमन्यु को ज्ञात थी । फिर भी वह नही घबराया । तदनंतर युधिष्ठिर का आशिर्वाद ले कर, अभिमन्यु भीम के साथ व्यूहद्वार के पास आया ।

पराक्रम—इस स्थान पर, द्रोणाचार्य ससैन्य व्यूह की रक्षा कर रहे थे । परंतु अभिमन्यु सेना की पंक्तियां तोड कर, व्यूह में प्रविष्ट हो गया । व्यूह में घुसने के पश्चात् अभिमन्यू ने, बडे बडे सेनापतियों को अपने शौर्य से भगाया । अपनी सेना को, पीछे हटते देख कर, द्रोणाचार्य सेना सहित अभिमन्यु पर धावा करने आया परंतु आक्रमक को चकमा दे कर, इसने अश्मक राजा का तथा शल्य के बंधु का वध किया । तब कर्ण उस पर आक्रमण करने दौडा । परंतु उसे भी इसने जर्जर कर दिया ।

इस प्रकार युद्ध करते करते, अभिमन्यु भीमादिकों से काफी दूर चला गया । अभिमन्यु को अकेला देख कर, दुःशासन उसकी ओर दौडा । परंतु उसे भी रण से भगा कर, अभिमन्यु इतनी दूर तक चला गया कि, भीमादिकों को वह दिखता ही न था । भीमादिक सरलता से अपने पास आ सकें, इसके लिये इसने मार्ग खुला रखा था परंतु जयद्रथ ने शंकर के प्रसाद से, भीमादिक को रोक रखा तथा अभिमन्यु तक आने नही दिया ।

मृत्यु—इधर अभिमन्यु, भीमादिकों की राह देखता रहा, इतने में, कर्णपुत्र ने इस पर आक्रमण किया । अभिमन्यु ने उसका पराभव कर के, दुर्योधनपुत्र लक्ष्मण तथा अन्य योद्धाओंको मार डाला । तब द्रोण, कृप, कर्ण, अश्वत्थामा, कृतवर्मा तथा बृहद्बल ये छः लोग, अकेले अभिमन्यु से युद्ध करने लगे । उन सबका इसने अकेले निवारण किया । तब द्रोणादिकों ने बडे प्रयास से इसे विरथ किया । अभिमन्यु ढाल तथा तलवार ले कर लडने लगा । परंतु द्रोण ने उन्हे भी तोड दिया । तब अभिमन्यु ने केवल गदा ली तथा दुःशासन के पुत्र के साथ गदायुद्ध आरंभ किया । उस समय अभिमन्यु अत्यधिक श्रान्त हो गया, परंतु भीमादि काफी दूर होने के कारण, इसे उनकी सहायता न मिल सकी । उस समय, दुःशासनपुत्र की गदा का प्रहार इस पर होते ही, इसे मूर्च्छा आ गई । उस मूर्च्छा से पूर्ण सावधान होने के पहले ही, दुःशासनपुत्र ने और एक गदाप्रहार कर, इसका वध कर दिया (म. द्रो. ४८.१३)।

व्यक्तिमत्व—अभिमन्यु सिंह के समान अभिमानी तथा वृषभ के समान प्रशस्त स्कंधोंवाला था । यह शौर्य, वीर्य तथा रूप में कृष्णतुल्य था । जन्मतः यह दीर्घबाहु था । यह कृष्ण के समान बलराम को भी अत्यंत प्रिय था (म. आ. २१३. ५८-७०)।

वंश--विराट राज की कन्या उत्तरा, अभिमन्यु की पत्नी थी। इसकी मृत्यु के समय उत्तरा गर्भवती थी। उसका पुत्र परीक्षित् नाम से प्रख्यात है। इस परीक्षित् के कारण ही, भारतीय युद्ध में अस्तंगत होते हुए पुरु कुल को नवजीन प्राप्त हुआ।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के अजित देवों में से एक।

३. ब्रह्मसावर्णि मन्वतर के सप्तर्षियों में से एक।

४. चाक्षुष मनु तथा नड्वला का पुत्र।

अभिमान--स्वायंभुव मन्वन्तर के धर्म का पुत्र।

अभिमनिन्--भौत्य मन्वन्तर का मनुपुत्र।

अभियुक्ताक्षिक--चौथे मरुद्गणों में से एक।

अभिरथ--(सो. क्षत्र.) विष्णु के मतानुसार केतुमान् का पुत्र।

अभिष्वत्--(सो.) कुरु तथा वाहिनी का पुत्र (म. आ. ८९.४४; अविक्षित् (२.) देखिये)।

अभूतरजस्--रैवत मन्वन्तर का देवगण। इसमें दस व्यक्तियों का समावेश होता है। इसे अभूतरयस् नामांतर है।

अभ्यग्नि ऐतशायन--ऐतश का पुत्र। एकबार, जब ऐतश अपने पुत्र के सामने कुछ मंत्रपठन कर रहा था, तब उन्हें अश्लील समझ कर, इसने उसके मुख पर हाथ रखकर, उनका मंत्रपठन बंद कर दिया। इससे क्रोधित हो कर, तुम्हारा कुल पापी होगा, ऐसा शाप उसने इसे दिया, जिससे सब लोग इसे तथा इसकी संतति को पापी समझने लगे (ऐ. ब्रा. ६.३३)। ऐतशायन को और्वकुलोत्पन्न कहा है (सां. ब्रा. ३०.५)। और्व तथा भृगु कुल का बिलकुल निकट-संबंध होना चाहिए, वा एक ही कुल की ये दो शाखाएं होंगी। ऋग्वेद काल से इनका एकत्र उल्लेख पाया जाता है (एतश देखिये)।

अभ्यावर्तिन् चायमान--एक राजा। इसने वरशिख के नेतृत्व में वृचिवत् को जीत लिया तथा वरशिख के पुत्रों का वध किया। इसीके लिये इन्द्र ने तुर्वश तथा वृचीवत को जीता। किन्तु वहाँ यह तथा संजय देववात एक ही होने की संभावना है (ऋ. ६.२७.७)। इसका पार्थव नाम से भी उल्लेख है (ऋ. ६.२७; ८.५)।

अमरेश--इसका गोत्र भारद्वाज। इसने 'वर्णरत्नप्रदीपिका' नामक २२७ श्लोकों की शिक्षा रची, जिसके आरंभ में कृष्ण नमन हो कर, आगे शौनक तथा शाकटायन का उल्लेख है। यह प्रातिशाख्यानुसारिणी है (श्लो. १२२)।

अमर्ष--(सू. इ.) विष्णु के मतानुसार सुगविपुत्र।

अमर्षण--(सू. इ.) संधिराज का पुत्र (म. ९. १२)।

अमल--धृष्टबुद्धि प्रधान का पुत्र (चन्द्रहास देखिये)।

अमला--वैवस्वत मन्वन्तर के अत्रि ऋषी की कन्या। यह ब्रह्मनिष्ठ थी।

अमहीयु आंगिरस-- सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.६१)।

अमावसु--(सो. पुरुरवस्) पुरुरवस् वंश में ही दो अमावसु हुए। पहला, पुरुरवस् के पुत्रों में से एक तथा दूसरा, अमावसू के वंश के कुश का पुत्र। इनमें से, पुरुरवसपुत्र अमावसु, कान्यकुब्ज घराने का मूल पुरुष है। इसकी वंशावली अनेक स्थानों पर दी गई है (ब्रह्म. १०. ११-१४; ब्रह्माण्ड. ३.६६. २०-३५; ह. वं. १.२७; विष्णु. ४.७.२-५; वसु तथा जन्हु देखिये)।

२. एक अत्यंत स्वरूपवान पितर। इसको देख कर अच्छोदा नामक पितरों की मानसकन्या मोहित हो गई। परंतु इसने उसकी प्रार्थना अमान्य की। इस कारण, वह योगभ्रष्ट हो कर, अगले जन्म में वसू की कन्या मत्स्यी (काली, सत्यवती) हुई (पद्म. सृ. ९.१२.२४; अच्छोदा देखिये)।

इसका अगला जन्म इसी नाम से पुरुरवा के पुत्र के रूप में हुआ।

अमवासु वंश--यह वंश, ऐल पुरुरवस् के अमावसु नामक पुत्र ने प्रचलित किया। इसकी राजधानी कान्यकुब्ज नगर थी।

इस वंश में, प्रायः पंद्रह पुरुष मिलते है। इनमें कुशिक (कुशाश्व), गाधि, विश्वामित्र, मधुच्छंदस, आदि प्रमुख है। नय के पश्चात् इस वंश का उल्लेख नही मिलता। विश्वामित्र ब्राह्मण बन गया, इस कारण यह क्षत्रियवंश समाप्त हो गया।

इस वंश में एक अजमीढ राजा का नामोल्लेख मिलता है।

अमावास्य शांडिल्यायन--अंशु धानंजय्य का गुरु (वं. ब्रा. १)

अमावास्या--अमावसु तथा अच्छोदा की कन्या (मत्स्य. १४)।

अमाहठ--एक सर्प (म. आ. ५२.१५)।

अमित--(सो. पूरु.) जय का पुत्र (भा. ९. १५.२)।

२. सावर्णि मन्वन्तर का देव।

३. रैवत मन्वन्तर का देव।

अमिताभ—सावर्णि मन्वन्तर का देवगण।

अमितौजस्--पांडव पक्ष का महारथी (म. उ. १६८.१०)।

अमित्र—द्वितीय मरुद्गणों में से एक। दिती का पुत्र।

अमित्रजित्--(सू. इ. भविष्य.) भागवत के मतानुसार सुतप्त राजा का पुत्र। वायु के मतानुसार सुवर्णपुत्र तथा भविष्य के मतानुसार सुवर्णांग का पुत्र।

२. एक राजा। इसके राज्य में सर्वत्र शिवमंदिर थे। यह देख कर नारद ऋषि आनंदित हो कर इसके पास आया तथा इससे बोला, 'चंपकावती नगर में मलयगंधिनी नामक एक गंधर्वकन्या है। कंकालकेतु नामक राक्षस उसका हरण कर रहा है। उससे जो मेरी रक्षा करेगा उसीसे मैं विवाह करूंगी, ऐसी उसकी शर्त है। इस लिये तुम यह काम करो'। नारद के इस कथनानुसार, इसने कंकालकेतु से युद्ध कर के उसका नाश किया तथा उस गंधर्वकन्या के साथ यह अपने नगर लौट आया। तदनंतर विवाह हो कर इसे वीर नामक पुत्र हुआ (स्कन्द ४.२. ८२-८३)।

अमित्रतपन शुष्मिण शैब्य--शिबि का पुत्र। इसने अत्यराति जानंतपि का वध किया (ऐ. ब्रा. ८.२३)।

अमूर्तरजस्--अमूर्तरजस् तथा अमूर्तरयस देखिये।

अमूर्तरयस्--(सो. पूरु.) मत्स्य के मतानुसार अंतिनारपुत्र।

२. (सो. अमा.) विष्णु के मतानुसार कुशपुत्र। भागवत के मतानुसार इसका मूर्तरय नाम है। अमूर्तार तथा यह एक ही होगा। विष्णु के मतानुसार अमूर्तरय नाम है।

३. एक क्षत्रिय। यह गय राजा का पिता था (म. व. ९३.१७)। इसे ही अमूर्तरजस् नामांतर था।

अमूर्तरय--अमूर्तरयस् (२) देखिये।

अमृत-- (स्वा. प्रिय.) इध्मजिह्व के सात पुत्रों में से एक। इसका वर्ष इसीके नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५. २०. २-३)।

२. अंगिरस गोत्र का मंत्रकार।

३. अमिताभ नामक देवों में से एक।

अमृतप्रभ--सावर्णि मन्वन्तर का देव।

अमृतवत्--स्वायंभुव मन्वन्तर के जिदाजित देवों में से एक।

अमूला--अकम्पन की पत्नी।

अमोघ-- बृहस्पति तथा तारा की कन्या स्वाहादेवी का पुत्र। अग्निविशेष (म. व. २०९)।

२. एक कार्तिकेय का नाम (म. व. परि. १. २२.९)।

अमोघा—शंतनु ऋषि की भार्या। एक समय, ब्रह्मदेव शंतनु महर्षि के आश्रम में गया। वह ऋषि बाहर गया हुआ था, अतएव इसने ब्रह्मदेव की पूजा की। इसका सुंदर स्वरूप देख कर, उसका वीर्यपतन हो कर लज्जित हो कर वह चला गया। कुछ समय के पश्चात्, शंतनु वापस आया। उस वीर्य को देख कर,—कौन आया था—ऐसा उसने पूछा। ब्रह्मदेव का अमोघ वीर्य व्यर्थ नष्ट न हो, इस लिये उसका स्वीकार करने की आज्ञा शंतनु ने इसे दी। इस वीर्य से उत्पन्न गर्भ का तेज यह सहन न कर सकी। तब इसने वह गर्भ युगंधर पर्वत की खाई के जल में डाल दिया। उससे लोहित नामक तेजस्वी तीर्थ निर्माण हुआ। आगे चल कर, विष्णु को लगा हुआ क्षत्रियवध का पाप, इस तीर्थ में स्नान करने ही नष्ट हो गया। (पद्म. सृ. ५०)

अंबर—वृत्रासुरानुयायी असुर (भा. ६.१०.१८-१९)।

अंबरीष--ऋज्राश्व, सहदेव, सुराधस् एवं भयमान, इनके साथ वार्षागिर नाम से इसका उल्लेख है (ऋ. १. १००.१७)।

यह सूक्तकर्ता है (ऋ. १.१००; ९.९८)। यह अंगिरस गोत्र का मंत्रकार है।

२. (सू. नभग.) नाभाग का पुत्र (म. स. ८.१२ कुं.)। यह बड़ा शूर तथा धार्मिक था। यह हजारों राजाओं से अकेला लड़ता था। इसने लाखों राजा तथा राजपुत्र, यज्ञ में दान दिये थे। अभिमन्यु की मृत्यु से दुःखित धर्मराज की सांत्वना करने के लिये, अंबरीष की भी मृत्यु हो गयी, ऐसे नारद ने बताया (म. द्रो. ६४; शां. २९.९३; परि १. ८. पंक्ति. ५८८) इसने दीर्घकाल राज्य किया (कौटिल्य. २२)।

एक बार कार्तिक माह की एकादशी का त्रिदिनात्मक उपोषण इसे था। द्वादशी के दिन, इसके घर पर दुर्वास अतिथि बनकर आया तथा आह्निक करने नदी पर गया। इधर द्वादशी काल समाप्त हो रहा था, अतः इसने नैवेद्य

समर्पण किया, तथा तीर्थ ले कर उपवास छोड़ा। यह जान कर, दुर्वास ने अपनी जटा के केशों द्वारा निर्मित एक कृत्या अंबरीष पर छोड़ी। इतने में, विष्णु के सुदर्शन ने कृत्या का नाश किया तथा वह चक्र दुर्वास के पीछे लगा। इस स्थिति में, विष्णु ने भी उसका संरक्षण करना अस्वीकार कर, पुनः अंबरीष के यहाँ जाने को कहा। दुर्वास को अंबरीष के यहाँ लौटने में एक वर्ष लगा। तब तक अंबरीष भूखा ही था। इसने दुर्वास को देखते ही उसका स्वागत किया। चक्र की स्तुति कर उसे वापस भेजा तथा दुर्वास को उत्तम भोजन दिया। (भा. ९. ४–५)। इसने पक्षवर्धिनी एकादशी का व्रत किया था। योग्य समय पर उपवास छोड़ने के कारण, यह विष्णु को प्रिय हुआ। अतः इसे मोक्ष प्राप्त हुआ (पद्म. उ. ३८.२६–२७)।

इसने भीष्मपंचक व्रत किया था (पद्म. उ. १२५. २९–३५)। जब यह स्वर्ग में गया, तब इसे स्वर्ग में सुदेव नामका इसका सेनापति दिखाई दिया। तब इसे आश्चर्य हुआ। 'स्वर्ग में कौन आता है', इस विषय पर इन्द्र से इसका संवाद हुआ। इन्द्र ने इसे बताया कि, सुदेव की रणांगण में मृत्यु होने के कारण, उसे स्वर्गप्राप्ति हुई (म. शां. ९९ कुं.)। इसके पुत्र का नाम सिंधुद्वीप। इसे विरूप, केतुमान तथा शंभु नामक तीन पुत्र भी थे (भा. ९. ६. १)। इसने सकल राष्ट्र का दान किया था (म. अनु. १. ३७. ८)।

३. (सू. इ.) मांधाता को बिंदुमती से प्राप्त तीन पुत्रों में से मँझला (भा. ९.७.१)।

४. (सू. इ.) त्रिशंकु के दो पुत्रों में से दूसरा। इसे श्रीमती नामक कन्या थी। वह नारद तथा पर्वत के वाद में विष्णु ने प्राप्त की (अ. रा. ३–४)। यह एक बार यज्ञ कर रहा था, तब इसके दुर्वर्तन के कारण, इंद्र ने इसका यज्ञपशु उडा लिया। तब इसने ऋचीक ऋषि को द्रव्य दे कर, उसका शुनःशेप नामक पुत्र खरीद लिया तथा यज्ञ पूरा किया। धर्मसेन इसका नामांतर है, एवं यौवनाश्व इसका पुत्र है। यही हरिश्चंद्र है (लिङ्ग.२.५.६; वा. रा. बा. ६१; शुनःशेप देखिये)।

५. एक सर्प। यह कद्रु का पुत्र था।

अम्बर्य—यह दक्षिण में गौतमी के किनारें, दंडक देश का नृप था। इसका नृसिंह ने वध किया (नृसिंह देखिये)।

अंबष्ठ वा **अम्बष्ठक**—दुर्योधनपक्षीय क्षत्रिय। इसका अभिमन्यु के साथ युद्ध हुआ था (म. भी. ९२.१७)। इसको अर्जुन ने युद्ध में मारा (म. द्रो. ६८.५६)।

२. पांडवपक्षीय क्षत्रिय। इसके पुत्र को लक्ष्मण ने मार डाला (म. क. ४.२६*)।

अम्बष्ठ—कंस के कुवलयापीड हाथी का महावत (भा. १०.४३.२–५)।

अंबा—काशीराज की तीन कन्याओं में से ज्येष्ठ। अपनी कन्याँएं उपवर होने के कारण, काशीराज ने उनके स्वयंवर का निश्चय किया। तदनुसार देशदेशांतर के राजाओं को स्वयंवरार्थ निमंत्रण भेजे। इस स्वयंवर में कोई भी शर्त नहीं रखी गयी थी। काशीराज ने निश्चय किया था कि, जो सब से अधिक बलवान हो वह इनका हरण करे।

चित्रांगद के निधनोपरांत, भीष्म अपनी सौतेली मां की संमति से, विचित्रवीर्य के नाम पर हस्तिनापुर का राज्य चला रहा था। विचित्रवीर्य का विवाह नहीं हुआ था। स्वयंवर का समाचार मिलते ही, विचित्रवीर्य के लिये उन कन्याओं का हरण करने के लिये, भीष्म स्वयंवर को गया तथा वहां के समस्त राजाओं को हरा कर, तीनों कन्याओं को हरण कर ले आया (म. आ. ९६)।

भीष्म ने हस्तिनापुर आकर, उन तीनों का विचित्रवीर्य से विवाह करने का निश्चित किया। इस बात का पता लगते ही, अंबा ने भीष्म से कहा कि, वह पहले से ही शाल्व से प्रेम करती है, इस लिये उसका विवाह विचित्रवीर्य से करना योग्य नहीं होगा। यह सुन कर भीष्म ने अंबा को दलबल सहित सम्मान के साथ शाल्व के पास भिजवा दिया। शाल्व ने उसका अंगिकार नहीं किया। भीष्म ने सबके सामने उसे हराया था, इस लिये अंबा के साथ विवाह करना शाल्व को योग्य नहीं लगा। अंबा फिरसे भीष्म के पास आयी और उससे कहा कि, आपने मुझे जीत कर लाया है, इस लिये शाल्व मुझे स्वीकार नहीं कर रहा है, अतएव आप ही मेरा वरण करें, यही योग्य होगा। परंतु भीष्म ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने का प्रण किया था, इस लिये उन्हें अंबा की इच्छा अस्वीकृत करनी पड़ी।

चारो ओर निराधार होने के कारण, अंबा अत्यंत दुःखित हुई। अपनी इस दुर्दशा का कारण भीष्म है, इस लिये किसी प्रकार से भीष्म से प्रतिशोध लिया जाय, इस पर यह विचार करने लगी, तथा तप करने के लिये हिमालय की ओर चल पड़ी।

हिमालय की ओर जाते समय, इसे राह में शैखावत्य ऋषि का आश्रम मिला। ऋषि को इसने अपना निश्चय बताया।

तब उन्होंने इसे इसके निश्चय से परावृत्त करने का प्रयत्न किया। परंतु वह निष्फल हुआ और अंबा वहीं तप करने लगी। कुछ समय बाद होत्रवाहन नामक एक राजर्षि उस आश्रम में आये। वे अंबा के मातामह थे। अंबा की यह स्थिति देख वे अत्यंत दुखित हुए। अपनी नतिनी का दुःख दूर होने के लिये, उन्होंने भीष्म के गुरु परशुराम के द्वारा भीष्म का परिपत्य कर, उसे अंबा को स्वीकार करने के लिये बाध्य करने का निश्चय किया। तदनुसार अपनी नतिनी को लेकर, वे परशुराम के पास जाने ही वाले थे कि, परशुराम का शिष्य अकृतव्रण वहां आ पहुंचा तथा उसने बताया कि, परशुराम इसी आश्रम की ओर आ रहे हैं। इस लिये होत्रवाहन परशुराम से मिलने के लिये वहीं रुक गये (म. उ. १७३-१७६)।

कुछ दिनों बाद, परशुराम उस आश्रम में आ पहुंचे। अंबा का वृत्तांत जान कर उसे दुःखमुक्त करने का उन्होंने वचन दिया तथा भीष्म के पास संदेश भिजवाया कि, अंबा का स्वीकार करो अथवा युद्ध करने के लिये तयार हो जाओ। भीष्म ने आजन्म ब्रह्मचर्य का अपना निश्चय परशुराम के पास भिजवाया तथा स्वयं युद्ध के लिये तैयार हो गये। आगे चलकर कुरुक्षेत्र में दोनों का भीषण युद्ध हुआ, जिस में कोई भी पराजित न हुआ तथा युद्ध रोक दिया गया।

अंबा को यहां भी निराशा ही मिली परंतु भीष्म से बदला लेने का निश्चय इसने बिलकुल नहीं छोड़ा। भीष्म का वध करने के लिये इसने शंकर की उपासना (कठोर तपस्या) प्रारंभ की। गंगा को इसका निश्चय मालूम होते ही, उसने अंबा को तप से परावृत्त करने का बहुत प्रयत्न किया। परंतु अंबा ने गंगा की एक न सुनी। तब गंगा ने उसे श्राप दिया कि, 'तू अर्धांग से बरसाती नदी होगी।' अंबा फिर भी अपने निश्चय पर अटल रही (म. उ. १८७)।

कुछ कालोपरांत, महादेवजी उसकी तपश्चर्या से संतुष्ट हो, वरदान देने को तयार हुए। अंबा ने भीष्म को मार डालने की अपनी इच्छा बतायी। तब महादेवजी ने वरदान दिया कि, इस जन्म में यह संभव नहीं है परंतु अगले जन्म में द्रुपद के घर पहले कन्या रूप में जन्म लेने के पश्चात् तुझे पुरुषत्व प्राप्त होगा। तू शिखंडी नाम से प्रसिद्ध होकर भीष्म का वध करेगी। इतना वरदान दे कर, शंकरजी अंतर्धान हो गये। अपना मनोरथ पूर्ण हुआ देख, अंबा ने अग्नि में प्रवेश कर, देहत्याग किया (म. उ. १८८)।

महाभारत के कुम्भकोणम् प्रति में, उपरोक्त कथा दूसरे प्रकार दी गयी है, जो इस प्रकार है—अंबा की उत्कृष्ट तपश्चर्या देख कर कार्तिकस्वामी ने प्रसन्न हो कर उसे एक प्रामाणिक तथा दिव्य माला दे कर बताया कि, जो इस माला को धारण करेगा वह निःसंशय भीष्म का वध करेगा। अंबा ने वह माला ली। वह देशदेशांतर में यह पूछते हुए विचरण करने लगी 'कोई क्षत्रिय, इस माला को धारण कर, भीष्म को मारने में समर्थ है?' परंतु भीष्म का वध करने की इच्छा रखनेवाला एक भी क्षत्रिय उसे नहीं मिला। अंत में पांचालराज द्रुपद के अस्वीकार करने पर भी, अंबा राजमहल के दरवाजे पर माला फेंक कर चली गयी। तब द्रुपदने वह माला उठाकर अपने प्रासाद में रख ली। आगे चल कर शिखंडी ने उसी माला के योग से भीष्म का वध किया (म. आ. परि. १.५५)।

अंबायवीया—सत्यलोक की एक अप्सरा।

अंबालिका—काशीराज की तीन कन्याओं में से कनिष्ठ तथा विचित्रवीर्य की स्त्री (अंबा देखिये)। पति से इसे संतति नहीं हुई। पति की मृत्यु होने पर सास सत्यवती तथा देवर भीष्म के अनुमोदन पर, इसने व्यास से पुत्रप्राप्ति करा ली परंतु गर्भधारणा के समय भयभीत हो कर, यह फीकी पड़ गई। अतएव इसका पुत्र भी फीके सफेद रंग का हुआ। इस लिये उसका नाम पांडु रखा गया (म. आ. १००.१७-१८; सत्यवती देखिये)।

अंबिका—काशीराज की तीन कन्याओं में से मंझली तथा विचित्रवीर्य की स्त्री (अंबा देखिये)। पति से संतति न होने के कारण इसने व्यास से पुत्र प्राप्ति करा ली। रति के समय आँखें बंद रखने के कारण अंधे धृतराष्ट्र का जन्म हुआ। इसे कौसल्या भी नाम दिया गया था। फिर से अच्छा पुत्र हो, इस लिये सास ने इसे फिर से व्यास के पास जाने को कहा। व्यास का स्वरूप मन में आते ही यह मन में घबरायी, तथा इसने सास को यों ही, हां कह दिया। परंतु ऐन समय पर, एक दासी को व्यास के पास भेज दिया, उससे विदुर का जन्म हुआ (म. आ. १०५-१०६)।

२. रुद्रपत्नी (श. ब्रा. २.६.२.९)।

अंबुक—ब्रह्मधान का पुत्र।

अंबुधारा--दक्षसावर्णि मन्वन्तर में के ऋषभ अवतार की माता (भा. ८.१३)।

अंबुवीच--मगधदेश के राजगृह नगर का राजा। यह सब प्रकार से पंगु रहने के कारण, प्रधान महाकर्णि अत्यंत प्रबल हो गया। परंतु दैवयोग से वह राज्य हडप न सका (म. आ. १९६.१७-२२)।

अंभृण--इसकी कन्या वाच् (वाच् देखिये)।

अंभोद--विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५९)।

अय--स्वारोचिष मन्वन्तर का प्रजापति। यह वसिष्ठ का पुत्र था।

२. अगस्त्य गोत्र का मंत्रकार।

३. तुषित नामक देवगणों में से एक।

४. यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

अयःशिरस्--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अयतंस--(सो.) भविष्यमतानुसार परातंस का पुत्र।

अयतायन--विश्वामित्र कुल का एक गोत्रकार।

अयाति--(सो.) नहुष का पुत्र (म. आ. ७०.२८)।

अयस्थूण--शौल्बायन जिनका अध्वर्यु था, उन्हीका यह गृहपति था। इसीने शौल्बायन को विशिष्ट यज्ञसाधन का उपयोग सिखाया (श. ब्रा. ११.४.२.१७)।

अयस्मय--स्वारोचिष मनु का पुत्र।

अयस्य--अजस्य देखिये।

अयाप्य--वायुमतानुसार अयास्य का नाम।

अयास्य आंगिरस--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.४४-४६; १०. ६७-६८)। अंगिरस को स्वराज् से उत्पन्न लड़का। इसका पुत्र कितव (ब्रह्माण्ड. ३.१)। राजसूय यज्ञ में यह उद्गाता था। उस यज्ञ में शुनःशेप को बलि देने का था (पं. ब्रा. ११.८.१०; १४.३.२२; १६.१२.४; सां. ब्रा. ३०.६)। धर्मकृत्य में, प्रमाण के लिये इसका बहुत से स्थानों पर उल्लेख आता है। यह आभूति त्वाष्ट्र का शिष्य है (बृ. उ. १.३.८;१९; २.६.३; ४.६.३)। शार्यात मानव के यज्ञ में यह उद्गाता था (जै. उ. ब्रा. २.७.२; १०; ८.३)।

अयुत--(सो. जह्नु.) राधिका का पुत्र।

अयुताजित्--(सो. भज.) भागवतमतानुसार सात्वतपुत्र। भजमानस की दूसरी स्त्री से उत्पन्न तीन पुत्रों में कनिष्ठ।

अयुतानायिन्--(सो. पूरु.) महाभौम तथा सुयशा का पुत्र। इसकी स्त्री भासा। इसका पुत्र अक्रोधन (म. आ. ९०.१९)।

अयुतायु--(सू. इ.) सिंधुद्वीप का पुत्र (भा. ९.९)।

२. (सो. कुरु.) विष्णु के मतानुसार आरावी का पुत्र।

३. (मगध. भविष्य.) भविष्य के मतानुसार अर्णव का पुत्र। इसने १००० वर्षों तक राज्य किया। भागवत, वायु, मत्स्य तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार श्रुतश्रवस् का पुत्र परंतु विष्णु के मतानुसार श्रुतवान् का पुत्र। अयुतायुत पाठभेद है।

अयुताश्व--(सू. इ.) भविष्य के मतानुसार सिंधुद्वीप का पुत्र। यह वैष्णव था।

अयोज्य--एक ऋषि (वायु. ५९ ९०-९१)। इसका अपास्य नामांतर था (ब्रह्माण्ड. २.३२.९८-१००)।

अयोबाहु--धृतराष्ट्र के पुत्रों में से एक।

अयोभुज--धृतराष्ट्रपुत्र। इसका वध भीम ने किया (म. द्रो. १३२.१,३५*; पंक्ति,)।

अयोमुख--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अयोमुखी--एक राक्षसी। सीता को ढूंढते हुए राम लक्ष्मण जब मातंगाश्रम की ओर गये, तब वहाँ लक्ष्मण के समीप जाकर इसने लक्ष्मण का वरण करने की इच्छा प्रदर्शित की। तब लक्ष्मण ने शूर्पणखा के समान इसकी अवस्था की। तब इसने वहाँ से पलायन किया (वा. रा. अर. ६९)।

अरजा--उशनस् शुक्र की कन्या। इसका कौमार्य दंड राजा ने नष्ट किया था। इस लिये, इसके पिता ने इसे दंडकारण्य में ही भार्गवाश्रम के पास के सरोवर पर रहने के लिये कहा। तदनंतर यह निष्पाप हुई (वा. रा. उ. ९१; पद्म. सृ. ३४)।

अरण्य--रैवत मनु का पुत्र।

२. हिरण्याक्षानुयायी असुर। इसका वध कार्तिकेय ने किया (पद्म. सृ. ७५)।

अरप--भृगु गोत्रीय मंत्रकार।

अररु--एक दैत्य (तै. सं. १.१.१९)।

अरविंद--(सो.) भविष्य के मतानुसार चित्ररथ का पुत्र।

अराचीन--(सो. पूरु.) जयत्सेन तथा सुपुवा का पुत्र। इसकी पत्नी का नाम मर्यादा तथा पुत्र का नाम अरिह था (म. आ. ९०.१७-१८)।

अराल दात्रेय शौनक--दृति ऐंद्रोत शौनक का शिष्य। इसका शिष्य शूष (वं. ब्रा. २)।

अरालि--विश्वामित्र पुत्र।

अरि--अंगिरस कुल का एक गोत्रकार।

अरिक्तवर्ण--(आंध्र. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार स्वातिवर्ण का पुत्र।

अरिजित--(सो. यदु.) भद्रा से उत्पन्न कृष्ण का पुत्र।

अरिंजय--(मगध. भविष्य.) वायु के मतानुसार बरिजित का पुत्र तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार विश्वजित का पुत्र।

अरिनायु--(सो. कुरु.) मत्स्य के मतानुसार यह भीमपुत्र है।

अरिद्योत्--(सो. अंधक.) दुंदुभि का पुत्र।

अरिंदम--विश्वंतर के सोमयज्ञ में, श्यापर्ण का प्रवेश होने पर, उनके द्वारा बताई गई सोम परंपरा में, सनश्रुत ने अरिंदम को यह परंपरा बताई, ऐसा उल्लेख है (ऐ. ब्रा. ७.३४)।

अरिमर्दन--(सो. वृष्णि) श्वफल्क का पुत्र।

अरिमेजय--सर्पसत्र में इसने आध्वर्यव किया था (पं. ब्रा. २५. १५)।

२. (सो. वृष्णि.) श्वफल्क का पुत्र (विष्णु. ४.१४. २)। सारमेय तथा द्वारिमेजय पाठ प्राप्त है। इसका पांडवों की ओर जाने की संभावना है, ऐसा धृतराष्ट्र कहता हैं (म. द्रो. १०.२८)।

अरिष्ट--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

२. कंस ने कृष्णपर भेजा हुआ दैत्य। इसने बैल का रूप ले कर कृष्ण पर हमला किया। इसने कुछ दो आक्रमण किये। दूसरे आक्रमण के समय, कृष्णने इसकी गर्दन मरोडी तथा एक सींग उखाड कर, उसी सींग से उसे पीटा। तत्काल रक्त की उल्टी कर के, यह मर गया (भा. १०.३६.१६; ह. वं. २.२१)।

३. विनतापुत्र। इसे अरिष्टनेमि तथा तार्क्ष्य नामांतर हैं (म. व. १८४; कुं. १८२.८; बंबई प्रत तुलना करके देखिये)।

४. बलि के पुत्रों में से एक।

५. यमसभा का क्षत्रिय (म. स. ८.१४)।

६. वैवस्वत मनु का पुत्र।

७. सावर्णि मनु का पुत्र।

अरिष्टनेमि--कश्यप का नामान्तर (म. शां. २०८. ८)। प्रजापतियों में से यह एक था (वायु. ६६.५३-५४)।

२. विनता के पुत्रों में से एक (म. आ. ५९. ३९)।

३. पौष माह के सूर्य के साथ घूमनेवाला गंधर्व।

४. (सू. निमि.) पुरुजित जनक का पुत्र।

५. अज्ञातवासकाल में, तंतिपाल के साथ यह नाम भी सहदेव ने धारण किया था (म. वि. १०)।

६. बलि की सेना का एक दैत्य (भा. ८.६)।

७. यमसभा का एक क्षत्रिय (म. स. ८.२०)।

८. एक ब्राह्मण। इसका सगर के साथ मोक्षसाधन के विषय में संवाद हुआ था (म. शां. ११.२)।

९. एक राजा। यह राज्य का त्याग कर के, गंधमादन पर्वत पर तपश्चर्या कर रहा था। यह देख कर, इन्द्र ने अपना दूत इसके पास भेजा तथा इसे हवाई जहाज में स्वर्ग ले आने के लिये कहा। परंतु स्वर्ग में भी उत्तमनीच भेद है तथा पुण्यक्षय होने पर अधःपतन होता है, ऐसा दूत से सुन कर, क्रोध से इसने उसे वापस भेज दिया। परंतु इन्द्र ने दूत को पुनः इसकी ओर भेजा, तथा इसको आत्मज्ञान का बोध होने के लिये, वाल्मीकि के आश्रम में ले जाने के लिये कहा। वाल्मीकि से मुलाकात होते ही, जीवन्मुक्त होने के लिये, उसने इसे समग्र रामायण कथन किया तथा उसके श्रवण, मनन, निदिध्यास से तुम जीवन्मुक्त हो जाओगे, ऐसा आश्वासन दिया (यो. वा. १.१)।

अरिष्टनेमि तार्क्ष्य--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१७८)। हैहय पुत्र कुमार ने इसके पुत्र की मृगया में हत्या की थी। फिर भी यह सदाचार से जीवित रहा (म. आर. १८२)।

अरिष्टसेन--भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा (म. द्रो. ६)।

अरिष्टा--प्राचेतस दक्षप्रजापति तथा असिक्नी की कन्या। कश्यप की पत्नी। इसे गंधर्व तथा अप्सराएं हुई। कश्यप की पत्नीयों के उल्लेख के समय, अरिष्टा बता कर प्राधा नहीं बताई गई है, परंतु संतति के उल्लेख के समय, अरिष्टा के बदले प्राधा नाम प्रयुक्त किया है। अतएव अरिष्टा तथा प्राधा एक ही है।

अरिह--(सो. पूरु.) अराचीन तथा विदर्भकन्या मर्यादा का पुत्र। इसकी स्त्री का नाम आङ्गी (म. आ. ९०.८९७)।

२. अमिताभ देवों में से एक।

अरुग्वत्—(सो. कुरु.) विदूरथ तथा संप्रिया का पुत्र (म. आ. ९०. ४२)। इसका पुत्र परिक्षित्। इसकी पत्नी अमृता।

अरुज—रावणपक्षीय राक्षस। यह बिभीषण द्वारा मारा गया (म. व. २६९.२)।

अरुण—सृष्ट्युत्पत्ती के समय ब्रह्मदेव के मांस से उत्पन्न ऋषि। यह ब्रह्मदेव का पुत्र था (तै. आ. १.२३. २६)।

२. पंचम मनु के पुत्रों में से एक।

३. दनु तथा कश्यप का पुत्र (भा. ६.६)।

४. विनता तथा कश्यप का पुत्र। अनूरू तथा विपाद इसके नामांतर है, क्यों कि, जन्म से ही इसे पैर नही थे। विनता की सौत कद्रू को उनके साथ ही गर्भ रहा था, परंतु उसके पुत्रों को चलते फिरते देख, विनता अपने दो अंडों में से एक को फोडा। उसमें से कमर तक शरीरवाला पुत्र निकला। बाहर आते ही, यह जान कर कि, सौत-मत्सर के कारण इसकी यह दशा हुई है, इसने मां को शाप दिया कि, तुम्हे ५०० वर्ष तक सौत की दासी बन कर रहना पडेगा। परंतु, दूसरे अंडे को परिपक्व होने दिया तो दूसरा पुत्र दासता से तुम्हे मुक्त करेगा, ऐसा उःशाप कहा (म. आ. १४; अनु. २०)। आगे चल कर, इसके छोटे भाई गरुड ने इसे पूर्व भाग में जा कर रखा। इसने अपने योगबल से, संतप्त सूर्य का तेज निगल लिया। उसी समय से देवताओं के कहने से, सूर्य का सारथी होना इसने स्वीकार किया (म. आ. परि. १.१४)। कश्यप तथा ताम्रा की कन्या श्येनी इसकी भार्या थी। उससे इसे संपाति, जटायु तथा श्येन आदि पुत्र हुए (म. आ. ६०-६१)। निर्णयसिंधु तथा संस्कार कौस्तुभ में इसके अरुण-स्मृति का उल्लेख है (C. C.)।

५. विप्रचित्ती के वंश का एक दानव। इसने हजारों वर्षों तक गायत्रीमंत्र का जाप कर तप किया, तथा 'युद्ध में मृत्यु न हो' ऐसा वरदान ब्रह्मदेव से मांग लिया। आगे चल, मदोन्मत्त हो कर अपना निवासस्थान पाताल छोड कर, यह भूमि पर आया तथा इंद्रादि देवताओंको युद्ध का आह्वान देने दूत भेजा। उसी समय आकाशवाणी हुई कि, जब तक यह गायत्री का त्याग नहीं करेगा, तब तक इसे मृत्यु नहिं आयेगी। तब देवताओं ने बृहस्पति को गायत्री का त्याग करवाने भेजा। बृहस्पति को आया देख, 'मैं आपके पक्ष का न होते हुए भी आप यहां कहाँ निकल पडे' ऐसा इसने पूछा। तब बृहस्पति ने कहा कि, हमारे तरह ही तुम भी गायत्री के उपासक हो, इसलिये भला तुम हमारे पक्ष के कैसे नहीं? यह सुन, इसने देवताओं की उपास्य देवी गायत्री का जाप छोड दिया। इससे देवी ने संतप्त हो कर लाखों भौंरे उत्पन्न कर उन्हें इस पर छोडा, तथा बिना युद्ध किये ही सेनासहित इसे मार डाला (दे. भा. १०.१३)।

६. (सू. इ.) हर्यश्व को दृषद्वती से उत्पन्न पुत्र। निबंधन तथा त्रिबंधन इसके नामांतर है।

७. नरकासूर का पुत्र। नरकासूर को मारने पर, यह अपने छः भाइयों समेत कृष्ण पर टूट पडा। उस समय कृष्ण ने इसके सहित इसके छः भाईयों कों मार डाला।

८. धर्मसावर्णि मन्वन्तर में होनेवाले सप्तर्षियों में से एक।

अरुण आट—सर्पयज्ञ में का अच्छावाक् नामक ऋत्विज (पं. बा. २५. १५)।

अरुण औपवेशि—एक आचार्य। यह उपवेशी का शिष्य था तथा इसका शिष्य उद्दालक था (बृ. उ. ६. ५. ३)। अग्न्याधान के समय वाग्यत होना चाहिये, यह बताने के लिये, इस वृद्ध आचार्य की आख्यायिका दी गयी है। सत्यपालन के लिये मौन रहना श्रेयस्कर है, ऐसा इसका तात्पर्य है (श. ब्रा. २. १. ६. २०; तै. सं. ६. १. ९. २; ४. ५. १; तै. ब्रा. २. १. ५. ११)। विख्यात उद्दालक आरुणि इसका पुत्र है। यह उपवेशि गौतम का शिष्य तथा राजपुत्र अश्वपति का समकालीन था (श. ब्रा. १०. ६. १. २)।

अरुण वैतहव्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ९)।

अरुणा—कश्यप तथा प्राधा की कन्या (म. आ. ६०)।

अरुणि—ब्रह्ममानसपुत्र। यह विरक्त था (भा. ४. ८)।

अरुद्ध—(सो. द्रुह्यु.) वायुमतानुसार सेतुपुत्र (अंगार देखिये)।

अरुंधती—स्वायंभुव मन्वन्तर में, कर्दम प्रजापति को देवहूति से उत्पन्न कन्या। यह वसिष्ठ को ब्याही गयी थी (३. २३; २४; मत्स्य. २०१. ३०)।

२. कश्यप की कन्या। इसे नारद तथा पर्वत नामक दो भाई थे। नारद द्वारा यह वसिष्ठ को ब्याही गयी थी (वायु. ७१. ७९. ८३; ब्रह्माण्ड. ३. ८. ८६; लिङ्ग. १. ६३. ७८-८०; कूर्म. १. १९. २०; विष्णुधर्म. १. ११७)। इसने वसिष्ठ की प्राप्ति के लिये, गौरी-व्रत किया

था। इस कारण, इसे विवाहसुख प्राप्त हुआ (भ. वि. ब्राह्म. २१)।

३. मेधातिथि मुनि की कन्या। मेधातिथि ने ज्योतिष्टोम नामक यज्ञ किया। उस समय यह यज्ञकुंड से उत्पन्न हुई। पूर्वजन्म में यह ब्रह्मदेव की संध्या नामक मानस कन्या थी। चंद्रभागा नदी के तट पर तपोरण्य में, मेधातिथि के घर यह बडी होने लगी। पॉंच साल के उपरान्त, जब यह एक बार चंद्रभागा नदी पर गयी थी, तब ब्रह्मदेव ने विमान में से इसे देखा तथा तत्काल मेधातिथि से मिल कर, इसे साध्वी स्त्रियों के संपर्क में रखने के लिये कहा। ब्रह्मदेव के कथनानुसार, मेधातिथि ने सावित्री के पास जा कर कहा, 'मॉं! मेरी इस कन्या को उत्तम शिक्षा दो।' सावित्री ने उसकी यह प्रार्थना मान्य की। इस प्रकार सात वर्ष बीत गये। बारह वर्ष की आयु पूर्ण होने के पश्चात्, एक बार यह, सावित्री तथा बहुला के साथ मानस पर्वत के उद्यान में गई। वहॉं तपस्या करते हुए वसिष्ठ ऋषि दृष्टिगोचर हुए। वसिष्ठ एवं अरुंधती का परस्पर दृष्टिमिलन होते ही दोनों को कामवासना उत्पन्न हुई। तथापि मनोनिग्रह से दोनों अपने अपने आश्रम में गये। सावित्री को यह ज्ञान होते ही, उसने इन दोनों का विवाह करा दिया (कालि. २३)।

वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर के मैत्रावरुणी वसिष्ठ की पत्नी (म. स. ११.१३२०; व. १३०.१४)। इसका दूसरा नाम अक्षमाला भी था (म. उ. ११५.११)। अरुंधती ने स्वयं, 'अरुंधती' शब्द की व्युत्पत्ति, निम्न प्रकार बताई है। यह वसिष्ठ को छोड, अन्य कहीं भी नहीं रहती तथा उसका विरोध नहीं करती (म. अनु. १४२.१९ कुं.)।

कमल चुराने के लिये शपथ लेने के प्रसंग में, कमल न चोरने के लिये इसने प्रतिज्ञा की है (म. अनु. १४३. ३८ कुं.)। ऋषियों द्वारा धर्मरहस्य पूछे जाने पर, श्रद्धा, आतिथ्य तथा गोशृंगस्नान का माहात्म्य, इसके द्वारा वर्णन किये जाने की पुरानी कथा, भीष्म ने धर्म को कथन की है (म. अनु. १९३.१–११ कुं.)

यह अत्यंत तपस्वी तथा पतिसेवापरायण थी। इसी कारण, अग्निपत्नी स्वाहा अन्य छः ऋषिपत्नीओं का रूप धारण कर सकी, पर इसका रूप धारण न कर सकी (म. व. २७७.१६ कुं.)।

एकबार, इसे बदरपाचनतीर्थ पर रख कर, सप्तर्षि हिमालय में फलमूल लाने गये। तब बारह वर्षों तक अवर्षण हुआ। तब सब ऋषि वहीं बस गये। इधर अरुंधती के कठिन तप की परीक्षा लेने, शंकर ब्राह्मण का वेश ले कर भिक्षा मागने पधारे। पास में कुछ न होने के कारण, इसने कुछ (लोहे के) बेर उसे दिये। ब्राह्मण ने उसे पकाने के लिये कहा, तब इसने उन्हें पकने के लिये अग्नि पर रखा तथा अनेक विषयों पर उस ब्राह्मण के साथ चर्चा प्रारंभ की। चर्चा होते होते बारह वर्ष कब व्यतीत हो गये, इसका पता तक नहीं चला। हिमालय गये सप्तर्षि फलमूल ले कर वापस लौट आये, तब शंकर ने प्रगट हो कर, अरुंधती की कडी तपश्चर्या का वर्णन उनके पास किया, तथा उसकी इच्छानुसार, यह तीर्थ पवित्र स्थान हो कर प्रसिद्ध होने का वरदान दिया (म. श. ४८)। आकाश में सप्तर्षिओं में वसिष्ठ के पास इसका उदय होता है। इसका पुत्र शक्ति (ब्रह्माण्ड ३.८.८६.८७)।

३. दक्ष एवं असिक्नी की कन्या तथा धर्म की दस पत्नीओं में से एक (दक्ष तथा धर्म देखिये)।

अरुरोषण—(सो.) भविष्य के मतानुसार मिहिरार्थ का पुत्र। इसने ३८,००० वर्षों तक राज्य किया।

अरुरु—अनायुषा का पुत्र। इसका पुत्र धुंधु।

अर्क—(सो. नील.) पृथु का पुत्र।

२. रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ४)।

३. आठ वसुओं में से एक (भा. ६.६.११)।

अर्कज—वलीह देखिये।

अर्कपर्ण—कश्यप तथा मुनि के पुत्रों में से एक। इसका नामांतर तृणप है।

अर्कसावर्णि—नवम मनु। (मनु देखिये)।

अर्कोष्मन्—(सो.) भविष्य के मतानुसार वैकर्तन का पुत्र। इसने ४१०० वर्षों तक राज्य किया।

अर्गल काहोडि—एक आचार्य (क. सं. २५.७)।

अर्चत् हैरण्यस्तूप—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४९)। मंत्र में भी इसका निर्देश है (ऋ. १०.१४९.५)।

अर्चनानस आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ६३; ६४; ८.४२)। इसे मित्रावरुणों ने सहायता की (ऋ. ५.६४. ७)। श्यावाश्व के साथ अथर्ववेद में इसका उल्लेख है (अ. वे. १८.३.१५)। परंतु यह श्यावाश्व का पिता था (पं. ब्रा. ८.५.९; श्यावाश्व देखिये)।

अर्चि—(स्वा. उत्तान.) वेन राजा के देहमंथन से मिथुन उत्पन्न हुआ। उस मिथुन में की यह स्त्री। यह उस मिथुन का पुरुष पृथुराजा की पत्नी बनी। यह लक्ष्मी का अवतार थी। (भा. ४.१५.५; पृथु देखिये)।

२. कृशाश्व ऋषी की दो पत्नियों में से एक, एवं धूमकेश ऋषि की माता (भा. ६.६.२०)।

३. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के देव।

आर्चिमालि—सीताशुद्धी के लिये पश्चिम की ओर गये वानरों मे से एक (वा. रा. कि. ४२)।

अर्चिष्मत्—दक्षसावर्णि मनु का पुत्र।

अर्चिष्मती—बृहस्पति की कन्या। बृहस्पति की दूसरी पत्नी शुभा की सप्त कन्याओं में से एक।

अर्चिसन—अत्रिगोत्री मंत्रकार। इसे अर्धस्वन तथा अर्वसन नामांतर है।

अर्जव—ब्रह्मांड के मतानुसार व्यास की ऋक शिष्य-परंपरा का बाष्कलि भरद्वाज का शिष्य। वायु के मतानुसार अर्यव पाठ है (व्यास देखिये)।

अर्जुन—(सो. पूरु.) कुन्ती को दुर्वास द्वारा दिये गये इन्द्रमंत्रप्रभाव से उत्पन्न पुत्र। यह कुन्ती का तृतीय पुत्र था। इसका जन्म होते ही इसका पराक्रम कथन करनेवाली आकाशबाणी हुई (म. आ. ११४.२८)। यह इंद्र के अर्ध सामर्थ्य से हुआ (मार्क. ५.२२)। इसके जन्म के समय, उत्तराफाल्गुनी समवेत पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र, फाल्गुन माह में था, अतएव इसका नाम फाल्गुन प्रचलित हुआ (म. वि. ३९.१४)। इसका जन्म हिमालय के शतशृंग नामक भाग पर हुआ। पांडु की मृत्यु के पश्चात्, इसके उपनयनादि संस्कार, वसुदेव ने काश्यप नामक ब्राह्मण भेज कर, शतशृंग पर ही करवाए (म. आ. ११५ परि. १.६७)।

विद्यार्जन—यद्यपि सब कौरव पांडवों ने शस्त्रविद्या द्रोण से ही ग्रहण की, तथापि विशेष नैपुण्य के कारण, द्रोण की इसपर विशेष प्रीति थी। इस की अध्ययन में भी प्रशंसनीय दक्षता थी। द्रोण सब शिष्यों को पानी भरने के लिये छोटें पात्र देता था, परंतु अपने पुत्र का समय व्यर्थ न जावे, इसलिये अश्वत्थामा को बडा पात्र देता था। यह बात, सर्वप्रथम अर्जुन के ही ध्यान में आयी तथा बडी कुशलता से इसने अश्वत्थामा के साथ आने का क्रम जारी रखा। इसीसे यह सब से आगे रहा परंतु अश्वत्थामा से पीछे न रहा। एकबार भोजनसमय, हवा के कारण बत्ती बुझ गयी परंतु अंधकार होते हुए भी इसका भोजन ठीक तरह से पूर्ण हुआ। तब इस ने तर्क किया कि, अंधकार में भी गलती न करते हुए मुंह में ग्रास जाने का कारण दृढाभ्यास है। तुरंत, अंधकार में भी लक्ष्यवेध करने का इसने प्रारंभ किया, तथा यह धनुर्विद्या में अत्यंत निष्णात हो गया। द्रोण को भी इसके लिये काफी अभिमान था, अतएव अर्जुन का पराभव कोई भी न कर सके, इसलिये उसने कपट से अपने शिष्य एकलव्य का अंगूठा मांग लिया। इतनी अधिक गुरुकृपा का स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि, 'रथी तथा महारथियों में अग्रेसरत्व ले कर लडनेवाला,' ऐसी इसकी ख्याति हो गई।

परीक्षा—एकबार परीक्षा लेने के लिये, द्रोण ने वृक्ष पर रखे एक चिन्ह पर लक्ष्य वेध करने के इसे कहा, तथा सबको पूछा कि, तुम्हें क्या दिख रहा है। केवल अर्जुन ने ही कहा कि, लक्ष्य के मस्तिष्क के अतिरिक्त मुझे और कुछ भी नही दिखता। तब से द्रोण इसपर अत्यधिक प्रसन्न रहने लगा। एकबार, जब द्रोण गंगास्नान के लिये गये थे तब मगर ने उसे पकड लिया। सभी शिष्य दिङ्मूढ हो गये परंतु अर्जुन ने पांच बाण मार कर द्रोण की मगर से रक्षा की। द्रोणाचार्यद्वारा ली गई शिष्यपरीक्षा में अर्जुन के प्रथम आनेके उपलक्ष में, ब्रह्मशिर नामक उत्कृष्ट अस्त्र उसने इसे दिया (म. आ. १२३), तथा कहा कि, इस अस्त्र का प्रयोग मानव पर न करना (म. आ. १५१. १२–१३ कुं.)। एकबार द्रोण ने अपने सब शिष्यों का शस्त्रास्त्रनैपुण्य दर्शाने के लिये एक बड़ा समारंभ किया। उस समय अर्जुन ने लगातार पांच बाण ऐसे छोडे कि, पांचों मिल कर एक ही तीर नजर आवे। एक लटकते तथा हिलते सींग में इक्कीस बाण भरना इ. प्रयोग कर इसने दिखाये, तथा सबसे प्रशंसा प्राप्त की। परंतु कर्ण इसे सहन न कर सका। अर्जुन द्वारा किये गये समस्त प्रयोग उसने कर दिखाये, तथा अर्जुन के साथ द्वंद्वयुद्ध करने की इच्छा प्रदर्शित की। तब अर्जुन ने आगंतुक कह कर उस का उपहास किया। तथापि द्रोण की इच्छानुसार यह युद्ध के लिये सुसज्ज हुआ, परंतु 'तुम कुलीन नही हो, अतएव राजपुत्र अर्जुन तुमसे युद्ध नही करेगा,' ऐसा कृपाचार्य ने कहा। तब दुर्योधन ने कर्ण को अभिषेक कर के, अंगदेश का राजा बनाया। युद्ध की भाषा प्रारंभ हुई, परंतु गडबडी में यह प्रसंग यहीं समाप्त हुआ (म. आ. १२६. १२७)। आगे चल कर, गुरुदक्षिणा के रूप में द्रुपद को जीवित पकड़ कर लाने का कार्य जब द्रोण ने शिष्यों को दिया, तब केवल अर्जुन ही यह काम कर सका (म. आ. १२८)।

पराक्रम—अर्जुन ने आगे चल कर, सौवीराधिपति दत्तामित्र नाम से प्रसिद्ध सुमित्र को जीता। उसी प्रकार,

विपुल को, जो पांडु द्वारा नही जीता गया, जीता। पूर्व तथा पश्चिम दिशायें जीतीं। कुछ प्रतियों में तो कहा है कि, अर्जुन ने पंद्रहवें वर्ष की उम्र में दिग्विजय किया (म. आ. १५१.४४-५० कुं.)। पांडवों की चारों तरफ प्रसिद्धी होने के लिये, अर्जुन के पराक्रम का बहुत ही उपयोग हुआ। आगे चल कर, जतुगृह से छुटकारा होने के बाद, सब पांडव ब्राह्मणवेष में द्रौपदीस्वयंवर के लिये गये। राह में रात्रि के समय, अंगारपर्ण गंधर्व ने इन्हें रोका। तब उसका तथा अर्जुन का युद्ध हो कर अंगारपर्ण का इस ने पराभव किया। अंगारपर्ण ने इसे चाक्षुषीविद्या दी, तथा अर्जुन ने उसे अग्न्यस्त्र दे कर उससे मैत्री की (अंगारपर्ण देखिये)। पांचालनगरी में अर्जुन ने, द्रौपदी के स्वयंवरार्थ लगाये गये मत्स्ययंत्रभेदन की शर्यत जीती, तथा द्रौपदी ने अर्जुन का वरण किया (म. आ. १७९)। आगे चल कर, धृतराष्ट्र ने विदुर को भेज कर पांडवों को हस्तिनापुर से वापस लाया। एक बार, आयुधागार में युधिष्ठिर तथा द्रौपदी जब एकांत में थे, तब अर्जुन को विवश हो कर वहाँ जाना पडा। कोई ब्राह्मणों की यज्ञीय गौएं चोरी हो गई थीं, इस लिये वे राजा को सूचना देने आये थे। अर्जुन ने निर्भय होने का आश्वासन उन्हें दिया तथा आयुधागार से शस्त्र ले कर गायें वापस लौटा कर लाई। युधिष्ठिर तथा द्रौपदी को एकांत में देखा, इस लिये नियत शर्त के अनुसार यह बारह महीनों तक तीर्थाटन करने गया (म. आ. २०५)।

तीर्थयात्रा—अर्जुन ने इस तीर्थाटन काल में, कौरव्य नाग की उलूपी नामक कन्या से, पाताल में विवाह किया (म. आ. २०६)। तदनंतर यह हिमालय पर गया। वहाँ से बिंदुतीर्थ पर गया। वहाँ से, पूर्व की ओर मुड कर उत्पलिनी नदी, नंदा, अपरनंदा, कौशिकी, महानदी, गया तथा गंगा नामक तीर्थस्थान इसने देखे। वहाँ से अंग, बंग तथा कलिंग देश देख कर, यह समुद्र की ओर मुडा। महेंद्र पर्वत पर से मणिपूर के राज्य में प्रविष्ट हुआ। मणिपूर के राजा चित्रवाहन की चित्रांगदा नामक एक सुन्दरी कन्या थी। अर्जुन ने उसे अपने लिये मांग लिया। राजा ने इस शर्त पर कन्या दी कि, कन्या का पुत्र उसे मिले। अर्जुन मणिपूर में तीन वर्ष रहा। उस अवधी में चित्रांगदा को एक पुत्र हुआ। उसका नाम बभ्रुवाहन। आगे मगरों के कारण, सब के द्वारा त्यक्त पंचतीर्थ में से सौभद्रतीर्थ पर अर्जुन प्रथम गया, तथा वहाँ शाप से मगर बनी हुई अप्सराओं का उद्धार कर के, पुनश्च मणिपूर वापस आया। वहाँ चित्रांगदा तथा बभ्रुवाहन से मिल कर गोकर्ण गया। वहां से प्रभासक्षेत्र में जाने पर कृष्णार्जुन मीलन हुआ। वहां से रैवतकपर्वत तथा द्वारका जा कर, कृष्ण की सहायता से सुभद्राहरण करने का इसने सोचा, तथा उसके लिये धर्मराज की संमति प्राप्त की। मृगया के निमित्य से बाहर गये अर्जुन ने, रैवतक पर्वत के देवताओं का दर्शन तथा प्रदक्षिणा किया। पश्चात् द्वारका वापिस आनेवाली सुभद्रा को अपने रथ में बिठाया तथा वहां से पलायन किया। पश्चात् अर्जुन का पक्ष ले कर, कृष्ण ने बलराम की ओर से अर्जुन को निमंत्रण दिया, तथा बडे धूमधाम से विवाह करवाया। वहां एक वर्ष रह कर, अर्जुन ने बाकी दिन पुष्करतीर्थ में बिताये। परंतु निम्नलिखित लोकप्रसिद्ध कथा भी कुछ स्थानों पर वर्णित है। सुभद्रा के दुर्योधन से होनेवाले विवाह की वार्ता, अर्जुन को प्रभासक्षेत्र में मालूम हुई। उसे प्राप्त करने के लिये, त्रिदण्डी सन्यास ले कर द्वारका में चातुर्मास बिताने का निश्चय इसने किया। वहां सब पौर जनों में यह अत्यंत प्रसिद्ध हुआ। तब बलराम ने भी इसे अपने घर में भोजन का निमंत्रण दिया। सीधे साधे भोले बलराम इसे पहचान न सके। वहाँ सुभद्रा तथा अर्जुन की दृष्टिभेट हुई। यात्रा के लिये, शहर से बाहर गई हुई सुभद्रा को रथ में डाल कर अर्जुन ने हरण कर लिया, तथा विरोधकों को मार भगाया। अर्जुन के त्रिदण्डी सन्यास की कथा भागवत तथा महाभारत की कुंभकोणम् प्रति में ही केवल है (भा. १०.८६; म. आ. २२०.८ पु.)। स्कन्दपुराण में भी अर्जुन की तीर्थयात्रा का उल्लेख है तथा नारद ने अर्जुन को अनेक तीर्थों का महात्म्य कथन किया है (स्कन्द. १.२.१.५)।

वस्तुप्राप्ति—अर्जुन को अनेक व्यक्तियों से भिन्न वस्तु प्राप्त होने का उल्लेख है। मय ने बिंदुसर पर से उत्तम आवाज करनेवाला देवदत्त नामक वारुण महाशंख अर्जुन को दिया (म. स. ३.७.१८)। उसी प्रकार, अग्नि ने अर्जुन को, खांडववन भक्षणार्थ देने के उपलक्ष में, गांडीव धनुष्य, दो अक्षय तूणीर, कपिध्वजयुक्त सफेद अश्वों का रथ, आदि चीजें दीं (म. आ. ५५.३७; २५१ कुं.)। ये सारी चीजें अग्नि ने वरुण से तथा वरुण ने सोम से प्राप्त की थी। अर्जुन यद्यपि इन्द्रांश से उत्पन्न हुआ था, तथापि खांडवदाह के समय वर्षा कर के विरोध करने के कारण, इन्द्र का अर्जुन से युद्ध हुआ, तथा उसमें इन्द्र को पीछे हटना पडा (म. आ. २१८)। आगे चल कर, इन्द्र ने इसे कवच तथा कुंडल दिये (म. व. १७१.४)।

दिग्विजय—वनवास के पहले, राजसूययज्ञ के समय इसने किये दिग्विजय की कल्पना निम्नांकित वर्णन से आएगी। प्रथम कुलिंद देश के राजा को जीता। आनर्त तथा कालकूट देशों पर सत्ता स्थापित कर, सुमंडल राजा का पराजय किया। आगे चल कर, उसे साथ लेकर, शाकलद्वीप तथा प्रतिविंध्य पर आक्रमण किया। उस समय शाकलद्वीप के तथा सप्तद्वीप के सब राजाओं को अर्जुन ने जीता तथा उनके साथ प्राग्ज्योतिष देश पर आक्रमण किया। वहाँ भगदत्त के साथ अर्जुन का आठ दिनों तक भयंकर युद्ध हुआ। अन्त में जब भगदत्त ने कर देना स्वीकर किया, तब अर्जुन ने कुबेर के प्रदेश पर आक्रमण किया। वहाँ के सब राजाओं से कर वसूल कर, उलूक देश पर आक्रमण किया। उलूक देश के राजा का नाम बृहन्त था। उसे युद्ध में पराभूत कर तथा कर ले कर, उसके सहित सेनाबिंदु पर आक्रमण किया, तथा गद्दी से उसे पदच्युत किया। तदनंतर मोदापूर का वामदेव, सुदामन तथा उत्तर उलूक के राजाओं को इकट्ठा कर के उनसे कर वसूल किया। तदनंतर पंचगण देश को जीत कर सेनाबिंदू के देवप्रस्थ नगर को यह गया। वहाँ से इसने राजा पौरव विश्वगश्व पर आक्रमण किया। उसे जीत कर, पर्वत में रहनेवाले सात उत्सवसंकेत गणों को जीता, तदनंतर काश्मीर के वीरों को जीता तथा दस मांडलिकों के साथ लोहित को जीता। त्रिगर्त, दार्व तथा कोकनद से कर ले कर अभिसारी नगरी जीती। उरगा नगरी के रोचमान को जीता। चित्रायुध का सिंहपूर नगरी ध्वस्त किया। तदनंतर सुह्म तथा चौल देश उध्वस्त कर के, बाल्हीक देश में प्रविष्ट हुआ। वह देश जीत कर, कांबोज तथा दरद देश हस्तगत किये। उत्तर की ओर के दस्युओं को हस्तगत कर के, आगे लोह, परम कांबोज तथा उत्तर ऋषि को अर्जुन ने जीता। ऋषिक देश में भयंकर युद्ध करना पडा, परंतु अन्त में विजय प्राप्त हो कर, मयूरवर्ण तथा शुकोदरवर्ण अश्व करभार के रूप में प्राप्त हुए। इस प्रकार, निष्कुटसहित हिमालय जीत कर, अर्जुन श्वेत पर्वत पर आ कर रहने लगा (म. स. २४)। वहाँ से, किंपुरुषावास देश पर आक्रमण कर के, राजा द्रुमपुत्र से कर वसूल किया। हाटक देश में जाकर, मानसनीति से, गुह्यक के पास से कर लिया। मान सरोवर पर ऋषियों द्वारा निकाली गई नहरें देखीं। गंधर्वों के देशों पर आक्रमण कर के, त्तित्तिरिकल्माष तथा मंडूक नामक उत्तम अश्व करभार के रुप में प्राप्त किये। तदनंतर जब यह हरिवर्ष पर आक्रमण करने जा रहा था, तब द्वारपाल ने इसे रोका, तथा यहीं दिग्विजय रोकने के लिये कहा। क्यों कि, उत्तर कुरू देश में सब चीजें अदृश्य है। तब अर्जुन धर्मराज की सत्ता को मान्यता ले कर वापस आ गया, तथा इन्द्रप्रस्थ में प्रविष्ट हुवा (म. स. २३-२५)।

वनवास—वनवास में पाशुपतास्त्र-प्राप्ति के लिये, इन्द्रकील पर्वत पर अर्जुन ने तपश्चर्या की तथा शंकर को प्रसन्न कर लिया। किरातवेष में आये शंकर से इसने मूकवध पर से युद्ध किया तथा अंत में उससे पाशुपतास्त्र प्राप्त किया। पाशुपतास्त्र का रहस्यपूर्ण ज्ञान इसने शंकर से प्राप्त किया (म. व. ३८-४१)। अन्य देवों ने भी अर्जुन को अनेको अस्त्र दिये (म. व. ४२)। तदनंतर इन्द्र के निमंत्रण के कारण, उससे भेजे गये रथ में बैठ कर, यह स्वर्ग गया। वहाँ इन्द्र ने अर्जुन का काफी सम्मान कर अपने अर्धासन पर इसे जगह दी। वहाँ अर्जुन ने अनेक अस्त्रों की शिक्षा प्राप्त की। इस प्रकार इसने अपने पांच वर्ष स्वर्ग में बिताये। इन्द्र के कथनानुसार, वाद्य बजाना, नृत्यकला तथा गानकला की भी शिक्षा इसने ली। इस काम में चित्रसेन नामक गंधर्व का अत्याधिक उपयोग हुआ (म. व. ४५. ६)। एकबार अर्जुन के पास उर्वशी ने संभोगयाचना की। परंतु इसने उसे नाही कर दी। इससे क्रोधित हो कर, 'तुम नपुंसक बनोगे,' ऐसा शाप उसने अर्जुन को दिया। परंतु इन्द्र ने उसे बताया कि, अज्ञातवास के समय एक वर्ष तक तुम नपुंसक रहोगे, तथा इस शाप का तुम्हें उपयोग ही होगा (म. व. परि. ६)। इंद्र ने लोमश के द्वारा अर्जुन का समाचार भी अन्य पांडवों को भेजा। अर्जुन कुछ कालोपरांत अपने बांधवों के बीच आते ही, अज्ञातवास का समय आया। अज्ञातवास के लिये द्रौपदी को विराटनगर तक कंधों पर ले जाने का कार्य अर्जुन ने किया (म. वि. ५)।

अज्ञातवास—अज्ञातवास में अर्जुन ने बृहन्नला नाम तथा नपुंसकत्व का स्वीकार किया, तथा स्वयं ही को द्रौपदी की परिचारिका बता कर, उत्तरा को नृत्यगायनादि सिखाने का काम पाया। आगे जब विराटादि सब लोग, दक्षिण-गोग्रहण में मग्न थे, तब दुर्योधनादि ने उत्तरगोग्रहण किया। रजवाडे में अकेला भूमिंजय (उत्तर) ही था। उसके पास सारथि न था। बृहन्नला सारथ्य कर सकती है यह ज्ञात होने के पश्चात् वह युद्ध के लिये निकला। परंतु ऐन समय पर घबरा कर, रथ से कूद कर भागने

लगा। बृहन्नला ने उसे समझा कर, स्वयं युद्ध करने का निश्चय किया, तथा शमीवृक्ष पर के आयुध ले कर उत्तर को अपना परिचय दिया। धमासान युद्ध करके गौओं को पुनः प्राप्त करते समय, इसने कर्ण को भगा कर उस के भाई को जान से मारा। इसके उपलक्ष में, अर्जुन को उपहार रूप में उत्तरा को देने का विचार विराट ने प्रकट किया, परंतु अर्जुन ने उसका स्वीकार अभिमन्यु के लिये किया (म. वि. ६७)।

कृष्णसहाय्य—भारतीय युद्ध की तैय्यारी जब चालू थी, तब दुर्योधन कृष्ण की सहायता प्राप्त करने के लिये द्वारका गया। अर्जुन भी वहीं उपस्थित हुआ। दुर्योधन सराने की ओर बैठा, तथा अर्जुन नम्रता से पैरों की ओर बैठा। उठते ही प्रथम अर्जुन दिखा। उसी प्रकार यह दुर्योधन से छोटा भी था, अतएव कृष्ण ने प्रथम अर्जुन को माँग प्रस्तुत करने को कहा। दश कोटि गोपालों की नारायण नामक सेना, तथा निःशस्त्र स्वयं ऐसा विभाजन कर, जो चाहिये उसे मांगने की सूचना कृष्ण ने की। तब अर्जुन ने कृष्ण को मांग लिया। अपनी ओर हजारों सैनिक आये, इस बात पर दुर्योधन संतुष्ट हुआ (म. उ. ७) कृष्ण जब पांडवों के मध्यस्थ कार्य के लिये गया, तब अर्जुन ने कहा कि, उसे जो योग्य प्रतीत हो वही वह तय करे (म. उ. ७८)।

भारतीययुद्ध—युद्ध के आरंभ में ही, अर्जुन को युद्ध का परिणाम दिखाई देने लगा था। यह सोचने लगा कि, वह स्वयं किसी अविचारी कृत्य में प्रवृत्त हो गया है। इस विचार के कारण, यह युद्ध से निवृत्त होने लगा। परंतु कृष्ण ने इसे कर्तव्यच्युत होने से परावृत्त किया। यही भगवद्गीता है (म. भी. २३. ४०)। युद्ध के प्रारंभ में ही भीष्मार्जुन युद्ध प्रारंभ हुआ। तीसरे दिन ऐसा प्रतीत होने लगा कि, भीष्म पांडवों को बिल्कुल नहीं बचने देंगे। परंतु कृष्ण ने प्रतिज्ञा तोड़ कर हाथ में चक्र लिया, तथा अर्जुन ने भी जोर लगाया। तीसरे दिन के अंत में, कौरवों का इसने काफी नुकसान किया।

नववे दिन, अर्जुन का द्रोणाचार्य के साथ युद्ध हुआ। भीष्म के साथ भी जोरदार युद्ध हुआ। संध्या होने के कारण युद्ध रोका गया, परंतु भीष्म के सामने किसी की शक्ति काम नहीं आती थी, इससे सब निराश हो गये। धर्मराज एवं कृष्ण ने विचार किया कि, वे भीष्म को ही पूछें, कि उसका वध किस प्रकार किया जा सकता है। भीष्म ने भी सरल स्वभाव से कहा कि, शिखंडी को आगे रख कर, अर्जुन अगर मुझ से लड़े तो मेरा वध हो सकता है। क्यों कि, अभद्र ध्वजयुक्त तथा एकबार स्त्री रहनेवाले शिखंडी के समान लोगों पर अपने नियमानुसार भीष्म शस्त्र नहीं चलाते थे।

भीष्मवध—दूसरे दिन, शिखंडी को भीष्म के सामने छोड़ कर, अर्जुन ने कौरव सेना को बिल्कुल त्रस्त कर डाला। कौरवों ने पांडवों को रोकने का अंतिम प्रयत्न किया, परंतु सफलता हाथ न लगी। अर्जुन ने शिखंडी के आड़ में रह कर, हजारों बाण भीष्म पर बरसाये तथा भीष्म को नीचे गिरा दिया। हजारों बाण जिसके शरीर में भिदे हैं, ऐसा भीष्म जब वीरोचित शय्या पर विश्रांति कर रहा था, तब उसकी गर्दन नीचे लटकने लगी अतएव उसने तकिया मांगा। कइयों ने उसे नरम तकिये ला दिये, परंतु अर्जुन ने वीरशय्या के लिये उचित तीन बाणोंका तकिया तैय्यार कर के उसे प्रसन्न किया। उसी प्रकार भीष्म के पानी मांगने पर, सबने पानी ला दिया। परंतु उसका स्वीकार न कर, अर्जुन ने भूमि में बाण मार कर उत्पन्न किये जल का स्वीकार भीष्म ने किया (म. भी. ११६)।

इसके सिवा, युद्ध में शत्रुओं को मारेंगे अथवा मरेंगे, ऐसी प्रतिज्ञा कर के बाहर आये हुए त्रिगर्त देश का राजा सत्यरथ, सत्यवर्मा, सत्यव्रत, सत्येषु तथा सत्यकर्मा तथा प्रस्थलाधिपति सुशर्मा, तथा मावेल्लक, लालित्थ तथा मद्रक आदि अन्य राजाओं को अर्जुन ने परलोक दर्शाया (म. द्रो. १६; क. ११; ३२; ३९)। तदनंतर अर्जुन ने हाथी की सहायता से लड़नेवाले भगदत्त को मार डाला। भगदत्त ने एक बार अर्जुन पर प्राणघातक अंकुश फेंका, परंतु कृष्ण ने बीच में आ कर उसे अपनी छाती पर लिया तथा अर्जुन को बचाया (म. द्रो. २८)।

जयद्रथवध—जयद्रथ ने अभिमन्यु को मृत्यु के बाद लाथ मारने के कारण, अर्जुन ने प्रतिज्ञा की कि, दूसरे दिन सूर्यास्त के पहले मैं उसकी हत्या करूंगा। रात्रि में शंकर ने इसके स्वप्न में आ कर, इसको धीरज बंधा कर पुनः पाशुपतास्त्र दिया (म. द्रो. ५७)। अर्जुन में वीरश्री का संचार हुआ तथा इसने दुःशासन दुर्योधनादि का कई बार पराभव किया। कर्ण को भगाया। अंबष्ठ, श्रुतायुस तथा अश्रुतायुस का वध किया (म. द्रो. ६८)। इस प्रकार तुमुल युद्धप्रसंग में, सूर्यास्त होने के पहले ही, अर्जुन ने जयद्रथ का शिरच्छेद किया (म. द्रो. १२१)।

कर्णवध—तदुपरांत, कर्ण के द्वारा धर्मराज का पराभव होने के कारण, धर्म के मन में कर्ण के प्रति अत्यंत द्वेष

उत्पन्न हो गया। परंतु कर्ण के सामने किसी का बस नही चलता था। तब धर्म ने अर्जुन की निर्भत्सना की, तथा कहा कि, कर्णवध करने की शक्ति अगर नही है, तो गांडीव किसी और को दे दो। उसने कर्णवध किये बिना रण से वापस लौट आने के लिये, अर्जुन को दोष दिया। यह सुनते ही, पूर्वप्रतिज्ञा के अनुसार, गांडीव कीसी दूसरे को दे दो, ऐसे कहनेवाले धर्मराज का वध करने के लिये खड्ग लेकर दौडा। तब कृष्ण ने धर्माधर्म का भेद बना कर कहा कि, धर्मराज के लिये 'आप' शब्द का प्रयोग करने के बदले अगर 'तुम' या 'तू' कहा तो यह अपमान वधतुल्य है। अर्जुन ने यह मानकर, धर्मराज के प्रति कुत्सित शब्दों का उपयोग कर, उसका अत्यंत अपमान किया। अंत में, ऐसा करने का कारण बता कर, यह कर्णवध के काम में लग गया। कृष्ण इसे लगातर उत्तेजन दे ही रहा था। कर्णार्जुन का तुमुल युद्ध शुरू हुआ। अर्जुन ने कर्ण को घायल कर के एक बार बेहोश कर दिया, तथा बाण पर बैठ कर आये हुए तक्षक का वध किया। परंतु युद्ध के ऐन रंग में ही, कर्ण के रथ का पहिया पृथ्वी ने निगल लिया। कर्ण नें रथ से कूद कर पहिया उठाने का प्रयत्न किया, परंतु कुछ लाभ नही हुआ। उसने धर्मयुद्ध के अनुसार अर्जुनको रुकने का उपदेश किया, परंतु उसका भी कुछ लाभ न हो कर, अर्जुन ने कर्ण का मस्तक उड़ा दिया (म. क. ६७)।

युद्धसमाप्ति—दुर्योधन की मृत्यु के बाद सब उसके शिबिर में आये। तब अनेक अस्त्रप्रयोगों से दग्ध, परंतु कृष्ण के, सामर्थ्य से सुरक्षित अर्जुन का रथ, कृष्णार्जुन के नीचे उतरते ही, अपने आप जल कर खाक हो गया (म. श. ६१)। आगे चल कर, अश्वत्थामा ने चिढ कर रात्रि के समय ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया, तथा सबको जलाना प्रांरभ किया। तब उसके परिहार के लिये अर्जुन ने भी ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। परंतु वह सब लोगों को अधिक कष्ट देनेवाला सोच कर इसने वापस ले लिया (म. सौ. १५)। यद्यपि भारतीय युद्ध में, अर्जुन का सारथी कृष्ण था (म. उ. ७. ३४), तो भी पूरु नामक एक सारथि अर्जुन के पास निरंतर रहता था (म. स. ३०)।

अश्वमेध—जब युधिष्ठिर ने अश्वमेध का अश्व छोडा, तब उसके संरक्षणार्थ अर्जुन की योजना की गई थी। अर्जुन प्रथम अश्व के पीछे पीछे उत्तर दिशा की ओर गया। राह में कई छोटे बडे युद्ध हुए। इनमें से केवल महत्त्वपूर्ण युद्धों का वर्णन महाभारत में दिया है। त्रिगर्त का राजा सूर्यवर्मा, उसी प्रकार उसका भाई केतुवर्मा तथा धृतवर्मा का पराजय अर्जुन ने किया। प्राग्ज्योतिषपुर का राजा भगदत्तपुत्र यज्ञदत्त को इसने अच्छा पाठ सिखाया। तदनंतर यह सिंधु देश में गया। सिंधुराजा जयद्रथ का वध अर्जुन के द्वारा होने के कारण, वहाँ के निवासियों में अर्जुन के प्रति त्वेष जागृत था। उनके द्वारा जोरदार आक्रमण होने के कारण, अर्जुन के हाथों से गाण्डीव छूट गया। परंतु उसके बाद भी इसने ज़ोरदार युद्ध शुरू किया। अर्जुन के आगमन की सूचना मात्र से जयद्रथपुत्र सुरथ मृत हो गया। परंतु जयद्रथ की पत्नी तथा दुर्योधन की भगिनी दुःशला, अपने नाती सहित अर्जुन के पास आई, तथा इसे शरण आ कर युद्धसे परावृत्त किया।

पुत्रभेट—तदनंतर अर्जुन मणलूर देश में गया। तब इसका पुत्र बभ्रुवाहन अनेक लोगो के साथ, इसके स्वागत के लिये आया। परंतु क्षत्रियोचित वर्तन न करने के कारण अर्जुन ने उसकी निर्भत्सना की। पाताल से उलूपी वहाँ आई तथा उसने भी अपने सापत्न पुत्र को युद्ध के लिये प्रोत्साहन दिया। बभ्रुवाहन ने घनघोर युद्ध प्रारंभ कर के अर्जुन को मूर्च्छित किया, तथा स्वयं भी मूर्च्छित हो गया। उसकी माता चित्रांगदा रणक्षेत्र में आई तथा पुत्र एव पति के लिये उसने अत्यंत विलाप किया। बभ्रुवाहन ने प्रायोपवेशन किया। तब, इस पिता पुत्र युद्ध के लिये, उलूपी को सबके द्वारा दोष दिये के जाने कारण, केवल स्मरण से प्राप्त होने वाले संजीवनीमणि से उसने अर्जुन को जागृत किया। शिखण्डी को सामने रख कर भीष्मवध करने के कारण अजिंक्य अर्जुन का पराभव बभ्रुवाहन कर सका।

तदुपरांत, अर्जुन मगध देश में गया तथा जरासंधपौत्र मेघसंधी का इसने पराभव किया। उसके बाद वंग, पुण्ड्र तथा केरल देश जीत कर, दक्षिण की ओर मुड़ाकर इसने चेदि देश पर आक्रमण किया। वहाँ शिशुपालपुत्र शरभ से सत्कार प्राप्त कर, काशी, अंग, कोसल, किरात तथा तङ्गण देश पार कर, यह दशार्ण देश में गया। वहाँ चित्रांगद से युद्ध कर के उसे अपने काबू में लाया। निषादराज एकलव्य के राज्य में जा कर, उसके पुत्र से युद्ध कर के उसे जीता। पुनः दक्षिण की ओर आ कर, द्रविड, आन्ध्र, रौद्र, माहिषक तथा कोल्लगिरेय, इनको सुगमता से जीत कर सुराष्ट्र के आसपास गया। वहाँ से, गोकर्ण, प्रभास, द्वारका इ. भाग से, समुद्रकिनारे से पंचनद देश में गया तथा वहाँ से गांधार गया। गांधार में, शकुनिपुत्र से इसका भयानक युद्ध हुआ तथा शकुनिपुत्र की सेना का इसने संहार किया। अपने पुत्र की भी यही स्थिति होगी यह जानकर, शकुनि

की पत्नी ने, अर्जुन को युद्ध से परावृत्त किया। इस प्रकार, बडे गौरव के साथ अश्व के पीछे पीछे दिग्विजय कर के, अर्जुन हस्तिनापुर लौट आया। उस समय माघ पौर्णिमा थी, तथा यज्ञ चैत्र पौर्णिमा के समय होनेवाला था। इस के लिये अर्जुन ने सब को आमंत्रण दिया था (म. आश्व. ७१ ८५-कुं.) युधिष्ठिर को अर्जुन के आगमन की वार्ता प्रथम जासूसों द्वारा मालूम हुई। तदनंतर अर्जुन के शरीर-स्वास्थ्य के बारे में उसने कृष्ण के पास विशेष पूछताछ की (म. आश्व. ८९ कुं.)। अर्जुन ने आनेवाले राजाओं का सन्मान करने के बारेमें बताते समय, बभ्रुवाहन का विशेष सन्मान करने के लिये कहा (म. आश्व. ८८. १८-२१ कुं.)

हतबलता—सब यादवों का संहार हुआ, ऐसी वार्ता दारुक ने हस्तिनापुर में आ कर बताई। तब अर्जुन को ऐसा लगा कि, यह वार्ता गलत है। परंतु स्वयं द्वारका में आ कर देखने के बाद, उसे विश्वास हुआ। कृष्णपत्नियों का हृदयभेदी विलाप बडे कष्ट से सुन कर इसने सबको धीरज बंधाया, तथा यह वसुदेव से मिलने आया। आंखों में पानी ला कर इसने वसुदेव का चरण-स्पर्श किया। वृद्ध वसुदेव ने अर्जुन का आलिंगन कर के शोक किया, तथा शूर राम-कृष्ण की मृत्यु हो गई, केवल मैं जीवित बचा, ऐसे खेदजनक शब्द कहे। द्वारका जल्द ही समुद्र में डूबने वाली है, ऐसा बता कर, स्त्रियाँ, रत्न तथा राज्य सम्हालने के लिये वसुदेव ने अर्जुन से कहा तथा देहत्याग किया (म. मौ.६-७)। अर्जुन ने सब को द्वारका छोड कर इन्द्रप्रस्थ आने की तैय्यारी करने के लिये कहा, तथा वसुदेव, राम तथा कृष्ण को अग्नि दी। तदनंतर, इसके नेतृत्व में अवशिष्ट यादवस्त्रियाँ तथा पौर इन्द्रप्रस्थ निकले ही, कि इधर द्वारका समुद्र ने निगल ली। इन्द्रप्रस्थ की ओर आते समय, पंचनद देश में अर्जुन ने डेरा डाला। अर्जुन अकेला ही अनेक स्त्रियों को ले कर जा रहा है यह देख, वहाँ के आभीर लोगों ने अर्जुन पर आक्रमण किया। अर्जुन उस समय वृद्ध हो चला था, भाग्य भी बदल गया था। इससे पहले के समान, धनुष सज्ज कर बाण नही छोड सकता था। अस्त्रमंत्र याद नही आ रहे थे, बाण भी समाप्त हो गये थे। अंत में, धनुष्य का लाठी के समान उपयोग कर अर्जुन सब को मारने लगा। इससे कई स्त्रियाँ भगाई गई, कई स्वयं भाग गई, तथा बचे हुए परिवार के साथ बडी कठिनाई से अर्जुन इन्द्रप्रस्थ लौट सका (अष्टावक्र देखिये)। जो कुछ अंकुर यादव वंश के बचे थे, उनकी इसने व्यवस्था की। हार्दिक्यतनय को मृत्तिकावत का राज्य दिया, अश्वपति को खाण्डववन का राज्य दिया तथा बाकी सब को इन्द्रप्रस्थ में रख कर, वज्र को इन्द्रप्रस्थ का राजा बनाया (म. मौ. ८; पद्म. ३. २७९. ५६; ब्रह्म. २१०-२१२; विष्णु. ५. ३७. ३८; अग्नि. १५)। इस प्रकार व्यवस्था कर के, अर्जुन उद्विग्न अवस्था में व्यास आश्रम में गया, तथा व्यास का दर्शन ले कर, हस्तिनापूर आ कर, सब निवेदन युधिष्ठिर को किया (म. मौ. ९ कु)

मृत्यु—तदपुरांत जब सब पांडव हिमालय पर जा रहे थे, तब १०६ वर्ष की उम्र में इसका पतन हुआ। भीम ने पूछा कि, बीच में ही इसका पतन क्यों हुआ? तब धर्म ने कहा कि, यह हमेशा कहता था कि, मैं अकेले ही शत्रुओं को नष्ट करूंगा, परंतु उसने ऐसा किया नही। उसी प्रकार, अन्य धनुर्धारियों का यह अपमान भी करता था, इस लिये इसका पतन हुआ (म. महा. ३.२१-२२)।

कौटुंबिक—अर्जुन को द्रौपदी से उत्पन्न पुत्र श्रुतकीर्ति भारतीय युद्ध में मृत हो गया। सुभद्रा से उत्पन्न पुत्र अभिमन्यु चक्रव्यूह में मृत हुआ, तथा चित्रांगदापुत्र बभ्रुवाहन मणिपूर का राजा बना। उलूपीपुत्र इरावत की मृत्यु भी युद्ध में हुई। आगे चल कर, अर्जुन का पौत्र परीक्षित राजा बना।

अर्जुन ने हिरण्यपुर के पौलोम, कालकेय तथा दानव का वध किया (ब्रह्माण्ड. ३.६.२८)।

यह नर का अवतार है।

अश्व—परशुराम द्वारा की गई नरस्तुति में अर्जुन के निम्नांकित अश्वों का वर्णन है।

१. काकुदिक (काम), २. शुक (क्रोध), ३. नाक (लोभ), ४. अक्षिसंतर्जन (मोह), ५. संतान (मद), ६. नर्तक (मान), ७. घोर (मत्सर), ८. आस्यमोदक (अहंकार), (म. उ. ९६)। अर्जुन की उपासना पाणिनी के समय लोक करते थे, ऐसा पाणिनीसूत्रों से ज्ञात होता है (पा. सू. ४.३.९८)।

इसके रथ का नाम नंदिघोष (गरुड. ३.१४५.१६)। इसने ६५ वर्षों तक गांडीव का उपयोग किया (म. वि. ४७.७)।

२. रैवत मनूका पुत्र (मनु देखिये)।

३. कार्तवीर्य देखिये।

अर्जुनक—एक लुब्धक। गौतमी नामक ब्राह्मणी का पुत्र सर्पदंश से मृत होने के कारण, वह शोक कर रही थी। तब

इसने उस सर्प को पकड कर लाया, तथा पूछा कि, उसका वध किस प्रकार किया जावे। तब, प्राणी कर्म परतंत्र हैं, कह कर उसने साँप को छोड़ देने को कहा (म. अनु. १)।

अर्जुनपाल—(सो. यदु.) वसुदेव का अनुज शमीक सुदामिनी के दो पुत्र में से एक (भा. ९.२४.४४)

अर्ण—यदु-तुर्वशो के लिये इंद्र ने चित्ररथ के साथ सरयु के तट पर इसका वध किया (ऋ. ४. ३०. १८)।

अर्थ—स्वायंभुव मन्वन्तर के धर्म तथा बुद्धि का पुत्र (भा. ४. १. ५१)।

अर्थसिद्धि—धर्म तथा साध्या का एक पुत्र (भा. ६. ६. ७)।

अर्धनारीनटेश्वर—ब्रह्मदेव ने प्रजा उत्पन्न करने के लिये तप प्रारंभ किया। तब शंकर प्रसन्न हुआ, तथा उसके शरीर से अर्धनारीनटेश्वर उत्पन्न हुआ (शिव. शत. ३) पार्वती की आज्ञानुसार दुर्गाद्वारा महिषासुर का वध होने के पश्चात्, शंकर संतुष्ट हो कर अरुणाचल पर तप कर रही पार्वती के पास आया, तथा उसे अपने वामांक पर लिया। तब इस प्रेम के कारण, पार्वती शंकर के वामांग में ही लीन हो गई। उससे शिव-पार्वती का वह शरीर आधा शुभ्र, आधा ताम्रछटायुक्त, अर्धभाग में चोली, अर्ध में हार, इस प्रकार अर्धनारीनटेश्वर दिखने लगा (स्कंद १.२.३-२१; स्वयंभुव देखिये)।

अर्धपण्य—भत्रिकुल के गोत्रकार ऋषिगण।

अर्पिणी— आर्षिणी देखिये।

अर्बुद—इन्द्र के शत्रु दो असुर। इन्द्र ने इनसे युद्ध कर के, इन पर बर्फ की वर्षा करने से, यह पराभूत हो गये। इन्द्र ने अपने वज्र से इसकी हत्या की (ऋ. ८.३२.२६; १०.६७.१२)।

अर्बुद काद्रवेय—यह नागर्षि था। इसने यज्ञ के न्यून कैसे सुधारे जायें, तथा सोमरस कैसा निकाला जावे, इसका ज्ञान बताया (ऐ. ब्रा. ६.१; सां. ब्रा. २९.१)। सर्पसत्र में यह ग्रावस्तुत था (पं. ब्रा. २५.१५.)। इन सब स्थानों में उल्लेखित अर्बुद एक ही होगा।

अर्यमभूति—भद्रशर्मन् का शिष्य (वं. ब्रा. ३)।

अर्यमन्—ऋग्वेद में उल्लिखित एक देव। मित्रावरुणों के साथ इसका उल्लेख पाया जाता है। आदित्य तथा मित्र के समान यह अन्य देवों का स्नेही है। संस्कारों में इसका उल्लेख प्राप्य है। अन्य देवों के समान यह भी कश्यप तथा अदिति का पुत्र है। यह द्वादशादित्यों में से एक है। यह पितृगणों में से एक है। यह वैशाख में प्रकाशित होता है। इसकी ३०० किरणें है (भवि. ब्राह्म. १. ७८; भा. १२.११.३४.)। यह अत्रिपुत्र है, इस कथन के लिये, महाभारत छोड़ कर अन्यत्र आधार नही मिलता (म. शां. २०१.९-१०)।

२. धर्म तथा मुहूर्ता के पुत्रों में से एक।

अर्यल—यह सर्पसत्र में गृहपति था (पं. ब्रा. २३. १-५)।

अर्यव—अर्जव देखिये।

अर्ववीर - सावर्णि मनु का पुत्र।

२. स्वारोचिष मनु का पुत्र। इसका नान्मातर और्व।

३. पुलह के तीन पुत्रों में से एक (मार्क. ५२)।

अर्वावसु—रैभ्यऋषि के दो पुत्रों में से दूसरा। यह गुणों में उत्तम था (यवक्रीत तथा परावसु देखिये)। इसे ही सूर्यमंत्रप्रकाशक, रहस्यवेदसंज्ञक, काठक ब्राह्मण का दर्शन हुआ (म. व. १३९)। इसने पुत्र प्राप्ति के लिये सूर्य की उपासना की। आकाशमार्ग से आ कर, सूर्य ने अरुण के द्वारा, इसे सप्तमीकल्प विधि बताया। इससे इसे पुत्र तथा ऐश्वर्य प्राप्त हुआ (भवि. ब्राह्म. ८०)।

अर्षि—श्रवाऋषि के दो पुत्रों में से ज्येष्ठ (वीतहव्य देखिये)।

आर्ष्टिषेण—भृगुकुलोत्पन्न ऋषि (म. श.३९)। इसका युधिष्ठिर से संवाद हुआ था (म. व. १५६)। इसका वंशज आर्ष्टिषेण (म. व. १४; देवापि देखिये)।

अर्हत्— एक राजा। ऋषभ नामक विरक्त पुरुष दक्षिण कर्नाटक के कोकवेंक कुटक देशके कुटकाचल समीप, अरण्य के दावानल में जल कर मृत हुआ। तब यह वहाँ का राजा था। इसने ऋषभदेव से जैनधर्म का स्वीकार किया (भा. ५. ६. ८.)।

अलक्ष्मी—यह कालकूट के बाद समुद्र से निकली। इसका मुख काला, एवं आँखे लाल थीं। इसके केश पीले थे, एवं यह वृद्ध थी। देवताओं ने इसे वरदान दिया कि, 'जिस घर में कलह होगा वहाँ तुम रहो। कठोर, असत्य बोलनेवाले तथा संध्यासमय भोजन करनेवालों को तुम ताप दो। बिना हाथ मुँह धोये जो भोजन करे, उसे तुम कष्ट दो। तुम हड्डिया, कोयला, केश तथा भूसी में रहो, तथा अभक्ष्य-भक्षक, गुरु, देव, अतिथि इ. का पूजन न करनेवाले, यज्ञ तथा वेदपाठ न करनेवाले, आपस में कलह करनेवाले पतिपत्नि तथा द्यूत खेलनेवालों को तुम दरिद्री बना दो।' आगे चल कर, लक्ष्मी का विवाह विष्णु से होने के पहले ही, इसका विवाह उद्दालक नामक ऋषि से कर दिया (पद्म.

अ. ९-१९)। समुद्र में से विष के बाद तथा लक्ष्मी के पहले यह उत्पन्न हुई। अतएव इसे ज्येष्ठा कहते हैं।

महाभारत के अनुसार, प्रथम विष, तदनंतर यह कृष्ण रूपधरा ज्येष्ठा, तथा तदनंतर चन्द्र उत्पन्न हुआ (म. अ. १६. ३४ कुं.)। इसका विवाह दुःसह से हुआ। आगे, दुःसह पाताल में जाने के बाद, यह अकेली ही पृथ्वी पर रही (लिंग २.६)। बड़ी का विवाह होने के पहले छोटी का विवाह नहीं हो सकता। इसका विवाह नहीं हो रहा था, इसलिये इसकी कनिष्ठ भगिनी लक्ष्मी का विवाह रुक गया। अतः इसका विवाह एक ब्राह्मण के साथ करा दिया। उस ब्राह्मण ने इसका त्याग किया। तब यह एक पीपल के वृक्ष के नीचे जा कर बैठ गई। हर शनिवार को वहां लक्ष्मी अपनी बहन से मिलने आती है। इस लिये, शनिवार को पीपल लक्ष्मीप्रद, तथा अन्य दिनों में स्पर्श करने से दारिद्र्य देनेवाला माना जाता है (सनत्सुजात संहितान्तर्गत कार्तिकमा.)। उद्दालक के साथ इसका विवाह हुआ था। इसे वैदिक कार्य प्रिय नहीं था। मद्य, द्यूत इ. ही अधिक प्रिय था। यह देख कर उद्दालक ने इसे पीपल के वृक्ष के नीचे बैठाया, तथा स्वयं कहीं चला गया। तब यह ज्येष्ठा रुदन करने लगी। तब लक्ष्मी, विष्णु के साथ इसका समाचार पूछने आई। विष्णु ने उसे पीपल के तने के पास रहने के लिये कहा, तथा बताया कि, जो भी वहां तुम्हारी पूजा करेंगे, उन्हें लक्ष्मी प्राप्त होगी (पद्म. उ. ११६)।

अलंबल—जटासुर का पुत्र। यह एक नरभक्षक राक्षस था (म. द्रो. १४९.५;७; १९)। इसके पिता का भीम ने नाश किया, इसलिये, यह भारतीय युद्ध में दुर्योधन पक्ष को मिल गया। यह महारथी था तथा मायावी युद्ध में कुशल था। इसी युद्ध में, घटोत्कच ने इसका सिर काट कर, उस सिर को दुर्योधन के रथ में फेंक दिया (म. द्रो. १४९.३२-३५)।

अलंबुषा—कश्यप तथा प्राधा की अप्सरा कन्याओं में से एक। इन्द्र, दधीचि के तप से काफी डरता था। अतः, इन्द्र ने इसे उसके यहां तप भंग करने के लिये भेजा। इससे दधिची से सारस्वत नामक पुत्र हुआ। इसने दिष्टवंश के बंधुपुत्र तृणबिंदु का वरण किया था, तथा उससे इसे इडविडा नामक कन्या हुई (भा. ९. २. ३१; ब्रह्माण्ड. ३. ७. ३५-४०)।

अलंबुस—दुर्योधन पक्षीय एक राजा। यह युद्ध से कभी भी न भागनेवाला, तथा शरासन एवं सुवर्णकवच धारण करनेवाला था। इसका तथा सात्यकि का बड़ा भारी युद्ध हुआ था। अत्यंत संतप्त हो कर इसने सात्यकि पर आक्रमण किया। परंतु सात्यकि ने इसका वध किया (म. द्रो. ११५)।

२. एक नरभक्षक राक्षस। यह बकासुर का भाई था। (म. स्त्री. २६.३७)। इसके भाई का वध भीम ने किया था। इस वैर का स्मरण कर, भारतीय युद्ध में पांडवों का नाश करने के लिये, इसने दुर्योधन का पक्ष लिया था। यह काजल के समान काला था (म. द्रो. ८४)। इसका तथा भीम का भयंकर युद्ध हुआ। यह इन्द्र के लिये भी अजेय था। परन्तु शूर सात्यकि ने ऐन्द्रास्त्र की योजना कर, इसे युद्ध से भगा दिया (म. भी. ७७-७८; द्रो. ८४)। इसका तथा अभिमन्यु का एक बड़ा युद्ध हुआ। परंतु उसमें इसका ही पराभव हो कर यह भाग गया (म. भी. ९६-९७)। अर्जुन के साथ भी इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. १४०.३४-४१)। अंत में, घटोत्कच के साथ इसका बड़ा ही मायावी द्वंद्वयुद्ध हुआ, तथा इसकी मृत्यु हो गई (म. भी. ४३; द्रो. ८४; क. २)। किर्मीर बकासुर का भाई था (म. व. १२.२२), तथा अलंबुस भी बकासुर का भाई ही था (म. द्रो. ८३.२१-२३; म. स्त्री. २६.३७)। इसकी अन्त्येष्टि धर्मराज ने की।

अलंबुसा या **अवलंबुसा**—एक देवांगना। एक बार ब्रह्मदेव की सभा में नृत्य करते समय हवा से इसके वस्त्र उड़े। तब वहां उपस्थित अष्टवसुओं में से विधूम नामक वसु, इसे देख कर कामपीड़ित हुआ। तब इन दोनों को ब्रह्मदेव का शाप मिल कर, विधूम को मनुष्ययोनी के राजकुल में सहस्रानीक नाम से, तथा अलंबुसा को कृतवर्मा राजा के कुल में मृगवती नाम से जन्म लेना पड़ा। आगे चल कर, इन दोनों का विवाह हो कर अलंबुसा गर्भवती हुई। तब रक्त के समान लाल कुएँ में इसके स्नान करने के कारण, एक पक्षी ने पका फल समझ कर इसे ऊपर उठाया, तथा ऊँचाई पर से उदयाचल पर्वत की गुफा में डाल दिया। उससे इसे मूर्च्छा आ गई। परंतु शीघ्र ही होश में आ कर, यह पतिविरह के कारण शोक करने लगी। इतने में जमदग्नि मुनि ने इसका विलाप सुन कर इसकी सांत्वना की, तथा इसे अपने आश्रम में लाया। कुछ काल बाद यह प्रसूत होकर, इसे उदयन नामक पुत्र हुआ। आगे चल कर, सहस्रानीक को यह वार्ता मालूम होते ही, उदयाचल पर जा कर पुत्र समवेत, उसने इसे राज्य में वापस लाया। तदनंतर उदयन को गद्दी पर बिठा कर, उसने अलंबुसा

के साथ चक्रतीर्थ पर स्नान किया। उससे सहस्रानीक तथा अलंबुसा ब्रह्मशाप से मुक्त हो कर पूर्वस्थिति के प्रत गये (स्कन्द. ३.१.५.)।

अलम्म परिजानत—एक आचार्य (माल्य देखिये)।

अलर्क—(सो. क्षत्र.) काशी के दिवोदास राजा का प्रपौत्र। इसके पिता का नाम वत्स, प्रतर्दन तथा ऋतध्वज प्राप्त है। दिवोदास प्रेम से प्रतर्दन को ही 'वत्स—वत्स' कहता था। प्रतर्दन सत्यनिष्ठ होने के कारण उसे ऋतध्वज ऐसा दूसरा नाम भी था (ह. वं. १.२९, विष्णु. ४.९; भा. ९.१७)। गरुड पुराण के मत मे, दिवोदास का पुत्र प्रतर्दन तथा उसका पुत्र ऋतध्वज है (१३९)। हरीवंश में प्रतर्दन का पुत्र वत्स तथा उसका पुत्र अलर्क है। इसने काशी में ६६ हजार वर्षों तक राज्य किया (ह. वं. १.२९; भा. ९.१७; ब्रह्म. ११)। यह ब्राह्मणों का बडा सत्कर्ता था तथा अत्यंत सत्यप्रतिज्ञ था। इसने एक बार अंध ब्राह्मण को वर मांगने के लिये कहा, तब उसने वर मांगा कि, तुम अपनी आँखे मुझे दे दो। वचनपूर्ति के लिये इसने अपनी आँखे निकाल कर उसे दे दी (वा. रा. अयो. १२.४३)। लोपामुद्रा की कृपा से यह सदैव तरुण रहा, तथा इसका स्वरूप कभी भी नहीं बिगडा। उसी की कृपा से इसे दीर्घायुष्य प्राप्त हुआ। निकुंम्भ के शाप से निर्मानुष बनी हुई वाराणशी, क्षेमक को मार कर इसने पुनः बसाई (वायु. ९२.६८, ब्रह्माण्ड ३.६७)। इसने वाराणशी नगरी की पुनः स्थापना की (ह. वं. १.२९; ३२)।

इसने प्रथम धनुर्बल से सब पृथ्वी जीती, तथा बाद में इसका अन्तःकरण सूक्ष्म ब्रह्म की ओर झुका। नाक, कान, मन, जिव्हा इ. इन्द्रिय काबू में रखने के लिये, इसने नाक कानादिकों से संभाषण किया (म. आश्व. ३०.)। इसे संतति नामक एक पुत्र था (भा. ९.१४; विष्णु. ४.९; वायु. ९२.६६)।

२. शत्रुजित्पुत्र ऋतुध्वज से मदालसा को उत्पन्न चौथा पुत्र। इसे मदालसा तथा दत्तात्रेय ने निवृत्तिमार्ग का उपदेश कर ज्ञानी बनाया (मार्क. २३–४०)। इसके ज्येष्ठ बंधु सुबाहु ने काशिराज की सहायता से इस पर आक्रमण किया। अत्यंत संकट में रहने पर, माता की इच्छानुसार त्यागी बन कर इसने अपना राज्य सुबाहु को दिया (मार्क. ३४)।

अलायुध—एक मनुष्यभक्षक राक्षस (म. द्रो. ७१.२७; श. २.३४)। द्रोणयुद्धकाल में रात्रि के समय, घटोत्कच तथा कर्ण का युद्ध चालू था। कर्ण घटोत्कच के हाथ से आज बच नही सकता, ऐसा प्रतीत होने लगा। इतने में इसने दुर्योधन से कहा कि, घटोत्कचसहित पांडवों का नाश मै करुंगा। दुर्योधन ने हाँ भरते ही यह भीम से युद्ध करने लगा। इसका रथ घटोत्कच के समान ही शतअश्वों का था। इसने भीम को इतना अधिक जर्जर किया कि, कृष्ण ने घटोत्कच को पुकार कर, इसके साथ युद्ध करने के लिये कहा। तब घटोत्कच ने कर्ण से युद्ध करना छोड कर, इसके साथ युद्ध प्रारंभ किया। उसमें घटोत्कच के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १५१–१५३)। इसको बक ज्ञाति (म. द्रो. १५१.३.३३) तथा बक का भाई भी कहा है (म. द्रो. १५३.४)।

अलाय्य—इसका परशु नष्ट हुवा (ऋ. ९.६७.२०)।

अलि—स्वारेचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अलिन—ऋग्वेद में यह शब्द एक बार बहुवचन में आया है। वहाँ तृत्सुओं की गायें भगाई गई, इसलिये इन्हें आनंद हुआ है। यह लोग सुदास के विरोधी होने चाहिये (ऋ. ७.१८.७)।

अलिपिंडक—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

अलीकयु वाचस्पत्य—एक यज्ञशास्त्रज्ञ (सां. ब्रा. २६. ५; २८.४)।

अलोलुप— धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

अल्पमेधस्—सुमेधस् नामक देवगणों में से एक।

अवगाह—(सो. यदु.) मत्स्य के मतानुसार वसुदेव तथा वृकदेवी का पुत्र।

अवतंस—(सो.) भविष्य के मत में सोमवर्धन का पुत्र

अवत्सार काश्यप—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. ५३–६०; ऐ. ब्रा. २. २४)। इसे अवत्सार प्राश्रवण कहते हैं (सां. ब्रा. १३. ३)। एवावद्, यजत तथा सध्रि के साथ इसका उल्लेख हैं (ऋ. ५. ४४. १०)।

अवधूतेश्वर—शंकर का एक अवतार। एक बार, शंकर के दर्शन के लिये इन्द्र तथा बृहस्पति कैलाश पर्वत पर जा रहे थे। उनकी परीक्षा लेने के लिये, शंकर मार्ग में दिगंबर एवं भयंकर रूप लेकर बैठा था। बार बार बता कर भी, न तो वह मार्ग छोडता था, न ही कुछ बोलता था। अन्त में इन्द्र ने वज्र बाहर निकाला। उस वज्र का स्तम्भन शंकर ने किया, तथा उसके तृतीय नेत्र से क्रोधाग्नि निकाला। बृहस्पति की प्रार्थना से, वह अग्नि अन्त में लवणोदधि में

डाला गया। उससे जालंधर उत्पन्न हुआ। उसका वध शंकर ने किया (शिव. शत. ३०)।

अवध्य--प्रतर्दन नामक देवगणों में से एक।

अवरात--प्रतर्दन नामक देवगणों में से एक।

अवरीयस्--सावर्णि मनु का पुत्र

अवरोधन--(स्वा.) गय राजा को गयंती से उत्पन्न पुत्र।

अवस्यु आत्रेय--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ३१; ७५)।

अविकंपन--एक ब्राह्मण। यह ज्येष्ठ ऋषी का शिष्य था।

अविक्षित्--(सू. दिष्ट.) करंधमपुत्र (आविक्षित)। इसने सौ अश्वमेध किये तथा स्वयं बृहस्पती ने इसका याजन किया। इसको स्वयंवर से प्राप्त हेमधर्मकन्या वरा, सुदेवकन्या गौरी, बलिकन्या सुभद्रा, वीरकन्या लीलावती, वीरभद्रकन्या विभा, भीमकन्या मान्यवती तथा दंभकन्या कुमुद्वती नामक पत्नियां थी (मार्क. ११९. १६-१७)।

विशाल की कन्या वैशालिनी भी इसकी पत्नी थी। इसने वैशालिनी के स्वयंवर में अन्य राजाओं का पराभव किया, तथा वैशालिनी को ले कर यह चला गया। पश्चात अन्य राजाओं ने मिल कर इसका पराजय कर के, इसको बंदीवान कर दिया। अन्त में इसका पिता करंधम ने सबका पराजय कर के, इसको मुक्त किया, तथा इसका वैशालिनी के साथ विवाह हुआ।

इसका पुत्र मरुत्त (म. आश्व. ४)। सर्पो ने कई ऋषिपुत्रों को मार डाला तब मरुत्त सर्प-संहार के लिये उद्युक्त हुआ। इस समय इसने अपने पत्नी के साथ वहाँ आ कर, पुत्र को इस कार्य से निवृत्त किया। सर्पों को बचा कर अभय दिया। सर्पों ने भी उन मृत ऋषिपुत्रों को पुनः जीवित किया (मार्क. ११९. १६-१७;१२८)।

२. (सो.) कुरुपुत्र। इसकी माता का नाम वाहिनी। इसे आठ पुत्र थे। वे इस प्रकार है--१. परीक्षित् (अश्ववत्), २. शबलाश्व, ३. अभिराज, ४. विराज, ५. शल्मल, ६. उच्चैःश्रवस, ७. भद्रकार, ८. जितारि (म. आ. ८९. ४५-४६)। इसके अश्ववान् तथा अभिष्वत नाम भी प्रसिद्ध हैं (कुरु देखिये)।

३. लीलावती (४.) देखिये।

अविज्ञात--(स्वा. प्रिय.) यज्ञबाहु के सात पुत्रों में से कनिष्ठ। इसका वर्ष इसीके नाम से प्रसिद्ध है। पुरंजन का यह मित्र था। (भा. ४.२५; ४.२९)।

अविज्ञानगति--अनिल देखिये।

अविद्ध--(सो. पूरु.) प्राचीन्वत् का नामान्तर।

अविध्य--लंका का एक वृद्ध राक्षस। सीता रामचंद्र को वापस देने को इसने रावण से कहा (वा. रा. सु. ३७)। यह राम का कुशल वृत्त छिपा कर, त्रिजटा के द्वारा सीता को सूचित करता था। (म. व. २८०)

अविन्द्र--(सो. पूरु.) वायु के मत में जनमेजय-पुत्र।

अविहोत्र--अत्रिकुल का एक मंत्रकर्ता।

अव्यय--रौच्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. रौच्य मनु का पुत्र।

३. बारह भार्गव देवों में से एक (भृगु देखिये)।

अशना--बली की पत्नी (भा. ६.१८)।

अशनिप्रभ--रावणपक्ष का एक राक्षस। इसे युद्ध में द्विविद वानर ने मारा (वा. रा. यु. ४३.३४)

अशोक--अकोप प्रधान का नाम (वा. रा. यु. १२९, म. आ. ६१.१४)।

२. दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। यह पहले अश्व नामक राक्षस था (म. आ. ६१.१४)। यह कलिंग में चित्रांगदकन्या के स्वयंवर में उपस्थित था (म. शां. ४. ७)।

३. (विशोक) भीमसेन का सारथि (म. भी. ६०. ८)।

४. (मौर्य. भविष्य.) वायु तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार, भद्रसार का पुत्र। परंतु भागवत तथा विष्णु पुराण में, अशोकवर्धन नाम दिया है, तथा पहले में इसे वारिसार का, एवं दूसरे में बिंदुसार का पुत्र कहा है। पद्म के कश्यपकुल के बिंदुसार राजा का पुत्र। यह बौद्धधर्मीय था। बौद्ध धर्म के प्रसार के लिये इसने पर्याप्त प्रयत्न किये। यह अत्यंत पराक्रमी था (भवि. प्रति. २.७)।

अशोकवर्धन--अशोक (४.) देखिये।

अशोकसुन्दरी--पार्वती की कन्या (पार्वती देखिये)। इसने हुंड दैत्य को शाप दिया था (हुंड देखिये)। इसका विवाह नहुष के साथ हुआ (पद्म. भू. १०२-११७)।

अश्मक--(सू. इ.) अश्मा का अर्थ है पत्थर। उसने इसे उत्पन्न किया, अतएक इसका यह नाम प्रचलित हुआ। यह कल्माषपाद नाम से प्रसिद्ध, मित्रसह राजा का पुत्र है (वायु. ८८.१७५-१७७; ब्रह्माण्ड. ३. ६३. १७५-१७७; विष्णु. ४.४.३८)। कल्माषपाद राजा

एक ब्राह्मण के शाप के कारण, स्त्रीसमागम नही कर सकता था। परंतु इक्ष्वाकु कुल की वृद्धि आवश्यक समझ कर, कल्माषपाद ने वशिष्ठ ऋषि से कह कर, उससे अपने मदयंती नामक पत्नी कें उदर में गर्भस्थापना करवाई (म. आ. ११३)। बारह वर्ष होने पर भी, यह गर्भ बाहर नही आया। तब मदयंती ने अश्मप्रहार से उदरविदारण कर के इसे बाहर निकाला (म. आ. १६७. ६८)। सात वर्षों के बाद, अश्मप्रहार कर वशिष्ठ ने इसे बाहर निकाला (भा. ९.९.३९)। इसने पौदन्य नामक नगर बसाया (म. आ. १६८.२५)। इसे मूलक नामक पुत्र था, जिसे आगे चल कर, नारीकवच नाम प्राप्त हुआ (भा. ९.९)।

२. एक राजा। कर्ण ने इसे जीत कर इससे कर वसूल किया था (म. क. ८.२०)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था (म. द्रो. ६१)।

३. भीष्म शरपंजर पर पड़ा था, तब उसके पास रहनेवाला एक ब्राह्मण।

४. अश्मक देश का राजा (म. स. २८.३०७*) यह कौरवों के पक्ष में था। व्यूहभेद करने के पश्चात्, अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. द्रो. ३६.२३)।

अश्मकी—तीसरे शूर की पत्नी।

२. प्राचिन्वत् की पत्नी (म. आ. ९०. ३३)। आश्माकी भी पाठ है।

अश्मन्—एक ब्राह्मण। इसका जनक के साथ सुखदुःखनिवृत्ति पर संभाषण हुआ था (म. शां. २८)।

अश्मरथ्य—विश्वामित्रकुल का एक गोत्रकार।

अश्व—कश्यप तथा दनु के पुत्रों में से एक।

२. सत्य नामक देवगणों में से एक।

३. कश्यप तथा खशा का पुत्र।

अश्वकेतु—दुर्योधन पक्षीय मगध देशोत्पन्न राजा। अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. द्रो. ४७.७)।

अश्वक्रंद—अमृत-रक्षक एक देव (म. आ. २८. १८)।

अश्वग्रीव—(सो. वृष्णि.) चित्रक राजा का पुत्र।

अश्वचक्र—कृष्णपुत्र सांब द्वारा मारा गया एक राजा (म. व. १२०.१३)।

अश्वजित—(सो. पूरु.) जयद्रथ का पुत्र।

अश्वतर—कद्रूपुत्र (उर्ज देखिये)। मदालसा की मृत्यु के पश्चात, दुसरी मदालसा प्राप्त कर, इसने ऋतध्वज को दी।

२. बुलिल का पितृनाम। सायण के मतानुसार, बुलिल अश्व का लडका तथा अश्वतर का वंशज है। सत्र के कुछ शंसनों के संबंध में गौश्ल के साथ इसका संवाद हुआ (ऐ. ब्रा. ६.३०.)।

अश्वत्थामन्—सप्तचिरंजीवों में से एक। द्रोणाचार्य तथा गौतमी कृपी का यह एकमेव पुत्र था। जन्म लेते ही उच्चैःश्रवा अश्व के समान जोर से चिल्ला कर, इसने तीनों लोक कंपित किये। अतः आकाशवाणी ने इसका नाम अश्वत्थामा रखा (म. आ. १६७. २९; द्रो. १६७. २९-३०)। द्रोणाचार्य का पुत्र होने से, इसे द्रोणि वा द्रोणायन कहते हैं। रुद्र के अंश से उत्पत्ति होने के कारण, इसमें क्रोध तथा तेज था।

एक बार, एक धनिक के घरमें उसके पुत्र को गाय का दूध पीते इसने देखा। मुझे भी दूध चाहिए, ऐसा हठ यह करने लगा। उसे संतोष दिलाने के लिये, इसकी माता ने यवपिष्ठ में पानी घोल कर इसे पीने को दिया। उससे, 'मैंने दूध पिया,' कह कर यह आनंद से नाचने लगा (म. आ. परि. १.७५; द्रोण देखिये)।

अश्वत्थामा को शस्त्रास्त्रविद्या की शिक्षा, कौरव-पांडवों के साथ ही द्रोणाचार्य के द्वारा मिली। जाति से ब्राह्मण होते हुए भी, क्षत्रिय की विद्या सीखने के कारण इसमें क्षत्रियधर्म अधिक था। यह द्रौपदीस्वयंवर में (म. आ. १७७. ६.), तथा राजसूय में उपस्थित था (म. स. ३१.८)।

भारतीय युद्ध में सब सेनापतियों का पतन होने के पश्चात्, भीम तथा दुर्योधन में गदायुद्ध हो कर, दुर्योधन उस में घायल हुआ। तब उसने अश्वत्थामा को सेनापत्य का अभिषेक किया। उस समय इसने पांडवों का वध करने की प्रतिज्ञा की (म. श. ६४.३५)। इसने अकेले ही पांडवों की एक अक्षौहिणी सेना का संहार किया। अर्जुन तथा भीम के साथ यह काफी देर तक लड़ा। अंतमें इसका पराभव हुआ (म. वि. ५३-५४; क. ११; १२)।

अश्वत्थामा पांडवों को प्रिय था, एवं पांडव भी उसे प्रिय थे। तथापि, 'तुम पांडवों के पक्षपाती हो,' ऐसा दुर्योधन द्वारा वाक्ताडन होने पर, उसे उत्तर दे कर, इसने द्रोणपुत्र को शोभा दे ऐसा पराक्रम किया, तथा पांडवसेना का संहार किया (म. द्रो. १३५)।

द्रोण का वध धृष्टद्युम्न द्वारा होने के पश्चात्, जब कौरव सेना हाहाःकार मचाती हुई चारों ओर भागने लगी,

तब अश्वत्थामा ने कौरवेश्वर से, 'किसका वध होने से यह सेना अस्तव्यस्त हो कर दौड रही है,' ऐसे पूछा (म. द्रो. १६५)। धृष्टद्युम्न ने अधर्म से अपने पिता का वध किया, यह ज्ञात होते ही अश्वत्थामा ने, धृष्टद्युम्न को मारने की प्रतिज्ञा की (म. क. ४२)। पितृवध से संतप्त अश्वत्थामा ने सात्यकी, धृष्टद्युम्न, भीमसेन इ. रथीवीरों का पराभव कर के उन्हें भगा दिया। द्रोणाचार्य के वध से पश्चात्, नीलवीर ने कौरवसेना का विध्वंस प्रारंभ किया, तब अश्वत्थामा ने उसका सिर काट दिया (म. द्रो. ३०.२३)। पांडवसेना पर इसके द्वारा छोडे गये नारायणास्त्र ने अति संहार प्रारंभ करने पर, भगवान कृष्ण ने सब को निःशस्त्र होने के लिये कहा। तब वह अस्त्र शांत हुआ (म. द्रो. १७०-१७१)। इसने पांडवपक्ष के अंजनपर्वादि राक्षस, द्रुपद राजा के सुरथ, शत्रुंजय ये पुत्र तथा कुंतिभोज राजा के दस पुत्रों का तथा घटोत्कच का वध किया (म. द्रो. १३१.१२६-१३१)।

सब कौरवों की मृत्यु के पश्चात्, एक बार रात्रि के समय, अश्वत्थामा, कृपाचार्य तथा कृतवर्मा यह तीनों विश्रांति के लिये वृक्ष के नीचे लेटे थे। क्या किया जाये, यह अश्वत्थामा सोच रहा था। इतने में एक उल्लू ने छापा मार कर, उस वृक्ष के असंख्य कौए मार डाले। उस घटना से, एक नयी चाल इसने सोची, तथा पांडवों की सेना पर रात्रि के समय छापा मारने का निश्चय इसने किया। इस विचार से इसे परावृत्त करने का काफी उपदेश कृतवर्मा तथा कृपाचार्य किया, परंतु उनका न सुनते हुए, अश्वत्थामा अकेला ही छापा डालने के लिये निकल पड़ा (म. सौ. ५)। पांडवों के शिबिरद्वार के पास आते ही, इसने शिबिर की रक्षा करनेवाला एक भयंकर प्राणी देखा। उससे इसने युद्ध आरंभ किया। अश्वत्थामा के किसी भी शस्त्रास्त्र का प्रयोग इस प्राणी पर नही हुआ। इसके सब शस्त्र समाप्त हो गए। तब निरुपाय हो कर, अश्वत्थामा उस शूलपाणि शंकर की शरण में गया (म. सौ. ६)। शंकर की स्तुति करने के पश्चात्, इसने अग्नि में स्वयं अपनी आहुती दी। इससे शंकर प्रसन्न हो कर, उन्होंने इसे दर्शन दिये, तथा इसे दिव्य खड्ग् दे कर इसके शरीर में प्रवेश किया (म. सौ. ७)। रात्रि में ही, इसने पांडवों के हजारों सैनिक, द्रौपदी के सब पुत्र, तथा पांचाल, सृत, सोम, धृष्टद्युम्न, शिखंडी आदि अनेक वीरों का नाश किया (म. सौ. ८)।

इतना कर के, इस घटना कथन करने के लिये, यह कृतवर्मा तथा कृपाचार्य के साथ उस स्थान पर गया, जहां दुर्योधन घायल हो कर तड़प रहा था। भारतीय युद्ध के संपूर्ण सेना में, केवल पांच पांडव, श्रीकृष्ण तथा हम तीनों ही जीवित है, बाकी संपूर्ण सेना का संहार हो गया, यह सुनकर राजा दुर्योधन ने सुख से प्राण छोडे (म. सौ. ९)।

द्रौपदी के सब पुत्रों का वध अश्वत्थामा द्वारा किये जाने के कारण, उसने अत्यंत शोक किया। अश्वत्थामा के मस्तक का मणि निकाल कर युधिष्ठिर के मस्तकपर देखूंगी, तो ही मै जीवित रहूगी, ऐसी प्रतिज्ञा उसने की। उसकी पूर्ति के लिये भीमसेन ने अश्वत्थामा पर आक्रमण किया (म. सौ. ११)। व्यासादि ऋषिसमुदाय में, अश्वत्थामा धूल से भरा हुआ उसने देखा। अश्वत्थामा के अस्त्रप्रभाव के सामने भीम का कुछ नही चलेगा, ऐसा सोच कर, कृष्ण अर्जुनसमवेत भीम की सहायता के लिये निकला। पांडवों के नाश के लिये, अश्वत्थामा ने ब्रह्मशीर नामक अस्त्र छोडा। उससे पृथ्वी जलने लगी। उस अस्त्र का प्रतिकार करने के लिये, अर्जुन ने भी वही अस्त्र छोडा। इन दोनों के युद्ध में पृथ्वी का कहीं नाश न हो जाये, यह सोच कर, व्यासादि मुनियों ने इस अविचार के लिये अश्वत्थामा को डांट लगाई, तथा मस्तक का दिव्यमणि पांडवों को दे कर शरण जाने के लिये कहा। इसने मणि दिया, परंतु उत्तरा के उदर में स्थित पांडव वंश का नाश करके ही अपना अस्त्र शांत होगा, ऐसा प्रभाव दिया। तब कृष्ण ने उसे शाप दिया कि, पीप तथा रक्त से भरा दूषित शरीर ले कर, तीन हजार वर्षों तक मूकभाव से यह अरण्यों में घूमेगा। उत्तरा के गर्भ को कृष्ण ने जीवित किया (म. सौ. १३-१६; भा. १.७.१६)।

यह शंकर का अवतार हो कर चिरंजीव है, तथा गंगा के तट पर रहता है (शिव. शत. ३७)।

यह सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में एक होगा (मनु देखिये)। वही व्यास भी होगा (व्यास देखिये)।

२. अक्रूर के पुत्रों में से एक।

अश्वथ—ऋग्वेद के दानस्तुती में, पायु को दान देनेवाला ऐसा इसका उल्लेख है (ऋ. ६.४७.२२-२४)। अश्वथ, दिवोदास तथा अतिथिग्व, ये प्रस्तोक के ही अन्य नाम है, ऐसा सायणाचार्य कहते है।

अश्वपति—कश्यप तथा दनु के पुत्रों में से एक।

२. मद्र देश का राजा। इसे मालवी नामक पत्नी थी। इसकी अनेक पत्नीयों मे से वह ज्येष्ठा थी। इसने सावित्री देवी की पराशरोक्त गायत्री मंत्र से आराधना की, तथा आराधना के पश्चात् का हवन करते समय, सावित्री अग्नि में से प्रगट हुई। उसने इसे वरदान दिया कि, दोनों (ससुराल तथा मायका) कुलों का उद्धार करनेवाली कन्या तुम्हें होगी। उस वर के अनुसार इसे सावित्री नामक एक कन्या हुई। इसी सावित्री द्वारा यम से मांगे गये वर के अनुसार इसे सौ पुत्र हुए (ब्रह्मवैवर्त. २.२३; म. आर. २७७; सावित्री देखिये)।

अश्वपति कैकय—एक आत्मज्ञानी पुरुष। प्राचीनशालादि कोई विद्वान पुरुष आत्मा के संबंध में जब विचार कर रहे थे, तब उन्हें कुछ निश्चय नहीं बन रहा था। इसे आत्मज्ञ मान कर वे इसके पास आये। उसने इनका यथायोग्य सत्कार किया तथा दूसरे दिन यह उन्हें दक्षिणा देने लगा। वह उन्होनें अमान्य कर दी। तब इसे ऐसा लगा कि, इस में कुछ दोष होगा, तभी उन्होनें दक्षिणा अमान्य कर दी। तब इसने अपने राज्य की स्थिति का 'न मे स्तेनो जनपदे, न कदर्यो—न मद्यपो, नानाहिताग्निर्ना—विद्वान्, न स्वैरी, स्वैरिणी कुतः', इस प्रकार कथन किया। आये हुए लोगों नें कहा कि, हम दक्षिण के लिये नही, वैश्वानर आत्मा का ज्ञान पाने के लिये आये है। तब इसने उन्हें ज्ञान दिया (श. ब्रा. १०.६.१.२; छा. उ. ५.११; ४; मै. उ. १.४)।

२. कैकय देश का राजा। इसकी पत्नी बडी साहसी थी। वह किसी भी चीज की चिंता नही करती थी। एक ऋषि के द्वारा दिये गये वर के अनुसार इसे पक्षियो की भाषा समझती थी। एक बार, जृंभ पक्षियो के जोडे की बातें सुन कर इसे हँसी आ गई। इसकी पत्नी ने हँसने का कारण पूछा। इसने कहा कि, कारण इतना भयंकर है कि उसे बताते ही मेरी मृत्यु हो जायेगी। कारण इतना भयंकर होते हुए भी, उसकी पत्नी ने उसे बताने की जिद की। तब इसने वरदान देने वाले ऋषि को यह बात बताई। ऋषि ने इससे कहा कि, तुम अपनी पत्नी को भगा दो। इसने तत्काल वैसा ही किया।

इसे युधाजित तथा केकयी नामक दो पुत्र थे। इसमें से, युधाजित भरत का मातुल था। अश्वपति नाम, उपनाम के समान भी लगाया जाता था (वा. रा. अयो. १.२)।

अश्वपेज—वेद की शाखा प्रारंभ करनेवाला (पाणिनी देखिये)।

अश्वपेय—वेद की शाखा प्रारंभ करनेवाला (पाणिनी देखिये)।

अश्वमित्र गोभिल—वरुणमित्र गोभिल का शिष्य (वं. ब्रा. ३)।

अश्वमेध—त्र्यरुणकृत दानस्तुती में का एक राजा (ऋ. ५.२७.४–६)।

अश्वमेध भारत—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२७)।

अश्वमेधज—(सो. पुरु.) सहस्त्रानीक राजा का पुत्र। इसका पुत्र असीमकृष्ण (भा. ९.२२.३९)।

अश्वमेधदत्त—(सो. कुरु.) शतानीक का पुत्र तथा जनमेजय का पौत्र। इसकी माता वैदेही (म. आ. ९०. ९५)। यह अधिसोमकृष्ण हो सकता है।

अश्वयु—अंगिरकुल का एक गोत्रकार।

अश्वरथ—विश्वामित्र गोत्र का एक प्रवर।

अश्वल—वैदेह जनक का होता। वैदेह जनक ने बड़ा यज्ञ किया, तथा काफी दक्षिणा भी रखी। उपस्थित ऋषियों में, याज्ञवल्क्य सर्वश्रेष्ठ इसलिये जब आगे बढे, तब इसने उसे कुछ प्रश्न पूछ कर रोकने का प्रयत्न किया। परंतु याज्ञवल्क्य ने इसे चुप कर दिया (बृ. उ. ३.१.२; १०)।

अश्ववत्—(सो. कुरु.) अविक्षित् (२.) देखिये।

अश्वशंकु—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अश्वसूक्ति काण्वायन—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१४–१५) तथा सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १८.४.१०)।

अश्वसेन—तक्षक का पुत्र। अर्जुन ने जब खांडववन जलाया, तब तक्षक वहाँ नही था। इसकी माता ने इसे मुँह में पकड़ कर, कूद कर बाहर निकलने का प्रयत्न किया। तब अर्जुन ने इसकी माँ का सिर काट डाला। परंतु वेगवान् वायु के कारण यह दूर जा कर गिरा तथा बच गया (म. आ. २१८.९; २२०.४०; ६०.३५)।

अर्जुन से बदला लेने के लिये, इसने कर्ण के बाण पर आरोहण किया। यह जान कर, कृष्ण ने रथ ऐसा दबाया कि, अश्व घुटनों पर बैठ गये। अतः बाण ग्रीवा पर न लग कर मुकुट पर लगा, तथा मुकुट के टुकडे हो गये। पश्चात् अर्जुन ने इसे मार डाला (म. क. ६६)।

अश्वायु—(सो.) मत्स्य के मतानुसार यह पुरुरवा पुत्र है।

अश्वि—धर्म तथा मुहूर्ता का पुत्र।

अश्विन्—वैवस्वत मन्वन्तर का एक देव (अश्विनीकुमार देखिये)।

अश्विनि—सोम की सत्ताइस पत्नीयां में से एक। २. अक्रूर की पत्नीयां में से एक।

अश्विनीकुमार—एक ही नाम से पहचानी जाने वाली, द्युस्थानीय दो देवता। ऋग्वेद में इनके वर्णन पर लगभग पचास सूक्त हैं। ये जुडवां भाई हैं तथा कभी एक दूसरे से विलग नही होते (ऋ. ३.३९.३)। ये सरण्यू से प्रभातसमय में उत्पन्न हुए (ऋ. १०.१७.२)। परंतु इन दोनोंका जन्म अलग हुआ ऐसा भी उल्लेख है। एक निशा का, तथा दूसरा उषा का पुत्र था (नि. १२.२)। इनके उदय का समय, उषा तथा सूर्योदय के बीचमें है (ऋ. ८.५.२)। द्विवचन में आनेवाला नासत्य शब्द एकवचन में आया है (ऋ. ४.३.६)। ये तरुण हैं तथा देवों मे छोटे हैं (ऋ. ७.६७.१०; तै. सं. ७.२.७)। इनका रथ सुनहला है, तथा उसे पहिये, बैठक तथा धुरियाँ प्रत्येक तीन तीन हैं (ऋ. १.११८.१; ८.१८०.१)। सूर्या के विवाह समारोह में जब ये आये थे, तब इनके रथ का एक चक्र टूट गया (ऋ. १०.८५.१५)। इनके रथ को श्येन (ऋ. १.११८.१), गरुड (४), हंस (ऋ. ४.४५.४), तथा कुछ स्थानों पर केवल पक्षी जोडे जाने का निर्देश है (ऋ. ६.६३.६)। सोम तथा सूर्या के विवाह प्रसंग में, इनके रथ को रासभ जोडे थे (ऐ. ब्रा. ४.४–९) इनका रथ एक दिन में पृथ्वी तथा स्वर्ग आक्रमता है (ऋ. ३.५८.८)। इनका वासस्थान द्यु तथा पृथ्वी (ऋ. १.४४.५), द्यौ तथा अंतरिक्ष (ऋ. ८.८.४), वृक्ष तथा गिरिगव्हर, दिया है (ऋ. ७.७०.३)। इनका स्थान अज्ञात है (ऋ. ६.६३.१; ८.६२.४)। सूर्यकन्या सूर्या के ये पति हैं (ऋ. १.११७.१६; ४.४३.६)। ये लोगों को संकटमुक्त करते हैं (अत्रि, घोषा, भुज्यु तथा वंदन देखिये)। परंतु स्त्रियों को पुत्र देना (ऋ. १.११२.३; १०. १८४.२), वृद्धों को तरुण बनाना (ऋ. १.११९.७) आदि कथाएँ भी प्रचलित है। अथर्ववेद में, प्रेमी युगुलों को मिलाना इ. विषय में भी, इनकी प्रख्याति है (अ. वे. २.३०.२)। इसके अतिरिक्त, ये अंध, पंगु तथा रोगग्रस्तों को ठीक करनेवाले (ऋ. १०.३९.३), देवताओं के धन्वन्तरि तथा मृत्यु को टालनेवाले हैं (ऋ.८.१८.८; तै. ब्रा. ३.१.२.११)। इन्होंने विश्पला को लोहे का पैर लगाया इ. आख्यायिकाये हैं (दधीच, भुज्यु, कवि तथा विमद देखिये)। अश्वीदेवों की कल्पना गुरुशुक्र के सानिध्य से उत्पन्न हुई, यह दीक्षितजी का कथन सब को मान्य होने लायक है (भारतीय ज्यो. पा. ६५)।

हमारे वैदिक पूर्वज उत्तर ध्रुव प्रदेश में जब रहते थे, तब उनके द्वारा अवलोकन किये गये दो दृश्य—जिन्हें अंग्रेजी में Astronomical and meterological light या Aurora Borealis कहते है,—उन्हीका रूपकात्मक दर्शन अश्विनीकुमारों के प्रतीको में किया गया है, ऐसा श्री. बर्वेर का कहना है।

संज्ञा जब अश्वरूप में संचार कर रही थी, तब उसे विवस्वान से अश्विनीकुमार हुए। अपनी पत्नी अश्विनी है, यह देख विवस्वान ने अश्वरूप में उससे सहवास किया। परंतु संज्ञा ने उसे परपुरुष समझ कर, उस वीर्य को नासापुटों द्वारा त्याग दिया।

अश्विनीकुमारों को नासत्य ऐसा भी नामांतर है (म. आ. ६०.३४; भा. ६.६.४०)। इनमें से बडे का नाम नासत्य, तथा छोटे का नाम दस्र है (म. अनु. १५०)। ये देवों के वैद्य, तथा वैवस्वत मन्वन्तर के देव हैं (भा. ८.१३.४; मनु देखिये)। देवों में यह शूद्र है (म. शां. २०७.२६ कुं.)।

उपमन्यु ने अपना गुरु आपोद धौम्य की आज्ञा से, दृष्टिप्राप्त्यर्थ इनकी स्तुति की। इस स्तुति से तथा गुरु के प्रति उसकी निष्ठा से संतुष्ट हो कर, इन्होंने उसे दृष्टि दी (म. आ. ३.७५)। एक बार, जब ये च्यवनाश्रम में आये थे, तब इन्हें यज्ञ में हविर्भाग प्राप्त कर देने का मान्य कर, च्यवन ने इनसे तारुण्य प्राप्त करा लिया (म. व. १२३. भा. ९. ३. २३–२६)। माद्री ने पांडु की आज्ञा से, इनसे आवाहन कर दो पुत्र प्राप्त कर लिये। ये ही नकुल तथा सहदेव हैं (म. आ. ९०.७२; ११५.१६–१७)। ये शिशुमारचक्र के स्तन पर हैं (भा. ५.२३.७; अश्विनीसुत देखिये)।

२. भास्करसंहिता के चिकित्सासारतंत्र नामक प्रकरण का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

अश्विनीसुत—सुतपस् भारद्वाज का पुत्र। सुतपस की पत्नी जब तीर्थयात्रा कर रही थी, तब बलात्कार द्वारा सूर्य से उसे अश्विनीसुत नामक सुन्दर पुत्र हुआ। घर आ कर, यह बात उसने पति को बताई। तब उसने इन दोनों का त्याग किया। वह स्त्री गोदावरी नदी बनी। सूर्य ने इसे मंत्रतंत्र तथा ज्योतिष पढाया, अतः यह ज्योतिषी बना। परंतु आगे सुतपस् ने इन दोनों को शाप दिया की, तुम रोगी तथा यज्ञभागरहित बनोगे। आगे चल कर,

सूर्य की स्तुति करने पर यह रोगरहित तथा यज्ञ में भाग प्राप्त करनेवाला हुआ (ब्रह्मवै. १.१०-११)। अश्विनी-कुमारों से यह कथा मिलती जुलती है।

अश्व्य—वश देखिये।

अषाढ उत्तर पाराशर्य—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

अषाढ कैशिन—कुंति देश ने पांचालदेश का पराभव किया, उस संबंध में इसका उल्लेख है (क. सं. २६.९)।

अषाढ सावयस—एक ऋषि। यज्ञ करते समय, यजमान ने यज्ञ के पूर्वदिन अनशन व्रत करना चाहिये, ऐसा इसका मत है। क्यों कि, आनेवाले देवताओं को हवि देने के पहले खाना अयोग्य है (श. ब्रा. १.१.१.७)।

अषाढि सौश्रोमतेय—यज्ञकुंड में ईंटें लगाने के लिये अयोग्य पद्धति का स्वीकार किये जाने के कारण, इसकी मृत्यु हो गई (श. ब्रा. ६.२.१.३७)।

अष्टक वैश्वामित्र—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१०४)। विश्वामित्र का पुत्र (ऐ. ब्रा. ७.१७. सां. श्रौ. सू. १५.२६)। विश्वामित्र ऋषि को माधवी से उत्पन्न पुत्र (म. उ. ११७.१७-१९)। यह बड़ा विद्वान् था। एक बार, अपने प्रतर्दन, वसुमनस् तथा शिबि इन तीन बंधुओं के साथ, जब यह रथ में बैठ कर जा रहा था, तब मार्ग में नारद इसे मिले। इसने उन्हें रथ में बिठाया तथा पूछा कि, हम चारों में से सबसे पहले किसका पतन होगा, यह बताओ। तब नारद ने कहा कि, यद्यपि तुमने बहुत गोप्रदान किये हैं, तथापि उसका तुम्हें अभिमान होने के कारण, तुम्हारा ही पतन पहले होगा (म. व. १९८)।

इसका पितामह तथा माधवी का पिता ययाति आत्मश्लाघा के कारण, स्वर्ग से पतित हुआ। तब इसने उससे इसलोक तथा परलोक के संबंध में, अनेक प्रश्न पूछ कर ज्ञान प्राप्त किया, तथा अपना पुण्य दे कर उसे पुनः स्वर्ग में भेजा (म. आ. ८३-८९; मत्स्य. ३८-४१)।

यह विश्वामित्र गोत्र के प्रवर में है। इसके पुत्र का नाम लौहि।

अष्टम—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अष्टादंष्ट्र वैरूप—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१११) तथा सामद्रष्टा (पं. ब्रा. ८.९.२१)।

अष्टारथ—दिवोदास (२.) देखिये।

अष्टावक्र—कहोल का पुत्र। उद्दालक के सुजाता नामक कन्या का पुत्र, तथा श्वेतकेतु का मामा (म. व. १३८)। कहोल के द्वारा निरंतर किये जानेवाले अध्ययन का इसने गर्भवास में ही मज़ाक उड़ाया। तब, शिष्य के समक्ष तुमने मेरा अपमान किया, इसलिये आठ स्थानों पर तुम टेढे रहोगे, ऐसा शाप कहोल ने इसे दिया। कुछ दिनों के पश्चात्, दशम मास लगने के कारण सुजाता का प्रसवकाल निकट आ गया। आवश्यक धन न होने के कारण, कहोल जनक के पास धनप्राप्ति के लिये गया। परंतु वहाँ, वरुणपुत्र बंदी ने कहोल को वादविवाद में जीत कर, वहाँ के नियमानुसार पानी में डुबो दिया। उद्दालक की इच्छानुसार, यह बात गुप्त रखने का सब ने निश्चय किया। जन्म के बाद, अष्टावक्र उद्दालक को ही अपना पिता तथा श्वेतकेतु को भाई समझता था।

बारह वर्ष का होने के पश्चात्, एक दिन सहजभाव से यह उद्दालक की गोदमें बैठा था। तब, यह तुम्हारे बाप की गोदी नही है,—कह कर श्वेतकेतु ने इसका अपमान किया। तब पूछने पर सुजाता ने इसे पूरी जानकारी दी। तदनंतर, श्वेतकेतु के साथ यह जनक के यज्ञ की ओर गया। वहाँ प्रवेश के लिये बाधा आई। द्वारपाल से सयुक्तिक भाषण कर के इसने सभा में प्रवेश प्राप्त किया, तथा वहाँ बंदी को वाद का आव्हान कर के उसे पराजित किया। बंदी ने जिस जिस व्यक्ति को वाद में जीत कर पानी में डुबोया था, वे सब वरुण के घर के द्वादश वार्षिक सत्र में गये थे। वे सब वापस आ रहे है, ऐसा कह कर इसने सब को वापस लाया। कहोल तथा अष्टावक्र का मिलन हुआ। तथापि अन्त में, बंदी को जनक ने सागर में डुबो ही दिया (म. व. १३४)। उपरोक्त अष्टावक्र की कथा, लोमश ने युधिष्ठिर को श्वेतकेतु के आश्रम में बताई है। कहोल ने समंगा नदी में स्नान करने को बता कर, इसका टेढा शरीर सीधा किया (म. व. १३२)।

आगे चल कर, वदान्य ऋषि की सुप्रभा नामक कन्या से इसका विवाह तय हुआ। परंतु उसने इसे कहा कि, उत्तर दिशा में हिमालय के ऊपरी भाग में, एक वृद्ध स्त्री तपश्चर्या कर रही है। वहाँ तक जा कर आने के बाद ही यह विवाह होगा। अष्टावक्र ने यह शर्त मंजूर की। प्रवास करते करते, उस दिव्य प्रदेश से कुबेर का सत्कार स्वीकार कर

यह वृद्ध स्त्री के स्थल पर आया। वहाँ इसे ऐश्वर्य की परमावधि तथा अनेक सुन्दर स्त्रियां दिखीं। उन्हें जाने के लिये कह कर, उस वृद्ध स्त्री के पास रहने का इसने निश्चय किया। रात्रि के समय शय्या पर जब यह विश्राम कर रहा था, तब वह वृद्ध स्त्री ठंड से कँपकँपाती हुई, इसके पास आई तथा इसको आलिंगन कर प्रेमयाचना करने लगी। परंतु परस्त्री मान कर अष्टावक्र ने उसकी प्रार्थना अमान्य कर दी। उसकी हर चीज की ओर देख कर, अष्टावक्र के मन में घृणा उत्पन्न होती थी। दूसरा दिन उसी ऐश्वर्य में बिताने के बाद, रात्रि के समय पुनः वही प्रकार हुआ। उस समय, वृद्धा ने यौवनरूप धारण किया था। उसने यह भी कहा कि, वह कुमारिका है। परंतु, मेरा विवाह तय हो गया है, ऐसा बता कर इसने उसे निवृत्त किया। तब इसके निग्रही स्वभाव के प्रति संतोष प्रगट कर, वृद्धा ने कहा कि, मैं उत्तरदिग्देवता हूँ। तुम्हारे भावी श्वशुर की इच्छानुसार मैंने तुम्हारी परीक्षा ली (म. अनु. ५०-५२)। तदनंतर सुप्रभा के साथ इसका विवाह हुआ। यह बड़ा तत्वज्ञानी था। इसके नाम पर 'अष्टावक्रगीता' नामक एक ग्रंथ प्रसिद्ध है। वह गीता इसने जनक को बताई।

एक बार लोकेश्वर नामक ब्रह्मदेव के समय, व्याध के बाण से हरिहर नामक ब्राह्मण का पैर टूट गया। चक्रतीर्थ में स्नान करने पर, वह पैर उसे पुनः प्राप्त हुआ। चक्रतीर्थ की महत्ता की यह कथा, इसने बताई है (स्कन्द ३.१. २४)।

'अष्टावक्रसंहिता' नामक ग्रंथ इसके नाम पर है (C. C.)। इसने अप्सराओं को विष्णु को पतिरूप में प्राप्त करने का वरदान दिया, परंतु पानी से बाहर आने पर अप्सरायें इसका वक्रत्व देख कर हँस पड़ीं। तब इसने उन्हें शाप दिया कि, आभीर तुम्हारा हरण करेंगे (ब्रह्म. २१२. ८६)। उसी के अनुसार, कृष्णनिर्याण के पश्चात् अर्जुन जब कृष्णपत्नियों को द्वारका से ले जा रहा था, तब मार्ग में आभीरों ने उनका हरण किया।

असकृत्—भृगु तथा पुलोमा का पुत्र।

असंग—(सो. वृष्णि.) मत्स्य तथा विष्णु के मतानुसार युयुधानपुत्र।

असमंजस्—(सू. इ.) सगर को केशिनी नामक स्त्री से उत्पन्न पुत्र (भा. ९.८.१५; ह. वं. १.१५; विष्णु. ४.४.३; ब्रह्म. ८.७३; वायु. ८८.१५९; नारद ८.६८; वा. रा. बा. ३८)। यह शैब्या का पुत्र था (म. व. १०६. १०)। यह भानुमती का पुत्र था (मत्स्य. १२.९४; पद्म. सृ. ८)।

पूर्वजन्म में यह योगी था, तथापि कुसंगति से योगभ्रष्ट हो गया। पूर्वजन्म का स्मरण होने के कारण, इसे कुसंगति के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई। पुनः कुसंगति प्राप्त न हो, इस भय से इसने अपना व्यवहार असमंजसता का रखा। इस के शरीर में पिशाच्च का सञ्चार होने से यह ऐसा व्यवहार करता था (ब्रह्माण्ड. ३.५१)। ऐसे वर्तन के कारण, लोक घृणा हो कर दूर ही रहें, ऐसा इसका उद्देश्य रहता था। इस लिये यह लोगों के बच्चों को सरयू नदी में डुबो देता था। तब लोगों ने सगर के पास इसकी शिकायत की। इसलिये राजा ने इसे घर से बाहर निकाला। तब यह वन में चला गया, किन्तु जाते समय डुबोये हुए सब बच्चों को इसने योगसामर्थ्य से जीवित कर, लोगों को वापस कर दिया। तब नागरिकों को आश्चर्य लगा, तथा राजा को अत्यंत पश्चात्ताप हुआ (भा. ९.८.१४-१९; म. व. १०७; ब्रह्म. ७८.४०-४३)। दशरथ, कैकेयी तथा सिद्धार्थ नामक प्रधान के संवाद में इसका उल्लेख है (वा. रा. बा. ३६)।

इसका पुत्र अंशुमत्। असमंजस् को पंचजन नामांतर था (ह. वं. १.१५; ब्रह्म. ८.७३)।

असमाति राथप्रौष्ठ—रथप्रोष्ठ कुल का ऐक्ष्वाक राजा अपने गौपायन नामक दो उपाध्यायों से इसका झगड़ा हुआ (जै. ब्रा. ३.१६७; पं. ब्रा. १३.१२.५; ऋ. १०.५७.१; ६०. ७; सायण व्याख्या. ब्रा.)। तदनंतर, किरात तथा आकुलि इन दो असुरों ने गौपायन बंधुओं को छोड़ देने के लिये राजा को समझाया, तथा उनमें से गौपायन सुबंधु का वध करवाया। परंतु उस के अन्य बंधुओं ने एक सूक्त के जाप से उसे पुनः जीवित कर लिया (ऋ. १०.५७-६०; बृहदे. ७.९१.९६)।

असमौजस्—(सो. यदु.) वायु के मतानुसार कंबलबर्हिष का पुत्र।

असिक्नी—प्राचेतस दक्ष की पत्नी। पंचजन प्रजापति की कन्या होने के कारण, इसे पांचजनी कहा है (भा. ६.४)।

असिज—वायु के मतानुसार उतथ्य का नामान्तर।

असित—मांधाता राजा के द्वारा पराभूत एक राजा (म. शां. २९.८१)।

२. (सू. इ.) भरतराजा का पुत्र। इसके शत्रु हैहय तालजंघ तथा शशबिंदु ने इसका पराभव कर के, इसे राज्य

से बाहर भगा दिया। तब अपनी दोनों पत्नीयों के साथ, यह हिमालय पर्वत पर जा कर रहा। वहीं इसकी मृत्यु हो गई। मृत्यु के समय, इसकी दोनों पत्नीयाँ गर्भवती थीं। उन में से, एक ने सौत के गर्भ का नाश हो इस उद्देश से, अपनी सौत कालिंदी को सविष भोजन दिया। तब वह शोक करने लगी। परंतु च्यवन भार्गव मुनि के आशिर्वाद से, उसे सगर नामक सविष पुत्र हुआ (वा. रा. बा. ७०; अयो. ११०)।

असित काश्यप वा **देवल**—सूक्तद्रष्टा। इसे देवल काश्यप कहते हैं (ऋ. ९. ५–२४)। यह कश्यप का पुत्र था। इसका गय (अ. सं. १.१४.४) तथा जमदग्नि के साथ उल्लेख है (अ. सं. ६.१३७.१)। इसे असित देवल (पं. ब्रा. १४ ११.१८–१९; क.सं. २२.२), तथा असितो देवल कहते है (म. स. ४.८; शां. २२२;२६७)। इसकी स्त्री हिमालय की कन्या एकपर्णा।

यह युधिष्ठिर के यज्ञ में ऋत्विज था (भा.१०.७४.७)। जब युधिष्ठिर ने मयसभा में प्रवेश किया, तब अन्य ऋषिगणों के साथ यह उनके साथ था (म. स. ४.८)। नारद जब युधिष्ठिर को ब्रह्मदेव की सभा का वर्णन बता रहे थे, तब यह वहां व्रतादिकों का अनुष्ठान कर उपस्थित था (म. स. ११.२२५)। श्रीकृष्ण तथा बलराम से मिलने के लिये, अनेक ऋषियों के साथ यह स्यमंतक क्षेत्र में गया था (भा. १०.८४.३) यह तथा श्रुतदेव ब्राह्मण कृष्ण के साथ, बहुलाश्व से मिलने के लिये, विदेह देश को गये थे (भा. १०.८६.१८)। नारदादिकों के साथ यह पिंडारक क्षेत्र में भी गया था (भा. ११.१.११)।

मुमुक्षु व्यक्ति ब्रह्मपद की प्राप्ति कैसी करे, इस विषय में जैगीषव्य (म. शां. २२२), तथा नारद के साथ (म. शां. २६७) इसका संवाद हुआ था। आदित्यतीर्थपर यह गृहस्थाश्रम में रहता था, तथा अचल भक्तिभाव से इसने योगसंपादन किया था। एकबार जैगीषव्य ऋषि भिक्षुकवेष में इसके आश्रम में आये। तब इसने उत्तम प्रकार से उसका गौरव कर के, काफी वर्षों तक उसका पूजन किया। बहुत काल व्यतीत हो जाने पर भी जैगीषव्य एक शब्द भी नही बोलता, यह देख कर मन ही मन यह उसकी अवहेलना करने लगा। पश्चात् यह गगरी ले कर समुद्र गया। जैगीषव्य वहाँ पहले से ही आ कर बैठा हुआ था। उसे देख कर, इसे बडा ही आश्चर्य लगा। तदनंतर स्नान कर के यह आश्रम में लौट आया। आते ही जैगीषव्य पुनः आश्रम में बैठा हुआ इसे दिखा। तब जैगीषव्य के तप तथा योगाभ्यास का प्रभाव देख कर इसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उस विषय में जिज्ञासा पूर्ण करने के लिये, यह आश्रम से अंतरिक्ष में उड़ा। वहाँ उसने देखा कि, कोई सिद्धपुरुष जैगीषव्य की पूजा कर रहे है। तब यह काफी घबरासा गया। तदनंतर जैगीषव्य भिन्न भिन्न लोकों में आगे आगे जाने लगा। पूरे समय, इसने उनका पीछा किया। अन्त में, पतिव्रताओं के लोक में आ कर जैगीषव्य गुप्त हो गया। वहां एक सिद्ध के यहाँ पूछने पर पता चला कि, वह ब्रह्मपद पर गया है। इसलिये ब्रह्मलोक जाने के लिये इसने ऊँची उडान ली। किन्तु सामर्थ्य कम होने के कारण, यह नीचे गिर गया। अन्त में उस सिद्ध ने इसे वापस जाने के लिये कहा। तब जिस क्रम से यह ऊपर गया था, उसी क्रम से सब लोक उतर कर नीचे आया। जैगीषव्य को पहले ही आ कर आश्रम में बैठा हुआ इसने देखा। तब उसके योगसामर्थ्य से यह आश्चर्यचकित हो गया। नम्र हो कर, जैगीषव्य के पास मोक्षधर्म जानने की इच्छा इसने दर्शाई। उसके बाद, जैगीषव्य ने इसे योग का उपदेश दे कर संन्यासदीक्षा दी। उससे इसको परमसिद्धि तथा श्रेष्ठयोग प्राप्त हुआ (म. श. ४९; देवल देखिये)। असित देवल तथा यह ये दोनों एक ही है।

यह कश्यप तथा शांडिल्य का एक प्रवर भी है। [illegible] सत्यवती को विवाह के लिये मांगा था (म. आ. ७३)। इसका पुत्र देवल (ब्रह्माण्ड. ३.८.२९–३३)। यह कश्यपकुल का गोत्रकार (मत्स्य. १९९.१९; लिं. १.६३.५१.१), तथा मंत्रकार था (वायु. ५९.१०३; मत्स्य. १४५.१०६–१०७; ब्रह्माण्ड. २.३२.११२–११३)।

२. जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य (म. आ. ५३)।

असित देवल—असित काश्यप देखिये।

असित धान्वन—वेदकालीन राजा। असुरविद्या वेद इसका है। दस दिनों तक चलनेवाले परिप्लवाख्यान में इसका उल्लेख है (सां. श्रौ. १६.२.२०)। इसको असित धान्व भी कहा है (श. ब्रा. १३.४.३.११; आ. श्रौ. १०.७; पं. ब्रा. १४.११.१८.३९)।

असित वार्षगण—हरित काश्यप का शिष्य। इसका शिष्य जिह्वावत् बाध्योग (बृ. उ. ६.५.३ काण्व; ६.४.३३ माध्यं.)।

असितमृग—काश्यप एक पुरोहित। इसको जनमेजय ने एक यज्ञ में निमंत्रित नही किया। तथापि इसने

राजाद्वारा नियुक्त भूतवीर नामक ब्राह्मण से यज्ञ का नेतृत्व छीन कर, स्वयं ले लिया (ऐ. ब्रा. ७.२७)। इसके अनेक पुत्र थे, उसमें से एक का नाम कुसुरुबिन्दु औद्दालकि था (जै. ब्रा. १.७५; ष. ब्रा. १.४)।

असिता—एक अप्सरा। कश्यप तथा मुनि की कन्या।

असितांग—अष्टभैरवों में से एक।

असिपर्णिनी—कश्यप तथा मुनि की एक कन्या।

असिलोमन्—एक असुर। कश्यप तथा दनु का पुत्र।

असीमकृष्ण—(सो. कुरु.) अश्वमेधक राजा का पुत्र। इसका पुत्र निमिचक्र (अधिसामकृष्ण देखिये)।

असुरा—एक अप्सरा। कश्यप तथा प्राधा की कन्या।

असुरायण—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५६ कुं.)।

२. व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से एक। वायु तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार, यह कौथुम पाराशर्य का शिष्य है (व्यास देखिये)।

असूर्तरजस्—मूर्तरय राजा का नामांतर।

असोम—मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र।

अस्ति—जरासंध की दो कन्याओं में से ज्येष्ठ। इसकी कनिष्ठ भगिनी प्राप्ति। यह दोनों कंस की पत्नीयाँ थीं। कृष्ण के द्वारा कंस का वध होने पर, यह दोनों पितृगृह में आ कर रहने लगीं (भा. १०.५०; म. स. १३.३०)।

अस्तिक—हरिमेध देखिये।

अस्वहार्य—अंगिरस गोत्रीय मंत्रकार।

अहंयाति—(सो. पूरु.) शर्याति तथा वरांगी का पुत्र। इसकी पत्नी कृतवीर्यपुत्री भानुमती। इसका पुत्र सार्वभौम (म. आ. ९०.१४–१५)। भागवत तथा विष्णु के मतानुसार, यह संयातिपुत्र है। मत्स्य में अहंवर्चस् पाठभेद है। अहंपाति पाठ भी मिलता है।

अहंवर्चस्—अहंयाति देखिये।

अहनू—अष्टवसुओं में से एक।

अहर—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अहल्या—इसका निर्देश शतपथ ब्राह्मण मे अहल्या मैत्रेयी नाम से मिलता है (श. ब्रा. ३.३.४.१८; जै. ब्रा. २.७९; ष. ब्रा. १.१)।

जन्म—इसका पिता मुद्गल (भा. ९.२१) वध्र्यश्व को मेनका से यह कन्या हुई (ह. वं. १.३२)। यह ब्रह्ममानसपुत्री है। ब्रह्मदेव ने इसे अत्यंत सुन्दर निर्माण किया। हल का अर्थ है विरुपता, तथा हल्य का अर्थ है विरुपता के कारण प्राप्त निंद्यत्व। इसे हल्य न होने के कारण, ब्रह्मदेव ने इसका नाम अहल्या रखा (वा. रा. उ. ३०.२५)। आगे चल कर, ब्रह्मदेव ने इसे शरद्वत गौतम के पास अमानत के रूप में रखा। उपवर होने पर उसने इसे ब्रह्मदेव के पास वापस दे दिया।

विवाह—शरद्वत गौतम मुनि का जितेन्द्रियत्व तथा तपःसिद्धि देख कर, ब्रह्मदेव ने यह कन्या उसे भार्या कह कर दी (वा. रा. उ. ३०.२९; विष्णु. ४.१९; मत्स्य. ५०)। परंतु इन्द्र, वरुण, अग्नि इ. देव, दानव, तथा अन्य राक्षसों के मन में भी इसके प्रति अभिलाषा थी। तब प्रत्येक के सामर्थ्य की परीक्षा देखी जावे, इस हेतु से ब्रह्मदेव ने निश्चय किया कि, जो व्यक्ति सर्व प्रथम पृथ्वी प्रदक्षिणा करेगा, उसे ही यह कन्या दी जावेगी। अहल्या के अभिलाषी प्रदक्षिणा करने लगे। परंतु अर्धप्रसूत धेनु पृथ्वी ही होने के कारण, गौतम ने उसकी प्रदक्षिणा की, तथा एक लिंग की प्रदक्षिणा कर के, वह ब्रह्मदेव के पास गया। गौतम प्रथम आया ऐसा जान कर, ब्रह्मदेव ने उसे अपनी कन्या दी। देवता, एक के पश्चात एक, आने लगे। परंतु उन्हें मालूम हुआ कि, अहल्या तथा गौतम का विवाह हो गया। यह वार्ता सुन कर, इन्द्र को बहुत दुःख हुआ, क्यों कि, इन्द्र इससे प्रेम करता था। विवाहोपरान्त गौतम तथा अहल्या ब्रह्मगिरी पर रहने के लिये गये।

अहता—कुछ दिन बाद, गौतम को आश्रम से बाहर गया देख कर, इन्द्र गौतम के रूप में इसका उपभोग करने के लिये आया। गणेशपुराण में दिया है कि, नारद द्वारा अहल्या के रूप की स्तुति की जाते ही, कामुक बन कर इन्द्र आया।

तब पतिव्रताधर्मानुसार उसका तथा इसका समागम हुआ (ब्रह्म. ८७; १२२; म. उ. १२; वा. रा. उ. ३०. ३२; स्कन्द. १.२.५२)। इंद्र काफी दिनों तक लगातार इसके यहाँ आता था, ऐसा उल्लेख ब्रह्मपुराण में है। परंतु यह इन्द्र है ऐसा जान कर भी, इसने उससे समागम किया। उसके शरीर के दिव्य सुगंध से अहल्या ने यह जान लिया कि, यह मेरा पति नही है। (वा. रा. बा. ४८.१९)। इतने में गौतम ऋषि आया। तब इन्द्र तथा अहल्या को बहुत डर लगा। दो घटिकाओं के बाद यह सामने आई, तथा पति का पदस्पर्श कर के इसने संपूर्ण वार्ता बताई (गणेश. १.३०)। गौतम रोज नदी पर स्नान के लिये जाने पर भी, दूसरा गौतम विद्यार्थियों को

दिखता था। एक बार जब इन्द्र भीतर था, तब गौतम के आते ही, विद्यार्थियों ने उसे भीतर का गौतम दिखाया। तब क्रोधित हो कर गौतम ने इन्द्र तथा अहल्या को शाप दिया।

शाप-उःशाप—गौतम इन्द्र को शाप देनेवाला ही था कि, वह मार्जार के रूप में जल्दी जल्दी भागने लगा। गौतम को शंका आई, तथा डॉट कर 'कौन है? ऐसा उसने पूछा। तब इन्द्र मूर्तिमन्त उसके सामने खड़ा हो गया (ब्रह्म. ८७; पद्म. सृ. ५०; गणेश. १.३१)। तब गौतम ने उसे शाप दिया कि, तुम शत्रुओं के द्वारा पराभूत होगे। मनुष्यलोक में जारकर्म प्रारंभ करनेवालों के तुम उत्पादक हो, अतएव प्रत्येक जारकर्म का आधा पाप तुम्हारे माथे लगेगा। देवराजों को अक्षयस्थान कभी प्राप्त न होगा (वा. रा. उ. ३०; ब्रह्म. १२२)। तुम्हारे शरीर को सौ छेद हो जावेंगे (म. अनु. ४१; १५३; ब्रह्म. ८७; पद्म. सृ. ५०)। तुम वृषणरहित हो जाओगे (वा. रा. बा. ४८; लिंग. १.२९)।

तदनंतर अहल्या की ओर मुड़कर गौतम ने कहा, किसी को भी नही दिखोगी ऐसे रूप में तुम्हारा विध्वंस हो जावेगा, तथा तुम्हारे रूप का सर्वत्र विभाजन हो जावेगा। राम जब यहाँ आवेंगे तब तुम्हारा उद्धार होगा (वा. रा. बा. ४८; उ. ३०)। तुम शिला बन जाओगी (आ. रा. सार. १.३; स्कन्द. १.२.५२; गणेश. १.३१)। जनस्थान में तुम एक शुष्क नदी बनोगी (आ. रा. सार. १.३; ब्रह्म. ८७)। तुम्हारे देह पर केवल अस्थिचर्म रहेगा। सजीव प्राणियों के समान तुम्हारे शरीर पर मांस तथा नख उत्पन्न नही होंगे, तथा तुम्हारे इस रूप के कारण स्त्रियों के मन में पापकर्म के प्रति दहशत उत्पन्न हो जावेगी (पद्म. सृ. ५४)। इसपर अहल्या ने प्रार्थना की कि, इन्द्र आपका रूप धारण कर के आया था, इसलिये मैं पहचान न सकी। शरद्वत गौतम ने ध्यानस्थ हो कर यह जान लिया कि, यह अपराधी नही है, तथा उःशाप दिया कि, राम जब यहाँ आवेगा तब अपने पादस्पर्श से तुम्हारा उद्धार करेगा (वा. रा. बा. ४८.४९; उ. ३०; गणेश १.३१)। इसकी मुक्ति के लिये गौतम ने कोटितीर्थ पर तप किया। तब यह मुक्त हुई। उससे अहल्यासरोवर निर्माण हुआ। उस आनंद के कारण ही, गौतम ने गौतमेश्वर लिंग की स्थापना की (स्कन्द. १.२.५२)। गोदावरी के साथ तुम्हारा संगम होने पर तुम पूर्ववत् बनोगी, ऐसा भी इसे उःशाप था (ब्रह्म. ८७)। शाप से मुक्त होने के पश्चात्, यह पुनः पति के सहवास में गई।

शाप के पूर्व इसे शतानन्द नामक पुत्र था। वह निमिवंशीय राजाओं का उपाध्याय था (वा. रा. बा. ५१, आ. रा. सार. १०३)। इसे दिवोदास नामक भाई था (भा. ९.२१; ह. वं. १.३२)। वह उत्तर पंचाल का राजा था। 'अहल्यायै जार' ऐसा इन्द्र का गौरवपूर्ण वर्णन वेदों में है। इससे प्रतीत होता है कि, इंद्र-अहल्या की कथा रूपकात्मक होनी चाहिये।

समर्थन—इसने उत्तंक नामक अपने पति के शिष्य को सौदास की पत्नी के कुंडल गुरुदक्षिणा में लाने के लिये कहा था (म. आश्व. ५५)। इन्द्र के द्वारा इसके साथ किया गया व्यभिचार देवों के कार्य के लिये ही किया गया। क्योंकि, गौतम का तप अधिक हो गया था, अतएव उसका क्षय आवश्यक था (वा. रा. बा. ४९)। इसे गौतमी भी कहा गया है (ब्रह्म. ८७)। महर्षि गौतम के वन में अहल्याद्वारतीर्थ प्रसिद्ध है (म. व. ८२.९३)।

नया दृष्टिकोन—अहल्या तथा इन्द्र के संबंध की कथा रूपकात्मक है, ऐसा ब्राह्मणग्रंथ जैमिनीसूत्रों से प्रतीत होता है।

(१) अहल्या रात्रि है, गौतम चन्द्र है तथा इन्द्र को सूर्य मान कर, यह रूपककथा निर्मित की गई है। उसका स्पष्टीकरण करते हुए बताया जाता है कि, इन्द्ररूपी सूर्य ने अहल्या रूपी रात्रि का घर्षण किया। यह एक निसर्गरहस्य है (श. ब्रा. ३.३.४.१८)।

डॉ. रवीन्द्रनाथ टागोरजी ने अहल्या का रामद्वारा उद्धार का जो विवरण किया है वह सुन्दर है।

(२) हल का अर्थ है नांगर, हल्या का अर्थ जोती हुई जमीन, तथा अहल्या का अर्थ है बंजर जमीन। अगस्त्य ऋषि ने दक्षिण में प्रथम वास किया, अर्थात् दक्षिण की अहल्या जमीन हल्या कर के उसका उद्धार किया, तथा उस अहल्या भुमि की शाप से मुक्तता की। इस प्रकार राम ने अहल्या का उद्धार किया, इसका अर्थ है, उसने दक्षिण की बंजर भुमि उर्वरा बनाई।

२. इन्द्रद्युम्नपत्नी। यह इन्दु ब्राह्मण से रत हुई। इसके स्थूल शरीर को सजा दे कर कुछ लाभ नही हुआ, क्यों कि, यह मनोमय शरीर से तादात्म्य हुई थी (यो. वा. ३.८९.८१)।

अहि—इन्द्र का शत्रु (ऋ. १.५१.४)। यह जब निद्रित था, तब इन्द्र ने इसे मारकर सप्तसिंधू को मुक्त किया (ऋ. २.१२.३)।

अहित—मणिवर को देवजनी से उत्पन्न पुत्र। इसे गुह्यक ऐसा साधारण नाम है।

अहिरावण-महिरावण—पाताल में, अहिरावण तथा महिरावण नामक रावण के दो मित्र थे। इन्हें रावण ने राम का नाश करने के लिये कहा। परंतु सुवेल पर्वत पर राम की संपूर्ण सेना अभेद्य दीवाल के भीतर होने के कारण, इन्होंने आकाश से शिबिर में छलांग लगाई। पश्चात्, शिला पर सुप्त रामलक्ष्मण को यह शिलासहित पाताल में ले गये। परंतु हनुमान इनका पीछा करते निकुंभिला नगर आया। कपोत कपोती के संवाद से हनुमान को पता चला कि, दैत्य रामलक्ष्मण को देवी के सामने बलि देने के लिये रसातल में ले गये हैं। उधर जाते समय, हनुमान को द्वार पर मकरध्वज मिला। प्रश्नोत्तर में, दोनों का पितापुत्र का नाता निकला (मकरध्वज देखिये)। मकरध्वज ने हनुमान को सुझाया कि, कामाक्षी के मंदिर में जा कर बैठा जावे तथा कार्य किया जावे। सुबह वाद्यों की ध्वनि में राक्षस रामलक्ष्मण को वहाँ ले कर आये। तब देवी का स्वर निकाल कर हनुमान ने उन्हें कहा कि, पूजा झरोखे से की जावे। उसके अनुसार, राक्षसों ने देवी को बहुत से उपचार अर्पण किये, तथा रामलक्ष्मण को भी झरोखे से भीतर छोड़ा। तदनंतर तीनों ने मिल कर, राक्षसों का संहार शुरू किया। परंतु अहिरावण-महिरावण के लहू से, पुनः वैसे ही राक्षस निर्माण होने लगे। तब हनुमान ने अहिरावण की पत्नी को इसे मारने का उपाय पूछा। वह बोली कि, मैं नागकन्या हूँ। इस दुष्ट ने बलात्कार से मुझे यहाँ लाया। महिरावण भी मुझ पर लुब्ध है। परंतु मैं उसके अनुकूल नहीं होती। इतना कह कर उसने कहा कि, यदि राम मुझसे विवाह करेगा, तो मैं उपाय बताती हूँ। हनुमान ने कहा कि, राम के भार से अगर तुम्हारा मंचक नहीं टूटा, तो राम तुम से विवाह कर लेंगे। तब उसने बताया कि, पहले जब कुछ लड़के भ्रमरों को काँटे चुभा रहे थे, तब उन्हें इन दोनों भाईयों ने मुक्त किया। इस लिये प्रत्युपकार करने के हेतु, वे भ्रमर अमृतबिंदुओंसे इन दोनों को जीवित करते रहते हैं। इस लिये तुम भ्रमरों को मार डालो। अभी वे सब राक्षसों के निद्रास्थान में हैं। यह मालूम होते ही, हनुमान ने असंख्य भ्रमर मार डाले। एक भ्रमर उसे शरण आया। उसे प्राणदान दे कर, हनुमान ने उसे अहिरावण की पत्नि का मंचक भीतर से खोखला करने के लिये कहा, तथा स्वयं राम के पास गया। इतने में राम के बाण से सब राक्षसों की मृत्यु हो गई। तदनंतर हनुमान के आग्रह पर, राम नागकन्या के मंदिर में गया, तथा पर्यंक को हाथ लगाते ही वह टूट जाने के कारण, उसे तीसरे जन्म में पत्नी बनाने का आश्वासन दे कर दोनों सुवेल पर लौट आये। रामवचन पर विश्वास रख कर, अहिरावण की पत्नी ने अग्नी में देहत्याग किया (आ. रा. सार. ११)।

अहिर्बुध्न्य—एक अन्तरिक्षस्थ देवता (नि. ५.४) यह एक वृत्र का स्वरूप है। ऋग्वेद में इसके लिये स्वतंत्र सूक्त न हो कर, कुछ ऋचाओं में इसका स्तवन है। यह एक गार्हपत्य अग्नी का नाम है (वा. सं. ५. ३३; ऐ. ब्रा. ३. ३६; तै. ब्रा. ११.१०.३)।

यह रुद्र का नाम है (भा. ६.६.१८)।

२. यह दुष्ट राक्षसों के संहारार्थ सुदर्शनचक्र की आराधना कर रहा था। राक्षस इसके संहारार्थ आते ही, चक्र प्रगट हो कर राक्षसों का नाश हुआ (स्कन्द. ३.१. २१)।

३. कश्यप तथा सुरभि का पुत्र (शिव. शत. १८)।

अहिशुव—इन्द्र का शत्रु (ऋ. १२.२)।

अहीन—(सो. क्षत्र.) सहदेव का पुत्र। अदीन पाठभेद है।

२. (सो. कुरु. भविष्य.)। विष्णु के मतानुसार उदयन पुत्र।

अहीनगु—अनीह का नामांतर।

अहीनज—(सू. इ.) भविष्य के मतानुसार द्वारका का पुत्र। इसने १०,००० वर्षों तक राज्य किया।

अहीनर—अनी राजा का नामांतर।

२. (सो.) भविष्य के मतानुसार उद्यान का पुत्र।

अहीना आश्वत्थ्य—इसने सावित्राग्नी के ज्ञान से अमरत्व संपादन किया (तै. ब्रा. ३.१०; ९.१०)।

आ

आकथ—मंकण का पुत्र। यह बड़ा ही शिवभक्त था। इसके घर में आग लग कर आधा शिवलिंग जल गया। अतः यह अपना आधा शरीर जला रहा था, तब शंकर प्रसन्न हुए (पद्म. पा. ११७)।

आकाशज विप्र—ब्रह्मदेव का नाम। इसे मारा नहीं जा सकता, ऐसा मृत्यु ने यम को बताया। पार्थिव देह तथा कर्म न होने के कारण इसे मृत्यु नही है। यह केवल अज तथा विज्ञानरूप है (यो. वा. ३.२; ब्रह्मन् देखिये)।

आकुलि—एक असुर (असमाति राथप्रोष्ठ देखिये)।

आकूति—रुचि ऋषि की पत्नी। यह स्वायंभुव मनु तथा शतरूपा की तीन कन्याओं में से प्रथम है। इसे यज्ञ तथा दक्षिणा नामक कन्यारूप मिथुन हुआ (मनु देखिये)।

२. (स्वा. प्रिय) पृथुषेण राजा की पत्नी।

३. (स्वा. उत्तान.) व्युष्टपुत्र सर्वतेजस् की पत्नी, तथा चक्षुर्मनु की माता (भा. ४.१३.१५)।

आकृति—एक गारुड–विद्या का आचार्य। जब युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ किया, तब सहदेव दक्षिण दिशा जीतने गया। तब इसे जीत कर उसने इससे करभार लिया था (म. स. २८.३९)।

आक्ताक्ष्य—अग्निपूजा के बारे में विचार प्रगट करनेवाला एक गृहस्थ (श. ब्रा. ६.१.२.२४)।

आक्षील—भरद्वाजांगिरस वंशनालिका का एक द्विगोत्री ऋषि।

आगस्त्य—एक आचार्य (ऋ. प्रा.१–२; सां. आ. ७.२)। यह अगस्त्य नामक महर्षि का पुत्र, है। संहिता शब्द का अर्थ मांडूकेय तथा माक्षव्य के मतानुसार क्रमशः वायु संहिता तथा आकाश संहिता ऐसा है। आगस्त्य का कहना है कि, दोनों सिद्धान्त तुल्यबल हैं (ऐ. आ. ३. १.१)। दृढच्युत देखिये।

आग्ना प्रासेव्य—कश्यप गोत्र का एक ऋषिगण।

आग्निवेशि शत्रि—यह दानस्तुति में दान देनेवाले राजा का नाम है (ऋ. ५.३४.९)

आग्निवेश्य—शांडिल्य, आनभिम्लात तथा गार्ग्य का शिष्य। इसका शिष्य गौतम (बृ.२.६.२; ४.६.२.)। विसर्गसंधि के विषय में मतप्रतिपादन करनेवाला आचार्य (तै. प्रा. ९.४)।

आग्निवेश्यायन—क्षत्रिय नरिष्यन्त कुल मे पैदा हुवा एक ब्राह्मणकुल (भा ९.२.२१–२२)।

स्वरित कहाँ होता है, यह विशेषरूप से बतानेवाला एक आचार्य (तै. प्रा. १४.४२.२)। अग्निवेश्य (२.) देखिये।

आग्नीध्र—प्रियव्रत तथा बर्हिष्मती के दस पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र। विष्णु पुराण में अग्नीध्र है। कर्दम की कन्या नामक कन्या का पुत्र। इसे उर्जस्वती नामक बहन थी। दो बहनें और भी थीं, जिनके नाम सम्राज् तथा कुक्षि थे। यह जंबुद्वीप का अधिपति था। पुत्रप्राप्ति की इच्छा से, यह मंदराचल के पहाड़ में जब ब्रह्मदेव की आराधना कर रहा था, तब ब्रह्मदेव ने देवसभा में गायन करनेवाली पूर्वचित्ति नामक अप्सरा इसके पास भेजी। उसने शृंगारचेष्टा इत्यादि से आग्नीध्र-का मन कामवश किया। उसके सौंदर्य, बुद्धिमत्ता इ. अलौकिक गुणों पर लुब्ध हो कर, इसने दस कोटि वर्षो तक उसका विषयोपभोग किया। उससे आग्नीध्र को नौ पुत्र हुए। उनके नामः—१. नाभि, २. किंपुरुष ३. हरिवर्ष, ४. इलावृत्त, ५. रम्यक (रम्य), ६. हिरण्मय (हिरण्वान), ७. कुरू, ८. भद्राश्व, तथा ९. केतुमाल। कुछ काल के अनन्तर, वह अप्सरा ब्रह्मलोक चली गई। उसके विरह से यह राजा अत्यंत उदास हो गया। तदनंतर जंबुद्वीप के नौ विभाग कर के, प्रत्येक विभाग को अपने पुत्रों का नाम दे कर, वे विभाग उन्हें सौंप कर, यह शालिग्राम नामक अरण्य में तप करने चला गया। कौन सा विभाग किसे दिया इसका वर्णन विष्णु पुराण में हैं, वह इस प्रकार हैः–१. नाभी को हिमवर्ष (हिन्दुस्थान), २. किंपुरुष को हेमकूटवर्ष, ३. हरिवर्ष को नैषधवर्ष, ४. इलावृत्त को मेरुपर्वतयुक्त इलावृत्तवर्ष, ५. रम्यक को नील पर्वतयुक्त रम्यकवर्ष, ६. हिरण्वान को श्वेतदीपवर्ष, ७. कुरू को शृंगवद्वर्ष, ८. भद्राश्व को मेरू के पूर्व में स्थित भद्राश्ववर्ष, तथा ९. केतुमाल को गंधमानवर्ष, (विष्णु. २.१; भा. ५.१.३३; १. २२)।

आग्नीध्रक—रुद्रसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

आग्रायण—इन्द्र शब्द की व्युपत्ती के विषय में, मत दर्शानेविला आचार्य (नि. १०.९)।

आंगरिष्ट---एक राजर्षि। इसने कामंद ऋषी को शुद्ध धर्मादिकों के संबंध में प्रश्न पूछा था। जिससे चित्तशुद्धि होती है वह धर्म, पुरुषार्थ साधन होता है वह अर्थ, तथा देहनिर्वाह के लिये इच्छा होती है वह काम, ऐसा उत्तर कामंद ऋषी ने इसे दिया (म. शां. १२३)।

आंगि—हविर्धान आंगि देखिये।

आंगिरस—अंगिरसवंश के लोगों को यह शब्द कुलनाम के तौर पर लगाया जाता है। वंशावलि भी प्राप्त है (छां. उ. १.२.१०; ऐ. ब्रा. २०.२.१; तै. सं. ७.१.४. १)। (अंगिरस देखिये)।

अथर्ववेद का प्रवर्तक अंगिरस है। इसके कुल के ऋषियों ने सत्र किया। यज्ञानुष्ठान के लिये दूध निकालने के लिये, इन्होंने एक गाय रखी थी। उस गाय का रंग सफेद था। अवर्षण के कारण, उस गाय को हरी घास मिलना बंद हो गया। यज्ञ में प्राप्त कूटे हुए सोम के अवशिष्टांश को खा कर, वह दिन बिता रही थी। भूख के कारण, उसकी होने वाली दुर्दशा आंगिरस देख नहीं सकता था। गाय के लिये काफी चारा यदि हम निर्माण नहीं कर सकते, तो सत्र प्रारंभ कर के क्या लाभ? इस प्रकार के विचार उन्हें कष्ट देने लगे। आगे चल कर इन्होंने, कारीरि इष्टि की। उससे भरपेट चारा प्राप्त होने लगा। परंतु पितरों ने नये चारे में विष उत्पन्न करने के कारण, गाय खराब होने लगी। परंतु पितरों को हविर्भाग देने पर, अंगिरसों को उत्कृष्ट चारा मिलने लगा तथा वह खूब दूध देने लगी। (तै. ब्रा. २.१.१)। इन्होंने ही द्विरात्र याग शुरू किया (तै. सं. ७.१.४)। अंगिरस के द्वारा रथीतर की पत्नी में उत्पन्न ब्रह्मक्षत्र संतति को आंगिरस कहते थे (भा. ९.६.३)।

(अभीवर्त, अभहीयु, अयास्य, आजीगर्ति, उचथ्य, उत्तान, उरु, उर्ध्वसध्मन, कुत्स, कृतयशस्, कृष्ण, गृत्समद घोर, च्यवन, तिरश्चि, दिव्य, धरुण, ध्रुव, नृमेध, पवित्र, पुरुमिहळ, पुरुमेध, पुरुहन्मन, पूतदक्ष, प्रचेतस, प्रभूवसु प्रियमेध, बृहन्मत्ति, बृहस्पति, बैद भिक्षु, मूर्धन्वन्, रहूगण, वसुरोचिष, बिंदु, विरूप, विहव्य, वीतहव्य, शक्ति व्यश्व, शिशु, शौनहोत्र, श्रुतकक्ष, संवनन, संवर्त, सहयुग, सव्य, सुकक्ष, सुदिति, सुधन्वन्, हरिमंत, हरिवर्ण हविष्मत्, हिरण्यदंत तथा हिरण्यस्तूप देखिये)।

२. भौत्य मनु का पुत्र।

३. भीष्म के यहाँ आया हुआ ऋषि (भा. १.९. ८)।

४. शुनक का नामांतर। इसने बभ्रु तथा सैन्धवायन को अथर्ववेद सिखाया (भा. १२.७.३)।

आंगिरसी—वसु की पत्नी (भा. ६.६.१५)।

२. (शश्वती देखिये)।

आंगी—अपराचीन पुत्र अरिह की पत्नी। इसका पुत्र महाभौम (म. आ. ९०-८९९*)।

आंगुलय या **आंगुलीय**—वायु तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य। (व्यास देखिये)।

आंध्रिक—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७)।

आचार—कश्यप तथा अरिष्टा का पुत्र।

आजकेशिन—इसका प्रतिकार बक ने किया (जै. उ. ब्रा. १.९.३)।

आजगर—अयाचित वृत्ति से रहने वाला एक ब्राह्मण। प्रल्हाद से इसका संवाद हुआ था (म. शां. १७२)।

आजद्विष—बभ्र का पैतृक नाम।

आजय—कशाब्ब के लिये पाठभेद।

आजानशत्रव—भद्रसेन देखिये।

आर्जिहायन—काश्यप गोत्री ऋषिगण।

आजीगर्ति—शुनःशेप का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७. १७)। आंगिरस नाम से इसका उल्लेख किया गया है। (क. सं. १६.११.२)

आज्य—सावर्णि मनु का पुत्र।

आज्यप—एक पितृगण। ब्रह्ममानसपुत्र पुलह के वंशज। इन्हें यज्ञ में आज्य (बकरी के दूध से बना घी) का पान करने के कारण, यह नाम पड़ा। इन्हें कहीं कहीं सुस्वध भी कहा गया है (मत्स्य. १५)। कर्दम प्रजापती के लोकों में यह रहते हैं। इन्हें विरजा नामक एक कन्या है। वही नहुष की पत्नी है (पद्म. सृ. ९)। वैश्य इन्हें पूज्य मानते हैं।

आंजन—एक दास। वह नेत्रों में अंजन लगाता था। यह त्रिककुद पर्वत पर से आया था। त्रिककुद् को यामुन बताया है। यह हिमालय का भाग था (अ. सं. ४.९.१-१०)।

आटविन्—ब्रह्मांड तथा वायु के मत में व्यास की यजुःशिष्य परंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)। आटविन् तथा आयटिन् एक ही है।

आटिकी— उपस्ति चाक्रायण की पत्नी (छां. उ. १.१०.१)। इस शब्द का अर्थ, स्तनादि स्त्री-चिह्न जिसके अव्यक्त है ऐसी स्त्री, ऐसा शंकराचार्य करते है।

आद्‌णार—पर का पैतृक नाम।

आडि—अंधकासुर का पुत्र तथा बक का भाई। अपने पिता का वध करनेवाले शंकर से बदला लेने के हेतु, ब्रह्मदेव को प्रसन्न कर, इसने अमरत्व माँगा। रूपांतरित अवस्था में ही मृत्यु होगी अन्यथा नही, ऐसा वर इसने प्राप्त किया।

वरप्राप्ति के पश्चात् तत्काल, यह कैलास पहुँचा। वहाँ के वीरभद्र वा वीरक द्वारपाल से रुकावट न हो इस हेतु से, इसने सर्परूप धारण कर, भीतर प्रवेश किया। तदनंतर सर्परूप छोड, पार्वती का रूप धारण कर, यह शंकर के सामने गया। शंकर ने उसका कपट जान कर तथा रूपांतरित अवस्था की संधि साध कर, तत्काल इसका वध किया (मत्स्य. १५६; पद्म. सृ. ४१.४५-७२; वीरभद्र देखिये)।

हरिश्चंद्र का, विश्वामित्र द्वारा दिया गया दुःख देख कर, वसिष्ठ ने विश्वामित्र को, पक्षी योनि में परिणत होने का शाप दिया। इसके उत्तर में विश्वामित्र ने भी वसिष्ठ को यही शाप दिया। पक्षी योनि में भी दोनों युद्ध करते रहे। अन्त में ब्रह्माजी को इनका झगडा मिटाना पडा। ये ही दो पक्षी आडि तथा बक नाम से ख्यात है।

झगडा मिटाते समय ब्रह्माजी ने वसिष्ठ से कथन किया कि, यद्यपि, विश्वामित्र ने हरिश्चंद्र को घोर क्लेश दिये, तथापि उसके अन्त में स्वर्ग का मार्ग मुक्त कर दिया (मार्क. ९)।

आडि-बक युद्ध देवासुरों के बारह युद्ध में छठवाँ है (मत्स्य. ४७.४१-५४)। यहाँ आडि तथा बक ये व्यक्ति के नाम न हो कर समुदाय के नाम दिखते है।

शशादपुत्र ककुत्स्थ का स्मरण इंद्र ने आडि-बक-युद्ध में किया था (वायु. ८८.२५)।

आडीर— जनापीड देखिये।

आतिथिग्व— इन्द्रोत का पैतृक नाम (दिवोदास देखिये)।

आत्मदेव—एक ब्राह्मण। यह तुंगभद्रा के किनारे कोहळ ग्राम में रहता था। इसकी स्त्री गृहकार्य में निपुण परंतु झगडालू थी। निपुत्रिक होने के कारण, यह विरक्त होकर भ्रमण करने लगा। उस समय एक वापिका तट पर उसकी एक सिद्ध से भेंट हुई। सिद्ध ने पुत्र प्राप्ति के हेतु एक फल दिया, जिसे स्त्री को खिलाने को कहा। उसने अपनी स्त्री को फल दिया। स्त्री ने अपनी बहन के कहने पर वह फल गाय को खिला दिया तथा पति से झूठा ही कह दिया कि, उसने फल खा लिया है। बहन ने उसे बताया कि, तू गर्भवती होने का ढोंग कर। मुझे जो पुत्र होगा वह मैं तुझे दे दूंगी। क्योंकि वह स्वयं गर्भवती थी। पुत्र होने पर आत्मदेव ने उसका नाम धुंधुकारी रखा। गाय को भी यथा समय पुत्र हुआ। कान, गाय की तरह के होने के कारण, उसका नाम गोकर्ण रखा गया। धुंधुकारी दुर्वृत्त होने के कारण यह तंग आ गया। तब गोकर्ण ने, उसे संसार से निवृत्त होने को कहा। इसने ईश्वरभक्ति के द्वारा परमार्थ तथा मोक्ष प्राप्त किया (पद्म. ३.१९६)।

आत्मन्—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ३.२६.७)।

२. अंगिरादेवों में से एक। अंगिरा तथा सुरूपा का पुत्र (मत्स्य. १९६)।

आत्मवत्—भृगुगोत्र का मंत्रकार। आत्मावत् भी पाठांतर है।

आत्रेय—मांटी का शिष्य (बृ. उ. २.६.३) तथा अंगराज का पुरोहित (ऐ. ब्रा. ८.२२)। संधि तथा उच्चार के लिये इसके मत का गौरव के साथ उल्लेख है (तै. प्रा. ५.३१; १७.८)। यही तैत्तिरीय संहिता का पदपाठकार रहा होगा। तैत्तिरीयों के आचार्यतर्पण में इसका समावेश इसी कारण हुआ है (स. गृ. २०. ८. २०)। जैमिनिसूत्रों में भी (५.२. १८; ६.१.२६) एक आत्रेय का उल्लेख है। आत्रेयी शिक्षा तथा संहिता ये ग्रंथ भी आत्रेय के हैं (C. C.)। गर्भाधान संस्कार के मंत्र कहने के विषय में इसके मत का निर्देश किया गया है (स. गृ. १९.७.२५)। वैद्यक में भी धन्वंतरि के पूर्व, एक आत्रेय हो गया है। धन्वंतरि ने आत्रेय प्रणीत मृतसंजीवनीकर रसायन (काढ़ा) दिये हैं (अग्नि. २८५; गरुड १.१.१४६)। ये सब एक हैं या भिन्न, यह कहना कठिन है।

(अर्चनानस्, अवस्यु, उरुचक्रि, एवयामरुत्, कुमार, कृष्ण, गय, गविष्ठिर, गातु, गृत्समद, गोपवन, दक्ष कात्यायनि, द्युम्न, द्वित, पुरु, पौर, प्रतिक्षत्र, प्रतिप्रभ, प्रतिभानु, प्रतिरथ, बभ्रु, बाहुवृक्ति, बुद्धि, मुक्तवाह, यजत, रातहव्य, वव्रि, वसुश्रुति, विश्वसामन्, शंग, शाट्यायनि, श्यावाश्व, श्रुतिवित्, सत्यश्रवस्, सदापृण, सप्तवध्रि, सस तथा सुतंभर देखिये)।

२. एक राजा। इसे एकत, द्वित तथा त्रित पुत्र थे (त्रित देखिये)।

३. वामदेव का शिष्य (परीक्षित् देखिये)।

४. जनमेजय सत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.८)।

५. हंसरूप से संचार करनेवाला ऋषि। इसने साध्यों को नीति बताई (म. उ. ३६)।

आत्रेयायणि— अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

आत्रेयी—अत्रि ऋषि की कन्या। यह अग्नि पुत्र अंगिरा को ब्याही गयी थी। दत्त, दुर्वास तथा सोम इसके बंधु हैं। इसके पुत्रों को आंगिरस कहते हैं। आत्रेयी को उसका पति, नित्य निष्कारण कठोर शब्द कहता था। एक दिन, उसने ससुरसे इसकी शिकायत (तकरार) की। उसने बताया कि, तेरा पति अग्निपुत्र है, अतः अतुल तेजस्वी है। उसे तू जलरूप से स्नान करा कर शांत कर। इस पर आत्रेयी परुष्णी नदी बन गयी तथा अपने जल से पति को शांत करने लगी। इसका गंगा से संगम हुआ (ब्रह्म. १४४)।

२. अपाला तथा विश्ववारा देखिये।

आत्रेयीपुत्र—गौतमीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ६.५.२)।

आथर्वण—अथर्वन का पुत्र, शिष्य तथा अनुयायी अर्थ का शब्द।

कबंध, दध्यच्, बृहद्दिव, भिषज्, विचारिन देखिये।

आदर्श—धर्मसावर्णि मनु का पुत्र।

आदित्य—वैवस्वत मन्वंतर में देवताओं के समूह का नाम। ऋग्वेद में इसके लिये छः सूक्त हैं। एक स्थान में केवल अदित्यसंघ में छः देवता हैं (ऋ. २.२७.१)। वे इस प्रकार हैं—१. मित्र, २. अर्यमन्, ३. भग, ४. वरुण, ५. दक्ष, तथा ६. अंश। अदिति को आठ पुत्र थे (अ. वे. ८.९.२१)। १. अंश, २. भग, ३. धातृ, ४ इन्द्र, ५ विवस्वत्, ६. मित्र, ७. वरुण तथा ८. अर्यमन् (तै. ब्रा. १.१.९१)। परंतु अदिति का आठवां पुत्र मार्तण्ड दिया गया है (ऋ. १०.७२. ८–९; श. ब्रा. ३.१.३.८)। आदित्य बारह है जो बारह माहों के निदर्शक हैं (श. ब्रा. ११.६.३.८)। वेदोत्तर वाङ्मय में बारह माहों के बारह आदित्य या सूर्य प्रसिद्ध हैं (कश्यप देखिये)। उन में विष्णु सर्वश्रेष्ठ माना गया है। ऋग्वेद में सूर्य को आदित्य कहा गया है। इसलिये सूर्य सातवां और मार्ताण्ड आठवां आदित्य होगा। गाय आदित्य की बहन हैं (ऋ. ८.१०१. १५)।

इन्द्र यह अदिति का पुत्र अर्थात् आदित्यों में से एक है (ऋ. ७.८५.४; मै. सं. २.१.१२)। परंतु बारह आदित्यों से इन्द्र अलग है (श. ब्रा. ११.६.३.५)। आदित्य का उल्लेख वसु, रुद्र, मरुत, अंगिरस्, ऋभु तथा विश्वेदेव इन देवताओं के साथ कई स्थानों पर आया है फिर भी वह सब देवताओं का सामान्य नाम है। आदित्यों का वर्णन सब देवताओं के सामान्य वर्णनों से मिलताजुलता होते हुए भी आदित्यों में प्रमुख मित्रावरुणा से नहीं मिलता। सत्याचार, सर्वपालक, मन के विचार जाननेवाले, पापी लोगों को सजा देनेवाले तथा रोग दूर कर दीर्घायु देनेवाले ऐसा इनका वर्णन है।

ब्रह्मदेव को उद्देशित कर, अदिति ने चावल पकाया, ताकि, उसके कोख से साध्य देव उत्पन्न हों। आहुति दे कर बचा हुआ चावल उसने खाया जिससे धाता एवं अर्यमा दो जुड़वें पुत्र हुए। दूसरी बार मित्र तथा वरुण तीसरी बार अंश एवं भग तथा चौथी बार इन्द्र एवं विवस्वान हुए। अदिति के बारह पुत्र ही द्वादशादित्य या साध्य नामक देव है (तै. ब्रा. १.१.९.१)। आदित्य से सामवेद हुआ (ऐ. ब्रा. २५.७; गो. ब्रा. ६.१०; श. ब्रा. ११.५.८; जै. उ. ४.१३.२; जै. उ. ब्रा. ३.१५.७; ष. ब्रा. ४.१; गो. ब्रा. १.६)। पुराणों में आदित्य, कश्यप तथा अदिति के पुत्र हैं (कश्यप देखिये)

१. अंशुमान (आषाढ माह, किरण १५००), २. अर्यमन (वैशाख, १३००), ३. इंद्र (आश्विन, १२००), ४. त्वष्टृ (फाल्गुन, ११००), ५. धातृ (कार्तिक, ११००), ६. पर्जन्य (श्रावण, १४००), ७. पूषन (पौष), ८. भग (माघ, ११००), ९. मित्र (मार्गशीर्ष, ११००), १०. वरुण (भाद्रपद, १३००), ११. विवस्वान (ज्येष्ठ, १४००), १२. विष्णु (चैत्र, १२००)। इनके कार्य भी बताये हैं (भवि. ब्राह्म. ६५; ७४; ७८; विष्णु. १.१५.१२)। अंशुमान के लिये अंश या अंशु ऐसा पाठ है। विष्णु के लिये उरुक्रम पाठ है। परंतु स्कंदपुराण में बिल्कुल भिन्न सूची दी गयी है। १. लोलार्क, २. उत्तरार्क, ३. सांबादित्य, ४. द्रुपदादित्य, ५. मयूखादित्य, ६. अरुणादित्य, ७. वृद्धादित्य, ८. केशवादित्य, ९. विमलादित्य, १०. गंगादित्य, ११. यमादित्य, १२. सकोल्कादित्य (स्कंद. २.४.४६.)।

आदित्यकेतु—धृतराष्ट्रपुत्र। इसे भीम ने मारा (म. भी. ८४.२७)।

आदिराज—(सो. कुरु.) अभिष्वत् का पुत्र (म. आ. ८९.४५)।

आदिवराह--हिरण्याक्ष को मारने के लिये वर्तमान कल्पारंभ में हुआ अवतार। इसे श्वेतवराह भी कहते हैं।

आद्य--रैवतमनु का देवगण (मनु देखिये)।

२. चाक्षुष मन्वंतर का देव।

३. विश्वामित्र कुल का एक गोत्रकार। यह उपरिचर वसु के सोलह ऋत्विजों में एक था।

आधूर्तरजस्--गय राजा का पिता। अमूर्तरय भी पाठ है। (म. व. ९३.१७; अमूर्तरयस् (३.) देखिये)।

आनक--(सो. यदु.) शूर को मारिषा से उत्पन्न चौथा पुत्र।

इसे कंका नामक स्त्री से पुरुजित् एवं सत्यजित्, ऐसे दो पुत्र हुए।

आनकदुंदुभि--(सो. यदु.) कृष्ण के पिता वसुदेव का नाम। इनके जन्म के समय देवताओं ने दुंदुभि बजाई, इसलिये यह नाम पडा।

आनंद--गालव्यकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण। इसने ब्रह्माजी का अधिकार धारण कर नवीन यज्ञपद्धति, विवाहपद्धति तथा वर्णाश्रमपद्धति स्थापित की (वायु. २१.२६; २३.४६)। इसके मानस पुत्र विराट ने इसके पश्चात् राज्य किया। यह राज्य १३२ वर्ष रहा। इसके पश्चात् ३०० वर्षों तक प्रजासत्तात्मक राज्य चालू था (दप्तरीकृत धर्मरहस्य, पृष्ठ १५४)।

२. मेधातिथि के सात पुत्रों में से एक। इसी नाम से इसका संवत्सर है (विष्णु. २.४.४)।

३. सत्य नामक देवगण में से एक।

आनंदज चांधनायन-- शांब का शिष्य। इसका शिष्य भानुमत् (वं. ब्रा. १)।

आनभिम्लात-- यह दूसरे एक आनभिम्लात का शिष्य (बृ. उ. २.६.२)।

आनर्त-- (सू. शर्याति.) शर्यातिपुत्र। आनर्त देश (गुजरात) इसी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसका पुत्र रेवत (दे. भा. २.५)। इसने कुशस्थली नगरी स्थापित की (ब्रह्म. ७; ह. वं. १.१०.३२-३३)।

२. (सो. सह.) मत्स्यमतानुसार वीतिहोत्रपुत्र।

आंतरिक्ष-- एक व्यास (व्यास देखिये)।

आंध्रभृत्य-- (आंध्र. भविष्य.) मत्स्यमतानुसार पुलोमा का पुत्र।

आपू--स्वारोचिष मनु का पुत्र।

२. वरुण की पत्नी। परंतु इसे अग्नि से पृथ्वी तथा आकाश ये दो संतानें हुईं (तै. सं. ५.५.४)।

आप--अहवसु का नाम।

२. स्वारोचिष मन्वन्तर में वसिष्ठपुत्र प्रजापति।

३. धर्म तथा वसु का पुत्र। इसके पुत्र वैतंड्य, शांत तथा ध्वनि (विष्णु. १.१५)।

आपगव--औपगव देखिये।

आपमूर्ति--स्वारोचिष मनु का पुत्र।

आपव वसिष्ठ-- वसिष्ठकुल में से एक। इसे वरुणपुत्र कहा गया है (ब्रह्मांड. ३. ६९. ४२; वायु. ९४. ४३;९५.१-१३)। हिमालय के पास यह रहता था। कार्तवीर्य के हाथ से इसकी पर्णकुटी जली, इसलिये इसने उसे शाप दिया था (कार्तवीर्य देखिये)। इसकी कुटी मेरु पर्वत के पास थी ऐसा कहीं कहीं उल्लेख मिलता है। अष्टवसु इसकी कामधेनु सुरभि को चुराकर ले गये, इस लिये तुम मर्त्यलोक में जन्म लो, ऐसा इसने उन्हें शाप दिया। इसीके उश्शाप के कारन, भीष्म को छोड, अन्य सबको गंगा ने पानी में डुबाया (म. आ. ९३)।

आपस्तंब--भृगुकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि। यह तैत्तिरीय शाखा का था। कश्यप ने दिति के द्वारा पुत्रकामेष्टि यज्ञ करवाया, उसमें यह आचार्य था। उसी इष्टि से मरुद्गण उत्पन्न हुए (मत्स्य.७)।

उसकी स्त्री का नाम अक्षसूत्रा तथा पुत्र का नाम कर्कि (ब्रह्म. १३०.२-३)। इसके रचित ग्रंथ १. आपस्तंबश्रौतसूत्र, २. आपस्तंबगृह्यसूत्र, ३. आपस्तंबब्राह्मण, ४. आपस्तंबमंत्रसंहिता, ५. आपस्तंबसंहिता, ६. आपस्तंबसूत्र, ७. आपस्तंबस्मृति, ८. आपस्तंबोपनिषद्, ९. आपस्तंबाध्यात्मपटल, १०. आपस्तंबान्त्येष्टिप्रयोग, ११. आपस्तंबापरसूत्र, १२. आपस्तंबप्रयोग १३. आपस्तंबशुल्वसूत्र, १४. आपस्तंबधर्मसूत्र (C. C.)। इसके श्रौतसूत्रों में श्रौत, गृह्य, धर्म, शुल्व, मंत्रसंहिता आदि भाग हैं।

इसका नाम याज्ञवल्क्य स्मृति में दिये गये स्मृतिकारों में है। तर्पण में इसका नाम बौधायन के पीछे तथा सत्याषाढ हिरण्यकेशी के पहले आता है। इससे पता चलता है कि इसकी शाखा हिरण्यकेशी शाखा के काफी पहले की होगी। आपस्तंब ने अपने धर्मसूत्र में (२.७. १७.१७) उदीच्य लोगों के एक श्राद्ध का उल्लेख किया है। उदीच्य शब्द का अर्थ हरदत्त ने शरावती नदी के उत्तर की ओर रहनेवाले लोग, ऐसा दिया है। आपस्तंब

शरावती नदी के उत्तर की ओर, आंध्र देश में रहता होगा। उसी प्रकार, ऐसा उल्लेख है कि, पल्हव राजाओं ने आपस्तंबी लोगों को काफी भेट (देन) दी (I. A. v. 155)। इससे प्रतीत होता है कि, आपस्तंबी शाखा आंध्र देश के आसपास निकली होगी।

आपस्तंब कल्पसूत्र के (२८.२९) दो प्रश्न ही आपस्तंब धर्मसूत्र हैं। उसी प्रकार २५ तथा २६ इन दो प्रश्नों का एकत्रीकरण कर, उसे आपस्तंबीयमंत्रपाठ नाम दिया गया है। कल्पसूत्र के २७ वें प्रश्न को आपस्तंबगृह्यसूत्र यह नाम है। आपस्तंब के गृह्यसूत्र तथा धर्मसूत्र में काफी साम्य है।

आपस्तंबधर्मसूत्र में आचार, प्रायश्चित्त, ब्रह्मचारी के कर्तव्य तथा उनके व्यवहार के नियम, यज्ञोपवीतधारण के संबंध में नियम, श्राद्ध इ. के संबंध में जानकारी दी गई है। उसी प्रकार वेदों के छः अंगों का भी विचार किया है। इसने सिद्ध किया है कि, कल्पसूत्र वेद न हो कर वेदांग ही है (आप. धर्म. २.४.८.१२)। ब्राह्मणग्रंथ नष्ट हो गये हैं। प्रयोग से, वेद ब्राह्मणग्रंथ होने चाहिये ऐसा इसका कथन है (आप. धर्म. १.४.१२.१०)।

आपस्तंब ने संहिता, ब्राह्मण तथा निरुक्त के कुछ उद्धरण लिये हैं। अपने धर्मसूत्र में कण्वपुष्करसादि दस धर्मशास्त्रकार, बौधायन एवं हारीत इनके भी मत इसने अनेक बार दिये हैं। संसार की उत्पत्ति तथा प्रलय के संबंध में भविष्यपुराण में दिये मत का आपस्तंब धर्मसूत्र में उल्लेख है तथा अनुशासन पर्व (९०.४६) का एक श्लोक इसने लिया है। आपस्तंब ने अपने धर्मसूत्रों में जैमिनि की पूर्वमीमांसा में से बहुत से मत एवं पारिभाषिक शब्दों का उपयोग किया है। आपस्तंब धर्मसूत्र का उल्लेख, शबर, ब्रह्मसूत्र के शांकरभाष्य, विश्वरूप का व्यवहार, मिताक्षरा एवं अपरार्क, इन ग्रंथों में किया गया है। आपस्तंबधर्मसूत्र के कितने ही मत पूर्ववर्ती धर्मशास्त्रकारों के विरुद्ध हैं। आपस्तंब के मतानुसार नियोग त्याज्य है उसी प्रकार पैशाच तथा प्राजापत्य इन दो विवाह विधियों को, इसकी पूर्ण सम्मति है। इसके मतानुसार किसी भी प्रकार के मांस का भक्षण करने में कोई आपत्ति नहीं है। आपस्तंब धर्मसूत्र पर हरदत्त ने उज्ज्वलावृत्ति नामक टीका की है। आपस्तंब धर्मसूत्र में अध्यात्म विषयक दो पटलों पर शंकराचार्य का भाष्य है (१.८. २२-२३)।

आपस्तंबधर्मसूत्र से भिन्न आपस्तंबस्मृति नामक २०७ श्लोकों का एक ग्रंथ, जीवानंद ने प्रकाशित किया है। आनंदाश्रम में प्रकाशित स्मृति में, दस अध्याय हैं। इस ग्रंथ में, प्रायश्चित्त पर विचार किया गया है। स्मृतिचंद्रिका तथा अपरार्क ग्रंथों में इसके उद्धरण कई बार आये हैं। स्मृतिचंद्रिका में श्लोकापस्तंब नामक एक ग्रंथ का उल्लेख है।

बुल्हर ने इसका समय खि. पू. ३०० के पूर्व नहीं रहा होगा, ऐसा निश्चित किया है, परंतु तिलकजी ने इसका समय इससे भी पहले का माना है। (गी. र. पृ. ५६१)। वेबर ने आपस्तंबश्रौतसूत्र का समय खि. पू. १४०० निश्चित किया है, परंतु काणे खि. पू. ६००-३०० मानते हैं।

आपस्तंबि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

२. भृगुकुल का एक गोत्रकार। यह ब्रह्मर्षि था (म. अ. १९९. १८ कुं; मत्स्य. ७)।

आपकभूण—वसिष्ठ गोत्र का एक ऋषि गण।

आपिशलि—एक व्याकरणकार। संधि के विषय में लिखते समय पाणिनि ने इसका गोत्र के साथ उल्लेख किया है (६. १. ९२)। इसने आपिशलि नामक एक ग्रंथ लिखा (C. C.)

इसमें प्राप्त वर्णन का उल्लेख काशिका (७.३.९५) एवं कैयट (५.१.२१) में भी प्राप्त है। काशिकाकार तथा तथा कैयट ने यह ग्रंथ देखा होगा।

२. भृगुकुल का एक ब्रह्मर्षि।

आपिशी—भृगुकुल का एक गोत्रकार। अपिशाली ऐसा पाठ है।

आपूरण—कद्रूपुत्र।

आपोद—धौम्य का पैतृक नाम (धौम्य देखिये)।

आपोमूर्ति—(अपांमूर्ति) ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

आपोलव—(आंध्र. भविष्य) ब्रह्मांडमत में शातकर्णीपुत्र।

आप्त—कद्रूपुत्र।

आप्त्य—त्रित, द्वित, एकत तथा भुवन देखिये।

आप्य—चाक्षुष मन्वंतर का देव।

आप्यायन—(स्वा. प्रिय.) वज्रबाहु के सात पुत्रों में से छठवां। इसका संवत्सर इसी के नाम से चालू है।

आप्लव—मनु देखिये।

आभिप्रतारिण—वृद्धद्युम्न देखिये।

आभूतरजस्--रैवत मन्वंतर का एक देव (मनु देखिये)।

आभूति त्वाष्ट्र--विश्वरूप त्वाष्ट्र का शिष्य (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)।

आम--(स्वा. प्रिय.) घृतपृष्ठ के सात पुत्रों में ज्येष्ठ। इसका संवत्सर आमवर्ष इस नाम से प्रसिद्ध है।

२. कृष्ण का सत्यभामा से उत्पन्न पुत्र। यह महारथी था।

३. कान्यकुब्ज देश के इस राजा ने बुद्धधर्म स्वीकार कर, बुद्धधर्म का प्रचार चालू किया। राम ने मारुती के द्वारा इसका प्रतिकार कर, इसे पुनः वैदिक धर्म में समाया। इसकी राजधानी धर्मारण्य थी (स्कंद. ३.२.३८)।

आमहासुर--कश्यप एवं दनु का पुत्र।

आमहीयव--उरुक्षय देखिये।

आमुष्यायण--एक व्यास। व्यास देखिये।

आमूर्तरजस--गय का पैतृक नाम।

आंबरीष--सिंधुद्वीप देखिये।

आंबष्ठ्य--पर्वत तथा नारद ने इसको राज्याभिषेक किया। इसके बाद इसने सारी पृथ्वी जीत कर अश्वमेध यज्ञ किया (ऐ. ब्रा. ८.२१)।

आंबाज--आवेद के लिये पाठभेद।

आंभृणी--वाच् देखिये।

आयति--मेरु की कन्या, नियति की भगिनी तथा धातृ ऋषि की स्त्री।

२. (सो.) नहुष का पुत्र। ययाति का बंधु।

आयवस--संभवतः यह नहुषों का शासक होगा। इस पराक्रमी राजा के तीन पुत्रों ने कक्षीवन् को तंग किया था (ऋ. १.१२२.१५)।

आयाप्य वा **आयास्य**--अंगिरस् गोत्र का मंत्रकार।

आयु--इंद्र ने वेश के लिये इसका पराभव किया था (ऋ. १०.४९.५)। इंद्र ने इसका पराभव किया, ऐसा बहुत स्थानों पर उल्लेख मिलता है (ऋ. २.१४.७; ८.५३.२) तथापि आयु ने इंद्रकी प्रशंसा के लिये एक सूक्त रचा है (ऋ. ८.५२)। यह शब्द सामान्य तथा विशेष अर्थ में उपयोग में लाया गया है। कुत्स तथा अतिथिग्व के साथ इसका उल्लेख है।

(सो.) पुरूरवस् को उर्वशी से उत्पन्न पुत्रों में ज्येष्ठ (भा. ९. १५. १; म. आ. ७०. २२; ९०.७; द्रो. ११९. ५; अनु. १४७; वा. रा. उ. ५६; गरुड. १. १३९. ३; पद्म. सृ. १२. ८७; भू. १०३)। दत्तात्रेय के आश्रम में सौ वर्ष सेवा करने पर, दत्त ने इसे एक फल दिया। उसने अपनी स्त्री इंदुमती को वह फल खिलाया जिसके कारण वह गरोदर हुई तथा उसे नहुष नामक पुत्र हुआ। उसे हुंड नामक दैत्य चुरा कर ले गया इसलिये, वह अपनी पत्नीसहित शोक करने लगा। नारद ने बताया कि, नहुष के द्वारा हुंड दैत्य मारा जायेगा तब वह स्वस्थ हुआ (पद्म. भू. १०३-१०८)। इसे स्वर्भानु की कन्या प्रभा नामक दूसरी स्त्री थी, जिससे नहुषादि पुत्र हुए (भा. ९.१७.१; गरुड. १३९. ८; ब्रह्माण्ड. ३. ६७. १-२; ब्रह्म. ११; पद्म. पा. १२ ८७; ह. वं. १. २८)।

आयु का वंशक्रम--इस के पांच पुत्र--

१. नहुष, २. वृद्धशर्मन् (क्षत्रवृद्ध), ३. रम्भ, ४. रजि, ५. अनेनस्. नहुष का ययाति पूरु आदि वंश प्रसिद्ध है। वृद्धशर्मन् का ही क्षत्रवृद्ध नाम है। उस का वंश काशि और काश्य नाम से प्रसिद्ध है। तीसरा रम्भ अनपत्य था। तथापि कई जगे उसका वंश मिलता है (भा. ९.१७.१०)। चौथा रजि। उस को सौ पुत्र थे। वे इंद्र द्वारा नष्ट हो गये। अनेनस् का वंश स्वतंत्र रूप से उपलब्ध है (ह. वं. १.२९)।

आयुपुत्र रजि वंश को राजेय कहा गया है (वायु. ९२.७४-९९)।

इसका वंश ऊपर दिये गये स्थानों में है। इसने छत्तीस हजार वर्ष राज्य किया (भवि. प्रति. १.१)।

२. पौष माह में भग नामक आदित्य के साथ भ्रमण करने वाला ऋषि (भा. १२.११.४२)।

३. कृष्ण को रोहिणी से उत्पन्न पुत्र (भा. १०. ६१. १७)।

४. अंगिरा तथा सुरूपा का पुत्र। एक देव (मत्स्य. १९६)।

५. मंडूकों का एक प्रसिद्ध राजा (म. व. १९०. ३७)।

६. प्राण नामक वसु एवं ऊर्जस्वती का पुत्र (भा. ६. ६.१२)।

७. (सो. क्रोष्टु.) पुरुहोत्र राजा का पुत्र। इसका पुत्र सात्वत (भा. ९.२४.६)।

८. धर्म तथा वसु का पुत्र। इन्हें वैतंड्य, शम, शांत सनत्कुमार एवं स्कंद ये पुत्र थे (ब्रह्माण्ड. ३.३.२१-२९)।

आयु काण्व--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५२)।

आयुतायु--(मगध. भविष्य.) भागवत, वायु एवं ब्रह्माण्ड के मतानुसार श्रुतश्रवस् का पुत्र ।

आयुर्दान--पारावत नामक देवगणों में से एक ।

आयुष्मत्—संह्राद दैत्य के तीन पुत्रों में से ज्येष्ठ ।

२. दक्षसावर्णि मन्वंतर में होनेवाले ऋषभ अवतार का पिता ।

३. उत्तानपाद का पुत्र ।

आयोगव मरुत्त आविक्षित—मरुत्त देखिये ।

आरणेय—अरणी से उत्पन्न होने के कारण, शुक को दिया गया नाम (दे. भा. १. १७) ।

आरण्य—एक मध्यमाध्वर्यु ।

आरण्यक—लोमश ने इसे रामायण सुनाई (पद्म. पा. ३५. ३७) ।

आरद्वत्—अंगार देखिये ।

आरब्ध—अंगार देखिये ।

आराधिन् वा आराविन्—(सो. कुरु.) वायुमतानुसार जयत्सेन का पुत्र तथा विष्णुमतानुसार आरावित ।

आराह्ळि—शौनक देखिये ।

आरुणायनि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार ।

आरुणि—उद्दालक का पैतृक नाम (बृ. उ. ३.६.१; छां. उ. ३.११.४) । सुब्रह्मण्य का गुरु आरुणि यशस्विन यही है (जै. ब्रा. २.८०) । आरुणि ने हृदय के अष्टदलयुक्त कमल के स्थान ब्रह्महृदि रख कर ब्रह्मा की आराधना की (ऐ. आ. २. १. ४) । वायुमतानुसार यजुःशिष्यपरंपरा के व्यास का मध्यदेश का शिष्य (व्यास देखिये) । यह वासिष्ठ चैकितायन के पास ज्ञानार्जन के लिये गया था (जै. उ. ब्रा. १.४२.१) । अन्य स्थान में, अग्नि उध्वर्यु का नाश न कर शत्रु का नाश करता है, यह बताने के लिये इसके नाम का उल्लेख आता है (श. ब्रा. १.१.२. ११) । अग्निहोत्र की प्रशंसा करते समय भी एक आरुणि का उल्लेख है (श. ब्रा २. ३. ३१) । आरुणि पांचाल्य का उद्दालक भी नाम है (उद्दालक देखिये) ।

२. धर्मसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में एक ।

३. विनता का पुत्र ।

४. सर्प (म. आ. ५२.१७) ।

५. एक व्यास (व्यास देखिये) ।

आरुणि पांचाल्य— उद्दालक देखिये ।

आरुणेय— औपवेशि के कुल में उद्दालक आरुणि तथा पुत्र श्वेतकेतु का यह पैतृक नाम है (श. ब्रा. १०. ३.४.१; छां. उ. ५.३.१). प्राणविद्या बताते समय इसका उल्लेख है (जै. उ. ब्रा. २. ५. १) ।

आरुषी—मनुकन्या । च्यवन ऋषि की दो स्त्रियों में से ज्येष्ठ । उर्व ऋषि की माता ।

आरैहण्य— सुमंतु का शिष्य । इसका शिष्य चैकितायन (वं. ब्रा. २) ।

आर्क्ष—प्रियमेध का आश्रयदाता (ऋ. ८.६८.१५–१६) । अतिथिग्व इंद्रोत तथा आर्क्ष से दान मिलने का उल्लेख प्रियमेध ने किया है । एक अन्य स्थान पर आर्क्ष श्रुतर्वन् का निर्देश है (ऋ. ८. ७४. ४) ।

आर्क्षाकायण—गन्दनस देखिये ।

आर्चत्क—शरका पैतृक नाम (ऋ. १.११६.२२) । ऋचत्क का पुत्र ।

आर्चनानस—अत्रिगोत्र का प्रवर ।

आर्चिष्मत्—सुतार देवों में से एक ।

आर्जव (आर्जव)—गांधार देशाधिपति शकुनि के छः बंधुओं में से एक । इसे भारतीय युद्ध में इरावान् ने मारा (म. भी. ८६. २४; ४२) ।

आर्जुनेय—कुत्सका पैतृकनाम (ऋ. १. ११२. २३; ४. २६. १; ७. १९. २; ८. १. ११) ।

आर्तपार्णि—(सू. इ.) ऋतुपर्ण का पुत्र (ह. वं. १. १५. २०) ।

आर्तभाग जारत्कारव—जरत्कारु का पुत्र । यह आस्तीक ऋषि का ही नाम होगा । देवराति जनक की सभा में, याज्ञवल्क्य से वाद करनेवाला संभवतः यही होगा (बृ. उ. ३. २. १; १३) । 'कति ग्रहाः' प्रश्न का उत्तर दे कर, याज्ञवल्क्य ने इसे चुप बिठाया ।

आर्तभागीपुत्र—शौंगीपुत्र का शिष्य, तथा वार्काणीपुत्र का गुरु (बृ. उ. ६. ५. २) ।

आर्तव—बर्हिषद पितरों का नामांतर ।

आर्तायनि—ऋतायनपुत्र शल्य का पैतृक नाम (म. भी. ५८. १४) ।

आर्तिमत्—एक ऋषि । इसके स्मरण से सर्पबाधा नहीं होती है (म. आ. ५३. २३) ।

आर्द्र--(सू. इ.) आर्द्रक ऐसा पाठभेद है (म. व. १९३. ३; इंदु देखिये) ।

आर्द्रक—आर्द्र देखिये ।

आर्द्रा—सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक ।

आर्बुदि—ऊर्ध्वग्रावन् देखिये ।

आर्भव—सुनु देखिये ।

आर्य--माल्य देखिये।

आर्यक--कद्रूपुत्र। इसकी कन्या मारीषा वा भोजा। मारीषा यदुकुलोत्पन्न शूर राजा की स्त्री थी, जिससे शूरको पृथा नामक कन्या उत्पन्न हुई। आगे चल कर, इसी का नाम कुंती हुआ। भीम की माता पृथा आर्यक की दौहित्री थी। भीम को दुर्योधनादि कौरवों ने विषयुक्त अन्न खिलाकर, प्रमाणकोटितीर्थ में डुबाया। नदी के सर्पोंने उसे दंश किया जिस कारण विष उतर गया। भीम सावधान हुआ ही था कि, नाग फिर दंश करने आये। तब भीम ने उनसे युद्ध शुरू किया। यह समाचार मिलते ही आर्यक वहां पहुंचा। भीम को उसने पहचान लिया, तथा उसे पाताल में ले जा कर अमृतपान कराया। तुझमें दस सहस्र नागों का बल रहे ऐसा आशीर्वाद दे, इसने उसे हस्तिनापुर तक पहुंचाया (म. आ. ११९; परि. १. क्र. ७३)।

२. धर्मसावर्णि मन्वंतर में होनेवाले विष्णु का पिता।

आर्ष्यशृंगि--दुर्योधन पक्षीय एक राक्षस। इसने अर्जुनपुत्र इरावत् का वध किया (म. भी. ८६.६४)।

आर्ष्टिणि--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

आर्ष्टिषेण--कृतयुग में हुआ एक राजर्षि। तप के बल पर यह ब्राह्मण हुआ (म. स. ८.१३; श. ३९.१; वायु. ९१.११४)। इसका आश्रम हिमालय पर नर-नारायणाश्रम के पास था (म. व. १५३, परि १.१७, पंक्ति ३१)। इसके पास पांडव गये थे। (म. व. १५६. १६८)। यह भृगुकुल का मंत्रकार था। इसका अद्रिषेण नाम भी मिलता है (वायु. ५९.९५-९७)। निर्णयसिंधु में इसका आधार लिया गया है। देवापि देखिये।

२. (सो. क्षत्र.) शल का पुत्र (वायु. ९२.५)।

३. वृद्धा देखिये।

आलंब--एक ऋषि। यह धर्मराज की सभा में था (म. स. ४.२० कुं.)।

आलंबायन--इंद्र का मित्र। इसने रुद्रका माहात्म्य बताया (म. अनु ४९)।

२. वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार तथा ऋषिगण।

आलंबायनीपुत्र--आलंबीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ६. ५.२. काण्व)।

आलंबि--ब्रह्मांड तथा वायुमतानुसार व्यास के यजुः-शिष्यपरंपरा के प्राच्यों में से एक।

आलंबी--कश्यप तथा खशा की कन्या।

आलंबीपुत्र--जयंतीपुत्र का शिष्य तथा कौशिकीपुत्र का गुरु (बृ. उ. ६.५.१.२ काण्व)।

आलुकि--भृगुकुल का गोत्रकार। जलाभिद् पाठभेद है।

आलेखन--एक आचार्य (आश्व. श्रौ. ६.१०)।

आल्हकेय--ह्रस्वाशय देखिये।

आवटिन्--ब्रह्मांडमतानुसार व्यास की यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)। यही आटविन् है।

आवंत्य--भागवत मतानुसार व्यास की सामशिष्य परंपरा में से ब्रह्मवेत्ता का शिष्य (व्यास देखिये)।

आवरण--(स्वा.) भरत तथा पंचजनी का पुत्र।

आवाह--(सो. यदु.) विष्णुमतानुसार श्वफल्क का पुत्र।

आविक्षित--मरुत्त का पैतृक नाम। इस मरुत्त का कामप्रि ऐसा दूसरा नाम भी होगा (ऐ. ब्रा. ८. २१; श. ब्रा. १३.५.४.६; म. शां. २९.१५)। वायुमतानुसार यह करंधम का पुत्र है।

आविर्होत्र--ऋषभदेव तथा जयंती का भगवद्भक्त पुत्र।

आवेद--भृगुकुल का एक गोत्रकार (आंबाज देखिये)।

आशावह--विवस्वान् का पुत्र।

२. द्रौपदी के स्वयंवर को आया हुआ यादव (म. आ. १७७.१८१८*)

आश्मरथ्य--आश्मरथ का वंशज। सूत्र ग्रंथों में मतभेद दर्शाने के लिये इसका नाम आता है (आश्व. श्रौ. ६.१०; ब्र. सू. १.२.२९; ४.२०)।

आश्माकी--प्रचिन्वत् की पत्नी। अश्मकी भी पाठ है। यादवकन्या। इसका पुत्र शर्याति (म. आ. ९०.१३) संयाति ऐसा भांडारकर पाठ है।

आश्रया--स्थावरनगर में रहने वाले कौंडिन्य की पत्नी (गणेश. १.६३)।

आश्रायणि--कश्यपकुल का एक गोत्रकार।

आश्राव्य--इन्द्र सभा का एक ऋषि (म. स. ७.१६)।

आश्लेषा--सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

आश्वघ्न--यह कोई स्वतंत्र व्यक्ति होगा, वा मनु के लिये एक विशेषण होगा (ऋ. १०.६१.२१)।

आश्वतर आश्वि--बुडिल का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ६.३०; श. ब्रा. ४.६.१.९)।

आश्वत्थ्य--अहीन का पैतृक नाम (तै. ब्रा. ३.१०. ९.१०)।

आश्वमेध--एक राजा का पैतृक नाम। इसका उल्लेख दानस्तुति में आया है (ऋ. ८. ६८. १५-१६)।

आश्वल--विश्वामित्र का पुत्र तथा ब्रह्मर्षि।

आश्वलायन--एक शाखाप्रवर्तक आचार्य। आश्वलायन शाखा महाराष्ट्र में प्रसिद्ध है, परंतु इस शाखा के संहिता ब्राह्मणादि वैदिक ग्रंथ उपलब्ध नहीं हैं। इसके प्रसिद्ध ग्रंथ निम्न लिखित हैं १. आश्वलायनगृह्यसूत्र, २. अश्वलायनश्रौतसूत्र, ३. आश्वलायन स्मृति।

यह शौनक का शिष्य था। इसके सूत्र के अंत में 'नमः शौनकाय' कहकर शौनक को प्रणाम किया है। शौनक ने स्वतः १००० भागों का एक सूत्र रचा था। किन्तु आश्वलायन का सूत्र, संक्षेप में एवं अच्छा होने के कारण उसने अपना सूत्र फाड डाला। इसका श्रौतसूत्र बारह अध्यायों का तथा गृह्यसूत्र चार अध्यायों का है। श्रौतसूत्रों में होत्रकर्म में मंत्र का विनियोग बताया है। दर्शपूर्णमास, अग्न्याधान, पुनराधान, आग्रयण, अनेक काम्येष्टि, चातुर्मास्य, पशु, सौत्रामणी, अग्निष्टोमादि सप्त सोम संस्था, सत्रों के होत्र तथा अंत में गोत्रप्रवरों का संक्षिप्त संग्रह है। अग्निहोमसमान कर्म का भी कहीं कहीं उल्लेख किया है। गृह्यसूत्रों में निम्नलिखित विषय प्रमुख वर्णित है--संस्कार, नित्यकर्म, वास्तु, उत्सर्जन, उपाकर्म, युद्धार्थसज्जता तथा शूलगव।

गृह्यसूत्र में दिये गये तर्पण में ऋग्वेद के ऋषि मंडलानुसार लिये हैं, एवं जहां ऋषि लेना असंभव लगा वहां प्रगाथ क्षुद्रसूक्त, महासूक्त तथा मध्यम ऐसा उल्लेख किया है। उसी तरह व्यास के शिष्य सुमंतु वगैरह बता कर सूत्र, भाष्य, भारत एवं महाभारत का भी उल्लेख किया है। आचार्य तथा पितर इस प्रकार है--शतर्चिन्, माध्यम, गृत्समद, विश्वामित्र, वामदेव, अत्रि, भरद्वाज, वसिष्ठ, सुमंतु, जैमिनि, वैशंपायन, पैल, जानंति, बाहवि, गार्ग्य, गौतम, शाकल्य, बाभ्रव्य, मांडव्य, मांडूकेय, गार्गी वाचक्नवी, वडवा प्रातिथेयी, सुलभा मैत्रेयी, कहोल, कौषीतक, महाकौषीतक, पैंग्य, महापैंग्य, सुयज्ञ, सांख्यायन ऐतरेय, महैतरेय, शाकल, बाष्कल, सुजातवक्त्र, औदवाहि, महौदवाहि, सौजामि, शौनक एवं आश्वलायन। ऐतरेय ब्राह्मण से ये सूत्र मिलते जुलते हैं तथा उसमें से कुछ अवतरण भी इसमें पाये जाते हैं। आश्वलायन के श्रौतसूत्र में निम्नलिखित आचार्यों का उल्लेख आता है। आलेखन (६. १०), आश्मरथ्य (६. १०), कौत्स १. २: ७. १), गाणगारि (२. ६; १२. ९-१०), गौतम (२. ६: ५. ६), तौल्वलि (२. ६: ५. ६), शौनक (१२. १०)।

इनमें से तौल्वलि पौर्वात्य है (पा. सू. २. ४. ६०-६१)। विदेहाधिपति जनक का यह होता था। अश्वल से संभवतः इसका संबंध है। वेबर के मतानुसार यह पाणिनि का समकालीन रहा होगा। वि. वि. वैद्य ने इसका काल खि. पूर्व १०० वर्ष माना है। श्रौतसूत्र तथा गृह्यसूत्र एक ही आश्वलायन के नहीं रहे होंगे। आश्वलायनगृह्यसूत्र में यद्यपि श्रौतसूत्र का विवरण मिलता है तथापि भाषा भिन्नता स्पष्ट दिखाई देती है। इसे आश्वलायन की शिष्यपरंपरा के किसी शिष्य ने लिख कर आश्वलायन के नाम पर जोड दिया होगा।

२. अथर्ववेदीय कैवल्योपनिषद् परमेष्ठी ने आश्वलायन को बताया है। ऊपर उल्लेखित तथा यह संभवतः एक ही हो सकते है।

३. कौसल्य का पैतृक नाम।

४. शिवावतार में सहिष्णु का शिष्य।

आश्वलायनिन--कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

आश्वयानायन--कश्यप गोत्र का एक गोत्रकार।

आश्वसूक्ति--सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १९.४.९)।

आश्वायनि--भृगुकुल का एक गोत्रकार।

२. अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

आश्विनेय--अश्विनीकुमार देखिये।

आसंग--(सो. यदु. वृष्णि.) श्वफल्क का पुत्र।

आसंग प्लायोगि--एक दानशूर राजा तथा सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. १. ३२-३३)। इसका पुरुषत्व नष्ट होने के कारण, यह स्त्री बन गया था। परंतु मेध्यातिथि की कृपा से इसे पुरुषत्व प्राप्त हुआ, इसलिये इसकी स्त्री शश्वती बहुत आनंदित हुई, ऐसी एक आख्यायिका सायण ने दी है। अन्य लोगों को इसमें सत्यता प्रतीत नहीं होती। अंतिम ऋचा को संदर्भ भी नहीं है। इसी सूक्त में आसंग को याद कहा गया है। इससे यह पता चलता है कि यह यदुवंशी रहा होगा (ऋ. ८.१.३१; ३४)।

आसंदिव--नारायण माहात्म्य के लिये इसकी कथा है (ब्रह्म. १६७)।

आसमंजस--(सू. इ.) असमंजसपुत्र अंशुमान् का नाम।

आसारण—भाद्रपद माह में सूर्य के साथ साथ घूमनेवाला यक्ष।

आसुरायण—दो स्थानों पर त्रैवणी का तथा तीसरे स्थान पर आसुरी का शिष्य (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३; बृ. उ. ६.५.२)। ब्रह्मांडमतानुसार व्यास के अथर्वशिष्य परंपरा के पाराशर्य कौथुम का शिष्य (व्यास देखिये)।

२. कश्यप गोत्र का एक ऋषिगण।

३. विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७)।

आसुरि—यह सायंहोम पक्ष का है। इसने उदित होम पक्ष की बहुत निंदा की है (श. ब्रा. २.२.३.९)। इसने अग्नि के उपस्थान का छोटा मंत्र सुझाया है (श. ब्रा. २.३.३.२)। भारद्वाज का शिष्य तथा औपजंधनी का गुरु (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। दूसरे स्थान पर याज्ञवल्क्य का शिष्य तथा आसुरायण का गुरु है (बृ. उ. ६.५.२) यज्ञविधि में इसे प्रमाण माना गया है (श. ब्रा. १.५.२.२६; २.१.४.२७)। अनिर्बंध मत तथा सत्य के लिये आग्रह के संबंध में इसे मान्यता प्राप्त थी (श. ब्रा. १४.१.१.३३)। शुक्लयजु के ब्रह्मयज्ञांग पितृतर्पण में यह था (पा. गृ. परिशिष्ट)। ब्रह्माण्डमतानुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में मध्यदेशवासी शिष्य (व्यास देखिये)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ का एक ऋषि। सांख्यशास्त्रज्ञ कपिल का शिष्य तथा पंचशिख का गुरु (म. शां. २११)। इसका कपिल से व्यक्ताव्यक्त पर संवाद हुआ (म. शां. परि. १.२९ अ–२९ब)। शिवावतार दधिवाहन का शिष्य।

आसुरिवासिन्—प्राश्नीपुत्र का नाम (बृ. उ. ४.५.२)।

आसुरी—(स्वा. प्रिय.) देवताजित् राजा की स्त्री तथा देवद्युम्न की माता।

आस्तीक—भृगुकुलोत्पन्न जरत्कारु ऋषि तथा तक्षक भगिनी जरत्कारु का पुत्र। गरोदर अवस्था में इसके पति वन को चले गये इसलिये जरत्कारु कैलास पर्वत पर चली गयी। यहां शंकर ने उसे ज्ञानोपदेश किया। यहीं उसने एक पुत्र को जन्म दिया। पुत्र ने गर्भ में शंकर का उपदेश ग्रहण किया इसलिये इसका नाम आस्तीक रखा गया। माँ ने पति से गर्भ के विषय में पूछा जिसका उत्तर उसे 'अस्ति' मिला इसलिये पुत्र का नाम 'आस्तीक' रखा गया (म. आ. ४४.१९-२० दे. भा. २.१२)।

शिक्षा—आगे चल कर इसकी माता अपने भाई वासुकि के घर पर रही। वहीं इसका संगोपन हुआ। इसने उपनयन के पश्चात् च्यवनात्मज भार्गव ऋषि से सांगवेद का अध्ययन किया (म. आ. ४४.१८)। शंकर ने इसका व्रतबंध कराया। इसे वेदवेदांगों में निष्णात करने के पश्चात् मृत्युंजय मंत्र का अनुग्रह दिया। शंकर की आज्ञानुसार फिर जरत्कारू पुत्रसहित पिता के आश्रम में जा कर रही।

सर्पसत्र—जनमेजय राजा ने अपने मंत्री से सुना कि, पिताजी की मृत्यु सर्पदंश के कारण हुई। इसलिये क्रोधित हो कर जनमेजय ने सर्पसत्र कर, सारे सर्पों को मार डालने का निश्चय किया तथा यज्ञदीक्षा ली। यज्ञ प्रारंभ होनेवाला ही था कि, जनमेजय ने वास्तुशास्त्र में निष्णात कारीगर लोहिताक्ष से पूछा कि, यज्ञ मंडप में याज्ञिक किस तरह संपन्न होगा, इसपर यज्ञमंडप का स्थान तथा जिस समय भूमापन प्रारंभ हुआ इसे ध्यान में रख उसने कहा कि, यज्ञ में बडा विघ्न आवेगा तथा यह यज्ञ एक ब्राह्मण के द्वारा बंद होगा। तथापि राजा ने यज्ञ की सारी सामग्री जमा कर पूरी व्यवस्था के साथ यज्ञ प्रारंभ कर, सर्पों का संहार शुरू किया। सर्पसत्र में अंत में तक्षक की बारी आयी। सर्पों ने यह बात जरत्कारू को बतायी और भाई की रक्षा करने की प्रार्थना की।

सर्परक्षण—जरत्कारू ने आस्तीक को मातुलकुल का रक्षण करने की आज्ञा दी। मातृभक्त आस्तीक आज्ञा शिरोधार्य कर जनमेजय के यज्ञमंडप में पहुंचा। वहां उसने अपनी चतुराई तथा मधुर वाणी से राजा के मन को आकर्षित कर लिया। सर्पसत्र से घबराया हुआ तक्षक प्राणरक्षणार्थ इंद्र की शरण में गया। इंद्र ने उसे अभय दान दिया। ब्राह्मणों ने यज्ञ में तक्षक का आवाहन किया पर उसे आते न देख, ब्राह्मणों ने कहा कि, इंद्र ने उसका रक्षण किया है, इसलिये वह नहीं आ रहा है। तब राजा ने इंद्रसहित तक्षक का आवाहन करने को कहा। ब्राह्मणों ने 'इंद्राय तक्षकाय स्वाहा' कहा तथा इतना कहते ही इंद्र ने तक्षक का त्याग कर दिया। इस कारण तक्षक अकेला ही कुंड के ऊर्ध्व प्रदेश में खिन्नवदन खडा हो गया (म. आ. ४७–४९)। ब्राह्मणों के इंद्रसहित तक्षक का आवाहन करते ही, देवतागण इंद्र के सहित मनसा के पास गये। तब उसने आस्तीक पुत्र को सर्पों के संकट निवारणार्थ आज्ञा दी। आस्तीक के भाषण के कारण राजा ने उसे कहा कि, तुम्हें जो चाहिये मांगो। इसी समय सारे ब्राह्मण कह पडे कि, 'तक्षक आवाहन करने के पश्चात् भी अभी तक नहीं

आ रहा है। वह जब तक कुंड में आकर नहीं गिरता तब तक इसे वरदान न दीजिये।' इसी बीच ब्राह्मणों के मंत्रसामर्थ्य के कारण, तक्षक को कुंड के ऊर्ध्वभाग में आया हुआ इसने देखा। उसे 'तिष्ठ तिष्ठ' कह कर रोका तथा यही वर मांगने की योग्य घडी है ऐसा जान कर उसने राजा से 'सर्पसत्र रोक दीजिये' ऐसा वरदान मांगा। राजा अत्यंत खिन्न हो कर और कोई दूसरी चीज मांगने के लिये कहने लगा परंतु वचनबद्ध होने के कारण 'तथास्तु' कह कर राजा ने सर्पसत्र रोक दिया। आस्तीक का सम्मान कर उसे बिदा किया।

आस्तीक के इस यशप्राप्ति के कारण, सब सर्पों ने उसका बडा स्वागत किया और प्रसन्न होकर वे इसे वरदान देने लगे। इसपर आस्तीक ने वर मांगा कि, जो मेरा आख्यान, त्रिकाल पठन करेंगे उन्हें तुम बिलकुल कष्ट न देना (म. आ. ५३. २०)। आस्तीक ने जनमेजय से इंद्र तथा तक्षक के प्राणों की याचना की। तब ब्राह्मणों की आज्ञा ले, राजा ने इसका कथन मान्य कर, सर्पसत्र बंद किया। स्वयं मनसा के पास आ कर, इन्द्र ने उस की पूजा की तथा उसे बलि चढाई (दे. भा. ९. ४८)। नागपंचमी पंचमी के दिन सर्पसत्र बंद हुआ था इसलिये यह दिन नागों को अत्यंत प्रिय है (भवि. ब्राह्म. ३२; तक्षक आर्तभाग जरत्कारव देखिये)।

आस्त्रबुध्न—इंद्र ने इसके कारण, वेन्य पृथु का वध किया (ऋ. १०.१७१.३)।

आहार्य—अंगिरसगोत्रीय मंत्रकार।

आहुक—(सो. यदु. कुकुर.) पुनर्वसु का पुत्र। इसके सौ पुत्र थे (म. स. १४.५५)। तथापि उनमें से देवक तथा उग्रसेन बहुत प्रसिद्ध थे। शाल्व के साथ कृष्ण के युद्ध के समय इसने द्वारका का रक्षण किया (म. व. १६. २३)। यह अभिजित पुत्र था। इसे आहुक नामक भाई था। अत्यंत ऐश्वर्यवान तथा पराक्रमी ऐसी इसकी प्रसिद्धि थी (ब्रह्म. १५.४९–५१)।

आहुकी—पुनर्वसु राजा की कन्या तथा आहुक की भगिनी।

आहुत—हैतनामन देखिये।

आहुति—(सो. यदु. क्रोष्टु.) कूर्ममतानुसार रोमपाद वंश में से एक।

आह्नेय—इसके पिता का नाम शुचि तथा माता का नाम आह्नि था। स्वाध्याय गांव के बाहर करना चाहिये, ऐसा नियम होते हुए भी यदि वह संभव न हो, तो गांव के अंदर ही अध्ययन करना चाहिये ऐसा इसका मत है (तै. आ. २.१२)।

इ

इक्षालव—ब्रह्माण्ड मतानुसार व्यास के ऋक्‌शिष्य-परंपरा का शाकवैण रथीतर का शिष्य (व्यास देखिये)।

इक्ष्वाकु—(सू.) वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से ज्येष्ठ (म. आ. ७०.१३; भवि. ब्राह्म. ७९)। इसकी उत्पत्ति के संबंध में जानकारी इस प्रकार मिलती है। एक बार मनु को छींक आयी। उस छींक के साथ ही यह लडका सम्मुख खडा हुआ। इस पर से इसका नाम इक्ष्वाकु पडा (ह. वं. १.११; दे. भा. ७.८; भा. ९.६; ब्रह्म. ७.४४; विष्णु. ४.२.३)। मनु ने कहा कि, तुम एक राजवंश के उत्पादक बनो, दंड की सहायता से राज्य करो, तथा व्यर्थ ही किसी को दंड मत दो। अपराधियों को दंड देने से स्वर्गप्राप्ति होती है। इस तरह का उपदेश दे कर, जो कार्य करना होगा उसकी रूपरेखा मनु ने इसे बतायी। मनु ने पृथ्वी के दस भाग बनाये। वसिष्ठ की आज्ञानुसार वे सुद्युम्न को न दे कर, इक्ष्वाकु को दिये (वायु. ८५.२०)। मनु ने मित्र तथा वरुण देवताओं के लिये याग किया। इस कारण इक्ष्वाकु तथा अन्य पुत्र प्राप्त हुए, ऐसी कथा है (विष्णु. ४.१)। वसिष्ठ इक्ष्वाकु राजा का कुलगुरु था (म. आ. ६६.९-१०; ब्रह्माण्ड. ३. ४८.२९; पद्म. सृ. ८.२१९; ४४.२३७. विष्णु. ४.३.१८, वा. रा. उ. ५७)। सूर्यवंश में प्रत्येक राजा के समय, वसिष्ठ के कुलगुरु होने का निर्देश है।

इक्ष्वाकु, अयोध्या का पहला राजा था (वा. रा. अयो. ११०)। इसे मध्यदेश मिला था (ह. वं. १.१०. लिङ्ग १.६५.२८; ब्रह्माण्ड. ३.६०.२०; मत्स्य. १२.१५)। यह क्षुप का पुत्र है ऐसा भी कहीं कहीं उल्लेख हैं। क्षुप ने प्रजापालनार्थ इसे एक खड्ग दी थी (म. शां. १६०. ७२; आश्व. ४.३)। वंशावली में प्रत्यक्ष क्षुप का उल्लेख नहीं है।

एक समय इक्ष्वाकु यात्रा करते हिमालय की तलहटी के पास आया। वहाँ जप करनेवाला कौशिक नाम का ब्राह्मण था। उसका यम, ब्राह्मण, काल तथा मृत्यु के साथ, निष्काम जप के संबंध में संवाद हुआ। उस समय इक्ष्वाकु वहीं था (म. शां. १९२)।

इक्ष्वाकु कुल में पैदा हुए व्यक्तियों के लिये भी, इक्ष्वाकु कुलनाम दिया गया है। अलंबुषा के पति का नाम तृणबिंदु न हो कर इक्ष्वाकु था, ऐसा निर्देश है (वायु. ८६.१५; वा. रा. बा. ४७.११)।

इक्ष्वाकु के सौ पुत्र थे (ह. वं. १.११; दे. भा. ७.९; भा. ९, ६; म. अनु. ५; म. आ. ७५)। इसके ज्येष्ठ पुत्र का नाम विकुक्षि था। इक्ष्वाकु के पश्चात् यही अयोध्या का राजा हुआ। विकुक्षि से निमिवंश निर्माण हुआ। इक्ष्वाकु को दंडक नामक एक विद्याविहीन पुत्र भी था। इसी के नाम से दंडकारण्य बना (वा. रा. उ. ७९; भा. ९.६; विष्णु. ४.२)। इसके दसवें पुत्र का नाम दशाश्व था। वह माहिष्मती का राजा था (म. अनु. २. ६)। विष्णु पुराण में इक्ष्वाकु के एक सौ एक पुत्र होने का निर्देश है (४.२)। इक्ष्वाकु ने अपना राज्य सौ पुत्रों को बाँट दिया (म. आश्व. ४)। इसने शकुनि प्रभृति ५० पुत्रों को उत्तरभारत तथा शांति प्रभृति ४८ पुत्रों को, दक्षिणभारत का राज्य दिया। अयोध्या में इक्ष्वाकु का राज्य तथा वंश बहुत समय तक रहा।

ईक्ष्वाकु वंश में बहुत से महान पुरुष हुए, इस कारण बहुत सारे पुराणों में इनकी वंशावलि मिलती है। पुराणों में दी गयी वंशावलियों में, बहुत साम्य होते हुए भी, रामायण में दी गई वंशावलि से वे भिन्न हैं। पुराणों में इक्ष्वाकु से ले कर, भारतीय युद्ध के बृहद्बल तक भागवतानुसार ८८, विष्णुमतानुसार ९३, तथा वायुमतानुसार ९१, पीढ़ियाँ होती हैं। रामायणानुसार इनमें संख्या की अपेक्षा व्यक्तियों में अधिक भिन्नता है। संशोधकों के मतानुसार वंशावलि की दृष्टि से पुराणों का वर्णन ही अधिक न्यायसंगत होने की संभावना है।

यद्यपि अधिक विस्तार से इसकी वंशावलि उपलब्ध है तथापि वह प्रमुख पुरुषों की है, सब पुरुषों की नहीं ऐसा वहाँ निर्देश है।

(सुमित्र, राम तथा ऐक्ष्वाक देखिये)। इसकी पत्नी सुदेवा (पद्म. भू. ४२)।

इट भार्गव—सूक्तद्रष्टा। इंद्र ने इस के रथ की रक्षा की (ऋ. १०.१७१.१)।

इटत् काव्य—केशिन् दार्भ्य का समकालिक (सां. ब्रा. ७.४)। इतरत्र भी यह नाम आया है (पं. ब्रा. १४.९.१६)।

इडविड—(सू. इ.) शतरथ का दूसरा नाम।

इडविडा—इलविला देखिये।

इडस्पति—(स्वा.) भागवतमतानुसार यज्ञ एवं दक्षिणा का पुत्र।

२. स्वारोचिष मन्वंतर का देव विशेष।

इडा—मनु की कन्या। मनोरवसर्पण के पश्चात्, मनु ने संतति प्राप्ति के लिये यज्ञ किया जिससे उसे पुत्री हुई। उसका नाम इडा था (श. ब्रा. १.६.३.६-११)।

मनु की संबंधी तथा यज्ञतत्त्वों का प्रकाशन करने वाली, इडा नामक एक स्त्री थी। देव तथा असुरों ने अग्न्याधान किया यह सुन कर, उसे देखने के लिये इडा गयी। उसे दोनो स्थानों पर अग्निस्थापना का क्रम विपरीत दिखाई दिया। वह मनु के पास आयी, तथा बोली, 'देव तथा असुरों की तरह तेरा यज्ञ निष्फल न होवे, इसलिये मैं अग्नि की योग्य क्रम से स्थापना करती हूँ।' मनु ने इडा के द्वारा अग्न्याधान करवाया। इडा ने, १. गार्हपत्य, २. दक्षिणाग्नि तथा ३. आहवनीय इस क्रम से अग्नि की स्थापना की इस कारण, मनु का यज्ञ सफल हुआ। वह प्रजा तथा पशुओं से समृद्ध हुआ (तै. ब्रा. १.१.४)। मनु यज्ञ कर रहा था तब उस यज्ञ के कारण देवताओं ने बहुत ऐश्वर्य प्राप्त किया।

एक समय, इडा मनु के पास गयी, तब देवताओं ने प्रत्यक्ष रूप से तथा असुरों ने अप्रत्यक्ष रूप से इडा को निमंत्रण दिया। वह देवताओं के पास गयी। इस कारण सारे प्राणी देवताओं की ओर गये, तथा उन्होंने असुरों का त्याग किया (तै. सं. १. ७.१)।

इतरा—ऐतरेय देखिये।

इदृश्—पांचवे और छठवें मरुद्गण में से एक।

इध्म—(स्वा.) भागवतमतानुसार यज्ञपुत्र।

२. स्वारोचिष मन्वंतर का देव।

इध्मजिह्व—(स्वा. प्रिय) प्रियव्रत तथा बर्हिष्मती के दस पुत्रों में से दूसरा। यह प्लक्षद्वीप का स्वामी था। इसने अपने द्वीप के वर्षसंज्ञक सात भाग किये। ये भाग शिव, यवस, सुभद्र, शांत, क्षेम, अमृक एवं अभय इन सात पुत्रों को क्रमशः उन्हीं के नाम दे कर, दे दिये (भा. ५.२०)।

इध्मवाह—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.२६)। अगस्त्यपुत्र दृढस्यू का दूसरा नाम। इसे ऋतु ने दत्तक लिया था। यह अगस्त्यकुल का एक गोत्रकार था (मत्स्य. २०२)।

इन—अमिताभ देवताओं में से एक।

इंदीवराक्ष वा **इंदीवरविद्याधर**—एक गंधर्व। यह विद्याधराधिप नलनाभ का पुत्र था। यद्यपि ब्रह्ममित्र मुनि ने इसे आयुर्वेद विद्या नहीं दी, तथापि अन्य शिष्यों को पढाते समय इसने वह छुपके से सीखी। इस सीखने में आठ माह ही लगे, इस कारण प्रसन्न हो कर यह हँस पड़ा। आवाज से इसे पहचान कर ब्रह्ममित्र ने, 'तू सात दिनों में राक्षस होगा,' ऐसा शाप दिया। पर इसने बिनति करने पर 'तू रागांध हो कर, अपनी ही संतानों को खाने दौडेगा, तब उनके अस्त्रतेज से तुझे ताप होगा। एवं पुनः यह शरीर प्राप्त कर तू स्वस्थानापन्न भी होगा।' ऐसा इसे उश्शाप मिला।

यह अपनी कन्या को खाने दौडा, तब कन्या के पास से सीखी अस्त्रविद्या के सहारे, स्वरोचि ने उसे पराभूत किया। इससे उसका उद्धार हुआ तथा यह फिर से पूर्ववत् हो गया। उसने अपनी कन्या मनोरमा तथा ब्रह्ममित्र के पास से सीखी विद्या स्वरोचि को दी (मार्क. ६०)। स्वरोचि देखिये।

इंदु—(सू. इ.) विश्वगश्व राजा का पुत्र। इसके तीन नाम क्रमशः आंध्र, चंद्र तथा आर्द्र थे। इसका पुत्र युवनाश्व था।

२. जग मनोमात्र है यह बताने के लिये, सुवर्णजट प्रांत में रहनेवाले काश्यपगोत्रीय इंदु की कथा, भानु ने ब्रह्मदेव को बतायी (यो. वा. ३. ८५-८७)। उस में इसने केवल मनःसंकल्प से, ब्रह्मदेव का श्रेष्ठ पद प्राप्त कर, स्थूल शरीर नष्ट होने पर भी, सृष्ट्युत्पत्ति का क्रम चालू रखा था।

इंदुमती—सिंहलद्वीप के चंद्रसेन राजा की कन्या (मंदोदरी देखिये)।

२. सोमवंशीय आयु राजा की पत्नी। इसका पुत्र नहुष (पद्म. भू. १०४)।

३. बृहद्रथ राजा की पत्नी। पूर्वजन्म में इसका कंकण समुद्र – सरस्वती के संगम में गिरने के कारण, इस जन्म में वह ऐश्वर्य उपभोग कर रही थी। प्रतिवर्ष यह प्रभासक्षेत्र में सुवर्णकंकण डालती थी (स्कंद. ७.१.३७)।

४. कल्याण वैश्य की पत्नी (गणेश. १. ३२)।

५. चंद्रांगद राजा की स्त्री (चंद्रांगद देखिये)।

इंदुल—आह्लाद एवं स्वर्णवती का पुत्र। सात माह के आयु में ही इसे इंद्र स्वर्ग ले गया। इंद्रपत्नी शचि ने वहाँ इसका संगोपन किया इसलिये यह अत्यंत बलवान हुआ। बल्हीककन्या चित्रलेखा से इसका विवाह हुआ (भवि. प्रति. ३.२२-२३)।

इंद्र—इसने मेघों को फोड़ा। इसके लिये त्वष्टा ने वज्र तैयार किया। इसने सूर्य द्यु तथा उषस् को उत्पन्न किया। वृत्रासुर के हाथ तोड कर उसका वध किया तथा जल बहाया। नदियां प्रवाहित की। गायें तथा सोम को जीता। भक्तों को पशु दिये (ऋ. १.३३)। दशद्यु का संरक्षण किया (ऋ. १.३३.१४) श्वित्रो की गायों का रक्षण किया (ऋ. १.३३.१५)।

सामगान से इसे स्फूर्ति मिलती है। यह दासों का शत्रु है। इसके रथ में घोडे लगे रहते हैं जिसके चलने से मेघों की गडगडाहट होती है। पृथ्वी सपाट तथा स्थिर होती है। त्रित से इसकी मित्रता थी। अंगिरस तथा इंद्र साथ साथ रहते हैं (ऋ. १.११)। इसने जन्मते ही देवताओं का रक्षण किया। हिलनेवाली पृथ्वी स्थिर की। अंतरिक्ष की व्यवस्था की तथा द्यु को आधार दिया। अहि को मार कर सप्तसिंधुओं को मुक्त किया। बल से गायें छुडाईं। बिजली उत्पन्न की। शंबर को चालीस वर्षों के पश्चात् ढूंढ निकाला (ऋ. २.१२)। इसे सोम बहुत अच्छा लगता है (ऋ. २. १४)। अंगिरा ने स्फूर्ति दी इसलिये इंद्र, बल को मार सका (ऋ. २.१५.८)। इसने सूर्य का चक्र फेंक कर एतश को बचाया (ऋ. ४.१८. १४)।

सोम पीने के लिये इंद्र को निमंत्रित किया जाता था (अपाला तथा तुर्वश देखिये)। इंद्र की उपासना न करनेवालों को, अनिंद्र कह कर निंदा करते थे (ऋ. ७. १८.१६)। नेम नामक ऋषि ने इंद्र प्रत्यक्ष न दिखने के कारण, इंद्र नहीं है ऐसा प्रतिपादित किया तब इंद्र स्वयं को प्रमाणित करने, प्रत्यक्ष प्रकट हुआ (ऋ. ८.१००)।

शत्रु—वेदों में इसके अनेक शत्रु हैं। उनका मुख्य दुर्गुण है पानी को रोकना। वे हैं अनर्शनि, अर्णव, अर्बुद, अहि, अहिशुव, और्णवाभ, अश्न, इलीबिश, करंज, कुयव,

क्रिविं, चुमुरि, दभीक, धुनि, नमुचि, नार्मर, पर्णय, पिप्रु वर्चिन्, वल, शंबर आदि।

शस्त्रसंभार—इसके शस्त्र वज्र, अद्रि, दधीचि की अस्थि (ऋ. १. ८४. १३), धनुष्बाण, माला, फेन, बर्फ आदि हैं।

यह जगदुत्पादक तथा सृष्टिक्रम निश्चल करनेवाला है। इसकी पत्नी इंद्राणी (ऋ. १०. ८६)। सीता नामक स्त्री का भी उल्लेख है (पा. गृ. सू. १७. ९; शची देखिये)। ये अनेकों का पुत्र हुआ था (शृंगवृष देखिये)।

पदमाहात्म्य—प्रत्येक मन्वंतर में इंद्र रहता है। वह भूः, भुवः, स्वः इन तीन लोकों का अधिपति है। सौ यज्ञ कर इंद्रपद प्राप्त होता है (नहुष तथा ययाति देखिये)। यह वज्रपाणि, सहस्त्राक्ष, पुरंदर तथा मघवान् होता है। प्रजासंरक्षण उसका मुख्य कार्य होता है। प्रत्येक मन्वंतर में इंद्र भिन्न भिन्न हो कर भी उनके गुण तथा कार्य एक से रहते हैं। सप्तर्षि इनके सलाहगार रहते हैं एवं गंधर्व अप्सरायें इनका ऐश्वर्य होता है (वायु. १००.११३-११४)। जब ये जगत की व्यवस्था नहीं कर पाते तब सारे अवतार इनकी मदद को आते हैं (मनु देखिये)। सौ यज्ञ करने पर इंद्रपद मिलता है, इसलिये जब किसी के यज्ञ पूरे होने लगते है, तब यह अश्वमेध का घोडा चुरा कर, विघ्न उपस्थित करता है (सगर, पृथु, रघु)। उसी तरह कोई कठिन तपस्या करता है, तो डर के कारण यह अप्सरायें भेज कर, तपभंग करता है। हिरण्यकशिपु, बलि, एवं प्रह्लाद ये तीनों असुरों में से भी इंद्र हुए थे (मत्स्य. ४७. ५५-८९; तारक देखिये)। इस से इसका राजकीय स्वरूप अच्छी तरह से व्यक्त होता है। विशेषतः त्रिशंकु, वसिष्ठ, विश्वामित्र, वामदेव, रोहित, गौतम, गृत्समद, रजि, भरद्वाज, उदारधी, सोम, इंदुल तथा अर्जुन इत्यादि प्राचीन तथा अर्वाचीन व्यक्तियों के चरित्र से इन्द्र की पूर्ण कल्पना कर सकते हैं।

पौराणिक कल्पनाएं— इंद्रविषयक पौराणिक कल्पना निम्नलिखित विवरण से व्यक्त हो जायेगी। अदिति पुत्र (कश्यप देखिये)। इस का शक्र नामांतर है (भा. ६.६)। श्रावण माह का सूर्य (भा. १२.११.१७)। देवताओं का राजा (भा. १.१०.३)। यही आज का पुरंदर इंद्र है। वर्षा का देव। एक बार गरुड की पीठ पर बैठ कर नाग जा रहे थे। गरुड उड कर इतना ऊंचा गया कि, सारे नाग सूर्यताप से मूर्च्छित हो कर पृथ्वी पर आ गिरे। माता कद्रू ने इंद्र की स्तुति कर, ताप शमनार्थ वर्षा करायी (म. आ. २१.)। भीमद्वादशी व्रत करने के कारण इसे इंद्रत्व मिला (पद्म. सृ. २३)। यह दक्ष के यज्ञ में गया था एवं इसने वीरभद्र से पूछा था कि वह कौन है (ब्रह्मां. १२९)। मंदार पर्वत के पंख इसने नष्ट किये थे (स्कंद. १.१९.९)। विश्वधर वणिक् के पुत्र के मरने पर वह शोक करने लगा। इसे देख कर यम ऊब कर अपना कार्य छोड़, तप करने लगा। इस कारण पृथ्वी पर पापी लोक अत्यधिक पापकर्म करने लगे। उन्हें मृत्यु नहीं आती थी। इससे पृथ्वी त्रस्त हो कर इंद्र के पास गयी। इंद्र ने यम की तपस्या भंग करने, गणिका नामक अप्सरा भेजी, पर उससे कोई लाभ न हुआ। तब पिता ने उसे समझाया (ब्रह्म. ८६)। एक बार कश्यप पुत्रकामेष्टि यज्ञ कर रहा था। देवतादि उसकी सहायता कर रहे थे। वालखिल्य तथा इन्द्र भी मदद कर रहे थे। इंद्र जल्दी जल्दी जा रहा था सारे वालखिल्य मिल कर एक समिध ले जा रहे थे। मार्ग में एक गाय के खुर जितने गड्ढे में संचित पानी में गिर कर, ये डुबने उतराने लगे। यह देख कर इंद्र तिरस्कारपूर्वक हँसा। यह देख कर वालखिल्य क्रोधित हो, दूसरे इंद्र को उत्पन्न करने के हेतु तप करने लगे। तब इंद्र कश्यप की शरण में आया। उसके माध्यम से वालखिल्यों का क्रोध शांत कराया (मध्यम तथा वालखिल्य देखिये; म. आ. २६)।

गरुड से संबंध—गरुड ने अपनी माँ को दास्यबंधनों से मुक्त करने के लिये माता के दास्य के बदले नागों को अमृत ला देने का वचन दिया, तथा वह अमृत लाने के लिये स्वर्ग लोक गया। गरुड अमृत लिये जा रहा है यह देख कर, इंद्र ने वज्र फेंका पर उसका कोई असर न हुआ। गरुड की शक्ति देख कर इंद्र ने उससे मित्रता करने की सोची। तब गरुड ने उसे बताया, कि यदि अमृत वापस चाहते हो, तो उसे बडी युक्ति से चुराना। इंद्र ने युक्ति से काम लिया तथा अमृत फिर वापस ले गया और गरुड को वर दिया कि सर्प तेरे भक्ष्य होंगे (म. आ. ३०)।

महाशनिवध—हिरण्यपुत्र महाशनि इंद्र को जीत कर इंद्राणी सह उसे बांध कर लाया। महाशनि वरुण का दामाद था, इसलिये देवताओं ने वरुण से कह कर इंद्र को छुडाया। इंद्राणी के कहने पर इंद्र ने शिव की स्तुति की। शिव ने विष्णु की स्तुति करने को कहा। इंद्र ने विष्णु की स्तुति की। फलतः विष्णु तथा शिव के अंश से एक पुरुष गंगा के जल से उत्पन्न हुआ, जिसने महाशनि का

वध किया। इंद्र हमेशा उसके पीछे पीछे रहने लगा। इस कारण एक बार इंद्राणी से इसका प्रेम कलह हुआ था (ब्रह्म. १२९)।

त्रिपुर उत्पत्ति--वाचक्नवि मुनि की स्त्री मुकुंदा रुक्मांगद राजा पर मोहित थी। इंद्र ने रुक्मांगद का रूप धारण कर उससे संभोग किया। आगे इसी वीर्य से मुकुंदा को गृत्समद उत्पन्न हुआ। गृत्समद का पुत्र त्रिपुरासुर। त्रिपुरासुरादिकों से गणेश ने इंद्र को बचाया (गणेश १. ३६-४०)।

सुकर्माख्यान--सुकर्मा के हजार शिष्य अनध्याय के दिन अध्ययन करते थे, इसलिये इन्द्र ने उनका वध किया। सुकर्मा ने प्रायोपवेशन प्रारंभ किया तब इंद्र ने उसे वर दिया, कि इन हजारों के साथ दो शिष्य और भी उत्पन्न होंगें जो सुर होंगें। ये ही पौष्यंजिन् एवं हिरण्यनाभ (कौशिल्य) है (वायु. ६१.२९-३३; ब्रह्माण्ड. ३५.३३-३७)।

यज्ञहविर्भाग--च्यवन को अश्विनीकुमारों ने दृष्टि दी तथा जरारहित किया, इसलिये शर्याति ने उन्हें हवि दिलवाने का प्रयत्न किया। उस समय इंद्र ने बहुत बाधायें डाली, परंतु इंद्र की एक न चली, क्यों कि, जब वह वज्र मारने लगा, तब च्यवन ने उसके हाथ की हलचल बंद करा दी, तथा उसे मारने के लिये मद नामक असुर उत्पन्न किया। तब इंद्र उसकी शरण में गया, तथा अश्विनीकुमारों को यज्ञीय हवि प्राप्त करने का अधिकार दिया (म. व. १२५-१२६)।

मरुत्ताख्यान--मरुत्त ने एक बार यज्ञ किया। उसने प्रथम बृहस्पति को बुलाया परंतु इंद्र के यहां जाना है, ऐसा कह कर उसने कहा बाद में आऊंगा। तब मरुत्त ने उसके भाई संवर्त को निमंत्रित कर यज्ञ प्रारंभ किया। बृहस्पति को जब यह पता चला तब उसने इंद्रसे कहा कि, यह यज्ञ ही नहीं होने देना चाहिये। इंद्रने तुरंत धावा बोल दिया, परंतु संवर्त ने अपने प्रभाव से उसे विकलांग कर दिया। इंद्र ने वहां आने के पश्चात् स्वतः सदस्य का काम किया (म. आश्व. १०)। इसने भंगास्वन को स्त्री बना दिया (भंगास्वन देखिये)।

सागरमंथन--दुर्वासा ऋषि ने इसे एक माला दी थी। इंद्र के द्वारा उसका अनादर हुआ। 'तू ऐश्वर्य भ्रष्ट होगा,' ऐसा उसे शाप मिला। इसी समय अपने घर आये गुरु बृहस्पति का इसने उत्थापन द्वारा मान नही किया, इसलिये बृहस्पति वापस चले गये। बृहस्पति के आने के कोई चिन्ह न देख, नारद ने उसे बताया कि, तू शीघ्र ही ऐश्वर्यभ्रष्ट होगा। बलि इस समय इस पर आक्रमण करने निकला। इंद्र का सारा वैभव जीत कर वह ले जा रहा था। जाते जाते राह में वैभव समुद्र में गिर पडा। इंद्रादि देवताओं ने यह बात विष्णुजी से कही। विष्णु भगवान ने कहा कि, बलि को साम तथा मधुर वचनों में भुला कर उसे समुद्रमंथन करने के लिये उद्युक्त करो। इंद्र बलि के पास पाताल में गया। वहां शरणागत की तरह कुछ समय रह कर अवसर पा, बडी युक्ति से उसने बलि से समुद्रमंथन की बात कही। बलि को समुद्रमंथन असंभव लगता था। तब समुद्रमंथन किस तरह हो सकता है इस के बारेमें आकाशवाणी हुई। बलि समुद्रमंथन के लिये तयार हो गया। मंदराचल को मथनी बनने के लिये बुलवाया, तथा वह तैयार भी हो गया। तब विष्णु जी ने उसे गरुड पर रख कर लाया। ऐरावत, उच्चैःश्रवा, पारिजातक तथा रंभादि समुद्र से निकाले। चौदह रत्नों में से चार रत्न इसने लिये (भा. ८. ९; स्कंद १. १. ९)।

वृत्र उत्पत्ति--बृहस्पति लौट नहीं आ रहे थे, इसलिये इंद्र ने विश्वरूपाचार्य को उसके स्थान पर नियुक्त किया। उसकी मां दैत्यकन्या थी, इसलिये विश्वरूप का स्वाभाविक झुकाव दैत्यों की ओर था। देवताओं के साथ साथ दैत्यों को भी वह हविर्भाग देता था। इंद्र को यह पता लगते ही उसने विश्वरूप के तीनों सिर काट डाले (विश्वरूप देखिये)। अपना पुत्र मार डाला गया यह देख त्वष्टा ने इंद्रका वध करने के लिये वृत्र नामक असुर उत्पन्न किया तथा हविर्भाग उसे न मिले ऐसा प्रयत्न किया। उसने इंद्र पर कई बार चढाई की तथा कई बार उसे परास्त किया। एक बार तो उसने इंद्र को निगल भी लिया। इसका कारण यह था कि, इंद्र एक बार प्रदोषव्रत में महादेव जी की पिंडी लांघ गया था (स्कन्द. १. १. १७)।

वृत्रवध--वृत्रासुर ने इंद्र को हराया इस लिये गुरु के उपदेशानुसार इंद्र ने साभ्रमती के तट पर दुर्धर्षेश्वर की प्रार्थना की। तब शंकर ने इसे पाशुपतास्त्र दिया, जिससे उसने वृत्रासुर का बध किया (पद्म. उ. १५३)। पराभव हुआ तब इंद्र शंकर की शरण गया। शंकर ने उसे वज्र दिया जिससे उसने वृत्रासुर का बध किया (पद्म. उ. १६८)। इंद्र ने वृत्रासुर के बध के लिये दधीचि से अस्थियाँ मांगी। विश्वकर्मा ने उससे वज्र तैयार किया।

षण्डामर्क, वरत्री तथा त्वष्टा इन दैत्ययाजकों को इंद्र ने जला कर मारा (ब्रह्माण्ड ३.१.८५; दधीचि देखिये)।

ब्रह्महत्या मुक्ति—विश्वरूप, वृत्रासुर तथा नमुचि इनके वध के कारण, इंद्र को ब्रह्महत्या लगी। इसलिये डर कर वह कहीं तो भी कमल के अंदर छुप गया। इस समय दो इंद्र हुए। नहुष तथा ययाति किन्तु उनका शीघ्र ही पतन हुआ (स्कंद १.१.१५)। यह ब्रह्महत्या किस तरह दूर हुई, इसका वर्णन पुराणों में भिन्न प्रकार से दिया गया है। ब्रह्महत्या के चार भाग किये गये। वे भूमि, वृक्ष जल एवं स्त्री को एक एक वरदान दे कर दिये। पृथ्वी पर आप ही आप गड्ढों का भरना तथा उस पर क्षार कर्कट के रूप में जमना, वृक्ष जहां से टूटे वहां अंकुरों का फूटना तथा गोंद का निकलना, जिसमें पानी मिलाया जाये उसका बढना एवं उसमें फेन आना, स्त्रियों को गरोदर रहते हुए भी प्रसूति काल तक संभोग करने की क्षमता परंतु रजोदर्शन होना, ये वरदान तथा ब्रह्महत्या के परिणाम है (भा ६.९.; स्कंद १.१.१५; लिङ्ग. २.५१)। 'रक्षाँसि ह वा' इस मंत्र में इस संबंध में निर्देश किया गया है। ये पातक विश्वरूप की हत्या का है। परंतु पद्मपुराण में यह विवरण वृत्रासुरहत्या के पातक पर दिया गया है (३.१६८)। इसी पुराण में इन पातकों के निवारणार्थ इसने तप किया तथा पुष्कर, प्रयाग, वाराणसी आदि तीर्थों पर स्नान किया ऐसा दिया गया है (पद्म. भू. ९१)। यह पातक नष्ट हो, इसलिये इसने अश्वमेध यज्ञ किया। नमुचि के वध से लगी ब्रह्महत्या के शमनार्थ अरुणा पर स्नान किया (म. श. ४२.३५)। इंद्रागम तीर्थ (इसके आने के कारण यह नामकरण हुआ) में स्नान करने से इसके पाप दूर हुए (पद्म. उ. १५१)। त्रिस्पृशा एकादशी के व्रत के कारण, इसके पाप दूर हुए (पद्म. उ. ३४; अहल्या देखिये)।

पुरंजयवाहन—एक बार देवासुरसंग्राम हुआ जिसमें देवताओं को असुरों पर कब्जा पाना कठिन लगा तब सूर्यवंशी पुरंजय को, मदद के लिये उन्हों ने निमंत्रित किया। पुरंजय ने कहकर भेजा कि, यदि इंद्र मेरा वाहन बने तो मैं आऊंगा। इंद्र ने पहले तो आनाकानी की, पर अंत में मान गया। तथा महावृषभ का रूप धारण किया (भा. ९. ६)। हिरण्यकशिपु ने स्वर्ग जित लिया तथा देवताओं को कष्ट दिये, इसलिये विष्णु ने नृसिंह का रूप धारण कर उसका वध कर के, इंद्र को स्वर्ग वापस दिया। शत्रुओं से कष्ट न होवे, इसलिये इंद्र ने यमुना के तट पर हजारों यज्ञ किये, जिससे ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश प्रसन्न हुए (पद्म. उ. १९९)। प्रह्लाद आदि दैत्यों ने एक बार इन्द्र का स्वर्ग जीत लिया, तब रजि ने उसे वापस दिलवाया।

जयापजय—इस उपकार के लिये, तथा प्रह्लादादि दैत्यों से रक्षा होती रहे, इसलिये इसने उसे ही इंद्रपद दे दिया परंतु आगे चल कर, उसके पुत्र इंद्रपद वापस नहीं दिये, बृहस्पति ने अभिचारविधान से उनकी बुद्धि भ्रष्ट की। भ्रष्टबुद्धि के कारण वे भ्रष्टबल हो गये हैं ऐसा देख कर इंद्र ने उनका वध किया (भा. ९. १७; मत्स्य. ४४; ब्रह्म. ११)। पुराणों में नहुष कब इंद्र हुआ इस संबंध में मतभेद होने के कारण, उसका निश्चित समय ठीक समझ में नहीं आता। इंद्र एक बार बलि को जीत कर उतथ्य के आश्रम में गया। वहां उसकी सुंदर स्त्री को शैय्या पर सोये देख, उसने उससे जबरदस्ती संभोग किया। स्त्री गरोदर थी। अंतर्गत गर्भ ने अपना पतन न हो इसलिये योनिद्वार अपने पैरों द्वारा अंदर से बंद कर लिया, इस कारण इंद्र का वीर्य धरती पर गिरा। यह अपने वीर्य का अपमान हुआ देख, इंद्र ने गर्भ को जन्मांध होने का शाप दिया (दीर्घतमस् देखिये)। परंतु इसके कारण हतवीर्य होकर, इंद्र मेरु की गुफा में जा छिपा। इस समय दैत्यों ने बलि को इंद्रासन पर बैठाया। सारे देवताओं ने गुफा के पास जा कर उसे वापस लाया तथा बृहस्पतिद्वारा अक्षय्यतृतीया व्रत उससे करवा कर, उसे पूर्ववत् ऐश्वर्यसंपन्न बनाया (स्कंद. २. ७. २३; बृहस्पति देखिये)।

चित्रलेखा तथा उर्वशी को केशी दैत्य भगा ले गया। पुरूरवस् ने उन्हें छुड़ाया तथा उर्वशी इंद्र को दी (मत्स्य. २४. २५)। कितव नामक एक दुराचारी मनुष्य मृत हुआ। मरते समय उसे अपने दुराचार पर पश्चात्ताप हुआ, इसलिये यम ने उसे तीन घंटे के लिये इंद्रपद दिया। उतने समय में इसने सारी चीजें ऋषि आदि लोगों को दान में दीं। इंद्र जब फिर से इंद्रपद पर आया, तब उसने यम से सारी चीजें वापस मँगवा लीं। कितव आगे चल कर बलि हुआ (स्कंद. १. १. १९)। हिरण्यकशिपु तथा हिरण्याक्ष का वध इंद्र ने करवाया, इसलिये दिति ने इंद्रघ्न पुत्र निर्माण करने की तयारी चालू की। इंद्र ब्राह्मणवेश में उसकी सेवा करने लगा। योग्य अवसर पा कर उसने दिति के गर्भ के उनपचास टुकडे किये। तदनंतर गर्भ के बाहर आ कर सारी बात उसे

बतायी। तब उसने इनकी नियुक्ति विभिन्न वायुओं पर करवा ली, तथा बंधुभाव से उनसे व्यवहार करने का वचन ले कर इसे छोड दिया (मरुत् देखिये; मत्स्य. ७-८)। दिति ने वज्रांग नामक पुत्र उत्पन्न कर, उसे इंद्र को मारने भेजा। उसने इंद्र को बांध कर लाया तथा उसे मारने वालाही था कि, ब्रह्माजी ने बीच में पड़ कर मधुर शब्दों द्वारा उसे रोका (वज्रांग देखिये)। मेघनाद ने इंद्र को पराजित किया (इंद्रजित् देखिये)।

इंद्रने वज्रांग स्त्री वज्रांगी को कष्ट दिये। इसलिये वज्रांग ने उससे तारक नामक पुत्र उत्पन्न कर, उसे इंद्र पर आक्रमण करने भेजा। उसने इंद्र से बहुत समय तक युद्ध किया। इंद्र ने जंभासुर को पाशुपतास्त्र से मारा। तारक ने सब देवताओं को बांध कर लाया बाकी लोगों ने बंदरों का रूप धारण किया। उनके हावभावों से संतुष्ट हो कर, तारक ने सब देवताओं को छोड़ दिया। इसी समय तारक ने इंद्रपद का उपभोग लिया था (स्कंद १.१. १५-२१)। गौतम की स्त्री अहल्या ने उत्तंक को सौदास राजा के पास से कवचकुंडल लाने को कहा। राह में इंद्र ने वृषभारुढ पुरुष के रूप में उसे दर्शन दिया। उत्तंक को वृषभ का पुरीषपान करने को कहा। उत्तंक को नाग लोक में अश्वारोही बन कर फिर से दर्शन दिये। अश्व का अपानद्वार उससे फुंकवाकर वासुकि आदि नागों को शरण ला कुंडल फिरसे प्राप्त करा दिये। गुरु के घर जल्दी पहुंच जावे इसलिये इंद्र ने उत्तंक को वही घोडा दिया जिसके कारण क्षणार्ध में वह गुरुगृह पहुंच गया। इस कथा में वृषभ माने अमृतकुंभ तथा उसका पुरीष, अमृत है। वह पुरुष इंद्र एवं अश्व अग्नि है (म. आ. ३)। सुमुख को इसने पूर्णायु किया इसलिये गरुड उस पर नाराज हुआ। विष्णुजी की मध्यस्थता ने इस का पक्ष सम्हाला गया (गरुड देखिये)। एक बार इंद्र तथा सूर्य भ्रमण कर रहे थे। तब एक सरोवर में स्नान करने के कारण, स्त्री बने ऋक्षरज पर यह मोहित हुआ तथा उसके केशों पर इन्द्र का वीर्य जा गिरा। इस कारण तत्काल एक पुत्र उत्पन्न हुआ। वही वाली है (वालिन् देखिये)। राम-रावण युद्ध के समय जब रावण रथारूढ हो कर आया तब इन्द्र ने सारथीसहित अपना रथ भेजा था (म. व. २७४)।

यह दमयंती के स्वयंवर में गया था (म. व. ५१; नल देखिये)। इन्द्र के प्रसाद से कुंती को अर्जुन उत्पन्न हुआ (म. आ. ९०.६९)। नंदादि गोप लोगों द्वारा कृष्ण ने गोवर्धनयाग करा कर इंद्र का अपमान किया (भा. १. ३-२८; १०. २५. १९; ब्रह्म. १८८)। अर्जुन से मिल कर दिव्यास्त्र प्राप्त कर लेने को कहा (म. व. ३९.४३)। कर्ण के शरीर पर कवच कुंडल होने के कारण वह अजिंक्य तथा अवध्य है ऐसा जान कर ब्राह्मण-रूप से उसके पास जा, उसकी दानशूरता से संतुष्ट हो कर, उसे इसने एक अमोघ शक्ति दी (कर्ण देखिये)। सारे देवता इंद्र को छोड कर दूसरे को इंद्रपद दे रहे हैं यह देख इंद्राणी ने बृहस्पति को शाप दिया कि, तेरे जीते जी इंद्र तेरी स्त्री से एक पुत्र उत्पन्न करेगा। इस कृत्य के कारण गुरुपत्नी समागम का इसे दोष लगा (स्कंद. १.१. १९)।

इस पातक का क्षालन मृत्यु के सिवा होना संभव नहीं इस लिये, मृत्यु होने तक पानी में डूब कर रहने के लिये बृहस्पति ने कहा (स्कंद. १.१.२१)।

पुराणों में स्थान—पुराणों में इंद्र को प्रथम स्थान नहीं है परंतु त्रिमूर्ति के पश्चात् है। यह अंतरिक्ष तथा पूर्व दिशा का राजा है। यह बिजली चलाता तथा फेंकता है, इंद्रधनुष सज्जित करता है। सोम रस के लिये इसे तीव्र आसक्ति है। असुरों से युद्ध करता है। असुरों का इसे भय लगा रहता है।

अधिकार—यह रूपवान है। श्वेत अश्व या हाथी पर वज्र धारण कर सवारी करता है। प्रत्यक्ष रूप से इसकी पूजा नहीं होती है। शक्रध्वजोत्थान त्योहार में इसकी पूजाविधि है। इसका निवासस्थान स्वर्ग, राजधानी अमरावती, राजवाडा वैजयंत, बाग नंदन, गज ऐरावत, घोडा उच्चैःश्रवा, रथ विमान, सारथि मातली, धनुष्य शक्रधनु एवं तलवार परंज है।

परस्पर संवाद—बृहस्पति ने बताया कि, सब गुणों का अंतर्भाव साम में होता है (म. शां. ८५.३ कुं.) उसका उपयोग शत्रु के साथ करना चाहिये (म. शां. १०४)। प्रह्लाद ने अपने शीलबल से इंद्रपद फिर प्राप्त किया। उस समय इंद्र ने मोक्षप्राप्ति का श्रेष्ठ उपाय बताया। इससे भी श्रेष्ठ ज्ञान है ऐसा शुक्र ने बताया तथा उससे भी अधिक श्रेष्ठ शील है ऐसा प्रह्लाद ने बताया (म. शां. १२४-१२९ कुं.)। इसका एक बार महालक्ष्मी से संवाद हुआ (म. शां. २१८ कुं.)। नमुचिमुनि ने भगवान के चिंतन से मिलनेवाला श्रेय इसे बताया (म. शां. २१६)। इसका महाबलि से भी संवाद हुआ था (म. शां. २१८ कुं.)। मांधाताने इसे राजधर्म बताया (म. शां. ६४ कुं.)।

युद्ध में मृत्यु अर्थात स्वर्गप्राप्ति ऐसा अंबरीष ने बताया (म. शां. ९९ कुं.)। अग्नि ने इसे ब्राह्मण तथा पतिव्रता का महत्त्व बताया (म. अनु. १४ कुं.)। शंबर राजर्षि ने इसे ब्राह्मणमाहात्म्य बताया (म. अनु. ७१ कुं.)। प्रशंसनीय क्या है यह एक शुक पक्षी ने बताया (म. अनु. ११ कुं.)। किसी भी प्रकार की नौकरी के लिये आवश्यक गुण मातलि ने इसे बताये (म. अनु. ११ कुं.)। धृतराष्ट्र गंधर्व के रूप में, गौतम ने इस से संवाद किया (म. अनु. १५९ कुं.)। ब्राह्मण्यप्राप्त्यर्थ इंद्र को उद्देशित कर, मतंग ने तप किया, जिससे उसे ब्राह्मण्य प्राप्त हुआ (म. अनु. ४.१–१६ कुं.)।

कृष्णसंबंध—कृष्ण, नरकासुर को मार कर सत्यभामासहित नंदनवन पर से जा रहा था, तब पारिजातक वृक्ष उसे दिखाई पडा, जिसे वह उखाड कर ले गया (ह. वं. २.६४)। उसने इंद्र से वह वृक्ष पहले मांगा तब इंद्र आनाकानी करने लगा। इन्द्र ने जयंतसहित कृष्ण से युद्ध किया परंतु कृष्ण ने इसे पराजित कर दिया तथा पारिजात वृक्ष ले गया (ह. वं. २.७५)। ऐसी परस्पर विरोधी घटना एक ही ग्रंथ में दी है। इसे जयंत को छोड़, ऋषभ एवं मीढुष ऐसे दो पुत्र थे (भा. ६.१८.७)।

ग्रंथनिर्मिति—इंद्र ने ब्रह्मकृत राजनीतिशास्त्र संबंधी 'वैशालाक्ष' ग्रंथ को सक्षिप्त कर, 'बाहुदंतक' नामक पांच हजार अध्यायों का संक्षिप्त ग्रंथ बनाया (म. शां. ५९.८५–८९)।

वैद्यक शास्त्र में भी इंद्र के नाम पर, अनेक औषधियों के पाठ हैं।

२. **वायु का शिष्य।** इसका शिष्य अग्नि (वं. ब्रा. २)।

इंद्र मुष्कवत्—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.३)।

इंद्र वैकुंठ—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.४८–५०)।

इंद्रजानु—रामचंद्रजी की सेना का एक वानर। यह ११ करोड वानरों का स्वामी था।

इंद्रजित्—लंका के राजा रावण तथा मंदोदरी का ज्येष्ठ पुत्र। नाम मेघनाद, तथापि इन्द्र को जीतने के कारन, इसका इंद्रजित् नाम पडा। इसी नाम से इसका उल्लेख सर्वत्र किया जाता है (म. व. २७०.१२; आ. रा. सा. ५३; वा. रा. उ. २९–३०)। जन्मते ही इस ने मेघ सी गर्जना की थी, इसलिये मेघनाद नाम रखा गया था (अध्या. रा. उ. १२)।

यज्ञ—मेघनाद स्वभावतः भयंकर था। युवक होते ही इसने शुक्राचार्य की सहायता से निकुंभिला में अश्वमेध तथा अग्निष्टोम, बहुसुवर्णक, राजसूय, गोमेध, वैष्णव, माहेश्वर ये सात यज्ञ किये जिससे उसे शिवप्रसाद से दिव्यरथ, धनुष्यबाण, शस्त्र, तामसी माया इत्यादि प्राप्त हुई। इसने और भी यज्ञ करने का मन में विचार किया था, परंतु रावण देवताओं से द्वेष करता था, इसलिये देवताओं को हविर्भाग देना इष्ट न था। इस कारण इंद्रजित् को और यज्ञ करते न बने (वा. रा. उ. २५)।

इंद्र पर जय—देवताओं को जीतने के लिये रावण स्वर्गलोक गया था। वहां रावण के मातामह का वध हुआ तथा पराजय के चिन्ह दिखाई देने लगे। मेघनाद ने आगे बढ कर युद्ध किया। पहले तो उसने इंद्रपुत्र जयंत को पराजित किया तथा इंद्र को शस्त्रास्त्रों से जर्जर कर, उसे बांध लिया तथा लंका ले आया। सारे देवता ब्रह्मदेव को साथ ले कर लंका गये तथा मेघनाद को, इंद्र को छोड़ देने के लिये कहने लगे। तब इसने अमरत्व मांगा। आकारवाले सारे पदार्थ नाशवान हैं इसलिये अमरत्व दुर्लभ है ऐसा ब्रह्मदेव ने कह कर दूसरा वर मांगने को कहा, इस पर उसने वर मांगा—"जब भी मैं अग्नि में हवन करूं तब अग्नि में से अश्वसहित दिव्य रथ निकला करे तथा जब तक उस रथ पर आरूढ रहूं तब तक मैं विजयी एवं अमर रहूं"। यह वर दे कर ब्रह्मदेव इंद्र को मुक्त करा कर इंद्रपद पर स्थापित किया। उस दिन से मेघनाद का इन्द्रजित् नाम पड़ा (वा. रा. उ. २९–३०)।

हनुमान से युद्ध—रावण ने सीता को लंका में लाया। तब उसका पता लगाने के लिये राम की आज्ञा से मारुति लंका में आया। उसने अशोकवन विध्वंस कर, रावण पुत्र अक्ष तथा अनेक राक्षसों को मारा। रावण के दुःख के निवारणार्थ इंद्रजित् ने वहाँ जा कर, मारुति को ब्रह्मास्त्र से बद्ध कर रावण की सभा में लाया। वास्तव में ब्रह्मास्त्र का मारुति पर कुछ भी परिणाम नहीं हुआ था यह बात इंद्रजित् को भी समझ गयी थी। मारुति ने रावण की सभा देखने, तथा उसका भाषण सुनने के उद्देश्य से मैं बद्ध हुआ हूं ऐसा दर्शाया। धर्मबल की सहायता से इंद्रजित् ने यह भी जान लिया था कि, मारुति को अमरत्व प्राप्त है। रावण की सभा में हनुमान को जला देने की सलाह उसके मंत्रियों ने दी परंतु बिभीषण ने सलाह दी कि, वानरों को पूंछ प्रिय होती है, अतः हनुमानजी की पूंछ जलाई जाये (वा. रा. सुं. ४८.५२)।

बिभीषण की भर्त्सना—बिभीषण ने रावण को सलाह दी कि, सीता को राम के पास पहुंचा कर राम से मित्रता कर लें। यह बात किसी को नहीं रुची। उस समय इंद्रजित् ने बिभीषण की बहुत भर्त्सना की। इस पर बिभीषण ने इंद्रजित् को युद्ध से परावृत्त होने का उपदेश दिया।

नागपाश—सीता की खोज लगाने पर मारुति किष्किंधा गया। रामचंद्रजी सुग्रीव की वानरसेनासहित लंका आये तब इंद्रजित् ही प्रथम युद्ध करने आगे आया। अंगद से उसका युद्ध हुआ, जिसमें यह अदृश्य हो कर लड़ता रहा तथा रामलक्ष्मण को नागपाश में बांध कर, सारी वानर सेना को मूर्च्छित कर लंका चला गया (वा. रा. यु. ४५)।

युद्ध—देवांतक, नरांतक आदि रावणपुत्र, कुंभकर्ण, महापार्श्व, महोदर इ. जब मारे गये, तब रावण बहुत दुखित हुआ। उस समय इंद्रजित् उसे सांत्वना दे कर युद्ध करने चल पड़ा। पहले यह शस्त्रास्त्रों को अभिमंत्रित करने निकुंभिला गया। युद्धभूमि पर आ कर राम की सेना को गुप्त रूप से कष्ट देने लगा तथा इस युद्ध में उसने सडसठ करोड़ वानरों को एक प्रहर में मार डाला राम एवं लक्ष्मण को मूर्च्छित कर, लंका वापस चला गया (वा. रा. यु. ७३)।

मायावी युद्ध—मकराक्ष की मृत्यु के बाद, रावण ने इसे फिर से, युद्ध करने के लिये भेजा। राम की सेना को बहुत कष्ट दिये। मायावी सीता को निर्माण कर उसे रथ पर बैठाया, जो दीनवाणी में राम राम कह रही थी। फिर उसका उसने वध किया, जिससे राम तथा अन्य लोग दुखित हुए (वा. रा. यु. ८१)।

दिव्यरथ—बिभीषण ने सबको सांत्वना दी कि, यह सारी घटना मायावी है। तत्पश्चात् इंद्रजित् निकुंभिला जा कर हवन करने लगा। इस कार्य में कोई विघ्न उपस्थित न हो इसलिये उसने बहुत से राक्षसों को रक्षा करने को रखा। बिभीषण की सूचनानुसार रामचंद्रजी ने लक्ष्मण तथा हनुमान को, वानर सेना दे कर, निकुंभिला भेजा। उन लोगों ने राक्षसोंका संहार कर यज्ञभंग किया। इंद्रजित् का यज्ञ पूर्ण होनेवाला ही था अतः उसने ध्यान नहीं दिया, परंतु जब वानरों ने उसके शरीर को छिन्नविच्छिन्न करना प्रारंभ किया, तब विवश हो कर वह क्रोधित हो कर उठा, तथा वानरों को उसने मार भगाया। अदृश्य होने के लिये यहाँ उसका वटवृक्ष था। उस बाजू वह जाने लगा, तब बिभीषण ने हनुमानादि वानरों को उसे रोकने के लिये कहा। बिभीषण के कारण यह सारा हो रहा है यह जान कर, इंद्रजित् उसका वध करने के लिये प्रवृत्त हुआ। स्वकीयों से युद्ध करने प्रवृत्त हुए बिभीषण की उसने निर्भर्त्सना की।

वध—यह संवाद चल ही रहा था कि, लक्ष्मण ने बीच में पड़ कर इंद्रजित् से युद्ध प्रारम्भ कर दिया। पहले सारथी को मार गिराया। तब इंद्रजित् स्वतः सारथ्य तथा युद्ध दोनों करने लगा। उसी समय प्रमाथी, रभस, शरभ तथा गंधमादन इन चार वानरों ने इसके चार घोड़े मार डाले। तब इंद्रजित् दूसरे रथ पर बैठ कर आया देख बिभीषण ने लक्ष्मण को सावधानी से युद्ध करने को कहा। इंद्रजित् तथा लक्ष्मण का घमासान युद्ध तीन दिनों तक हुआ। इंद्रजित् मरता नहीं है इसलिये लक्ष्मण ने ऐंद्रास्त्र हाथ में ले, प्रतिज्ञा की कि यदि श्रीराम धर्मात्मा तथा सत्य प्रतिज्ञ होंगे, तो इस बाण से इंद्रजित् मरेगा। यह कह कर लक्ष्मण ने अस्त्र छोड़ा जिससे इंद्रजित् का किरीट-कुंडलयुत सिर जमीन पर आ गिरा (म. व. २७२-२७३)। राक्षस सेना पीछे हट गयी तथा भाग कर लंका में जा इंद्रजित् की मृत्यु का समाचार रावण को दिया। वानरों ने उसका सिर उठा लिया और राम को दिखाने के लिये सुबल पर्वत की ओर ले गये (वा. रा. यु. ८६-९२)। सासससुर की आज्ञा से इंद्रजित् की स्त्री सुलोचना ने सहगमन किया (आ. सार. ११)।

२. दनुपुत्र दानवों में से एक।

इंद्रजिह्व—रावणपक्ष का राक्षस (वा. रा. सु. ६)।

इंद्रतापन—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

२. वरुण की सभा का एक असुर (म. स. ९)।

इंद्रदत्त—एक स्मृतिकार। इसने इंद्रदत्त स्मृति की रचना की है (C. C.)।

इंद्रद्युम्न—एक राजर्षि (म. स. ८.१९)। पुण्य समाप्त हो जाने के कारण मृत्युलोक में आया, तथा अपनी कीर्ति नष्ट हुई या नहीं, यह जानने के लिये मार्कंडेय, हिमालय पर रहनेवाले प्रावारकर्ण उलूक, इंद्रद्युम्न सरोवर के नाडीजंघ बक तथा उसी सरोवर में रहनेवाले अकूपार कछवे की तरह के एक से एक वृद्ध लोगों के पास जा कर उसकी कीर्ति उन्हें मालूम है या नहीं यह पूछा। अंत में अकूपार कछुवे ने बताया कि, इंद्रद्युम्न की कीर्ति एक बडे यज्ञकर्ता के नाते प्रसिद्ध है। कीर्ति के रहते, एक मनुष्य का अस्तित्व रहता है यह बताने के लिये मार्कंडेय ने यह कथा पांडवों को सुनाई (म. व. १९१)।

२. कृतयुग का विष्णुभक्त राजा। इसकी राजधानी उज्जयिनी थी। यह ओढ्र देश के पुरुषोत्तम क्षेत्र में जगन्नाथ जी के दर्शन के लिये गया, तब जगन्नाथ रेत में गुप्त हो गये। तब यह नीलाद्रि पर जा कर प्रायोपवेशन करनेवाला था कि, दर्शन होगा, ऐसी आकाशवाणी हुई। इसने अश्वमेध कर नृसिंह का उत्कृष्ट मंदिर बनवाया। इसने नारद ने लायी हुई नृसिंह की मूर्ति की स्थापना ज्येष्ठ शुक्ल द्वादशी के दिन स्वाति नक्षत्र के समय की। राजा को स्वप्न में नीलमाधव के दर्शन हुए। आकाशवाणी हुई कि, समुद्र में जड वाली एक सुगंधित वृक्ष की चार मूर्तियां बनाओ १. विष्णु, २. बलराम, ३. सुदर्शन (रक्तवर्ण), ४. सुभद्रा (केशरिया), तदनुसार वै. शु. अष्टमी को पुण्यनक्षत्र के समय उसने मूर्तियों की स्थापना की (स्कंद. २.२.७-२९)। समुद्र पर से बह कर आने वाली लकड़ियों में से विशेष महत्वपूर्ण लकड़ियों से मूर्ति बनाने के लिये इसे दृष्टांत हुआ। एक लकड़ी से कृष्ण की काले रंग की, बलराम की सफेद रंग की तथा सुभद्रा की पीले रंग की मूर्ति बना कर, इसने जगन्नाथपुरी में उनकी स्थापना की (नारद. २.५४; ब्रह्म. ४४-५१)।

३. मगध देश का राजा। इसकी स्त्री का नाम अहल्या। वह इंद्र नामक ब्राह्मण के साथ व्यभिचार करती थी। उसे अनेक दंड दिये। अंत में उसका स्थूल शरीर जला देने पर भी, उसकी मानसिक तन्मयता नष्ट नहीं हुई (यो. वा. ३. ८९-९०)।

४. पांड्य देश का राजा। यह एक बार तप कर रहा था तब वहां अगस्त्य ऋषि आये परंतु ध्यानस्थ राजा उन्हें देख न सका इस कारण, मुनि को क्रोध हुआ। उसने, 'तू मत्त हो गया है इसलिये मदोन्मत्त हाथी हो' ऐसा उसे शाप दिया जिसे सुन कर राजा ने उनकी प्रार्थना की। तब उसने उश्शाप दिया कि, मगर जब तुझे पानी में पकडेगा तब विष्णु के द्वारा तेरी मुक्ति होगी। देवल मुनि के शाप से हुहु नामक गंधर्व त्रिकूट पर्वत के सरोवर में मगर बनकर रहता था। उसने इस हाथी को पानी में पकड़ा। विष्णु ने तब उस मगर को मार कर हाथी को मुक्त किया (पद्म. उ. १३२; भा. ८-४; आ. रा. सार. ९)।

५. (सो. निमि.) इसे ऐंद्रद्युम्न नामक एक पुत्र था।

६. रुक्मी के पक्ष का एक क्षत्रिय। रुक्मिणीस्वयंवर के समय कृष्ण ने इसे सुदर्शन चक्र से मारा (म. स. ६१. ६ कुं.)।

७. धर्मराज जब बकदाल्भ्य के यहां गया था तब उसने अन्य ब्राह्मणों सहित इसका सम्मान किया। पांडव इस समय द्वैत वन में थे (म. व. २७.२२)।

८. विष्णु पुराण के अनुसार नाभि वंश के सुमति का पुत्र।

इंद्रद्युम्न भाल्लवेय वैयाघ्रपद्य—अग्निवैश्वानर का क्या धर्म है, इसके बारे में अन्य पुरोहितों के साथ यह सहमत नहीं होता था। अश्वपति कैकेय ने इसे विद्या दी थी (छां. उ. ५.११.१; १४.१)। भाल्लवेय को धर्मविधि में मान है।

इंद्रद्रुमि—एक ऋषि (म. शां. २४०.१८ कुं.)।

इंद्रधन्वन्—बाणासुर एवं लोहिनी का पुत्र।

इंद्रपाल—ब्रह्महोमवंशी हविर्होत्र राजा का पुत्र। इसका पुत्र माल्यवान्। इसने इंद्रवती नगर बसाया (भवि. प्रति. ४.१)।

इंद्रपालित—(मौर्य. भविष्य.) ब्रह्मांडमतानुसार बंधुपालित का पुत्र।

इंद्रप्रमति—पैल ऋषि का शिष्य। पैल ने, उसे ज्ञात ऋग्वेद के दो भाग कर एक भाग इंद्रप्रमति को सिखाया। इसे मांडुक्य नामक एक शिष्य था (व्यास देखिये)।

इंद्रप्रमति वासिष्ठ—वसिष्ठकुल का एक ऋषि। ऋग्वेद में इसकी दो ऋचायें तथा एक सूक्त है (ऋ. ९. ९७.४-६; १०.१५३)। चंद्रसंपति इसका पाठभेद है। कुणीति इसका नामांतर था। वसिष्ठ तथा घृताची का पुत्र। पृथु की कन्या इसकी स्त्री थी (ब्रह्माण्ड ३. ९, ८-१०)। यह श्रुतर्षि था। मंत्रकार भी था (वायु. ५९. १०५-१०६; ब्रह्माण्ड, २.३२. ११५-११६)। इसे इंद्रप्रतिम भी कहते है। कापिंजल्य, त्रिमूर्ति इसके नामांतर है। इसका पुत्र भद्र।

इंद्रबाहु—दृढस्यु का नामांतर (मत्स्य. १४५. ११४)। यह अगस्त्य गोत्र का मंत्रकार था। विध्मवाह इसे नामांतर है।

इंद्रभू काश्यप—मित्रभू का शिष्य। इसका शिष्य अग्निभू (वं. ब्रा. २)।

इंद्रमातृ देवजामि—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १५३)।

इंद्रमालिन्—उपरिचर वसु का नामांतर।

इंद्रवर्मन्—भारतीय युद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा। इसके पास अश्वत्थामा नामक नामांकित हाथी था। यह मालवा का राजा था (म. द्रो. १९१; द्रोण देखिये)।

इंद्रवाह--(सू. इ.) विकुक्षि का पुत्र। ककुत्स्थ इसका नामांतर है।

इंद्रसख--(सो. अज.) वायु के मतानुसार कृत राजा का पुत्र। इसे चैद्योपरिचर ऐसा दूसरा नाम भी है (उपरिचर वसु देखिये)।

इंद्रसावर्णि--एक मनु (मनु देखिये)।

इंद्रसेन--(स्वा. प्रिय.) ऋषभदेव तथा जयंती का पुत्र।

२. (सू. नरिष्यंत.) कूर्च राजा का पुत्र। इसका पुत्र वीतिहोत्र।

३. (सो. नील.) ब्रह्मिष्ठ का पुत्र। इसका पुत्र विंध्याश्व।

४. (सो. कुरु.) दूसरे जनमेजय का पुत्र (म. आ. ८९.४८)।

५. सुतल का दैत्य (भा. १०.८५.५२)।

६. युधिष्ठिर का सारथि।

७. पांडव का दूत (म. स. १२.३०.३०.३०; व २५३. १०; स्त्री. २६.२५)। इसे पांडवों ने द्वारका भेजा था (म. वि. ४.३)।

८. नल राजा का पुत्र (म. व. ५७.२१)।

९. कौरवपक्षीय एक क्षत्रिय (म. द्रो. १३१.८५)।

१०. माहिष्मती का राजा। नारद के कथनानुसार आश्विन कृष्ण की इंदिरा एकादशी का व्रत कर इसने अपने यमलोक में रहनेवाले पिता को स्वर्ग पहुँचाया (पद्म. उ. ५८)।

इंद्रसेना--नल राजा को दमयंती से उत्पन्न कन्या (म. व. ५३-१०)।

२. पांचालवंशीय ब्रह्मिष्ठ राजा की पत्नी तथा बध्न्यश्व की माता। ब्रह्मिष्ठ मुद्‍गल का नाम होगा। ऋग्वेद में मुद्गलानी इन्द्रसेना का उल्लेख है। उसका पिता भर्म्यश्वपुत्र मुद्गल ही है (ऋ. १०.१०२.२; मुद्गल देखिये)।

३. बाभ्रवी इसका पैतृक नाम है। यह नरिष्यन्त की पत्नी तथा दम की माता (३ वपुष्मत् तथा ३ मौद्गल्य देखिये)। नरिष्यन्त के बध के पश्चात् यह सती गयी।

इंद्रस्नुषा--यह एक ऋचा की द्रष्ट्री है (ऋ. १०. २८.१)।

इंद्रस्पृशा--(स्वा.) ऋषभ को जयंती से उत्पन्न पुत्र।

इंद्राणी--ऋग्वेद में इसकी अनेक ऋचायें है (ऋ. १०.८६.२; ६)। पुत्रेच्छा से गौरीव्रत करते ही, इसे जयंत पुत्र हुआ (भवि. ब्राह्म. २२; शची देखिये)।

इंद्राभ--(सू. दिष्ट.)। धृतराष्ट्र का पुत्र। वैचित्रवीर्य धृतराष्ट्र का पुत्र नहीं है।

इंद्रोत--यह सुदास का पुत्र होगा (ऋ. ८. ६८. १७)। यहाँ प्रियमेध आंगिरस ने दाता रूप में इसकी स्तुति की है। अतिथिग्व के साथ भी इसका संबंध प्रतीत होता है।

२. वृषशुष्ण का शिष्य। इसका शिष्य दृति (वं. ब्रा. २)।

३. (सो.) पांचाल वंशीय दिवोदास का पुत्र।

इंद्रोत दैवाप शौनक--इसने जनमेजय के अश्वमेध यज्ञ में पौरोहित्य किया था (श. ब्रा. १३.५.३.५; ४.१; सां. श्रौ. १६.७.७; ८.२७)। जनमेजय का पुरोहित तुर कावषेय था (ऐ. ब्रा. ८.२१) यह श्रुतय का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४०.१)। यह भृगुकुल का था। इसने जनमेजय को गार्ग्य मुनि के शाप से अश्वमेध करवा के मुक्त किया (म. शां. ४६.२; ब्रह्म. १२; ह. वं. २.११)।

इरा--४ इला देखिये।

२. एक अप्सरा (म. स. १०.११)।

३. दक्ष तथा असिक्नी की कन्या। यह कश्यप की पत्नी। लता, अल्लता, वीरुधा इसकी कन्यायें हैं।

इरावत्--पंडुपुत्र अर्जुन को ऐरावत नाग की स्नुषा उलूपी से उत्पन्न पुत्र। इसका बाल्यकाल नागलोक में ही बीता। आगे चल कर इसका अपने चाचा (ऐरावत नाग का दूसरा पुत्र अश्वसेन) के साथ हमेशा झगड़ा होने लगा तथा अश्वसेन ने इसे भगा दिया। अर्जुन उस समय देवलोक में इन्द्र के पास गया हुआ था। तब इरावान् स्वर्ग में अर्जुन के पास गया। वहाँ दोनों पितापुत्र का मिलन हुआ। भारतीययुद्ध में इरावान् ने काफी पराक्रम कर के कौरवसेना को थका दिया। इसने शकुनि के छः भाइयों का बध किया। परंतु आगे चल कर वह आर्ष्यशृंगि नामक राक्षस के हाथों मारा गया (म. भी. ८६. ७०; इषक देखिये)।

इरावती--अर्जुनपौत्र परीक्षित् राजा की पत्नी। यह विराटपुत्र उत्तर की कन्या।

२. ब्रह्मदेव ने मार्तंड का गर्भ छिपा किया। उसका बल इसने नाभि के पास रखा। इससे उसे चार पुत्र हुए। वे अंजन, ऐरावत, कुमुद तथा वामन दिग्गज हैं (ब्रह्मांड. ३. ७.२.९२)। इरावती का विस्तृत वंश ब्रह्मांड में है तथा

वहाँ उनकी अन्य जानकारी भी हैं। परंतु वह सब हाथी की है। अतएव यहाँ दी नहीं जाती।

इल—वैवस्वत मनु (श्राद्धदेव) तथा श्रद्धा को पुत्र न होने के कारण उन्होंने वसिष्ठ के द्वारा मित्रावरुणों को उद्देशित कर पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। अनुष्ठानकाल में श्रद्धा केवल दूध पी कर रहती थी। होता से उसने कहा कि, मुझे कन्या चाहिये। हवन होने के बाद इसे इला नामक कन्या हुई। परंतु मनु की इच्छानुसार वसिष्ठ ने इसे पुरुष बनाया। तब इसका नाम इल अथवा सुद्युम्न रखा गया। आगे चल कर यह परिवारसहित मृगया के हेतु अरण्य में गया। शंकरशाप जिसे था ऐसे शरवन में जाने के कारण यह परिवारसहित स्त्री बन गया। इस अवस्था में उसे बुध से पुरूरवस् नामक पुत्र हुआ। आगे चल कर वसिष्ठ की कृपा से यह एक महिना पुरुष तथा एक महिना स्त्री रहने लगा (मत्स्य. ११-१२; पद्म. पा. ८. ७५-१२५)। इसका कारोबार विशेष प्रिय न था। इसके बाद पुरूरवस् गद्दी पर बैठा। इसके प्रदेश को इलावृत्त कहते है (भा. ९. १ दे. भा. १.१.१२; ब्रह्माण्ड. ३.२९)। यह कर्दम प्रजापति का पुत्र तथा बाल्हिक का राजा। बुध की प्रेरणा से संवर्त की देखरेख में मरुत्त ने अश्वमेध कर के, इसे पुनः पुरुष बनाया (वा. रा. उ. ८. ७-९०)। अरुणाचलेश्वर की उपासना से यह पुरुष हुआ (स्कन्द. १. ३. १-६)। एक यक्ष की गुफा इलद्वारा ले ली जाने के कारण, अपनी पत्नी के द्वारा इसे उमावन में ले जा कर उसने इसे स्त्री बना दिया। वहाँ इसे बुध से पुरूरवस् नामक पुत्र हुआ। गौतमी नदी में स्नान करने पर यह पुनः पुरुष बना (ब्रह्म. १०८)। इसकी राजधानी प्रतिष्ठान थी। इसे पुरूरवस् छोड़ कर उत्कल, गय तथा विमल नामक तीन पुत्र थे। विमल के लिये हरिताश्व, विनताश्व तथा विनत नाम प्राप्त हैं। इल मनु के दस पुत्रों में से ज्येष्ठ। नौ पुत्र थे, दशम की प्राप्ति के लिये यज्ञ किया परंतु पत्नी की इच्छानुसार इला नामक कन्या हुई तथा उसे बुध से पुरूरवस् हुआ। आगे चल कर पुरुष, स्त्री, पुनः पुरुष हुआ (वायु. ८५. २७; ब्रह्माण्ड. ३. ६०. २७)। इला को पुरुषत्व प्राप्त हो कर पुनः स्त्रीत्व प्राप्त हुआ। यह बुध से संबंध आने के पहले ही हुआ (इला तथा सुद्युम्न देखिये)।

इलक—मध्यमाध्वर्यु देखिये।

इलविल—(सू. इ.) शतरथ राजा का नामांतर।

इलविला—तृणबिंदु तथा अलंबुषा की कन्या, पुलस्त्य की पत्नी तथा विश्रवस् की माता (ब्रह्माण्ड. ३. ८. ३८)।

इला—वैवस्वत मनु की कन्या (म. आ. ९०.७; ह. वं. १.१०; ब्रह्म. ७; मत्स्य. ११; भा. ९.१)। मित्रावरुणों के अंश से उत्पन्न होने के कारण यह उनके पास गई। तब तुम हमारी ही कन्या हो, आगे चल कर तुम सुद्युम्न बनोगी ऐसा उन्होने कहा। तब यह वापस लौट आई। राहमें बुध से यह मिली। बुध से इसे पुरूरवस् नामक पुत्र हुआ। देवी भागवत में उल्लेख है कि सुद्युम्न की इला हुई तथा श्रीमद्भागवत में उल्लेख है कि इला से सुद्युम्न हुआ (इल देखिये)।

२. वायु की कन्या। उत्तानपाद ध्रुव की दूसरी स्त्री। इसे उत्कल नामक पुत्र था।

३. वसुदेव की स्त्रियों में से एक।

४. प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या है। यह कश्यप को भार्यार्थ दी थी। इससे वृक्षादिक हुए (भाग. ६.६)। भागवत छोड़ कर इतरत्र इरा नाम प्राप्त है।

इलावर्त—(स्वा.)। ऋषभ को जयंती से उत्पन्न पुत्र। यह नब्बे पुत्रों में ज्येष्ठ था।

इलावृत—प्रियव्रत राजा का पौत्र तथा आग्नीध्र को उपचिति अप्सरा से उत्पन्न पुत्र। इसका वर्ष इसी के नाम से प्रसिद्ध है। यह वहाँ का अधिपति था।

इलिन—(सो. पूरु.) एक क्षत्रिय। त्रस्नु अथवा तंसु इसका पुत्र। मत्स्य के मतानुसार यह अमूर्तरय का पुत्र है। माता का नाम कालिंदी तथा पत्नी का नाम रथंतरी था (म. आ. ९०.२८)। पुत्रों के नाम १. दुष्यंत, २. शूर, ३. भीम, ४. प्रवसु, ५. वसु (म. आ. ८९. १५; इलिल देखिये)।

इलिना—इसका नाती दुष्यंत (ब्रह्माण्ड. ३.६)। महाभारत में इलिन नामक पुरुष है।

इलिल—इलिन, ईलिन, मलिन, अनिल तथा यह एक ही हैं।

इल्लूष—कवष देखिये।

इल्वल—हिरण्यकश्यपु का पौत्र। ह्राद को धमनी से उत्पन्न पुत्रों में से एक (भा. ६.१८. १५)।

२ तेरह सैंहिकेयों में से पंचम तथा वातापी का बड़ा भाई। यह मणिमती नगरी में रहता था। एकबार इल्वल ने इन्द्रतुल्य पुत्र की प्राप्ति के लिये एक ऋषी से प्रार्थना

की। वह उसके द्वारा अमान्य की जाने पर आदरातिथ्य के मिस ब्राह्मणों को बुला कर मार डालने का क्रम इसने प्रारंभ किया। ब्राह्मण का आगमन होते ही यह उसका आदर करता था। तदनंतर मेष बने हुए अपने वातापी बंधु का पाक बना कर उसे भोजन देता था। ब्राह्मण जब जाने लगते थे तब उसका शरीर विदीर्ण करके वातापी बाहर आता था तथा ब्राह्मण की मृत्यु हो जाती थी। इस प्रकार से इसने सहस्त्रावधि ब्राह्मणों को मार डाला। एकबार जब अगस्त्य को द्रव्य की अपेक्षा थी, वह क्रम से श्रुतार्वा, ब्रध्न्यश्व तथा त्रसदस्यु नामक तीन राजाओं के पास गया। परंतु वहाँ द्रव्य प्राप्ति न होने के कारण, उनके सहित यह इल्वल के पास आया। उसे देख कर नित्यानुसार इसने अगस्त्य की कपट पूर्वक पूजा कर, उसे भोजन के लिये रख लिया। अगस्त्य की कपट पूर्वक जान कर संपूर्ण पाक का भक्षण स्वयं ही कर लिया, तथा वातापि को उदर में जीर्ण किया। यह जान कर इल्वल अगस्त्य के पास प्राण दान के लिये प्रार्थना करने लगा। तब अगस्त्य ने अभय दे कर उसे कहा कि हम चारों द्रव्यार्थी है। अतएव द्रव्य दे कर हमें मार्गस्थ करो। तब इसने त्रिवर्ग राजाओं को विपुल संपत्ति दे कर अगस्त्य को उनसे द्विगुणित दी तथा सबको मार्गस्थ कर ब्राह्मणों का द्वेष छोड़ दिया। इसे वल्वल नामक पुत्र था (म. व. ९४)।

रामायण में अगस्त्य के सामर्थ्य का वर्णन करते समय इल्वल तथा वातापि की कथा राम ने लक्ष्मण तथा सीता को बताई। नित्य श्राद्ध में अगस्त्य ने जा कर वातापी को पेटमें पचा लिया तथा इल्वल के क्रोध से आक्रमण करते ही, उसे भी दृष्टि से भस्म कर दिया (वा. रा. अर. ११.६८; म. व. ९७.४९. म. ३ *)। परंतु इल्वल को परशुराम ने मार डाला (ब्रह्माण्ड ३.६.१८-२२)।

इष--(स्वा. उत्तान.) वत्सर को स्वर्वीथी नामक भार्या से उत्पन्न छः पुत्रों में से एक।

२. उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

३. सुधामान नामक देवगणों में से एक।

इष आत्रेय—सूक्तों का द्रष्टा (ऋ. ५.७-८)।

इष श्यावाश्वि--यह अगस्त्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ४१.६.१)।

इषिकहस्त--पराशर कुल का गोत्रकार.

इषीक--इसने तुंबरु नामक गंधर्व की उपासना करने के लिये बता कर शिखंडी को पुरुषत्व प्राप्त करा दिया (म. आ. ११०.२३ कुं.)।

इषरिथ—विश्वामित्र का मूल पुरुष (विश्वामित्र देखिये)।

इषुपात्—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

इषुफलि—अष्टकाकर्म में तब किया जावे ऐसा इसका मत है (कौ. सू. १३८.१६)।

इषुमत्—(सो. यदु. वृष्णि) देवश्रवस् को कंसावती से उत्पन्न पुत्र।

ई

ईडच--सावर्णि मनु के उत्पन्न होनेवाले पुत्रों में से एक।

ईदृश—दितिपुत्र मरुतों के पांचवे गणों में से एक (ब्रह्माण्ड ३.५.९६)।

ईलिन—(सो.) तंसु का पुत्र (म. आ. ८८; इलिल देखिये)।

ईशान—इस नाम के एक संन्यासी ने विश्वेश्वर की आराधना की। शंकर ने प्रसन्न हो कर कहा कि जिस स्थान पर तुमने तप किया, उस स्थान को ज्ञानवापी कहेंगे (स्कंद २.४.१.३३)।

२. देवों के हिरण्याक्ष के साथ हुए युद्धमें इसका वध वायु ने किया (पद्म. सृ. ७५)

ईश्वर—सुरभि तथा कश्यप के पुत्रों में से एक।

२. (सो. पूरु.) पूरु तथा पौष्टी का पुत्र (म. आ. ८८)

३. भारतीय युद्ध में दुर्योधन पक्षीय राजा। यह क्रोध वश असुरांश से जन्मा था (म. आ. ६१.६०)।

उ

उकूल--अंगिरस गोत्रीय एक मंत्रकार।

उक्त--(सो. कुरु. भविष्य)। भागवत के मतानुसार यह निमिचक्रपुत्र है।

उक्थ--स्वाहा का पुत्र।

२. (सू. इ.) विष्णु के मतानुसार यह शलपुत्र है। परंतु भविष्य के मतानुसार यह छग्नकारीपुत्र। इसने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

उक्षण्यायन--हरयाण तथा सुषामन् के साथ इसका उल्लेख आया है (ऋ. ८.२५.२२) व्यश्वपुत्र विश्वमनस् कृत दानस्तुति में यह सुषामन् का पैतृक नाम है।

उक्षणोरंध्र काव्य--एक द्रष्टा (पं. ब्रा. १३. ९. १९)।

उख--तैत्तिरीयों के पितृतर्पण में आने वाला एक आचार्य। पितृतर्पण में इसका समावेश होने का कारण यह होगा कि, यह हिरण्यकेशियों के से मिलतीजुलती शाखा प्रवृत्त करनेवाला था (स. गृ. २०.८-२०; चरणव्यूह)। पाणिनी ने शाखा प्रवर्तक कह कर इसका उल्लेख किया है।

उख्य--उच्चार तथा संधि के संबंध में कुछ अलग ही मतों का प्रतिपादन करनेवाला एक आचार्य (तै. प्रा. ८. २२; १०. २०; १६. २३)।

उग्र--यातुधान पुत्र। इसका पुत्र वज्रहा।

२. वारुणि कवि के आठ पुत्रों में कनिष्ठ।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसे मारा (म. द्रो. १३२. ११३५*)। भां. सं. में उग्रयायिन् पाठ है।

४. दिति का पुत्र तथा तीसरे मरुद्गणों में से एक (ब्रह्माण्ड. ३. ५. ९४)।

५. अमिताभ देवों में से एक।

६. भौत्य मनु का पुत्र।

उग्रक--कद्रूपुत्र।

उग्रतप--एक ऋषि। एकबार इसने गोपियों के साथ शृंगारमग्न कृष्ण का ध्यान किया। इस कारण इसने गोकुल में सुनंद नामक गोप की कन्या के रूप में जन्म लिया तथा उस स्थान में इसने श्रीकृष्ण की उत्कृष्ट सेवा की (पद्म. पा. ७२)।

उग्रतीर्थ--भारतीय-युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा (म. आ. ६१. ६०)।

उग्रदंष्ट्री--(स्वा. प्रिय.) मेरु की कन्या तथा आग्नीध्रपुत्र हरिवर्ष की पत्नी।

उग्रदृष्टि--स्वायंभुव मन्वन्तर के अजित देवों में से एक।

उग्रदेव--तुर्वश तथा यदु के साथ इसका उल्लेख है (ऋ. १. ३६. १८; पं. ब्रा. १४. ३. १७; २३. १६. ११)। इसका पैतृक नाम राजनि (तै. आ. ५. ४. १२)।

उग्रधन्वन्--साल्वराजा। भीम ने इसका वध किया (म. क. ४. ४०)।

२. यह कैकय का सेनापति था। इसका कर्णपुत्र सुषेण से युद्ध हुआ था। उसमें सुषेण मारा गया (म. क. ६०. ४)।

उग्रपुत्र वैदेह--गार्गी ने याज्ञवल्क्य को प्रश्न पूछते समय, इसका उत्तम धनुर्धारी कह कर उल्लेख किया है। यह व्यक्ति का नाम न हो कर सामान्य निर्देश है। (बृ. उ. ३. ८. २)।

उग्रंपश्या--एक अप्सरा (तै. आ २. ४)।

उग्रवीर्य--महिषासुरानुयायी असुर।

उग्रश्रवस्--लोमहर्षण सूत का पुत्र। इसे सौति लोमहर्षणि भी कहते हैं (म. आ. १. १)।

२. धृतराष्ट्रपुत्र (म. आ. परि. १.४१. पंक्ति. १९)।

उग्रसेन--भीमसेन तथा श्रुतसेन के साथ एक पारिक्षितीय तथा जनमेजय का भाई ऐसा इसका निर्देश है। यह अश्वमेध कर के पापमुक्त हो गया (श. ब्रा. १३.५. ४.३; जनमेजय देखिये)। यह तथा छठा एक नही है।

२. कश्यप को मुनी से उत्पन्न देवगंधर्वों में से एक। यह सूर्य का सहचर है।

३. (सो. यदु. अंधक) आहुक राजा के दो पुत्रों में दूसरा। इसकी पत्नी का नाम पद्मावती (पद्म. भू. ४८. ५१)। इसे कंस, सुनामा, न्यग्रोध, कंक, शंकु, सुहू, राष्ट्रपाल, सृष्टि तथा तुष्टिमान नामक नौ पुत्र, उसी प्रकार कंस, कंसावती, कंका, शूरभू तथा राष्ट्रपालिका नामक पांच कन्यायें थीं। यह पांच वसुदेव के देवभागादि नौ भ्राताओं में से पांच भ्राताओं की स्त्रियाँ थीं। उसका

ज्येष्ठ पुत्र कंस अत्यंत दुष्ट होने के कारण उसने इसे बंदीगृहमें रखा था। कंस का कृष्णद्वारा वध होने के बाद कृष्ण ने इसे पुनः मथुरा की गद्दी पर बैठाया (भा. १०. ४५)।

४. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक (म. आ. परि. १.४१, पंक्ति. १९)।

५. भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा।

६. (सो. कुरु.) दूसरे जनमेजय का पुत्र (म. आ. ८९.४८)।

७. पांडवो में से अर्जुन का पौत्र परीक्षित् उसके चार पुत्रों में से एक। जनमेजय का बंधु।

८. स्वर्भानु का अंशभूत क्षत्रिय (म. आ. ३. १; ६१. १३)।

९. पुष्करमालिन् देखिये।

उग्रसेना--अक्रूर के स्त्रियों में से एक।

उग्रहय--राम के अश्वमेधीय घोड़े का रक्षण करने के लिये यह लक्ष्मण के साथ गया था (पद्म. पा. १२)।

उग्रा--सिंधु दैत्य की माता का नाम (गणेश. २. १२४)।

उग्राय—महिषासुर की ओर का एक असुर।

उग्रायुध—(सो. द्विमीढ.) भागवत के मतानुसार नीप का पुत्र। परंतु अन्यों के मतानुसार कृत का पुत्र। इसे क्षेम्य नामक पुत्र था। इसने १०१ नीपों का नाश किया। इसने आठ हजार वर्षों तक तपस्या की थी। इसे यम ने तत्त्वज्ञान सिखाया (मत्स्य. ४९. ५८. ६९)। इसने भल्लाटपुत्र जनमेजय का वध किया था। शंतनु की मृत्यु के बाद इसने सत्यवती की मांग की। इससे क्रोधित हो कर भीष्म ने इसका वध किया (ह. वं. १. २०)।

२. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक (म. आदि. परि. १.४१; पंक्ति. १६)।

३. भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय एक राजा.

४. कर्ण के द्वारा मारा गया पांडवपक्षीय एक राजा (म. क. ४०.४६)। यह द्रौपदी स्वयंवर में था (म. आ. ७७.३)।

उग्रास्य—महिषासुर के पक्ष का एक दैत्य। इसका वध अंबिका ने किया (मार्कं. ८०)।

उचथ्य—उतथ्य देखिये।

उच्चैःश्रवस्—एक मछुवा राजा। मत्स्यगंधा का पोषण करनेवाला पिता (म. आ. ९४.६७)।

२. (सो. कुरु.) अविक्षित् तथा वाहिनी का पुत्र (म. आ. ८९. ४६)।

उच्चैःश्रवस् कौपयेय--यह कुरुओं का राजा तथा केशिन् का मामा (जै. उ. ब्रा. ३. २९. १-३)।

उज्जयन—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५८ कुं.)।

उंच्छवृत्ति—एक ब्राह्मण। दारिद्य के कारण इसे पेट भर खाने के लिये भी नहीं मिलता था। एक दिन जब यह भिक्षा के लिये घूम रहा था, तब इसे एक सेर सत्तु मिला। उसमें से अग्नि तथा ब्राह्मण को दे कर बाकी अपने पुत्रों को समान भाग में बांट दिया। यह स्वयं खाना शुरु करे इतने में प्रत्यक्ष यमधर्म ब्राह्मणरूप में उसके पास आया तथा खाने के लिये मांगने लगा। ब्राह्मण ने अपने हिस्से का सत्तु इसे दिया परंतु उसे संतोष न हुआ। तब इसने अपने पुत्रादिकों के हिस्से का सत्तु भी इसे दिया। यह देख कर धर्म प्रसन्न हुआ तथा वह इस ब्राह्मण को सहकुटुंब तथा सदेह स्वर्ग में ले गया। आगे चल कर इस पुण्यात्मा के सत्तु के जो कण भूमिपर गिरे थे उसमें एक नेवला आ कर लोट लगाने लगा। शरीर का जो भाग उस सत्तु को लगा, वह एकदम सुवर्णमय हो गया। आगे चल कर वह नेवला धर्म के यज्ञ में अपने शरीर का दूसरा भाग भी सुवर्णमय हो, इस इच्छा से गया परंतु उसकी इच्छा पूरी नहीं हुई (जै. अ. ६६)। मोक्षधर्म कथन के पश्चात्, गृहस्थाश्रमी मानव भी उंच्छवृत्ति का पालन करने से मोक्ष प्राप्त कर सकता है, यह पुरातन कथा भीष्म ने युधिष्ठिर को कथन की (म.शां. ३४१-३५३)। कुरुक्षेत्रस्थ उंच्छवृत्तिधारी सक्तुप्रस्थ ब्राह्मण के यहाँ व्यक्त पिष्ठ में बदन को घोलने से नकुल का अर्धांग सुवर्णमय हुआ, किन्तु बाकी आधा शरीर धर्मराज के यज्ञ में उर्वरित अन्न में घोलने से भी सुवर्णमय न हो सका। इस प्रकार उंच्छवृत्ति की प्रशंसा उल्लेखित है (म. आश्व. ९२-९३)।

उंच्छवृत्ति के माने, कपोत के जैसे बिनायास मिले हुए दाने चून कर जीवन यापन करना। (म.आश्व.९३.२;५).

इसे सत्य ऐसा नामान्तर था। इस की पत्नी का नाम पुष्करमालिनी (म. शां. २६४.६-७).

उडुपति—अंगिरस कुल का एक गोत्रकार।

उतथ्य—अंगिरस का पुत्र। इसकी माता का नाम स्वराज्। इसका श्रद्धा नाम भी मिलता है। परशुराम द्वारा पृथ्वी निःक्षत्रिय करने के पश्चात्, इसने क्षत्रियों का पुनरुत्थान किया। इसकी भार्या ममता। इसका कनिष्ठ भ्राता

बृहस्पति, देवताओं का पुरोहित था। बृहस्पति के ममता से बलात् संभोग समय पर, ममता ने अपने देवर बृहस्पति से कहा "मैं गर्भवती हूँ।" तब कामातुर बृहस्पति आपेसे बाहर हो गया। संभोग के लिये गर्भ का भी विरोध देख कर उसने गर्भ को अन्धा होने का शाप दिया। वह दीर्घतमा औतथ्य हो गया (म. आ. ९८.५-१६; शां. ३२८)।

इसकी एक और पत्नी सोमकन्या भद्रा थी। वरुण ने उसका अपहरण किया, तब इसने समुद्रशोषण किया तथा समुद्र को मरुस्थल में परिणत कर दिया। सरस्वती नदी को जलरहित तथा अदृश्य कर दिया। अन्त में समुद्र ने उचथ्य को भद्रा लौटा दी (म. अनु. २५९.९-३२ कुं.)।

उतथ्य तथा उचथ्य इसके पाठभेद है। मांधाता के साथ इसका क्षात्रधर्म विषय पर संवाद हुआ था (म. शां. ९१) जो उतथ्यगीता नामसे प्रसिद्ध है। इसका पुत्र शरद्वत्। (सत्यतपस् देखिये)।

२. शिवावतार गुहावासिन् का शिष्य।

उत्कचा, उत्कचोत्कृष्टा वा **उत्कटा**—कश्यप तथा खशा की कन्या।

उत्कल—(स्वा. उत्तान.) ध्रुव तथा इला का पुत्र। ध्रुव वन में जाने के बाद राज्य इसके पास आया। परंतु विरक्त होने के कारण इसने उसका स्वीकार नहीं किया (भा. ४.१३. ६-१०)।

२. वृत्रासुरानुयायी असुर। समुद्रमंथन के बाद हुए देवदैत्यप्रसंग में इसने मातृगणों से युद्ध किया (भा. ८.१०)।

३. सुद्युम्न के तीन पुत्रों में से एक। इसने उत्कल नगरी की स्थापना की (पद्म. सृ. ८; ब्रह्म.७)।

उत्कल कात्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ३.१५-१६)।

उत्कला—(स्वा. प्रिय.) सम्राज् राजा की पत्नी। मरीचि राजा की माता।

उत्तंक—यह बैद का शिष्य। यह अत्यंत मनोनिग्रही था। एकबार जब बैद ऋषि यजमानकृत्य के लिये बाहर गये हुए थे, तब आश्रम पर देखरेख रखने का काम उन्होंने उत्तंक पर सौंपा। बैद के पीछे उसकी पत्नी ऋतुमती हुई। तब उत्तंक की परीक्षा देखने के हेतु उसने आश्रम की स्त्रियों के द्वारा संदेशा भिजवाया, कि गुरुपत्नी का ऋतु व्यर्थ न हो ऐसा काम तुम करो। परंतु उनका निषेध कर उत्तंक ने उस प्रसंग का निवारण किया। बैद ऋषि के घर लौटने के बाद उसे यह सब मालूम हुआ। तब किसी भी प्रकार के मोह से उत्तंक वश नही होता यह देख कर संतुष्ट हो कर उसे वरदान दिया।

उत्तंक को अच्छी तरह पढा कर बैदने उसे घर जाने के लिये कहा। उस समय "आपको मैं क्या गुरुदक्षिणा दूँ?" ऐसा प्रश्न उत्तंक ने उनसे पूछा। बैदने दक्षिणा लेना अमान्य कर दिया। परंतु उत्तंक का अत्यधिक आग्रह देख कर कहा कि, तुम्हारी गुरुपत्नी को जो चीज चाहिये हो, वह ला कर दो। गुरुपत्नी के पास जा कर उत्तंक ने पूछा कि तुम्हें क्या चाहिये? तब उसने कहा कि मुझे पौष्य राजा की पत्नी के कुंडल चाहिये। उसने पौष्य राजा की पत्नी के पास से वे कुंडल मांग लाये। उन कुंडलों पर तक्षक की नजर है यह पौष्य की पत्नी को मालूम था, अतएव कुंडलों को ठीक से सम्हालने की सूचना उसने उत्तंक को दी। उत्तंक जब कुंडल ले कर जा रहा था तब तक्षक उसके पीछे बौद्ध भिक्षु के रूप में जाने लगा। जब उत्तंक ने वे कुंडल नीचे रखे तब तक्षक उन्हें पाताल में ले गया। तब उत्तंक पाताल जाने का मार्ग ढूंढने लगा। उस समय इसकी गुरुभक्ति से संतुष्ट हो कर इन्द्र ब्राह्मणरूप में इसे सहायता करने आया। उसने वज्र की सहायता से इसे मार्ग बना दिया। उत्तंक ने पाताल से कुंडल लाये तथा वे बैद भार्या को दिये। कुंडलों के वापस मिलने पर भी उत्तंक का तक्षक के प्रति क्रोध कम नही हुआ। उसका बदला लेने के लिये इसने जनमेजय को सर्प सत्र के लिये प्रेरित किया (म. आ. ३; इन्द्र देखिये)। यही कथा केवल नामों के भेद से अन्य स्थानों पर भी आई है। यह एक भार्गव था। यह मुनिश्रेष्ठ गौतम का शिष्य। विद्याभ्यास समाप्त होने पर गुरु को गुरुदक्षिणा के रूप में क्या दूँ, ऐसा पूछने पर इसकी गुरुपत्नी ने सौदास राजाकी पत्नी के स्वर्णकुंडल लाने के लिये कहा। सौदास अत्यंत भयंकर तथा मनुष्यभक्षक था। परंतु बिना डरे उत्तंक उसके पास गया तथा कुंडल मांगने लगा। कुंडल उसके पास न हो कर उसकी पत्नी के पास थे। इससे उत्तंक सौदास की पत्नी के पास गया तथा उससे कुंडल माँग कर अपनी गुरुपत्नी को दिये।

बाद में उत्तंक निर्जल मारवाड देश में तपश्चर्या करने चला गया। एक बार श्रीकृष्ण से इसका मिलन हुआ। कौरवपांडवो का भारतीय युद्ध में नाश हो गया, यह सुनते ही यह कृष्ण को शाप देने लगा। तब तत्त्वकथन करते हुए कृष्ण ने इसे विश्वरूप दर्शाया। मरुभूमी में जहाँ इच्छा हो वहाँ पानी प्राप्त करने का वरदान इसने माँगा।

कृष्ण ने कहा कि, मेरा स्मरण करते ही तुम्हें जल प्राप्त हो जावेगा। एक बार जब इसने स्मरण किया, तब इन्द्र चांडाल के रूपमें इसे पानी देने आया। परंतु अपवित्र मान कर इसने उसका स्वीकार नहीं किया। वास्तव में इन्द्र अमृत देने के लिये आया था। जिस जिस समय तुम्हें पानी की आवश्यकता होगी उसी समय इस मरुभूमि में सजल मेघ आवेंगे ऐसा कृष्ण ने इसे पुनः वर दिया (म. आश्व. ५२.५४)। इसने धुंधु दैत्य का वध करने के लिये, कुवलाश्व नामक राजा को सहायता दी (म. व. १९२.८) (२ जनमेजय परिक्षित देखिये)।

उत्तम—चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. एक मनु।

३. (स्वा.) उत्तानपाद तथा सुरुचि का पुत्र। यह अविवाहित था। इसका वध मृगया में बलाढ्य यक्ष ने किया (भा. ४.८.९; १०.३)।

उत्तमा—वर्तमान मन्वन्तर का इक्कीसवा व्यास।

२. मगध देश के देवदास राजा की पत्नी। यमुना में स्नान कर के यह मुक्त हो गई (पद्म. ३.२१६)।

उत्तमोत्तरीय—विसर्गसंधि के संबंध में मत प्रतिपादन करनेवाला एक आचार्य (तै. प्रा. ८.२०)।

उत्तमौजस्—एक पांचालदेशीय राजपुत्र (म. उ. १९७.३)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था (म. द्रो. २०.१५३;* २४.३६; १०५.८१९*)। यह जब पांडवों के शिबिर में सो रहा था, तब अश्वत्थामा ने इसका वध किया (म. सौ. ८.३८–३३)।

उत्तर—विराट तथा सुदेष्णा का पुत्र। इसका दूसरा नाम भूमिंजय था (म. वि. ३३. ९)। यह द्रौपदीस्वयंवर में गया था (म. आ. १७७.८)। गायों का समूह जब दुर्योधन हरण कर ले गया, तब गोपों ने यह बार्ता उत्तर को बताई। विराट अन्य स्थान पर युद्ध में मग्न होने के कारण गायों को मुक्त करने की जिम्मेदारी उत्तर पर थी। अन्तःपुर में उत्तर ने अपने पराक्रम की स्वयं प्रशंसा की तथा खेद प्रगट किया कि, सारथि न होने के कारण वह युद्ध करने नहीं जा सकता। परंतु इसकी परीक्षा लेने के लिये द्रौपदी (सैरंध्री) ने कहा कि, अर्जुन (बृहन्नला) तुम्हारा सारथ्य करेगा। इससे उत्तर को मजबूर हो कर युद्ध में जाना पड़ा। परंतु रथ में बैठ कर कौरवों की अफाट सेना के पास गया नहीं, इतने में ही भयभीत हो कर यह बृहन्नला को वापस लौटने के लिये कहने लगा। उस समय स्त्रियों में की हुई अपनी प्रशंसा की याद दिलाई। परंतु उत्तर भयभीत हो कर अकेला ही भागने लगा। तब मैं अर्जुन हूँ यह बता कर बृहन्नला ने उसे धीरज बँधाया तथा इसे सारथी होने के लिये कह कर स्वयं युद्ध करने लगा। थोडी ही देर में अर्जुन ने गायों के सब समूहों को मुक्त कर लिया। तदनंतर उत्तर जयघोष करता हुआ नगर में गया (म. वि. ६२–११)। यह भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में था। इसने काफी पराक्रम दिखाया। परंतु शल्य के हाथों यह मारा गया (म. भी. ४५.४१)। उत्तर की मृत्यु के समय उसकी पत्नी गर्भवती थी। उसे इरावती नामक कन्या हुई। इसीका विवाह आगे चल कर अभिमन्युपुत्र परीक्षित् के साथ हुआ।

२. अषाढ उत्तर पाराशर्य देखिये।

३. कश्यपकुल का गोत्रकार।

उत्तरा—सोम की सत्ताईस पत्नियों में से एक।

२. विराट की कन्या। अर्जुन ने बृहन्नला के रूप में इसे नृत्यगायनादिकों की शिक्षा दी। गोग्रहणसमय पर जो पराक्रम अर्जुन ने दर्शाया, उसके लिये विराट ने इसे अर्जुन को देने की इच्छा दर्शाई थी। परंतु अर्जुन ने अभिमन्यु के लिये इसका स्वीकार किया। जब भारतीय युद्ध में अभिमन्यु की मृत्यु हुई, तब यह गर्भवती थी। अश्वत्थामा ने पृथ्वी को निष्पांडव करने की प्रतिज्ञा कर ऐषिकास्त्र छोडा (म. सौ. १५.३१)। कृष्ण ने उस समय इसके गर्भ का रक्षण किया। इसका पुत्र परीक्षित् (म. नि. ११.१८; भा: १.८.१५)।

उत्तान आंगिरस—संभवतः एक आचार्य (पं. ब्रा. १.८.११; तै. ब्रा. २.३.५.५)

उत्तानपाद—स्वायंभुव मनु के शतरूपा से उत्पन्न पुत्रों में कनिष्ठ (मत्स्य. ४)। इसे सुनृता या सुनीति और सुरुचि ये दो स्त्रियां थीं। सुनीति से कीर्तिवान् एवं ध्रुव तथा सुरुचि से उत्तम इस तरह इसके तीन पुत्र थे (भा. ४.८)। सुरुचि इसे बहुत प्रिय थी (ध्रुव देखिये)। स्वायंभुव मन्वंतर में प्रजापति अत्रि ने इसे दत्तक लिया था। इसे सुनृता से चार पुत्र और दो पुत्रियां हुईं। उनके नाम १. ध्रुव, २. कीर्तिमान्, ३. आयुष्मान्, ४. वसु तथा १. स्वरा, २. मनस्विनी (ब्रह्माण्ड. २.३६.८४–९०; ह. वं. १.२; ध्रुव देखिये)।

उत्तानबर्हि—(सु.) शर्याति राजा के तीन पुत्रों में ज्येष्ठ।

उत्पल—विदल देखिये।

उत्साह—भृगुवंश में श्री का पुत्र (भृगु देखिये)।

उदक्सेन वा **उदक्स्वन**—(सो. अज.) विष्वक्सेन का पुत्र। इसका पुत्र भल्लाट।

उदग्र—महिषासुरानुयायी एक असुर।

उदग्रज—कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

उदंक—उत्तंक का पाठभेद।

उदंक शौल्बायन—प्राण तथा ब्रह्म एक ही हैं ऐसा इसका मत था (बृ. उ. ४.१.३)। सत्रमें दशरात्र क्रतु ही मुख्य भाग है ऐसा इसका मत है (तै. सं. ७.५.४.२)। यह विदेह देश के देवरांति बृहद्रथ जनक का समकालीन रहा होगा।

उदमय आत्रेय—अंग वैरोचन का पुरोहित (ऐ. ब्रा. ८.२२)।

उदयन—(सो. कुरु. भविष्य.) मत्स्य तथा विष्णुमतानुसार शतानीकपुत्र।

२. (शिशु. भविष्य.) विष्णुमतानुसार दर्भक का पुत्र। वायु तथा ब्रह्मांड मतानुसार इसे उदायिन् कहा गया है। भविष्य में उदयाश्व ऐसा पाठ है। इसने गंगा के किनारे पुष्पपुर स्थापित किया। पुष्पपुर को पाटलिपुत्र ऐसा नामांतर युगपुराण में दिया है।

उदयसिंह—देशराज को देवकी से उत्पन्न पुत्र।

उदयाश्व वा **उदयिन्**—(२ उदयन देखिये)।

उदर शांडिल्य—अतिधन्वन् शौनक का शिष्य (छां. उ. १.९.३; वं. ब्रा. २)।

२. इंद्रसभा का एक महर्षि (म. स. ७.११)।

उदरेणु—विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

उदर्क—१० विदूरथ देखिये।

उदल—विश्वामित्र कुल का सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १४.११.३३)।

उदवहि—कश्यपकुलोत्पन्न शंडिल शाखा का एक ऋषि।

२. विश्वामित्र गोत्र का ऋषि।

उदान—तुषितदेवों में से एक।

उदापेक्षिन्—विश्वामित्र के पुत्रों में से एक।

उदारधी—प्राचीनगर्भ और सुवर्चा का पुत्र। इसकी स्त्री भद्रा। इसे दिवंजय और रिपुंजय नामक दो पुत्र थे। पूर्वजन्म में यह इंद्र था (ब्रह्माण्ड. २.३६. १००–११०)।

उदारवसु वा **उदावसु**—(सू. निमि.) मिथि जनक का पुत्र। इसका पुत्र नंदिवर्धन।

उदासीन—(सो. वृष्णि.) मत्स्यमतानुसार वसुदेव तथा देवकी का पुत्र।

२. (शिशु. भविष्य.) मत्स्यमतानुसार वंशक का पुत्र।

उदुंबर—विश्वामित्र कुल का एक गोत्रकार।

उद्गातृ—(स्वा. प्रिय.) प्रतीह और सुवर्चला के तीन पुत्रों में से एक। यह यज्ञ कर्म निपुण था। यह नाम मूल भागवत में नहीं है; परंतु प्रतिहर्त्रादि कहे जाने के कारण आदिपद के द्वारा इसका स्वीकार टीकाकार करते है (भा. ५.१५.५)।

उद्गाह—वसिष्ठगोत्र का एक ऋषिगण। उद्गाट ऐसा पाठभेद है।

उद्गीथ—स्वायंभुव मन्वंतर में मरीचि ऋषि को उर्णा से उत्पन्न छः पुत्रों में दूसरा। आगे चल कर दूसरे जन्म में कृष्ण के बंधुओं में से एक हुआ।

२. (स्वा. प्रिय.) भूमन् को ऋषिकुल्या से उत्पन्न पुत्र।

३. (स्वा. नाभि.) विष्णुमतानुसार भुव का पुत्र।

उद्गाट—उद्गाह देखिये।

उद्दल—व्यास की यजुः शिष्यपरंपरा में वायुमतानुसार याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य।

उद्दाल—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार एवं प्रवर।

उद्दालक—एक आचार्य। आपोद धौम्य का शिष्य। एक समय इसे गुरु ने पानी (खेत का) रोकने के लिये कहा; पर इसे पानी को रोकते नहीं बन रहा था। तब इसने खुद ही नीचे सो कर पानी रोका। गुरु को खोज करते समय यह पता लगा। तब उन्होंने आरुणि पांचाल्य का नाम उद्दालक रखा (म. आ. ३.२०–२९)। इसे कुशिक की कन्या से श्वेतकेतु और नचिकेतस् दो पुत्र तथा सुजाता नामक पुत्री उत्पन्न हुई। सुजाता कहोल को ब्याही गयी थी। इसका पुत्र अष्टावक्र था (म. व. १३२)। एक निपुत्रिक ब्राह्मण ने इसकी स्त्री पुत्रोत्पादनार्थ मांगी। श्वेतकेतु को यह सहन न होने के कारण उसने नियम बनाया कि, स्त्री को केवल एक ही पति होना चाहिये (म. आ. ११३)। इस में सत्तासामान्य नामक दिव्यदृष्टि निर्माण हुई थी; इस कारण यह हमेशा समाधिसुख में रहता था। इसका शरीर सूर्य किरणों से शुष्क हो कर यह ब्रह्मरूप हुआ। इसका शव चामुंडा देवी ने खड्ग तथा खट्वांग में भूषण के समान धारण किया (यो. वा. ५.५१–५६; चंडी देखिये)।

उद्दालक आरुणि—अध्यात्मविद्या का प्रसिद्ध आचार्य। यह अरुण औपवेशि गौतम का पुत्र तथा शिष्य

था (बृ. उ. ६. ५. ३)। इसका पुत्र श्वेतकेतु (बृ. उ. ६.२.१; छां. उ. ६.१.१)। पतंचल काप्य इसका गुरु था। इसने याज्ञवल्क्य को अध्यात्म संबंधी कुछ प्रश्न पूछे थे। याज्ञवल्क्य ने जिनके उत्तर विस्तृत रूप से दे उसे चुप कर दिया (बृ. उ. ३.७)। एक याज्ञवल्क्य इसका शिष्य भी था (बृ. उ. ६.५.३)।

इसकी ब्रह्मविद्या की परंपरा ब्रह्मा से है। इसे इसके पिता से ही ब्रह्मविद्या मिली थी (छां. उ. ३.११. ४)। बडे बडे ज्ञानी लोग भी अध्यात्मविद्या संपादनार्थ इसके पास आते थे। इंद्रद्युम्न, सत्ययज्ञ, जन तथा बुडिल इसके पास अध्यात्मविद्या सीखने के लिये आये थे (छां. उ. ५.११.१-२)। इसके कुल के मनुष्य विद्वान् थे ऐसी उस समय ख्याति थी। इसने श्वेतकेतु को सिखाया हुआ तत्त्वज्ञान प्रसिद्ध है (छां. उ. ६. १; श्वेतकेतु देखिये)।

इसका उल्लेख अन्यत्र भी आता है। राज्याभिषेक के समय कहे जानेवाले मंत्रों के संबंध में इसका मत सर्वमान्य है (ऐ. ब्रा. ८.७)।

उद्दालकायन—जाबालायन का शिष्य (बृ. उ. ४. ६. २)।

उद्दालकि—अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

उद्दिष्ट—वैवस्वत मनु का पुत्र।

उद्धत—एक राक्षस का नाम। यह शुकरूप में आया था। तब विनायक ने इसका वध किया।

उद्धव—(सो. यदु.) देवभाग का पुत्र। इसकी माता का नाम कंसा। चित्रकेतु तथा बृहद्बल इसके दो ज्येष्ठ बंधु थे (भा. ९.२४.४०)। इसने बृहस्पति से नीतिशास्त्र का अध्ययन किया। यह कृष्ण का प्रिय मित्र था। इसे यादव मंडली में मान प्राप्त था। श्रीकृष्ण ने एक बार अपना संदेशा इसे दे कर नंद, यशोदा और गोपियों का समाधान करने के लिये भेजा था।

यादवों के नाश के बाद श्रीकृष्ण भी निजधाम जायेंगे यह जान कर इसे बहुत दुःख हुआ। कृष्ण ने इसे बदरिकाश्रम जाने कहा किंतु अत्यंत प्रेम के कारण कृष्ण के पीछे पीछे यह सरस्वती नदी के तट पर गया। कृष्ण एक वृक्ष को टेक कर अकेले बैठे थे। उद्धव को देख कर कृष्ण ने कहा-"तुम्हे क्या चाहिये वह मैं जानता हूं"। तू वसु नामक देव का अवतार है। पहले पहल सृष्टि उत्पन्न करने वाले वसु के यज्ञ में मुझे प्राप्त करने के लिये तुमने मेरा पूजन किया था। यह तेरा अंतिम जन्म है। तुम ने मेरी कृपा संपादन की, इसलिये मैं तुम्हें सर्वश्रेष्ठ आत्मज्ञान बताता हूं। ऐसा कह कर उद्धव को कृष्ण ने आत्मानात्मविवेक बताया। यही उद्धवगीता तथा अवधूतगीता नाम से प्रसिद्ध है (भा. ११. ७-२९)। तब उद्धव ने आनंदमिश्रित दुःख से उसकी प्रदक्षिणा कर बदरिकाश्रम के लिये गमन किया तथा वहां नरनारायणआश्रम में रह कर लोकहितार्थ बहुत तप किया। फिर विशाला को (बदरिकाश्रम) जा कर मोक्ष प्राप्त किया (भा. ११. २९. ४७)। श्रीकृष्ण उद्धव को अपने से अणुमात्र भी कम नहीं समझते थे तथा आत्मज्ञानोपदेश करने के लिये ही उद्धव को उन्होंने अपने पीछे रख छोड़ा था ऐसा शुकाचार्य ने बताया है (भा. ३. ४. ३०-३१) उद्धव द्रौपदीस्वयंवर के समय वहां उपस्थित था। (म. आ. १७७. १७)

२. (सो. पुरूरवस्) मत्स्यमतानुसार नहुष का पुत्र।

उद्यान—(सो.) भविष्यमतानुसार शतानीक का पुत्र।

उद्वलायन—कश्यपकुल का एक गोत्रकार।

उन्नत—चाक्षुष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

उन्नति--दक्ष और प्रसुति की कन्या। धर्म की स्त्री।

उन्माद--कृष्ण एवं मित्रविंदा का पुत्र। एक महारथी।

उन्मत्त—अष्टभैरवों में से एक।

२. अंगराज मायावर्मन तथा प्रमदा का पुत्र (भवि. प्रति. ३.३१)

३. रावण का भ्राता। गवाक्ष कपि ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ७०.६५-७४)।

उपकीचक--सूताधिप केकय एवं मालवी के पुत्र तथा कीचक के कनिष्ठ भाई (म. वि. १५, परि. १.१९.२५-२७) भीम ने कीचक के बाद इनका वध किया (म. वि. २२. २५)।

उपकेतु--एक व्यक्ति का नाम (क. सं. १३.१)।

उपकोसल कामलायन-- कमलपुत्र उपकोसल। सत्यकाम जाबाल के घर ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए अध्ययन करने के लिये रहा। बारह वर्षों के बाद सत्यकाम ने अन्य शिष्यों का समावर्तन कर स्वगृह जाने की अनुमति दी परंतु उपकोसल का समावर्तन नहीं किया। तब सत्यकाम की स्त्रीने उससे कहा कि इस ब्रह्मचारी ने अग्नि की सेवा उत्तम प्रकार से की है। अग्नि हमें दोष न दे इसलिये आप इसे ब्रह्मज्ञान बताइये। परंतु इस

ओर ध्यान न दे, सत्यकाम यात्रा करने चला गया। तब मानसिक दुःख के कारण, उपकोसल ने अन्न वर्ज्य किया। इस ब्रह्मचारी का तप और उसकी सेवा को ध्यान में रख कर तीन अग्नि, इसे ज्ञान देने के लिये प्रगट हुए। तीनों अग्नियों ने इसे बताया कि प्राण, सुख तथा आकाश ये प्रत्येक ब्रह्म है। उपकोसल ने कहा 'प्राण ब्रह्म कैसे है यह मुझे समझ गया; परंतु सुख और आकाश के संबंध में मुझे समझ में नहीं आया। इस पर अग्नि ने योग्य उत्तर दे कर उसका समाधान कर अपना स्वरूप भी उसे समझा दिया। उन्होंने अंत में कहा 'उपकोसल! यह हमारी विद्या तथा आत्मविद्या हम ने तुम्हें बताई। ब्रह्मवेत्ता का अगला मार्ग तुम्हारे आचार्य बतायेंगे'। कुछ दिनों के बाद आचार्य आये और शिष्य का मुखावलोकन कर कहा—"मेरे बच्चे! ब्रह्मज्ञानी के मुख की तरह तेरा मुख दिखाई देता है; तुझे किसने ज्ञान दिया?" उपकोसल ने बताया कि, अग्नि ने मुझे ज्ञान दिया। तब गुरु ने उपदेश दिया (छां. उ. ४.१०.१; १४.१)।

उपक्षत्र--(सो. वृष्णि.) विष्णुमत में श्वफल्क का पुत्र।

उपगहन—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५६ कुं.)।

उपगु—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक ऋषि।

२. (सू. निमि.) विष्णु मतानुसार सात्यरथिपुत्र।

उपगुप्त—(सू. निमि.) भागवतमतानुसार उपगुरु जनक का पुत्र।

उपगुरु—(सू. निमि.) सत्यरथ का पुत्र। इसका पुत्र उपगुप्त।

उपगु सौश्रवस—कुत्स औौर्व का पुरोहित। इसने इंद्र को हवि दिया इसलिये यजमान ने इसका वध किया (पं. ब्रा. १४.६.८)।

उपचित्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११. १८)।

उपचित्रा—(सो. वृष्णि.) वसुदेव की मदिरा से उत्पन्न कन्या।

उपजंघनि—सनारु देखिये।

उपदानवी—मयासुर की तीन कन्याओं में से ज्येष्ठ। हिरण्याक्ष की स्त्री।

२. मद की कन्या। इसका पुत्र दुष्यंत (ब्रह्माण्ड. ३. ६.२५)।

३. विदर्भपत्नी। नामान्तर भोजा।

उपदेव--(सो.) देवक का पुत्र।

२. (सो. वृष्णि.) अक्रूर का पुत्र।

३. रुद्रसावर्णि मनु का पुत्र।

उपदेवा--देवक की कन्या। कृष्ण के पिता वसुदेव की स्त्री। इसे कल्प, वर्ष आदि दस पुत्र थे।

उपनंद--नंद का मित्र तथा हस्तक।

२. वसुदेव तथा मदिरा का पुत्र।

उपनंदक--(सो. कुरु) धृतराष्ट्र का पुत्र।

उपनिधि—विष्णुमतानुसार वसुदेव की, भद्रा से उत्पन्न कन्या।

उपबर्हण—नारद देखिये।

उपबिंदु--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

उपबिंबा—(सो. वृष्णि.) वायुमतानुसार वसुदेव की, भद्रा से उत्पन्न कन्या।

उपभंग--(सो. यदु.) श्वफल्क का पुत्र।

उपमन्यु वासिष्ठ--मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.९७.१३-१५)। वसिष्ठकुलोत्पन्न व्याघ्रपाद का पुत्र। इसका कनिष्ठ बंधु धौम्य। इसका आश्रम हिमालय पर्वत पर था। इसकी माता का नाम अंबा था। उपमन्यु आयोद (आयोद) धौम्य ऋषि का शिष्य। धौम्य ने उपमन्यु के उदरनिर्वाह के साधन भिक्षा, दूध, फेन आदि बंद किये। अंत में प्राण के अत्यंत व्याकुल होने पर इसने अरकवृक्ष के पत्तों का भक्षण किया। जिसके कारण वह अंधा हुआ तथा कुएँ में गिर पड़ा। गुरुजी शिष्य को ढूंढ़ने के लिये निकले, तथा वन में आ कर उपमन्यु को कई बार पुकारा। गुरुजी के शब्द पहचान कर उपमन्यु ने अपना सारा वृत्तांत कहा। तब गुरुजी ने इसे अश्विनीकुमारों की स्तुति करने को कहा। स्तुति करते ही अश्विनीकुमारों ने प्रसन्न हो कर इसे एक अपूप भक्षण करने दिया। परंतु इसने गुरु को प्रथम अर्पण किये बिना उसे भक्षण करना अस्वीकार कर दिया। उपमन्यु को किसी भी प्रकार के मोह के वश न होते देख, वे उस पर बहुत संतुष्ट हुए। अश्विनीकुमारों ने उसे उत्तम दृष्टि दी। गुरु भी उस पर प्रसन्न हुए (म. आ. ३.३२-८४)।

बचपन में एक बार उपमन्यु दूसरे मुनि के आश्रम में खेलने गया। वहा इसने गाय का दूध निकालते हुए देखा। बचपन में एक बार इसके पिता एक यज्ञ में उसे ले गये, जहाँ इसे दुग्धप्राशन करने मिला था। इस कारण इसे दूध का गुण तथा उसकी मिठास मालूम थी (म. अनु. १४. ११७-१२०)। लिंग एवं शिव पुराण में ऐसा दिया है कि, जब वह मामा के घर गय

था, तब इसे दुग्धप्राशन करने मिला था (लिङ्ग. १.१०७; शिव. वाय. १.३४.३५)। घर आ कर उपमन्यु माता से दूध मांगने लगा। मां ने आटा पानी में घोल कर दिया जिस कारण उसे बहुत खराब लगा। मां ने स्नेहपूर्वक उपमन्यु पर हाथ फेरते हुए कहा कि, पूर्वजन्म में शंकर की आराधना न करने के कारण, दूध मिलने इतना दैव अपने अनुकूल नहीं है। शंकर कैसा है, उसका ध्यान किस तरह करना चाहिये, इत्यादि जानकारी उसने माता से पूछी। माता को प्रणाम कर वह तपस्या करने चला गया। वहां दुस्तर तपस्या कर शंकर को उसने प्रसन्न किया। प्रथम शंकर ने इंद्र के स्वरूप में आ कर कहा कि, मेरी आराधना करो; परंतु उसे शंकर के अभाव में देहत्याग की तयारी करते देख शंकर ने प्रगट हो उसे अनेक वर दिये। क्षीरसागर दिया तथा गणों का अधिपति नियुक्त किया। उसने शंकर पर अनेक स्तोत्र रचे। उसने आठ ईटों का मंदिर बना कर मिट्टी के शिवलिंग की आराधना की, तथा पिशाचों द्वारा लाये गये विघ्नों पर भी उसने तप को भग नहीं होने दिया (शिव. वाय. १.३४)। यह शैव था। इसने कृष्ण को शिवसहस्रनाम बताया (म. अनु. १७)। तथा पुत्रप्राप्ति के लिये तप करने जब कृष्ण आया, तब उसे शैवी दीक्षा दी। हिमवान् पर्वत के आश्रम में अंत में यह अत्यंत जीर्णवस्त्र ओढ कर रहता था। इसने जटा भी धारण की थी। यह कृतयुग में हुआ था (म. अनु. १४-१७; शिव. उमा. १)। शंकर के बताये अत्यंत विस्तृत शैवसिद्धांत को इसने ऊरु, दधीच तथा अगस्त्य इनके साथ संक्षेप में कर समाज में प्रसिद्ध किया (शिव. वाय. ३२)।

२. नंदिकेश्वरकृत काशिका ग्रंथ पर व्याघ्रपद के पुत्र उपमन्यु की टीका है। इस टीकाकार ने अपनी अपनी टीका में इस काशिका के बारे में यह विवरण दिया है कि, शिव ने अपने डमरू के मिष (बहाने) सनक, सनंदन, सनातन, सनत्कुमार इत्यादि ऋषियों के तथा नंदिकेश्वर, पतंजलि, व्याघ्रपाद आदि भक्तों के लिये चौदह सूत्रों के द्वारा ज्ञान प्रगट किया। परंतु उन में से केवल एक नंदिकेश्वर को इन सूत्रों का तत्त्वार्थ समझा, तथा उसने इन छब्बीस श्लोकों की कारिका रची (शिवदत्त-महाभाष्य पृष्ठ ९२ देखिये)। व्याकरण संबंधी माहेश्वर के चौदह वर्णसूत्र प्रसिद्ध है, जो महेश्वर ने डमरू बजा कर पाणिनि को दिये ऐसी प्रसिद्धि है। इन सूत्रों का कुछ गूढार्थ है, ऐसा नंदिकेश्वरकाशिका से पता चलता है। शेखर के रचयिता नागेशभट्ट ने नंदिकेश्वर काशिका को प्रमाण माना है। इस बात से पता चल जायेगा कि उपमन्यु, पाणिनि तथा पतंजलि के पश्चात् का रहा होगा। व्याघ्रपाद (उपमन्यु का पिता), नंदिकेश्वर तथा पतंजलि समकालीन थे, ऐसा प्रतीत होता है। परंतु काल की दृष्टि से सारे उपमन्यु एक है यह कहना असंभव लगता है। इसके द्वारा लिखे ग्रन्थ, १. अर्धनारीश्वराष्टक, २. तत्त्वविमर्षिणी, ३. शिवाष्टक, ४. शिवस्तोत्र (बृहत्स्तोत्र रत्नाकर में छपा है), ५. उपमन्युनिरुक्त (C. C.) हैं। इसने एक स्मृति की भी रचना की थी, ऐसा स्थान स्थान पर आये वचनों से पता चलता है।

३. वेद ऋषि का शिष्य।

४. कृष्णद्वैपायन व्यास का पुत्र, शुकाचार्य का बंधु।

५. इंद्रप्रमतिपुत्र वसु का पुत्र (ब्रह्माण्ड. २.९.१०)। यह ऋग्वेदी श्रुतर्षि मध्यमाध्वर्यु भी था।

उपमश्रवस्--मित्रातिथि का पुत्र (ऋ. १०.३३.७)। मित्रातिथि की मृत्यु के बाद कवष ऐलूष इसका सांत्वन करने आया (ऋ. १०.३३)। इसी सूक्त में कुरुश्रवण त्रासदस्यव की दानस्तुति है। कुरुश्रवण त्रासदस्यव तथा मित्रातिथिपुत्र उपमश्रवस् का कोई संबंध रहा होगा ऐसा नहीं लगता (सायणभाष्य व बृहदे.)।

उपयाज--कश्यपगोत्रोत्पन्न ऋषि (द्रुपद देखिये)।

उपयु--पराशरकुल का गोत्रकार।

उपरिचर वसु--(सो. ऋक्ष.) यह कुरुवंश के सुधन्वा की शाखा के कृतयज्ञ या कृति का पुत्र है (सुधन्वन् देखिये)। इसने यादवों से चेदि देश जीत लिया तथा चैद्योपरिचर अर्थात् चैद्यों का जेता यह नाम स्वयं लिया (वायु. ९४; ब्रह्माण्ड. ३. ६. ८; ह. वं. १. ३०; ब्रह्म. १२; म. आ. ५७)। उपरिचर इसकी पदवी है तथा वसु इसका नाम है। उपरिचर शब्द की भांति ही अंतरिक्षग, आकाशस्थ, ऊर्ध्वचारी आदि शब्द इसके लिये प्रयुक्त हैं। यह सदा विमान में बैठ कर आकाश में विचरण करता था, ऐसा इसके बारे में वर्णित है। इसके गले में इंद्रमाला के कारण इसे इंद्रमाली कहते थे। इसकी स्त्री गिरिका। इसने तप कर इंद्र को संतुष्ट किया। इंद्र ने इसे स्फटिकमय दिव्य विमान दिया तथा जिसके कमल कभी नहीं मुरझायेंगे ऐसी इंद्रमाला नामक वैजयंती अर्पण की और कहा कि, तुम्हे पृथ्वी पर धर्माचरण करने के बाद पुण्यलोक प्राप्त होंगे; इस लिये तू

चेदि देश में वास्तव्य कर। वैजयंती के प्रभाव से युद्धभूमि में शस्त्रों के व्रण होने का डर नहीं था।

इंद्र ने तत्पश्चात् साधुओं के प्रतिपालनार्थ बाँस की छडी दी। संवत्सर की समाप्ति के दिन राजा ने उसका थोडा हिस्सा जमीन में गाड़ दिया, तभी से यह रीति राजाओं में अभी भी रूढ है। वर्षप्रतिपदा के दिन इसे छड़ी को वस्त्रभूषणों से सुशोभित कर, तथा गंधपुष्पों से अलंकृत कर उच्चस्थान पर आरोहित करते है राजा वसु के प्रीत्यर्थ हंस रूप धारण किये ईश्वर की इस यष्टि द्वारा राजा लोग बडे आदर से विधिपूर्वक पूजा करते है। इस उत्सव की प्रभा राजा ने फैलाई, यह देख इंद्र ने ऐसा वर दिया कि जो राजा चेदिराजा की तरह मेरा उत्सव करेगा, उसके राज्य में अखंड लक्ष्मी का वास होगा तथा जन संतुष्ट रहेंगे।

नगर के पास से बहनेवाली शुक्तिमती नदी को कोलाहल नामक पर्वत रोक रहा है, यह देख राजा ने पर्वतपर एक पदप्रहार किया तथा उसमें एक विवर निर्माण कर, नदी के लिये मार्ग बना दिया। पर्वत की उतनी संगति के कारण नदी को एक जुडवा (एक पुत्र एवं एक पुत्री) हुआ। नदी ने कृतज्ञ हो, पुत्र तथा पुत्री राजा को अर्पण की। राजा ने पुत्र को अपना सेनापति बनाया तथा उस पुत्री के साथ पाणिग्रहण किया। यही गिरिका थी। वह शीघ्र ही नवयुवती हुई परंतु ऋतुदान के दिन राजा को पितरों ने मृगया हेतु वन में जाने की आज्ञा दी। आज्ञानुसार राजा मृगया हेतु गया। परंतु अत्यंत कामोत्सुकता के कारण उसका रेत स्खलित हुआ, जिसे उसने एक दोने में रखा तथा एक श्येन पक्षी को अपनी भार्या के पास ले जाने को कहा। वह पक्षी ले कर जा रहा था कि, राह में एक दूसरे बुभुक्षु श्येन पक्षी ने उस पर हमला कर दिया। इस संघर्ष में वह दोन यमुना नदी में गिर पड़ा तथा अद्रिका नामक मत्स्यी को मिला। यह मत्स्यी एक शापभ्रष्ट अप्सरा थी। दस महीने के बाद एक धीवर के द्वारा पकडी गयी। उसे काटते ही पेट से एक लडका एवं एक लड़की निकली। तब धीवर उन्हें राजा के पास ले गया तथा सारी कथा कह सुनाई। राजा ने लड़के का नाम मत्स्य रख, उसे अपने आप रखा तथा लड़की एक धीवर को दे कर उसका लालनपालन करने की आज्ञा दी। यही सत्यवती (मत्स्यगंधा) है।

उपरिचर वसु के पांच पुत्र थे। बृहद्रथ, प्रत्यग्रह, कुशांब, मणिवाहन (मावेल्ल*) तथा यदु। इसने अपने पुत्रों को अलग अलग राज्य दिये (म. आ. ५७, २८–२९)। इसके पुत्रों में मत्स्य तथा काली नाम हैं। बृहद्रथ ने मगध में बार्हद्रथ कुल की स्थापना की। कुशांब को (मणिवाहन) कौशांबी, प्रत्यग्रह को चेदि, यदु को करूप तथा पांचवे मावेल्ल को मत्स्य देश मिला (म. द्रो. ९१)। यह पूर्व जन्म में अमावसु पितर था।

एक समय इंद्र तथा महर्षियों का यज्ञ में, पशुहिंसा विहित या अविहित है इस पर विवाद हुआ। इतने में वहां उपरिचर वसु का आगमन हुआ। सत्यवक्ता होने के कारण इस से विवाद का निर्णय पूछा गया। इसने इंद्र का पक्ष ले कर पशुवध के अनुकूल मत दिया। तब ऋषियों ने शाप दिया कि, तुम्हारा अधोलोक में पतन होगा। शाप मिलते ही यह रसातल में पतित हुआ (मत्स्य. १४२)। महाभारत में यह वाद, अजवध करना चाहिये या बीज उपयोग में लाना चाहिये, ऐसा था। उस समय उपरिचर वसु अंतरिक्ष में मार्गक्रमण कर रहा था। तब ऋषियों ने निर्णयार्थ इसे बुलाया। दोनों पक्षों की बात समझ लेने पर, वसु ने देवताओं का पक्ष लिया तब ऋषियों ने शाप दिया कि, चूँकि देवताओं का पक्ष ले कर तुमने अनृत भाषण किया है, इसलिये तुम्हें पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करना पड़ेगा। तदनुसार यह राजा अधोमुख हो पृथ्वी के विवर में घुसा। परंतु नर-नारायण की कृपा से नारायण का मंत्र जप कर, तथा पंचमहायज्ञ कर इसने नारायण को संतुष्ट किया। अंत में विष्णु की आज्ञानुसार गरुड ने आ कर इसे शापमुक्त किया तथा पहले की तरह इसे अंतरिक्ष में मार्गक्रमण करने के लिये समर्थ बनाया। यह बृहस्पति का पट्टशिष्य हुआ। उसके पास से इसने चित्राशिखंडी संज्ञक सप्तर्षियों द्वारा रचित शास्त्र का अध्ययन किया। इसने अश्वमेध यज्ञ किया, जिसमें बृहस्पति ने होतृत्व स्वीकार किया था। इसमें पशु वध नहीं हुआ। इसे यज्ञ में इसे नारायण ने प्रत्यक्ष दर्शन दिया। इस निष्ठावान राजा को महीतल छोड़ने पर तत्काल परमपद प्राप्त हुआ (म. शां. ३२२–३२४)। अद्रिका नामक अप्सरा के साथ एक बार यह विमान पर से जा रहा था। सोमपद में रहने वाले पितरों की मानसकन्या अच्छोदा ने, इसे देख कर इसे अपना पिता माना, तथा इसने भी उसे कन्या रूप में स्वीकार किया। यह देख कर उसके पिता ने इसे शाप दिया कि तुम इस अप्सरा सहित पृथ्वी पर जाओगे तथा तुमसे यह कन्या होगी। यह सुनते ही वसु ने उसके

चरण पकड लिये। तब उन्होंने कहा कि, तुम पृथ्वी पर कृतयज का पुत्र हो कर भगवदाराधना कर वैकुंठ पद प्राप्त करोगे तथा अच्छोदा, अद्रिका के उदर से काली नाम से जन्म लेगी। यही सत्यवती है (स्कंद २.९.४-७; मत्स्य. ५०)।

उपरिबभ्रव--शान्त्युदक करते समय कौनसा मंत्र प्रयुक्त करना चाहिये, इस विषय में इसका मत भिन्न है (कौ. सू. ९.१०)। उसी तरह, प्रेत किस तरह रखना चाहिये, इस विषय पर इसका मत पितृविधि में लिखा हुआ है (कौ. सू. ८०.५४)।

उपरिमंडल--भृगुकुल का एक गोत्रकार। परिमंडल ऐसा पाठ है।

उपलप--वसिष्ठ गोत्र का ऋषिगण।

उपलंभ--(सो. वृष्णि.) अक्रूर का रत्ना उर्फ शैब्या से उत्पन्न पुत्र (मत्स्य. ४५.२९)।

उपलोम--वसिष्ठकुलोत्पन्न ऋषि।

उपवर्ष--पाटलीपुत्र के शंकरस्वामी का पुत्र तथा पाणिनि का गुरुबंधु। इसने पूर्वोत्तरमीमांसासूत्र पर वृत्ति रची है। शबर और शंकराचार्य ने इसका बारंबार निर्देश किया है (कथासरित्सागर)। यह बौधायन का दूसरा नाम रहा होगा। परंतु श्रीभाष्यकार इन दोनों को एक नहीं मानते क्यों कि ऐकात्म्याधिकरण में (ब्र. सू. ३.३.५३) शंकराचार्य ने उपवर्ष का विवरण दिया है। श्रीभाष्यकार उसी अधिकरण को प्रत्यगात्म पर लगाते हैं। उपवर्ष का शबर स्वामी ने भी उल्लेख किया है। ऐसी एक आख्यायिका है कि काश्मीर में रामानुजाचार्य को केवल एक बार बौधायनवृत्ति देखने मिली। यह संधि पा कर उन्होंने उसे पुरा पढ लिया तथा इससे श्रीभाष्य लिखा।

उपवाह्यका--संजय की पुत्री और भजमान की स्त्री (ह. वं. १.३७.३)।

उपवेशि--कुश्रि का शिष्य (बृ. उ. ६.५.३.)।

उपश्लोक--ब्रह्मसावर्णि मनु का पिता।

उपसुंद--सुंदोपसुंद देखिये।

उपस्तुत वार्ष्टिहव्य--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११५)। कण्व मेध्यातिथि के साथ इसका निर्देश है (ऋ. १. ३६. १०; १७)। इसका बहुवचनी स्तोता मानकर उल्लेख हैं (ऋ. ८.१०३.८)। उपस्तुत का ऋग्वेद में कई बार उल्लेख है।

उपहूत--स्वर्ग में रहने वाले पितर। इनकी कन्या यशोदा। यशोदा का पुत्र खट्वांग (ब्रह्माण्ड. ३.१०.९०)।

उपाध्याय--कश्यप को आर्यावती से उत्पन्न पुत्र (भवि. प्रति. ४.२१)।

उपान--साध्यदेवों में से एक।

उपावि जानश्रुतेय--उपसदकर्म के विषय में प्रमाण की तरह मान्य एक प्राचीन आचार्य का यह नाम है (ऐ. ब्रा. १.२५)।

उपात्राद्वि--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक ऋषि।

उपासंगधर--(सो. वृष्णि.) मत्स्यमतानुसार वसुदेव का देवरक्षिता से उत्पन्न पुत्र।

उपोदिति गौपालेय--सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १२. १३. ११)।

उभक्षय--(सो. पूरु.) वायुमतानुसार भीम का पुत्र।

उभयजात--भृगुकुलोत्पन्न ब्रह्मर्षि।

उमा--हिमालय की मेना से उत्पन्न पुत्री। इसका पति रुद्र (पद्म. सृ. ९)। उपनिषद् में विद्या का उमा हैमवती ऐसा निर्देश है (जै. उ. ब्रा. ४. २०. १२)।

उम्लोचा--एक अप्सरा (म. आ. ११४.५४)।

उर वार्णिवृद्ध--एक आचार्य (सां. ब्रा. ७. ४)।

उरुक्रम--आदित्यों में से एक। यह ऊर्ज (कार्तिक) माह में प्रकाशित होता है (भा. १२.११)। परंतु भविष्य पुराण में ऐसा दिया है कि यह चैत (चैत्र) में प्रकाशित होता है और इसकी १२०० किरणें हैं (भवि. ब्राह्म. १७८; विवस्वान् देखिये)। विष्णु तथा त्रिविक्रम इसे नामांतर हैं। कीर्ति इसकी भार्या थी, जिससे बृहच्छ्लोक नामक पुत्र हुआ (भा. ६.१८.८)।

उरुक्रिय--(सू. इ. भविष्य.) बृहद्बल का पौत्र व बृहद्रण का पुत्र जिसे अभिमन्यु ने मारा। उरुक्षय इसका नामांतर है। वत्सवृद्ध या वत्सद्रोह इसका पुत्र था।

उरुक्षय--(सो. पुरु.) विष्णुमतानुसार महावीर्य का पुत्र। यह क्षत्रिय से ब्राह्मण हुआ था। इसे विशाला से उत्पन्न त्र्य्यारुण, पुष्करिन् तथा कपि भी ब्राह्मण थे।

२. अंगिरा गोत्र का प्रवर।

उरुक्षय आमहीयव--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११८)। उरुक्षय का बहुवचन में निर्देश इस सूक्त में है (ऋ. १०. ११८.८-९)

उरुक्षेप--(सू. इ.) भविष्यमतानुसार बृहदैशान का पुत्र।

उरुचक्रि आत्रेय--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.६९-७०)।

उरुधिष्ण्य--धर्मसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

उरुनेत्र--जालंधर की सेना का एक राक्षस। इस पर गणपति ने खड्गप्रहार किया, जिससे उसके मुख में से नौ सिर तथा अठारह भुजाओं वाला दैत्य निकला (पद्म. पा. १७.)।

उरुवल्क--वसुदेव तथा इला का पुत्र।

उरुश्रवस्--(सो. नरिष्यंत.) सत्यश्रवस् का पुत्र। इसका पुत्र देवदत्त।

उर्मि--सोम का पुत्र।

उर्मिला--एक गंधर्वी, सोमदा की माता।

२. सीरध्वज जनक की कन्या। दशरथपुत्र लक्ष्मण की स्त्री।

उर्व--एक ऋषि। च्यवन ने अपने कुल का वृत्तान्त कहा है। उस में ऊर्व नामक एक तेजस्वी कुलवर्धक का निर्देश है। उससे अग्नि उत्पन्न हुआ। वह समुद्र में वडवा-रूप से है। उसका पुत्र ऋचीक। वह बडा योद्धा था। उसने जमदग्नि को अपना पुत्र माना। ऋचीक की पत्नी गाधि की कन्या थी। गाधि का पुत्र विश्वामित्र। ऋचीक को गाधिकन्या सत्यवती से क्षत्रियान्त परशुराम पैदा हुआ। इस प्रकार भृगु तथा कुशिककुल का संबंध है (म. अनु. ५६)।

बाहु का पुत्र सगर। वह अयोध्या का नृप था। हैहय तालजंघ ने उसे राजपद से च्युत किया। तब ऊर्व भार्गव ने उसका रक्षण किया (वायु. ८८.१२३)।

इससे और्ववंश पैदा हुआ (वायु. ८८.१५७; मत्स्य. १२. ४०)। इसने अपनी जंघा से और्व अग्नि नामक पुत्र उत्पन्न किया। यहाँ ऊर्व को शुक्र कहा है। देव, मुनि तथा दानव इसके अनुयायी थे (पद्म. सृष्टि. ३८.७४-१०७)। पद्म में उर्व शब्द ऊर्व है।

२. (सो. पूरु. भविष्य.) मत्स्यमतानुसार पुरंजय का पुत्र।

उर्वरा--एक अप्सरा (म. अनु. ५०.४७ कुं.)।

उर्वरीयान--सावर्णिमनु का पुत्र।

उर्वरीवत्--और्व का नामांतर।

उर्वशी--एक अप्सरा की तरह ऋग्वेद के काल से प्रसिद्ध है। ऋग्वेद में उर्वशी के एक संवादात्मक सूक्त में बहुत सी ऋचायें हैं (ऋ. १०.९५) उर्वशी शब्द ऋग्वेद में कई बार आया है (ऋ ४.२. १८; ५.४१. १९; ७. ३३.११; १०.९५. १०, १७)। तथापि अंतिम तीन स्थानों पर तो निश्चित रूप से व्यक्तिवाचक शब्द है। सातवें मंडल में इससे वसिष्ठ उत्पन्न हुआ ऐसा बताया गया है तथा दसवें मंडल में उर्वशी-पुरूरवा संवाद है। शर्त के अनुसार, राजा नग्न अवस्था में दिखाई देने के कारण उर्वशी उसे छोडकर जाती है। वह छोड़कर न जावे इसलिये राजा पागल की तरह भटकते भटकते एक सरोवर के पास आया। वहां वह सखियों के साथ क्रीडा कर रही थी। उस स्थान पर राजा तथा उर्वशी का संवाद हुआ जो ऋग्वेद में वर्णित है (श. ब्रा. ११,५.१. मा. ९.१४)। उर्वशी गर्भवती थी इसलिये उसने राजा के पास आना अस्वीकार कर दिया। संक्षेप में संवाद का यही सार है। अपने लिये प्राणत्याग करने को प्रवृत्त हुए राजा को प्राणत्याग से निवृत्त होने को बता कर उर्वशी ने नारी स्वभाव की अच्छी कल्पना राजा को दी। उर्वशी देवों में से भी है ऐसा वहां वर्णित है। इसीलिये उसने राजा को सुझाया है कि मृत्यु के बाद स्वर्ग में आने पर उसे उसका सहवास प्राप्त होगा।

उर्वशी को देखकर वासतीवरसत्र में मित्रावरुणों का रेत स्खलित हुआ तथा उनसे कालोपरांत अगस्त्य तथा वसिष्ठ उत्पन्न हुए (कात्यायनकृत सर्वानुक्रमणी. १.१६६; बृहद्दे. २.३७;४४.१५६; ३.५६)। उर्वशी पुरूरवस का आख्यान बहुत प्राचीन काल से प्रसिद्ध है। अप्सराओं का निर्देश ऋग्वेद में है।

नर नारायण ऋषि बदरिकाश्रम में तप कर रहे थे। वे इंद्रपद न ले लें, इस भय से इंद्र ने वसंत, काम एवं मेनका, रंभा, तिलोत्तमा, घृताची आदि सोलह हजार पचास अप्सराओं को उन्हें तप से परावृत्त करने के लिये भेजा (दे. भा. ४.६)। विष्णुपुराण में ऐसा वर्णन है कि पुराण-पुरुष विष्णु गंधमादन पर तप कर रहे थे तब यह मदन-सेना भेजी गयी थी (पद्म. सृ. २२)। गायनादि प्रकारों से उन्हें मोहित करने के कई प्रयत्न किये गये; परंतु सब निष्फल हुआ देख वे सब खिन्न हो गये। नरनारायणों ने उन सबका अत्यंत मधुर शब्दों से आदरातिथ्य कर के, पूछा कि आपका यहा आगमन किस हेतुसे हुआ है? जिससे कामादि लज्जित हो अधोमुख कर स्तब्ध खडे हो गये। इतने में उन्होंने देखा कि नारायण की जंघा से सोलह हजार इक्कावन अप्सरायें प्रगट हुई जिनमें उर्वशी अत्यंत सुंदर थी। यह उरु अर्थात् जंघा से उत्पन्न हुई इसलिये इसका नाम उर्वशी हुआ। नरनारायणों ने इंद्र को भेंट करने के लिये नयनाभिरामा उर्वशी कामादि के सुपुर्द की। तदुपरांत सब अप्सराओं ने नरनारायणों की सेवा में रहने के लिये

प्रार्थना की, परंतु नरनारायणों ने उनकी सेवा स्वीकार नहीं की (दे. भा. ४.६; भा. ११.४; मत्स्य. ६०)।

यह एक बार सूर्याराधना को जा रही थी। तब इसने मित्र आदित्य को वरण करने का आश्वासन दिया। आगे वरुण मिला उसने भी इसे वरण करने का अभिवचन मांगा। तब इसने मित्र को वचन देने की बात बताई। वरुण ने बाद में इससे प्रेमयाचना की तथा वह इसने दिया। तदुपरांत वरुण ने इसे उद्देश कर एक कुंभ में अपना वीर्य डाला। मित्र को यह समझते ही उसने इसे शाप दिया "मृत्युलोक में पुरूरवा की स्त्री हो"। तथा अपना वीर्य एक कुंभ में डाला। इन दोनों कुंभों के वीर्य से अगस्त्य तथा वसिष्ठ का जन्म हुआ (पद्म. सृ. २२; भा. ९.१४; मत्स्य. ६०; वा. रा. उ. ५६.५७) मित्रावरुण बदरिकाश्रम में तप कर रहे थे। उस समय सौंदर्यवत्ती उर्वशी फूल तोडते हुए इन्हें दिखाई पड़ी। तब इनका रेत स्खलित हुआ जिससे अगस्त्य तथा वसिष्ठ का जन्म हुआ। उर्वशी को देखते ही मित्र का रेत स्खलित हुआ, जिसे उसने शाप के भय के कारण पैरों तले रौंद डाला। तब वसिष्ठ का जन्म हुआ (विष्णु. ४.५)।

एक बार नारद ने पुरूरवस् राजा की बहुत स्तुति की। इस कारण यह उस पर मोहित हुई (भा.९.१४)। पुरूरवस् पर मोहित होने के कारण लक्ष्मीस्वयंवर नामक प्रबंधनाट्य करते समय कुछ हावभावों में भूल हो गयी। तब भरत ऋषि ने शाप दिया, कि तूम पचपन वर्ष लता बन कर रहोगी। शाप की अवधि समाप्त होने पर जब यह पुरूरवस् के पास जा रही थी, तब राह में केशी नामक दैत्य इसे उठा कर ले गया; परंतु सौभाग्यवश पुरूरवस् ने ही इसे मुक्त किया (पद्म. सृ. १२. ७६-८५; मत्स्य. २४. २३-३२)।

तत्पश्चात् उर्वशी पुरूरवस् के नगर में आयी तथा उसने अपनी तीन शर्तें बतायी। (१) इन दो भेडों को मैं पुत्रवत् पाल रही हूं उनका संरक्षण करना होगा, (२) मैं सदा घृताहार करूंगी, (३) मैथुन अतिरिक्त कभी तुम्हें नग्न न देखूंगी। इन शर्तों का पालन करते हुए पुरूरवस् ने उर्वशी का चित्ररथ व नंदन आदि वनों तथा अल्का आदि नगरों में ६१००० वर्ष तक उपभोग किया। परंतु बाद में तीसरी शर्त भंग हो जाने के कारण वह देवलोक गई। पुरूरवस् को इससे आयु आदि छः पुत्र हुए थे (भा. ९.१४-१५; विष्णु. ४.६-७; दे. भा. १.१३; म. आ. ७०.२२)।

अर्जुन के जन्म के समय गायन करने वाली ग्यारह अप्सराओं में यह भी एक थी (म. आ. ११४.५४)। कुबेर की सभा में उसकी सदा सेवा करने में यह निमग्न रहती है (म. स. १०.११)। अर्जुन इंद्र लोक में शिक्षा ग्रहण करने गया था। वहां एक बार इसको ओर कुलकी जननी इस पूज्यभाव से अर्जुन ने देखा। यह बात इन्द्र के ध्यान में न आयी तथा उसने सोचा कि, शायद काम इच्छा से अर्जुन इसकी ओर देख रहा है इसलिये इंद्र ने चित्ररथ गंधर्व के द्वारा उर्वशी को समाचार भिजवाया तब यह सायंकाल में सुंदर वस्त्रों से सजधज कर अर्जुन के पास गयी परंतु अर्जुन ने खुद की भावना बता कर इसका निषेध किया। इच्छाभंग होने के कारण इसने अर्जुन को, 'तू एक वर्ष तक नपुंसक बन कर रहेगा,' ऐसा शाप दिया। तब इंद्र ने अर्जुन को सांत्वना दी कि तेरहवें वर्ष (अज्ञातवास में) यह शाप तेरे काम आयेगा (म. व परि. १.६; पं. १३२-१५०)। अष्टावक्र के सन्मान के लिये वरुण ने जिन अप्सराओं का नृत्य कराया था उनमें यह भी थी (म. अनु. १९.४४)। 'अनेक पवित्र पदार्थ मेरा रक्षण करें; भीष्म के मुख से निकलने वाले इस उल्लेख में पवित्र अप्सराओं में उर्वशी का नाम है। (म. अनु. १६५.१५). उर्वशी के नाम पर उर्वशीतीर्थ नामक एक पवित्र तीर्थस्थान प्रसिद्ध है (म. व. ८२.१३६; देवव्रत देखिये)। यह ब्रह्म वादिनी थी (ब्रह्मांड ३.३३)।

उर्वीभाव्य--(सो. कुरु भविष्य.) मत्स्यमतानुसार पुरंजय का पुत्र।

उर्वीशू—यह पापी था, परंतु व्रत तथा दान के कारण इसका उद्धार हुआ (पद्म. क्रि. १९)।

उल वातायन--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८६)।

उल वार्ष्णिवृद्ध--एक आचार्य (सां. ब्रा. ७.४)।

उलुक्य जानश्रुतेय--एक आचार्य (ऐ. उ. ब्रा. १.६.३)

उलूक—एक ऋषि। (म. शां. ४७.६६०) विश्वामित्र का पुत्र म. अनु. ७. ५१ कुं.)

२. एक क्षत्रिय। यह द्रौपदीस्वयंवर में था (म. आ. १७७.२०)। दुर्योधन ने इसे युद्धारंभ के पूर्व उपप्लव्य नगर में धर्मराज के पास दूत बनाकर भेजा था (म. उ. १५७. १६०)। इसे कैतव भी कहते हैं। इसने धर्म को दुर्योधन का संदेश सुनाया (म. उ. १६०)। युयुत्सु के साथ

इसका युद्ध हुआ था (म. क. १८.१)। सहदेव ने इसका वध किया (म. श. २७–२९)।

३ हिरण्याक्ष दैत्य के चार पुत्रों में से एक।

४ शिवावतार सोम का शिष्य।

५ शिवावतार सहिष्णु का शिष्य।

उलूकी—कश्यप तथा ताम्रा की कन्या। इसे उलूक हुए (म. आ. ६०. ५४)। काकी भी इसका नाम रहा होगा।

उलूखल—व्यास की सामशिष्यपरंपरा के ब्रह्मांड मतानुसार हिरण्यनाभ के शिष्यों में से एक (व्यास देखिये)। वायु में उलूखलक ऐसा पाठ है।

उलूप—विश्वामित्रकुल का ऋषि गण।

उलूपी—ऐरावत नाम नागकुल के कौरव्य नाग की कन्या। यह ऐरावत नाग के पुत्र से ब्याही गयी थी। विवाहोपरांत कुछ ही दिनों में गरुड ने इसके पति का वध किया। इस कारण यह बालविधवा हुई। कालोपरांत पंडुपुत्र अर्जुन तीर्थयात्रा करने निकला वह गंगा में स्नान करने उतरा। उसे देख इसके मन में अर्जुन के प्रति प्रेम उत्पन्न हुआ तथा वह उसे पानी में खींच ले गयी। अर्जुन ने उलूपी की प्रार्थना स्वीकार कर इससे गांधर्व विधि से विवाह किया। इस विवाह में ऐरावत की भी सम्मति थी कारण इससे अपने वंश का विस्तार होगा यह बात उसने ध्यान में रखी थी। बाद में उलुपी को अर्जुनसे इरावान् नामक पुत्र हुआ (म. आ. २०६; भी. ८६. ६)। पांडवों के अश्वमेध के समय अर्जुन बभ्रुवाहन के हाथ से मारा गया। वस्तुतः वह मरा नहीं था; भीष्म को शिखंडी की आड से मारने के कारण लगे पाप का निरसन हो इसलिये उलूपी ने माया के योग से इसे मूर्च्छित किया था। फिर उलूपी ने संजीवनी मंत्र का चिंतन किया तथा तुरंत ही नागों ने वह ला दिया जिसके द्वारा अर्जुन की मूर्च्छा दूर कर उसे उलूपी ने सावधान किया (म. आश्व ७८–८०; बभ्रुवाहन देखिये)। पांडव जब महाप्रस्थान के लिये निकले तब उलूपी उनके साथ थी। बाद में इसने गंगा में देहत्याग किया (म. महा. १. २५)।

उल्कामुख—राम की सेना का एक वानर। यह अंगद के साथ दक्षिण दिशा में सीता की खोज में गया था (वा. रा. कि. ४१)।

उल्बण—(स्वा.) वसिष्ठ तथा अरुंधती के सात पुत्रों में से एक।

उल्मुक—(स्वा.) चक्षुर्मनु तथा नड्वला के ग्यारह पुत्रों में कनिष्ठ। इसकी स्त्री पुष्करिणी। अंग, सुमनस्, ख्याति, ऋतु, अंगिरा तथा गय ये इसके छः पुत्र थे (भा. ४.१३.१७)।

२. (सो. वृष्णि.) बलराम का पुत्र। यह राजसूय में था (म. स. ३१.१६)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था (म. द्रो. १०.१८)।

उलुप—उलूप का पाठभेद।

उशंगु—(रुशंगु) एक ऋषि। इसने अपने को वार्धक्य आया देख पृथूदकतीर्थ में देह त्याग कर विष्णुलोक में गमन किया (म. श. ३८.२४–२६)। इसके आश्रम में आर्ष्टिषेण, विश्वामित्र, सिंधुद्वीप, देवापि आदि ने तप कर ब्राह्मण्य प्राप्त किया था (म. श. ३८. ३१–३२)। उस स्थान पर बलराम तीर्थयात्रा के निमित्त गया था।

उशद्रथ—(सो. अनु.) भागवतमतानुसार तितिक्षुपुत्र।

उशनस्—अग्नि देवताओं का दूत है तथा उशना काव्य असुरों का कुलगुरु व अध्वर्यु है। अग्नि तथा उशना काव्य दोनों प्रजापति के पास गये, तब प्रजापति ने उशना काव्य की ओर पीठ कर अग्नि को नियुक्त किया, जिस कारण देवताओं की जय तथा असुरों की पराजय हुई (तै. सं. २.५.८)। यह असुरों का पुरस्कर्ता था (जै. उ. ब्रा. २.७.२–६.) वारुणि भृगु का पुलोमा से उत्पन्न पुत्र (मत्स्य २४९.७; ब्रह्म. ७३.३१–३४)। भृगु का उषा से उत्पन्न पुत्र (विष्णुधर्मोत्तर. १.१०६). उमा ने इसे दत्तक लिया था (म. शां. २७८.३४)। इसको काव्य (मत्स्य. २५.९; वायु. ६५. ७४–७५) कवि (म. आ. ६०. ४०). शुक्र (अंधक देखिये; म. शां. २७८.३२). कवींद्र (म. क. ९८) कविसुत, ग्रह, आदि नाम थे। ब्रह्मदेव ने पुत्र माना इसलिये ब्राह्म, शिव ने वरुण माना इसलिये वारुण आदि नामों से इसे संबोधित करते हैं। उशना, शुक्र तथा काव्य ये सब एक हैं (वायु. ६५.७५)। इसकी माता का नाम ख्याति तथा पिता का नाम कवि मिलता है (भा. ४.१)। भृगु का दिव्या से उत्पन्न शुक्र तथा यह एक ही है। (ब्रह्मांड. ३.१.७४)। इसकी स्त्री शतपर्वा (म. उ. ११५. १३)। इसकी पितृसुता आंगी नामक एक स्त्री थी। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित स्त्रियां भी थीं। प्रियव्रतपुत्री ऊर्जस्वती (भा. ५.१); पुरंदर कन्या जयंती (मत्स्य. ४७)। पितृकन्या

गौ (ब्रह्मांड ३.१.७४)। यह पर्जन्याधिपति, योगाचार्य, देव तथा दैत्यों का गुरु है (वायु. ६५.७४-८५)।

उशनस् काव्य, कुछ सूक्तों का द्रष्टा है (ऋ. ८.८४;९. ८७–८९)। यह दानवों का पुरोहित था (तै. सं. २.५ ८.५; तां. ब्रा. ७.५.२०; सां. श्रौ. सू. १४.२७.१)। इस की योग्यता बडी थी (ऋ. १.२६.१)। इसके कुल में भृगु से ही संजीवनी विद्या अवगत है (भृगु देखिये)। इसने यह विद्या शंकर से प्राप्त की थी (दे. भा. ४. ११)। उशनस् ने कुबेर का धन लूट लिया था इसलिये शंकर ने इसे निगल लिया। तब यह शंकर के शिश्न से बाहर आया तथा शंकर का पुत्र हुआ। तब से इसका नाम शुक्र पडा (म. शां. २७८.३२, विष्णुधर्म. १.१०६)। असुर लगातार हारने लगे तब उन्हें स्वस्थ शांत रहने का आदेश देकर शुक्र, बृहस्पति को जो मालूम नहीं हैं ऐसे मंत्र जानने के लिये शंकर के पास गया। यह संधि जानकर देवोंने पुनः असुरों को कष्ट देना प्रारंभ किया। तब शुक्र की माता सामने आयी तथा उसने देवताओं को जलाना प्रारंभ किया। परंतु इंद्र ने पलायन किया तथा विष्णुने इसकी माता का वध कर के देवताओं की रक्षा की परंतु स्त्री पर हथियार चलाने के कारण, भृगु ने विष्णु को पृथ्वी पर जन्म लेने का शाप दिया तथा शुक्र की माता का सिर पुनः चिपका कर उसे सजीव किया। तब इंद्र अत्यंत भयभीत हुआ तथा उसने अपनी जयंती नामक कन्या शुक्र को दी। शुक्र ने भी हजार वर्षोतक तप करके शंकर से प्रजेशत्व, धनेशत्व तथा अवध्यत्व प्राप्त किया (मत्स्य. ४७.१२६; विष्णुधर्म. १.१०६)। शुक्र ने प्रभास क्षेत्र में शुक्रेश्वर के पास (स्कन्द. ७.१.४८) दुर्धर्ष नामक लिंग की स्थापना करके संजीवनी विद्या प्राप्त की (पद्म. उ.१५३)। जयंती दस वर्षों तक इसके साथ अदृश्य स्वरूप में थी। यह तप वामन अवतार के बाद किया। परंतु वायुपुराण में कहा है कि वे दोनों अदृश्य थे, इसीलिये बृहस्पति का निम्नलिखित षड्यंत्र सफल हुआ।

ऐन समय पर युक्ति से बृहस्पति ने शुक्र का रूप ले लिया तथा मैं ही तुम्हारा गुरु हूँ, शुक्र का रूप ले कर आनेवाला यह व्यक्ति झूठा है ऐसा बतला कर उसे वापिस भेज दिया तथा स्वयं ने असुरों को दुर्वृत्त बनाकर हीन बना डाला (मत्स्य. ४७; वायु. २.३६; दे. भा. ४. ११–१२)।

इसे ऊर्जस्वती तथा जयंती से देवयानी उत्पन्न हुई। देवी नामक कन्या इसने वरुण को ब्याही थी (म. आ. ६०.५२)। इसे षण्ड तथा मर्क नामक दो पुत्र थे (भा. ७. ५.१)। इसे आंगी से त्वष्ट्र, वरुत्रिन तथा षण्डामर्क हुए (कच, वामन तथा बृहस्पति देखिये)। इसे अरजा नामक एक पुत्री थी (पद्म. सृ. ३७)। छठवें मन्वंतर में यह व्यास था। (व्यास देखिये)। शिवावतार गोकर्ण का शिष्य। सारा जग मनोमय है, यह बताने के लिये इसकी कथा प्रयुक्त की गयी है (यो. वा. ४.५–१६)। इसने वास्तुशास्त्र पर एक ग्रंथ रचा है (मत्स्य. २५२)।

यह धर्मशास्त्रकार था। उशनसधर्मशास्त्र नामक सात अध्यायोंवाली एक छोटी पुस्तक उपलब्ध है जिसमें श्राद्ध, प्रायश्चित्त, महापातकों के लिये प्रायश्चित्त तथा अन्य व्यावहारिक निर्बंधों के संबंध में जानकारी दी गयी है। उसके धर्मसूत्र में बहुत से सूत्र मनुस्मृति तथा बौधायन धर्मसूत्र के सूत्रों से मिलते जुलते हैं। याज्ञवल्क्य ने इसका निर्देश किया है (१.५); मिताक्षरा (३.२६०); तथा अपरार्क ग्रंथ में औशनस धर्मशास्त्र के कुछ उद्धरण लिये गये हैं। उसी तरह औशनसस्मृति नामक दो ग्रंथ पहला ५१ श्लोकों का व दूसरा ६०० श्लोकों का जिवानंद संग्रह में उपलब्ध है।

राजनीति विषय पर इसका शुक्रनीति नामक ग्रंथ उपलब्ध है। इसमें से कौटिल्य ने बहुत से उद्धरण लिये हैं। उशनस् उपपुराण का निर्देश औशनस उपपुराण के लिये किया गया है। अनेक स्थानों पर औशनस उपपुराण का निर्देश मिलता है (कूर्म. १.१; गरुड. १.२२३. १९)।

२. उत्तम मनु का पुत्र।

३. सावर्णि मनु का पुत्र।

४. स्वायंभुव मनु का एक जिताजित् देव।

५. भौत्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक। इसके लिये 'शुद्ध' नाम भी प्रयुक्त है।

६. सुतप देवों में से एक।

७. उरु तथा षडाग्नेयी का पुत्र।

८. (सो. यदु.) भागवतमतानुसार धर्म का पुत्र। भविष्यमतानुसार तामस का पुत्र।

उशिक—(सो. क्रोष्टु.) कृति का पुत्र। इसका पुत्र चेदि।

२. शिव के श्वेत नामक दूसरे अवतार का शिष्य। (मा. ९.२४.२)

उशिज—कक्षीवत् देखिये।

उशिज—अंगिराकुलोत्पन्न ऋषि। इसे ऋत्विज नामांतर प्राप्त है। इसे ममता से उत्पन्न दीर्घतमा नामक पुत्र था। उषिज इसका पाठभेद है।

उशिति—अंगिरस तथा स्वराज् का पुत्र। उशिति का पुत्र दीर्घतमस् (ब्रह्माण्ड. ३.१)।

उशीनर—(सो. अनु.) चक्रवर्ती महामनस् का पुत्र। इसे तितिक्षु नामक भाई था। इसकी मृगा, कृमी, नवा, दर्वा, तथा दृशद्वती नामक पांच स्त्रियाँ थीं। जिन्हें क्रमशः मृग, नव, कृमि, सुव्रत तथा शिबि औशीनर पुत्र थे। उशीनर तथा तितिक्षु ये दो स्वतंत्र वंशशाखायें शुरु हुईं। इसके राज्य का प्रसार केकय तथा मद्रक देशों में शिवपुर यौधेय, नवराष्ट्र, कृमिला तथा वृष्टा इन स्थानों पर हुआ (वायु. २.३७.१७–२४; विष्णु ४.१८; मत्स्य. ४८)। ययातिकन्या माधवी से इसे शिबि उत्पन्न हुआ (शिबि देखिये)।

उषस्त वा **उषस्ति चाक्रायण**—एक सामवेत्ता ब्राह्मण। जब कुरु देश में अकाल पड़ा था तब बडी ही बुरी हालत में यह एक ग्राम में पत्नी समवेत रहा। एक बार भूख लगने के कारण, एक महावत को, जब वह कुलथी खा रहा था, तब उसने होले मांगे। तब होले देकर वह पानी भी देने लगा। तब पानी जूठा होने के कारण इसने अस्वीकार कर दिया। जब होले भी जूठे हैं ऐसा उससे कहा गया तब इसने कहा कि उनको बिना खाये मेरा जीना असंभव था, परंतु मैं अपनी इच्छानुसार पानी कहीं भी पी सकता हूँ। थोडी कुलथी पत्नी के लिये भी लाये। तदनंतर पास में ही होने वाले यज्ञ में यह गया। फिर भी विद्वान् होने के कारण अन्य ऋत्विजों के समान इसे भी राजा ने दक्षिणा दी तथा इसने भी प्रस्तोता की सहायता की। अन्य स्थान पर उषस्ति पाठ है (छां. उ. १.१०.१; ११.१)। इसने आत्मा के प्रत्यक्षत्व के संबंध में, याज्ञवल्क्य को प्रश्न किया तथा याज्ञवल्क्य ने इससे कहा कि, आत्मा प्रत्यक्ष दिखाना असंभव है (बृ. उ. ३.४.२)। यहाँ उषस्त पाठ है।

उषस्य—काश्यप तथा खशा का पुत्र।

उषा—बलिदैत्य का पुत्र बाणासुर की कन्या। यौवनावस्था में आने के बाद, एक बार जब सखियों सहित रात्रि के समय अपने मंदिर में सोई थी तब स्वप्न में एक सुंदर तथा तरुण पुरुष से इसका समागम हुआ। जाग्रत होने के पश्चात् इसकी विरहयुक्त चर्या देख कर चित्रलेखा ने कारण पूछा। इसने उसे स्वप्न की संपूर्ण हकीकत बताई तथा स्वप्न के उस पुरुष को लाने के लिये कहा। तब चित्रलेखा ने त्रैलोक्य में प्रसिद्ध पुरुषों के चित्र क्रमशः उतार कर उसे दिखाये। यादव वंश दिखाते समय प्रद्युम्न का चित्र देख कर यह लज्जित हुई तथा अनिरूद्ध का चित्र देख कर लज्जा से अधोमुख हो गई। इससे चित्रलेखा ने स्वप्न का पुरुष जान लिया। चित्रलेखा में योगसामर्थ्य था अतएव तीसरे दिन वह शोणितपुर से द्वारका योगसामर्थ्य से एक क्षण में गई वहाँ उसे अपने काबू में ले कर तथा कृत्रिम अंधकार में ढाँक कर ले आई (शिव. रुद्र. यु. ५३)। रात्रि में निद्रिस्त अनिरुद्ध को वह पर्यंकसहित लायी तब उषा को अत्यंत आनंद हुआ तथा उसने चित्रलेखा के योगसामर्थ्य के प्रति आश्चर्य प्रगट किया। बाद में इसने अनिरुद्ध से गंधर्वविवाह किया तथा गुप्त रूप से इसके साथ चार माह तक सुख से रही। बाणासुर द्वारा इसकी रक्षा के लिये नियुक्त सेवकों ने एक बार यह देखा तथा सब बाणासुर को बताया। यह जानते ही उषा के महल में आया। उसने देखा कि, उषा तथा अनिरुद्ध द्यूत खेल रहे हैं। तब बाणासुर अत्यंत क्रोधित हुआ तथा उसका अनिरुद्ध से युद्ध हुआ। युद्ध में नागपाश ड़ाल कर बाण ने अनिरुद्ध को कैद किया। इधर यादवों ने अनिरुद्ध को खूब ढूंढा परंतु वह मिल न सका। तब नारद ने, अनिरुद्ध का स्थान तथा बाणासुर ने उसकी की हुई दशा बताई। बाणासुर तथा कृष्ण का तुमुल युद्ध हुआ। बाण की करीब करीब सारी सेना नष्ट हो गई तथा बाण के चार हाथ छोड कर बाकी सारें हाथ कृष्ण ने तोड़ ड़ाले। तब बाणमाता कोटरा तथा रुद्र की प्रार्थनानुसार कृष्ण ने बाणासुर को जीवनदान दिया। आगे चल कर बडे समारोह से बाण ने उषा को अनिरुद्ध को दिया। तब सब यादव द्वारका लौट आये (पद्म. उ. २५०; भा. १०. ६२–६३; शिव. रुद्र. यु. ५१–५९)।

२. त्वाष्ट्री संज्ञा का नामान्तर (ब्रह्म. १६५. २)।

उष्ण—(सो. कुरु. भविष्य.) वायु के मतानुसार निर्वक्र पुत्र तथा विष्णु के मतानुसार में निचंकु पुत्र।

उद्दाक—वसिष्ठ कुल का गोत्रकार ऋषिगण।

ऊ

ऊरु आंगिरस-- मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०८.४;५)।

ऊर्ज--स्वारोचिष मनु का पुत्र। सप्तर्षियों में से एक।

२. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

३. उत्तम मनु का पुत्र।

४. सुधामन देवों में एक।

५. (स्वा. उत्तान.) वत्सर तथा स्वर्वीथि का पुत्र।

६. (सो. अज.) वायुमतानुसार सुधन्वन् का पुत्र।

ऊर्जयत् औपमन्यव--भानुमत् का शिष्य। इसका शिष्य सुशारद (वं. ब्रा. १)।

ऊर्जयोनि--विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ५९.७ कुं)।

ऊर्जवह--(सू. निमि.) विष्णुमतानुसार शुचिपुत्र।

ऊर्जव्य--यज्ञ करनेवाले एक यजमान का नाम (ऋ. ५.४१.२०)।

ऊर्जस्वती--(स्वा.) प्रियव्रत तथा बर्हिष्मती की कन्या। शुक्र की स्त्री (भा. ५.१.२४)।

२. अष्ट वसुओं में प्राण वसु की स्त्री।

ऊर्जस्विन्--वैवस्वत मन्वंतर का इंद्र।

ऊर्जा--दक्ष की पुत्री तथा वसिष्ठ की स्वायंभुव मन्वंतर की पत्नी। उस समय इसे चित्रकेतु, सुरोचि, विरजामित्र, उल्बण, वसुभृत्, यान तथा द्युमान् नामक सात पुत्र हुए (भा. ४.१.३८)। इससे भिन्न संतति का भी उल्लेख है।--१. पुंडरिका २. रक्षस् (रत्न), ३. गर्त, ४. ऊर्ध्वबाहु, ५. सवन, ६. पवन, ७. सुतपस्, ८. शंकु (ब्रह्माण्ड २.१२.३९-४३)।

ऊर्जित--(सो. यदु) कार्तवीर्य के प्रमुख पांच पुत्रों में से एक।

ऊर्ण--पूस में सूर्य के साथ घूमने वाला यक्ष।

ऊर्णनाभ--(सो. कुरु) धृतराष्ट्रपुत्र।

२. कश्यप तथा दनु का पुत्र।

ऊर्णनाभि-- अत्रिकुलोत्पन्न ऋषि।

ऊर्णा--स्वायंभुव मन्वंतर में मारीचि प्रजापति की स्त्री। २ (स्वा. प्रिय.) चित्ररथ राजा की स्त्री। इसका पुत्र सम्राज् (भा. ५. १५. १४)।

ऊर्णायु--इसकी स्त्री मेनका (म. उ. ११५.४००.७ पंक्ति ४)। प्राधा से उत्पन्न देवगंधर्वों में से एक।

ऊर्ध्वकृशन यामायन--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४४)।

ऊर्ध्वकेतु--(सू. निमि.) सनद्वाज जनक का पुत्र। इसका पुत्र अज।

२. कश्यप तथा सुरभि के पुत्रों में से एक।

ऊर्ध्वग--कृष्ण तथा लक्ष्मणा का पुत्र। एक महारथी।

ऊर्ध्वग्रावन् आर्बुदि-- सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१७५)।

ऊर्ध्वदृष्टि--पुलह तथा श्वेता का पुत्र। इसे पांच पुत्र तथा पांच कन्याएं थीं (ब्रह्माण्ड. ३.७.२०५)।

ऊर्ध्वनाभा ब्राह्म-- सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१०९)।

ऊर्ध्वबाहु--रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

ऊर्ध्वसद्मन् आंगिरस--मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०८.९)।

ऊर्व--उर्व देखिये।

ऋ

ऋक्ष--आर्क्ष तथा श्रुतर्वन् देखिये।

२. (सो. पूरु.) ऋचा का पुत्र। इसकी पत्नी तक्षक की कन्या ज्वलन्ती थी। इसका पुत्र अंत्यनार (म. आ. ९०.२४; अंतिनार देखिये)।

३. (सो, पुरुरवस्.) अजमीढ तथा धूमिनी का पुत्र। इसकी स्त्री रथंतरी। इसका पुत्र संवरण (म. आ. ८९. २७-२८; चक्षु देखिये)।

४. (सो. कुरु.) वायुमतानुसार देवातिथिपुत्र।

५. शुक्र का पुत्र। इसकी स्त्री विरजा (ब्रह्माण्ड. ३.७.२११)।

ऋक्षदेव—(सो. नील) शिखंडी के दो पुत्रों में से एक। यह भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में था। युद्ध में अपने रथ को वह सुनहले रंग के अश्व जोड़ता था (म. द्रो. २३)।

ऋक्षपुत्र—(सो.) भविष्यमतानुसार अक्रोधन का पुत्र।

ऋक्षरजस्—एक समय मेरु पर्वत पर ब्रह्मा ध्यानमग्न थे। तब उनकी आखों से आंसू गिरे, जिन्हें उन्होंने अपने हाथों में घिस दिया तब उन अश्रु कणों में से यह ऋक्षरजस् वानर उत्पन्न हुआ। एकबार प्यास लगने के कारण यह सरोवर के पास गया। उसमें अपने प्रतिबिंब को शत्रु समझ युद्ध करने के लिये इसने सरोवर में छलांग लगायी। वस्तुस्थिति ध्यान में आते ही यह बाहर आया। बाहर आते ही वह वानर न रह कर स्त्री हो गया है ऐसा उसे लगा। अंतरिक्ष से इंद्र तथा सूर्य की दृष्टि इस पर पडी तथा दोनों ही काम विव्हल हुए। उत्कट काम विकार के कारण इंद्र का वीर्य इसके सिर पर तथा सूर्य का वीर्य इसके गले पर गिरा। (वाल) केशों पर वीर्य गिरने के कारण वाली तथा (ग्रीवा) गले पर गिरने के कारण सुग्रीव उत्पन्न हुआ। रात्रि समाप्त होते ही इस स्त्री को पुनरपि पहले का वानर स्वरूप प्राप्त हुआ। तब यह अपने दोनों पुत्रों लोकोकर ब्रह्मा के पास आया तथा सारी हकीकत उसे बताई। ब्रह्मदेव ने ऋक्षरजस् की अनेक प्रकार से सांत्वना की तथा एक दूत के द्वारा ऋक्षरजस् को किष्किंधा नगरी में राज्याभिषेक किया। वहाँ अनेक प्रकार के वानर थे। उनमें चातुर्वर्ण्य व्यवस्था प्रचलित थी। कालांतर में ऋक्षरजस् की मृत्यु हुई। इसके पश्चात् राज्य वाली को मिला (वा. रा. उ. प्रक्षिप्तसर्ग)।

ऋक्षशृंग—काशी के उत्तर में मंदारवन में तप करने वाले दीर्घतपस् का कनिष्ठ पुत्र। चित्रसेन के बाण से इसकी मृत्यु होने के कारण सब परिवार ने देहत्याग किया। परंतु बचे हुए दीर्घतपस् ने सबकी अस्थियाँ शूलभेद तीर्थ में डालने के कारण सब स्वर्ग में गये (स्कन्द. ३.५३–५५)।

ऋक्षा—अजमीढ की पत्नी। इसका पुत्र संवरण (म. आ. ९०. ३९; ३ ऋक्ष देखिये)।

ऋच—(सो. कुरु. भविष्य.) विष्णु के मतानुसार सुनीथपुत्र (रुच देखिये)।

२. (सो. कुरु.) देवतातिथि तथा मर्यादा का पुत्र। इसकी पत्नी अंगराजकन्या सुदेवा। पुत्र ऋक्ष (म. आ. ९०.२२–२३)।

ऋची—आप्नवान की पत्नी (ब्रह्माण्ड. ३.१.७४)।

ऋचीक—भार्गवकुल का च्यवनवंशज एक प्रख्यात ऋषि (मनु. ४)। और्व का पुत्र (म. आ. ६०.४६; २.४; ह. वं. १.२७)। यह और्व की जंघा फोड़ कर बाहर आया (ब्रह्माण्ड. ३.१.७४–१००)। यह ऊर्व का पुत्र है (म. अनु. ५६)। इसे काव्यपुत्र भी कहा है (ब्रह्म. १०)। इसका और्व ऋचीक कह कर भी उल्लेख है (विष्णुधर्म. १.३२)। उसी प्रकार अनेक स्थानों पर अनेक बार इसे भृगुपुत्र, भार्गव, भृगुनन्दन, भृगु आदि भी कहा है (म. व. ११५.१०; ह. वं. १.२७; ब्रह्म. ३.१०; वा. रा. बा. ७५.२२; पद्म. उ. २६८)। कार्तवीर्य के वंशजों द्वारा अत्यधिक त्रास दिये जाने के कारण सब भार्गव ऋषि मध्य देश में पलायन कर गये। उस समय अथवा उसके कुछ ही पहले ऋचीक का जन्म हुआ तथा जल्द ही उनका मुखिया बन गया। बाल्यावस्था से इसने अपना समय वेदानुष्ठान तथा तप में बिताया। एक बार तीर्थयात्रा करते समय विश्वमित्री नदी के किनारे इसने कान्यकुब्जराज गाधि की कन्या, स्नानहेतु आई हुई देखी। उसके रूप से मोहित हों कर इसने उसके पिता के पास इसकी माँग करने का निश्चय किया। हैहय के विरुद्ध गाधिराज की मित्रता संपादन करने के लिये यह विवाह तय किया गया। यह जब माँग करने आया तब राजा ना नहीं कह सका। तब उसने कहा कि यदि तुम मुझे सहस्र श्यामकर्ण अश्व लाकर शुल्क के तौरपर दोगे तो मैं अपनी यह कन्या तुम्हें दूंगा (म. अनु. ४.७–१० विष्णु. ४.७; भा. ९.१५.५–११)। सातसौ अश्व मांगे (स्कंद. ६. १६६)। परंतु वनपर्व में राजा कन्या देने के लिये तैय्यार हो गया तथापि रूढि के तौरपर एक कानसे श्याम हज़ार अश्व मांगे (११५.१२)। राजा का यह भाषण सुनते ही यह तत्काल उस कान्यकुब्जदेशीय गंगा के किनारे गया तथा वरुण की स्तुति कर के उससे आवश्यक अश्व प्राप्त किये (म. व.११५; अनु.४)। अश्वो वोढा नामक (ऋ. ९.११२) चार ऋचाओं के सूक्त का पठन कर इसने अश्व प्राप्त किये (स्कंद. ६.१६६)। जहाँ ये अश्व निर्माण हुए, वह स्थान कान्यकुब्ज देश में गंगा नदी के किनारे स्थित अश्वतीर्थ नाम से प्रसिद्ध है। अश्व ले कर गाधि राजाने अपनी कन्या सत्यवती इसे दी। इसके विवाह में देव इसके पक्ष के

बाराती थे (म. व. ११५)। ऋचीक ऋषि, सत्यवती भार्या को ले गया तथा आश्रम स्थापित कर गृहस्थधर्म चलाने लगा। तदनंतर जब यह तपश्चर्या करने जाने लगा तब इसने पत्नी से वरदान मांगने के लिये कहा। उसने अपने लिये तथा माता के लिये उत्तम लक्षणों से युक्त पुत्र मांगा। उसके इस मांग से संतुष्ट हो कर इसने ब्राह्मणोत्पत्ती के लिये एक तथा क्षत्रियोत्पत्ती के लिये एक ऐसे दो चरु सिद्ध कर के उसे दिये (म. शां. ४९.१० अनु. ५६; ह. वं. १.२७; ब्रह्म. १०; विष्णु. ४.७; भा. ९.१५) इसने चरु तो दिये ही साथ ही यह भी बताया कि ऋतुस्नात होने पर तुम्हारी माता अश्वत्थ (पीपल) तथा तुम गूलर को आलिंगन करो (म. व. ११५.५७०*; अनु. ४; विष्णुधर्म. १.३२-३३)। दो घटों को अभिमंत्रित कर बताया कि सत्यवती की माता वह वृक्ष की तथा सत्यवती पीपल की सहस्र प्रदक्षिणायें करे (स्कन्द. ६. १६६-६७)। बाद में गाधि ऋचीक के आश्रम में आया। तब सत्यवती को पति द्वारा दिये गये चरु का स्मरण हुआ परंतु माता के कथनानुसार दोनों ने चरु बदल कर भक्षण किये। अल्पकाल में ही जब ऋचीक ने सत्यवती की ओर देखा तब उसे पता चला कि, चरुओं का विपर्यास हो गया है। परंतु सत्यवती की इच्छानुसार क्षत्रिय स्वभाव का पुत्र न हो कर पौत्र होगा ऐसा ऋचीक ने इसे आश्वासन दिया। तदनंतर सत्यवती को जमदग्नि प्रभृति सौ पुत्र हुए। वे सब शांति आदि अनेक गुणों से युक्त थे। परंतु जमदग्नि को रेणुका से उत्पन्न परशुराम उग्र स्वभाव का हुआ। गाधि को विश्वामित्र हुआ तथा उसने अपने तपःसामर्थ्य से पुनः ब्राह्मणत्व प्राप्त किया (म. आ. ६१; व. ११५; शां. ४९; अनु. ४.४८; वायु. ९१.६६-८७ भा. ९.१५; स्कन्द. ६.१६६-१६७)। तदनंतर सत्यवती कौशिकी नदी बनी (ह. वं. १.२७; ब्रह्म. १०; विष्णु. ४.७; १६. वा. रा. बा. ३४)। इस ऋषि ने वड़वाग्नि ढूँढ निकाला (विष्णुधर्म. १. ३२)। शाल्वदेशाधिपति द्युतिमान् राजा ने इसे अपना राज्य अर्पण किया था (म. शां. २२६. ३३; अनु. १३७.२२)। यह परशुराम का पितामह है (पद्म. भू. २६८)। ऋचीक पुत्र तथा कलत्र सहित भृगुतुंग पर्वत पर रहता था (वा. रा. बा. ६१. १०-१३)। विष्णु ने अमानत के रूप में वैष्णव धनुष्य इसे दिया था। वह इसने जमदग्नि को दिया (वा. रा. बा. ७५. २२)। यह धनुर्विद्या में काफी प्रवीण था (म. अनु. ५६.७) इसके वंशजों को आर्चिक कहते हैं (ब्रह्म. १०)। जमदग्नि के अलावा वत्स (विष्णुधर्म. १.३२), शुनःशेप तथा शुनःपुच्छ (ह. वं. १.२७; ब्रह्म. १०) इतने नाम प्राप्त हैं।

२. प्रथम मेरु सावर्णि मनु का पुत्र।

ऋचेयु--(सो. पूरु.) रौद्राश्व को घृताची से उत्पन्न हुआ। इसे तक्षककन्या ज्वलना से अंतिनार हुआ (२ ऋक्ष देखिये)।

ऋजिश्वन्--इसे दो बार वैदथिन (ऋ. ४.१६. १३; ५.२९.११) तथा एक बार औशिज कहा गया है (ऋ. १०. ९९.११)। ये निर्देश मातापिता के नाम से आये होंगे। पिप्रु के साथ हुए युद्ध में इन्द्र ने इससे सहायता की (ऋ. १.५१.५)।

ऋजिश्वन् भारद्वाज—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.४९.५२; ९.९८; १०८)।

ऋजु--(सो. वृष्णि.) भागवतमतानुसार वसुदेव देवकी का कंस द्वारा मारा गया पुत्र। विष्णु के मतानुसार ऋभुदास, मत्स्य के मतानुसार ऋषिदास तथा वायु के मतानुसार ऋजुदाय नाम हैं।

ऋजुदाय--ऋजु देखिये।

ऋजुनस्--सोमयज्ञ करनेवाले लोगों के साथ इसका नाम है (ऋ. ८.५२.२)।

ऋज्राश्व--अंबरीष, सुराधस, सहदेव तथा भयमान के साथ इसका एक वार्षागिर के रूप में उल्लेख है (ऋ. १. १००. १३-१७)। इन्हीं पांच भ्राताओं के नाम पर उपरोक्त संपूर्ण सूक्त है। एक बार अश्वियों का वाहन गर्दभ लोमड़ी के रूप में इसके पास आया। तब इसने उसे एक सौ एक भेड़ें खाने के लिये दीं। तब नगरवासी लोगों की हानि की। इसलिये वृषागिर राजा ने इसकी आंखें फोड़ दीं। तब ऋज्राश्व ने अश्विदेवों की स्तुति करने पर उन्होंने इसे दृष्टि दी। उस लोमड़ी का भाषण भी ऋग्वेद में निम्नप्रकार दिया है। 'हे पराक्रमी तथा शूर अश्वियों, इस ऋज्राश्व ने तरुण तथा कामी पुरुष के अनुसार एक सौ एक भेड़ें काट कर मुझे खाने के लिये दी हैं' (ऋ. १. ११६. १६; ११७. १७-१८)।

ऋजूनस्—इनके यहाँ सोम पी कर इंद्र प्रसन्न हुआ (ऋ. ८. ५२. २)।

ऋणज्य—एक व्यास (व्यास देखिये)।

ऋणंचय—यह रुशमाओं का राजा था। इसने बभ्रु नामक सूक्तकार को काफी दान दिया। बभ्रु कहता है, रुशमाओं ने मुझे चार हजार गायें दीं। एक हजार अच्छी

गायों के साथ ग्रह दिया (ऋ. ५. ३०. १२; १४)। रुशम किस देश को अथवा किन लोगों को कहा गया है यह कह नहीं सकते। यह मंत्रद्रष्टा था (ऋ. ९. १०८. १२)।

ऋत--अंगिरसपुत्र देवों में से एक।

२. (सू. निमि.) विजय जनक का पुत्र। इसका पुत्र शुनक।

३. रुद्र सावर्णि मनु का नामांतर (मत्स्य. ९)।

४. चक्षुर्मनु तथा नड्वला का पुत्र।

५. आभूतरजस नामक देवों में से एक।

६. तुषित नामक देवों में से एक।

७. सुख नामक देवों में से एक।

८. यह युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित था (म. स. ३१.७)।

ऋताजित्--दूसरे मरुद्गणों में से एक।

ऋतंजय-- एक व्यास (व्यास देखिये)।

ऋतधामन्--(सो. वृष्णि.) कंक को कर्णिका से उत्पन्न पुत्र। कृष्ण का चचेरा भाई।

२. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर में होनेवाला इन्द्र।

३. तेरहवें मनु का नामान्तर (मत्स्य. ९)।

ऋतध्वज--(सो. काश्य.) यह शत्रुजित् का पुत्र। गालव ने कुवलय नामक अश्व दे कर इसे अपने आश्रम का कष्ट दूर करने के लिये कहा। एकबार सूकर रूप से आये हुए पातालकेतु के पीछे लग कर एक गड्ढे में गिर कर पाताल में गया। वहाँ पातालकेतु द्वारा भगा कर लाई गई विश्वावसु गंधर्व की कन्या मदालसा थी। उसके साथ इसका विवाह होकर उसे लेकर यह घर आया। तदनंतर यमुना के तट पर रहनेवाले पातालकेतु के भाई तालकेतु ने इसे धोखा दे कर यज्ञ की दक्षिणा के रूप में इसके गले का कंठा माँग लिया। तथा इसे अपने आश्रम में रख कर मदालसा को सूचित किया कि ऋतध्वज मर चुका है तथा चिन्ह के तौर पर मृत्यु के समय उसने यह कंठा दिया ऐसा बताया। मदालसा सती हो गई। ऋतध्वज ने अविवाहित रहने का निश्चय किया। परंतु पुत्र की इच्छानुसार अश्वतर नाग ने सरस्वती से गानविद्या प्राप्त कर शंकर को प्रसन्न किया तथा उससे पहले के ही समान परंतु योगी मदालसा कन्या के तौर पर मांग कर ऋतध्वज को दी। ऋतुध्वज को उससे विक्रान्त, सुबाहु, शत्रुमर्दन तथा अलर्क नामक चार पुत्र हुए तथा मदालसा ने उन्हें योगमार्ग का उपदेश दिया (मार्कं. १८.३४; १९.८८ प्रतर्दन देखिये)

२. वृद्धा देखिये।

ऋतंभर--एक राजर्षि। जाबाली ऋषि के कथनानुसार मन से इसने गाय की सेवा की अतएव इसे सत्यवान् नामक पुत्र हुआ (पद्म. पा. २८)।

ऋतसेन--मार्गशीर्ष माह में सूर्य के साथ साथ घूमनेवाला एक गंधर्व।

ऋतस्तुभ--अश्वियों ने इस ऋषि की रक्षा की (ऋ. १.११२.२०)।

ऋतायन--शल्य के पिता का नाम।

ऋतु--फाल्गुन माह में सूर्य के साथ घूमनेवाला एक यक्ष।

२. प्रतर्दन नामक देवताओं में से एक।

ऋतुजित्--(सू. निमि.) विष्णु के मतानुसार यह अंजनपुत्र है तथा भागवत मतानुसार पुरुजित्।

ऋतुधामन्--चौथे मेरु सावर्णि मन्वन्तर का इंद्र।

ऋतुध्वज--ऋतध्वज देखिये।

ऋतुपर्ण--यह भंगाश्विन का पुत्र तथा शफाल का राजा होगा (बौ. श्रौ. २०.१२)। 'ऋतुपर्णकयोवधिभंग्याश्विनौ' उल्लेख है (आप. श्रौ. २१.२०.३)।

२. (सू. इ.) अयुतायुपुत्र (वायु. ८९; ब्रह्म. ८.८०; ह. वं. १.१५)।

यह अक्षविद्या में अत्यंत निपुण था। नल का सारथि वार्ष्णेय इसके पास सारथि बन कर रहा था (म. व. ५७. २३)। अज्ञातवासकाल में नल बाहुक नाम धारण कर के इसी के पास सारथि रूप में रहा। इसका सच्चा सारथी जीवल (म. व. ६४.८)। इस ने नल को अपनी अक्षविद्या दी तथा नल ने भी अपनी अश्वविद्या इसे दी (म. व. ७०)। यह वीरसेनपुत्र नल राजा का मित्र था। इसे आर्तपर्णि नामक पुत्र था (ब्रह्म. ८.८०; ह. वं. १.१५.२०)। इसका पुत्र सुदास (भा. ९.९)। इसे सर्वकाम या सर्वकर्मा नाम से नल पुत्र था (वायु. ८८. १७४)।

ऋतुमंत--मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र।

ऋतेयु--(सो. पूरु.) रौद्राश्व तथा घृताची के दशपुत्रों में ज्येष्ठ। इसे ऋचेयु नामांतर प्राप्त है। इसे तक्षककन्या ज्वलना से अंतिभार हुआ (ऋचेयु देखिये)।

ऋथु--क्षत्रिय होते हुये भी यह ब्राह्मण तथा ऋषि हो गया था (वायु. २. २९.११४)।

ऋद्धि--वैश्रवण की पत्नी।

ऋभु--यह मानव थे। परंतु तप, यज्ञ इ. करके इन्होंने देवत्व प्राप्त किया। परंतु देव इन्हें अपने में शामिल नहीं करते थे। अन्त में प्रजापति के कथनानुसार ऋभुओं को सूर्य के साथ सोमपान करने का मान मिला। फिर भी इनमें मनुष्यत्व का गंध आता है कह कर देव ऋभुओं का अत्यंत तिरस्कार करने लगे (ऐ. ब्रा. ३. ३०)। एक ब्रह्ममानस--पुत्र। (भा. ४.८)। इसका शिष्य निदाघ। ऋभु ने निदाघ को तत्वज्ञान का उपदेश किया है (विष्णु. २.१६; नारद. १.४९)। चाक्षुष तथा वैवस्वत मन्वन्तर के देवों में ऋभु हैं। ऋभुगीता नामक सत्ताईस अध्यायों का एक वेदान्तविषयक ग्रंथ है (C. C.)।

ऋभुदास--ऋजु देखिये।

ऋश्यशृंग--काश्यप विभांडक का पुत्र। एकबार जब विभांडक गंगास्नान के लिये गया था तब उर्वशी उसे दृष्टिगोचर हुई। तत्काल कामविकार उत्पन्न हो कर उसका रेत पानी में गिरा। इतने में पानी पीने के लिये शाप से हिरनी बनी हुई एक देवकन्या वहाँ आई तथा पानी के साथ वह रेत उसके पेट में गया। उससे यह उत्पन्न हुआ (म. व. ११०)। संपूर्ण आकार मानव के समान परंतु सिरपर ऋश्य नामक मृग के समान सींग था, इसलिये इसे ऋश्यशृंग नाम प्राप्त हुआ (म. व. ११०.१७)। इसका जन्म होते ही इसकी माता शापमुक्त हो कर स्वर्ग गई तब अनाथ ऋश्यशृंग का पालन-पोषण विभांडक ने किया तथा इसे वेदवेदांगों में पारंगत किया। मृगयोनि का होने के कारण यह डरपोक था तथा आश्रम के बाहर कहीं भी न जाता था। विभांडक ने भी उसे ऐसी ही आज्ञा दे रखी थी। इससे इसने पिता को छोड अन्य पुरुष न देखा था (म. व. ११०.१८)। इसी समय अंगदेश के चित्ररथ नामक राजा की गलती से वहाँ अवर्षण हुआ। चित्ररथ दशरथ का मित्र था। वह ब्राह्मणों से असत्य व्यवहार करता था अतः ब्राह्मणों ने इसका त्याग किया। तब उसके देश में अवर्षण हुआ तथा लोगों को अत्यधिक कष्ट होने लगे। तब इन्द्र को वर्षा के लिये मजबूर करनेवाले बडे बडे तपस्वियों से इसने पूछा। उनमें से एक ने कहा कि, ब्राह्मण तुमसे कुपित हैं, उनके क्रोध का निराकरण करो। तब उसे पता चला कि, ऋश्यशृंग यदि अपने देश में आयेगा तो चारों ओर सुख का साम्राज्य छा जायेगा। ऋश्यशृंग को लाने के लिये जब उसने मंत्रियों से चर्चा की तब वेश्याओं की सहायता छोड अन्य मार्ग ही उन्हें न सूझता था। वेश्याओं से पूछने पर एक वृद्ध वेश्या ने वह कार्य स्वीकार किया तथा कुछ तरुण वेश्याओं को ले कर विभांडक की अनुपस्थिति में उसके आश्रम में जाने का निश्चय किया। इस के लिये एक नौका पर आश्रम तैय्यार कर वह नौका आश्रम के पास खडी कर उसने बडी युक्ति से अपनी लडकियों द्वारा अपने पाश में बांध लिया। ऋश्यशृंग ने उन वेश्याओं को मुनिकुमार समझ कर उनसे व्यवहार किया। दूसरी बार ऋश्यशृंग को लेकर वे वेश्यायें अंग देश में आयी। तब अंग देश में बहुत वर्षा हुई। रोमपाद ने अपनी शान्ता नामक कन्या इसे दी तथा काफी उपहार दिया। विभांडक पुत्र को ढूंढते हुये वहां आया तब रोमपाद द्वारा दिये गये उपहार देखकर इसका क्रोध शांत हो गया। इसने एक पुत्र का जन्म होने तक ऋश्यशृंग को वहां रहने की अनुमति दी तथा स्वयं वापस गया। ऋश्यशृंग भी एक पुत्र के जन्म के बाद शान्ता के साथ अपने आश्रम वापस गया (म. व. ११०.११३; वा. रा. बा. ९.१०)। दशरथ के पुत्रकामेष्टि यज्ञ में रोमपाद की मध्यस्थता से दशरथ ने इसे यज्ञ का अध्वर्यु बनाया। उससे दशरथ को रामलक्ष्मणादि पुत्र हुए (वा. रा. बा. ११)। यह ऋश्यशृंग सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक होगा (भा. ८.१३; विष्णु. ३.२)। कौशिकी नदी के किनारे ऋश्यशृंग का आश्रम था। वहां वनवास के समय धर्मराज आये। तब लोमश ने ऋश्यशृंग की उपरोक्त जानकारी धर्मराज को बताई है। वहां दशरथ का उल्लेख नहीं है (ऋष्यशृंग देखिये)। इसके द्वारा रचित ग्रंथ १ ऋश्यशृंगसंहिता, २ ऋश्यशृंगस्मृति। ऋश्यशृंगस्मृति का उल्लेख विज्ञानेश्वर, हेमाद्रि, हलायुध आदि ने किया है (C. C.)। आचार, अशौच, श्राद्ध तथा प्रायश्चित्त आदि के बारे में इसके विचार मिताक्षरा, अपरार्क, स्मृतिचंद्रिकादि ग्रंथों में प्राप्य हैं। मिताक्षरा में (याज्ञ. २.११९) शंख का मानकर दिया गया श्लोक अपरार्क ने (७२४) ऋश्यशृंग का मानकर दिया है। इस श्लोक में दिया गया है कि नष्ट हुई सम्मिलित संपत्ति अगर किसी हिस्सेदार ने पुनः प्राप्त की तो उसका एक चतुर्थांश उसे प्राप्त होता है तथा बाकी बचे हुए में अन्य लोगों का हिस्सा होता है। स्मृतिचन्द्रिका में (१.३२) इसका एक गद्य परिच्छेद दिया गया है।

ऋषभ--(स्वा. प्रिय.) नाभि तथा मेरुदेवी का पुत्र। माता का नाम सुदेवी भी था (भा. २.७.१०)। यज्ञ नामक इंद्र ने इसे अपनी कन्या जयंती दी थी तथा उससे इस राजा को सौ पुत्र हुये। उन में श्रेष्ठ भरत है। उन में से ८१ पुत्र कर्ममार्गाचरण करनेवाले ऋषि बने तथा कवि,

हरि, अंतरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, आविर्होत्र, द्रुमिल, चमस तथा करभाजन नामक नौ पुत्र ब्रह्मनिष्ठ थे। ऋषभदेव ने भरत, कुशावर्त, इलावर्त, ब्रह्मावर्त, मलय, केतु, भद्रसेन, इंद्रस्पृश्, विदर्भ तथा कीकट नाम से अपने अजनाभवर्ष के नौ खंड करके उन्हें अधिपति बनाया तथा अवशेष भाग का सार्वभौमत्व भरत को दिया। इसने प्रजा को धर्मानुकूल बनाकर पुत्रों को ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया (भा. ५. ३-६)।

बाल्यावस्था से ही ऋषभदेव के हस्तपादादि अवयवों पर वज्र, अंकुश, ध्वज इ. चिह्न दीखने लगे थे। इसका ऐश्वर्य देखकर इंद्र के मन में असूया उत्पन्न होने लगी तथा उसने उसके खंड में वर्षा करना बंद कर दिया। तब उसका कपट ऋषभदेवने पहचाना तथा अपनी माया के प्रभाव से अपने अजनाभखंड में वर्षा कर दी। तदनंतर यह कर्मभूमि है ऐसा ख्याल कर ऋषभदेव ने प्रथम गुरुगृह में वास्तव्य किया। तदनंतर गृहस्थाश्रम का स्वीकार किया तथा शास्त्रोक्तविधि से यथासांग आचरण किया। यह आत्मविवेक से बर्ताव करता था। यह ब्राह्मणों की अनुज्ञा से राज्य करता था। कालांतर से ब्रह्मावर्त में अपने पुत्रों को उद्देशित करके संसार को इसने ज्ञानोपदेश दिया। उस समय यह घर में ही विक्षिप्त के समान दिगंबर तथा अस्ताव्यस्त रहता था। तदनंतर इसने संन्यास लिया तथा ब्रह्मावर्त से बाहर निकला। लोग उसे कैसा भी उपसर्ग देते थे तब वह उनकी ओर ध्यान न देकर वह स्वस्वरूपमें स्थिर रहता था। ऐसी आनन्दमय स्थिति में यह पृथ्वी पर घूमता था। देहत्याग की इच्छा से इसने मुँह में पत्थर पकड़ा तथा दक्षिण में कटक पर्वत के अरण्य में घूमते समय दावानल से ऋषभदेव का शरीर दग्ध हो गया (भा. ५. ३-६)। स्वयं विरक्त हो कर वन में गया (मार्क ५०.४०) तथा अपना श्वासोच्छ्वास मिट्टी की ईंट से बंद कर देहत्याग किया (विष्णु. २.१.३२)। यह भगवंत का आठवाँ अवतार था इसने परमहंस दीक्षा ली थी (भा. २.७.१०. अर्हत् देखिये)।

इसका अनुयायी तथा नाती सुमति। इसका अनुयायी होने के कारण लोग सुमति को देव मानने लगे।

२. ऋषभकूटशृंग पर रहनेवाला एक क्रोधी ऋषि। इसके पास अनेक लोग आने लगे तथा उसे कष्ट होने लगे। तब इसने पर्वत तथा वायु को आज्ञा दी कि, इधर अगर कोई आने लगे तो उनपर पाषाणवृष्टि कर के वापस कर दो (म. व. १०९)। आशा कितनी सूक्ष्म तथा विशाल रहती है इसे कृश तनुवीरद्युम्नसंवादरूपी दृष्टांत देकर इसने सुमित्र राजा को समझाया है। इस ऋषि के इस संवाद को ऋषभगीता नाम है (म. शां. १२५-१२८)।

३. वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर के नवम चौखाने में व्यास के निवृत्ति मार्ग का प्रसार करने के लिये ऋषभ नामक शिव का अवतार होनेवाला है। उसके अनुक्रम से १. पराशर, २. गर्ग, ३. भार्गव, ४ गिरीश शिष्य होंगे। यह योगमार्ग का उद्धार करनेवाला है (शिव. शत- ५. ३६-४८; भद्रायु देखिये)। भद्रायु के कथनानुसार यह प्रवृत्तिमार्गीय होगा।

४. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

५. इन्द्र आदित्य का पुत्र (भा. ६.१८.७)।

६. एक असुर। इसका वध करने के बाद उसके चमड़े की दुंदुभि बृहद्रथ राजा ने बनाई थी (म. स.१९.१५)।

७. अंगिरावंश के धृष्णि का पुत्र। इसका पुत्र सुधन्वा (ब्रह्मांड. ३.१.१०७)। यह मंत्रकार था (वायु. ५९. ९८-१०२)।

८. (सो. अज.) भागवत के मतानुसार कुशाग्र राजाका पुत्र। इसका सत्यहित नामक पुत्र था।

९. एक वानर। राम के राज्याभिषेक के समय वह समुद्र का उदक लाया था तथा मत्त राक्षस का वध किया था (वा. रा. यु. ७०.५८.६३.)।

१०. (सू. इ.) राम तथा अयोध्यापुरनिवासी सब जनों की मृत्यु के बाद पुनरपि शून्य हुये प्रदेश में निवास करनेवाला राजा (वा. रा. उ. १११)।

११. (सो. वृष्णि.) वृष्णि का पुत्र (पद्म. सृ. १३)।

१२. कृष्ण के पुत्रों में से एक (भा. १.१४.३१)।

१३. एक गोप का नाम। यह रामकृष्ण का मित्र था (भा. १०.२२)।

१४. एक ऋषि। यह युधिष्ठिर की सभा में था (म. स. ११.१२५* पंक्ति ६)।

१५. आयुष्मान् तथा अंबुधारा का पुत्र। दक्षसावर्णि मन्वन्तर में होनेवाला विष्णु का अवतार (मनु देखिये)।

१६. विश्वामित्र का पुत्र (ऐ. ब्रा. ७. १७.)।

ऋषभ याज्ञतुर—यह श्विक्न का राजा तथा अश्वमेध करनेवालों में एक था (श. ब्रा. १२.८.३.७;१३.५.४. १५; सां. श्रौ. १६.९.८.१०; गौरवीति शाक्त्य देखिये)।

ऋषभ वैराज शाक्कर—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६६)।

ऋषभस्कंद--रामसेनाका एक वानर (वा. रा. यु. ४६)।

ऋषिकुल्या--ऋषभदेववंशीय भूमनू की दो पत्निओं में से एक। उसका पुत्र उद्गीथ।

ऋषिज--उशिज का नामान्तर।

ऋषिर्मित्रवर--अंगिरा गोत्र का एक प्रवर।

ऋषिर्मैत्रवर--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

ऋषिवान्मानव--अंगिराकुल का एक गोत्रकार तथा प्रवर।

ऋषिवास--ऋजु देखिये।

ऋष्टिषेण--एक आचार्य (नि. २. ११)।

ऋष्य--(सो. कुरु.) अजमीढवंशीय ऋक्षकुल के देवातिथि का पुत्र।

ऋष्यशृंग काश्यप--यह कश्यप का शिष्य है तथा इसे काश्यप पैतृक नाम भी प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. ३. ४०. १; वं. ब्रा. २; ऋष्यशृंग देखिये)।

ऋष्यशृंग वातरशन--मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०. १३६. ७)।

ए

एक--(सो. पुरूरवस्.) रय का पुत्र।

एकजटा--सीतासंरक्षण के लिये नियुक्त राक्षसियां में से एक (वा. रा. सुं. २३)।

एकत--गौतम का ज्येष्ठ पुत्र (त्रित देखिये)।

एकद्यू नौधस--सूक्तद्रष्टा। इसे अनुक्रमणी में नौधस नोधःपुत्र कहा गया है (ऋ. ८. ८०)। एकद्यू का मंत्र में निर्देश है (ऋ. ८. ८०. १०)। एकदिव् मूल शब्द होगा।

एकपर्णा--हिमवान् की मेना से उत्पन्न तीन कन्याओं में दूसरी। अपर्णा तथा पर्णा की भगिनी। यह असित ऋषि की पत्नी। इसे देवल नामक एक पुत्र था (ब्रह्मांड. ३. ८. २९-३३; १०.१-२१; ह. वं. १. १८)।

एकपाटला--हिमवान् को मेना से उत्पन्न तीन कन्याओं में से एक। यह जैगीषव्य की पत्नी थी। इसके पुत्र शंख तथा लिखित। परंतु इन्हें अयोनिज विशेषण लगाया गया है (ब्रह्माण्ड. ३. १०. २०-२१; ह. वं. १. १८. २४)।

एकपाद--कश्यप को कद्रू से उत्पन्न पुत्र।

एकपादा--सीता के संरक्षण के लिये नियुक्त राक्षसियों में से एक (म. व. २६४. ४४)।

एकयावन् गांदम--एक आचार्य (पं. ब्रा. २१. १४. २०; तै. ब्रा. २. ७. ११)। तै. ब्रा. में कांदम पाठ है।

एकलव्य--व्याधों का राजा। हिरण्यधनु का पुत्र। द्रुपद से सहायता की अपेक्षा नष्ट होने पर चरितार्थ के लिये द्रोणाचार्य ने भीष्म के नातियों को धनुर्विद्या सिखाने का काम स्वीकार किया। धृतराष्ट्र तथा पंडु के पुत्र उनके पास विद्याध्ययन करने लगे। कुछ दिनों में द्रोणाचार्य के अध्यापन कौशल्य की कीर्ति चारों ओर फैल गई। इससे दूर दूर के देशों के राजपुत्र द्रोणाचार्य के पास विद्याध्ययन के लिये आने लगे। एकलव्य भी विद्यार्जन के लिये द्रोणाचार्य के पास आया। परंतु व्याधपुत्र होने के कारण द्रोणाचार्य ने उसे पढाना अमान्य कर दिया। तब किसी भी प्रकार का विषाद मन में न रखते हुए, द्रोणाचार्य पर दृढ विश्वास रखकर, नमस्कार कर के वह चला गया (म. आ. १२३.११) द्रोण के द्वारा विद्यादान अमान्य किये जाने परभी अपना निश्चय न छोडते हुए इसने द्रोण की एक छोटी प्रतिम मिट्टी की बनाई तथा उसे अपना गुरु मान कर, उस प्रतिमा के प्रति दृढ विश्वास रखते हुए, प्रतिमा के सामने अपना विद्याभ्यासंग चालू रखा तथा विद्या में प्रवीण हो गया। द्रोणाचार्य ने उत्तम ढंग से अपने शिष्यों को सिखाया था। सब शिष्यों से अधिक द्रोण की प्रीति अर्जुन पर थी। उसने अर्जुन को आश्वासन दिया था कि किसी भी शिष्य को मैं तुमसे अधिक पराक्रमी नहीं बनाऊंगा। कुछ दिनों के बाद द्रोणाचार्य सब शिष्यों के सहित कुत्ता आदि मृगयासामग्री ले कर मृगया के लिये गये। शिकार करते समय कुत्ता उनसे काफी दूर एकलव्य के पास गया तथा मलाढ्य, कृष्णवर्णीय व्याध को देखकर भौंकने लगा। तब उसे बिल्कुल जख्म न हो किन्तु उसका भौंकना बंद हो जावे, इस हेतु से, बड़ी कुशलता से,

एकलव्य ने उसके मुख में सात बाण मारे। तब वह कुत्ता उसी प्रकार अपने मालिक के पास आया। उस कुत्ते को देखकर द्रोण को आश्चर्य लगा कि इतनी कुशलता से लक्ष्यवेध करनेवाला यह कौन हो सकता है। इधर उधर देखते समय द्रोण को एकलव्य दृष्टिगत हुआ। द्रोण को देख कर एकलव्य ने अभिवादन किया तथा कहा कि, मैं आपका शिष्य हूँ। द्रोण को उसकी कुशलता से बडा आनंद तथा कौतुक लगा। यह अर्जुन की अपेक्षा धनुर्विद्या में श्रेष्ठ है जानकर अर्जुन को दिया गया अपना वचनभंग हो जाने का डर लगा। परंतु बडी युक्ति से गुरुदक्षिणा के तौर पर इसने उसके दाहिने हाथ का अंगूठा मांग लिया। एकवचनी एकलव्य ने वह दे दिया (म. आ. १२३.३७)। परंतु इससे इसकी पहले की चपलता नष्ट हो गई। एकलव्य भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्षमें था। दाहिना हाथ पूर्ण रूपसे निरुपयोगी होते हुए भी इसने अत्यंत पराक्रम दर्शाया। यह श्रीकृष्ण के हाथों मारा गया (म. द्रो. १५५.२९)। इसे केतुमान् नामक एक पुत्र था। वह भीम के द्वारा मारा गया (म. भी. ५०. ७०)।

एकलोचना--सीतासंरक्षण के लिये नियुक्त राक्षसियों में से एक (म. व. २६४.४४)।

एकवीर--(सो. तुर्वसु.) हरिवर्मा राजा को विष्णुप्रसाद से प्राप्त पुत्र। यह वाजीरूपधर विष्णु से वड़वारूप धारण की हुई लक्ष्मी के उदरसे उत्पन्न हुआ था। इसलिये इसे हैहय नाम था। यह यदुकुलोत्पन्न हैहय राजा से बिल्कुल भिन्न है। इसे एकावली तथा यशोवती नामक दो स्त्रियाँ थीं तथा इसकी उपास्यदेवता एकवीरा देवी थी (दे. भा. ७.१७.२३)।

एकशय—तक्षक का पुत्र अश्वसेन (म. क. ६६)।

एकाक्ष—दनु तथा कश्यप का पुत्र (म. आ. ६६. २८)।

एकांगी—एक ग्वालन। इसे गोव्रत के कारण ऐश्वर्य प्राप्त हुआ (स्कन्द. २.४.९)।

एकादशरथ—(सो. यदु.) वायु के मतानुसार दशरथपुत्र।

एकादशी--मुर देखिये।

एकानंगा—यशोदा की कन्या। कृष्ण की भगिनी।

एकानेका—अंगिरस की कन्या। इसे ही कुहू दूसरा नाम है (म. व. २०८.८)। एकानंशा ऐसा पाठ है।

एकायन—भृगुकुल का एक गोत्रकार। शाकायन पाठभेद है।

एकावली—एक वीर राजा की पत्नी। रम्य राजा को रुक्मरेखा से उत्पन्न कन्या।

एकेपि--अंगिरा कुल का एक गोत्रकार। यह एक ऋषि का नाम है (सां. ब्रा. ३.८)

एतश--ऋग्वेद की एक ऋचा का सर्वानुक्रमणी के अनुसार यह द्रष्टा है (ऋ. १०.१३६.६)। वहाँ इसे वातरशन कहा गया है। एतश को अग्नि के आयुष्य नामक कुछ मंत्रों की रचना की स्फूर्ति हुई। तब इसने पुत्र से कहा कि मेरे मंत्रपठन में बाधा मत लाओ क्योंकि इन मंत्रों के पठनसे यज्ञ के व्यत्यय तथा व्यंग नष्ट हो जाते हैं। परंतु ये मंत्र कह ही रहे थे तब उसके अभ्यग्नि नामक पुत्र ने विघ्न उपस्थित किया। इन असंबद्ध मंत्रों के कारण उसे लगा कि पिताजी पागल हो गये हैं तथा उसने उनके मुंह पर हाथ रखा। तब क्रोधित होकर इसने उसे शाप दिया कि तुम्हे कुष्ठ हो जायेगा (ऐ. ब्रा. ६.३३)। ऐ. ब्रा. में ऐतश शब्द है। इसलिये यह कथा संभवतः एतश की होगी। ऐतशायन औवों में अत्यंत बुरे मान कर वर्णित हैं। ऐतशप्रलाप आजकल अथर्ववेद का भाग कह कर प्रसिद्ध है तथा अभी वह वैसा ही असंबद्ध है (अ. वे. २०.१२९-१३२; बृहद्दे. ८.१०१)। स्वश्वपुत्र सूर्य से हुए युद्ध में इंद्र ने एतश को बचाया (ऋ. १. ५४. ६; ६१.१५; ४.१७.१४)। इसे सूर्य ने घायल किया (ऋ. ८.१.१८)।

एतश वातरशन--मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.६)।

एनक--ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र में हुऐ यज्ञ का एक ऋषि (पद्म. सृ. २४)।

एरक—एक सर्प (म. आ. ५२.१२)।

एलपत्र—एक सर्प।

एलापुत्र--कद्रूपुत्र (नभ देखिये)।

एवयामरुत् आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.८७)।

एवावद--यह नाम क्षत्र, मनस तथा यजत के साथ आया है (ऋ. ५.४४.१०)।

ऐ

ऐकादशाक्ष मानुतंतव्य--सूर्योदय के साथ साथ होम करनेवाले (उदितहोमी) एक राजा का नाम (ऐ. ब्रा. ५.३०) । यह नगरिन् जानश्रुतेय का समकालीन था ।

ऐकेपि--अंगिरस् देखिये ।

ऐक्ष्वाक--यह शब्द ब्राह्मण ग्रंथों में बहुतसे व्यक्तियों के लिये प्रयुक्त हुआ है । राजा हरिश्चंद्र वैधस ऐक्ष्वाक था (ऐ. ब्रा. ७.१३.१६.) । पुरुकुत्स का यह अनुवांशिक नाम है (श. ब्रा. १३.५.४.५) । ऐक्ष्वाक वार्ष्ण नामक आचार्य का उल्लेख मिलता है (जै. उ. ब्रा. १.५.४) । त्र्यरुण भी ऐक्ष्वाक था (पं. ब्रा. १३.३.१२) । यह नाम बृहद्रथ के लिये भी प्रयुक्त हुआ है (मैत्र्यु. १. २; असमाति देखिये) । ऋग्वेद में इक्ष्वाकु का उल्लेख है (ऋ. १०.६०.४; भगीरथ देखिये) । यह शब्द इक्ष्वाकु वंशजों के लिये सामान्यतः प्रयुक्त होता है ।

ऐक्ष्वाकी--(सो.) भूमन्युपुत्र सुहोत्र की स्त्री । इसे सुहोत्र से अजमीढ़, सुमीढ़, तथा पुरुमीढ़ नामक तीन पुत्र हुए थे (म. आ. ८९.२६) ।

ऐडविड--इडविडा का पुत्र कुबेर ।

२. (सू. इ.) दशरथ या शतरथ का पुत्र ।

ऐतरेय--सायण के मतानुसार इतरा नामक स्त्री से उत्पन्न होने के कारण यह मातृमूलक नाम पडा ।

इसका महिदास ऐतरेय ऐसा निर्देश है । (ऐ. आ. २. १. ८; ३. ७; छां. उ. ३. १६.७) तथा ऐतरेय ऐसा ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में उल्लेख है (आश्व. गृ. ३.४.४) । ऐतरेयिन् स्वरूप में (अनुपद सूत्र ८. १; आश्व. श्रौ. सूत्र १.३) उल्लेख है ।

हारीत ऋषि के वंश में मांडूकि ऋषि को इतरा नामक स्त्री से उत्पन्न होने के कारण इसका नाम ऐतरेय पडा । बचपन से ही यह 'नमो भगवते वासुदेवाय' मंत्र जपने लगा । यह किसी से नहीं बोलता था इसलिये मांडूकि ने पिंगा नाम दूसरी स्त्री से विवाह किया । जिससे उसे चार पुत्र हुए । वे बहुत विद्वान थे इसलिये उनका उत्तम सन्मान हुआ । इतरा ने अपने पुत्र से कहा कि, तेरे गुणवान न होने के कारण तेरे पिता मेरा अपमान करते हैं । मैं अब देहत्याग करूंगी । तब ऐतरेय ने इसे धर्मज्ञान दे कर देहत्याग के विचारों से परावृत्त किया । कालोपरांत विष्णु ने उन दोनों को साक्षात् दर्शन दिया तथा आशीर्वाद दिया । बाद में श्रीविष्णु के वचनानुसार कोटितीर्थ पर होने वाले हरिमेध्य के यज्ञ में जाकर वेदार्थ पर इसने प्रवचन दिया । तब हरिमेध्य ने इसका पूजन कर अपनी कन्या से उसका ब्याह कर दिया (स्कंद. १.२.४२; महिदास ऐतरेय देखिये) ।

ऐतश--एतश देखिये ।

ऐतशायन--अभ्यग्नि का पैतृक नाम ।

ऐमून--आभूतरजस् नामक देवगणों में से एक ।

ऐंद्र--अप्रतिरथ, जय, लव, वसुक, विमद, वृषाकपि सर्वहरि देखिये ।

ऐंद्रद्युम्न--पुष्करमालिन् देखिये ।

ऐंद्राश्व--(सो.) भविष्यपुराण के अनुसार धनयाति का पुत्र ।

ऐंद्रोति--दृति ऐंद्रोति शौनक देखिये ।

ऐभावत--प्रतीदर्श का पैतृक नाम है (श. ब्रा. १२ ८.२.३) ।

ऐरंमद--देवमुनि देखिये ।

ऐरावत--धृतराष्ट्र नामक नाग का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २५.१५.३) । यहाँ वर्णित सर्पसत्र में यह ब्रह्मा नामक ऋत्विज था (अ. वे. ८.१०.२९) । नाग शब्द के सर्प तथा हाथी ये दो अर्थ होते हैं इस कारण परावर्ती वाङ्मय में इंद्र के हाथी से संभवतः संबंध जोडा गया होगा (जरत्कारु देखिये) । कद्रूपुत्र नागों को ऐरावत कहते हैं । जनमेजय के सर्पसत्र में इनके दस कुल दग्ध हुए, जिनके नाम ये हैं पारावत, पारियात, पांडुर, हरिण, कृश, विहंग, शरभ, मोद, प्रमोद तथा संहतापन (म. आ. ३१.५; स. ९.८. उ. १०१.११) ।

२ फाल्गुन माह में सूर्योदय के साथ साथ घूमने वाला पर्जन्य नामक नाग (भा. १२.११.४०) ।

ऐरीडव--अंगिरा गोत्र का एक महर्षि

ऐल--पुरूरवस् का नामांतर ।

ऐलबिल--कुबेर देखिये ।

ऐलाकि--जीवल का पैतृक नाम ।

ऐलिक--भृगुकुल का एक गोत्रकार ।

ऐलूष--कवष का यह पैतृक नाम है ।

ऐशिज--एक ऋषि (वायु. ५९. ९०-९१) । ब्रह्मांड में उशिज पाठ मिलता है ।

ऐश्वर—अग्नि धिष्ण्य देखिये।

ऐषकृत--शितिबाहु देखिये।

ऐषरथ--कुशिक देखिये।

ऐषावीर--यद्यपि एक यज्ञ में ये याज्ञिक का कार्य करते थे, तथापि बुरी पद्धति से करते थे (श. ब्रा. ११.२.७.३२)। सायण के मतानुसार एषवीर के वंशज अर्थ का कोई विशेषनाम भी प्रचलित है तथा इन्हें ब्राह्मणों की एक निंद्य जाति मानी जाती है (श. ब्रा.९.५.१.१६; सां. ब्रा. १.१)।

ऐषुमत—त्रात का पैतृक नाम।

ओ

ओघरथ—(सू. नृग.)। ओघ राजा का पुत्र। इसका पुत्र नृग (म. अनु. २)।

ओघवत्—(सू. नृग.)प्रतीक का पुत्र (भा. ९.२)। इसका पुत्र ओघरथ तथा कन्या ओघवती (म. अनु. २)।

२. ओघवत् का पुत्र (भा. ९.२)।

ओघवती—प्रतीक की कन्या तथा सुदर्शन की पत्नी (भा. ९. २)।

२ (सू. नृग.) ओघवत् राजा की कन्या। ओघरथ की भगिनी (म. अनु. २)।

ओंकार--शंकर का एक अवतार था। विंध्य के लिये यह पृथ्वी पर आया। ओंकार मांधाता में यह लिंग रूप में तथा पृथ्वी पर प्रणव रूप में है (शिव. शत. ४२)। इसका उपलिंग कर्दमेश है (शिव. कोटि. १)।

ओज--श्रीकृष्ण तथा लक्ष्मणा का पुत्र (भा. १०.६१)। यह महारथी था।

ओजस्—वैशाख माह में अर्यमा नामक सूर्य के साथ साथ घूमनेवाला यक्ष (भा. १२. ११.३४)।

ओजस्विन्—भौत्य मन्वंतर में मनु पुत्र।

ओजिष्ठ—पृथुक नामक देवगण में से एक।

औ

औक—(सू. इ.) वायुमतानुसार बल का पुत्र।

औगज—अंगिरस गोत्र का एक मंत्रकार। ऋषिज तथा असिज इसके नाम हैं।

औग्रसैन्य—युधांश्रौष्टि का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ८.२१.७)।

औघरथ—सूर्यवंशी दूसरा नृगराजा। ओघरथ का पुत्र।

औचथ्य—दीर्घतमस् देखिये।

औचेयु—ऋतेयु देखिये।

औडुलोमि--एक तत्त्वज्ञानी। ब्रह्मसूत्र में इसके मत का अनेक बार मतभेदप्रदर्शनार्थ निर्देश मिलता है (ब्र. सू.१.४.२१;३.४.४५;४.४.६)।

औत्तम वा **औत्तमी मनु**—उत्तानपाद के पुत्र उत्तम तथा बभ्रुकन्या बाभ्रव्या का पुत्र। उत्तम का पुत्र होने के कारण इसे औत्तम या औत्तमी मनु कहते हैं (मार्क. ६९)। यह प्रियव्रत का वंशज था (विष्णु.३.१.२४.)। भागवत में इसे प्रियव्रत की दूसरी स्त्री का पुत्र कहा गया है तथा नाम उत्तम ही दिया है। (भा. ८.१.२३; मनु देखिये)। इसने वाग्भव मंत्र से तीन वर्ष उपवास करके देवी की उपासना की (दे. भा. १०.८)। यह तृतीय मन्वन्तराधिप मनु है।

औदन्य--मुंडभ का पैतृक नाम। भ्रूणहत्या का प्रायश्चित्त बताने के लिये इसका उल्लेख किया गया है

(तै. ब्रा. ३.९. १५.३)। यहां इसका नाम औदन्यव दिया गया है।

औदभारि—खंडिक का पैतृक नाम (श. ब्रा. ११.८.४.६)।

औदमय—अंग वैरोचन का पुरोहित (ऐ. ब्रा. ८.२२)। वेबर के पाठानुसार आत्रेय का यह नाम है। कुछ प्रतियों में उदमय पाठ भी दिखायी देता है।

औदवाहि—भारद्वाज का गुरु (बृ. उ. २.५.२०;४.५.२६)।

औदुंबरायण—निरुक्त में शब्द के नित्यत्व के संबंध में बोलते समय, शब्द अनित्य हैं ऐसा कहने के कारण, इसका उल्लेख किया गया है (१.२.१)।

औद्दालकि—असुरविंद (जै. ब्रा. १.७५) वा कुसुरुबिंद (ष.ब्रा. १.१६; पं. ब्रा. २२.१५.१०), इस नाम से पहचाने जाने वाले आचार्य तथा श्वेतकेतु (श. ब्रा. ३.४.३.१३; ४.२.५.१५) का पैतृक नाम है। कठोपनिषद में नचिकेतस् के लिये औद्दालकि नाम प्रयुक्त है (१.११)।

औपगव—वसिष्ठकुल के गोत्रकार ऋषिगण। आपगव पाठभेद है।

औपगवि—उद्धव का नाम (भा. ३.४)।

औपजंघनि—आसुरि का शिष्य। इसका शिष्य त्रैवणि (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)।

औपतस्विनि—राम का पैतृक नाम (श. ब्रा. ४.६.१.७)।

औपमन्यव—बहुत से अध्यापकों के लिये यह नाम प्रयुक्त दिखाई पड़ता है। एक मंत्र के पठन के बारे में इसने जानकारी बताई है (बौ. श्रौ. २.२.१)। एक वैयाकरण है (नि. १.१.५; २,२.११; ३.१८) पक्षियों का नामकरण उनके द्वारा निकाली ध्वनि के कारण होता है इस मत का औपमन्यव ने निषेध किया है (कांबोज, प्राचीनशाल, महाशाल देखिये)।

२. वसिष्ठगोत्र का ऋषि।

औपर—दंड का पैतृक नाम (तै. सं. ६.२.९.४)।

औपलोम—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार ऋषिगण। अपष्ठोम ऐसा पाठभेद है।

औपवेशि—उद्दालक के पिता अरुण का पैतृक नाम (क. सं. २६.१०; अरुण औपवेशि देखिये)।

औपशवि—एक वैयाकरण (शु. प्रा. ३.१३२)।

औपस्थल—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार।

औपस्थव—विश्वामित्रगोत्र का ऋषिगण।

औपस्वती—पाराशरीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ३.५.१)।

औपावि जानश्रुतेय—एक राजर्षि (श. ब्रा. ५.१.१.५–७)। इसने वाजपेय किया था (मै. सं. १.४.५)।

औपोदिति—कुरु का स्थपति (सेनानी) व्याघ्रपाद का पुत्र। गौपालायन इसका पैतृक नाम है (बौ. श्रौ. २०.२५)। उपोदिता नामक स्त्री का पुत्र (श. ब्रा. १.९.३.१६)। श. ब्रा. की काण्वप्रति इसका नाम तुमिञ्ज औपोदितेय वैयाघ्रपद्य देती है (श. ब्रा. १.९.३.१६)।

औपोदितेय—औपोदिति का नामान्तर।

औरस—व्यास की सामशिष्यपरंपरा में वायु तथा ब्रह्मांडमतानुसार कुथुमी का शिष्य (व्यास देखिये)।

और्णवाभ—कौण्डिन्य का शिष्य (बृ. उ. ४.५.२६ माध्यं.)। निरुक्त में दो स्थानों पर यह नैरुक्त नामक व्याकरणकारों के मतों का अनुसरण करता है (७.१५:१२.१०)। दूसरे दो स्थानों पर ऐतिहासिकों के मतों का अनुसरण करता है (६.१३; १२.१)।

और्व—एक कुल। भृगुवंश में होने के कारण भृगु से इसका निकट संबंध था (ऋ. ८.१०२.४)। अप्नवान और्वों में से एक था। इस कुल का अभ्यग्नि ऐतशायन प्रसिद्ध है। (ऐ. ब्रा. ६.३३; सां. ब्रा. ३०.५)। और्वों ने स्वतः अत्रि से पुत्र प्राप्त किये थे (तै. सं. ७.१.८.१) दो और्वों का उल्लेख सम्मान के साथ आया है (पं. ब्रा. २१.१०.६)। और्व यह भृगु के बड़े कुल की शाखा रही होगी। और्व, गौतम, भारद्वाज इन तीन गोत्रों का उल्लेख भी है (स. श्रौ. १.४)।

परीक्षित के प्रायोपवेशन के समय आया हुआ एक आचार्य (जै. ब्रा. १.१८)। एक ब्रह्मर्षि (भा. १.१९.१०)। च्यवन ऋषि की भार्या मनुपुत्री आरुषी का पुत्र (म. आ. ६०.४५)। इसका नाम ऊर्व है (म. अनु. ५६)। आत्मवान् तथा नाहुषी का पुत्र (विष्णुधर्म. १.३२)।

कृतवीर्य नामक एक हैहयवंशीय राजा के उपाध्याय भृगुकुलोत्पन्न थे। कृतवीर्य ने बहुत से यज्ञ कर भृगुओं को बहुत सी संपत्ति दी थी। भविष्य में कृतवीर्य के वंशजों को द्रव्य का अभाव महसूस होने लगा। तब उन्होंने अपने उपाध्याय के पास द्रव्य की मांग की। कुछ लोगों ने भय से द्रव्य दिया। कुछ लोगों ने जमीन में गाड़ कर रख दिया। एक भार्गव ऋषि का घर खोद कर देखने पर कुछ द्रव्य प्राप्त हुआ। इससे कृतवीर्य के वंशज अत्यंत

क्रोधित हुए तथा भार्गव ऋषियों के शरण आने पर भी उनका संहार करना प्रारंभ कर दिया। इतना ही नहीं वे गर्भ का भी नाश करने लगे। तब भृगुवंश की स्त्रियाँ भयभीत हो कर, हिमालय की ओर चली गई। जाते जाते एक स्त्री ने अपना गर्भ गर्भाशय से निकाल कर जंघा में रख लिया। यह बात एक स्त्री ने राजा को बताई। हैहय गर्भ का वध करने वाला ही था, इतने में सौ वर्षों तक जंघा में रहा वह गर्भ बाहर आया। उसके तेज से वे क्षत्रिय नेत्र-हीन हो गये। बाद में उन अंधे क्षत्रियों द्वारा और्व को, 'प्रसन्न हो' कहते ही उन्हें दृष्टि प्राप्त हो गई। माता के ऊरु से निर्माण होने के कारण इसे और्व नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ६०.४५; १६९-१७०; अनु. ५६)।

हैहयवंशीय राजाओं ने अपने ज्ञातिबांधवों को कष्ट दिया, इसलिये बड़े होने पर भी इसने उनके संहार के लिये तप किया। परंतु हमें मृत्यु प्राप्त हो, इस हेतु से ही हमने यह अन्यायपूर्ण कृत्य किया। हमारी मृत्यु के लिये तुम क्रोधाविष्ट मत बनो, ऐसा पितरों ने उसे बताया। तब पितरों के संतोष के लिये इसने अपना क्रोधाग्नि समुद्र में छोड़ दिया। पराशर को राक्षसों के नाश से निवृत्त करने के लिये वसिष्ठ ने यह कथा बताई (म. आ. १६९-१७०)। इसका उग्र तप देख कर ब्रह्मदेव ने सरस्वती के द्वारा इसे समुद्र में डाल दिया। वहाँ अग्नितीर्थ उत्पन्न हुआ (स्कन्द. पु. ७. १. ३५)।

अयोध्याधिपति वृकपुत्र बाहु को उसके शत्रु हैहय तथा तालजंघ ने राजच्युत किया। बाद में इसके आश्रम के पास आ कर बाहु की मृत्यु हो गई। तब उसकी पत्नी सती जाने लगी। परंतु यह गर्भवती है, यह देखकर और्व ने उसे सती जाने से निवृत्त किया। बाद में उसे सगर नामक पुत्र हुआ। और्व ने सगर को अनेक अस्त्र तथा शस्त्रों की शिक्षा दी। राम का प्रख्यात आग्नेयास्त्र भी सिखाया। तदनंतर सगर ने हैहय, तालजंध, यवन इन सबको जीत लिया। तब वसिष्ठ ने इसे राज्याभिषेक किया। राज्याभिषेक के समय, यह आया तथा इसने केशिनी एवं सुमति (नारद. १.८), प्रभा तथा भानुमती (लिङ्ग. १.६६) इन सगर की पत्नियों को संतानवृद्धिदायक वर दिये (मत्स्य. १२; पद्म. सृ. ८; लिङ्ग. १. ६६; नारद. १. ७. ८; भा. ९. ८; ९. २३) इसने सगर का अश्वमेध किया (भा. ९. ८)।

इसका पुत्र ऋचीक (म. आ. ६०.४६; अनु. ५६)। परीक्षित् शापित होने पर जो ऋषि उससे मिलने आये उनमें यह था (भा. १.१९)। और्व तथा ऋचीक एक हैं (विष्णुधर्म. २.३२)। इसका नाम अग्नि होगा तथा ऊर्व का वंशज होने के कारण, इसे और्व नाम प्राप्त हुआ होगा। इसका काल जमदग्नि के पश्चात् का होगा (कूर्म. १. २१)। इसके नाम का अर्थ उर्वी पर रहनेवाला अर्थात् पृथ्वी पर रहनेवाला होगा। जमदग्नि गंगा किनारे रहते थे। इस जानकारी में यह भी पाया जाता है कि, और्व मध्य-देश में रहते थे, तथा वहीं इनके विवाह हुए थे (पद्म. उ. २६८.३)। परंतु ब्रह्मांड में उल्लेख है कि, यह नर्मदा पर था (ब्रह्माण्ड. ३.२६; ४५)। इसने सगर की सहायता की। परंतु रामायण में भृगु द्वारा सहायता का उल्लेख है। यह अंतिम और्व है। हैहयादिकों का नाश सगर द्वारा होने पर भी कहा जाता है कि, वह सारा पराक्रम परशुराम ने किया। इसका कारण यह है कि, और्व ने उसे आग्नेयास्त्र सिखाया था। परंतु आगे चल कर इन दो औवों में गडबड हो गई ऐसा प्रतीत होता है। यह भृगुगोत्रीय हो कर मंत्रकार भी था।

२. इसका पिता भृगुवंशीय ऊर्व, जब तप कर रहा था, तब सब देव एवं ऋषि इससे मिलने आये। अनंतर विवाह कर के प्रजोत्पादन करने की प्रार्थना ऋषियों ने इससे की। तब इसे ऐसा लगा, 'इन ऋषियों के मत में मेरे जैसा तपस्वी, बिना विवाह के प्रजोत्पादन करने में असमर्थ रहेगा।' इसलिये इसने कहा, 'यह देखो, मैं पुत्र उत्पन्न करता हूँ किन्तु वह भयंकर होगा।' ऋषियों को ऐसा बताकर इसने अपनी जंघा अग्नि में डाली। तदनंतर एक दर्भ से उसका मंथन करके उस जंघा से एक पुत्र निर्माण किया। उसीका नाम और्व है (मत्स्य. १७५)। पुत्र के साथ उत्पन्न माया, ऊर्व ने हिरण्यकश्यपु को दी (पद्म. सृ. ३८; ब्रह्माण्ड. ३. १.७४-१००)। जन्मतः यह खाने के लिये मांगने लगा। तथा इसने संसार का दाह करना आरंभ कर दिया। इस प्रकार तीन दिन दाह करने के बाद ब्रह्मदेव ने स्वयं आकर इससे प्रार्थना की। जहाँ मैं स्वयं रहता हूँ उसी समुद्र में इस बालक को स्थान देना मान्य किया तथा कहा कि, मैं स्वयं एवं यह बालक युग के अंत में संसार का नाश करेंगे। ऐसा कहने पर अपना तेज पितरों में डाल कर यह औवाग्नि समुद्र में रहने के लिये गया (मत्स्य. १७५, पद्म. सृ. ३८-४१)। यह विष्णु

ही था (म. व. १८९, ब्रह्माण्ड. ३.७२)। इसी युग के अंत में प्रलयकारक, पाताल का विषाग्नि, विष्णु के मुख से निकला हुआ तथा शंकर के तृतीय नेत्र में रहने वाला है (मत्स्य. २)। इसके वडवामुख वड़वानल, संवर्तक तथा समुद्रप नाम हैं (वायु. ४७) इसका पुत्र संवर्तक अग्नि है (मत्स्य. ५२)। यही और्वाग्नि कहलाता है।

३. मालव देश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। इसकी पत्नी का नाम सुमेधा तथा पुत्री का नाम शमीका। इसने अपनी कन्या का विवाह शौनक का शिष्य, धौम्यसुत मंदार के साथ किया। विवाहोत्तर कुछ दिनों के पश्चात्, अपनी पत्नी बडी हो गई यह जान कर उसे ले जाने के लिये यह और्व के घर आया। और्व ने बडे आनन्द से उन्हें बिदा किया। मार्गक्रमण करते समय राह में भृशुंडी को देख कर दोनों हँस पडे। इसलिये उसने इन्हें 'वृक्ष बनो' ऐसा शाप देने पर वे वृक्ष बने। और्व तथा शौनक जब ढूँढते ढूँढते आये, तब उन्हें पता चला कि वे वृक्ष बन गये हैं। तब इन्हें अत्यंत दुख हुआ। इन्होंने ईश्वर की आराधना की। और्व अग्निरूप से शमीवृक्ष में रहा तथा मंदार की मूली से गणेशमूर्ति बना कर उसका पूजन करता हुआ शौनक आश्रम में गया। दोनों के अनुष्ठान से शमीमंदार गणेश को प्रिय हुआ (गणेश. २.३६)।

४. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

५. सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

और्वेय--भृगु गोत्र का एक ऋषिगण।

औलान--सायणाचार्य ने इसका अर्थ निकाला है उल का वंशज। यह शंतनु का नाम होना संभव है (ऋ. १०. ९८.११)।

औलुंड्य--यह सुप्रतीक का पैतृक नाम है (वं. ब्रा. १)।

औशनस--उशनस् तथा षण्डामर्क देखिये।

औशिज--यह शब्द कक्षीवत्, ऋजिश्वन् तथा दीर्घश्रवस् के लिये प्रयुक्त किया गया है।

औशीनर अथवा औशीनरि--उशीनर से माधवी को उत्पन्न शिबि (म. द्रोण, परि. ७, पंक्ति. ४०९)। इसे औशीनरि भी कहा गया है (म. स. ८.१४; शां. २९. ३५)। एक शिबि औशीनर द्रौपदीस्वयंवर में था (म. आ. १७७.१५)।

औषदश्वि--वसुमनस् देखिये।

औष्ट्राक्षि--साति का पैतृक नाम। (वं. ब्रा. १)।

क

कंस--(सो. यदु. कुकुर.) उग्रसेन का पुत्र। उग्रसेन की पत्नी को यह द्रुमिल नामक दानव से हुआ (ह. वं. २. २८)। यह बड़ा शूर, मल्लविद्याविशारद तथा सर्व शास्त्र पारंगत था। इसे राज्य मिलेगा इस शर्तपर जरासंध ने अपनी कन्या इसे दी थी। इसलिये सब मंत्रिमंडल ने इसे राज्याभिषेक किया। वसुदेव इसका प्रधान था। परंतु आगे चलकर इसने पिता को कारागृह में डाल दिया। यह वसुदेव का भी कुछ न मानता था (म. स. १३. २९-३१)। पिता को कारावास देकर इसने राज्य स्वयं ले लिया (भा. १०. १. ६९)। कंस तथा वसुदेव ये दोनों यद्यपि यदुवंशांतर्गत हैं तथापि वंशावली से उनका संबंध काफी दूर का है। बाद में कंस के चाचा उर्फ देवक की कन्या देवकी का विवाह वसुदेव से निश्चित हुआ। इस विवाह के बाद देवकी को वसुदेव के पास पहुँचाते समय लगाम हाथ में लेकर रथ हांकने का कार्य कंस ने खुद स्वीकार किया। बड़े ठाठ से बारात जा रही थी कि आकाशवाणी हुई, "जिसका रथ तुम हाँक रहे हो, उसीका आठवाँ गर्भ तुम्हारा वध करेगा"। यह सुनते ही उसने सोचा कि अगर बहन ही न रही तो उसका आठवाँ गर्भ कहाँ से आवेगा। उसकी हत्या का निश्चय कर देवकी के केश पकड़ कर उसे मारने के लिये यह सज्ज हुआ। तब इसके सब पुत्र तुम्हें सौंप दूँगा यह आश्वासन देकर बड़ी कठिनाई से वसुदेव ने इससे देवकी की रक्षा की। इस आश्वासन के अनुसार वसुदेव ने प्रथम पुत्र इसे दिया, परंतु आठवें से भय है, प्रथम से नहीं यह सोच कर इसने उस पुत्र को वापस ले जाने के लिये वसुदेव से कहा। परंतु नारद ने यादवों के बारे में इसका मत कलुषित किया। इससे इसने

वसुदेव देवकी के पैरों में बेड़ियाँ ड़ालकर बंदिवास में ड़ाला तथा प्रत्येक पुत्र का वध करने का क्रम प्रारंभ किया। जरासंध के समान प्रलंब, बक आदि अनेक लोग सकी सहायता करते थे। यादवों में से प्रमुख लोग इसके द्वारा दिये जानेवाले कष्टों के कारण कुरू, पांचाल, केकय, शाल्व, विदर्भ, निषध, विदेह, कोसल आदि देशों में चले गये। कुछ कंस का प्रेम संपादित करके उसी के पास रहे (भा. १०. २. ३-४)। चाणूरादिक जो लोग इसने अपनाये थे वे युद्ध के द्वारा ही अपनाये थे।

यह पूर्वजन्म में कालनेमि असुर था (म. आ. ६१. ५५९*; भा. १०.१.६९)। विष्णु के साथ युद्ध करते करते यह मृत हुआ। परंतु शुक्र ने संजीवनीविद्या द्वारा इसे जीवित किया। तब इसने विष्णु को जीतने के लिये मंदार पर्वत पर तपस्या प्रारंभ की। दूर्वांकुरों का रस पीकर सौ वर्षों तक दिव्य तप करने के बाद ब्रह्मदेव प्रसन्न हुआ। तब इसने वरदान मांगा कि, मुझे देवों के हाथों मृत्यु प्राप्त न हो। ब्रह्मदेव ने कहा कि, यह अगले जन्म में संभव होगा। तदनंतर इसने उग्रसेन की पत्नी के उदर में जन्म लिया। आगे चलकर जब जरासंध विजयप्राप्ति के हेतु बाहर निकला तब यमुना के किनारे उसका पड़ाव था। तब कुवलयापीड़ नामक हाथी संकल तोड़ कर छावनी में से भाग कर, जहाँ मल्लयुद्ध प्रारंभ था वहाँ आया। तब सब मल्ल भयभीत होकर भाग गये। परंतु कंस ने इसकी सूँड पकड कर उसे जमीनपर पटक दिया, पुनः उठाकर हवामें गोल घुमाया तथा सौ योजन दूर जरासंध की छावनी पर फेंक दिया। यह अद्भुत सामर्थ्य देखकर जरासंध ने इसे अपनी अस्ति तथा प्राप्ति नामक दो कन्यायें दीं। माहिष्मती के राजा के चाणूर, मुष्टिक, कूट, शल, तोशलक नामक पुत्र कंस, मल्लयुद्ध के द्वारा अपने नियंत्रण में लाया (गर्ग संहिता १.६.७):

कृष्ण से वैर—यह राज्यक्रांति का इतिहास है। वसुदेव उग्रसेन का सुप्रसिद्ध मंत्री था। अपने को वह कुछ अपाय करेगा एवं उग्रसेन को गद्दी पर बैठायेगा इस भय से कंस ने उसे कारागृह में ड़ाला, तथा उसके पुत्रों के वध का क्रम प्रारंभ कर दिया (वायु. ९६.१७३;१७९; २२८)। आठवीं बार योगमाया से उसे मालूम हुआ कि उसका शत्रु सुरक्षा से बढ रहा है। तब पश्चात्ताप हो कर इसने वसुदेवदेवकी को बंधमुक्त किया। परंतु मंत्रियों से सलाह करके शत्रु को ढूँढकर उसका नाश करने का प्रयत्न उसने जोर से चालू किया। वसुदेव की शेष स्त्रियाँ गोकुल में थीं, अतएव गोकुल की ओर इसकी वक्रदृष्टि घूमी, तथा उन्हीं दिनों जन्मे पुत्रों पर उसने विशेष दृष्टि रखना प्रारंभ किया। पूतना के द्वारा गोकुल पर अरिष्ट आना प्रारंभ हो गया। परंतु इन सब संकटों से कृष्ण की रक्षा हो गई। अंत में कुश्तियों का मैदान बांध कर उसमें अपने मल्लों के द्वारा कृष्ण को मारने का षड्यंत्र इसने रचा। कृष्ण तथा बलराम ख्यातनाम पहलवान थे। उसी के अनुसार धनुर्याग कर के मल्लयुद्धों का बडा मैदान इसने रखा। दिग्विजय के समय परशुराम का जो धनुष्य कंस ने प्राप्त किया था, वह भी रखा तथा जो कोई उसे चढायेगा उसके लिये इनाम भी घोषित किया गया। उस धनुष्य को कृष्ण ने आसानी से चढा दिया (गर्गसंहिता १.६) तथा अनेक बार घुमा कर तोड भी दिया (ह. वं. २.२७.५७)।

मृत्यु—द्वार पर महावत को सूचना दे कर कंस ने एक मत्त हाथी कृष्ण को मारने के लिये रखा था। कृष्ण ने हाथी के दाँत पकड़ कर मार दिया तथा हाथी-महावत को भी मार दिया। तदनंतर कृष्ण ने चाणूर एवं तोसलक तथा बलराम ने आंध्रमल्ल मुष्टिक के साथ मल्लयुद्ध कर के उन्हें मृत प्राय किया। तदनंतर वेग से कंस पर हमला करके उसके केश पकड़ कर सिंहासन से उसे नीचे घसीट कर उसका वध किया। कंस के शरीर पर कृष्ण के नखों के बहुत चिन्ह हुए थे। यह कार्य कृष्ण ने इतनी चपलता से किया कि कृष्ण के जयजयकार में क्या हुआ इसका भी पता किसी को न चला (ह. वं. २.२८-३०)। उसी प्रकार कंस के कंक, न्यग्रोध आदि आठ बंधुओं का भी बलराम ने तत्काल वध किया (भा. १०.४४.४०)।

कंस वारकि—यह दक्ष कात्ययनि आत्रेय का शिष्य है (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

कंस वारक्य—यह प्रोष्ठपाद वारक्य का शिष्य है (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

कंसवती—उग्रसेन की कन्या तथा कंस की भगिनी। यह वसुदेव का कनिष्ठ भ्राता देवश्रवा की पत्नी। इसे उससे सुवीर तथा इषुमत् नामक दो पुत्र हुए (भा. ९. २४)।

कंसा—उग्रसेन की कन्या तथा वासुदेवभ्राता देवभाग की स्त्री। इसे उससे चित्रकेतु, बृहद्बल तथा उद्धव नामक तीन पुत्र हुए (भा. ९.२४)।

कंसारी—याज्ञवल्क्य की भगिनी। इसे बृहस्पति के शाप से याज्ञवल्क्य के वीर्य से पिप्पलाद हुआ (याज्ञवल्क्य देखिये)।

ककुत्स्थ--(सू. इ.) शशादविकुक्षि का पुत्र। आडिबक के साथ इंद्र युद्ध कर रहा था, तब इसने इंद्र को वृषभ बनाया तथा उस पर आरोहण कर के युद्ध में जय प्राप्त की। इसलिये ककुत्स्थ उपाधि प्राप्त की (वायु. ८८.२५)। इसे क्वचित् इंद्रवाह, पुरंजय आदि नाम भी प्राप्त हैं (भा. ९.१२)। कहीं चन्द्रवाह भी कहा है (दे. भा. ७.९)। इसने पापनाशिनी एकादशी का व्रत किया (पद्म. स्व ३८)। इसके पुत्र का नाम अनेनस् (म. व. १९३.२).

ककुदि—मरीचिगर्भ देवों में से एक।

ककुद्मिन् रैवत—(सू. शर्याति.) रेवत राजा का पुत्र। इसे रेवती नामक कन्या थी। उसे ले कर यह ब्रह्मदेव के पास उसके लिये वर पूछने गया। वहाँ गायन चालू होने के कारण, क्षणभर रुका। तदनंतर इसने ब्रह्मदेव से पूछा, तब ब्रह्मदेव हँस कर बोला, "तुम्हारे पृथ्वी से यहाँ आने तक पृथ्वी पर चार युगों के सत्ताईस चक्कर हो चुके हैं। सांप्रत द्वापारयुग में परमेश्वर अंश से बलराम का जन्म हुआ है, उसे यह कन्या दो" (भा. ९.३)। इसे रैवत कहते थे (विष्णु. ४.१.२१; २.१-२)। यह सौ भ्राताओं में ज्येष्ठ था इसकी राजधानी कुशस्थली थी। इसके वापस आने तक कुशस्थली की द्वारका बन गई थी (ब्रह्माण्ड. ३.६१. २२; वायु. ८६.२७)।

ककुभ्--धर्म ऋषि के अरुंधती नामक स्त्री का नामांतर। यह दक्षकन्या है (भा. ३.६)।

कक्षसेन—असित पर्वत पर रहनेवाला एक राजर्षि (म. अनु. १३७.१५)। इसने वसिष्ठ का धन रक्षण किया।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४.१९)।

३. (सो. कुरु.) दूसरे जनमेजय का पुत्र (म. आ. ८९. ४८)।

४. यम सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ८.१७)।

कक्षीवत्—यह दीर्घतमस् का पुत्र। इसकी माता का नाम उशिज्। इसे औशिज कहा गया है (ऋ. १.१८.१; दीर्घतमस् देखिये)। इसकी पत्नी का नाम वृचया (ऋ. १.५१.१३)। स्वनय भावयव्य ने इसे देन दी थी (ऋ. १.१२५;१२६; सां. श्रौ. १६.४.५)। आयवस तथा मशशार के तीन पुत्रों ने कक्षीवत् को कष्ट दिये थे। यह पज्रकुल का था इसलिये अपने को पज्रिय कहलाता है (ऋ. १.११६.७; ११७.६)। इसे पज्र भी कहा है (ऋ. १. १२६.४; पं. ब्रा. १४.११.१६)। विवाह के समय इसकी उम्र काफी होगी (ऋ. १.५१.१३)। यह काफी वृद्ध रहा होगा (ऋ. ९.७४.८)। ऋग्वेद में भी यह पुरातन माना जाता था (ऋ. १.१८.१; ४.२६.१)। दीर्घतमस् तथा कक्षीवत् का ऋग्वेद की एक ऋचा में एकसाथ उल्लेख है (ऋ. ८.९.१०)। यह क्षत्रिय था परंतु तप से ब्राह्मण तथा ऋषि हुआ था (वायु. ९१.१००; ११४)। इसे घोषा नामक एक कन्या थी। एक सूक्त में अश्वियों को प्रसन्न कर के इसने उत्तम लोक प्राप्त किया था (ऋ. १.१२०; ऐ. ब्रा. १.२१; जै. ब्रा. १.६.११)। यह सूक्तद्रष्टा है (ऋ. १.११६-१२५; १२६.१-५; ९.७४)। विद्याध्ययन करने के बाद यह वापस आ रहा था, राह में स्वनय भावयव्य से इसकी मुलाकात हुई। अंगिरस कुल का औचथ्य दीर्घतमस का यह पुत्र है, ऐसा मालूम होते ही, उसने इसे अपनी दस कन्यायें तथा बहुत संपत्ति दी। तब इसने उसकी प्रशंसा की (बृहदे. ३. १४१-१५०)। काक्षीवत औशिज या कक्षीवत नाम आगे दिये गये ग्रंथों में भी है (म. स. ४.१५; ७.१६; अनु. २७१.३७ कुं.)। अंगिरसकुल के मंत्रकारों में इसका नाम है (दीर्घतमस देखिये)।

२. भीष्म से मिलने आया हुआ ऋषि (भा. १.९)।

कक्षेयु—(सो. पुरूरवस्.) विष्णु के मतानुसार रौद्राश्व तथा मत्स्य के मतानुसार भद्राश्व पुत्र है।

कंक—वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर में यह शंकर का अवतार है। इसे निम्नलिखित चार पुत्र हैं--सनक, सनातन, सनंदन, सनत्कुमार। यह निवृत्तिमार्गीय था। इसने तत्कालीन सवितृ व्यास की सहायता की (शिव. शत. ४)।

२. वृष्णिवंश का एक क्षत्रिय (म. आ. १७७.१८)।

३. म्लेच्छ राजाओं का वंश। इनका पराभव दुष्यंतपुत्र भरत ने किया (भा. ९.२०)।

४. (सो. यदु.) शूर राजा को मारिषा अथवा भोजा से उत्पन्न दस पुत्रों में सातवाँ। वसुदेव का भ्राता। इसे कर्णिका स्त्री से ऋतधामन् तथा जय नामक पुत्र हुए थे (भा. ९.२४)।

५. (सो. वृष्णि.) उग्रसेन के नौ पुत्रों में से चौथा। यह कंस का कनिष्ठ भ्राता, जिसका वध बलराम ने किया (भा. ९.२४)।

६. अज्ञातवासकाल में विराटगृह में प्रवेश करते समय युधिष्ठिर ने धारण किया हुआ नाम (म. वि. १.२०;७.१०)। यह विराट का सभासद था। विराट इससे अक्षक्रीड़ा करता था। दक्षिण गोग्रहण के समय विराट ने सुशर्मा पर आक्रमण किया तब उसने इसे साथ लिया था तथा वहाँ सुशर्मा उसे बांध कर ले जा रहा था। इसने अपने भाई के द्वारा विराट को मुक्त कराया (विराट देखिये)।

७. कलियुग के सोलह राजाओं का एक वंश (भा. १२.१)

कंकट—कटु के लिये पाठभेद।

कंकतीय—एक कुल का नाम है। इस कुल ने शांडिल्य ऋषि से अग्निचयन करना सीखा (श. ब्रा. ९.४.४.१७)। एक कंकटी ब्राह्मण का उल्लेख आपस्तंबश्रौतसूत्र (१४.२०.४) में आया है। शायद बौधायन श्रौतसूत्र के (२५.६) तथा छागलेय ब्राह्मण में उल्लेखित ब्राह्मण यही होगा।

कंकमुद्र—ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

कंका—उग्रसेन की कन्या तथा कंस की भगिनी। वसुदेव के भाई आनक की स्त्री।

कंकी—(सो. कुकुर.) विष्णुमत में उग्रसेन की कन्या।

कच—एक महर्षि (म. अनु. २६.८)।

२. वर्तमान मन्वन्तर में अंगिरापुत्र बृहस्पति का पुत्र। परंतु इसकी माता कौन थी इसका पता नहीं चलता है क्यों कि, बृहस्पति की शुभा तथा तारा नामक दोनों स्त्रियों की संतति में इसका नाम नहीं है।

देवकार्यार्थ गमन—एक बार देव एवं दैत्यों में त्रैलोक्य का आधिपत्य तथा ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिये तुमुल युद्ध हुआ। उसमें दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य संजीवनी विद्या के कारण मृत राक्षसों को तत्काल जीवित कर देते थे। इस कारण दैत्यों की शक्ति कम नहीं होती थी। देवगुरु बृहस्पति को यह विद्या प्राप्त न होने के कारण, देवताओं का बहुत नुकसान होता था। तब इन्द्र तथा अन्य देवताओं ने कच से प्रार्थना कर कहा, कि तुम शुक्राचार्य तथा उसकी तरुण कन्या देवयानी को प्रसन्न कर, संजीवनी विद्या सीख कर आवो। तुम्हारा शील, सौंदर्य, माधुर्य, मनोनिग्रह तथा आचरण देवयानी को प्रसन्न करने के साधन हैं। देवयानी को वश करने का कारण यही है कि, यदि वह प्रसन्न हो गयी तो विद्याप्राप्ति में विलंब न होगा क्यों कि, देवयानी शुक्राचार्य का दूसरा प्राण है। यह बता कर देवताओं ने उसे आशीर्वाद दिया।

गुरुसेवा—कच विद्यासंपादन के लिये देवताओं को छोड़ कर शुक्राचार्य के पास आया। शुक्राचार्य ने पूछा, 'तुम कौन हो? कहाँ से आये हो?' तब कच ने बड़ी नम्रता से कहा, 'मैं बृहस्पतिपुत्र कच हूँ तथा विद्या-संपादन के हेतु आया हूँ।' शुक्राचार्य ने उसे अतिथि समझ कर तथा गुरुपुत्र होने के कारण, वंदनीय मान कर अपने पास रख लिया। तत्पश्चात् वह गुरुभक्ति से तथा ब्रह्मचर्य से सेवा करने लगा। शुक्राचार्य की तरुण कन्या देवयानी के मनोरंजन के लिये कच, गाना, वाद्य बजाना, नाचना, पुष्प तथा फल लाना एवं बताये हुए काम तथा गायें चराना आदि काम करने लगा। इस प्रकार शुक्राचार्य तथा उसकी प्रिय कन्या देवयानी के कार्य में कहीं भी न्यूनता न रखते हुए, कड़े ब्रह्मचर्यव्रत से कच ने उन की ५०० वर्षों तक उत्तम सेवा की। इससे आचार्य उस पर प्रसन्न हो गये, तथा देवयानी तो उसे अपना बहिश्चर प्राण समझने लगी।

संकटपरंपरा—१. देवगुरु बृहस्पति का पुत्र कच अपने आचार्य के पास विद्या संपादनार्थ आया है। अवश्य ही यह संजीवनी विद्या संपादन करने के लिये आया होगा, यह सोच कर दैत्यों ने उसका वध करने का का निश्चय किया। एक दिन उन्हों ने उसे गौओं को चराते हुए देखा। क्रोधावशात् उन्हों ने इसे पकड़ा तथा इसके शरीर के खंडशः टुकडे कर, सियारों को खिला दिये तथा वे वापस अपने स्थान पर लौट आये। इधर सूर्यास्त होने पर भी कच घर लौट नहीं आया, यह देख कर देवयानी ने यह खबर पिता तक पहुँचाई। इस पर शुक्राचार्य ने संजीवनी विद्या का प्रयोग किया। तत्काल सियारों के शरीर फाड़ कर कच सजीव हो कर आचार्य तथा देवयानी के समक्ष आ कर खड़ा हो गया। कच को आया जान कर देवयानी ने विलंब का कारण पूछा। तब उसने दैत्यों का सारा कृत्य उसे बताया।

२. एक बार पुनः देवयानी के कथनानुसार जब कच अरण्य में गया था, तब राक्षसों ने उसे देखा। पुनः उसके टुकड़े कर के, उन्होंने समुद्र में फेंक दिये। इस समय भी पिता को बता कर देवयानी ने इसे पूर्ववत् सजीव कराया।

३. इस समय इसे मार कर, इसका चूर्ण बना कर राक्षसों ने जलाया सुरा के पात्र में वह रक्षा मिलाई। वही पात्र शुक्राचार्य को पीने के लिये दिया तथा अपने अपने घर चले गये।

देवयानीप्रणय—दिन का अवसान हो गया। रात हुई, किन्तु कच नहीं आया। यह देख, देवयानी ने पिता से कहा कि, अभी तक कच नहीं आया। हो न हो, उसे अवश्य राक्षसों ने मार डाला होगा। उसे तत्काल जीवित कर के आश्रम में लाने के लिये, देवयानी हठ करने लगी। तब शुक्राचार्य ने देवयानी से कहा कि, बार बार जीवित करने पर भी कच की मृत्यु हो जाती है, इस लिये भला मैं क्या कर सकता हूँ? अब तुम रुदन मत करो। कच की मृत्यु के लिये दुःख मनाने का अब कुछ प्रयोजन नहीं है। तब देवयानी ने उसके रूपगुणों का रसभरा वर्णन किया एवं शोकावेग से वह प्राणत्याग करने के लिये प्रवृत्त हो गई। देवयानी का यह अविचारी कृत्य देख कर शुक्राचार्य असुरों को बुला लाये। तथा उनसे बोले, "मेरे पास विद्याप्राप्ति के हेतु आये हुए मेरे शिष्य को मार कर तुम लोग क्या मुझे अब्राह्मण बनाना चाहते हो? तुम्हारे पापों का घड़ा भर गया। प्रत्यक्ष इन्द्र आदि का भी घात ब्रह्महत्या के कारण होता है फिर तुम्हारी क्या हस्ती?" क्रोध से ऐसा कह कर, शुक्राचार्य ने कच को पुकारा। तब संजीवनी विद्या के प्रभाव से शुक्राचार्य के उदर में जीवित कच ने वह उदर में किस प्रकार आया, तथा दैत्यों ने किस प्रकार उसे मारा वह बताया। तदनंतर उसने कहा, 'गुरुहत्या के पाप का भागीदार मैं न बनूँ तथा देवयानी का मेरा एवं संपूर्ण विश्व का अकल्याण न हो, इस हेतु से मैं गर्भवास ही स्वीकार करता हूँ'।

तब शुक्राचार्य ने देवयानी से कहा, 'अगर तुम्हें कच चाहिये तो मेरा वध होना आवश्यक है। अगर मैं तुम्हें प्रिय हूँ तो उदरगत कच का बाहर आना असंभव है'। तब देवयानी ने कहा कि, 'तुम दोनों मुझे प्रिय हो। दोनों में से किसी का भी विरह मेरे लिये दुखदायी ही होगा'।

प्रथमतः शुक्राचार्य ने कच को उदर में, संजीवनी विद्या का उपदेश किया तथा बाहर आने के बाद अपने को जीवित करने के लिये कहा। तदनंतर संजीवनीविद्याप्राप्त कच शुक्राचार्य का उदरविदारण कर बाहर आया तथा उसी विद्या से तत्काल उसने शुक्राचार्य को जीवित किया। अपना पिता शुक्राचार्य तथा कच दोनों को जीवित देख कर, देवयानी को अत्यंत आनंद हुआ।

सुरापान के कारण यह भी समझ में न आया कि, मैं कच की राख पी रहा हूँ। इसके लिये शुक्राचार्य को अत्यंत खेद हुआ। सुरादेवी पर क्रोधित हो कर शुक्राचार्य ने मद्यपान पर निम्नलिखित निर्बंध लगा दिया। "जो ब्राह्मण आज से भविष्य में व्यसनी लोगों के चंगुल में फँस कर मुर्वत से अथवा मूर्खता से सुरापान करेगा, वह धर्मभ्रष्ट हो कर ब्रह्महत्या के पातक का भागीदार बनेगा। उसे इहपरलोक में अप्रतिष्ठा तथा अनंत कष्ट भोगने पड़ेंगे।" इस प्रकार धर्ममर्यादा स्थापित कर के उसने दैत्यों से कहा, 'तुम्हारी मूर्खता के कारण मेरे प्रिय शिष्य कच को यह संजीवनी विद्या प्राप्त हो गई। इस प्रकार हजार वर्षों तक गुरु के पास रहने के बाद कच ने देवलोक में जाने के लिये गुरु की आज्ञा माँगी।

शुक्राचार्य ने कच को जाने की आज्ञा दी। कच देवलोक जा रहा है यह देख कर, देवयानी ने उससे प्रार्थना की। 'हम दोनों समान कुलशीलवाले हैं। मेरी तुम पर अत्यंत प्रीति है। इस प्रीति के कारण ही तीन बार राक्षसों द्वारा मारे जाने पर भी मैंने तुम्हें जीवित किया, इसलिये मेरा पाणिग्रहण किये बिना तुम्हारा देवलोक जाना ठीक नहीं है'। कच ने उसे बहुत ही समझाया, कि हम दोनों का जन्म एक ही उदर में होने के कारण धर्मदृष्टि से तुम मेरी गुरुभगिनी हो। तस्मात् तुम मुझे गुरु के समान पूज्य हो। इतना कहने पर भी देवयानी ने अपना हठ नहीं छोड़ा। तब कच ने कहा, 'अपने पुत्र के भाँति तुमने मुझे प्यार किया। तुम्हारा तथा मेरा जन्म एक ही पिता से हुआ है, अतएव तुम मेरे द्वारा पाणिग्रहन की कामना मत करो' इतना कह कर कच ने देवयानी को दृढ मनोभाव से शुक्राचार्य की सेवा करने के लिये कहा तथा उससे आशीर्वाद माँगा।

शापप्रतिशाप—भग्नमनोरथा देवयानी ने अत्यंत संतप्त हो कर उसे शाप दिया कि, मेरी प्रार्थना अमान्य कर बड़े अहंकार से, जो विद्या प्राप्त कर तुम जा रहे हो वह तुम्हें कभी फलद्रूप न होगी। तब कच ने शांति से कहा, 'चूँकि तुम गुरुभगिनी हो एवं मैं सात्त्विक ब्राह्मण हूँ, मैं तुम्हें प्रतिशाप नहीं देता। यह शाप कामविकारजन्य है। अर्थात् तुम्हारा वरण ब्राह्मण पुत्र करे, यह तुम्हारी इच्छा कभी सफल नहीं हो सकती। मेरी विद्या मुझे फलद्रूप

नहीं होगी, ऐसा शाप तुमने दिया। ठीक है। जिसे वह विद्या मैं सिखाऊँगा, उसे वह फलद्रूप होगी'।

गौरव--इतना कह कर कच देवायानी से विदा ले कर देवलोक गया। इस प्रकार विद्या संपादन कर के जब वह देवलोक वापस आया तब देवों ने तथा इन्द्र ने इसका स्वागत किया तथा यज्ञ का भाग इसे दिया (म. आ. ७१.७२, मत्स्य. २५-२६)।

कच्छनीर--वैशाख माह में अर्यमा नामक सूर्य के साथ भ्रमण करनेवाला नाग (मा. १२.११)।

कच्छप--कुबेर के मूर्तिमान नौ निधियों में से पाँचवाँ।

कंजाजना--दाशरथि राम-पुत्र लव की कनिष्ठ स्त्री।

कटक--मर्कटप के लिये पाठभेद।

कटायनि--भृगुकुल का गोत्रकार।

कटु--एक अंगिराकुल का गोत्रकार। इसके लिये कटय तथा कंकट पाठभेद हैं।

कठ--वसिष्ठकुल के गोत्रकार ऋषिगण (म. आ. ८.२३०; स. ४.१५)। इसके नाम पर कठ परिशिष्ट, कठब्राह्मण, कठ संहिता, कठवल्ल्युपनिषद् तथा कठसूत्र ग्रंथ आये हैं। कठसूत्र का निर्देश कात्यायन श्रौतसूत्र में है (१.३.२३; ४.८.१३)। यही कठशाखा का प्रवर्तक होगा (पाणिनी देखिये)। कठ तथा कपिष्ठल कठ का ही भेद है।

कठ कृष्णयजुर्वेद की शाखा है। कठ लोग विस्तृत प्रदेश में आबाद थे। सिकंदर को कठों ने कड़ा विरोध किया। कठो का स्थान पंजाब के अन्तिम भाग में सिंधु के तट पर दीखता है।

२. रेवती देखिये।

कठशाठ--एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

कणिक-- धृतराष्ट्र का नीतिशास्त्रविशारद ब्राह्मण-मंत्री। इसने पांडवों के संबंध में धृतराष्ट्र को विपरीत सलाह दी थी (म. आ. परि. १.८१)। इतनी शत्रुता बढ जाने पर युद्ध के अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नहीं है, ऐसा इसने बताया। कणिंक पाठ भी मिलता है।

इसका कथन कणिकनीति नाम से प्रसिद्ध है तथा भांडारकर महाभारत में परिशिष्ट में दिया है।

कणीशा--कश्यप तथा क्रोधा के कन्या तथा पुलह की स्त्री।

कंठ--(सो. पुरूरवस्.) वायुमत में अजमीढ़पुत्र।

कंठायन--(सो. पुरूरवस्.) वायुमत में मेघातिथि-पुत्र।

कंठेविद्धि--ब्रह्मविद्धि का शिष्य। इसका शिष्य गिरिशर्मन् (वं. ब्रा. १)।

कंडरीक--ब्रह्मदत्त का मंत्री तथा योगी (ह. वं. १. २०.१३)। पितृवर्तिन् तथा ब्रह्मदत्त देखिये। यह सर्वशास्त्र प्रवर्तक था (मत्स्य. २१.२५)। इसको द्विवेद, छंदोग तथा अध्वर्यु कहा है (ह. वं. १.२३.२१-२२)

कंडु--एक ब्रह्मर्षि। इसके एक वर्ष के पुत्र की जिस वन में मृत्यु हुई, उस वन को इसने उदकरहित किया (वा. रा. कि. ४८)। इसका तप नष्ट करने के लिये इंद्र ने प्रम्लोचा नाम की अप्सरा भेजी थी। इस की कन्या मारीषा (विष्णु. १.१५. भा. ४.३०)।

२. व्यास की सामशिष्यपरंपरा के वायु तथा ब्रह्माण्ड मतानुसार लांगलि का शिष्य।

कंडू--कलिंग कन्या तथा अक्रोधन की स्त्री। इसके पुत्र का नाम देवातिथि। भांडारकर प्रति में करंडु पाठ है (म. आ. ९०.२१)।

कण्व--एक गोत्रप्रवर्तक तथा सूक्तद्रष्टा। घोर के कण्व तथा प्रगाथ नाम के दो पुत्र थे। वन में एक बार प्रगाथ ने कण्व की स्त्री को छेडा। इसलिये कण्व शाप देने लगा। तब प्रगाथ ने इन्हें माता एवं पिता माना। कालांतर में इसके वंशजों ने ऋग्वेद का आठवाँ मंडल तयार किया (बृहद्दे. ६.३५-३९)। कण्व शब्द का अर्थ सुखमय होता है (नीलकंठ टीका)। यह यदुतुर्वश का पुरोहित रहा होगा क्यों कि, कण्वकुलोत्पन्न देवातिथि इंद्र से प्रार्थना करता है कि यदु तथा तुर्वश तुम्हारी कृपा से मुझे सदैव सुखी दिखाई दें (ऋ. ८.४.७)।

इस पुरातन ऋषि कण्व का ऋग्वेद तथा इतरत्र बार बार उल्लेख आता है (ऋ. १.३६.८;१०.११ आदि; अ. वे; ७. १५. १: १८. ३. १५; वा. सं १७. ७४; पं. ब्रा. ८.१.१; ९.२.६; सां. ब्रा. २८.८)। इसके पुत्र तथा वंशजों का नाम बारबार आता है। यह सूक्तद्रष्टा था (ऋ. १.३६-४३;८; ९.९४)। अंगिरसकुल में कण्व मंत्रकार थे। कण्व का वंशज उसके अकेले के कण्व नाम से (ऋ. १.४४.८; ४६.९; ४७.१०; ४८.४; ८.४३.१). तथा पैतृकनामसहित, जैसे कण्व नार्षद (ऋ. १.११७. ८; अ. वे. ४.१९.२), तथा कण्व श्रायस (तै सं. ५. ४.७.५; क. सं. २१.८; मै. सं ३.३.९.) ऐसा संबोधित है। इसके अतिरिक्त इसका अनेकवचनी (बहुवचन)

[illegible]

[illegible] (आह्निक तथा श्राद्ध के संबंध से)

बनें हुए म्लेच्छों के दो हजार वैश्यों में से कश्यप सेवक पृथु को कण्व ने क्षत्रिय बना कर राजपुत्रनगर दिया (भवि वि. प्रति. ४.२१)।

कण्वायन--इसके दातृत्व के संबंध में कृश ने प्रशंसा की है (ऋ. ८.५५,४)।

कत वैश्वामित्र--सूक्तद्रष्टा (ऋ ३. १७; १८)। कुशिक कुल का गोत्रकार तथा मंत्रकार था।

कति--विश्वामित्र का पुत्र।

कत्तृण--अंगिराकुल का गोत्रकार।

कथक--विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

कद्रु--एक पुरोहित। इंद्र ने इसका सोम पिया (ऋ. ८.४५.२६)।

कद्रू--दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या (म. आ. ६६; भा. ६.६)। यह बहुत सुंदर तथा गुणवती थी परंतु इसकी एक ही आंख थी (भवि. प्रति. १. ३२)। दक्ष ने कश्यप के साथ इसका ब्याह कर दिया था। आगे चलकर इसने कश्यप से वर प्राप्त किया कि मेरे समान बल वाले सहस्र सर्प हों। उच्चैःश्रवा के रंग के संबंध से इसने अपनी सौत विनता से शर्त लगायी जिसमें कद्रू कहा था, कि उच्चैःश्रवा का रंग सफेद है पर पूंछ काली है। अपनी बात सत्य सिद्ध करने के लिए इसने अपने पुत्रों की सहायता मांगी, पर वे सहायता करने तैयार न हुए, तब इसने इन्हें शाप दिया कि तुम सब सर्पसत्र में भस्म होगे। दुष्ट सर्पों का नाश करने का यह अच्छा सुअवसर जानकर ब्रह्मदेव ने आकर इसके शाप की पुष्टि की (म. आ. १८)। तथा कहा कि उनका सापत्न बंधु उनका भक्षण करेगा। आगे चलकर उन्हों नें उश्शाप मांगा तथा सहायता करने का वचन दिया। तदनुसार वे उच्चैःश्रवा की पूंछ में जा लगे (म. आ. १८)। इस तरह उच्चैःश्रवा की पूंछ काली है, ऐसा कद्रु ने विनता को दिखलाया। विनता शर्त में हार गयी। अतः कद्रु की वह १,००० वर्षों तक दासी रहे यह निश्चित हुआ। पांच सौ वर्षों के बाद गरुड ने अपनी माता विनता को दास्य से मुक्त किया (म. आ. १८;३०; कश्यप देखिये)।

कद्रशंकु--(सो. कुकुर.) वायुमत में उग्रसेनपुत्र।

कनक--(सो. सहस्र.) मत्स्यमतानुसार दुर्दमपुत्र तथा वायुमतानुसार दुर्दमपुत्र।

२. विप्रचित्ति तथा सिंहिका का पुत्र। इसे परशुराम ने मारा (ब्रह्माण्ड. ३.६.१९-२२)।

कनकध्वज--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.३)। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ९२.२६)।

कनकांगद वा **कनकायु**--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

कनकोद्भव--(सो. विदूरथ.) वायुमतानुसार हृदीक का पुत्र।

कनिष्ठ--भौत्य मन्वन्तर का देवगण।

कनीयक--(सो. विदूरथ.) मत्स्यमत में हृदीकपुत्र।

कंदली--दुर्वास की पत्नी।

कंधर--मदनिका देखिये।

कन्यक--कश्यपकुल का गोत्रकार।

कप-देवविशेष। पहले इसने स्वर्ग का अपहार किया था। तब ब्राह्मणों ने इंद्र का पक्ष ले कर इसका नाश किया (म. अनु. २६२.४ कुं.)।

कपट--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कपर--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कपर्देय--विश्वामित्रकुल का गोत्रकार।

कपालभरण-- विंध्य पर्वत पर त्रिवक्रकन्या सुशीला को शुचि नामक ब्राह्मण से उत्पन्न पुत्र। इंद्र ने इसका वध किया। इसका वध करने के पश्चात् इंद्र ने सीतासरसतीर्थ में स्नान किया। इसके बाद इसका पुत्र दुर्मेधस गद्दी पर बैठा (स्कंद. ३.१.११)।

कपालिन्--कश्यप तथा सुरभि का पुत्र। एक रुद्र।

कपि--तामस मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

२. भृगु गोत्र का एक ऋषि तथा प्रवर (भृगु देखिये)।

३. (सो. पुरूरवस्.) विष्णुमतानुसार उरुक्षय का पुत्र तथा वायुमतानुसार उभक्षयपुत्र। यह क्षत्रिय होते हुए भी तप कर ब्राह्मण हुआ (वायु. ९१. ११६)

४. रैवत मन्वंतर के मनु का एक पुत्र।

५. अंगिरस गोत्र का मंत्रकार।

कपिंजल--वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार।

कपित्थक--कद्रुपुत्र एक सर्प।

कपिभू--अंगिराकुल का गोत्रकार।

कपिमुख--पराशरकुल का गोत्रकार। कपिश्रवस् पाठभेद है।

कपिल--सांख्यशास्त्रज्ञ कपिल का निर्देश श्वेताश्वतर उपनिषद् में है (५.२)।

वास्तव में यहाँ कपिल का अर्थ हिरण्यगर्भ है।

एक अग्निविशेष। कर्म ऊर्फ विश्वपति अग्नि तथा रोहिणी (हिरण्यकशिपुकन्या) का पुत्र। इसे सांख्यशास्त्र

प्रवर्तक कपिल कहा गया है। इसे अग्नयधिकार अर्थात् आहुति पहुँचाने का अधिकार है (म. व. २११.२१)।

२. कर्दम को देवहूति से उत्पन्न पुत्र। यह स्वायंभुव मन्वंतर का अवतार है। कर्दम ऋषि ने संन्यस्त होने का निश्चय किया। तब देवहूति ने पूछा, 'संसारचक्र से मेरी रक्षा कौन करेगा?' श्री हरि के वचन—'मैं तेरे घर जन्म लूंगा' स्मरण होने के कारण, कर्दम ने कहा, 'श्रीहरि तुम्हारी कोख से जन्म लेंगे तथा वे तुम्हें ब्रह्मज्ञान दे कर संसारचक्र से मुक्त करेंगे। श्रीहरि की आराधना करो जिससे वे तुम्हारे उदर में आवेंगे।' तदनुसार उसने श्रीहरि की आराधना की, जिससे कपिल उत्पन्न हुआ। कपिल का जन्म सिद्धपुर में हुआ (दे. भा. ९.२१)। यह हमेशा बिंदुसर पर रहता था (भा. ३.२५.५)। ये दोनों स्थान समीप रहे होंगे।

कालांतर में देवहूति को इसने ब्रह्मज्ञान बताया तथा उसे संसारचक्र से मुक्त कर खुद पाताल में जा कर रहने लगा। वहाँ यह ध्यानस्थ था। उस समय अश्वमेध के अश्व को खोजते खोजते सगर-पुत्र वहाँ आये। यह सो रहा था ऐसा हरिवंश में दिया गया है। (ह. वं. १.१४–१५.)। यही चोर है, इसी ने हमारा अश्व चुराया है यों समझ कर उन्होंने कपिल पर शस्त्रास्त्रों से प्रहार किया। तब कपिल ने क्रोधयुक्त दृष्टि से देख कर उन्हें भस्म कर दिया। इनमें से चार लोग जीवित रहे (सगर देखिये)। भागवत में दिया है कि, सब लोग भस्म हो गये (भा. ९.८.१२)।

व्यक्ताव्यक्त तत्त्व पर आसुरि से इसका संभाषण हुआ था। जिसमें आसुरि पृच्छक था तथा कपिल निवेदिता था।

इसका शिष्य आसुरि। आसुरि का शिष्य पंचशिख (नारद. १.४५) था। पंचशिख कपिल का अवतार है यों उसक सांख्यज्ञान के प्रभाव से लोगों को प्रतीत होता था (म. शां. २११)। नारदपुराण में दो कपिल दिये गये हैं। उनमें से एक ब्रह्मा का (नारद. १.४५) तथा दूसरा विष्णु का अवतार था (नारद. १.४९)। आचार्यतर्पण में पंचशिखादि के साथ इसका उल्लेख है (मत्स्य. १२. ९८; कात्या. परि.)।

इनमें से कौन सा सांख्यशास्त्रज्ञ तथा कौन सा वेदांती था, यह समझ में नहीं आता। कपिल नामक किसी ऋषि ने स्यूमरश्मि से संवाद किया था। उनका संवाद कपिल के वेदविषयक कथन से शुरू हुआ। इसने यज्ञ में भी गाय अवध्य है, इसी विषय पर वादविवाद किया (म. शां. २६०)। भागवत में "सांख्यशास्त्र की रचना के लिये पंचम जन्म लेंगे ऐसा कहा तथा मेरे घर में जन्म लिया," इस वचन के कारण भागवत का कपिल सांख्यशास्त्रज्ञ रहा होगा तथा यह विष्णु का अवतार ही है (भा. १. ३. १०; ३. २४. ६९; विष्णु. २. १४)। सांख्यशास्त्रज्ञ कपिल की स्मृति ने निंदा की है, तथा श्रुति में एक कपिलमाहात्म्य वर्णित है (श्वे. उ. ५. २; ब्र. सू. २. १–१ शांकरभाष्य)। अर्थात यह वेदांती कपिल रहा होगा। इसके वासुदेव (म. व. १०७. २) तथा चक्रधनु (म. उ. १०७. १७) नामांतर हैं। वासुदेव तथा चक्रधनु दोनों कपिल सगरपुत्रघ्न अर्थात् एक ही हैं। कामरूप देश में इसने कपिलेश्वर की स्थापना की (स्कंद. १. २. ४५)।

ब्रह्मदेव से वरदान प्राप्त कर रावण पश्चिम तट पर गया। वहाँ उसने एक तेजस्वी पुरुष देखा। रावण ने उसे युद्ध के लिये चुनौती दी। तब उस पुरुष ने रावण को एक तमाचा लगाया, जिसके कारण वह चक्कर खा कर धरती पर गिर पड़ा। तदनंतर वहाँ उसने एक सुंदर स्त्री देखी तथा उसकी अभिलाषा की। तब इस पुरुष ने यह जान कर उसकी ओर केवल देखा, जिससे रावण फिर धरती पर गिर पड़ा। रावण ने उठ कर उससे फिर पूछा, "आप कौन हैं?" तब इसने बताया कि, मेरे हाथ से शीघ्र ही तेरी मृत्यु होगी। इससे यह पता चलता है कि, यह विष्णु का अवतार रहा होगा। राम के प्रश्न का उत्तर देते समय, वसिष्ठ ने बताया कि, यह पुरुष कपिल महर्षि है (वा. रा. उ. ५ प्रक्षिप्त)।

वेनवध के पश्चात् इसी के कहने पर पृथु को उत्पन्न किया गया। पृथु ने कपिल को वत्स बना कर पृथ्वी को स्थिरस्थावर बनाया (भा. ४.१८–१९)। गौतमी-कपिलासंगम का माहात्म्य बताते समय, यह जानकारी दी गयी है (ब्रह्म. १४१)। आगे चल कर सांख्य का तत्त्वज्ञान बताया गया है, परंतु वहा कपिल का नामोल्लेख भी नहीं है (ब्रह्म. २३९; पंचशिख देखिये)।

इसके रचित ग्रंथः— १. सांख्यसूत्र, २. तत्त्वसमास, ३. व्यासप्रभाकर, ४. कपिलगीता (वेदांतविषयक), ५. कपिलपंचरात्र, ६. कपिलसंहिता (उत्कलतीर्थमाहात्म्य ७. कपिलस्तोत्र, ८. कपिलस्मृति। वाग्भट ने वैद्यविषयक ग्रंथरचयिता कह कर इसका उल्लेख किया है (C. C.)।

३. रुद्रगणों में से एक।

४. विश्वामित्र के पुत्रों में से एक।

५. दनु एवं कश्यप का पुत्र, एक दानव।

६. कद्रु तथा कश्यप का पुत्र, एक नाग।

७. ब्रह्मांडमतानुसार वसुदेव का सुगंधी से तथा वायुमतानुसार वनराजी से उत्पन्न पुत्र। यह राज्य न कर विरक्त हो कर वन में चला गया।

८. विंध्य पर रहनेवाला एक वानर।

९. वेन का वध करनेवाले ऋषियों में से एक।

१०. (सो. नील.) भद्राश्व का पुत्र। अन्य पुराणों में कापिल्य ऐसा पाठभेद है।

११. शिवावतार दधिवाहन का शिष्य।

१२. एक यक्ष। इसने खशाकन्या केशिनी से यक्षराक्षस उत्पन्न किये। इल की नीला नामक कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.७.१)।

१३. एक ब्राह्मण। एकादशी उपवास करने के कारण यह संपन्न हुआ (पद्म. उ. ३०)।

कपिला--दक्ष एवं असिक्नी की कन्या तथा कश्यप की स्त्री।

२. पंचशिख ऋषि की माता (नारद. १.४५; कबंधी देखिये)।

३. कश्यप तथा खशा की कन्या।

कपिलाश्व--(सू. इ.) भागवत तथा विष्णुमत में कुवलयाश्वपुत्र। मत्स्य तथा वायु मत में कुवलाश्वपुत्र।

कपिलोम--कश्यप तथा खशा का पुत्र।

कपिवन भौवायन--एक आचार्य। (मै. सं. १. ४.५; क. सं. ३.२.२)।

इसके नाम पर दो दिन चलनेवाला एक यज्ञ है (तां. ब्रा. २०.१३.४ का. श्रौ. २५, २--३; आश्व. श्रौ. १०. २)।

कपिश--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कपिश्रवस्--कपिमुख देखिये।

कपिष्ठल--वसिष्ठकुल का गोत्रकार ऋषिगण। यह कठ का एक भाग है। कपिष्ठलसंहिता उपलब्ध है। पाणिनि कपिष्ठलगोत्र निर्देश करता है (पा. सू. ८.३. ९१) (कठ देखिये)। यह कृष्ण यजुर्वेद की शाखा है।

कपीतर--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

कपोत--गरुड का पुत्र।

२. एक राजा। यह आत्मज्ञानी था।

कपोत नैर्ऋत--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१६५)।

कपोतक--पातालस्थित नागराज का नाम (मार्क. ६८)।

कपोतरोमन्--(सो. कुकुर.) भागवतमतानुसार विलोमा पुत्र, विष्णुमतानुसार धृष्टपुत्र, वायुमतानुसार धृतिपुत्र तथा मत्स्यमतानुसार वृष्टिपुत्र।

कबंध--दंडकारण्य का एक राक्षस। इसका सिर इसकी छाती में था। इस लिये इसे कबंध (शिरविरहित) नाम दिया गया। जटायुवध के बाद राम तथा लक्ष्मण, सीता की खोज में वन में घूम रहे थे। खोजते खोजते वे क्रौंचवन के पूर्व में तीन कोस दूर स्थित मातंग मुनि के आश्रम समीप पहुँचे। वहाँ उन्हें बहुत जोर की ध्वनि सुनाई पड़ी। यह ध्वनि कबंध राक्षस की थी। एक कोस की दूरी पर रह कर भी यह राम लक्ष्मणों को दिखा। जब यह भक्ष्य के लिये हाथ फैला रहा था, तब उस में राम-लक्ष्मण पकड़े गये। राम लक्ष्मणों के पास तरवारें थीं। राम को छूट जाने के लिये कह कर, लक्ष्मण स्वयं मरने के लिये तैय्यार हो गया। परंतु उसे धीरज दे कर राम ने रोका। अपने आप ही भक्ष्य उसके पास आया, इससे राक्षस को अत्यंत आनंद हुआ। उसने ऐसा कहा भी। परंतु लक्ष्मण, ने कहा कि, क्षत्रिय के लिये ऐसी मृत्यु अयोग्य है। तब राक्षस को क्रोध आया तथा वह इन्हें खाने के लिये प्रवृत्त हुआ। तब राम ने इसका बायाँ हाथ तोड़ दिया तथा लक्ष्मण ने इसका दाहिना हाथ तोड़ दिया। तब गतप्राण हो कर यह नीचे गिर पड़ा। तदनंतर इसके शरीर से एक दैदीप्यमान पुरुष निकल कर आकाश में गया। तब राम ने पूछा कि तुम कौन हो। तब इसने कहा कि, "मैं विश्वावसु नामक गंधर्व हूँ। ब्राह्मण के शाप से यह राक्षसयोनि मुझे प्राप्त हुई थी। सीता का हरण रावण ने किया है। तुम सुग्रीव के पास जाओ। वह तुम्हें सहायता करेगा, क्यों कि, सुग्रीव को रावण के मंदिर की जानकारी है।" इतना कह कर यह गुप्त हो गया (म. व. २६३; वा. रा. अर. ६९-७३)।

२. अट्टहास नामक शिवावतार का शिष्य।

३. व्यास के अथर्वन् शिष्यपरंपरा के वायु, विष्णु, ब्रह्मांड तथा भागवत मतानुसार सुमंतु का शिष्य।

कबंध आथर्वण--यह पतंचल काप्य की पत्नी के देह में संचार करता था। इसने पतंचल को कुछ अध्यात्मज्ञान बताया है (बृ. उ. ३.७)।

कबंधिन् कात्यायन--पिप्पलाद का ब्रह्मविद्या का शिष्य (प्र. उ. ११.३)।

कबंधी—पंचशिख ऋषि की माता (कपिल २. देखिये)।

कमठ--युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४.१९)।

२. महीनगर के हारित नामक ब्राह्मण का पुत्र। वृद्ध ब्राह्मण का रूप ले कर सूर्य इसके पास आया तथा उसने कुछ प्रश्न पूछे। उसके इसने समर्पक उत्तर दिये। तब सूर्य ने इसे बताया कि, तेरा पिता स्मृतिकार होगा, इस स्थान का त्याग नहीं करेगा तथा यह स्थान जयादित्य नाम से प्रसिद्ध होगा (स्कन्द. १.२.५१)।

कमद्यू—विमद की पत्नी (ऋ. १०.६५.१२)।

कमला--वल्लभ भीम की पत्नी (गणेश. १.१९.४०; दक्ष देखिये)।

कमलाक्ष--त्रिपुर का सुवर्णपुराधिपति असुर (लिंग. २.७१)। तारकासुर का पुत्र (म. क. २४.४)। रुद्र ने इसका वध किया।

कंपन—अंगद ने युद्ध में मारा हुआ लंका का राक्षस (वा. रा. यु. ७५)।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४.१९)।

कंबल—कद्रूपुत्र। पाताल के नागों का अधिपति (भा. ५.२४)। यह अश्विन माह में त्वष्ट्र नामक सूर्य के साथ रहता है (भा. १२.११)। यह अश्वतर का भाई है (मार्क. २१.५०)।

कंबलबर्हिष--(सो. क्रोष्टु.) अंधक का कनिष्ठ पुत्र।

२. (सो. विदूरथ.) मत्स्य तथा वायु के मत में देवार्हपुत्र।

३. (सो. यदु.) मत्स्य तथा वायु के मत में मरुत्तपुत्र। इसका पुत्र असमौजस्।

कयाधू—तारक के जम्भासुर नामक सेनापति की कन्या। इसका पति हिरण्यकशिपु। पहिली बार जब यह गर्भवती थी, तब हिरण्यकशिपु मंदार पर्वत पर तपश्चर्या करने के लिये गया था। यह मौका देख कर इन्द्र ने सब दैत्यों का पराभव किया। इसके गर्भ का जन्म होते ही उसे मार सकें, इस विचार से इंद्र कयाधू को ले कर जाने लगा। इतने में मार्ग में नारद मिला। उसने बताया कि इसके उदर में स्थित गर्भ भगवद्भक्त है। तब इंद्र ने इसे छोड़ दिया। बाद में नारद ने इसे आत्मबोध किया। वह इसके गर्भ ने उसे सुना तथा ध्यान में रखा। परंतु यह स्वयं स्त्रीस्वभाव के अनुसार वह उपदेश भूल गई (भा. ६.१८; ७.७; हिरण्यकशिपु देखिये)।

कयोवधि--ऋतुपर्ण देखिये।

करकर्ष—(सो. क्रोष्टु.)। शिशुपाल के चार पुत्रों में से एक। इसका चेकितान यादव से अत्यंत स्नेह था। भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा (म. द्रो. १९.२०)। इस के लिये करकाक्ष पाठ है।

करकायु — (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

कराजित—कर्णजित देखिये।

करंज—इंद्र का एक शत्रु (ऋ. १.५३.८; १०.४८.८)।

करट—शकट देखिये।

करंड--कंडू देखिये।

करथ—भास्करसंहिता के सर्वधरतंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

करंधम—(सो. तुर्वसु.) भागवतमत में त्रिभानुपुत्र, विष्णुमत में त्रिशांबपुत्र, वायुमत में त्रिसारिपुत्र तथा मत्स्यमत में त्रिसानुपुत्र।

२. (सू. दिष्ट.) भागवत तथा वायु के मतानुसार खनिनेत्र का पुत्र तथा विष्णु के मतानुसार अतिभूतिपुत्र। अवीक्षित राजा का पिता तथा मरुत्त राजा का पितामह (म. अनु. १३७.१६)। इसका मूल नाम सुवर्चस् था। करंधम नाम प्रचलित होने का कारण यह है। एक बार अनेक राजाओं ने मिल कर इसे अत्यंत त्रस्त किया। तब इसने अपने हस्त कंपित कर के सेना उत्पन्न की तथा सब का पराभव किया (म. आश्व. ४.९-१६)। इसे कालभीति ने उपदेश किया था (स्कन्द १.२.४०-४२)। महाभारत में तथा मार्कंडेय में बलाश्व पाठभेद मिलता है (मार्क. ११८.८; २१)।

करभाजन--ऋषभदेव के नौ सिद्धपुत्रों में से एक। यह योगी तथा ब्रह्मज्ञानी था। इसने विदेह के यज्ञ में ज्ञानोपदेश किया (भा. ५.४; ११.२)। इसकी माता जयंती।

करंभ—अगस्त्यकुल का एक गोत्रकार।

२. एक दनुपुत्र।

३. (सो. क्रोष्टु.) मत्स्य तथा वायु के मत में शकुनिपुत्र (करंभि देखिये)।

करंभक--(सो. विदूरथ.) मत्स्य के मत में हृदीकपुत्र।

करंभि—(सो. क्रोष्टु.) भागवत तथा विष्णु के मतानुसार शकुनिपुत्र (करंभ देखिये)।

कररोमन् वा करवीर—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कराल जनक—ब्राह्मण स्त्री की अभिलाषा के कारण इसका नाश हुआ (कौ. अ. पृ. २२)। वसिष्ठ के साथ इसका क्षराक्षरलक्षण के संबंध में संवाद हुआ था (म. शां. २९१–२९६; ब्रह्म. २४०–२४४)। वंशावली में इसका नाम अप्राप्य है।

करिकत वातरशन—मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.५)।

करीराशिन्—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार।

करीश—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

करूष—वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से एक। इसकी संतति कारूषक नाम से प्रसिद्ध है। इसका आधिपत्य उत्तर की ओर था (मनु देखिये)।

२. यह दक्ष सावर्णि मन्वन्तराधिप था। इसने अपने भाइयो के साथ कालिंदीतीर पर, वायुभक्षण कर के देवी की कडी तपश्चर्या की। इससे प्रसन्न हो कर देवी ने इसे वरदान दिया, कि तुम मन्वन्तराधिप बनोगे (दे. भा. १०.१३)।

करेणुमती—पंडुपुत्र नकुल की पत्नी। यह शिशुपाल की कन्या थी।

कर्कट—मर्याश पर्वत पर रहनेवाला एक भील। इसे विष देने के लिये तत्पर पत्नी को इसने गोकर्णक्षेत्र में मार डाला। इससे वह मुक्त हो गई (पद्म. उ. २२२)।

कर्कटी—हिमालय की उत्तर दिशा में रहनेवाली एक राक्षसी। इसे विषूचिका तथा अन्यायबाधिका नाम है। इसने लोगों को मारने का वर प्राप्त किया। परंतु बाद में इसने वह काम छोड दिया। यह हिमालय में रहती है। वहाँ इसका नाम कंदरा देवी है। केंकडे के आकार के राक्षस की कन्या होने के कारण, इसे कर्कटी कहते है (यो. वा. ३.६८–८४)।

कर्कंधु—इसका संरक्षण अश्वीदेवों ने किया (ऋ. १. ११२.६)।

कर्कोटक—कद्रूपुत्र एक नाग। यह वरुण की सभा में रहता है (म. स. ९.९)। यह नागों के भोगवती नामक राजधानी में रहता है (म. उ. १०१.९)। नारद के शाप से जब यह दावाग्नि में फँस गया, तब नलराजा ने इसे बाहर निकाला था। इस उपकार के कारण इसने नल को दंश कर के ऐसा बनाया कि, उसे कलि से पीडा न हो। उसी प्रकार वनवास समाप्त होने तक उसे कोई न पहचाने, इस उद्देश्य से विरूप भी बना दिया। 'सुरुप होने की इच्छा होते ही मेरे द्वारा दिये गये दो वस्त्रपरिधान कर लेना, यों इसने नल को बताया (म. व. ६३)। कर्कोट नामक भारतवर्ष के विभाग के कर्कोटक लोगों को महाभारत में विधर्मी कहा गया है (म. क. ३. ४५)।

कर्ण—कुंती का सूर्य से उत्पन्न पुत्र (म. आ. १०४. ११)।

जन्मते ही कुंती ने इसे अश्व नदी में छोड दिया (म. व. २९२. २२)। संदूक में यह बालक बहते बहते चर्मण्वती नदी में आया। वहाँ से यमुना तथा भागीरथी नदी में बहते समय, उसे धृतराष्ट्रसारथि अधिरथ ने देखा। इसे ले कर उसने अपनी पत्नी राधा को दिया। यह बालक देखते ही उसकी आँखों में आनन्दाश्रु आ गये। जन्मतः कर्ण पर कवच तथा कुंडल होने के कारण यह अब तक जीवित था। देवदत्त पुत्र मान कर राधा ने इसका भरणपोषण किया। यह तेजस्वी था, इसलिये राधा ने इसका नाम वसुषेण रखा (म. आ. ६४; ६८; १०४. १५. क. २१. १४)।

शिक्षा—इसका बाल्य काल अंगदेश में गया। द्रोणाचार्य ने इसे शस्त्रास्त्रविद्या सिखाई (म. शां. २. ५)। यह शस्त्रास्त्रविद्योद्यत था (म. आ. ६८; १०४. १६)। परीक्षा के मैदान में प्रविष्ट होने पर इसने द्रोण तथा कृप को नमस्कार किया, जिस में आदर के भाव नहीं थे (म. आ. १२६. ६)। इसने द्रोण से ब्रह्मास्त्र सिखाने के लिये केवल प्रार्थना की थी (म. शां. २. १०)। कृष्ण ने कहा है कि, यह सब वेद तथा शास्त्र जानता था (म. उ. १३८.६–७)। कर्ण अर्जुन पर भी श्रेष्ठत्व प्राप्त कर सकता था, इसका दुर्योधन ने अनुभव किया था। जिस समय कौरवपांडवों में विरोध प्रारंभ हुआ था, तबसे इसे उत्तेजना दे कर, उसने अपने पक्ष में कर लिया था।

यद्यपि कर्ण ने द्रोण से धनुर्विद्या प्राप्त कर ली थी, तथापि उसे ब्रह्मास्त्रप्राप्ति नहीं हुई थी। इस एक ही कारण से अर्जुन इससे श्रेष्ठ हो गया था। तब इसने द्रोण से कहा, 'निष्पत्ति प्रकार तथा उपसंहार के साथ मुझे ब्रह्मास्त्र सिखाओ।' परंतु कुछ कारणवश द्रोण ने यह अमान्य कर दिया। परंतु अर्जुन से श्रेष्ठत्व प्राप्त करने की इसकी महत्त्वाकांक्षा होने के कारण, यह महेन्द्र पर्वत

निवासी परशुराम के पास गया। परशुराम क्षत्रियद्वेष्टा होने के कारण, वह क्षत्रियों को विद्या नहीं सिखाता था। स्वकार्य यशस्वी करने के लिये, कर्ण ने असत्य कथन किया एवं परशुराम को उसने बताया कि, वह भृगुकुलोत्पन्न ब्राह्मण है, इसलिये शिष्य बन कर रहने की अनुमति परशुराम ने दी। उसने कर्ण को सप्रयोग एवं यथाविधि ब्रह्मास्त्र सिखाया।

एक दिन उपवास से श्रांत परशुराम कर्ण की गोद में सिर रख कर सोया था, तब एक कृमि ने आ कर उसकी जांघ काट खायी। रक्त स्पर्श से परशुराम जाग्रत हुआ। इतनी वेदनाएं कोई ब्राह्मण शांति से सहन नहीं कर सकता, यह सोच कर कर्ण के बारे में परशुराम के मन में शंका उत्पन्न हुई। चाहे जो हो, यह अवश्य क्षत्रिय है। कर्ण ने सत्यकथन कर उसे संतुष्ट किया, तथापि इसे शाप मिला कि, बराबरी के योद्धा से युद्ध करते समय, तथा अंतिम समय इसे अस्त्र की स्फूर्ति न होगी, अन्य समय पर होगी। असत्यकथन के कारण, परशुराम ने कर्ण से जाने के लिये कहा, परंतु यह आशीर्वाद भी दिया कि, तुम्हारे समान दूसरा कोई भी क्षत्रिययोद्धा न होगा (म. शां. ३.३२)।

गोवत्सहत्या—एक बार धनुष्य बाण समवेत यह आश्रम के बाहर गया हुआ था, तब असावधानी से एक ब्राह्मणधेनु का बछड़ा इसके द्वारा मारा गया। तब उस ब्राह्मण ने इसे शाप दिया, 'युद्ध में भूमि तुम्हारे रथ का पहिया निगल लेगी तथा असावध अवस्था में तुम्हारा शिरच्छेद होगा,'। इससे कर्ण को अत्यंत दुख हुआ। इसने धन दे कर उःशाप मांगने का प्रयत्न किया, परंतु उसने इसका धिक्कार किया (म. क. २९; शां. २.२३-२९)।

अवहेलना—धृतराष्ट्र की अनुज्ञा से द्रोण ने कौरव पांडवों का शस्त्रास्त्रकौशल्य देखने के लिये रंगमंच तैय्यार किया। परंतु कर्ण ने कहा कि, अर्जुन के द्वारा दिखाये गये कौशल की अपेक्षा अधिक कौशल मैं दिखा सकता हूँ। तब कौरव पांडवों का झगड़ा हो कर, कर्ण ने अर्जुन को द्वंद्व युद्ध का आव्हान दिया। उस समय सब लोग आश्चर्यमूढ हो कर, कर्ण की ओर देख रहे थे। परंतु दुर्दैव से कर्ण का जन्मवृत्त किसी को मालूम न होने के कारण इसे यहाँ नीचा दिखना पड़ा। इसके अतिरिक्त कर्ण का पालनकर्ता पिता अधिरथ वहाँ आया तथा कर्ण ने उसे नमस्कार किया। तब सब लोक सूत, सूतपुत्र राधेय आदि कह कर इसकी अवहेलना करने लगे। इस समय कुंती की परिस्थिति भय, आनंद एवं दुखमिश्रित हो गई थी। पुत्रप्रेम से उसका हृदय भर आया। परंतु उसकी अवहेलना तथा पांडववैर देख कर उसे अत्यंत दुख हुआ (म. आ. १२६)।

कृतज्ञता—कर्ण के राजपुत्र एवं क्षत्रिय न होने के कारण, यह अपमान उसे सहना पड़ता था। उस समय दुर्योधन ने कहा कि, शौर्य कुल पर निर्भर नहीं रहता। उसने कर्ण को अंगदेश का राज्य दे कर गौरवान्वित किया। इस उपकार के विनिमय की पृच्छा करने पर दुर्योधन ने कर्ण से मित्रत्व भाव कायम रखने की इच्छा प्रदर्शित की। इस प्रकार बाल्यावस्था से इनमें अकृत्रिम मित्रत्व स्थापित हो कर इसने उसके लिये मृत्यु तक का स्वीकार किया (म. आ. १२६]।

जरासंधस्नेह—इसने मल्लयुद्ध कर के जरासंध का जोड़ ढीला कर दिया, इसलिये जरासंध ने इसे मालिनीनगर दे कर इससे स्नेहसंपादन किया (म. शां. ५.६)।

विवाह—कर्ण ने काफी सूतकन्याओं से विवाह किये (म. उ. १३९.१०)। द्रौपदीस्वयंवर में यह मत्स्यभेद के लिये आगे बढ़ा, तब द्रौपदी ने कहा, "मैं सूतपुत्र को नहीं वरूंगी।" यह सुन कर इसे पीछे हटना पड़ा (म. आ. १७८. १८२७*)।

बुद्धिभेदयत्न—कौरव पांडवों के बैर के कारण निष्कारण कर्ण तथा पांडवों में बैर आया। यह देख कर कुंती को अत्यंत दुख हुआ। उसने इसका समाधान कर के पांडवों की सहायता के लिये, इसे प्रवृत्त करने के लिये शिष्टाई के हेतु से कृष्ण को इसके पास भेजा। शिष्टाई के बाद कृष्ण कर्ण के पास गया तथा उसने कर्ण से उसका जन्म वृत्त बता कर कहा, कि तुम्हें सार्वभौम पद का लाभ होगा। पांडवों के समान शूर नररत्न तुम्हारी सेवा करेंगे। द्रौपदी तुम्हारी अर्धांगी बनेगी। कौरवों द्वारा तुम्हारी हार नहीं होगी, तथा भविष्य में होनेवाला क्षय भी टल जायेगा। सब कार्य ठीक से होगा। ऐसे कई प्रलोभन इसे दिखाये।

कर्ण ने उत्तर में कृष्ण से कहा कि, यद्यपि कुन्ती मेरी माता है एवं पांडव मेरे बंधु हैं यह कथन मुझे मान्य है, तथापि मुझे नदी में छोड कर, कुन्ती ने बडी भारी भूल की है। उसी के कारण मुझे अधिरथ के पास रहना पड़ा। मैं ने सूतकन्याओं से विवाह किये तथा उनसे मुझे पुत्रपौत्रादि भी हुए। इन कारणों से, एवं राधा के अनुपम एवं अकृत्रिम प्रेमपाश से मैं बद्ध हो गया हूँ। अब यह संबंध तोड़ना मेरे लिये असंभव है। इसके अतिरिक्त मैं

ने दुर्योधन को वचन दिया है कि, मैं उससे आमरण मित्रत्व रखूँगा। इस परिस्थिति के कारण पांडवों के पक्ष में आना मेरे लिये अनुचित है। यह सुन कर कृष्ण निरुत्तर हो गया (म. उ. १३९)।

भेंट—कुंती स्वयं कर्ण से मिलने गई, तथा पुत्र कह कर अपना परिचय उसे दिया। तब प्रथम बताये अनुसार सारा वृत्त कथन कर के, पांडवों का पक्ष लेना उसने साफ अमान्य कर दिया। परंतु कुंती के कथनानुसार वचन दिया कि, मैं केवल अर्जुन से युद्ध कर के उसका वध करूँगा, अन्य पांडवों को मैं हानि नहीं पहुँचाऊँगा। यह सुन कर कुंती वापस चली गई (म. उ. १४४)।

द्रोणवध के बाद कर्ण सेनापति हुआ। तब महासमर की आज्ञा मांगने के लिये कर्ण भीष्म के पास गया। उस समय भीष्म ने इसे इसका जन्मवृत्त कथन कर, युद्ध से परावृत्त करने का प्रयत्न किया। परंतु कर्ण ने उसकी बात न सुनी। इसी समय कर्ण ने भूतकाल में किये गये अपने कृत्यों के लिये, भीष्म से क्षमायाचना की (म. भी. ११७)।

गंधर्वयुद्ध—कौरव घोषयात्रा के लिये गये थे, तब कर्ण भी उनके साथ गया था। वहाँ चित्रसेन गंधर्व के साथ दुर्योधन का युद्ध हो कर उसमें प्रथम कर्ण ने गंधर्वों का पराभव किया। परंतु बाद में संपूर्ण सेना ने उसीपर आक्रमण किया एवं उसे भग्नरथ कर के विकर्ण के रथ में बैठ कर भागने के लिये मजबूर किया (म. व. २३१)।

विराटनगरी में—पांडव अज्ञातवासकाल में जब विराट के पास रहते थे, तब दुर्योधन ने विराट नगरी पर आक्रमण किया। कीचक की मृत्यु के कारण, उस समय विराट अत्यंत निर्बल हो गया था। दुर्योधन को कर्ण, संशप्तक, वीर सुशर्मा आदि की सहायता प्राप्त थी, फिर भी इस युद्ध में दुर्योधन का पूर्ण पराभव हुआ। इस युद्ध में कर्णार्जुन का तुमुल युद्ध हुआ, जिस में कर्ण का पूर्ण पराभव हो कर उसके भाई शत्रुंतप का वध अर्जुन ने किया (म. वि. ५६)। यह लड़ाई उत्तरगोग्रहण के नाम से प्रसिद्ध है। इसी युद्ध में विराट की एक लक्ष गौएं सुशर्मा ने ले ली थीं (म. वि. ४९-५५)

कृपाचार्य से सामना—कर्ण ने अर्जुन का पराभव करने की प्रतिज्ञा की, परंतु कृपाचार्य ने उसका निषेध किया। कर्ण ने बदले में उसका उपहास किया तथा कृपाचार्य तथा अश्वत्थामा को मर्मभेद्य भाषण से दुखाया। झगड़ा बहुत बुरी तरह हुआ था, परंतु ले दे कर दुर्योधन ने सब को समझाया (म. वि. ४३-४६)। इसने द्रुपदपुत्र प्रियदर्शन का वध किया था (म. आ. १९२, परि. १०३ पंक्ति. १३३)।

दिग्विजय—चित्रसेन गंधर्व से दुर्योधन की रक्षा पांडवों ने की इसका स्मरण दिला कर, भीष्म ने पांडवों के साथ मेल करने के लिये दुर्योधन से कहा। तब दुर्योधन केवल हँसा। अपना अजिंक्यत्व सिद्ध कर के भीष्मादिकों का मुँह हमेशा बंद करने के लिए, योग्य मुहूर्त देख कर, कर्ण दिग्विजय के लिये निकला। प्रथम द्रुपदनगर को घेरा डाल कर द्रुपद तथा उसके अनुयायियों को जीत कर, इसने उनसे कर लिया। तदनंतर यह उत्तर की ओर गया। प्रथम भगदत्त को जीत कर, हिमवान् पर्वतीय राजाओं को भी इसने जीता तथा करभार लिया। तदनंतर पूर्व की ओर नेपाल, अंग, वंग, कलिंग, शुंडिक, मिथिल, मागध, कर्कखंड, आवशीर, योध्य, अहिक्षत्र, वत्सभूमि, मृत्तिकावती, मोहननगर, त्रिपुरी तथा कोसला नगरी जीत कर करभार लिया। अनंतर दक्षिण की ओर कुंडिनपूर के रुक्मी के साथ युद्ध किया। युद्ध में कर्णप्रभाव से संतुष्ट हो कर वह शरण में आया तथा कर्ण के साथ उसकी सहायता करने के लिये गया। पांड्य, शैल, केरल तथा नील प्रदेश जीत कर, कर प्राप्त किया। तदनंतर शैशुपालि को जीत कर, पार्श्व तथा अवंती प्रदेश के सब राजाओं को जीता। बाद में कर्ण पश्चिम की ओर गया। वहाँ यवन तथा बर्बरों को जीत कर उसने कर लिया। इस प्रकार सब दिशाओं को जीतने के बाद, कर्ण ने म्लेच्छ, अरण्यवासी तथा पर्वतवासी राजा, भद्र, रोहितक, आग्नेय, मालव आदि का पराभव किया। तदनंतर शशक तथा यवनों का पराभव कर के, नग्नजित् प्रभृति महारथी नृपसमुदाय को जीता।

इस प्रकार संपूर्ण पृथ्वी पादाक्रान्त कर के, कर्ण हस्तिनापुर आया। वहाँ उसका उत्तम स्वागत हुआ। इस अपूर्व विजय के कारण दुर्योधनादि को लगा कि, युद्ध में कर्ण अवश्य ही पांडवों को पराजित कर देगा (म. व. २४१. परि. १. २४)। जब दुर्योधन ने स्वयंवर में कलिंग के चित्रांगद की कन्या का राजपुर से हरण किया तब कर्ण ने उस की रक्षा की (म. शां. ४)।

राज्यविस्तार—दुर्योधन की कृपा से कर्ण अंगदेश का राजा बन सका। उस देश की सीमाएँ निम्नलिखित हैं।

भागलपूर तथा उसके आसपास का मोंगीर प्रदेश मिला कर अंगदेश बना था। भारत के अठारह राजकीय भागों में यह एक था। चंपा अथवा चंपापुरी उसकी राजधानी थी। इस राज्य की उत्तर मर्यादा का पश्चिम छोर गंगा तथा शरयू का संगम था। यह रामायण के रोमपाद का तथा भारत के कर्ण का राज्य था। रामायण में उल्लेख है कि, यहीं महादेव ने मदन को मारा। इसलिये इस देश को अंग तथा मदन को अनंग नाम मिला (वा. रा. बा. २३.१३–१४)। अंगदेश में बीरभूम तथा मुर्शिदाबाद ज़िले आते हैं। कुछ तज्ञों के मतानुसार संताल परगना भी आता है। महाभारत में लिखा है कि, यह देश इन्द्रप्रस्थ के पूर्व की ओर दूरस्थित मगध देश के इस ओर है। राजसूय के दिग्विजय में भीम ने कर्ण का यहाँ पराजय किया (म. स. २७.१६-१७)। अंगदेश का नाम सर्वप्रथम अथर्ववेद में आया है (अ. वे. ५.१४)।

औदार्य—अंगराज कर्ण उस समय अत्यंत प्रसिद्ध धनुर्धर था। यह मानी हुई बात थी, कि भविष्य में यह कौरव पांडव युद्ध में अर्जुन के विरुद्ध लड़ेगा। इसलिये इन्द्र अत्यंत चिंतित हुआ। कुन्ती को अर्जुन इन्द्र से हुआ था। पुत्र का कल्याण करना उसका कर्तव्य था, अतएव कर्ण को हतबल करने के लिये उसके कवचकुंडल मांगने का विचार उसने किया। इन कवचकुंडलों के कारण कर्ण अजिंक्य एवं अमर था तथा कर्ण के द्वारा अर्जुनवध होना संभव था। परंतु कर्ण अत्यंत उदार होने के कारण, इन्द्र की इच्छा पूरी होना संभव था। जैसे अर्जुन की चिन्ता इन्द्र को थी, उसी प्रकार कर्ण की चिन्ता सूर्य को थी। इन्द्र का हेतु सूर्य को विदित था। इसलिये कर्ण के स्वप्न में आ कर सूर्य ने दर्शन दिया। सूर्य ने इसे कहा कि, इन्द्र ब्राह्मण वेष से आ कर तुम्हें कवचकुंडल माँगेगा परंतु तुम मत देना। कवचकुंडल अमृत से बने हुए हैं, इसलिये तुम अमर बन गये हो। कवचकुंडल दे कर तुम अपनी आयु का क्षय मत करो, तब कर्ण ने सूर्य को पहचान लिया। कर्ण ने कहा कि, आयु की अपेक्षा कीर्ति श्रेयस्कर है, तथा कीर्ति से ही उत्तम गति प्राप्त हो सकती है। मैं अमरत्व की आशा से कवचकुंडल की अभिलाषा नहीं रखूँगा। इस पर सूर्य ने कहा कि, अर्जुन का वध कर के जीवितावस्था में तुम कीर्ति प्राप्त कर सकते हो, अतएव कवचकुंडल देना अमान्य कर दो। परंतु कर्ण ने उसकी मंत्रणा अमान्य कर दी। यह सुन कर सूर्य को अत्यंत दुख हुआ। उसने कहा, "तुम्हारे हित की सलाह देता हूं, फिरभी तुम नहीं मानते, तो कम से कम इन्द्र से एक शक्ति मांग लो।" कर्ण ने यह मान्य कर लिया तथा वह इन्द्र की प्रतीक्षा करने लगा (म. व. २८४–२९४)।

शक्तिप्राप्ति—एक दिन इन्द्र ब्राह्मणरूप से कर्ण के पास आया। उस समय कर्ण जप कर रहा था। उस समय इन्द्र ने उससे कवचकुंडल मांगे। कर्ण उदार था। किसी भी ब्राह्मण ने कुछ भी माँगा हो, उसे वह वस्तु अवश्य देता था। कर्ण ने तत्काल इन्द्र से हां कहा। यह कवच त्वचा से संलग्न होने के कारण, उसको निकालते समय त्वचा का छिल जाना अवश्यंभावी था। फिर भी कर्ण विचलित नहीं हुआ। उसने तत्काल उन्हें निकाल कर इन्द्र को दे दिया। तब इन्द्र अत्यंत आश्चर्यचकित हुआ तथा प्रसन्न हो कर उसने एक अमोघ शक्ति कर्ण को दी तथा कहा कि, जिस पर तुम यह शक्ति फेंकोगे, उसकी तत्काल मृत्यु हो जायेगी। इतना कह कर इन्द्र गुप्त हो गया। कवचकुंडलों का कर्तन कर देने के कारण, कर्ण को वैकर्तन नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ६१)। कवचकुंडल छील कर निकालने के कारण कुरूपता प्राप्त न हो, इसके लिये कर्ण ने शर्त रखी थी (म. व. २९४.२०)।

घटोत्कचवध—भारतीय युद्ध का प्रारंभ होने के बाद भीष्म के पश्चात् द्रोण कौरवों का सेनापति बना। उस समय घटोत्कच ने कौरवसेना को अत्यंत त्रस्त किया। कृष्ण के मन में, यद्यपि कर्ण के कवचकुंडलों का भय नष्ट हो चुका था, तथापि कर्ण की सामर्थ्य शक्ति से कृष्ण काफी साशंक था। उस शक्ति का नाश करने की इच्छा से ही, उसने उस दिन घटोत्कच की योजना की थी। घटोत्कच ने कौरवसेना के असंख्य सैनिकों का नाश कर उनको बिल्कुल त्रस्त कर छोड़ा। तब दुर्योधन कर्ण के पास गया, तथा उस अमोघ शक्ति का प्रयोग घटोत्कच पर करने की प्रार्थना की। कर्ण ने वह अमोघ शक्ति खास अर्जुन के लिये रखी थी। यह बात उसने दुर्योधन को बताई। परंतु उससे कुछ लाभ न हुआ। अन्त में लाचारी से वह शक्ति घटोत्कच पर छोड़ कर उसने उसका वध किया (म. द्रो. १५४)।

सैनापत्य—द्रोणाचार्य के बाद कर्ण को सैनापत्याभिषेक हुआ (म. क. ६.४४–४५)। कर्ण के समान अद्वितीय योद्धा को, उतने ही अद्वितीय सारथि की आवश्यकता थी। इस समय केवल दो उत्तम सारथि थे। एक श्रीकृष्ण तथा दूसरा मद्र देशाधिपति शल्य। उनमें से कृष्ण अर्जुन

का सारथि था। तब दुर्योधन ने शल्य को कर्ण का सारथ्य करने के लिये कहा। इससे क्रोधित हो कर शल्य ने कहा कि, मैं युद्ध छोड़ कर चला जाऊँगा। वह कौरवों का ज्येष्ठ आप्त तथा राजा था। कर्ण का जन्मवृत्त किसी को मालूम न होने के कारण, उसे सब सूतपुत्र कह कर ही जानते थे। इस लिये हीन कुलोत्पन्न का सारथ्यकर्म करना इसे अपमानास्पद प्रतीत हुआ। परंतु कर्ण के समान शल्य भी दुर्योधन के लिये तन-मन-धन खर्च करने वाला था। इसलिये यह कार्य भी उसने मान्य कर लिया। परंतु 'सारथ्य के समय उचित प्रतीत हो, सो मैं बोलूँगा तथा उसे कर्ण को सहना ही पड़ेगा, यों शर्त इसने रखी (म. क. २३. ५३; २५. ६)।

कर्ण के सैनापत्य में घनघोर युद्ध शुरू हुआ। भीष्म, द्रोणादि के प्रहारों से पांडवों की जो आधी सेना बची थी, उन में से आधी इसने नष्ट कर दी। द्रौपदी की अप्रतिष्ठा के कारण, इसे मन ही मन काफी पश्चात्ताप हो रहा था। परंतु जिसका नमक खाया है, उसकी ईमानदारी से नौकरी करने के लिये, भीष्म द्रोणादिकों के समान इसे भी युद्ध के लिये सज्ज होना पड़ा। युद्ध के प्रारंभ में शल्य ने अपनी शर्त का काफी उपयोग कर लिया। हर प्रकार से अर्जुन का शौर्य तथा बल इनका वर्णन कर, उसने कहा कि, अर्जुन के समक्ष तुम टिक नहीं सकते। परंतु भयंकर युद्ध में मग्न होते हुए भी, इस प्रकार धैर्य गलित करने वाला भाषण सुन कर, कर्ण नहीं घबराया। इसने खरे खरे उत्तर दे कर उसे चुप कर दिया (म. क. २६-२७)। किंतु इसके पश्चात् शल्य ने इसे प्रोत्साहन दिया (म. क. ५७.६२)।

मृत्यु--युद्ध चालू रहते समय, कर्ण का पुत्र वृषसेन मारा गया (म. क. ६२.६०)। इससे इसे अपरिमित दुख हुआ, तथा यह त्वेष से लड़ने लगा। इस प्रकार कर्णार्जुन का घनघोर युद्ध प्रारंभ हो गया। उस समय पीछेवर्णित शाप के समान इसकी स्थिति होने लगी। ब्रह्मास्त्र का स्मरण यह न कर सका। इसके रथ का पहिया भूमि में फँस गया। तब लाचार हो कर यह रथ के नीचे उतरा, तथा पहिया उठाने का प्रयत्न करने लगा। इस प्रसंग में युद्ध असंभव था, अतः इसने अर्जुन को कुछ देर रुकने के लिये कहा। परंतु कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि, केवल इसी स्थिति में कर्ण का वध होना संभव है, अन्यथा असंभव है। तदनंतर कर्ण के दुष्कृत्यों का स्मरण दिला कर कृष्ण ने कहा कि, तुम्हारा वध करना ही श्रेयस्कर है। इस प्रकार कर्ण बडे ही संकट में फँस गया। इसने एक हाथ से पहिया उठाते ही, भूमि चार अंगुल ऊपर उठाई गई परंतु पहिया नहीं निकला। दूसरे हाथ से यह अर्जुन से लड़ रहा था। इस प्रकार व्यस्त अवस्था में अर्जुन ने इस का वध किया। इस युद्ध में धर्म, भीम तथा नकुल का पराभव कर के, कर्ण ने उन्हें छोड़ दिया था (म. क. ६३.६६-६७)।

परिवार--कर्ण की मृत्यु से गांधारी को अत्यंत दुःख हुआ (म. स्त्री. २१)। इसके छः पुत्र इस युद्ध में मारे गये। उनमें से सुबाहु तथा वृषसेन का वध अर्जुन ने, एवं सत्यसेन, चित्रसेन तथा सुषेण का वध नकुल ने किया (म. क. ६२-६३; श. ९)।

कर्ण के छः भाइयों का वध इस युद्ध में हुआ। उनमें से शत्रुंजय, शत्रुंतप तथा विपाट का वध अर्जुन ने किया (म. वि. ४९; क. ३२)। एक का वध अभिमन्यु ने किया (म. द्रो. ४०. ४)। द्रुम तथा वृकरथ का वध भीम ने किया (म. द्रो. १३०. २३. १३२. १८)।

अर्जुन ने कर्ण का वध किया, इस लिये धर्मराज ने अर्जुन को बधाई दी (म. क. ६९)। परंतु आगे चलकर कुंती ने बताया कि, कर्ण उसका पुत्र था (म. स्त्री. २७. ७-१२)। इससे पांडवों को अत्यंत दुख हुआ। इसी समय धर्मराज ने शाप दिया कि, स्त्रियों के मन में कुछ भी गुप्त नहीं रहेगा (म. शां. ६. १०)। भविष्यपुराण में लिखा है कि, कर्ण आगे चल कर तारक नाम से जन्म लेगा (भवि. प्रति. ३. १)।

२. कश्यपगोत्रीय ऋषि।

कर्णक--अत्रिकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि (अत्रि देखिये)। यह मंत्रकार था (मत्स्य. १४५. १०७-१०८)।

कर्णजिह्व--अत्रिगोत्रीय ऋषिगण।

कर्णवेष्ट--पांडवपक्षीय एक राजा (म. उ. ४. २०)।

कर्णश्रवस् आंगिरस--सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १३. ११. १४-१५).

कर्णश्रुत् वासिष्ठ--मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९. ९७. २२-२४)।

कर्णिका--एक अप्सरा।

२. (सो. वृष्णि.) वसुदेवबंधु कंक की पत्नी। इसे ऋतुधामन् तथा जय नामक पुत्र थे।

कर्णिकार--जटायु के पुत्रों में से एक।

कर्णिरथ--अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

कर्दम—एक ऋषि (ब्रह्माण्ड. २. ३२. ९८-१००)। इसे क्रह्मग भी कहते हैं (वायु. ५९. ९०-९१)। यह ब्रह्मदेव की छाया से उत्पन्न हुआ (भा. ३. १२; म. स. ११)। यह एक प्रजापति था (वायु. ६५. ५३-५४)। इसका जन्म स्वायंभुव मन्वन्तर में हुआ (भा. ३. १२. २७)। यह पूर्वजन्म में क्षत्रिय था। सौभरि ने इसे गणेशव्रत बताया था (गणेश. १. १५१)।

अवतारकथन--ब्रह्मदेव ने कर्दम ऋषि से प्रजा उत्पन्न करने के लिये कहा। यह सरस्वती नदी के किनारे गया, तथा वहाँ दस हजार वर्षों तक इसने तपश्चर्या की। तब इसे विष्णु का दर्शन हुआ, तथा तुम्हारी इच्छा पूरी होगी, ऐसा उसने इसे बताया। विष्णु ने कहा "ब्रह्मदेव का पुत्र मनु सार्वभौम राजा है, तथा ब्रह्मावर्त में रह कर, सप्तसमुद्रांकित पृथ्वी का पालन करता है। वह धर्मज्ञ राजर्षि अपनी शतरूपा नामक पटरानी के साथ परसों तक यहाँ आवेगा। उसकी उपवर कन्या देवहूति, योग्य पति के प्राप्ति की बाट जोह रही है। वह तेरे अनुरूप है, इसलिये तू उससे विवाह कर। वह तेरी सेवा उत्तम रीति से करेगी। उसके गर्भ में तेरे वीर्य के साथ मैं प्रवेश कर अवतार लूँगा, तथा सांख्यशास्त्र निर्माण करूँगा"। इतना कह कर विष्णु चले गये।

प्रपंच—कालोपरांत मनु राजा अपनी रानी के साथ कर्दम के यहां आया। उसने अपनी कन्या देवहूति बड़े ठाठ बाट के साथ कर्दम को अर्पण की। कर्दम ने विष्णु के कहने के अनुसार, देवहूति को स्वीकार किया। परंतु उससे एक बार ही समागम करूंगा यह शर्त रखी, तथा समागम के बाद संन्यास लूंगा यों चेतावनी दी। तदनुसार दोनों लोग कालक्रमण करने लगे। पतिव्रता देवहूति की सेवा से संतुष्ट हो कर कर्दम ने उसे इच्छित वस्तु को मांगने को कहा। उसने संभोग की इच्छा प्रकट की। देवहूति की इच्छा मान कर इसने एक विमान तयार किया। उस विमान में समागम के ऐश्वर्ययुक्त साधन निर्माण किये, तथा लगातार सौ वर्षों तक देवहूति से समागम किया। तब देवहूति को कला, अनसूया, श्रद्धा, हविर्भू, गति, क्रिया, ख्याति, अरुंधती, शांति आदि नौ कन्याएं हुई। ब्रह्माजी के कहने पर उन्हें क्रमशः मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वसिष्ठ, अथर्वा आदि को प्रजोत्पादन हेतु से दिया। देवहूति के उदर से विष्णु ने कपिल नाम से जन्म लिया।

बाद में एकांत में कपिल को मिल कर, कर्दम ने उसे नमस्कार किया। उसके बाद, संन्यास ले कर तथा वन में जा कर विष्णुध्यान से यह वैकुंठलोक गया (भा. ३. २१-२४)।

२. लक्ष्मीपुत्र।

कर्दमायन शाखेय--अत्रिकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

कर्मजित्—(मगध. भविष्य.) बृहत्सेन राजा का पुत्र। इसका पुत्र सुतंजय।

कर्मश्रेष्ठ--स्वायंभुव मन्वन्तर में पुलह के तीन पुत्रों में ज्येष्ठ। इसकी माता का नाम गति (भा. ४.१)।

कर्मिन्--शुक्राचार्य के चार पुत्रों में से कनिष्ठ।

कल—सिंधुदैत्य का बहनोई (गणेश. २.११८)।

कलशपोतक—कद्रूपुत्र। एक सर्प (म. उ. १०१. ११)।

कलशीकंठ--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

कलहा--सौराष्ट्रनगरवासी भिक्षु नामक ब्राह्मण की पत्नी। इसकी आदत थी, पति के कहने के ठीक विपरीत कार्य करना। इसलिये, जो कार्य करना हो उसके ठीक विपरीत बोलने का नियम, उसके पति ने कर लिया था। उससे पति के सब कार्य उसकी इच्छानुसार पूर्ण हो जाते थे। एकबार गलती से श्राद्धपिंड गंगा में डालने के लिये उसने कहा। तब पति की आज्ञा के ठीक विपरीत करने के हेतु से इसने वह पिंड शौच्यकूप में फेंका। यों इसका दुष्ट स्वभाव था। इस कारण इसे पिशाच्चयोनि प्राप्त हुई। उससे धर्मदत्त ने इसका उद्धार किया (आ. रा. सार. ४)। करवीरस्थ धर्मदत्त ने द्वादशाक्षरी मंत्र, तथा कार्तिकमास का आधा पुण्य दे कर इसे मुक्त किया। इस पुण्य से धर्मदत्त तथा कलहा अगले जन्म में दशरथ-कौसल्या बन कर, उनके उदर से राम का जन्म हुआ (पद्म. उ. १०६-१०७; मंडी देखिये)।

कला—कर्दम प्रजापति तथा देवहूति की नौ कन्याओं में से प्रथम। मरीचि ऋषि की पत्नी। इसे कश्यप तथा पूर्णिमा नामक दो पुत्र थे (भा. ३.२४.२२)।

२. बिभीषण की ज्येष्ठ कन्या। अशोकवन में बार-बार जा कर, राम के कुशल वृत्त का निवेदन, यह सीता के पास करती थी (वा. रा. सुं. ३७)।

कलाधर—यह विद्याधर था। दुर्वास द्वारा दिये गये शाप से मुक्त होने के लिये, इसने अरुणाचलेश्वर की प्रदक्षिणायें कीं (स्कंद. १.३.२.२१)। इसने एक बाण

पर त्रिपुर को नगर बांध दिया, तथा उससे शंकर के पास की चिन्तामणि की मूर्ति मँगाई (गणेश १.४१)।

कलापिन्--कृष्णयजुर्वेद का एक शाखाप्रवर्तक। वैशंपायन का एक प्रमुख शिष्य । इसके चार शिष्य हरिद्रु, छगलिन्, तुम्बुरु तथा उलप । कलापि का चरण (शाखा) उदीच्य कहा जाता है । पाणिनि ने इस चरण का निर्देश किया है (पा. सू. ४.३.१०८) महाभाष्य में हर ग्राम में कठकालाप है, ऐसा लिखा है ।

कलावती--नारद देखिये ।

२. सत्यनारायण के प्रसाद का अपमान करने से क्या होता है, यह बताने के लिये सत्यनारायणमाहात्म्य में इसकी कथा दी गयी है ।

कलि---एक वृद्ध ब्राह्मण। अश्विनों ने इसे तरुण बनाया (ऋ. १०.३९.८), तथा पत्नी दी (ऋ. १.११२.१५) ।

२. अधर्म के वंश में क्रोध तथा हिंसा का पुत्र। इसे दुरुक्ति नामक बहन थी। इसे कली से भय नामक पुत्र तथा मृत्यु नामक कन्या ऐसे दो अपत्य हुए (भा. ४.८. ३-४)। यह दमयंती स्वयंवर के लिये जा रहा था, तब मार्ग में इन्द्र ने बताया कि, स्वयंवर हो चुका है। इससे अत्यंत क्रोधित हो कर, इसने नल के शरीर में प्रवेश किया, तथा उससे द्यूतक्रीड़ा करवा कर अत्यंत पीड़ित किया। आगे चल कर, दमयंती के शाप से यह बाहर आया, तथा इसने कहा कि, मैंने तक्षक से त्रस्त हो कर तुम्हारे शरीर का आश्रय लिया था। तदनंतर इसने एक वृक्ष में प्रवेश किया। इसके अवतार से होनेवाले कलियुग का वर्णन मार्कंडेय ने युधिष्ठिर को बताया (म. व. ५५.५६; ७०. १८८)। इसे चतुर्भुजमिश्र टीका में तिष्य नामांतर दिया है (म. भी. १०.३)। भांडारकर की पुस्तक में पुष्य पाठ है (म. भी. १०.३)।

इसने वृषभरूप धर्म, तथा गोरूप पृथ्वी को त्रस्त करना प्रारंभ किया। यह देख कर, परीक्षित ने इसे निवास के लिये, द्यूत, मद्यपान स्त्रीसंग, हिंसा, सुवर्ण आदि पांच स्थान दिये। (भा. १.१७)। यह पूर्ण रूपक है। यह जाति से म्लेन्छ है। प्रद्योत ने म्लेन्छों का संहार किया, तब यह नारायण के पास गया, तथा इसने नारायण की स्तुति की। इसने भगवान को बताया कि, प्रद्योत तथा उसके भाई वेदवान् ने, मेरा स्थान नष्ट कर दिया है।

३. कश्यप तथा मुनि के पुत्रों में से एक। इसका वरुथिनी नामक अप्सरा पर प्रेम था, परंतु उसने इसे धिक्कार दिया। उसके द्वारा धिक्कारे जाने के कारण, यह अत्यंत दुखी रहता था। फिर भी यह उसका पीछा न छोड़ता था। एक बार एक मुनि पर वह मोहित हुई। परंतु उस मुनि ने उसका धिक्कार किया। यह संधि देख कर, यह मुनिरूप से उसके पास आया, तथा यह शर्त रखी कि, क्रीडा के समय वह इसे न देखे। तदनंतर यह उससे रममाण हुआ। उससे इसे स्वरोचि नामक पुत्र हुआ (मार्के. ४९)। इसे अपनी भार्या से निर्मार्ष्टि नामक कन्या हुई (मार्के. ४८)।

कलि प्रागाथ—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.६६) ।

कलिंग—(सो. अनु.)। बलि के छः पुत्रों में से एक। बलि की भार्या को यह दीर्घतमस् से हुआ (अंग देखिये) ।

२. यह द्रौपदीस्वयंवर में था (म. आ. १७७.१२)।

३. कृतयुग का एक दैत्य। इसने स्वर्ग जीत कर दिग्पालों के स्थान पर दैत्यों की स्थापना की। परंतु श्रीमातादेवी ने इसके हृदय पर पर्वत रखा, तथा उस पर वह स्वयं बैठी (स्कन्द. ७.३.२२)।

कालिल—सोम का पुत्र।

कल्कि—कलियुग में बौद्धावतार के बाद होनेवाला अवतार। शंभल ग्रामनिवासी विष्णुयशस् नामक ब्राह्मण के घर में, दसवाँ अथवा ग्यारहवाँ अवतार इसका होगा। कलियुग में फैले हुए अधर्म का यह नाश करेगा। सब दैत्यरूप म्लेच्छों का यह पूर्णनाश करेगा। संपूर्ण पृथ्वी म्लेच्छमय होने के बाद, हाथ में लंबी तलवार ले कर, देवदत्त अश्व पर बैठ कर, तीन रात में यह दैत्यों का संहार करेगा। इस समय कई कोटि राजाओं का वध होगा। कलि की सजा तथा उसके नाश के लिये ही इसका अवतार होगा (म. व. १८८.८९; पद्म. उ. २५२; ब्रह्म. २१३.१६४; ह. वं. १.४१.६४; भा. १.३; २.७;१२.२) । इस अवतार के समय कृतयुग का प्रारंभ होगा (विष्णुधर्म. १.७४)। इस प्रकार अवतारकार्य समाप्त कर के, यह समाधिस्थ होगा (ब्रह्मवै. २.७)। उस समाधि से योगाग्नि का उद्भव होगा तथा प्रलय होगा। कलि बली के पास जायेगा। पुनः कर्मभूमि निर्माण हो कर, वर्णोत्पत्ति भी होगी। वैवस्वत मनु इसकी आज्ञा से अयोध्या में राज्य करेगा (भवि. प्रति. ४.२६)। यह अदृश्य, पराशर गोत्री, ब्राह्मणसेनायुक्त, तथा याज्ञवल्क्य की सहायता से युक्त होगा (ब्रह्माण्ड. ३.७३.१०४; विष्णुयशस् देखिये)।

कल्प—(स्वा. उत्तान) ध्रुव की भ्रमी से उत्पन्न पुत्र।

२. सैंहिकेयों में से एक (विप्रचित्ति देखिये)।

३. (सो. यदु. वसु.) वसुदेव को उपदेवा से उत्पन्न पुत्र।

कल्मष—वायु के द्वारा सूर्य की सेवा में नियुक्त एक पारिपार्श्वक (भवि. ब्राह्म. ५३)।

कल्मषपावन—(सू.) भविष्य के मत में सर्वकामपुत्र।

कल्माष—कश्यप तथा कद्रु का पुत्र।

२. सूर्य के द्वारपालों में से एक (भवि. ब्राह्म. ७६)।

कल्माषपाद—(सू. इ.) सुदास राजा का पुत्र। इसे कोसलाधिपति मित्रसह अथवा सौदास ये नामांतर है (म. आ. १६८; वायु. ८८.१७६; लिङ्ग. १.६६; ब्रह्म. ८; ह. वं. १.१५)। परंतु इसे ऋतुपर्ण का पुत्र भी कहा है (मत्स्य. १२; अग्नि. २७३)। कल्माषपाद नाम से यह विशेष प्रख्यात था।

नामप्राप्ति—यह नाम इसे प्राप्त होने का कारण यह था। एक बार जब यह मृगयाहेतु से अरण्य में गया था, तब इसने दो बाघ देखे। वे एक दूसरों के मित्र (वा. रा. उ. ६५), तथा भाई भाई थे (भा. ९.९)। रेवा तथा नर्मदा के किनारे शिकार करते समय, नर्मदा तट पर, इसने बाघ का एक मैथुनासक्त जोड़ा देखा। उन में से मादा को इसने मार डाला। परंतु मरते मरते वह बहुत बड़ी हो गई (नारद. १.९)। तब दूसरे बाघ ने राक्षसरूप धारण करके कहा कि, कभी न कभी मैं तुमसे बदला अवश्य चुकाऊंगा। यों कह कर वह गुप्त हो गया।

वसिष्ठकोप—एक बार इसने अश्वमेध यज्ञ प्रारंभ किया। तब यज्ञ के निमित्य से, वसिष्ठ ऋषि लंबी अवधि तक इसके पास रहा। यज्ञसमाप्ति के दिन, एक बार वसिष्ठ स्नानसंध्या के लिये गया था। यह संधि देख कर उस राक्षस ने वसिष्ठ का रूप धारण कर लिया, तथा राजा से कहा कि, आज यज्ञ समाप्त हो गया है, इसलिये तुम मुझे जल्द मांसयुक्त भोजन दो। राजा ने आचारी लोगों को बुला कर, वैसा करने की आज्ञा दी। राजाज्ञा से आचारी घबरा गये। परंतु पुनः उसी राक्षस ने आचारी का रूप धारण कर, मानुष मांस तैय्यार कर के राजा को दिया। तदनंतर वह अन्न राजा ने पत्नी मदयंती सह गुरु वसिष्ठ को अर्पण किया। भोजनार्थ आया हुआ मांस मानुष है यह जान कर, वसिष्ठ अत्यंत क्रुद्ध हुआ तथा उसने राजा को नरमांसभक्षक राक्षस होने का शाप दिया। तब इसने कहा कि, आपने ही मुझे ऐसी आज्ञा दी। यह सुनते ही वसिष्ठ ने अन्तर्दृष्टी से देखा। तब उसे पता चला कि, यह उस राक्षस का दुष्कृत्य है। तदनंतर उसने कहा कि, मेरा कथन असत्य नही हो सकता। तुम केवल बारह वर्षों तक नरमांसभक्षक रहोगे।

संयम—यह सुन कर क्रुद्ध हो कर, इसने मुनी को शाप देने के लिये हाथ में पानी लिया। परंतु गुरु को शाप देना अयोग्य है, यों कह कर भार्या ने इसका निषेध किया। तब इसने सोचा कि, यह पानी यदि पृथ्वी पर पडेगा, तो अनाज आदि जल कर खाक हो जायेंगे, तथा आकाश की ओर डाला तो मेघ सूख जायेंगे। ऐसा न हो, इसलिये इसने वह पानी अपने पैरों पर डाला। इसके क्रोध से वह पानी इतना अधिक तप्त हो गया था कि, वह पानी पडते ही इसके पैर काले हो गये। तबसे इसे कल्माषपाद कहने लगे (वा. रा. उ. ६५; भा. ९. ९.१८–३५; नारद. १.८–९; पद्म. उ. १३२)

अन्यमत—महाभारतादि ग्रंथों में, इस के राक्षस होने के कारण भिन्न भिन्न दिये गये हैं। एक बार जब यह शिकार से वापस आ रहा था, तब एक अत्यंत संकरे मार्ग पर वसिष्ठपुत्र शक्ति तथा इसकी मुलाकात हुई। मार्ग इतना संकरा था कि, केवल एक ही व्यक्ति वहाँ से जा सकता था। इसने शक्ति को हटने के लिये कहा, परंतु उसने अमान्य कर दिया। बल्कि वह राजा को बताने लगा कि, मार्ग ब्राह्मणों का है। धर्म यही है कि, राजा ब्राह्मण को मार्ग दे। अन्त में अत्यंत क्रोधित हो कर, इसने राक्षस के समान उस ब्राह्मण को चाबुक से खूब मारा। तब शक्ती ने कल्माषपाद को शाप दिया कि, तुम आज से नरभक्षक राक्षस बनोगे। यही राजा जब यज्ञ करने के लिए तैय्यार हुआ तब, विश्वामित्र ने इसका अंगिकार किया। इसी लिये वसिष्ठ तथा विश्वामित्र में वैरभाव निर्माण हुआ। विश्वामित्र ने इसे कहा कि, जिसे तुमने मारा वह वसिष्ठ-पुत्र शक्ति है। तब इसे अत्यंत दुख हुआ। बाद में जब यह शक्ती के पास उःशाप मांगने गया, तब विश्वामित्र ने इसके शरीर में रुधिर नामक राक्षस को प्रवेश करने की आज्ञा दी (लिंग. १.६४)। राक्षस के द्वारा ग्रस्त, यह राजा एक दिन बन में घूम रहा था, तब क्षुधाक्रान्त ब्राह्मण ने इसे देखा। उस ब्राह्मण ने इसके पास मांसयुक्त भोजन की याचना की। उसे कुछ काल तक स्वस्थ रहने की आज्ञा दे कर यह घर आया, तथा अन्तःपुर में स्वस्थता से सो गया। मध्यरात्रि के समय जब यह जाग्रत हुआ, तो इसे ब्राह्मण को दिये हुए वचन का स्मरण हुआ। तब इसने आचारी को मांसयुक्त भोजन बनाने की आज्ञा दी। वहाँ मांस बिल्कुल न था। तब राजा ने कहा कि, अगर दूसरा

मांस नही है तो मनुष्यमांस ही बना दो। उसको भोजन दो बस। आचारी ने आज्ञानुसार कार्य कर, वह अन्न उस तपस्वी ब्राह्मण को दिया। तब वह अन्न अभोज्य है, ऐसा जान कर उसने भी इसे नरमांसभक्षक राक्षस होने का शाप दिया। तीसरे दिन इन दोनों शापों से इसके शरीर में राक्षस का संचार हुआ। यह शापदान नैमिषारण्य में हुआ (वायु. १.२)।

असुरजीवन—आगे चल कर थोडे ही दिनों में, इसकी शक्ति से मुलाकात हुई। वंशावली की दृष्टि से यह गलत है (शतयातु देखिये)। तब इसने कहा, "चूंकि तुमने मुझे अयोग्य शाप दिया है, मैं तुमसे ही मनुष्यभक्षण प्रारंभ करता हूँ।" यों कह कर इसने उसे खा डाला। आगे चल कर, इस राजा के शरीर में प्रविष्ट राक्षस को विश्वामित्र के बारबार उपदेश करने के कारण, इसने वसिष्ठ के सौ पुत्र भी खा डाले। वसिष्ठ ने पुत्रशोक से प्राण देने का काफी प्रयत्न किया, परंतु वह असफल रहा (म. आ. १६६–१६७; अनु. ३; ब्रह्माण्ड. १. १२)। एक बार यह नर्मदा के किनारे (नारद. १. ९), वन में घूम रहा था, तब इसने एक ब्राह्मण दंपती को क्रीडा में निमग्न देखा। उन्हें देखते ही, कल्माषपाद ने दौड कर उनमें से ब्राह्मण का भक्षण कर लिया। तब क्रुद्ध हो कर ब्राह्मणी ने उसे शाप दिया कि, स्त्री समागम करते ही तुम मृत हो जाओगे। यों कह कर वह सती हो गई (म. आ. १८२; भा. ९. ९. १८–३५; स्कंद. ३. ३. २)।

मुक्ति—वसिष्ठ ने इसे उश्शाप दिया कि, तुम राक्षस बनोगे तथा आगे चल कर तुम्हारे शरीर पर गंगाबिंदु पडेंगे, तब तुम मुक्त होंगे। परंतु ब्राह्मणी ने उपरोक्त वर्णित शाप दे कर, तुम सदा राक्षस ही रहोगे ऐसा शाप दिया। इसको दूसरे शाप से क्रोध आया तथा इसने ब्राह्मणी को उलटा शाप दिया कि, पुत्रसमवेत तुम पिशाची बनो। आगे चल कर पिशाची तथा यह राक्षस एक स्थान पर आये, जहाँ पीपल था। वहाँ कल्माषपाद तथा सोमदत्त नामक एक ब्रह्मराक्षस का गुरुविषयक संवाद हो कर उन दोनों के पाप नष्ट हो गये। उधर से एक गर्ग नामक कलिंगदेशीय मुनि गंगा ले कर आ रहा था। इनकी प्रार्थना से उसने इनके शरीर पर गंगोदक छिडकते ही, वह पिशाची तथा ब्रह्मराक्षस दोनों मुक्त हो गये। यह शोक कर रहा था, तब आकाशवाणी हुई, "शोक मत करो। तुम भी मुक्त हो जावोगे।" वहाँ से यह काशी गया, तथा छः महीनों तक इसने गंगास्नान किया। इससे सब पातकों से मुक्त हो कर, वसिष्ठ ने बडे सन्मान से इसे राज्याभिषेक किया। गौतम ऋषी की अनुज्ञा से गोकर्ण क्षेत्र में जा कर यह मुक्त हुआ। अन्त में यह शिवलोक गया (स्कंद. ३. ३. २; नारद. १. ८–९)। साभ्रमती में स्नान कर के यह मुक्त हो गया (पद्म. उ. ६. १३२)।

राज्याभिषेक—इसकी पत्नी मदयंती अरण्य में निरंतर इसके साथ रहती थी (म. आ. १७३.५–६)। यह दिन के छठवें प्रहर में आहार करता था। उस समय केवल वह सामने नही आती थी। एक बार अहिल्या के कथनानुसार गौतमशिष्य उत्तंक मदयंती के कुंडल मांगने आया। यह उसको खाने के लिये दौडा। परंतु उसने कहा, कि मेरा कार्य हो जाने दो, मैं वापस आ रहा हूँ। तब इसनें पूछा कि तुम्हें क्या कार्य है, तथा कार्यपूर्ति के लिये इसने उत्तंक को मदयंती के पास जाने के लिये कहा। मदयंती ने पति से एक चिन्ह लाने के लिये कहा। वह चिन्ह इससे लाते ही मदयंती ने कुंडल उत्तंक को दिये, तथा सम्हाल कर ले जाने के लिये कहा। जाते जाते कल्माषपाद ने उत्तंक को प्रतिज्ञा से मुक्त कर दिया (म. आश्व. ५५–५६)। पतिव्रता के उपरोक्त शाप के कारण यह प्रजोत्पादन नहीं कर सकता था। तब इसने वसिष्ठ के द्वारा अपनी पत्नी मदयंती में गर्भधारणा करवाई। वही अश्मक है (म. आ. ११३. २१–२२; १६८. २१–२५; शां. २२६.३०; अनु. १३७.१८; वा. रा. सुं. २४; वायु. ८८. १७७)। इसे सर्वकर्मा नामक पुत्र था (मत्स्य. १२)। इसका वसिष्ठ के साथ गाय के माहात्म्य के बारे में संवाद हुआ था। इसने काफी गायें दान में दी। मृत्यु के बाद इसे सद्गति मिली (म. अनु. ७८.८०)।

कल्याण—एक वैश्य। यह सिंधुदेश में पालीग्राम में रहता था। इसकी पत्नी इंदुमति। पुत्र बल्लाल। अगले जन्म में यह दक्ष बना (गणेश १.२२)।

कल्याण आंगिरस—एक ऋषि। स्वर्गप्राप्ति के लिये सत्रानुष्ठान करने वाले अंगिरसों को, देवों की ओर जाने का देवयानमार्ग प्राप्त नहीं होता था। सत्रानुष्ठान करनेवाले उन ऋषियों में से कल्याण नामक यह ऋषि, इस देवयान के बारे में विचार करता हुआ उर्ध्वमार्ग से जा रहा था। राह में इसे अप्सराओं सह झूले पर बैठ कर क्रीडा कर रहा उर्णायु नामक एक गंधर्व मिला। इस गंधर्व को जब इसने देवयान के बारे में पूछा, तब उसने देवयानमार्ग प्राप्त कर

देनेवाले एक साम का उपदेश इसे किया। तब कल्याण ने अंगिरसों को आ कर बताया कि, देवयानमार्ग प्राप्त कर देनेवाला साम मुझे प्राप्त हो गया है। वह मार्ग किस से प्राप्त हुआ यह बताना इसने अमान्य कर दिया। उस और्णायुव नामक साम से अंगिरसों को स्वर्गप्राप्ति हुई। परंतु असत्यकथन के कारण कल्याण को स्वर्गप्राप्ति नहीं हुई, बल्कि कोढ़ हो गया। और्णायव साम नाम के बदले कही कही और्णायुव साम नाम दिया है। यह भी एक अंगिरस ही था (पं. ब्रा. १२.११.१०-११)।

कल्याणिनी--धर नामक वसू की स्त्री। इसे द्रविण अथवा रमण नामक पुत्र था।

२. एक अप्सरा। भीमद्वादशीव्रत करने के कारण यह इन्द्रपत्नी शची बनी, तथा इसकी दासी ने जब यह व्रत किया तब वह कृष्णपत्नी सत्यभामा बनी (पद्म. सृ.२३)।

कवचिन्--धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. क. ६२.५)।

कवष--एक स्मृतिकार। कवषस्मृति का निर्देश पराशरस्मृतिव्याख्या में है (C. C.)

२. एक आचार्य। युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ में यह होता नामक ऋत्विज था (भा. १०.७४.७)।

कवष ऐलूष--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.३१-३३)। यह कुरुश्रवण का उपाध्याय था (ऋ. १०.३२.९)।

इलूषपुत्र कवष सरस्वती के किनारे अंगिरसों के सत्र में आया, तब शूद्रापुत्र, अब्राह्मण एवं जुआड़ी कह कर इसे यज्ञ के लिये अयोग्य घोषित किया। तथा जंगल में इसे छोड़ कर ऐसी व्यवस्था की गई कि, इसे पानी भी प्राप्त न हो। परंतु अपोनप्त्रीय सूक्त कहने के कारण, सरस्वती स्वयं इसकी ओर मुड़ गई। अभी भी उस स्थान को परिसारक नाम हैं। ऋषियों ने बाद में इसका महत्त्व जान कर इसे वापस बुलाया (ऐ. ब्रा. २.१९; सां. ब्रा. १२.१-३)। सांख्यायन ब्राह्मणों में यह अब्राह्मण था, इसीलिये इसे यज्ञ से निकाल दिया, ऐसा स्पष्ट लिखा है। तृत्सुओं के लिये इन्द्र ने कवषादिकों का पराभव किया तथा उनके मजबूत किले उध्वस्त कर दिये (ऋ. ७.१८.१२)। इसके सूक्त में कुरुश्रवण, उपमश्रवस् तथा मित्रातिथि का निर्देश है (ऋ.१०.३२-३३)। मित्रातिथि की मृत्यु से दुखी उपमश्रवस् का समाचार पूछने के लिये यह आया था।

कवषा—एक ऋषिपत्नी। तुर ऋषि की माता (तुर देखिये)।

कवि—स्वायंभुव मन्वंतर के ब्रह्मपुत्र भृगु ऋषि के तीन पुत्रों में कनिष्ठ। इसका पुत्र उशनाऋषि। यह सूक्तद्रष्टा था (ऋ. ९.४७-४९; ७५-७९ म. आ. ६०.४०)।

२. प्रियव्रत राजर्षि के बर्हिष्मति से उत्पन्न दस पुत्रों में कनिष्ठ। यह बाल्यावस्था से विरक्त था (भा. ५.१)।

३. तामस मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

४. रैवत मनु के दस पुत्रों में से पाँचवा।

५. (स्वा. प्रिय.) भागवत मत में ऋषभदेव तथा जयंती के नौ सिद्धपुत्रों में ज्येष्ठ।

६. वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में कनिष्ठ। यह विरक्त हो कर अरण्य में गया (भा. ९.२)।

७. भागवत मत में मनुवंशी यज्ञ तथा दक्षिणा का पुत्र।

८. वैवस्वत मन्वंतर के ब्रह्मा का पुत्र। इसे वारुणि कवि ऐसी संज्ञा थी। इसके कवि, काव्य, धृष्णु, उशनस्, भृगु, विरजस्, काशि तथा उग्र नामक आठ पुत्र थे (म. अनु. ८५.३३)।

९. ब्रह्मपुत्र वारुणि कवि के आठ पुत्रों में ज्येष्ठ (म. अनु. ८५.३३)।

१०. (सो. पूरु.) दुरितक्षय का मंझला पुत्र। यह तप से ब्राह्मण हुआ (भा. ९.२१.१९)।

११. कौशिक ऋषि के सात पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

१२. कृष्ण का कालिंदी से उत्पन्न पुत्र।

१३. कृष्ण का एक प्रपौत्र। यह महारथी था।

१४. स्वारोचिष मन्वंतर का एक देव।

१५. शिव के श्वेत नामक दो अवतार हुए। उन में से दूसरे का शिष्य।

कविरथ—(सो. पूरु. भविष्य.) भागवत मतानुसार चित्ररथ का पुत्र। मत्स्य में शुचिद्रथ, वायु में शुचिद्रथ, तथा विष्णु में शुचिरथ, यों पाठभेद है।

कव्यवाह—पितरविशेष। ब्रह्मदेव की मानसकन्या संध्या को देख कर, दक्षादि मोहित हुए। उनके अंगों से निकले स्वेदबिंदुओं से इनकी उत्पत्ति हुई। इन में सोमप, आज्यप, स्वकालीन आदि भेद हैं। क्रतु के पुत्र सोमप, वसिष्ठ के पुत्र स्वधावत् तथा पुलस्त्य के पुत्र आज्यप ये सब हविर्भागी हैं। नरक की इसने नारद को जानकारी बताई (दे. भा. ११.१५)। कव्य के माने पितरों को दिया गया अन्न। उसे पितरों तक पहुंचाने वाले को कव्यवाह कहते हैं (पितर देखिये)।

कशाय—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

कशु चैद्य—ब्रह्मातिथि काण्व ने इसके औदार्य की प्रशंसा की है। इसने ब्रह्मातिथि को सौ ऊंट, दस हजार गायें तथा दस राजा सेवा करने के लिये दिये। यह इतना उदार था, कि, इससे दान प्राप्त कर फिर किसी के पास जाने की आवश्यकता नहीं रह जाती थी। इसका राज्य विस्तृत था (ऋ. ८.५.३७–३९)।

कशेरुमत्—एक यवन। इसका कृष्ण ने वध किया (म. स. १२.२९; म. स. परि. १ क्र. २१. पंक्ति. १५४६)। कशेरुक पाठ भी मिलता है।

कशोजू—संभवतः दिवोदास का नाम (ऋ. १.११२. १४)।

कश्यप—अग्नि का शिष्य। इसका शिष्य विभांडक (वं. ब्रा. २)। 'त्र्यायुष' मंत्र में आयुर्वृद्धि की प्रार्थना करते समय इसका निर्देश है (जै. उ. ब्रा. ४.३.१)।

गोत्रकार—इसके कुल के मंत्रकार आगे दिये गये हैं (हरित, शिल्प, नैध्रुव देखिये)। इसका एवं वसिष्ठ का निकट संबंध है (बृ. उ. २.२.४)।

कुल—इन्द्रियों का अधिष्ठान जो शरीर उसका पालन करनेवाला जीव ही कश्यप है (म. अनु. १४२)। यह ब्रह्मा का मानसपुत्र है। मरीचिपत्नी तथा कर्दम की कन्या कला को कश्यप तथा पूर्णिमा नामक दो पुत्र हुए। उनमें से कश्यप ज्येष्ठ है (भा. ४.१)। इसे तार्क्ष्य तथा अरिष्टनेमि नामान्तर थे। यह सप्तर्षियों में से एक, उसी प्रकार प्रजापतियों में से भी एक था (म. अनु. १४१)। परंतु सप्तर्षियों की सूचि में कश्यप के बदले भृगु तथा मरीचि नाम भी प्राप्त हैं। स्वायंभुव तथा वैवस्वत मन्वन्तर के ब्रह्मपुत्र मरीचि वास्तवतः एक ही हैं। इसलिये दोनों समय के कश्यप भी एक ही हैं। इसे पूर्णिमा नामक सगा भाई था तथा छः सापत्न बंधु थे। इसकी सापत्न माता का नाम ऊर्णा था। अग्निष्वात्त नामक पितर भी इसके ही भाई थे। इसे सुरूपा नामक एक बहन भी थी, जो वैवस्वत मन्वन्तर के अंगिरा नामक ब्रह्मा के मानसपुत्र को दी थी (वायु. ६५.९८)।

क्षत्रियरक्षा—इक्कीस बार पृथ्वी निःक्षत्रिय करने के पश्चात् परशुराम ने सरस्वती के किनारे अश्वमेध यज्ञ किया। उस समय कश्यप अध्वर्यु था। दक्षिणा के रूप में पृथ्वी कश्यप को दानरूप में प्राप्त हुई। अवशिष्ट क्षत्रियों का नाश न हो इस हेतु से, कश्यप ने परशुराम को अपनी सीमा के बाहर जा कर रहने के लिये कहा। इस कथनानुसार परशुराम समुद्रद्वारा उत्पन्न शूर्पारक देश में जा कर रहा। महाभारत में इसे कोंकण कहा गया है। बम्बई के पास सोपारा नामक एक ग्राम है, वही यह होगा (म. शां. ४९.५६–५९)। बाद में कश्यप ने पृथ्वी ब्राह्मणों को सौंप कर, स्वयं वन में रहने के लिये गया।

पुत्रप्राप्ति—कश्यप जब पुत्रेच्छा से यज्ञ कर रहा था, तब देव ऋषि तथा गंधर्व सब ने उसे सहायता की। वालखिल्य इसी प्रकार सहायता कर रहे थे, तब इंद्र ने वालखिल्यों का अपमान किया। इससे वे अत्यंत क्रोधित हो गये। इस क्रोध से अपनी रक्षा करने के लिये इन्द्र कश्यप के पास गया। तब बडी चतुराई से कश्यप ने वालखिल्यों को खुष किया। अनेक कृपाप्रसाद से इसे गरुड तथा अरुण नामक दो पुत्र हुए। नये इन्द्र के लिये किया गया तप वालखिल्यों ने इसे दिया तथा इन्द्र निर्भय हो गया।

सर्पों को शाप—तदनंतर विनता तथा कद्रू में उच्चैःश्रवा के रंग के बारे में शर्त लगाई गई। यह शर्त जीतने के लिये कद्रू ने अपने पुत्र नागों की सहायता माँगी। परंतु नाग सहायता न करते थे, इसलिये उसने उन्हें शाप दिया कि, तुम जनमेजय के सत्र में मरोगे। इस शाप को पुष्टि दे कर दुष्ट सर्पों का नाश करने के हेतु से ब्रह्मदेव वहाँ आया, तथा उसने सर्पों का नाश होगा (म. आ. १८. ८–१०), इतना ही नहीं, उनका सापत्न बंधु गरुड भी उनका भक्षण करेगा, यों शाप दिया (पद्म. सृ. ३१)। इस शाप से कश्यप को दुख होगा, यह सोच कर ब्रह्म नें इसे विषहारिविद्या दी तथा इसकी सांत्वना की (म. आ. १८. ११)। उस विद्या का इसने उपयोग भी किया था (काश्यप देखिये)।

दैत्यसंहार—इन्द्रादि देवों का दैत्यों ने पराभव किया, इसलिये वे कश्यप के पास शरण आये, तथा उन्होंने इसे सब कुछ बताया। तब यह काशी में शंकर के पास गया, तथा उसे दैत्यों का ताप नष्ट करने के लिये कहा। तब शंकर ने इसकी पत्नी सुरभि के उदर में ग्यारह अवतार लिये तथा दैत्यों का नाश किया। यह अवतार अद्यापि आकाश में ईशान्य की ओर रहते है (शिव. शत. १८)।

तीर्थोत्पत्ति—कश्यप ने अर्बुद पर्वत पर बडी तपश्चर्या की। उस समय दूसरे ऋषियों ने गंगा लाने के लिये इसकी प्रार्थना की। तब शंकर से प्रार्थना कर के कश्यप ने शंकर से गंगा प्राप्त की। उस स्थान पर कश्यपतीर्थ बना (पद्म. उ. १६४)। बाद में गंगा ले कर यह स्वस्थान में गया।

उस स्थान पर केशरंध्रतीर्थ बना। कश्यपद्वारा गंगा लाई गई इस लिये उसे काश्यपी कहते हैं। उसे ही चारों युगों में अनुक्रम से कृतवती, गिरिकर्णिका, चंदना तथा साभ्रमती नाम हैं (पद्म. उ. १३५)।

विष्णुवाहन गरुड—यह तपश्चर्या चालू थी, तब गरुड़ अपने पिता के पास आया तथा उसने कहा कि, एक अदृष्य शक्ती ने मुझे वाहन बनने के लिये कहा है तथा मैं ने वह मान्य भी किया है। कश्यप ने अन्तर्ज्ञान से जान कर कहा कि, तुम विष्णु के वाहन बने हो तथा अब तुम्हें उसकी ही आराधना करनी चाहिये। यों बता कर काश्यप ने उसे नारायणमहात्म्य का कथन किया।

पृथ्वीरक्षा—इतने में अंग राजा ने पृथ्वी का दान करने का निश्चय किया। इस लिये अपना शरीर त्याग कर पृथ्वी ब्रह्मदेव के पास गई। इससे उसका शरीर निर्जीव बन गया। तब योगशक्ति के द्वारा कश्यप अपने शरीर से बाहर निकला तथा पृथ्वी के शरीर में प्रविष्ट हो कर उसे सजीव बनाया। कुछ दिनों के बाद पृथ्वी वापस आई, तथा कश्यप को नमस्कार कर, अपने शरीर में प्रविष्ट हुई। इस प्रकार कश्यप की कन्या होने के कारण पृथ्वी को काश्यपी कहते हैं।

क्षत्रियाधिपति—आगे चल कर, दुष्टों की पीड़ा के कारन पृथ्वी डूबने लगी। तब कश्यप ने अपने ऊरु का आधार उसे दिया तथा उसे तारा। इस लिये उसे काश्यपी तथा ऊर्वी नाम प्राप्त हुए (म. शां. ४९.६३-६४)। उसने अपने लिये राजा मांग कर बहुत से क्षत्रियों का नाम सुझाया। तब कश्यप ने उन सब को अभिषेक किया।

पृथ्वीपर्यटन—एक बार कश्यपादि सप्तर्षि पृथ्वी पर घूम रहे थे। तब शिबिपुत्र शैब्य उर्फ वृषादर्भि ने सप्तर्षियों को एक यज्ञ में अपना पुत्र दक्षिणास्वरूप में दिया। इतने में उस पुत्र की मृत्यु हो गई। तब उन क्षुधार्त ऋषियों ने उसके मांस को पकाने के लिये रखा। यह वृषादर्भि ने देखा, तथा उस अघोरी कृत्य से ऋषियो को परावृत्त करने के लिये, उनकी इच्छानुसार दान देने का निश्चय किया। किन्तु न तो वे दान लेने के लिये तैय्यार हुए, न मांस ही पका। इसलिये उसे छोड़ कर वे चले गये। आगे एक सरोवर में कमल थे। उन्हें खाने की इच्छा से, उन्होंने वहाँ की कृत्या यातुधानी की अनुमति से कमल तोड़ कर किनारे पर रखे। कुछ कारण से इन्द्र उन्हें चुरा कर ले गया। तदनंतर कश्यप तथा ऐल का संवाद हुआ। उसमें ब्राह्मण का महत्व, पापपुण्यसूक्ष्मभेद तथा रुद्र ये विषय कश्यप ने समझाये।

परिसंवाद—तार्क्ष्य मुनि का सरस्वती से संवाद हुआ था। उन दोनों में से श्रेष्ठ कौन, किस कृत्य से व्यक्ति धर्मभ्रष्ट नहीं होता, अग्निहोत्र के नियम, सरस्वती कौन है, मोक्ष आदि विषय चर्चा के लिये थे। परंतु यह तार्क्ष्य कश्यप ही था, यह नही कह सकते (म. व. १८.४)। तदनंतर कश्यप ने एक सिद्ध देखा। तथा उससे ज्ञानप्राप्ति के हेतु से बडी ही एकाग्रता से उसकी पूजा की। सिद्ध की आज्ञा से कश्यप ने प्रश्न पूछे। सिद्ध ने उसके उत्तर दिये तथा इसे संतुष्ट किया (म. आश्व. १७)। यह एक ऋषि था (वायु. ५९.९०; ब्रह्माण्ड. २.३२.९८-१००)। इसके शरीर से तिल उत्पन्न हुए (भवि. ब्रह्म.७)। यह स्वारोचिष तथा वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक था। व्यास की पुराणशिष्य परंपरा के भागवतमतानुसार यह रोमहर्षण का शिष्य था (व्यास तथा आपस्तंब देखिये)।

ग्रंथ—कश्यप के नाम पर चरकसंहिता के काफी पाठ है। भूतप्रेतादि पर भी इसके कुछ मंत्र है। **इसके नाम** पर निम्नलिखित ग्रंथ है— १. कश्यपसंहिता (**वैद्यकीय**) २. कश्यपोत्तरसंहिता, ३. कश्यपस्मृति, जिसका उल्लेख हेमाद्रि, विज्ञानेश्वर तथा माधवाचार्य ने किया है (C. C.) ४. कश्यपसिद्धांत (नारदसंहिता में इसका उल्लेख आया है)।

परिवार—कश्यप को वत्सार तथा असित नामक दो पुत्र थे। वत्सार को निध्रुव तथा रेभ नामक दो पुत्र हुए। निध्रुव को सुमेधा से अनेक कुंडपायिन् हुए। रेभ से रैभ्य उत्पन्न हुए। इसी प्रकार की वंशावली अन्यत्र भी प्राप्त है (ब्रह्माण्ड. ३.८.२९-३३; वायु ७०.२४-२५; लिंग. १.६३; कूर्म. १.१९)।

कश्यप की स्त्रिया—अदिति, अरिष्टा, इरा, कद्रु, कपिला, कालका, काला, काष्ठा, क्रोधवशा, क्रोधा, खशा, प्राधा, ताम्रा, तिमि, दनु, दनायु, दया, दिति, धनु, नायु, पतंगी, पुलोमा, प्राधा, प्रोषा, मुनि, यामिनी, वसिष्ठा, विनता, विश्वा, सरमा, सिंही, सिंहिका, सुनेत्रा, सुपर्णा, सुरभि, सुरसा, सूर्या। यथार्थ में कश्यप को तेरह स्त्रियाँ थीं। बाकी नाम तो पाठान्तर से आये है, तथा संततिसादृश्य के कारण, बाकी सब एक ही मालूम होती है। भागवत तथा विष्णु मतानुसार इसे किसी समय अरिष्टनेमि नामक चार स्त्रिया बतायी गयी हैं। ये सब दक्ष कन्यायें थी। पुलोमा तथा कालका वैश्वानर की कन्यायें है।

अदितिपुत्र—आदित्य बारह हैं। अंश (अंशु, अंशुमत, विधातृ), अर्यमन् (यम), इंद्र (शक्र), उरुक्रम (विष्णु), त्वष्ट्रा, धातृ, पूषन्, भग, मित्र, वरुण (पर्जन्य), विवस्वत् (मार्तंड), सवितृ (तै. आ. १. १३)।

अरिष्टापुत्र—अतिबाहु, आचार, ज्योतिष्टम, तुंबुरु, दारुण; पूर्ण*, पूर्णाश (पूर्णायु*), ब्रह्मीच (ब्रह्मीच)*, ब्रह्मचारिन्*, भानु, मध्य, रतिगुण (शतगुण), वरूथ*, वरेण्य, वसुरुचि, विश्वावसु*, सिद्ध, सुचंद्र*, सुपर्ण*, सुरुचि*, हंस, हाहा, हूहू, आदि गंधर्व अरिष्टा के पुत्र थे। इनमें से तारांकित लोग क्रोधा के पुत्र हैं, ऐसा उल्लेख ब्रह्माण्ड में आता है।

अरिष्टाकन्या—अनवद्या, अरुणा*, अरूपा, अलंबुषा*, असुरा, केशिनी*, तिलोत्तमा, भासी, मनु, मनोरमा, मार्गणप्रिया*, मिश्रकेशी, रक्षिता*, रंभा, वंशा, विद्युत्पर्णा*, सुप्रिया, सुबाहु, सुभगा, सुरजा*, सुरता। इनमें से तारांकित क्रोधा मुनि की कन्याएं हैं, ऐसा उल्लेख ब्रह्माण्ड में दिया गया है।

इरा को वृक्षादि पुत्र हुए।

कद्रूपुत्र—अकर्कर, अकर्ण, अक्रूर, अनंत, अनील, अपराजित, अंबरीष, अलिपिंडक, अश्वतर, आपूरण, आप्त, आर्यक, उग्रक, एलापत्र, ऐरावत, कपित्थक, कपिल, कंबल, कररोमन्, करवीर, कर्कर, कर्कोटक, कर्दम, कलषपोतक, कल्माष, कालिय, कालीयक, कुंजर, कुठर, कुंडोदर, कुमुद, कुमुदाक्ष, कुलिक, कुहर, कूर्म, कूष्मांडक, कोरग्य, कौणपाशन, क्षेमक, गंधर्व, ज्योतिक, तक्षक, तित्तिरि, दधिमुख, दुर्मुख, धनंजय, धृतराष्ट्र, नहुष, नाग, निष्ठानक, नील, पतंजलि, पद्म (संवर्तक), पाणिन, पिंगल, पिंजर (पिंजरक), पिठरक, पिंडक, पिंडारक, पुष्पदंष्ट्र, पूर्णभद्र, प्रभाकर, प्रह्लाद, बलाहक, बहुमूलक, बहुल, बाह्यकर्ण, बिल्वक, बिल्वपांडुर, ब्राह्मण, भुजंगम, मणि, मणिस्थक, महाकर्ण, महानील, महापद्म, महापद्म, महाशंख, महोदर, मुद्गर, मूषकाद, वामन, वालिशिख, वासुकि, विमलपिंडक, विरजस्, वृत्त, शंकुरोमन्, शंख, शंखपाद, शंखपाल, शंखपिंड, शंखमुख, शंखरोमन्, शंखशिरस्, शबल, शालिपिंड, शुभानन, शेष, श्रीवह, श्वेत, सुबाहु, सुमन, सुमुख, सूनामुख, हरिद्रक, हलक, हस्तिकर्ण, हस्तिपद, हस्तिपिंड, हेमगुह।

कपिला को अमृत, ब्राह्मण, गंधर्व, अप्सरा, नंदिन्यादि गायें तथा दो खुरवाले प्राणी हुए।

कालका को कालकेय उर्फ कालकंज ये पुत्र हुए।

कालापुत्र—क्रोध, क्रोधशत्रु, क्रोधहंतृ, विनाशन।

काष्ठा को अश्वादि एक खुरवाले प्राणी हुए।

क्रोधवशा की कन्याएं—इरावती*, कपीशा*, तिर्या*, दंष्ट्रा, मद्रमना*, भूता, मातंगी*, मृगमंदा*, मृगी*, रिषा, शार्दूली*, श्वेता*, सरमा*, सुरसा, हरि*, हरिभद्रा*। क्रोधवशा की ये कन्याएं पुलह की भार्या थीं। इनके सिवा, क्रोधवशा को क्रूर जलचर पक्षी, दंदशूकादि सर्प तथा क्रोधवश नाम के राक्षस हुए। इन में से क्रोधवश मुख्य है (अरिष्टा देखिये)।

खशा को अकंपन, अश्व, उपस्त्य, कपिलोमन्, कथन, चंद्रार्कभीकर, तुंडकोश, त्रिनाभ, त्रिशिरस्, दुर्मुख, धूम्रित, निशाचर, पीडापर, प्रहासक, बुध्न, बृहज्जिव्ह, भीम, मधु, मातंग, लालवि, बक्राक्ष, विस्फूर्जन, विलोहित, शतदंष्ट्र, सुमालि आदि पुत्र तथा आलंबा, उत्कचोत्कृष्टा, कपिला, केशिनी, निर्ऋता, महाभागा, शिवा आदि कन्याएं हुईं। ये सब यक्ष, राक्षस, मुनि तथा अप्सराएँ हैं।

ग्रावा को श्वापद हुए।

ताम्रा को अरुणा, उलकी, काकी, क्रौंची, गृध्रिका (गृध्री), धृतराष्ट्रिका (धृतराष्ट्री), भासी, शुकी, शुची, श्येनी, सुग्रीवी, तथा गायें, भैंसें कन्यारूप में हुईं।

तिमि को जलचरगण हुए।

दनुपुत्र—अजक, अप्र, अनुपायन, अशिरस्, अयोमुख, अरिष्ट, अरुण, अश्व, अश्वग्रीव, अश्वपति, अश्वशंकु, अश्वशिरस्, असिलोमन्, अहर, आमहासुर, इंद्रजित्, इंद्रतापन, इरागर्भशिरस्, इषुपात, ऊर्णनाभ, एकचक्र, एकाक्ष, कपट, कपिल, कपिश, कालनाभ, कुपथ, कुंभनाभ, कुंभमान, केतु, केतुवीर्य, केशिन्, गगनमूर्धन्, गविष्ठ, गवेष्ठिन, चंद्रमस्, चूर्णनाभ, जभ, तारक, तुहुंड, दीर्घजिह्व, दुदुंभि, दुर्जय, देवजित्, द्विमूर्धन्, धूम्रकेश, धृतराष्ट्र, नमुचि, नरक, निचंद्र, पुरुंड, पुलोमन्, प्रमद, प्रलंब, बलक, बलाढ्य, बाण, बिंदु, भद्र, भृशिन्, मघ, मघवत, मद, मय, मरीचि, महागिरि, महानाभ, महाबल, महाबाहु, महामाय, महाशिरस, महासुर, महोदक, महोदर, मारीचि, मूलकोदर, मेघवत्, रसिप, वज्रनाथ, वज्राक्ष, वनायु, वातापि, वामन, विकुंभ, विक्रांत, विक्षोभ, विक्षोभण, विद्रावण, विपाद, विप्रचित्ति, विभावसु, विभु, विराध, विरूपाक्ष, वीर, वीर्यवत्, वृक, वृषपर्वन्, वैमृग, वैश्वानर, वैसृप, शकुनि, शंकर, शंकुकर्ण, शंकुशिरस्, शंकुशिरोधर, शठ, शतग्रीव, शतमाय, शतन्हद, शंकुरय,

शतन्हाद, शतव्हय, शंबर, शरभ, शलभ, सत्यजित्, सप्तजित्, सुकेतु, सुकेश, सुपथ, सूक्ष्म, सूर्य, हयग्रीव, हर, हिरण्मय, हिरण्यकशिपु।

दनायु को बल, विक्षर, वीर, वृत्रादि उत्पन्न पुत्र हुए।

दया को पर्वत हुए।

दिति को मरुत् (उनपचास), वज्रांग, सिंहिका, हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष आदि पुत्र हुए। पद्मपुराण में दैत्यों सा कृत्य करने वाला प्रत्येक व्यक्ति दितिपुत्र माना गया है (बल तथा वृत्र देखिये)।

धनु—विष्णुधर्मोत्तर में दनु का नामांतर है। इसका पुत्र रजि (१.१०६)।

पतंगी को पक्षी हुए।

पुलोमा को पौलोम हुए। पौलोम तथा कालकेय मिल कर साठ हजार वा चव्हत्तर हजार थे, जिन्हें निवातकवच कहते थे।

प्राधा—अरिष्टा की संतति देखिये।

ग्रीवा—इसे संतति नहीं थी।

मुनिपुत्र—मुनि को अर्कपर्ण, उग्रसेन, कलि, गोपति (गोमत्), चित्ररथ, धृतराष्ट्र, नारद, पर्जन्य, प्रयुत, भीम, भीमसेन, वरुण, शालिशिरस्, सत्यवान् (सर्वजित्), सुपर्ण, सूर्यवर्चस् नामक सोलह गंधर्व, तथा अजगंधा, अनपाया, असिता, असिपर्णिनी, अद्रिका, क्षेमा, पुंडरीका, मनोभवा मारीचि, लक्ष्मणा, वरंवरा, विमनुष्या, शुचिका, सुदती, सुप्रिया, सुबाहु, सुभुजा, सुरसा तथा अन्य है (अरिष्टा देखिये), इस तरह कुल चोबीस अप्सरायें हुई। वसिष्ठा यह नाम मुनि का नामांतर होगा।

यामिनी को टिड्डिया हुए।

विनता को अरिष्टनेमि, अरुण, आरुणि, गरुड, तार्क्ष्य, वारुणि नामक पुत्र, एवं सौदामिनी नामक कन्या हुई। अरिष्टनेमि तथा तार्क्ष्य गरुड के नामांतर होने का उल्लेख मिलता है।

विश्वा को करोड़ों यक्ष तथा राक्षस हुए।

सरमा को वनचर हुए।

सिंहि ऊर्फ सिंहिका को चंद्रप्रमर्दन, चंद्रहर्तृ, राहु तथा सुचंद्र पुत्र हुए।

सुरभि को अंगारक, अज (अजपाद), अहिर्बुध्न्य (हिर्बुध्न्य), ईश्वर, ऊर्ध्वकेतु, एकपाद, कपाला (कपालि) चंड, ज्वर, निर्ऋति, पिंगल, भल, भीम, भुवन, मृत्यु, विरूपाक्ष, विलोहित, वृषभ (महादेव का नंदी), शंभु, शास्तृ, सद्सस्पति, सर्प नामक पुत्र हुए तथा गांधारी (गांधर्वी) एवं रोहिणी ये कन्याएं हुई (शिव. शत. १८)।

सुरसा को यातुधानादि राक्षस तथा १००० सर्प हुए।

सूर्या को यमधर्म हुआ।

कश्यप को अरुंधती, नारद, पर्वत (वायु. ७०.७९; लिंग १.६३.७२-८०.) तथा मनसा ये मानसपुत्र तथा कन्याएं थी (विष्णु. १.१५ मत्स्य. ६; स्कन्द. १.२.१४; ३.२.८; वायु. ६७. ४३; ह. वं. १.३; ब्रह्मांड. ३.३)। अरिष्टापुत्र केवल ब्रह्माण्ड तथा महाभारत में दिये है। सुरभिपुत्र वायु तथा शिवपुराण में दिये है। मुनिपुत्र तथा क्रोधापुत्र ब्रह्मांड, महाभारत में दिये है। कद्रूपुत्र वायु, स्कन्द तथा भागवत में नहीं है। दनुपुत्र स्कन्द तथा वायु में नहीं है। उपरोक्त आदित्य स्कंद में नहीं है (आदित्य देखिये)।

गोत्रकार—अग्निशर्मायण (ग), अपन्कायामय (ग), आमा प्रामेय (ग), आग्निहायन (ग), आश्वायणि, आभ्यायनिन (ग), आश्ववातायन, आसुरायण (ग), उदग्रज (ग), उद्दलायन (ग), कन्यक (ग), कात्यायन (ग), कार्तिकेय, काश्यपेय (ग), काष्ठाहारिण, कौबेरक (ग), कौरिष्ठ (ग), गोमयान (ग), ज्ञानसंज्ञेय (ग), दाक्षायण, देवयान (ग), निकृतज (ग), पैल्मौलि, प्रागायण (ग), प्राचेय, बर्हि, भवनंदिन, भृगु (ग), भोज (ग), भौमपायन (भीमपायन, ग), महाचक्रि, माठार (ग), मातंगिन (ग), मारीच (ग), मृगय (ग), मेष किरीटकायन (ग), मेपा (ग) (ग), योगगदायन (ग), वोधयान (ग), वात्स्यायन (ग), वैकर्णेय (वैकर्णिक, ग), वैवशप, शाकय (शाक्रायण ग), शालहलेय (ग) श्याकार (ग), श्यामोदर, श्रोतन (श्रुतय), सासिसाहारितायन (ग), हस्तिदान (ग), हास्तिक (ग), ये सब कश्यप, निध्रुव, तथा वत्सार इन त्रिप्रवरों के हैं।

अनसूय, काद्रुपिंगाक्षि (काद्रपिंगाक्षि), दिवावष्ठ (दिवावस, दिवावसिष्ठ ग), नाकुरय, यामुनि (सामुकि), राजवर्तप (राजवल्लभ), रैपसेवकि (सैपसेवकि), शैशिरोदवहि, सजातंबि, सैरंध्री (सैरंभ्रि), स्नातप ये भी द्विगोत्री हो कर कश्यप, वत्सर तथा वसिष्ठ इन तीन प्रवरों के है।

उत्तर, कर्दम, काश्यप, कुलह, केरल, कैरात, गर्दभीमुख, गोभिल, जलंधर, दानव, देवजाति, नभ, निदाप, पिप्पल्य, पूर्य, पैप्पलादि, मत्स्य, भुजातपूर, मसृण, मृगकेतु,

वृषकंड, शांडिल्य, संयाति, हिरण्यबाहु ये असित, कश्यप तथा देवल इन त्रिप्रवरों के हैं (मत्स्य. १९९)।

कश्यपगोत्री मंत्रकार—असित, कश्यप, देवल, निध्रुव (नैध्रुव), रैभ्य, तथा वत्सार। वायु में 'विक्षम' तथा मत्स्य में 'नित्य' अधिक है (ब्रह्माण्ड. २.३२. ११२-११३; मत्स्य. १४५.१०६-१०७; वायु. ५९.१०२-१०३)। ये ब्रह्मवेत्ता थे।

ऋग्वेद में वत्सार के लिये अवत्सार, नैध्रुव के लिये निध्रुवि, इसके अतिरिक्त भूतांश, रेभ तथा विवि ये कश्यप माने गये है।

कश्यप नैध्रुवि—एक आचार्य (बृ. उ. ६.५.३)।

कश्यप मारीच—ऋग्वेदमंत्रद्रष्टा (ऋ. १. ९९; ८. २९; ९.६४;६७.४-६; ९१-९२; ११३-११४)।

कषाय—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

कहोड वा **कहोल कौषीतकेय**—एक ऋषि। व्रीहि, यवादि नये अनाज वृष्टि से उत्पन्न होने के कारण, पहले देवताओं के लिये आग्रयण (अर्थात अन्न का याग) कर भक्षण करना चाहिये, यह रीति इसने आरंभ की। आश्वलायनगृह्यसूत्र में ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में इसका नाम है। इसका कौषीतकेय नामान्तर भी मिलता है (बृ. उ. ३.५.१)। यह याज्ञवल्क्य का समकालीन था (श. ब्रा. २.३.५१; सां. आ. १५; काहाडी देखिये)।

यह उद्दालक ऋषि का शिष्य था। इसने गुरुगृह में रह कर गुरु की उत्तम प्रकार से सेवा की, इसलिये गुरु ने प्रसन्न हो कर इसे अपनी कन्या सुजाता ब्याह दी। उसे ले कर इसने गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया। सुजाता गर्भवती हुई। एक बार यह अध्ययन कर रहा था, तब सुजाता के गर्भ ने इसे अध्ययन न करने के लिये कहा। तब क्रोधित होकर इसने उस गर्भ को शाप दिया कि, तुम आठ स्थानों पर वक्र बनोगे। कुछ काल के बाद इसे अष्टावक्र नामक पुत्र हुआ। आगे चल कर, एकबार जब यह द्रव्ययाचना के लिये जनक राजा के पास गया, तब वरुणपुत्र बंदी ने अनेक ऋषियों को वाद में जीत कर पानी में डुबा दिया (म. व. १३४)। उस में यह भी डूब गया। वहाँ से इसके पुत्र ने, बंदी को वाद में के जीत कर वापस लाया (म. व. १३४-३१)। यह एक मध्यमाध्वर्यु है।

काकवर्ण—(शिशु. भविष्य.) इसका पुत्र क्षेत्रधर्मन्।

काकी—कश्यप तथा ताम्रा के कन्याओं में से एक।

२. स्कन्द के शरीर से उत्पन्न मातृकाओं में से एक।

काकुत्स्थ—अनेनस् का पैतृक नाम।

काकेयस्थ—कृष्णपराशर कुल का एक गोत्रकार। इसके लिये कार्केय पाठभेद है।

काक्षसेनि—अभिप्रतारिन् का पैतृक नाम (इति ऐन्द्रोत देखिये)।

काक्षीवत—दीर्घतमस् देखिये।

कांकायन—एक ऋषि। शांत्युदक करते समय कौनसा मंत्र लिया जावे, इसके संबंध में इसका मत है (कौ. सू. ९.१०)।

काचापि—कारकि देखिये।

कांचन—च्यवन भार्गव का नामांतर (वा. रा. उ. ६६.१७)।

२. (सो. पुरूरवस्.) भागवत तथा विष्णु पुराण के मतानुसार यह भीमपुत्र है। वायु के मतानुसार भी भीमपुत्र ही है, परंतु वहाँ इसे कांचनप्रभ कहा गया है।

कांचनमालिनी—एक अप्सरा। प्रयाग में माघस्नान करने से यह मुक्त हुई (पद्म. उ. १२७)।

काट्य—अंगिरस कुल का गोत्रकार तथा प्रवर।

कांठेविद्धि—एक आचार्य (वं. ब्रा. २)

कांडमायन—विसर्गसंधि आवश्यक है, यों मत रखनेवाला आचार्य (तै. प्रा. ९.१)।

कांडशय—पराशरकुल का एक गोत्रकार।

कांडायन—एक व्याकरणकार। पदपाठ में प्लुत अनुनासिक होता है, यह बतानेवाला, ऐसा इसका उल्लेख शांखायन के साथ आया है (तै. प्रा. १५.७)।

कांड्विय—एक उद्गाता (जै. उ. ब्रा. ३.१०.२; जनश्रुत, नगरिन् तथा सायक देखिये)।

काण्व—स्वरविषयक मत बतानेवाला आचार्य (शु. प्रा. १.१२३; १४.९)।

२. वसिष्ठगोत्री ऋषिगण।

३. वायु के मत में, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा का याज्ञवल्क्य की शाखा में से एक (व्यास देखिये)।

(आयु, इरिंबिठ, कण्व, कुरुसुति, कुसीदिन्, कृशि, त्रिशोक, देवातिथि, नाभाक, नारद, नीपातिथि, पर्वत, पुनर्वत्स, पुष्टिगु, पृषध्र, प्रगाथ, प्रस्कण्व, ब्रह्मातिथि, मातरिश्वन्, मेधातिथि, मेध्य, मेध्यातिथि, वत्स, शशकर्ण, श्रुष्टिगु, सध्वंस, सुपर्ण, सोभरि, तथा सौश्रवस काण्व देखिये)।

काण्वायन—अंगिराकुल का एक गोत्रकार। कृश ने काण्वायन के लिये प्रार्थना की है (ऋ. ८. ५५. ४)।

पुरूकुल से निकला हुआ एक ब्राह्मणकुल (अश्वसूक्तिन् तथा गोसूक्तिन् देखिये)।

काण्वीपुत्र--कापीपुत्र का शिष्य (बृ. ६.५.१)।

काण्व्यायन--एक आचार्य।

कात्थक्य--अर्थविषयक विचार करनेवाला एक आचार्य (नि. ८. ५; ६; ९..४१)।

कात्य--उत्कल कात्य देखिये।

कात्यायन--एक आचार्य। इसके १. कात्य, २. कात्यायन, ३. पुनर्वसु, ४. मेधाजित् तथा ५. वररुचि, ऐसे नामान्तर त्रिकांडकोश में दिये गये है।

याज्ञवल्क्य का पौत्र तथा कात्यायनपुत्र वररुचि, अष्टाध्यायी का वार्तिककार होने की संभावना है।

आंगिरस, कश्यप, कौशिक, द्यामुष्यायण तथा भार्गव गोत्र में भी कात्यायन है।

महाभाष्य इसके वार्तिकों पर ही लिखा हुआ ग्रंथ है।

इसके ग्रंथ-१. श्रौतसूत्र, २. इष्टिपद्धति, ३. कर्मप्रदीप, ४. गृह्यपरिशिष्ट, ५. त्रिकाण्डिकसूत्र, ६. श्राद्धकल्पसूत्र, ७. पशुबंधसूत्र, ८. प्रतिहारसूत्र, ९. भ्राजश्लोक, १०. रुद्रविधान, ११. वार्तिकपाठ, १२. कात्यायनी शांति, १३. कात्यायनीशिक्षा, १४. स्नानविधिसूत्र, १५. कात्यायनकारिका, १६. कात्यायनप्रयोग, १७. कात्यायनवेद प्राप्ति, १८. कात्यायनशाखाभाष्य, १९. कात्यायन स्मृति (इसका उल्लेख याज्ञवल्क्य, हेमाद्रि, विज्ञानेश्वर आदि ने किया है), २०. कात्यायनोपनिषद् (C. C.), २१. कात्यायनगृह्यकारिका, २२. वृषोत्सर्गादिपद्धति, २३. आतुरसंन्यासविधि, २४. मूल्याध्याय, २५. गृह्यसूत्र, २६. शुक्लयजुःप्रातिशाख्य। इसके साधारणतः छः हजार वार्तिक हैं। वार्तिक की व्याख्याः- इस प्रकार है 'सूत्रेऽनुक्तदुरुक्तचिंताकरत्वं वार्तिकत्वम् (नागेशः),' वा उक्तानुक्तदुरुक्तानां चिंता यत्र प्रवर्तते, तं ग्रंथ वार्तिकं प्राहुर्वार्तिकज्ञा मनीषिणः (छाया)'।

वार्तिक--कात्यायन एक व्याकरणकार था। इसने ऐन्द्रशाखा का पुरस्कार किया था। इसके मतानुसार उणादिसूत्र पाणिनिकृत हैं। इन सूत्रों का इसने विशदीकरण किया तथा बाद में इसे ही उणादिसूत्रों का कर्ता कहने लगे (विमल सरस्वती कृत 'रूपमाला', दुर्गसिंहकृत कातंत्र का 'कृत्' प्रकरण)। कात्यायन ने मुख्यतः पाणिनि के करीब करीब १५०० सूत्रों पर वार्तिक लिखे। वार्तिक के लिये इसे पाणिनि की परिभाषा का उपयोग करना पड़ा, तथापि इसने अच्, हल्, अक्, आदि पाणिनीय पारिभाषिक शब्दों के लिये स्वर, व्यंजन आदि शब्दों का उपयोग किया है। इससे, तथा कथासरित्सागर के यह ऐन्द्रशाखा का पुरस्कर्ता होने के उल्लेख से प्रतीत होता है कि, कात्यायन पाणिनि की अपेक्षा भिन्न शाखा का पुरस्कर्ता था। वार्तिकों का मुख्य उद्देश्य पाणिनि के सूत्रों का विशदीकरण कर, उन्हें समझने के लिये सरल बनाना है। इसने वाजसनेयी प्रातिशाख्य नामक दूसरा ग्रंथ लिखा है। कात्यायन के पहले भी काफी वार्तिककार हो गये हैं। उनमें से शाकटायन, शाकल्य, वाजप्यायन, व्याडि, पौष्करसादि का इसने उल्लेख किया है।

कथासरित्सागर की कथा से प्रतीत होता है कि, कात्यायन पाणिनि का समकालीन होगा। परंतु उपरोक्त जानकारी से पता चलता है कि, पाणिनि तथा इसमें काफी अंतर होना चाहिये। कथासरित्सागर में इसका संबंध नन्द से आया है। इससे कात्यायन का काल अनुमानतः ख्रि. पूर्व. ५००-३५० तय किया जा सकता है। पतंजलि ने इसे दाक्षिणात्य कहा है (प्रियतद्धिता दाक्षिणात्याः, ८)। इसकी एक स्मृति व्यंकटेश्वर प्रेस द्वारा दिये हुए स्मृतिसमुच्चय में है। वह २९ अध्यायों की है, तथा उसमें यज्ञोपवीतविधि, संध्योपासना, अंत्यविधि, आदि विषयों का विवेचन है।

इसकी जानकारी निबंधग्रंथ में दिये गये इसके उद्धरण से प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त शंखलिखित, याज्ञवल्क्य (१.४-५) तथा पराशर ने धर्मशास्त्रकार कह कर इसका निर्देश किया है। बौधायनधर्मसूत्र में कात्यायन का उल्लेख है (९.२.४७)। व्यवहार के बारे में लिखते समय, इसने नारद तथा बृहस्पति के मतों को मान्य समझा है। परिभाषा आदि भी योंही स्वीकार किया है। इसने स्त्रीधन के अनेक प्रकार सोचे हैं, तथा स्त्रियों के अधिकार भी लिखे है। व्यवहार के बारे में इसके ६०० श्लोक स्मृतिचन्द्रिका में आये हैं। इसने मनु के नामपर दिये उल्लेख मनुस्मृति में नहीं मिलते। भृगु के मतों के संबंध में भी ऐसा ही है। इसके श्रौतसूत्र पाणिनि के पहले रचे गये होंगे, परंतु इसकी स्मृति इ. ४००-६०० तक बनी होगी।

कात्यायन ने त्रयोदश श्लोकों से युक्त कात्यायनशिक्षा रची। उसपर जयंतस्वामी ने टीका लिखी। इसके नामपर स्वरभक्तिलक्षणपरिशिष्टशिक्षा नामक एक और शिक्षा है। यह शुक्लयजुर्वेद की ही शिक्षा है। परंतु प्रारंभ में काफी संज्ञायें आदि ऋक्प्रातिशाख्य के अनुसार हैं।

उसमें बयालीस श्लोक हैं। उसमें विशेष कर के स्वरभक्ति का ही विचार किया गया है (पारस्कर तथा वररुचि देखिये)।

२. राम के अष्ट धर्मशास्त्रियों में एक।

३. कबंधिन् देखिये।

४. विश्वामित्र पुत्र कति का पुत्र।

कात्यायनि--दक्ष कात्यायनि आत्रेय देखिये।

कात्यायनी--याज्ञवल्क्य की दो स्त्रियों में से एक। याज्ञवल्क्य का संसारत्याग का विचार पक्का होने के बाद, प्रपंचविषयक वस्तुओं का, मैत्रेयी तथा कात्यायनी में समान विभाजक करने को उसने कहा। परंतु मैत्रेयी अध्यात्मज्ञान में पारंगत होने के कारण प्रापंचिक वस्तुएं कात्यायनी के पास रही (बृ. उ.२.४.१; ४.५.१)।

कात्यायनीपुत्र--गौतमीपुत्र तथा कौशिकीपुत्र का शिष्य। इसके शिष्य पाराशरीपुत्र तथा पौतिमाषीपुत्र थे (बृ. उ. ६.५.१)। जातूकर्ण्य नामक एक कात्यायनीपुत्र का आचार्य कह कर निर्देश है (सां. आ. ८.१०)।

काद्रवेय--कद्रुपुत्र का मातृक नाम।

२. अर्बुद देखिये।

काद्रुपिंगाक्षि--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके लिये काद्रापिंगाक्षि पाठभेद है।

कानांध--वध्र्यश्व का पुत्र (बौ. श्रौ. २१.१०)।

कानिनी--ब्रह्मांड मत में व्यास के साम शिष्यपरंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)।

कानीत--पृथुश्रवस् का पैतृक नाम (ऋ. ८.४६. २१; २४)

कानीन--(सू. दिष्ट.) भागवतमत में देवदत्तपुत्र।

२. अग्निवेश्य, व्यास, कर्ण देखिये।

कान्तिमती--भरतपुत्र पुष्कल की स्त्री (पद्म. पा. १२)।

२. वीरबाहु देखिये।

३. व्याधस्त्री (शंख देखिये)।

कान्तिशालिन्--एक विद्याधर। पापनाशन लिंग के दर्शन से यह मुक्त हुआ (स्कन्द. १.३.२.४)।

कांदम--एक यावन का पैतृक नाम (तै. ब्रा. २. ७.२१.२)। गांदम देखिये।

कान्वायन--(शिशु. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार विंध्यासेना का पुत्र।

कापच्य--कायव्य देखिये।

कापटव सुनीथ--सुतेमनस शांडिल्यायन का शिष्य (वं. ब्रा. १)। इसका पैतृक नाम कापटव था।

कापिलेय--विश्वामित्रपुत्र। शुनःशेप को विश्वामित्र ने मृत्यु से मुक्त करने के बाद अपनी गोद में लिया। शुनःशेप को उसका पिता अजीगर्त वापस मांगने लगा, तब विश्वामित्र ने कहा कि, शुनःशेप मेरा पुत्र है तथा कापिलेय तथा बाभ्रव इसके बंधु हैं। इससे प्रतीत होता है कि, यह तथा बाभ्रव, विश्वामित्र के पुत्रों में से होंगे (ऐ. ब्रा. ७.१७)।

२. कुंभ को कपिला से उत्पन्न संतती का मातृक नाम (ब्रह्मांड ३.७.१४५)।

कापीपुत्र--आत्रेयीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य वैयाघ्रपदीपुत्र (बृ. उ. ६.५.१२)।

कापीय--व्यास के सामशिष्यपरंपरा का हिरण्यनाभ का शिष्य।

कापेय--एक ऋषि। चित्ररथ द्वारा द्विरात्र यज्ञ करके, इसने उसे धनसंपन्न किया (क. स. १३.१२; पं. ब्रा. २०.१२.५) कापेय का अर्थ है, कापेयी शाखा का अध्ययन करनेवाले लोग (सां. श्रौ. ९.८;ज्योत्स्नाटीका)। शौनक ऋषि कपि गोत्र का होने के कारण, उसे यह गोत्रनाम कह कर लगाया है (छां. उ. ४.३.५-७)।

कापोत--एक मुनि। उर्वशी तथा ककुत्स्थ की कन्या चित्रांगदा इसकी पत्नी थी। इसके तुंबुरु तथा सुवर्चस् नामक दो पुत्र थे। बाद में इसने कुबेर से द्रव्य ला कर इन पुत्रों को दिया। चन्द्रशेखर राजा की पत्नी तारावती को दो वानरमुखी पुत्र होंगे, यों शाप इसने दिया (कालि. ५३)।

काप्य--कैशोर्य काप्य का शांडिल्य शिष्य। यह कुमारहारित का शिष्य था (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। पैल, पतंचल तथा पुरुकुत्स का काप्य यह पैतृक नाम है। उसी प्रकार विभिंदुकीयों के सत्र में आर्त्विज्य करनेवाले सेनक तथा नवक का भी यह पैतृक नाम है।

काबंधि--यह अथर्वन् है। यह मांधाता के यज्ञ में गया तथा वहाँ यजमान तथा ऋत्विज को इसने कुछ प्रश्न पूछे (गो. ब्रा. १.२.९)। जलोद्भव अश्व से वेद डर गये। उस अश्व का शमन इसने किया (गो. ब्रा. ९.१८)। विचारिन् का यह पैतृक नाम है। कबंध का वंशज ऐसा अर्थ हो सकता है (कबंध आथर्वण देखिये)।

काम--ब्रह्मदेव के हृदय से उत्पन्न पुत्र। इसकी पत्नी रति। यह शंकर के तृतीय नेत्र से दग्ध हुआ परंतु रुक्मिणी

के उदर में पुनः प्रद्युम्न नाम से इसने जन्म लिया (भा. ३.१२.२६; १०.५५.१)। जहाँ इसे दग्ध किया, वह स्थल अंगदेश है। इसने बंधुभगिनी में कामविकार उत्पन्न किया, इस लिये शंकरद्वारा दग्ध होने का शाप इसे मिला। शंकर को पुत्रेच्छा होगी तब उत्पत्ति होने का उश्शाप भी इसने प्राप्त किया (शिव. रुद्र. सती. ३)।

२. संकल्प का पुत्र (भा. ६.६.१०)।

३. वैवस्वत मन्वन्तर के बृहस्पती का दौहित्र।

४. धर्मऋषी का एक पुत्र हर्ष इसका (पद्म. सृ. ३)।

५. परशुराम का बंधु (कालकाम देखिये)।

कामकंटका—घटोत्कच देखिये।

कामकायन—विश्वामित्र कुलोत्पन्न गोत्रकार तथा ब्रह्मर्षि।

कामगम तथा **कामज**—धर्मसावर्णि मन्वन्तर के देवगण विशेष।

कामठक—एक सर्प (म. आ. ५२.१५)।

कामंद—सोमकान्त देखिये।

२. एक ब्रह्मर्षि। आंगरिष्ठ राजा ने इससे पूछा था कि शुद्ध धर्म, अर्थ तथा काम कौन हैं? इसने उत्तर दिया कि, जिस से चित्तशुद्धि हो वह धर्म, पुरुषार्थ साध्य हो वह अर्थ, तथा केवल देहनिर्वाह की इच्छा हो वह काम है (म. शां. १२३)।

कामप्रमोदिनी—माण्डव्य की पत्नी (माण्डव्य देखिये)।

कामप्रि—मरुत्तका नामान्तर। यह मरुत् के लिये उपाधि की तरह प्रयुक्त किया है (ऐ. ब्रा. ८.२१)। सायण इसका अर्थ कामपूरक ऐसा लगाते हैं।

कामलायन—उपकोसल का पैतृक नाम (छां. उ.४. १०.१)।

कामली—रेणुका देखिये। रेणुका का नामांतर।

२. विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

कामहानि—व्यास की सामशिष्य परंपरा के वायु-मतानुसार लांगली का शिष्य।

कामा—देवी (घटोत्कच देखिये)।

कामान्ध—वध्र्यश्व का पुत्र (बौ. श्रौ. २१.१०)।

कामायनी—श्रद्धा देखिये।

कामुकायन—कारुकायण का पाठभेद।

कामोदा—क्षीरसागर से कामोदा, रमा, वरा, तथा वारुणी नामक चार कन्याएं उत्पन्न हुईं। पहली तीन विष्णु की स्त्रियां बनीं तथा वारुणी दैत्यों के हिस्से में पड़ी। यह आनंद से हँसती थी, तब गंगा में गिरे हुए इसके अश्रु कमल बनते थे (नारद. २.६८.१४)। क्षीरसागर में से कमोदा, लक्ष्मी, ज्येष्ठा, तथा वारुणी उत्पन्न हुई थीं। यह अमृत के फेन में से उत्पन्न हुई। यही तुलसी है। यह कामोदनगर में रहती है। इसके हंसने से पीले फूल उत्पन्न होते थे (विहुंड देखिये; पद्म. भू. ११८-१२१)।

काम्पिल्य (सो. नील.) भागवतमतानुसार भर्म्या-श्वपुत्र, विष्णुमतानुसार हर्यश्वपुत्र तथा वायुमतानुसार रिक्षपुत्र है (कपिल १०. देखिये)।

काम्बोज औपमन्यव—एक आचार्य (वं. ब्रा. २)। निरुक्त में इन दोनों शब्दों का दूसरे अर्थ में परंतु एकत्र उल्लेख आया है (नि. २.२)।

कायनि—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

कायव्य—एक निषाद। अरण्य के सब दस्युओं का यह अधिपति था। यह शूर तथा परमधार्मिक था। इसने अपने अनुयायीयों को बताया कि, वे ब्राह्मणों का कभी भी द्वेष न करें। उन्हें सर्वभाव से भजें, तथा छोटे बालक, स्त्रियां, भयभीत, भागनेवाले तथा निरायुध का वध न करें। जो ब्राह्मणों के शत्रु हैं, उनसे युद्ध करो तथा उन्हें मार डालो। इस तरह का व्यवहार करोगे तो उत्तम गति प्राप्त होगी। सदाचार का अवलंबन करने से दस्युओं का भी उद्धार होता है, यह बताने के लिये यह पुरातन कथा दी गयी है (म. शां. १३५)। इसे कापव्य भी कहते हैं।

काराक्षि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार। काचाक्षि इसका पाठभेद है।

कारडि—भगवत् औपमन्यव कारडि देखिये।

कारंधम—अविक्षित् का नामांतर।

कारीर—उद्गीथ के संबंध में विशेष ज्ञान रखने वाला आचार्य (जै. उ. ब्रा. २.४.४)।

कारीरथ—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

कारीरदि—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. २.४.४)

कारीरय—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

कारीषि—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ४.५५ कुं.)।

कारुकायण—विश्वामित्र कुल का एक गोत्रकार। इसका पाठभेद कामुकायन है।

कारुष—करूपक देश का राजा। वृद्धशर्मा का नामांतर। इसका पुत्र दंतवक्र। भारतीय युद्ध में यह राजा दुर्योधन के पक्ष में था (भा. ९.२४.३७)।

कारोटक—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

कार्कैय—'काकेयस्थ' का पाठभेद।

कार्तवीर्य—(सो. सह.) इसकी माता का नाम राकावती (रेणु. १४)। शिवपूजाभंग होने के कारण यह करविहीन जन्मा। मधु अगले जन्म में शिवशाप के कारण कार्तवीर्य हुआ (रेणु. २८)।

इसके लिये अर्जुन, सहस्रार्जुन तथा हैहयाधिपति नामांतर प्राप्त है। यह सुदर्शन चक्र का अवतार है (नारद. १.७६)। कृतवीर्य के सौ पुत्र च्यवन के शाप से मृत हुए। केवल यह सप्तमीव्रतस्नान के कारण उस शाप से मुक्त हुआ (मत्स्य. ६८)। कृतवीर्य ने संकष्टीव्रत करते समय जम्हाई दे कर उसके प्रायश्चित्तार्थ आचमन नहीं किया। गणेश के प्रसाद से चतुर्थीव्रत करनें से उसे पुत्र हुआ, परंतु उपरोक्त पापाचरण के कारण इसे केवल दो कंधे, मुंह, नाक तथा आंखें इतनी ही इंद्रियाँ थीं। यह देख कर इसके माता पिता ने बहुत शोक किया। एक बार दत्त उनके पास आये, तब उन्होंने उसे पुत्र दिखाया। उस समय यह बारह वर्ष का था। दत्त ने इसे एकाक्षरी मंत्र बता कर, बारह वर्ष गणेश की आराधना करने के लिये कहा। इसने तदनुसार आराधना की, तब गणेश ने इसे सुंदर शरीरयष्टि तथा सहस्र हाथ दिये; इसी कारण इसका नाम सहस्रार्जुन हुआ (गणेश. १.७२-७३)।

दत्तउपासना, वरप्राप्ति—कृतवीर्य के पश्चात् जब अमात्य इसको राज्याभिषेक करने लगे, तब कार्तवीर्य ने गद्दी पर बैठना अस्वीकार कर दिया। इसे ऐसा लगता था कि, राजा के नाते कर का योग्य मोबदला अपने द्वारा प्रजा को नहीं मिलेगा। इसे गर्गमुनि ने सह्याद्रि की गुहाओं में दत्त की सेवा करने की सलाह दी (मार्क. १६)। निष्ठापूर्वक एक हजार वर्ष तक दत्तात्रेय की सेवा करने पर, इसे चार वर मिलेः—१. सहस्रबाहु, २. अधर्मनिवृत्ति, ३. पृथ्वीपालन, ४. युद्धमृत्यु। इसने कर्कोटक नाग से अनूप देश की माहिष्मती अथवा भोगावती नगरी जीती। यही वर्तमान ओंकार मांधाता हैं। वहाँ मनुष्यों को बसा कर, इसने अपनी राजधानी बनायी। तदुपरांत कार्तवीर्य को दत्त तथा नारायण ने राज्याभिषेक किया। उस समय समस्त देव, गंधर्व तथा अप्सरायें उपस्थित थीं (मार्क. १७)।

पराक्रम— थोडे ही समय में, इसने समस्त पृथ्वी जीत ली, तथा यह उसका पालन करने लगा। इसने मारी नामक राक्षस का वध किया (नारद.१.७६)। इससे युद्ध करने के लिये रावण अपने मित्र शुक, सारण, महोदर, महापार्श्व तथा धूम्राक्ष सहित आया था। उस समय ऐसा पता चला कि, कार्तवीर्य राजमहल में नहीं है। यह इस समय नर्मदा पर स्त्रियों सहित क्रीडा करने गया था। आगे चल कर, रावण विंध्यपर्वत पार कर नर्मदा तट पर गया। वहां स्नान कर शंकर की पूजा करने बैठा। इधर कार्तवीर्य ने सहज लीलावश नदी का प्रवाह अपने सहस्र हाथों से रोक दिया। वह रुका हुआ पानी विविध दिशाओं में बहने लगा। इस प्रकार का एक वेगवान प्रवाह रावण तक पहुँचा। उससे उसका पूजाभंग हो गया। इस प्रकार पूजाभंग करनेवाला कार्तवीर्य है, यह समझते ही रावण ने इस पर आक्रमण किया। परंतु इसने उसके मंत्रियों को हतवीर्य कर दिया तथा रावण को पकड लिया। अपना पौत्र पकड़ा गया, ऐसा वर्तमान सुन कर पुलस्त्य ऋषि कार्तवीर्य के पास आया। इसने उसका सम्मान किया तथा इच्छा पूछी। तब इसने रावण को छोड़ देने की प्रार्थना की। इसने आनंद से रावण को छोड़ दिया, तथा अग्नि के समक्ष एक दूसरे से स्नेहपूर्वक व्यवहार करने की तथा पीडा न देने की प्रतिज्ञा की (वा.रा. उ. ३१-३३; विष्णु. ४.११; आ. रा. सार. १३; भा. ९.१५)। कार्तवीर्य ने नर्मदा के किनारे खडे रह कर पांच बाण छोडे, जिससे लंकाधिपति रावण मूर्च्छित हुआ। उसे धनुष्य से बांध कर यह माहिष्मती के पास लाया। बाद में पुलस्त्य की प्रार्थनानुसार उसे छोड़ दिया (मत्स्य. ४३; ह. वं. १.३३; पद्म. सृ. १२; ब्रह्म. १३)। वंशावली के अनुसार रावण इसका समकालीन होना असंभव है। रावण व्यक्तिनाम न हो कर तामिल भाषा का Irivan या Iraivan शब्द का संस्कृत रूप होना चाहिये। इस शब्द का अर्थ हैं देव, राजा, सार्वभौम अथवा श्रेष्ठ (J R A S. 1914, P 285)। रावण विशेषनाम समझा गया, इसलिये यह घोटाला हुआ। विष्णुपुराण की इस कथा में पुलस्त्य का नाम नहीं है (४.११)।

पृथ्वी जीत कर इसने बहुत यज्ञ किये (भा. ९.२३) १०००० यज्ञ किये, सात सौ यज्ञ किये (ह.वं. १.३३) यों भी कहा गया है। उस समय इसे यज्ञ से एक दिव्य रथ तथा ध्वज प्राप्त हुआ (मत्स्य. ४३; ह. वं. १.३३; मार्क. १७; पद्म. सृ. १२; अग्नि. २७५; ब्रह्म. १३; विष्णुधर्म. १.२३)। बाद में प्रजा को यह इतना दुख देने लगा, कि पृथ्वी त्रस्त हो गई। तब देवताएं विष्णु के पास गये तथा उन्होने सब कथा बताई। विष्णु ने उन्हे अभय दिया तथा कार्तवीर्य के नाशार्थ परशुरामावतार लेने का निश्चय किया। शंकर ने परशुराम को कार्तवीर्य संहार के लिये आवश्यक बल दिया (म. क. २४.

१४७–१५६; विष्णुधर्म २.२३)। हैहयाधिपति मत्त होने के कारण, कुमार्ग की ओर प्रवृत्त हुआ। यह अत्रिमुनि का अपमान कर रहा है, यह देखते ही कार्तवीर्य को दग्ध करने के लिये दुर्वास सात दिनों में ही माता के उदर से च्युत हो गया (मार्क. १६.१०१)। दुर्वास दत्त का बडा भाई था। दत्त की कृपा भी कार्तवीर्य ने संपादन की थी।

तदनंतर आदित्य ने विप्ररूप से इसके पास आ कर खाने के लिये कुछ भक्ष्य मांगा। इसने कौनसा भक्ष्य दूँ, ऐसा उसे पूछा। तब उसने सप्त द्वीप मांगे। परंतु उन्हें देने के लिये यह असमर्थ दिखने के कारण आदित्य ने कहा, 'तुम पांच बाणों को छोडो। उनके अग्रभाग पर मैं बैठूँगा तथा अपनी इच्छानुसार प्रदेश खाऊंगा'। यह मान्य कर के इस ने पांच बाण छोडे। आदित्य ने जो पूर्व तथा दक्षिण के प्रदेश जलाये, उसमें आपव वसिष्ठ ऋषि का आश्रम भी जला दिया। यह ऋषि वरुण का पुत्र था। वह कार्यवश आश्रम के बाहर, १०००० वर्षों तक जल में रहने के लिये गया था। वापस आते ही उसने देखा कि, आश्रम दग्ध हो गया है। उसने कार्तवीर्य को शाप दिया, 'तुम्हारा वध परशुराम रण में करेगा' (वायु. ९४.४३–४७; ९५.१–१३. मत्स्य. ४३–४४; ह. वं. १.३३; पद्म. सृ. १२; ब्रह्म. १३; विष्णुधर्म १. ३१)। कई ग्रंथों में आदित्य के बदले अग्नि भी दिया गया है (म. शां. ४९.३९)।

काफी दिन बीत जाने के बाद, यह एक बार मृगया के हेतु बाहर गया, तथा घूमते-घूमते जमदग्नि के आश्रम में गया। वहाँ जमदग्नि की पत्नी तथा जमदग्नि ने इन्द्र द्वारा दी गई कामधेनु से इसका सत्कार किया। तब यह जमदग्नि से वह गाय मांगने लगा। जमदग्नि ने इसे ना कर दिया। तब यह जबरदस्ती उस गाय को ले जाने लगा। परंतु उस गाय के आक्रोश से तथा शृंगों से इसकी संपूर्ण सेना एक पल में मृत हो गई। कामधेनु स्वर्ग में चली गई (पद्म. उ. २४१)। परंतु आखिर कार्तवीर्य यह गाय तथा साथ में उसका बछडा ले ही गया। इसके पुत्रों ने इसको न मालूम होते ही बछडा चुरा लाया (म. शां. ४९.४०)।

परशुराम तपश्चर्या के लिये गया था। केशव को संतुष्ट कर के अनेक दिव्यास्त्र ले कर वह अपने आश्रम में आया। कामधेनु ले जाने का वर्तमान उसे ज्ञात हुआ। तब क्रोध से कार्तवीर्य पर आक्रमण कर, नर्मदा के किनारे उसने इसे युद्ध के लिये आमंत्रित किया। कार्तवीर्य की पत्नी मनोरमा ने इसे युद्ध पर न जाने के लिये प्रार्थना की, परंतु यह नहीं मानता यों देख कर उसने प्राणत्याग कर दिया। दत्त के वर से प्राप्त इसकी बुद्धि नष्ट हो गई। तदनंतर इसका परशुराम से युद्ध हुआ। अंत में बाहुच्छेद हो कर यह मृत हो गया।

यह युद्ध गुणावती के उत्तर में तथा खांडवारण्य के दक्षिण में स्थित टीले पर हुआ (म. द्रो. परि. १. क. ८. पंक्ति. ८३९ टिप्पणी)। बाद में परशुराम द्वारा किये गये कार्तवीर्य के वध की वार्ता जमदग्नि ने सुनी। उसने राम से कहा, 'यह कार्य तुमने अत्यंत अनुचित किया। क्षमा ब्राह्मण का भूषण है। अब प्रायश्चित्त के लिये एक वर्ष तक तीर्थयात्रा करने के लिये जाओ'। इस कथनानुसार परशुराम तीर्थयात्रा करने के लिये गया। तब पहले वैर का स्मरण कर कार्तवीर्य के पुत्रों ने ध्यानस्थ जमदग्नि का बाणों से वध किया तथा उसका मस्तक ले कर वे भाग गये। परशुराम के लौटने पर, यह वृत्त उसे मालूम हुआ। माता की सांत्वना के लिये, उसने इक्कीस बार पृथ्वी निःक्षत्रिय करने की प्रतिज्ञा की, तथा उन पुत्रों पर आक्रमण किया। पांच को छोड बाकी सब पुत्रों का वध कर के, परशुराम पिता का मस्तक वापस ले आया (म. व. ११७; भा. ९.१५; अग्नि. ४)। कई स्थानों पर लिखा है कि कार्तवीर्य ने जमदग्नि का वध किया (वा. रा. बा. ७५; पद्म. उ. २४१)। पद्मपुराण में तमाचा लगाने का भी उल्लेख है।

ऊपर दिया गया है कि, इसे हजार हाथ थे, परंतु इसे घरेलू तथा अन्य कार्यों के लिये दो हाथ थे (ह. वं. १. ३३; ब्रह्म. १३)। परंतु इसे सहस्रबाहु नाम था (ह. वं. १.३३; मत्स्य. ६८; अग्नि. ४; गणेश १.७३)। महाभारत में लिखा है कि, आपव का आश्रम हिमालय के पास था। यह आश्रम अग्नि को दे सका, इससे यह स्पष्ट है कि, इसका राज्य मध्यदेश पर होगा। अयोध्या का राजा हरिश्चन्द्र तथा त्रिशंकु इसके समकालीन थे। यद्यपि मथुरा के शूरसेन देश की स्थापना स्वयं शत्रुघ्नपुत्र शूरसेन ने की, तथापि लिंगपुराण में वर्णन है कि इसकी स्थापना इसके पुत्र ने की (१.६८)। इसके सब पुत्रों के लिये स्वतंत्र देश थे (ब्रह्माण्ड. ३.४९)। यह संपूर्ण कथा, जमदग्नि की कामधेनु को मुख्य मान कर बताई गई है। पद्मपुराण में उसी गाय को सुरभि माना गया है (उ. २४१)। वहाँ इक्कीस बार पृथ्वी निःक्षत्रिय करने की प्रतिज्ञा का उल्लेख नहीं है। यहाँ (ब्रह्मांड. ३.

२१.५-४७.६१) उल्लेख है कि, परशुराम ने कान्यकुब्ज तथा अयोध्या के सब राजाओं की सहायता से अर्जुन को मारा तथा भार्गवों का पराभव किया।

चक्रवर्तिपद—इसका शासन ८५ हजार वर्षों तक रहा। इस प्रदीर्घ शासनकाल में इसने हैहयसत्ता तथा वैभव को अत्यंत वृद्धिंगत किया। प्रतीत होता है कि, इसने नर्मदा के मुख से हिमालय तक का प्रदेश जीत लिया था। इसकी सत्ता चारों ओर सुदूर तक फैली थी, इसका प्रमाण यह है कि, इसे कई स्थानों पर सम्राट तथा चक्रवर्ति कहा गया है (ह. वं. १.३३; पद्म. सृ. १२; ब्रह्म. १३; विष्णुधर्म १.२३; नारद. १.७६)।

नर्मदा तथा समुद्र का अपने हाथों से यह इस प्रकार मंथन करता था कि, सब जलचर इसके शरण आ जाते थे। यमसभा में यह यम के पास अधिष्ठित रहता है (म. स. ८.८)। इसका ब्राह्मणों के श्रेष्ठत्व के संबंध में पवन से संवाद हुआ था (म. अनु. १५२-१५७)। उसी प्रकार, मुझसे लड़ने लायक शक्तिशाली कौन है, इस विषय पर समुद्र से भी इसका संवाद हुआ है (म. आश्व. २९)। इसने प्रवालक्षेत्र में प्रवालगणप का बड़ा मंदिर बनाया (गणेश. १.७३)। माघस्नानमाहात्म्य के संबंध में इसका दत्त से संवाद हुआ था (पद्म. उ. २४२-२४७)। नारदपुराण में इसकी पूजाविधि बतायी है। इसके शरीरवर्णन में दिया है कि यह काना था (नारद. १.७६)।

संतति—इसे सौ पुत्र थे। उनके नाम शूर, शूरसेन, वृष्ण्याद्य, वृष, जयध्वज (वायु. ९४.४९-५०) धृष्ट, क्रोष्टु (मत्स्य. ४३), कृष्ण (ह. वं. १.३३; पद्म. सृ. १२), सूर, सूरसेन (अग्नि. २७५), वृषण, मधुपध्वज (ब्रह्म. १३), धृष्ट, कृष्ण (लिंग. १. ६८), वृषभ, मधु, ऊर्जित (भा. ९.२३)। भागवत में कहा है कि, इसे दस हजार पुत्र थे।

२. (सो. सह.) मत्स्य तथा वायु के मत में कनक के चार पुत्रों में से एक।

कार्ति—(सो. द्विमीढ.) उग्रायुध का पैतृक नाम।

कार्तिकस्वामिन्—स्कंद तथा गजानन देखिये।

कार्तिमती—शुककन्या तथा अणुह की पत्नी।

कार्तिवय—कश्यपगोत्र का एक ब्रह्मर्षि।

कार्दमायनि—भृगुगोत्र का एक ब्रह्मर्षि।

कार्द्रपिंगाक्षि—काद्रुपिंगाक्षी का पाठभेद।

कार्पणि—भृगुकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

कार्मायन—मांकायन का पाठभेद।

कार्शकेयीपुत्र—प्राचीनयोगीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य वैद्भतीपुत्र था (बृ. उ. ६. ५. २ काण्व)। माध्यंदिन में गुरु प्राश्नीपुत्र आसुरवासिन् है (बृ. उ. ६. ४. ३३)।

कार्षणि—भृगुकुल का गोत्रकार। पार्वणि पाठभेद है।

कार्ष्णाजिनि—एक प्राचीन आचार्य (जै. सू. ४. ३. १७; ६. ७. ३५; ब्रह्मसूत्र. ३. १. ९; का. श्रौ. १. ६. २३)। इसने कार्ष्णाजिनिस्मृति नामक ग्रंथ रचा। पैठीनसि, हेमाद्रि, माधवाचार्य आदि ग्रंथकार इस स्मृति का उल्लेख करते हैं (C. C.)। मिताक्षरा (याज्ञ. ३. २६५), अपरार्क, स्मृतिचंद्रिका तथा श्राद्धविषयक अन्य ग्रंथों में इसका उल्लेख है। अपरार्क में (पृ. १३८) इसका एक श्लोक दिया है। उसमें ब्रह्मदेव के सनक, सनंदन, सनातन, कपिल, आसुरि, ओढ तथा पंचशिख इन सात पुत्रों का उल्लेख है। राशियों के चिह्नों के संबंध मे इसका एक श्लोक अपरार्क में दिया है (४२०)।

कार्ष्णायन—कृष्णपराशरकुल का गोत्रकार।

कार्ष्णि—कृष्ण के पुत्रों का, विशेषतः प्रद्युम्न का नाम (भा. १०. ५५)।

२. अभिमन्यु (म. भी. ४५. २०)।

३. विश्वक देखिये।

काल—ध्रुव वसु का पुत्र।

२. जालंदर की सेना का एक असुर (पद्म. उ. १२)।

३. परशुराम का बंधु (कालकाम देखिये)।

४. ग्यारह रूद्रों में से एक (भा. ३. १२)।

कालक—विजर का पुत्र।

कालकंज—ये असुर थे। ये आकाश में रहते थे (अ. वे. ६. ८०. २)। इनका पराभव इंद्र ने किया। ये इंद्र के पराक्रम का एक स्थान हैं (क. सं. ८. १; मै. सं. १. ६. ९; तै. ब्रा. १. १. २. ४-६; कौ. उ. ३. १)। इन्होंने स्वर्गप्राप्ति के लिये अग्निचयन अनुष्ठान आरंभ किया। तब इसका पराभव करने के लिये, इंद्र वेषांतर कर इनके पास आया तथा इससे उसने कहा, 'हे असुरों! मैं ब्राह्मण हूँ। तुम्हारे अनुष्ठान में मुझे लेलो। मुझे भी स्वर्ग जाना है'। असुर मान गये। चयन के लिये असुर इष्टक (ईंट) जमा रहे थे। उनके साथ साथ इंद्र ने अपनी एक ईंट जमायी तथा अपनी

चित्रा नामक ईंट का मन में स्मरण रखा। अनुष्ठान समाप्त होने के पश्चात् चयन पर आरोहण कर असुर स्वर्ग जाने लगे।

इतने में चयन में से इंद्र ने अपनी ईंट धीरे से निकाल ली। जिससे चयनरूपी श्येनपक्षी ध्वस्त हो कर नीचे गिरा, तथा असुरों का स्वर्ग जाना रुक गया। कुछ लोग स्वर्ग की आधी राह में थे। चयनध्वंस की घटना के कारण वे मकोड़ा नामक छः पैरों के कीडे बने। दो असुर श्रद्धातिशय के कारण स्वर्ग जा पहुँचे, परंतु चयनभ्रष्टता के पाप से दोनों देवलोक में श्वान बने (तै. ब्रा. १.१.२; कालकेय देखिये)।

कालकवृक्षीय—एक ऋषि। इसके पास भूत, भविष्य तथा वर्तमान जाननेवाला एक पक्षी था। एक बार यह कोसल देशाधिपति क्षेमदर्शी राजा के यहाँ गया। राजाने पक्षी का गुण जान कर प्रश्न पूछा, 'मेरे मंत्री मेरे संबंध में कैसे हैं?' इस पर पक्षी ने एक मंत्री के जो दुर्गुण थे, वें बताये। दूसरे दिन अन्यों के दुर्गुण बताना तय किया। तब रात्रि में अन्य मंत्रियों ने, उस पक्षी की हत्या की। इससे राजा समझ गया कि, ये सारे मंत्री अनिष्टचिंतन करनेवाले हैं। इस ऋषि की सहायता से राजा ने सबको सजा दी (म. शां. १०१; स. ७.१६)। एक बार क्षेमदर्शी निर्बल हो कर इस मुनि के पास आया। उसने मुनि से पूछा "अब क्या करें?" मुनि ने उसकी सब तरह से परीक्षा लेकर क्षेमदर्शी राजा को अपना प्रधान नियुक्त करने का विदेहपति को आदेश दिया। विदेहपति ने यह मान्य किया। दोनों ने मुनि का आदरपूर्वक पूजन किया (म. शां. १०५-१०७; क्षेमदर्शिन् देखिये)।

कालका—वैश्वानर दानव की कन्या तथा कश्यप प्रजापति की स्त्री (भा. ६.६)। कुछ लोगों का दावा है कि, यह मारीच राक्षस की स्त्री है। उपरोक्त विधान ठीक नहीं है। कश्यप को मारीच भी कहते हैं, अतः वह कश्यप ही की पत्नी है। इसके कालकेय उर्फ कालकंज नामक असंख्य पुत्र हुए (कश्यप तथा कालकंज देखिये; म. व. १७०)।

कालकाम—विश्वेदेवों में से एक। संप्रति परशुराम-क्षेत्र में परशुराम के पास रहते है। वहाँ के लोग संकल्प में भी इसका उच्चार करते हैं, परंतु इस विषय में प्रमाण अप्राप्य है।

कालकामुक कार्मुक—खर राक्षस के बारह अमात्यों में से एक (खर देखिये)।

कालकाक्ष—गरुड के द्वारा मारा गया एक राक्षस।

कालकीर्ति—एक क्षत्रिय (म. आ. ६१.३४)।

कालकूट—त्रिपुरासुर का आश्रित दैत्य (गणेश. १. ४३)।

कालकेतु—एक असुर। एकवीर नामक हैहय राजा ने इसका वध किया।

कालकेय (कालेय)—हिरण्यपुर में रहनेवाले असुर। इन्हें अर्जुन ने मारा (म. व. १८.१७०)। मारीच की कालका नामक स्त्री थी। उसके पुत्र कालकेय। इनके लिये कालखंज भी नामांतर है (म. स. ९.१२)।

इनके साथ रावण का युद्ध हुआ था। तब रावण की भगिनी शूर्पणखा का पति विद्युज्जिह्व अनजाने रावण द्वारा मारा गया। कालकेय १४ सहस्र थे (वा. रा. उ. २४.२८)।

कालखंज—कालकंज, कालका, कालकेय देखिये।

कालघट—जनमेजय राजा के सर्पसत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.८)।

कालजित्—लक्ष्मण का सेनापति (कुशीलव देखिये)।

कालजिह्व—एक रुद्रगण।

कालनर—(सो. अनु.) भागवतमतानुसार सभानर का पुत्र। इसके पुत्र सृंजय। इसे कालानल भी कहते हैं।

कालनाभ—हिरण्यकशिपु की सभा का एक दैत्य तथा रुषाभानु का पुत्र (भा. ७.२)।

२. कश्यप तथा दनु का पुत्र (ह. वं. १.३.१००)।

३. विप्रचित्ति तथा सिंहिका का पुत्र। इसे परशुराम ने मारा (ब्रह्माण्ड. ३.६.१८-२२)।

४. कृष्णपुत्र सांब के द्वारा मारा गया दैत्य।

कालनेमि—लंका का एक राक्षस। लक्ष्मण युद्ध में मूर्च्छित हुआ। उसे औषधि लाने के लिये हनूमान् द्रोणाचल कि ओर जा रहा था। रावण को यह समाचार मिला। मार्ग में रोड़ा अटकाने के लिए उसने कालनेमि की योजना की। यह ऋषि के वेष में हनुमान् के, मार्ग में जा बैठा। पानी के लिये हनूमान् वहाँ रुका। इसका कपट जल्दी ही समझ गया, इसलिये इसे मार कर वह अविलंब आगे बढ़ा (अध्या. रा. यु. ७)।

सौ मुखोंवाला एक दैत्य (मत्स्य. १७७)।

पातालवासी एक दैत्य (पद्म. उ. ६; म. स. ५१)। विरोचन बद्ध होने पर इसने सारी सेना का पराभव किया। विष्णु पर आक्रमण करने के कारण चक्र ने इसके सौ हाथों को तथा मस्तकों को तोड़ ड़ाला, एवं इसके प्राण ले लिये (पद्म. सृ. ४)। विष्णु ने वध किया, इस लिये प्रतिशोध लेने के लिये यह कंस हुआ (भा. १०.१; कंस देखिये)।

संह्राद का पुत्र। इसके चार पुत्रः—ब्रह्मजित्, ऋतुजित्, देवांतक तथा नरांतक।

कालपथ—विश्वामित्र ऋषि का पुत्र (म. अनु. ४. ५०)।

कालपृष्ठ—कश्यप को दिति से उत्पन्न दैत्य। इसने तपस्या कर वर मांगा, 'जिसके सिर पर मैं हाथ रखूँ, वह भस्म होवे।' बाद में इसका प्रयोग यह शंकर पर करने लगा। विष्णु ने मोहिनीरूप धारण कर, इसे आपने ही सिर पर हात रखने को उद्युक्त किया। अतः यह स्वयं भस्म हो गया (स्कन्द. ५.३.६७; भस्मासुर देखिये)।

कालभीति—एक शिवभक्त। गर्भ में ही यह कालमार्ग नामक असुर से डर रहा था, इस लिये इसका नाम कालभीति रखा गया। इसके पिता मांटी ने पुत्रप्राप्ति के हेतु से १०० वर्षों तक रुद्र का अनुष्ठान किया। तब मांटी की पत्नी गर्भवती हुई। चार वर्ष होने पर भी गर्भ बाहर नहीं आता था। तब मांटी ने गर्भ से इसका कारण पूछा। गर्भ ने उत्तर दिया, मुझे कालमार्ग का डर लग रहा है। अनंतर मांटी ने शिवजी को इस वृत्तान्त का कथन किया। शिवजी ने इसे धर्म, ज्ञान, वैराग्य आदि का बोध कराने को कहा। बोध प्राप्त होने पर गर्भ बाहर आया। आगे चल कर, इसका संस्कार होने पर कालभीतिक्षेत्र में इसने अनुष्ठान किया। यह स्वर्गसुख का उपभोग करने लगा। शिवजीने इसकी भक्ति देख प्रसन्न हो कर वर दिया, 'तुम ने कालमार्ग पर विजय प्राप्त की, अतः तुम 'महाकाल' नाम से प्रख्यात हो जाओगे।' साथ ही उन्होंने आशीर्वाद दिया कि, तुम यहाँ करंधम को उपदेश दोगे। अनंतर मेरे प्रतिहारी नंदी बनोगे। (स्कंद. १.२.४०)।

कालभैरव—भैरव तथा रुद्र देखिये।

कालयवन—गार्ग्य (गर्ग) तथा गोपाली का पुत्र। इसका पिता गार्ग्य वृष्णि तथा अंधक का पुरोहित था। कहीं उसे गर्ग नाम से भी उल्लेखित किया गया है।

गार्ग्य कडे ब्रह्मचर्य से रहता था। एक बार उसके साले ने उसे षंढ (नपुंसक) कहा। यह सुन कर गार्ग्य अत्यंत क्रुद्ध हुआ। इसलिये उसने दक्षिण में जाकर लोहपिष्ट भक्षण किया। बारह वर्ष तपस्या की। शंकर को प्रसन्न कर लिया। शंकर से यादवों को पराजित करनेवाला पुत्र उसने मांग लिया। यह घटना दक्षिण में अजितंजय नामक नगर में हुई। उस समय यवनाधिपति राजा निपुत्रिक था। वह पुत्र की कामना कर रहा था। उसे गार्ग्य के वर का पता चला। तब उसने गार्ग्य को गोपस्त्रियों में से गोपाली नामक ग्वालन से पुत्र होने का प्रबन्ध किया। इस तरह उत्पन्न पुत्र कालयवन है।

यवनराज के घर छोटे से बडा हुआ कालयवन सौभाग्य से उसके राज्य का अधिपति बन गया। इसका कृष्ण के साथ संजोग से युद्ध हुआ वा सहेतुक रचाया गया, इस विषय में पुराणों की एकवाक्यता नहीं है। कालयवन दिग्विजय के लिये निकला। मथुरा के बलशाली यादवों पर इसने आक्रमण किया। इसी प्रकार का निर्देश कुछ ग्रंथों में है। जरासंध कृष्ण को जीतने में असमर्थ था, अतः हेतुपुरस्सर सौभपति—शाल्वद्वारा कालयवन को निमंत्रित करने का उल्लेख हरिवंश में है।

जाते समय, कृष्ण शायद विघ्न डालेगा इस लिये सौभपति शाल्व जरासंध का संदेश लेकर इसके पास आकाशमार्ग से आया। कालयवन इसी संधि की ताक में था। इसने उसी दिन विपुल सेना ले कूच करने की तैयारी की। यह यवन था, तथापि कूच करने के पहले इस के द्वारा अग्निहवन देने का उल्लेख मिलता है (ह. वं. २.५४)।

इधर जरासंध के बारबार के आक्रमणों से कृष्ण त्रस्त हो गया था। इसलिये उसने मथुरा के समान समतल मैदान में स्थित राजधानी छोड़ कर दूरस्थ समुद्रवेष्टित द्वारका को राजधानी बनाने की यादवों से मंत्रणा की। एक ओर से जरासंध तथा दूसरी ओर से कालयवन के आगमन को देख कर, चतुर कृष्ण ने एक रात में ही राजधानी बदलने का निश्चय किया।

इसके पूर्व उसने कालयवन को ड़राने का प्रयत्न किया। एक काले सर्प को घडे में रख कर, उस पर मुद्रा लगाई गई। अपने दूत के द्वारा वह घडा कृष्ण ने कालयवन के पास भिजवाया। इसका विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। कालयवन ने सर्प देख कर स्वाभाविक रूप से उद्गार निकाले, 'कृष्ण इस काले सर्प की तरह है।' उस घडे में

काटने वाली बहुत सी चीटियाँ भर कर, वह घड़ा कृष्ण को लौटा दिया। इस संदेश का तात्पर्य यह था कि, तुम यद्यपि कालसर्प की तरह प्रबल हो, तो मैं संख्या में अधिक हूँ। अतः चींटियों की तरह तुम्हें नष्ट करूँगा।

यह देख कर कृष्ण ने एक रात्रि में राजधानी बदल ली। सबको धैर्य बँधा कर, वह स्वयं पुनः मथुरा में पैदल आया। निःशस्त्र स्थिति में मथुरा से बाहर आये हुए कृष्ण को कालयवन ने देखा। कालयवन ने कृष्ण का पीछा किया। ऐसे काफी दूर जाने के बाद, कृष्ण एक गुफा में प्रविष्ट हुआ। वहाँ मुचकुंद. सोया था। कृष्ण ने अपना वस्त्र धीरे से मुचकुंद के शरीर पर ड़ाला। तथा स्वयं ओट में छिप गया (भा. १० ५१-५२)। अन्यत्र शरीर पर वस्त्र ड़ालने का उल्लेख नहीं है। कालयवन ने सुप्त मुचकुंद को ही कृष्ण समझा तथा उसपर लत्ता-प्रहर किया। इस से मुचकुंद एकदम जाग्रत हो गया। क्रोधित हो कर केवल दृष्टिक्षेप से कालयवन को उसने जला दिया (ह. वं. २. ५२-५७; पद्म. उ. २७३. ४८-५७; विष्णु. ५. २३; ब्रह्म. १४. ४८-५२; १९६; म. शां. ३२६. ८८)।

कालवीर्य—एक असुर (सैंहिकेय देखिये)।

कालशिख—वसिष्ठगोत्रीय ऋषि।

काला—काष्ठा देखिये।

२. देवों की स्तुति से प्रसन्न हो कर, शुंभनिशुंभ का वध करने के लिये देवी पार्वती द्वारा उत्पन्न शक्ति। इसने धूम्रलोचन, चंड़मुंड़, रक्तबीज, शुंभनिशुंभ आदि का वध किया (दे. भा. ५. २२-३१; शुंभनिशुंभ तथा रक्तबीज देखिये)। इसे काली, कालिका तथा कौशिकी नामांतर हैं। उपरोक्त युद्ध में सब देवताओं की शक्तियाँ, अपने अपने लक्षणों से युक्त हो कर, इसकी सहायता करने के लिये आईं। उनके नाम १. ब्रह्माणी, २. वैष्णवी, ३. शांकरी, ४. इन्द्राणी, ५. वाराही, ६. नारसिंही, ७, याम्या, ८. वारुणी, ९. कौबेरी (दे. भा. ५. २८)।

कालाक्ष—घटोत्कच देखिये।

कालानल—(सो. अनु.) कालनर तथा यह एक ही है।

२. एक दैत्य। गजानन ने विजयपुर में इसका वध किया। वहाँ गजानन का नाम् विघ्नहर है (गणेश. १. ६३)।

कालायनि—व्यास की ऋक्‌शिष्य परंपरा का बाष्कलि का शिष्य (व्यास देखिये)।

कालिक—व्यास की सामशिष्य परंपरा का वायु तथा ब्रह्मांडमत में हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)।

२. मय तथा रंभा के पुत्र (ब्रह्मांड. ३६.२८-३०)।

कालिंग—एक अंत्यज। यह चोरी करने गया था, तब तीर्थ में इसकी मृत्यु हुई, इसलिये इसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. २१७)।

कालिंदी—कृष्ण की पत्नी। पूर्वजन्म में यह सूर्यकन्या थी। उस जन्म में, कृष्णप्राप्ति के लिये यह यमुना के तट पर तपस्या कर रही थी। इसका मनोदय जान कर कृष्ण ने इसका पाणिग्रहण किया। इसे श्रुत, कवि, वृष, वीर, सुबाहु, भद्र, शांति, दर्श, पूर्णमास तथा सोमक ये दस पुत्र हुए (भा. १०.६१)।

कालिय—यह काद्रवेयकुल के पन्नग जाति का नाग था (भा. १०.१७.४; म. आ. ३१.६; म. ५३.१५-१६)। यह पहले रमणकद्वीप में था। गरुड़ ग्रस्त न करें, इसलिये हर माह में पौर्णिमा को, यह उसको भक्ष्य पहुँचा देता था। एक बार इसने गरुड़ का भाग भक्षण कर लिया। गरुड़ ने क्रुद्ध हो कर इसे मारा। किंतु एक प्रहार लगते ही, यह यमुना में आ कर छिप गया। सौभरि के शाप के कारण, गरुड वहाँ न आ सकता था। कालिय के कारण वहाँ का पानी विषमय बन गया। उसे प्राशन करने के कारण, गोप तथा गौओं की मृत्यु हो गई। तब एक वृक्ष पर चढ़ कर, कृष्ण ने यमुना के जलाशय में छलांग लगाई। कालिय को वहाँ से रमणकद्वीप की ओर भगा दिया, तथा गरुड़ द्वारा संत्रस्त न होने का प्रबंध किया। इसे पाँच मुख थे, तथा यह बड़े ही ऐश्वर्य से रहता था (भा. १०.१६; ह. वं. २.१२; विष्णु. ५.७)।

२. दाशरथि राम की सभा का एक हास्यकार।

काली—दुर्गा देखिये।

२. मत्स्यी के उदर से जन्म ली हुई उपरिचर वसु राजा की कन्या। इसे मत्स्यगंधिनी, योजनगंधा आदि नाम थे। बाद में सत्यवती नाम भी प्राप्त हुआ। यही आगे चल कर शंतनु की पत्नी बनी। इसे कौमार्यावस्था में पराशर नामक पुत्र हुआ।

३. पंडुपुत्र भीमसेन की दूसरी स्त्री। इसे उससे सर्वगत नामक पुत्र हुआ (भा. ९.२२.३१)। इसके लिये काशी, काशेयी तथा काश्य पाठभेद कथित प्राप्त हैं। यह शिशुपाल की भगिनी थी (म. आश्व. ३२.११)

कालीयक—कद्रु तथा कश्यप का पुत्र।

कालेय—अत्रिकुल का गोत्रकार (अत्रि देखिये)।

२. रसातल में रहनेवाले दैत्यों में से एक (भा. ५.२४)। यह कालकेय का भाई था। भाई की मृत्यु के कारण, चित्ररथ पर इसने आक्रमण किया। परंतु इन्द्रपुत्र जयंत ने बीच ही में इसका वध किया (पद्म. सृ. ६६)।

कावषेय—यह तुर का मातृक नाम है। यह तत्त्वज्ञान का आचार्य था (ऐ. आ. ३.२.६; सां. आ. ८.२)। यह तुर ऋषि को कवषा से उत्पन्न हुआ था (भा. ९.२२)

काव्य--बर्हिषद् पितरों में से एक, तथा स्वतंत्र पितृगण (वायु. ५६.१३)। यह कविपुत्र है।

२. वारुणि कवि का पुत्र। भार्गव तथा अंगिरस गोत्र के मंत्रकार तथा ऋषि। सामवेदी श्रुतर्षि (उशनस् देखिये)

३. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक.

४. उशनस् का पैतृक नाम (ऋ. १.५१.११; ८३.५; १२१.१२; ६. २०.११; ८.२३.१७; अ. वे. ४.२९.६; तै. सं. २.५.८.५)। इटत्, तथा उक्ष्णोरंध्र का भी यह पैतृक नाम है।

काश—काश्य देखिये।

काशकृत्स्न--एक व्याकरणकार। इसका तीन अध्यायों का व्याकरण है (काशिका. ५.१.५८)। एक तत्त्वज्ञानी (ब्र. सू. १.४.२२)।

काशि वा काश्य—इन लोगों का वैदिक वाङ्मय में पर्याप्त उल्लेख आता है। काशी राजा के लिये इस शब्द का उपयोग किया गया होगा। शतानीक सात्राजित के द्वारा काशी राजा धृतराष्ट्र का पराभव हुआ। तब पुनः ब्राह्मणों के हाथों में सत्ता आने की अवधि तक के लिये, काश्य लोगों ने यज्ञ करना बंद कर दिया (श. ब्रा. १३.५.४.१९)। दूसरा अजातरिपु भी काशी का राजा था। भद्रसेन भी काशी का राजा था। काशीविदेह सामासिक नाम भी प्राप्य है। काशी, कोसल एवं विदेह का एक ही पुरोहित था (सां. श्रौ. १६.२९.५)। काशी तथा विदेह एक दूसरे के बिल्कुल समीप थे (बौ. श्रौ. २१.१३)। काशीकौशल्य निर्देश भी पाया जाता है (गो. ब्रा. १.९)।

२. वारुणि कवि के आठ पुत्रों में से सातवाँ (कवि देखिये)।

३. (सो. क्षत्र.) भागवत मत में काश्यपुत्र। वायु तथा विष्णु के मत में काश पुत्र। वायु में इसे काश्य कहा है। विष्णु में इसे काशिराज कहा है। (काश्य देखिये)।

काशिक—भारतीय युद्ध में पांडवपक्षीय राजा (म. उ. १६८.१४)।

काशिराज--अंबा, अंबिका तथा अंबालिका का पिता। परंतु यह नाम काशी के किसी भी राजा को लगाया जाता है (भा. ९.२२; प्रतर्दन देखिये)।

२. भारतीय युद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा (म. आ. ६१-६७)।

३. भास्करसंहिता के 'चिकित्साकौमुदी' तंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

काश्य--(सो.क्षत्र.) भागवत मत में सुहोत्र का, एवं वायु तथा विष्णु के मत में सुनहोत्र का पुत्र। ब्रह्मांड, भागवत तथा वायु के मत में, काश्यवंश अमावसुपुत्र क्षत्रवृद्ध से प्रारंभ हुआ। ब्रह्म तथा अग्नि पुराण के मत में वह पौरव सुहोत्र से निकला। परंतु, ब्रह्म तथा अग्नि में सुहोत्र तथा सुनहोत्र नामसाम्य से गड़बड़ हो गई होगी। इस वंश को क्षत्रवृद्धवंश अथवा काश्यवंश कहते हैं (काशि देखिये)।

२. सांदीपनी का नामांतर।

३. (सो. अज.) सेनजित् राजा के चार पुत्रों में से तीसरा। मत्स्य में काव्य नामांतर प्राप्त है।

४. भारतीय युद्ध में पांडवपक्षीय राजा। एकरथ होते हुए भी, युद्ध के समय किसी वरप्रभाव से यह अष्टरथी हो जाता था (म. उ. १६८.१२१)।

५. काशिराज अर्थ से यह नाम अजातशत्रु के लिये प्रयुक्त है। (अजातरिपु २. देखिये)।

काश्यप--किसी विस्तृत कुल का नाम। प्रजापति के द्वारा उत्पन्न सभी प्रजायें काश्यप माने कश्यपकुलोत्पन्न है (श. ब्रा. ७.५.१.५; कश्यप देखिये)।

यह सर्वसाधारण पैतृक नाम है (तै. आ. २.१८; १०.१.८)। अगस्त्य तथा परशुराम के समान, यह भी दक्षिण का निवासी माना जाता है। अपने वंश अथवा उपनिवेश का काश्यप से संबंध जोड़नेवाले तथा काश्यप गोत्रीय माननेवाले लोग सभी जातियों में पाये जाते हैं। शाकटायन के साथ व्याकरणज्ञ कह कर, इसका उल्लेख है (शु. प्रा; ४.५)।

कश्यप गोत्र का मंत्रकार। यह ऋषि भी है (भृगु, कश्यप अवत्सार, ऋश्यशृंग, देवतरस्, श्यावसायन, शूष वाह्नेय, गौतम असित देवल, निध्रुवि, भूतांश, रेभ, रेभसूक्ति, विव्रि तथा हरित देखिये)।

२. एक मांत्रिक ब्राह्मण। सर्पदंश हुए परीक्षित को अपने मंत्रसामर्थ्य से जीवित कर के, धनप्राप्ति करने के लिये यह जा रहा था। यह समाचार पाते ही, वृद्ध ब्राह्मण का रूप ले कर, मार्ग में तक्षक ने काश्यप से भेंट की, तथा इससे

कहा, 'तुम्हारे सामने इस वृक्ष को मैं काटता हूँ। अपने मंत्रसामर्थ्य से तुम इसे जीवित करो, तभी तुम्हारा मंत्रसामर्थ्य मैं सत्य मानूँगा'। तक्षक के दंश से भस्मसात् वृक्ष, इसने मंत्रसामर्थ्य से अंकुरित कर के दिखाया। इसके मंत्रसामर्थ्य के प्रति तक्षक को पूर्ण विश्वास हो गया। राजा से प्राप्त होनेवाली संपदा से अधिक धन दे कर, तक्षक ने इसे विदा किया। ब्राह्मणशाप के सामने अपना मंत्र सिद्ध न होगा, इस आशंका से काश्यप घर लौटा (म. आ. ३९)। परंतु राजा के पास न जाने के कारण, लोगों ने इसे जातिच्युत कर दिया। तब यह व्यंकटाचल पर गया। वहाँ के तीर्थस्नान से यह पापमुक्त हो गया (स्कंद. २. १. ११)।

३. एक ब्राह्मण। काश्यप की एक पुरानी कथा, भीष्म ने ज्ञान के महत्त्व का वर्णन करने के लिये, युधिष्ठिर को बताई है, वह निम्न प्रकार से है।

काश्यप नामक एक तपस्वी तथा सदाचारसंपन्न ब्राह्मण था। इसे एक वैश्य ने रथ का धक्का दे कर गिरा दिया। तब विकल हो कर, क्रोध से यह प्राण देने के लिये प्रवृत्त हो गया। यह जान कर, इन्द्र शृगाल रूप से वहाँ आया। उसने इसे मानवदेह तथा उसमें भी ब्राह्मण्यप्राप्ति की प्रशंसा कर के मृत्यु से निवृत्त किया, तथा ज्ञान की ओर इसका ध्यान प्रेरित किया। तब काश्यप को भी आश्चर्य हुआ। इसे पता चला, कि शृगाल न हो कर यह इन्द्र है। तब इन्द्र की पूजा कर यह घर लौट आया (म. शां. १७३; नारद. देखिये)।

४. एक धर्मशास्त्रकार। अठारह उपस्मृतिकारों में से यह एक है (स्मृतिचन्द्रिका १; सरस्वतीविलास पृष्ठ १३)। उसी प्रकार, पाराशरधर्मसूत्र में भी धर्मशास्त्रकर्ता कह कर इसका उल्लेख है। परंतु याज्ञवल्क्यस्मृति में इसका नामनिर्देश नहीं है। इसके ग्रंथों में आह्निककर्म, श्राद्ध, अशौच, प्रायश्चित्तादि के बारे में काफी जानकारी दी गई है। मिताक्षरा, स्मृतिचन्द्रिकादि ग्रंथों में इसके धर्मशास्त्र से उद्धहरण लिये गये है। काश्यपस्मृति नामक एक स्वतंत्र ग्रंथ है। उसमें गृहस्थ के कर्तव्य, भिन्नभिन्न प्रकार के प्रायश्चित्तादि की जानकारी है। कश्यप नामक एक धर्मशास्त्रकार का उल्लेख बौधायनधर्मसूत्र में है (१.२.२०)। परंतु यह तथा कश्यप दोनों भिन्नभिन्न हैं, वा एक ही हैं, इसके विषय में निश्चित जानकारी प्राप्त नहीं होती है। एक व्याकरणकार के रूप में पाणिनि ने इसका उल्लेख किया है (८.४.६७)। यह शिल्पकार तथा शिक्षाकार भी था। इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं:—१. काश्यपपांचरात्र, २. काश्यपसंहिता, ३. काश्यपस्मृति, ४. काश्यपसूत्र। कश्यपस्मृति एवं कश्यप संहिता, तथा काश्यपस्मृति एवं काश्यपसंहिता इन ग्रंथों का रचयिता एक ही होगा (C. C.)।

अठारह ज्योतिषसंहिताकारों में से एक। इसकी काश्यपसंहिता प्रसिद्ध है। इस संहिता के कुल पचास अध्याय हैं। कुल श्लोकसंख्या करीब करीब १५०० है। कहते हैं कि, इस ग्रंथ में सूर्य पर प्राप्त धब्बों का उल्लेख है, तथा दूरवीक्षणादि यंत्रों का भी वर्णन है (कवि चरित्र)।

५. मौत्य मन्वन्तर का एक मनपुत्र।

६. सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

७. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

८. वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

९. अत्रि का मानसपुत्र (ब्रह्माण्ड ३.८.७४-८७)।

१०. एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

११. गोकर्ण नामक शिवावतार का शिष्य।

१२. दाशरथि राम की राजसभा का एक धर्मशास्त्री।

१३. दाशरथि राम की सभा का एक हास्यकार।

१४. पांडवों के साथ यह द्वैतवन में था।

१५. वसुदेव का पुरोहित। पांडवों के जातकर्मादि संस्कार इसने किये (म. आ. परि. १; क्र. ६७. पंक्ति. २०)।

काश्यपि—कश्यप के वंशज का नाम। अरुण के लिये भी यही नाम प्रयुक्त है।

२. भृगुगोत्रीय ऋषि।

काश्यपी—शिखंडिनी देखिये।

काश्यपीबालाक्या माठरीपुत्र—एक आचार्य। यह कौत्सीपुत्र का शिष्य था। इसका शिष्य शौनकीपुत्र (श. ब्रा. १४.९.४.३१-३२)।

काश्यपेय—कश्यपगोत्रीय एक गोत्रकार गण। यह नाम सूर्य को भी दिया जाता है।

२. कृष्ण के दारुक नामक सारथि का नाम (म. द्रो. १२२.५२)।

काश्या—भीम की पत्नी (देखिये काली ३.)।

२. जनमेजयपत्नी।

काषायण—एक आचार्य। यह सायकायन का शिष्य है (बृ. उ. ४.६.२ काण्व)। यह सौकरायण का भी शिष्य है (बृ. उ. ४.५.२७ माध्यं.)।

काष्ठा--प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या। यह कश्यप की पत्नी थी (कश्यप देखिये)।

काष्ठाहारिण--कश्यपगोत्रीय एक गोत्रकार।

कासार--व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा के बाष्कलि का शिष्य (व्यास देखिये)।

कासोरु--अंगिरागोत्रीय एक गोत्रकार।

काहोडि--अर्गल का पैतृक नाम।

किंकर--एक राक्षस। विश्वामित्र की आज्ञानुसार यह कल्माषपाद राजा के शरीर में प्रविष्ट हुआ था।

किंकिण--(सो. क्रोष्टु.) सात्वतपुत्र भजमान की दूसरी स्त्री के तीन पुत्रों में दूसरा। विष्णुमत में इसे कृकण तथा मत्स्यमत में कृमिल नाम है।

किंदम--मृगरूप ले कर मृगी के साथ क्रीडा करनेवाला एक ऋषि। इसका वध पांडुराजा ने किया, अतः इसने पांडुराजा को शाप दिया (म. आ. १०९)।

किन्नर--(सू. इ. भविष्य.) विष्णु तथा वायु के मत में सुनक्षत्र का पुत्र। मत्स्यपुराण में किन्नराश्व पाठभेद है। इसका मुख्य नाम पुष्कर था।

किन्नराश्व--किन्नर देखिये।

किम्पुरुष--आग्नीध्र के नौ पुत्रों में दूसरा। इसकी पत्नी का नाम प्रतिरूपा। यह किंपुरुषवर्ष का ही अधिपति था (भा. ५. २; आग्नीध्र देखिये)।

२. स्वारोचिष मन्वन्तर का एक मनुपुत्र।

किरात--एक शिवावतार। मूक नामक दानव का इसने सूकर रूप में वध किया (असमाति देखिये)।

किर्मीर--एक नरभक्षक राक्षस। बकासुर का भ्राता (म. आर. १२.२२)। यह काले रंग का था तथा वैत्रकीय नामक वन में (बेत के वन में) रहता था। हस्तिनापुर से निकल कर पांडव जब काम्यकवन में आये। तब भीमसेनद्वारा अपने भाई के वध का प्रतिशोध लेने के लिये, यह उस वन में आया। इसने पांडवों का मार्ग चारों ओर से रोक दिया। भीमसेन के साथ इसका घनघोर युद्ध हुआ। उसमें इस की मृत्यु हो गई (म. व. १२.६७)। बाद में पांडव द्वैतवन गये।

किलकिल--ब्रह्मांडमतानुसार किलकिला नगरी में राज्य करनेवाला एक राजवंश।

किशोर--बलि दैत्य के पुत्रों में से एक (मत्स्य. १७२)।

कीकट--(स्वा. प्रिय.) भागवतमतानुसार ऋषभ तथा जयंती का पुत्र।

२. धर्मपुत्र संकट का पुत्र। इससे भूमि पर के दुर्गाभिमानी देव उत्पन्न हुए (भा. ६.६)।

कीचक--केकय तथा मालवी के एक सौ छः पुत्रों में ज्येष्ठ। इसके छोटे भ्राताओं को उपकीचक कहते थे। विराट की पत्नी सुदेष्णा इसकी सौतेली मौसेरी बहन थी। यह बाण का अंशावतार था (म. वि. परि. १.१९. २५-२७)। विराट ने इसे अपना सेनापति बनाया था।

एक बार सुदेष्णा के महल में, सैरंध्री का वेश धारण की हुई द्रौपदी इसे दिखाई दी। पूछताछ करने के बाद यह उससे अनुनय करने लगा। द्रौपदी ने इसका धिक्कार किया। उसने इसे धमकी दी कि, उसके गंधर्वपति इसका वध कर डालेंगे। बहन से सलाह कर, यह सैरंध्री को अपने घर ले आया, तथा उससे अतिप्रसंग करने लगा। परंतु वहाँ से भाग कर, वह राजदरबार में गई। वहाँ भरी सभा में, उस पर लत्ताप्रहार कर, इसने उसकी चोटी पकड कर नीचे गिरा दिया। कीचक के घर जाते समय द्रौपदी ने सूर्य की प्रार्थना की। सूर्य से निजरक्षा के लिये प्राप्त राक्षस ने इसे दूर फेंक दिया। सैरंध्री नें यह समाचार भीम से कहा। उसने बडी ही कुशलता से इस को काबू में ला कर, इसका वध किया (म. वि. २१. ६२; भीमसेन देखिये)।

२. भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा।

कीर्ति--कुन्ति २. देखिये।

२. दक्ष प्रजापति की कन्या, तथा धर्म की पत्नी (म. आ. ६०.१३)।

३. प्रियव्रत राजा की ज्येष्ठ पत्नी (गणेश. २.३२.१३; प्रियव्रत देखिये)।

४. सुतपदेवों में से एक।

कीर्तिधर्मन्--भारतीययुद्ध में पांडवपक्ष का एक राजा (म द्रो. १३३.३७)।

कीर्तिमत्--(सू. इ.) नृगपुत्र। इसने वैशाख माहात्म्य के बल से यमलोक निर्जन बनाया (स्कन्द. २. ७.१२-१३)।

२. उत्तानपाद तथा सुनृता के दो पुत्रों में से कनिष्ठ। ध्रुव का भ्राता।

३. भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा वायु के मतानुसार देवकी से जनित वसुदेवपुत्र। कंस ने इसका वध किया। यह कृष्ण का बडा भाई था। वादे के अनुसार न मारते हुए कंस ने इसे छोड दिया था, परंतु नारद के उपदेश के

कारण बाद में उसने इसे मारा (भा. ९.२४; १०,१)। वायु के मत में यह रोहिणी से उत्पन्न वसुदेवपुत्र है।

कीर्तिमती—शुक्राचार्य तथा पीवरी की कृत्वी नामक कन्या का नामांतर। यह नीप अथवा अणुह राजा की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम ब्रह्मदत्त था।

कीर्तिमालिनी—(पिंगला १. देखिये)।

कीर्तिमुख—शंकर की जटा से निकला हुआ एक शिवगण। इसके तीन मुख, तीन पैर, तीन पुच्छ तथा सात हाथ थे। शंकर ने इसे प्रेत खाने के लिये कहा। बाद में इसका साहस देख कर, शंकर ने वर दिया कि, तुम्हारा स्मरण करने के सिवा मेरा दर्शन लेनेवाला का अधःपात होगा (पद्म. उ. ५०)।

कीर्तिरथ—(सू. निमि.) वायु के मत में प्रतित्वक पुत्र। यह कृतिरथ का दूसरा नाम है।

कीर्तिरात—(सू. निमि.) कृतिरात का नामांतर।

कुकण—एक सर्प (म. उ. १०१.१०)।

कुकर्दम—पिंडारक क्षेत्र का राजा। यह अत्यंत दुष्ट था। अनेक पापकृत्यों के कारण, इसे प्रेतयोनि प्राप्त हुई। वहाँ इसे अनेक अनुयायी प्राप्त हुए। एकबार घूमते घूमते यह कहोड ऋषि के आश्रम में आया। अपने इस शिष्य के उद्धार के लिये कहोड ने गोखुरा के संगम पर श्राद्ध किया। औरों का भी श्राद्ध किया। तब इसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. १३९)।

कुकुर—(सो. क्रोष्टु.) अंधक का नप्ता। इससे कुकुरवंश उत्पन्न हुआ, जिसमें में उग्रसेन, कंसादि हुएं।

कुक्षि—रौच्य मनु का पुत्र। इसे रौच्य ने सात्वत धर्म बताया। (म. शां. ३३६.३८-३९)।

२. पौप्यंजि ऋषि का शिष्य। इसने सामवेद की सौ संहिताओं का अध्ययन किया (व्यास देखिये)।

कुक्षेयु—(सो. पूरु.) रौद्र के दस पुत्रों में से एक। कक्षेयु पाठभेद प्राप्त है।

कुचैल—(हीन वस्त्रोंवाला) कृष्ण का एक भक्त तथा सांदीपनिआश्रम में बना हुआ उसका पुराना ब्राह्मण मित्र। यह बड़ा ही विरक्त, जितेन्द्रिय एवं ज्ञानी था। सरलता से जितना मिलता था, उसी पर निर्वाह करने की वृत्ति के कारण, यह अत्यंत दरिद्री था। दरिद्रता से त्रस्त हो कर इसकी पत्नी ने इसे कृष्ण के पास जाने के लिये कहा। क्यों कि, कृष्ण इसका पुराना मित्र तथा बड़ा ही उदार था। पत्नी के बार बार आग्रह करने पर, 'अयं हि परमो लाभ उत्तमश्लोकदर्शनम्', इस विचार से यह कृष्ण के यहाँ गया। जाने समय कुछ साथ ले जाना चाहिये, इस विचार से पत्नीद्वारा उधार माँग कर लाया गया चार मुठियाँ चिउड़ा, एक जीर्ण कपड़े में बाँधकर साथ लिया।

द्वारका आ कर कृष्ण से मुलाकात होने पर, अपने पुराने मित्रत्व के नाते, कृष्ण ने इसका पर्याप्त सत्कार किया। गुरुकुल की अनेक घटनाओं का स्मरण किया। हाथ में हाथ डाल कर बहुत गप्पें लड़ाई। कृष्ण ने स्वयं इससे पूछा, 'तुम मेरे लिये क्या लाये हो'। इसके द्वारा दिये गये चिउड़े में से, एक मुष्टि चिउड़ा बड़े आनंद से कृष्ण ने भक्षण किया। एक रात्रि बड़े आनंद से वहाँ बिताई। दूसरे दिन यह वहाँ से निकला। इसकी अयाचित वृत्ति के कारण, न तो कृष्ण ने इसे कुछ दिया, न कि इसने कृष्ण से कुछ माँगा। कृष्ण ने अपने को क्यों धन नहीं दिया इस विषय में, धनप्राप्ति के बाद शायद मैं ईश्वर को भूल जाऊंगा, इस तरह का उलटा तर्क इसने लड़ाया। परंतु घर आने के बाद इसने देखा, इसे उत्तम ऐश्वर्य प्राप्त हो गया है (भा. १०.८०.७)।

भागवत में कहीं भी इसे सुदामन् अथवा श्रीदामन् नहीं कहा गया है। किन्तु जनसाधारण में वैसी ही प्रसिद्धि है। सत्यविनायक की कथा में, यही कथा सुदामन् नाम पर आई है।

कुज—मंगल तथा नरकासुर का नाम।

कुजंभ—एक दैत्य। इसने तारकासुर को राज्याभिषेक किया (मत्स्य. १४७.२८)।

कुजंभ—एक दानव। इसके पास सुनंद नामक मूसल था। जिसके कारण यह अजेय था। केवल स्त्रीस्पर्श से ही मूसल निर्बल बनता था। कुजंभ का निवासस्थान निर्विध्या नदी के किनारे, अरण्य में भूमि के अंदर था। एक समय, वैशालीनरेश विदूरथ की कन्या मुदावती का, कुजंभ ने अपहरण किया। आगे भलंदनपुत्र वत्सप्रि ने, मुदावतीद्वारा मूसल को स्त्रीस्पर्श करवा कर निर्बल कर दिया, तथा कुजंभ का वध किया। पश्चात्, मुदावती के साथ वत्सप्रि का विवाह हुआ (मार्क. ११३)।

कुंजर—तारकासुर का एक सेनापति।

२. एक वानर। अंजनी का पिता।

३. सौवीरदेशीय एक राजपुत्र।

४. कश्यप तथा कद्रू के पुत्रों में से एक।

कुटीचर—रुद्रगणविशेष।

कुटुंबिनी—कामंद वैश्य की पत्नी (गणेश. १. ७. १२)।

कुठर—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कुणरवाडव—एक व्याकरणकार। इसने शंकर के लिये शंगरा, तथा वहीनर के लिये विहीनर शब्द सुझाया है (महाभाष्य. ३.२.१४; ७.३.१)।

कुणारु—एक असुर (ऋ. ३.३०.८)।

कुणि—एक व्याकरणकार तथा स्मृतिकार। कैयट ने इसका निर्देश किया है (पा. सू. १.१.७५)।

२. (सो. वृष्णि.) सात्यकि के दस पुत्रों में से एक। यह भारतीय युद्ध में मृत हुआ।

३. (सो. यदु.) जयराज का पुत्र, इसका पुत्र युगंधर।

४. (सू. निमि.) विष्णु के मत में सत्यध्वजपुत्र।

५. वेदशिरस् नामक शिवावतार का शिष्य।

कुणि गर्ग वा **गार्ग्य**—इस की कन्या वृद्धकन्या। वृद्धावस्था में इस का विवाह गांधर्वपुत्र शृंगवत् के साथ एक रात्रि के लिये हुआ (वृद्धकन्या देखिये)।

कुणिक—एक आचार्य (आप. ध. १.१९.७)।

कुणिबाहु—शिवावतार वेदशिरस् का शिष्य।

कुणीति—वसिष्ठ तथा घृताची का पुत्र। इसकी पत्नी पृथुकन्या।

कुंड—गजरूपी असुर। इसकी मृत्यु विनायक के द्वारा हुई (गणेश. २.१४)।

कुंडक—(सू. इ. भविष्य.) विष्णु के मत में क्षुद्रक का पुत्र।

कुंडकर्ण—दंडीमुंडीश्वर नामक शिवावतार का शिष्य।

कुंडज—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक।

कुंडजठर—जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य।

कुंडधार—एक सर्प (म. स. ९.९)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीमसेन ने इसका वध किया (म. भी. ८४.२२)।

कुंडपायिन्—एक आचार्य (पं. ब्रा. २५.४.४; आश्व. श्रौ. १२.४.६; कात्या. श्रौ. २४.४.२१)। सूत्र-ग्रंथ में इसके नाम से एक सत्र प्रसिद्ध है।

कुंडपाय्य—शृंगवृष का पैतृक नाम (ऋ. ८.१७.१३)।

कुंडभेदिन्—धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.६८; भी. ९२.२६)। भीष्मपर्व में इसका नाम 'कुंडभेद' दिया है।

कुंडला—मदालसा की सखी। यह विंध्यवान की कन्या तथा पुष्करमालीन् की पत्नी थी। इसके पति का वध शुंभ ने किया (मार्क. १९)।

कुंडिन—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार, मंत्रकार तथा प्रवर।

कुंडिनेय—मित्रावरुण का पुत्र।

कुंडोदर—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कुत्स—रुरु नामक राजर्षि का पुत्र। कमजोर होने के कारण सहायता के लिये इसने इन्द्र की आराधना की। इन्द्र ने आकर इस के शत्रुओं का वध किया। तदनंतर उसकी तथा कुत्स की मित्रता हो गयी। एक बार जब इन्द्र कुत्स के पास बैठा था, तब शची वहाँ आई। इनमें-से इन्द्र कौनसा है, यह शची पहचान न सकी (ऋ. ४.१६.१० सायणभाष्य)। इसे आर्जुनेय कहा है। इससे पता चलता है कि, यह अर्जुनी नामक स्त्री का पुत्र होगा (ऋ. १.११२.२३; ४.२६.१; ७.१९.२; ८.१.११)। यह एक योद्धा था। इसको अपने काबू में लेकर इन्द्र ने वेतसू का कल्याण किया (ऋ. १०.४९.४)। इन्द्र ने इस के लिये शुष्ण का लोहे के चक्र से वध किया (ऋ. १.६३.३; १२१.९; १७५.४) इन्द्र ने इसके लिये सूर्यरथ के पहिया की चोरी की अथवा उसे तोड़ दिया। इस तरह की अस्पष्ट कथा ऋग्वेद में दी गयी है (ऋ. १.१७४.५; ४.१६.१२; ३०.४)। अतिथिग्व तथा आयु के साथ इन्द्रस्तुति में इसका उल्लेख है। सूर्य के रथ का एक पहिया इन्द्र ने अलग किया। दूसरा पहिया कुत्स को दिया (ऋ. ५. २९. १०)। इंद्र कुत्स के घर गया था (ऋ. ५.२९.९–१०)। कुत्स तथा लुश दोनों इन्द्र को एकदम बुलाते थे। इन्द्र कुत्स के पास आया। परंतु कुत्स को शंका आने के कारण, इन्द्र को इसने सौ चर्मरज्जुओं से अंड़ के स्थान पर बाँध दिया। परंतु लुश के द्वारा बुलाये जाते ही इन्द्र इन रज्जुओं को तोड़ कर निकल आया। तब कुत्स ने एक साम कहकर पुनः इन्द्र को वापस बुलाया (ऋ. १०.३८.५; पं. ब्रा. ९.२.२२; जै. ब्रा. २२८)। यह कथा निश्चित रूप से नहीं समझती। इन्द्र का तथा इसका बैर होगा (कुत्स औरव देखिये)। यह इन्द्र का हमेशा का शत्रु न था (ऋ. १.५१.६; ६.२६.३)। पराक्रम दिखाने के लिये इन्द्र को कुत्स तथा रथ के पहिये की जरूरत रहती थी (ऋ. १.१७४.५)।

२. (स्वा. उत्तान.) चक्षुर्मनु तथा नड्वला के ग्यारह पुत्रों में से दूसरा (भा. ४.१३)।

३. भृगुकुल का गोत्रकार।

४. दाशरथि राम की सभा का एक ऋषि (वा. रा. उ. २ प्रक्षिप्त)।

५. अंगिराकुल का गोत्रकार तथा मंत्रद्रष्टा (ऋ. १. ९४-९८; १०१.११५; ९.९७.४५-५८)।

कुत्स औरव—एक राजा। उपगु सौश्रवस इसका पुरोहित था। इस ने जाहिर किया था कि, जो भी कोई इन्द्र को हवि देगा, उसका मस्तक मैं काट दूँगा। इंद्र ने गर्व के साथ इससे कहा, 'सुश्रवा ने मुझे हवि दिया है'। इस ने तत्काल क्रोधित हो कर, सामगान करतें हुए उपगु सौश्रवस का शिर काट दिया। सुश्रवा ने इन्द्र से शिकायत की। इन्द्र ने उसका शिर फिर से जोड दिया (पं. ब्रा. १४.६.८; कुत्स १. देखिये)।

कुत्सन्य—भृगुकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

कुथुमि—विष्णु तथा वायु के मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के पौष्यंजि का शिष्य। ब्रह्मांड में कुशुमि पाठ है (व्यास देखिये)।

कुनाल—(मौर्य. भविष्य.) वायु के मत में अशोक का पुत्र।

कुनेत्रक—वेदशिरस् नामक शिवावतार का शिष्य।

कुंतल—कौंतलपुराधिपति एक राजा (चन्द्रहास १. देखिये)।

कुंतलस्वातिकर्ण—(आंध्र. भविष्य.) मत्स्य के मत में मृगेन्द्रस्वातिकर्णपुत्र।

कुंति—एक राजा। इसने पांचालों का पराभव किया (क. सं. २६.९; मै. सं. ४.२.६)।

२. (सो. सह.) भागवत के मत में नेत्रपुत्र। विष्णु तथा मत्स्य के मत में धर्मनेत्रपुत्र। वायु में यह नाम कीर्ति है।

३. (सो. यदु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा वायु के मत में क्रथपुत्र।

कुंतिभोज—एक राजा। कुंतिभोज वा भोज नाम से इसका उल्लेख आता है। वसुदेवपिता शूर की कन्या पृथा उर्फ कुन्ती इसे दत्तक दी गई थी। यह उसकी बुआ का लडका था तथा अनपत्य था। शूर ने कुछ समयपूर्व अपना प्रथम पुत्र इसे देने का वचन भी दिया था (म. आ. ६१. परि. १ क्र. ४३)। एक बार दुर्वास कुंतिभोज के घर आये थे। कुंतिभोज ने कुन्ती को उनकी सारी व्यवस्था करने के लिये कहा। कुन्ती को दुर्वास से सब देवताओं को प्रसन्न करने के मंत्र मिले थे। इसीसे आगे चल कर पांडवों की उत्पत्ति हुई (म. व. २८७-२८९)। इसका पुरुजित् नामक एक अतिरथि पुत्र था। द्रोण ने उसका वध किया (म. उ. १६९.२; भी. २३. ५; क. ४.७३)। इसे दस पुत्र और थे। उन सबका वध अश्वत्थामा ने किया (म. द्रो. १३१. १२९)। यह स्यमंतपंचक क्षेत्रमें गया था (भा. १०.८२.२५)। इसका वध द्रोण ने किया (म. क. ४.७३.)। क्रथपुत्र कुंति तथा यह एक नहीं है। वह इससे भी प्राचीन है।

कुंती—यदुकुलोत्पन्न शूर राजा की कन्या तथा वसुदेव की भगिनी।

महाभारत में उल्लेख है कि, कुंतिभोज राजा ने इसे दत्तक लिया था (म. आ. ६१.१२९ परि. १ क्र. ४३)। चंबल नदी को मिलनेवाली अश्वरथ अथवा अश्व नदी के किनारे, कुंतिभोजक नामक नगर में इसका जन्म हुआ। इस नगर को कुंति देश कहा गया है (म. भी. १०. ४१; वि. १.१३; बृहत्संहिता. १०.१५)।

कुंतिभोज राजा ने अतिथिसत्कार के लिये कुंती की योजना की। यह कार्य इसने उचित ढंग से किया। दुर्वास की कडी सेवा कर के इसने उन्हें प्रसन्न कर लिया। भविष्य में कुछ बाधाएँ खडी होगी, यह जान कर दुर्वास ने इसे एक वशीकरणमंत्र सिखाया। दुर्वास ने कहा, 'इस मंत्र से जिस देवता का तुम आवाहन करोगी, उस देवता के प्रभाव से तुम्हें पुत्र होगा।' अनंतर कुन्ती के मन में मन्त्रप्रतीति की जिज्ञासा खडी हुई। उस मंत्र का जप कर के इसने सूर्य को बुलाया। सूर्य को आते देख कर इसे विस्मय लगा। सूर्य से कुंती को कवचकुंडलयुक्त कर्ण नामक पुत्र हुआ। लोकभय से कुंती ने कर्ण को अश्वनदी में छोड दिया। उसका पालन राधा के पति अधिरथ ने किया (म. आ. १०४; अधिरथ देखिये)।

सयानी होने पर अनेक राजाओं से कुन्ती की मँगनियाँ होने लगी। इनराजाओं को बुला कर, कुंतिभोज ने इसका स्वयंवर किया। तब कुंती ने पांडु का वरण किया। तदुपरांत पांडु कुंती को ले कर हस्तिनापुर गया। (म. आ. १०५. ११३१)। मृगया के लिये गये पांडु ने, मृगरूप धारण कर के मैथुन करनेवाले किंदम ऋषि का वध किया। इस समय ऋषि की शापवाणी हुईः "इसी प्रकार रतिक्रीडा के ही साथ मौत तुम्हें उठा लेगी"। इससे पांडु का पुत्रोत्पादन का मार्ग बंद हो गया। स्वर्गप्राप्त्यर्थ अपत्य की जरूरी होने के कारण, पांडु ने श्रेष्ठजाति के पुरुषों से पुत्रोत्पादन करने की कुंती

को आज्ञा दी। तब इसने उसका निषेध किया। इस बारे में भद्रा का अनुकरण करने का इसने निश्चय किया। परंतु श्वेतकेतु का नियम बता कर, पांडु ने पुनः वही आज्ञा की। तब दुर्वास के द्वारा दिये गये मंत्रप्रभाव से यमधर्म, वायु तथा इन्द्र को बुला कर इसने युधिष्ठिर, भीम तथा अर्जुन को जन्म दिया। पुनश्च पांडु ने पुत्रोत्पादन करने कहा, जिसे इसने अमान्य कर दिया। बाद में, पांडु की प्रार्थनानुसार कुंती ने माद्री को अपना मंत्र दिया। तब माद्री से नकुल तथा सहदेव ये जुडवाँ पुत्र उत्पन्न हुए। यही पाँच पुत्र पांडव हैं (म. आ. १०९.१११-११५)।

बचपन की साधारण लीलाओं में भी, पांडवों ने कौरवों पर विजय प्राप्त की। पांच पांडव सौ कौरवों को बिल्कुल ही त्रस्त कर डालते थे। भीम तो कौरवों की नाक में दम करता था। इससे कौरवपांडवों में विरोध उत्पन्न हुआ (म. आ. ११९)।

इसलिये दुर्योधन ने धृतराष्ट्र के द्वारा, पांडव तथा कुंती को वारणावत में यात्रा के लिये भेजा। वहाँ पुरोचन-द्वारा जतुगृह बनवा कर दुर्योधन ने पांडवों के नाश की सिद्धता थी। परंतु विदुर की सूचनानुसार सुरंग खुदवा कर, पांडवों ने अग्नि से अपनी रक्षा की। एक भीलनी उस गृह में अपने पांच बच्चों के साथ सो रही थी। वह अपने बच्चों के साथ जल कर मर गई। जतुगृह की रचना करनेवाला पुरोचन भी जल कर मर गया। भीलनी तथा उसके पांच पुत्रों के शव देख कर, कौरवों ने मान लिया कि, पांडवों का नाश हो गया। उसकी उत्तर-क्रिया भी की। परंतु पांडव वन में सुरक्षित घूम रहे थे (म. आ. १३०-१३७)।

कुंती का स्वभाव परोपकारी था। व्यास की अनुमति से, पांडव कुंती के साथ एकचक्रा नगरी में आ कर रहने लगे। वहाँ वे भिक्षा मांग कर अपना उदरभरण करते थे। एक ब्राह्मण के घर ये लोग रहाते थे। एक दिन कुंती तथा भीम ने उस ब्राह्मण पर आई हुई विपत्ति सुनी। बकासुर को तीस मन भात, दो भैंसे तथा एक आदमी देने की नौबत उस ब्राह्मण पर आई थी। तब धर्म के विरोध को न मानते हुए, कुंती ने भीम को भेज कर बकासुर का वध करवाया। उस ब्राह्मणकुटुंब को संकट से मुक्त किया। इसलिये सब लोगों ने एक ब्रह्मोत्सव भी किया (म. आ. १४५-१५२)।

द्रोणाचार्य के नेतृत्व में, कौरवपांडवों ने शस्त्रास्त्रविद्या संपादन की। एक दिन उनकी परीक्षा लेने के लिये नियत हुवाँ, तथा उसके लिये एक विस्तीर्ण मंडप भी बनाया गया। सब पांडवकौरव वहाँ अपना कौशल्य दिखा रहे थे। तब कर्ण वहाँ आया। उसने कहा की, मैं अर्जुन से भी जादा कौशल्य दिखा सकूँगा। कर्ण ने अर्जुन को युद्ध का आवाहन किया। कुंती सत्यस्थिति जानती थी। इस लिये, यह देख कर वह मूर्च्छित हो गई। इसी समय इसने कर्ण को प्रथम पहचाना होगा (म. आ. १२३-१२६)। कर्ण दुर्योधन के पक्ष के मिल गया, यह देख कर कुंती ने उसका जन्मवृत्त उसे बता कर पांडवों का पक्ष लेने के लिये कहा; परंतु कर्ण ने यह मान्य नहीं किया। कुंती ने विदुर को भी बताया कि, कर्ण उसका पुत्र है (म. उ. १४२-१४४)।

भारतीय युद्ध के बाद, सब स्त्रियाँ गंगा के किनारे अपने प्रियजनों के लिये शोक कर रही थी। तब कुंती ने धर्म से कहा कि, कर्ण तुम लोगों का भाई था। तब धर्म को अत्यंत दुःख हुआ। उसने कहा, 'इसके बाद स्त्रियों के मन में कुछ भी गुप्त न रहेगा' (म. स्त्री. २७.८०)। कुंती धृतराष्ट्र के साथ वन में गई। युधिष्ठिर ने काफी मनाया, परंतु यह वापस न आई (म. आश्व. २२.३-१७)। अरण्य में दावानल लगा। तब गांधारी, कुंती तथा धृतराष्ट्र ने अग्नि-प्रवेश किया (म. आश्व. ३९.३१)।

कुंतीभोज—(सो. यदु.) भविष्य के मत में क्राथ-पुत्र। वृषपर्वा की कन्या का पुत्र पूरु, तथा पूरु के पुत्री का पुत्र कुंतीभोज। यह कुंतीभोज नगर में रहता था। अन्य पुराणों में यही कुन्ति है (कुंति ३. देखिये)।

कुंददंत—एक ब्राह्मण। इसके दांत कुंदकलिकाओं के समान थे, इसलिये इसे यह नाम प्राप्त हुआ। यह विदेहदेश में रहता था। इसे आत्मज्ञान प्राप्ति की इच्छा हुई। तब गृह छोड़ कर यह अरण्य में घूमने लगा। इसने कदंब को अपनी ज्ञानप्राप्ति की इच्छा दिखाई। परंतु अभी तक इसने अपने इंद्रियों को पूर्ण रूप से नहीं जीता, यह देख कर कदंब ने इसे अयोध्या जाने के लिये कहा। उस कथनानुसार सब उपाधियों को छोड़ कर, यह अयोध्या में राम के पास रहने लगा। वसिष्ठ के मुख से मोक्षोपाय नामक संहिता श्रवण कर के इसे आत्मज्ञान प्राप्त हो गया (यो. वा. ६.१८०-१८६)।

कुपट—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कुपति—अष्टभैरवों में से एक। इसे ही कपालिन् नाम है।

कुबेर---वैवस्वत मन्वन्तर के विश्रवा ऋषि का पुत्र। इसकी माता का नाम इड़विड़ा अथवा मंदाकिनी दिये गये है (विश्रवस् देखिये)। यह पुलस्त्य तथा गो का पुत्र था (म. व. २५८.१२)। इस लिये इसे वैश्रनण तथा ऐड़विड़ कहा गया है (म. उ. १३६; श. ४६.२२)। ब्रह्मा ने इसे राक्षसगणोंसहित लंका, पुष्पक विमान, यक्षों का आधिपत्य, राजराजत्व, धनेशत्व, अमरत्व, लोकपालत्व, रुद्र से मित्रता तथा नलकूबर नामक पुत्र आदि दिये। उनमें से रावण ने लंका तथा पुष्पक ले लिये (म. व. २५८-२५९)। लंका इसने रावण को स्वयं दे दी। पुष्पक विमान, रावणद्वारा युद्ध में इसे पराजित कर के लिया गया (वा. रा. अर. १५.२२)। धनपतित्व के लिये तपस्या कर के, यह कुबेर हो गया। जिस स्थान पर इसने तपस्या की, उस स्थान पर कौबेरतीर्थ बना (म. श. ४६.२२)। इस स्थान पर इसकी मूल नगरी अलकावती है। इसी तप के कारण उपरोक्त वस्तुयें इसे प्राप्त हो गई (शिव. रुद्र. १.१९)। पार्वती की ओर आँखे मिचमिचा कर देखने से इसकी बाँई आँख नष्ट हो गई, तथा दाहिनी पीली पड गई। इस लिये इसे एकाक्षपिंगलिन् नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. १३)। इसे मणिग्रीव तथा नलकूबर नामक दो पुत्र थे (भा. १०.९.२२-२३)। यह उत्तराधिपति है तथा उत्तर की ओर स्थित यक्षलोक में रहता है। वृद्धि तथा ऋद्धि इसकी शक्तियाँ हैं। मणिभद्र (वा. रा. उ. १५), पूर्णभद्र, मणिमत्, मणिकंधर, मणिभूप, मणिस्त्रग्विन्, माणिकार्मुकधारक नामक यक्ष इसके सेनापति हैं (दे. भा. १२.१०)। इसकी कुबेरसभा नामक एक सभा है। इस सभा में, यह ऋद्धि तथा अन्य सौ स्त्रियों के साथ बैठता है। इसे नलकूबर नामक एक पुत्र था (म. स. १०.१९)। कुबेर की एक पत्नी का नाम भद्रा दिया गया है (म. आ. १९१.६)। यक्षों के अधिपतित्व के लिये इसने कावेरीनर्मदासंगम पर तप किया, तब शिवकृपा से इसकी इच्छा पूरी हुई (पद्म. स्व. १६)। गंधमादन पर्वत में स्थित संपत्ति का चतुर्थांश भाग इसके काबू में है। इसी संपत्ति का षोडशांश मानवों को दिया है। यह अपने राक्षसों सहवर्तमान गंधमादन पर्वत के शिखर पर रहता है (पद्म. स्व. ३.)। मेरुपर्वत के उत्तर में स्थित विभावरी इसका एक वासस्थान है (भा. ५. २१. ७)। कैलास पर्वत पर यह राक्षस अप्सराओं के साथ रहता है। सौगंधिक नामक वन इसका है (भा. ४.६.२३)। यह अलकाधिप हैं। कैलास के दक्षिण भाग में वैद्युत नामक पर्वत है। उसकी तराई में मानससरोवर है। वहाँ सरयू नदी का उद्गम होता है। उसके किनारे वैभ्राज नामक एक दिव्य वन है। वहाँ प्रहेतृपुत्र ब्रह्मधान नामक एक राक्षस रहता है। वह कुबेर का सेवक है (वायु. ४७.१८)। यह उस प्रदेश में रहनेवाले यक्ष, राक्षस, पौलस्त्य तथा अगस्ति लोगों का राजा तथा अलकाधिप है (वायु. ६९.१९६)। यह सूर्य के उत्तर की ओर रहता है (भवि. ब्राह्म. १२४)। अर्जुन को शिवदर्शन होने के बाद, वरुण के समान इसने भी अर्जुन को दर्शन दिया तथा एक अस्त्र दिया (म. व. ४२.७.)। द्रौपदी की प्रार्थनानुसार, भीम ने कुबेर के उपवन के सरोवर में खिले कमल, वहाँ के राक्षसों का कथन न मानकर ले लिये। कुबेर ने इसे नहीं रोका (म. व. १५२)। जब इसे पता चला कि, भीम ने मणिमान का वध किया तब यह क्रोधित हो गया, तथा सेनासहित पांडवों के पास गया। एक दूसरे को देख कर पांडव तथा यह आनंदित हुए। कुबेर ने पांडवों को योग्य उपदेश किया तथा कहा कि, इन्द्र अर्जुन की प्रतीक्षा कर रहा है (म. व. १५९)। पूर्वजन्म में यह कांपिल्य नगरी में अग्निहोत्री यज्ञदत्त का **गुणनिधि** नामक पुत्र था (शिव. रुद्र. स. १९)। ब्राह्मण क्षत्रिय एकता से राज्यसुख की वृद्धि होती है, इस विषय पर मुचकुंद से कुबेर का संवाद हुआ था (म. शां. ७५)। ध्रुव का यक्षों से युद्ध होने के बाद, इसने उसे उपदेश किया (भा. ४.१२.२)। इसे सोम नाम भी है। इसी लिये उत्तर दिशा को सौम्या नाम प्राप्त हुआ है।

कुबेर वारक्य---जयंत वारक्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

कुबेराणि---अंगिरासकुल का गोत्रकार।

कुब्जा---एक विरूप स्त्री। दुर्दैव से इसे बाल्यावस्था में ही वैधव्य प्राप्त हुआ। इसने साठ वर्षों तक अपना जीवन पुण्यकर्म में व्यतीत किया। प्रत्येक वर्ष माघस्नान भी किया। तदनंतर यह वैकुंठलोक में गई। सुंदोपसुंदों का नाश करने के लिये, इसने तिलोत्तमा के नाम से अवतार लिया। इसके हावभावों से मोहित हो कर, सुंदोपसुंद एक दूसरे से लड मरे। तब इसका अभिनंदन कर, ब्रह्मदेव ने इसे सूर्यलोक में स्थान दिया (पद्म. उ. १२६)।

२. कंस की दासी। यह शरीर के तीन स्थानों में वक्र थी। कंस ने धनुर्याग के लिये कृष्ण तथा बलराम को

मथुरा में लाया। तब कृष्णप्रसाद से इसका शरीर सरल हुआ (भा. १०.४२; ब्रह्म. १९६)।

३. कैकयी की मंथरा नामक दासी का अन्य नाम (मंथरा देखिये)।

कुमार—ब्रह्मदेव का मानसपुत्र तथा प्रजापति (वायु ६६.५३)। वायुपुराण में, ब्रह्मदेव के सनक, सनंद, सनातन तथा सनत्कुमार इन पुत्रो के लिये कुमार नाम की योजना की गई हैं। ये ब्रह्ममानसपुत्र सर्वदा पांच छः वर्ष के बालकों के समान दीखते हैं। इसी लिये इन्हें कुमार कहा गया है।

यह अपने भ्राताओं सहवर्तमान जब वैकुंठ गया था, तब द्वारपालों ने इसे प्रतिबंध किया। इसलिये इसने उन्हें शाप दिया (भा. ७.१.३७)। इसने सांख्यायन को भागवत कथन किया (भा. ३.८.७)।

२. स्कंद देखिये।

३. अनल नामक वसु को स्वाहा से उत्पन्न पुत्र।

४. सोम नामक शिवावतार का शिष्य।

५. शिल्पशास्त्र पर लिखनेवाले अठारह वास्तुशास्त्रकारों में से एक (मत्स्य. २५२.२)।

कुमार आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ७.१०१; १०२)। वत्स देखिये।

कुमार आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२.१; ३–८; १०–१२)।

कुमार यामायन—(ऋ. १०.१३५)।

कुमार हारित—गालव का शिष्य। इसका शिष्य कैशोर्य काप्य (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। रेत का महत्त्व वर्णन करते समय बताई गई आचार्यपरंपरा में, इसका नाम है (बृ. उ. ६.४.४)।

कुमार हैहय—एक राजा। एक बार मृग समझ कर इसने एक ऋषिपुत्र का वध किया। तब इसे अत्यंत पश्चात्ताप हुआ। वह ऋषिपुत्र कौन होगा, उसकी इसने खोज की। खोजतेखोजते यह अरिष्टनेमि तार्क्ष्य के आश्रम में गया, तथा उन्हें वंदन कर नीचे बैठा। इतने में मारा गया हुआ ऋषिपुत्र वहाँ आया। उसे देख कर राजा को आश्चर्य हुआ। यह ऋषि से कुछ पूछने ही वाला था कि, ऋषि ने कहा, हे राजा, तुम आश्चर्य मत करो। हमलोग तपोबल से इच्छामरणी बन चुके हैं। इसलिये, तुम्हारे हाथों ब्रह्महत्या हुई, ऐसी शंका मन में मत लाओ। इतना सुन कर यह अपने नगर में गया (म. व. १८२)। यह हैहय नाम से प्रसिद्ध है, लेकिन वंशावलि में अप्राप्य है।

कुमारी—चित्रलेखा देखिये।

२. धनंजय की पत्नी।

कुमुद—विष्णु के पार्षदगणों में से एक (भा. ८.२१)।

२. गोमती नदी के किनारे, रम्यक पर्वत पर रहनेवाला रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. २६)। अकंपन के साथ हुए युद्ध में इसने काफी पराक्रम दिखाया (वा. रा. यु. ५५)।

३. कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

४. वायु, विष्णु, ब्रह्मांड तथा भागवत मतानुसार व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा के पथ्य का शिष्य।

कुमुदाक्ष—एक नाग। कश्यप एवं कद्रू का पुत्र (म. आ. ३१.१५)।

२. मणिवर तथा देवजनी का पुत्र। इनके पुत्रों का साधारण नाम गुह्यक है।

कुमुदेक्षण—विष्णु का पार्षद।

कुमुद्वती—दाशरथि राम की स्नुषा तथा कुश की दूसरी स्त्री। अतिथि राजा इसी का पुत्र था। चंपका इसकी सौत थी। उसे पुत्र न था, इसलिये इसका पुत्र अतिथि सूर्यवंश का विस्तार करनेवाला हुआ। एक बार जलक्रीडा करते समय, कुश के हस्तभूषण सरयू में गिर पड़े, जिन्हें कुमुद नाग की बहन कुमुद्वती नागलोक ले गयी। कुश ने क्रोधित हो कर सरयू को सोखने के लिये हाथ में धनुषबाण लिया। तब कुमुद नाग ने हस्तभूषणसहित कुमुद्वती कुश को अर्पित कर दी (आ. रा. विवाह. ४)।

२. मयूरध्वज राजा की स्त्री तथा ताम्रध्वज राजा की माता।

कुंपत—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कुंभ—प्रल्हाद दैत्य के पुत्रों में से एक (म. आ. ५९.१९)।

२. कुंभकर्ण का ज्येष्ठ पुत्र (कुंभनिकुंभ देखिये)।

३. लंका का एक सामान्य राक्षस (भा. ९. १०. १८)।

४. हिरण्याक्ष की सेना का एक असुर। कुबेर से यह युद्ध कर रहा था, तब कुबेर ने इसके सब दांत गिरा दिये। यह कुबेर की मदद को आनेवाले इंद्र पर झपटा। इंद्र ने वज्रप्रहार कर इसका वध किया (पद्म. सृ. ७५)।

कुंभकर्ण—रावण का छोटा भाई। वैवस्वत मन्वंतर में, पुलस्त्यपुत्र विश्रवा ऋषि को कैकसी से उत्पन्न चार पुत्रों में दूसरा। भागवत के मत में, केशिनी इसकी माता

थी। इसने जन्मते ही हजारों लोगों को खा डाला। तब इसकी शिकायत ले कर लोग इंद्र के पास गये। इंद्र ने क्रोधित हो कर इस पर वज्र फेंका। कुंभकर्ण हाथ पैर पटक कर और भी गर्जना करने लगा। इस कारण लोगों को अधिक कष्ट होने लगे। इसने ऐरावत का एक दांत उखाडकर इंद्र पर फेंका, तथा इंद्र को रक्तरंजित कर दिया। ब्रह्मदेव को इस बात का पता चला। तब उन्होंने लोकसंरक्षणार्थ इसे सदा निद्रित रहने का शाप दिया। रावण की प्रार्थना पर, इसे छः माहों में एक दिन जागने का ब्रह्मा ने उःशाप दिया (वा. रा. यु. ६१)। कुबेर की बराबरी करने के लिये, रावणादि के साथ इसने भी गोकर्णक्षेत्र में दस हजार वर्षों तक तपस्या की। जब ब्रह्मदेव इसे वरदान देने लगे, तो देवों ने विरोध किया। देवों ने कहा, इसने नंदनवन के सात अप्सरायें, इन्द्र के दस सेवक, उसी प्रकार अन्य कई लोग तथा ऋषियों का भक्षण किया है। इसलिये इसे वर मत दो। देवों की इच्छा सफल हों, इसलिये ब्रह्मदेव ने सरस्वती को बुलाया तथा उसकेद्वारा कुंभकर्ण को उपदेश करवाया। तब इसने दीर्घकालीन निद्रा मांगी। ब्रह्मदेव 'तथास्तु' कह कर चला गया। पीछे यह पछताने लगा, परंतु उसका कुछ लाभ नही हुंवा (वा. रा. उ. १०)।

कुबेर की लंका रावण ने छीन ली। तब रावण के साथ यह भी लंका में गया। वहाँ जाने पर विरोचनपुत्र बलि की पौत्री वज्रज्वाला से इसका विवाह हुआ (वा. रा. उ. १२)। रावण ने अपने निद्राप्रिय बंधु के सोने की उत्कृष्ट व्यवस्था कर रखी थी। उसने विश्वकर्मा से चार कोस चौडा तथा आठ कोस लंबा एक सुंदर घर बनवाया। वहाँ यह सदैव निद्रिस्त पडा रहता था (वा. रा. उ. १३)। जाग्रत रहने पर, यह सभा में भी आता था। युद्ध होने के पहले बुलाई गई एक सभा में यह उपस्थित था। वहाँ सीताहरण के लिये इसने रावण को दोष दिया। फिर भी रावण से इसने कहा, "मैं भविष्य में सब प्रकार से तुम्हारी सहायता करूंगा (वा. रा. यु. १२)। तदनंतर अनेक योद्धाओं की मृत्यु के बाद, रावण अकेला ही राम से युद्ध कर रहा था। तब रावण का पराभव हुआ। रणांगण से वापस आने के बाद उसे अपने बंधु का स्मरण हुआ। उसने यूपाक्ष को कुंभकर्ण को जाग्रत करने के लिये भेजा। युद्ध के संबंध में प्राथमिक चर्चायें जिस सभा में हुईं, वहाँ कुंभकर्ण उपस्थित था। तब से जो कुंभकर्ण सोया था, वह नौ महीने हो जाने पर भी सोया ही रहा। इसे जाग्रत करने के लिये आये हुए लोगों ने, यह जाग्रत होते ही खाने के लिये मृग, महिष तथा वराह के बडे बडे ढेर इसके द्वार के पास रख दिये। अन्न की ढेरियाँ तैय्यार की। रक्त, मांस तैय्यार किया। चन्दन का लेप इसके शरीर को लगाया। सुगंधित द्रव्य सुंघाये। भयंकर आवाज की। फिर भी कुछ परिणाम नहीं हुआ। तब इसके वक्षस्थल पर प्रहार करना प्रारंभ किया। इसके कान में पानी डालना, काट खाना आदि प्रयत्न हुए। जब इसके शरीर पर हजार हाथी घुमाये, तब कहीं यह जाग्रत हुआ। जम्हाई लेते हुए सामने रखी हुई सब सामग्री इसने भक्षण की। धीरे से लोगों ने सारा वृत्त इसे कथन किया। तब यह तुरंत युद्ध करने के लिये ही निकला। परंतु महोदर ने सुझाया कि, पहिले रावण की सलाह ले कर, फिर युद्ध के लिये जाना अधिक योग्य रहेगा। तब यह बंधु के पास गया। वहाँ इसने प्रथम रावण को ही उपदेश की चार बातें सुनायीं। परंतु रावण को यह उपदेश पसंद नहीं आया। तब रावण खुप हो, ऐसी बातें कहने का प्रारंभ इसने किया। महोदर ने सुझाया कि, यदि रावण की मृत्यु हो गई है, यों अफवाएं चारों ओर फैला दी, तो सीता स्वयं ही शरण आ जावेगी। तब कुंभकर्ण ने इस मार्ग का तिरस्कार किया तथा युद्ध का पुरस्कार किया।

यह रणांगण में दाखल हुआ। इसका प्रचंड शरीर देख कर बंदरसेना भयभीत हो कर भागने लगी। परंतु सब को धीरज दे कर, अंगद ने एकत्रित किया। प्रथम इसने शूल से हनुमान को आहत किया। तब अपनी सेना को नील ने धीरज बंधाया। ऋषभ, शरभ, नील तथा गवाक्ष को कुंभकर्ण ने खून की उलटी करवाई। बंदरों से भरे वृक्ष के समान कुंभकर्ण का शरीर दिखने लगा। कुंभकर्ण के द्वारा फेंका गया शूल अंगद ने बडी युक्ति से बचा लिया, तथा इसकी छाती पर प्रहार कर, इसे मूर्च्छित किया। होश में आते ही, अंगद को कुंभकर्ण ने बेहोश किया।

सुग्रीव को लेकर यह लंका की ओर चला गया। तब सुग्रीव ने इसके नाक, कान तोड दिये तथा वह राम के पास लौट आया। उस विद्रूप स्थिति में भी, यह लौट आया तथा इसने भयंकर युद्ध किया। अन्त में राम तथा लक्ष्मण के साथ युद्ध करते समय अर्धचन्द्र बाण से राम ने इसके पैर तोड दिये। तब इसका भयंकर शरीर भूमि पर गिर पडा। फिर भी मुँह फैला कर राम की ओर सरकते हुए आने का यह प्रयत्न कर ने लगा। तब ऐन्द्रबाण से राम

ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ६०-६७)। रामायण के अनुसार इसका वध राम ने किया। परंतु महाभारत के अनुसार लक्ष्मण ने किया (म. व. २७१-१७)। इसका शरीर गिरने से लंका के अनेक गोपुर भग्न हो गये (म. व. २८६-८७)। इसे कुंभनिकुंभ नामक दो बलाढ्य पुत्र थे।

कुंभनाभ—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कुंभनिकुंभ—कुंभकर्ण को वृत्रज्वाला से उत्पन्न दो पुत्र। ये अत्यंत पराक्रमी तथा बलवान् थे। रावण ने जब इन्हें रामसेना से लड़ने के लिये भेजा, तब इन्होंने भयंकर युद्ध किया। अन्त में सुग्रीव ने कुंभ का तथा हनुमान ने निकुंभ का वध किया (वा. रा. यु. ७५-७७)।

कुंभमान—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कुंभयोनि—अगस्त्य ऋषिका नामांतर।

२. द्रोणाचार्य को भी यह नाम दिया जाता है (म. द्रो. १५९.४)

कुंभरेतस्—भारद्वाज अग्नि तथा वीरा का पुत्र। इसे शरयू नामक स्त्री तथा सिद्धि नामक पुत्र था। वीर, रथप्रभु तथा रथाध्वान ये नाम इसीके ही है। यह एक प्रकार का अग्नि है (म. व. २०९)।

कुंभहनु—प्रहस्त का सचिव। इसका वध तार नामक बंदर ने किया (वा. रा. यु. ५८)।

कुंभांड—बाणासुर का मंत्रि। बलि के मंत्रियों में श्रेष्ठ (नारद. १.१०)। चित्ररेखा का पिता (भा. १०.६२)। बलराम के साथ इसका युद्ध हो कर उसीमें इसकी मृत्यु हुई (भा. १०.६३)।

२. दंडीमुंडीश्वर नामक शिवावतार का शिष्य।

कुंभीनसी—बलि दैत्य की कन्या तथा बाणासुर की भगिनी (मत्स्य. १८७.४१)।

२. सुमाली राक्षस को केतुमती से उत्पन्न चार कन्याओं में कनिष्ठ। रावणमाता कैकसी की यह भगिनी थी।

३. माल्यवान् राक्षस की कन्या अनला को विश्वावसु राक्षस से उत्पन्न कन्या। मधु नामक राक्षस ने इसका हरण किया तथा इससे विवाह किया। उससे इसे उत्पन्न पुत्र लवणासुर नाम से प्रख्यात है।

४. पुष्पोत्कटा को विश्रवा ऋषि से उत्पन्न कन्या (लिंग. १.६३)।

५. अंगारवर्ण गंधर्व की स्त्री।

६. चित्ररथ गंधर्व की स्त्री (म. आ. १५८.३१)।

कुंभोदर—राम को तीर्थयात्रा करवानेवाला एक ऋषि (आ. रा. याग. ५-६)।

कुयव—कुत्स के लिये इसका वध इन्द्र ने किया (ऋ. २.१९.६)।

कुयवाच्—इन्द्र ने दुर्योण के लिये इसका वध किया (ऋ. १.१७४.७)।

कुरु—(स्वा. प्रिय) आग्नीध्र को पूर्वचित्ती से उत्पन्न सातवाँ पुत्र। इसकी पत्नी मेरुकन्या नारी है। इसका वर्ष इसीके नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५.२.१९-२१)।

२. (सो. अज.) संवरण को तपती से उत्पन्न पुत्र। इसकी पत्नियों के नाम शुभांगी तथा वाहिनी। शुभांगी के पुत्र का नाम विदूरथ (म. आ. ९०-४१)।

वाहिनी के पुत्र के नामः-अश्ववत् (अविक्षत्), अभिष्वत्, चित्ररथ, मुनि तथा जनमेजय (म. आ. ८९.४४)। भागवत के मत में परीक्षित्, सुधनु, जह्नु तथा निषधाश्व। परंतु मत्स्य में निषधाश्व के बदले प्रजन है (मत्स्य. ५० २३)। भविष्य मत में यही अहीनजपुत्र है। वैदिक वाङ्मय में कुरु का उल्लेख है (जै. उ. ब्रा. १.३.८.१)। इससे सुप्रसिद्ध कुरुवंश प्रारंभ हुआ। इसके वंशजों को कौरव कहते हैं। इसीकी तपश्चर्या से कुरुजांगल प्रदेश कुरुक्षेत्र नाम से प्रसिद्ध हुआ (म. आ. ८९.४३)। कुरुक्षेत्र की पवित्रता तथा वहाँ का सदाचार वेदकाल से प्रसिद्ध है। उपनिषदों में कुरुपांचाल देश के तत्त्वज्ञ का निर्देश आया है (कौ. उ. ४.१. बृ. उ. ३.१.१,६.१.९) कुरुक्षेत्र का माहात्म्य अनेक पुराणों में हैं। वश, उशीनर-सहित कुरुपांचाल मध्यप्रदेश है (ऐ. ब्रा. ८.१४)।

३. यह एक विशिष्ट लोगों का नाम है (देवभाग श्रौतर्ष देखिये)।

कुरुंग—देवातिथि काण्व ने इसके दान की प्रशंसा की है। यह तुर्वसों का राजा था (ऋ. ८.४.१९)। कदाचित् यह कुरुवंश का होगा (नि. ६.२२)।

कुरुवत्स—(सो.) भविष्य के मत में नवरथपुत्र।

कुरुवश—(सो. क्रोष्टु.) मधुराजा का पुत्र। इसका पुत्र अनु (भा. ९.२४.५)।

कुरुश्रवण त्रासदस्यव—त्रसदस्यु का पुत्र। इसके दान की कवष ऐलूश ने प्रशंसा की है (ऋ. १०.३३.४-५)। इसी सूक्त में, मित्रातिथि की मृत्यु के बाद उसके पुत्र उपमश्रवस् का समाचार लेने के लिये कवष ऐलूश के आने का निर्देश है। वास्तविक रूप से, इस सूक्त में आये

हुए दो घटनाओं का कुछ संबंध नहीं है, यह सायणमत योग्य है। कवष केवल सूक्तकार है (बृहद्दे. ७.३५-३६)।

कुरुसुति काण्व—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.७६-७८)।

कुल—दाशरथि राम की सभा का एक हास्यकार।

२. दाशरथि राम की सेना का एक वानर।

कुलक—(सू. इ.) रणक राजा का नामांतर।

२. (सू. इ. भविष्य.) मत्स्य के मत में क्षुद्रकपुत्र। इसे भागवत में रणक, विष्णु में कुंडक तथा वायु में क्षुमिक कहा है।

कुलह—कश्यप कुल का एक गोत्रकार।

कुलिक—कद्रूपुत्र एक नाग (म. आ. ५९.४०)।

कुल्मलबर्हिस्—सामद्रष्टा (तां. ब्रा. १५.३.२१)।

कुल्मलबर्हिस् शैलूष—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१२६)।

कुवल—वीरवर्मन का पुत्र (वीरवर्मन् देखिये)।

कुवलयाश्व—(सो. काश्य.) एक चक्रवर्ति राजा (मै. उ. १.४)। दिवोदासपुत्र प्रतर्दन का नामांतर। इसेही कुवलाश्व, द्युमत्, शत्रुजित् तथा ऋतुध्वज नामांतर हैं। भविष्य के मत में यह बृहदश्व का पुत्र था।

कुवला—हंसध्वज की कन्या तथा सुधन्वा की भगिनी।

कुवलाश्व—(सू. इ.) बृहदश्व राजा का पुत्र। वन में जाते समय, बृहदश्व ने इसे उत्तंकाश्रम को पीड़ा देने वाले, धुंधु नामक दैत्य का पारिपत्य करने के लिये कहा। तब उत्तंक को साथ ले कर यह धुंधु के निवासस्थान पर गया। धुंधु दैत्य उज्जालक नामक बालुकामय समुद्र के तल में, अपने अनुयायियोंसहित सोया था। तब कुवलाश्व ने अपने दृढाश्वादि सौ पुत्रों को—भागवत में पुत्रसंख्या २१००० दी गई है (९.६)—उस बालुकामय सागर की बालुका हटाने के लिये कहा। संपूर्ण बालुका हटाने के बाद धुंधु बाहर आया। उस समय, उसके मुख से अग्नि की ज्वालायें निकल रही थी। उन ज्वालाओं से कुवलाश्व के दृढाश्व, कपिलाश्व तथा भद्राश्व को छोड़कर ..., सब पुत्र जल गये। अतः कुवलाश्व स्वयं धुंधु से लड़ने के लिये गया। तब विष्णु ने उत्तंक ऋषि को दिये वर के कारण अपना तेज कुवलाश्व के शरीर में डाला। तात्काल कुवलाश्व ने धुंधु का पराभव किया, तथा धुंधुमार नाम प्राप्त किया। कुवलाश्व के बाद दृढाश्व गद्दी पर बैठा (म. व. १९३; ह. वं. १.११; वायु. ८८; ब्रह्माण्ड. ३.६३.२९, ब्रह्म. ७; भा. ९.६; विष्णुधर्म. १.१६; कुवलयाश्व देखिये)।

मार्कंड मतानुसार कुवलाश्व शत्रुजित का पुत्र था (मदालसा देखिये)।

२. प्रतर्दन देखिये।

कुश—(सो. आयु.) भागवत मत में सुहोत्र राजा के तीन पुत्रों में दूसरा। इसका पुत्र प्रति। कुश राजा से कुशवंश प्रारंभ हुआ।

२. (सो. क्रोष्टु.) विदर्भ राजा के तीन पुत्रों में प्रथम।

३. (सो. पुरूरवस्.) अजक राजा का पुत्र। इसे कुशिक भी कहते थे। इसे कुशांबु, असूर्तरजस्, वसु तथा कुशनाभ नामक चार पुत्र थे। उन्हें कौशिक संज्ञा थी (ब्रह्मवै. २.१३)।

४. (सू. इ.) भविष्य के मत में दाशरथि राम का पुत्र। इसने १००० वर्षों तक राज्य किया (कुशलव देखिये)।

५. एक दैत्य। इसने शंकर से अमरत्व प्राप्त किया। इस कारण, विष्णु इसे मार नहीं सकता था। अन्त में इसका सिर जमीन में गाड़ कर उस पर शिवलिंग स्थापित किया। तब यह शरण आया (स्कंद. ७.४.२०)।

कुशकेतु—हेमकान्त देखिये।

कुशध्वज—रथध्वज राजा का पुत्र तथा वेदवती का पिता (वेदवती देखिये)।

२. (सू. निमि) ह्रस्वरोमा नामक जनक के, दो पुत्रों में दूसरा। सीरध्वज जनक का कनिष्ठ बंधु। यह मिथिला में सांकाश्य नामक राजधानी में राज्य करता था (वा. रा. बा. ७१. १६-१९)। मांडवी तथा श्रुतकीर्ति इसकी दो कन्यायें थीं। वे दशरथपुत्र भरत तथा शत्रुघ्न को क्रमशः दी गई थीं। सीरध्वज को पुत्र न था। इसलिये उसके पश्चात् यह मिथिला का राजा बना था। इसके पुत्र का नाम धर्मध्वज जनक। कुछ स्थानों पर इसे सीरध्वज का पुत्र भी कहा गया है (भा. ९. १३; वायु ८९)।

३. बृहस्पति का पुत्र (बृहस्पति देखिये)।

४. एक राजा। पूर्वजन्म में यह वानर था। उस समय यह झूले पर स्थित शंकर को रात भर झुलाता था। उस पुण्यसंचय से इसे यह जन्म प्राप्त हुआ। इस जन्म में इसने दमनकव्रत किया। बाद में, अग्निवेश ऋषि की कन्या जब नग्नस्थिति में स्नान कर रही थी, तब इसने उसका हरण किया। इसलिये उस ऋषि ने इसे 'तुम गृध्र बनोंगे' ऐसा शाप दिया। परंतु इसने क्षमा मांगने पर उःशाप दिया, 'इन्द्रद्युम्न को सहायता करने से, तुम मुक्त हो जाओगे' (स्कन्द. १. २. १२)।

कुशनाभ—(सो. अमा.) कुश अथवा कुशिक राजा के चार पुत्रों में चौथा। इसने महोदय नामक नगरी की स्थापना की थी। इसकी सौ कन्यायें वायु के कोप से वक्र हो गई। उन्हें कांपिल्यपुरी के चुलिसुत ब्रह्मदत्त राजा को दिया गया। तब उनका शरीर सीधा हुआ। परंतु काम्पिल्य देश को कान्यकुब्ज नाम जो मिला, वह वैसा ही रहा (वा. रा. बा. ३२. ३३; भा. ९. १५)।

२. वैवस्वत मन्वन्तर का एक मनुपुत्र।

कुशरीर—वेदशिरस् नामक शिवावतार का शिष्य।

कुशल—यह तथा इसकी पत्नी दुराचारी थे। परंतु पुत्रद्वारा गया में पिंडदान किये जाने के कारण, इनका उद्धार हुआ (पद्म. उ. २१३)।

२. प्रियव्रत का प्रधान (गणेश. २.३२–१४)।

कुशलव—दाशरथि राम से सीता को उत्पन्न जुडवाँ पुत्र। लोकापवाद के भय से, राम ने सीता का त्याग करने का निश्चय किया। लक्ष्मण के द्वारा, उसे तमसा के किनारे वाल्मीकिआश्रम के समीप छोड दिया। यह वार्ता शिष्यों के द्वारा वाल्मीकि को ज्ञात हुई। तब आश्रम में मुनि पत्नियों के पास सीता की रहने की व्यवस्था उसने कर दी (वा. रा. उ. ४८–४९)।

बाद में श्रावण माह में, आधी रात के समय सीता प्रसूत हुई तथा उसे दो पुत्र हुए। जैसे ही वाल्मीकि को यह मालूम हुआ, वैसे ही बालकों की सुरक्षा के लिये वह दौडा। निचले हिस्से में तोडी हुई दर्भमुष्टि, अभिमंत्रित कर के उसने वृद्ध स्त्रियों को दी, तथा प्रथम जन्मे हुवे पुत्र के शरीर पर से घुमाने के लिये कहा। बाद में जन्मे पुत्र के शरीर से, दर्भ का ऊपरीला हिस्सा घुमाने के लिये कहा। इन दोनो पुत्रों का नाम क्रमशः कुश तथा लव रखने के लिये कहा (वा. रा.उ. ६६)। दर्भ तथा दूर्वांकुरों से इनके शरीर पर पानी सींचा गया, इस लिये इनके नाम कुश तथा लव रखे गये (जै. अ. २८)। जिस दिन लव तथा कुश का जन्म हुआ, उस दिन लवणासुर का पारिपत्य करने के लिये जाता हुआ शत्रुघ्न वाल्मीकि के आश्रम में ही था। यह वार्ता ज्ञात होते ही उसे अत्यंत आनंद हुआ। पद्मपुराण में लिखा गया है, लवणासुर का पारिपत्य कर के शत्रुघ्न जब वह वापस जा रहा था, तब वह आश्रम में आया था, परंतु सीता आश्रम में प्रसूत हो गई है, यह वार्ता वाल्मीकि ने उसे नहीं बताई (पद्म. पा. ५९)। यह कथन उपरोक्त कथन के ठीक विपरीत है।

इसके बाद वाल्मीकि ने इनके जातकर्मादि संस्कार किये। वेद एवं वेदों के दृढीकरण के लिये उन्हें रामायण सिखाया। धनुर्विद्या के समान क्षात्रविद्या में इन्हें निष्णात किया। बाद में अश्वमेध करने के लिये राम ने अश्वमेधीय अश्व छोडा। इन्हों ने उसे पकड लिया। उस अश्व के मस्तक पर लिखे हुए लेख ने इनका क्षत्रियत्व जाग्रत किया। उस लेख में लिखा थाः—

"एकवीराच कौसल्या तस्याः पुत्रो रघूद्वहः। तेन रामेण मुक्तोऽसौ वाजी गृह्णात्विमं बली"। यह देख कर लव ने कहा, "क्या हमारी माँ वंध्या है, क्या वह एकवीरा नहीं है?" मुनिकुमारों द्वारा निवारण किये जाने पर भी लव ने उनकी एक न सुनी। बल्कि कहा 'सीता का पुत्र हो कर भी, यदि मैंने तुम्हारे जैसा ही व्यवहार किया, तो मैं एक कुकर्मी ही सिद्ध हो जाऊंगा। अश्व रक्षा के लिये शत्रुघ्न नियुक्त था। उसने जब लव को मूर्च्छित किया, तब कुश ने आ कर शत्रुघ्न को मूर्च्छित किया। बाद में लक्ष्मण अपनी सेनासहित आया। लव ने जाग्रत हो कर, सूर्य से नया धनुष्य प्राप्त किया। लक्ष्मण, भरत तथा हनुमान का भी लव ने पराभव किया। तब राम को मजबूरी से रणांगण पर आना पडा। बिभीषण तथा सुग्रीव को ले कर राम रणांगण पर आया। दोनों कुमारों को देखते ही उसने "तुम ने धनुर्वेद किससे सीखा?, तुम्हारे माँ बाप कौन है?, आदि प्रश्न पूछे। अंत में राम ने कहा कि, जब तक तुम अपना कुल नहीं बताते, तब तक मैं युद्ध नहीं करूंगा। तब इन्होंने कहा, 'हम सीता के पुत्र हैं'। यह सुनते ही राम के हाथ से धनुष गिर पडा। सुग्रीव आदि ने बहुत प्रयत्न किये। फिर भी सब का वध कर, तथा राम को भी मूर्च्छित कर, दोनों बालक घर गये। ये हनुमान को सीता के मनोरंजन के लिये साथ लाये। परंतु सीता ने उसे वापस भेजने के लिये कहा। अब तक वाल्मीकि आश्रम में नहीं था। वापस आते ही, उसने पुत्र तथा पत्नी का स्वीकार करने के लिये राम से कहा। पश्चात् बालक अश्वों के संरक्षक बने तथा यज्ञ पूर्ण हुआ (जै. अ. २८–३६)।

वाल्मीकि रामायण में इस प्रसंग का उल्लेख नहीं है। इस ग्रंथ में लिखा है कि, कुशलव तथा राम की भेंट रामायणगान के कारण हुई। जिस समय राम ने अश्वमेध किया, तब अनेक कलाकार एकत्रित हुए थे। वाल्मीकि को भी बडे सम्मान से निमंत्रण मिला था। उसके साथ ये दोनों भी अयोध्या गये। वहाँ वाल्मीकिद्वारा सिखाया

गया रामायण महाकाव्य तालसुरों के साथ गाना इन्हीं ने प्रारंभ किया। ऋषियों के पवित्र स्थान, ब्राह्मणों के निवासस्थान, उपमार्ग, राजमार्ग, राजाओं के निवासस्थान, राम का निवासस्थान, तथा जहाँ ऋत्विजों के अनुष्ठान हो रहे थे, ऐसे स्थानों पर रामायण गाने का क्रम इन्होने जारी रखा। यह कभी इस मेल को बिगाड़ते नहीं थे। रोज ये बीस सर्गों का गायन करते थे। इन्हें वाल्मिकी की आज्ञा हुई थी कि, धन की अपेक्षा न की जाये। यदि कोई धन देने ही लगे, तो कहा जाये कि, हम मुनिकुमारों को धन की क्या आवश्यकता है? अगर किसी ने पूछा कि, तुम किसके पुत्र हो, तो ये कहते थे कि, हम वाल्मीकि के शिष्य है। परंतु रामायण-श्रवण से राम को पता चला कि, कुशलव उसीके पुत्र है (वा. रा. उ. ९३-९४)।

राम ने कोसल देश का राज्याभिषेक लव को किया। उत्तर कोसल का राज्यभिषेक कुश को किया (वा. रा. उ. १०७)। लव की सुमति तथा कंजानना नामक दो पत्नियाँ थीं, तथा कुश की चंपका नामक पत्नी थी (आ. रा. विवाह. ६-७)।

कुशाग्र—(सो. अज.) भागवत मत में उपरिचर वसु का पुत्र बृहद्रथ के दो पुत्रों में से दूसरा। जरासंध का कनिष्ठ बंधु। इसका पुत्र ऋषभ। परंतु वायु तथा मत्स्य पुराणों में जरासंध का उल्लेख कुशाग्रवंश में दिया है। अन्य पुराणों में यह स्वतंत्र वंश है।

कुशांब—(सो. अमा.) कुश अथवा कुशिक राजा के चार पुत्रों में प्रथम। इसे कुशांबु भी कहते थे। इसके द्वारा स्थापित नगरी का नाम कौशांबी। इसके पुत्र का नाम गाधि था (कुशिक देखिये)।

[illegible] ऋक्ष.) उपरिचर वसु राजा के पुत्रों में एक। यह [illegible] अधिपति था (भा. ९.२२)। इसे मणि[illegible]ांतर था (म. आ. ५७.१०)।

कुशांबु—कौशांबी नगरी में रहनेवाला एक राजा (कुशांब देखिये)।

कुशाल—(मौर्य. भविष्य.) ब्रह्मांड के मत में अशोक-पुत्र।

कुशावर्त—(स्वा. प्रिय.) एक राजा। ऋषभदेव तथा जयंती का पुत्र। इसका खंड इसीके नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५.४)।

कुशिक—(सो. अमा.) विश्वामित्र का पूर्वज (ऋ. ३.३३.५)। वैदिक ग्रंथों में इसके अनेक उल्लेख प्राप्य हैं (ऋ. ३.२६. १;२९.१५;३०.२०;४२.९; ऐ. ब्रा. १८; सां. श्रौ. १५.२७)। शुनःशेप की कथा में इस नाम है। यह भरतकुल का पौरोहित्य करता था। य विशेषतः इन्द्राराधना करता था। इसीलिये इन्द्र कौशिक कहते हैं (ऋ. १.१०.११; मै. सं. ४.५.७; ब्रा. ३.३.४.१९; तै. आ. १.१.४)

यह कुश का पुत्र था। भागवत मत में इसे कुशा विष्णु मत में कुशांब तथा वायु मत में कुशाम्ब नाम है इसका पुत्र गाधि तथा पौत्र विश्वामित्र। यह विश्वामित्रकु का एक गोत्रकार है। इसे इषीरथपुत्र कहा गया (वेदार्थदीपिका २)।

कुशिक महोदयपुर में रहता था। एक बार इसक श्वशुर, च्यवन इसके पास रहने के लिये आया उसका हेतु था, कि इनके कुल का नाश कर दिया जावे क्यों कि, आगे चल कर इसके वंश में संकर होनेवाल था। कुशिक ने स्त्री के साथ च्यवन की उत्कृष्ट सेव की, तथा अपने वंश को ब्राह्मणत्व प्राप्त करने का वरदा प्राप्त किया। उस प्रकार हुआ भी (म. अनु. ८७-९ कुं; विष्णुधर्म. १.१४)। इन्द्र के समान पुत्र हो, इस हेतु से कुशिक ने तपस्या की। इसलिये इंन्द्र ने इसक उदर से गाधि के रूप में जन्म लिया (ह. वं. १.२७ म. शां. ४८)।

कुशिककुल के मंत्रकार-अघमर्षण, अष्टक, देवरात देवश्रवस, धनंजय, पुराण, [illegible], [illegible], मधुच्छंदस, मामवृधि, लोहित, विश्वामित्र, शालंकायन, शिशिर (मत्स्य १४५.११२-११३)।

अघमर्ण, कत, कोल, पूरण, उद्गल, रेणु, ये ब्रह्मांड में अधिक है (२.३२.११७-११८)।

२. लकुलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

कुशिक ऐषारथि—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १.२१; कुशिक देखिये)।

कुशिक सौभर—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१२७)।

कुशिकंधर—अट्टहास नामक शिवावतार का शिष्य।

कुशीबल—भावशर्मा नामक एक ब्राह्मण। अत्यधिक ताड़ीसेवन से इसकी मृत्यु हुई। इसे ताड़ का जन्म प्राप्त हुआ। कुछ भी दान न करने के कारण, उस ताड़ प कुशीबल नामक ब्राह्मण, ब्रह्मराक्षस बन कर सहकुटुं रहता था। गीता के आठवें अध्याय का पाठ करने से

भावशर्मा और कुशीबल दांपत्य का उद्धार हुआ (पद्म. उ. १७८)।

कुशीलव—(सू. इ.) राम के पुत्र कुश तथा लव थे। इनके लिये वाल्मीकि रामायण में, सर्वत्र कुशीलव शब्द का प्रयोग आया है। आलोचक लिखते है कि, यह आर्ष प्रयोग है (वा. रा. बा. ४.५)। इनका कुश तथा लव नामकरण कर के (वा.रा.उ. ६६.९), वाल्मिकी जान-बूझ कर कुशीलव प्रयोग करता है यों ज्ञात होता है। कुशीलव शब्द का अर्थ, गुणगान का व्यवसाय करनेवाला बन्दीजन। वाल्मीकि ने अपना नाम न बताने की उनको आज्ञा दी थी, यह भी ध्यान में रखने की बात है। लोगों में कुशलव के लिये कुशीलव शब्द प्रयुक्त होने का यही कारण होगा (कुशलव देखिये)।

कुशुमिन्—ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के पौष्यंजि का शिष्य।

कुशुंभ—(सो.) भविष्य के मत में शकुनिपुत्र।

कुश्रि वाजश्रवस—वाजश्रवस् तथा राजस्तंबायन यज्ञवचस् का शिष्य। इसे अग्निचयन का ज्ञान था (श. ब्रा. १०.५.५.१)। इसके शिष्य उपवेशि तथा वात्स्य (बृ. उ. ६.५.३-४)।

कुषंड—सर्पसत्र में षंड नामक ऋत्विज के साथ इसका नाम आया है। इस सत्र में इसके पास अभिगिर (स्तुति) तथा अपगर (निंदा) नामक कर्म थे (पं. ब्रा. २५.१५.३; ला. श्रौ. १०.२०.१०)।

कुषीतक सामश्रवस—शमनीमेढ्र नामक व्रात्यों का यज्ञप्रमुख। यह व्रात्यों का मुख्य हुआ, इसलिये इसे लुशाकपि खार्गलि ने 'भ्रष्ट होगे' ऐसा शाप दिया। इसीलिये कौषीतकी शाखा के लोग (सांख्यायन), कहीं भी महत्त्वपूर्ण स्थान को प्राप्त नहीं हुए (पं. ब्रा.१७. ४.३)।

कुसीदकि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

कुसीदि—विष्णु मत में व्यास की सामशिष्यपरंपरा के पौष्यंजि का शिष्य।

कुसु—मणिवर तथा देवजनी का पुत्र।

कुसुदिन् काण्व—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.८१-८३)।

कुसुमामोदिनी—पार्वती की माता की सहेली। पार्वती तपस्या करने मंदराचल पर गयी। तब उसने इसे प्रार्थना की कि, वह उधर किसी को भी न आने दे (पद्म. सृ. ४४)।

कुसुमायुध—यह ब्रह्मदेव के हृदय से उत्पन्न हुआ (मत्स्य. ३.१०; काम देखिये)।

कुसुमि—सामवेदी श्रुतर्षि।

कुसुरुबिंद औद्दालकि—एक ऋषि पशुसंपत्ति प्राप्त करने के लिये, इसने सप्तरात्र याग किया तथा चतुष्पाद संपत्ति से समृद्ध हुआ (तै. सं. ७.२.२.१)। इसने दशरात्र याग शुरू किया। अन्यत्र कुसुरबिंद (पं. ब्रा. २२. १५.१-१०), कुसुरुबिंदु (सां. श्रौ. १६.२२.१४) निर्देश हैं। यह संस्कारशास्त्र का ज्ञाता था (ष. ब्रा. १.१६) इसे औद्दालकि कहा गया है। इससे पता चलता है कि, श्वेतकेतु इसका बंधु होगा।

कुस्तुक शार्कराक्ष्य—श्रवणदत्त का शिष्य। इसका शिष्य भवत्रात (वं. ब्रा. १)।

कुस्तुंबुरु—एक यक्ष (म. स. १०. १५)।

कुहन—सौवीरदेशी राजपुत्र। यह जयद्रथ का बंधु था (म. व. २४९. १०)।

कुहर—भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष का राजा।

२. कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कुहू—स्वायंभुव मन्वंतर में अंगिरा ऋषि को श्रद्धा से उत्पन्न चार कन्याओं में द्वितीय।

२. हविष्मंत नामक पितरों की स्त्री।

३. द्वादश आदित्यों में धाता नामक आदित्य की स्त्री।

४. मयासुर की तीन कन्याओं में कनिष्ठ।

कूट—कंस की सभा का एक मल्ल। धनुर्याग के समय बलराम ने इसका वध किया (भा. १०. ४४)।

२. पाषाणरूपी इस असुर का गणेश ने नाश किया (गणेश. २. १३)।

कूपकर्ण—एक रुद्रगण। बाणासुर के युद्धप्रसंग में इसका बलराम से युद्ध हुआ था (भा. १०. ६३)।

२. बलि के प्रधानों में अग्रेसर (ना [illegible])।

कूर्च—(सू. नरि.) भागवत मत [illegible] राजा का पुत्र। इसका पुत्र इंद्रसेन।

कूर्चामुख—विश्वामित्र ऋषि का पुत्र (म. अनु. ७. ५३ कुं.)।

कूर्म—एक अवतार। प्रजापति संतति निर्माण करने के लिये, कूर्मरूप से पानी में संचार करता है (श. ब्रा. ७.५.१. ५-१०; म. आ. १६; पद्म. उ. २५९)। प्रजापति ने कूर्मरूप धारण कर प्रजोत्पादन किया। यह ग्यारहवाँ अवतार है (भा. १. ३. १६)। पृथ्वी रसातल को जा रही थी, तब विष्णु ने यह अवतार

लिया (लिंग, ९४) इस कूर्म की पीठ का घेरा एक लाख योजन था। दुर्वास द्वारा दी गयी पारिजातक की माला का इंद्र ने अपमान किया, इसलिये ऋषि ने उसे, 'वैभव नष्ट होगा' यों शाप दिया। इस कारण लक्ष्मी समुद्र में गुप्त हो गयी। उसे प्राप्त करने के लिये विष्णु ने बताया, 'लक्ष्मी को निकालने के लिये, मंदराचल की मथनी, वासुकी का डोर एवं एक ओर देव तथा दूसरी ओर दैत्य, समुद्रमंथन करें। उस समय मैं स्वयं कूर्म रूप ले कर, पीठ पर मंदराचल पर्वत धारण करूंगा, तब लक्ष्मी प्राप्त होगी' (पद्म. ब्र. ८.)। समुद्रमंथन के समय मंदराचल नीचे जाने लगा, तब विष्णु ने कूर्मावतार धारण किया। अमृतप्राप्ति के लिये यह अमृतमंथन चल रहा था (पद्म.उ.२३१-२३३; भा.२.७.१३; ८.७.८)। देवदानवों ने इस तरह क्षीरसागर का मंथन कर चौदह रत्न निकाले तथा पूर्ववत् वैभव संपादित किया। लोहाघाट के पास विष्णु ने मंदर पर्वत धारण करने के लिये कूर्मावतार लिया। कूर्मावतार के पश्चात्, लोग एकादशी का उपवास करने लगे (पद्म. उ. २६०)।

२. कश्यप तथा कद्रू का पुत्र (म. आ. ३५)।

कूर्म गार्त्समद—सूक्तद्रष्टा (ऋ. २.२७.२९)।

कूशांब स्वायव लातव्य—साम का एक प्राचीन आचार्य। इसने यज्ञायज्ञीय साम में, गिरा के स्थान पर इरा कहने के लिये बताया (पं. ब्रा. ८.६.८)। यह लातव्य कुल के स्वायु का पुत्र होगा।

कूष्मांड—एक दैत्य। कार्तिक शुक्ल नवमी के दिन इसे विष्णु ने मारा (स्कंद. २.४.३१)।

कूष्मांडराज—रुद्रगणविशेष।

कृकण—किंकिण देखिये।

कृणु—एक ऋषि। वाल्मीकि देखिये।

कृत (सो. कुश.) राजा जय का पुत्र। इसका पुत्र हर्यवन।

२. वसुदेव को रोहिणी से उत्पन्न पुत्र (भा. ९.२४)।

३. मणिवर तथा देवजनी का गुह्यक पुत्र।

४. व्यास की सामशिष्य परंपरा के भागवत, वायु तथा ब्रह्मांड मतानुसार हिरण्यनाभ का शिष्य। भागवत के अनुसार यह चतुर्विंशशाखाध्यायी है। यह सन्नतिपुत्र तथा हिरण्यनाभ कौसल्य का शिष्य था। इसने सामसंहिता का चतुर्विंशतिधा विभाग किया। उनको प्राच्यसाम कहते है। (ह. वं. १.२०.४२-४३)

५. कृति ५. देखिये।

कृतक—वसुदेव को मदिरा से उत्पन्न पुत्रों में से तीसरा (भा. ९.२४)।

कृतंजय—(सू. इ. भविष्य.) भागवत मत में बर्हिराज का, विष्णु मत में धर्म का, वायुमत में धर्मिन् का, तथा मत्स्य मत में बृहद्राज का पुत्र।

२. एक व्यास (व्यास देखिये)।

कृतद्युति—चित्रकेतु राजा की करोड स्त्रियों में से ज्येष्ठ। इसे अंगिराऋषि की कृपा से पुत्र हुआ। यह इसकी सौतों को सहन नहीं हुआ। इसलिये उन्होंने इसके पुत्र को विष दिया। परंतु अंगिरा ने उसे पुनः जीवित किया (भा. ६.१४; चित्रकेतु देखिये)।

कृतध्वज—प्रतर्दन राजा का नामांतर।

२. (सू. निमि.) धर्मध्वज जनक के दो पुत्रों में से एक।

कृतप्रज्ञ—भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष के राजा भगदत्त का पुत्र। नकुल ने इसका वध किया (म. क. ४.२९)।

कृतयशस् आंगिरस—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०८.१०-११)।

कृतवर्मन्—(सो. यदु. अंधक.)। हृदीकपुत्र (मत्स्य ४४.८०-८१)। यह द्रौपदीस्वयंवर में गया था (म. आदि. १७७.१७)। दुर्योधन के पक्ष में यह एक अक्षौहिणी सेना ले कर आया था (म. उ. १९.१७)। बलराम द्वारा रैवतक पर्वत पर किये गये उत्सव में यह आया था (म. आ. २११.११)। इसने पांडवों से भीषण युद्ध किया था; किन्तु भीम ने इसे तीन बाणों से विद्ध किया (म. द्रो. ९०.१०)। दुर्योधन के पक्ष के बचे तीन वीरों में से यह एक था (म. सौ. ९.४७-४८)। बाद में यह द्वारका गया। युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ में अश्व के संरक्षणार्थ यह अर्जुन के साथ गया था। यादवी युद्ध में इसे सात्यकि ने मारा (भा. ९.२४.२७; म. मौ. ३)।

२. (सो. सह.) भागवत मत में धनकपुत्र (कृतवीर्य देखिये)।

कृतवाच्—अंगिरसकुल का मंत्रकार। कृतवान् पाठभेद है।

कृतवीर्य—(सो. यदु. सह.) भागवत तथा विष्णु मत में राजा धनक के चार पुत्रों में ज्येष्ठ। इसका पुत्र कार्तवीर्यार्जुन। उसे सहस्रार्जुन भी कहते हैं (म. आ. १६९; स. ८.८)। मत्स्य तथा वायु में धनक के स्थान

पर कनक पाठ है। संकष्टीचतुर्थी व्रत के प्रभाव के कारण, इसे कार्तवीर्यार्जुन जैसा पराक्रमी पुत्र हुआ (गणेश १.५८)।

कृताग्नि—(सो. सह.) राजा धनक के चार पुत्रों में से दूसरा।

कृताश्व—(सू. इ.) संहताश्व राजा के दो पुत्रों में से ज्येष्ठ। कृशाश्व नामांतर है। इसका पुत्र श्येनजित् वा प्रसन्न था।

कृताहार—पुलह तथा श्वेता का पुत्र।

कृति—(सो. आयु.) नहुष के छः पुत्रों में से कनिष्ठ।

२. (सू. निमि.) बहुलाश्व जनक का पुत्र। इसका पुत्र महावशिन्। विष्णु एवं वायु मत में, इसके समय निमि वा विदेह वंश समाप्त हुआ। कृतरात–देखिये।

३. (सो. क्रोष्टु.) रोमपादपुत्र बभ्रु का पुत्र। इसका पुत्र राजा उशिक (भा. ९.२४.)।

४. (सो. द्विमीढ.) सन्नतिमान् राजा का पुत्र। इसने हिरण्यनाभ से प्राच्यसामों की छः संहिताएँ संपादित की थी। इसका पुत्र नीप।

५. (सो. कुरु.) भागवत मत में च्यवनपुत्र। इसे उपरिचर वसु नामक पुत्र था। कृत पाठभेद है।

६. भारतीय युद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा। इसका पुत्र रुचिपर्वन् (म. द्रो. २५.४८)।

७. संह्लाद की पत्नी। इसका पुत्र पंचजन (भा. ६. १८)।

८. वसुपुत्र विश्वकर्मन् की पत्नी। इसे चाक्षुष नामक छठवाँ मनु हुआ। (भा. ६.६)।

९. सावर्णि मन्वंतर में एक मनुपुत्र।

१०. रुद्रसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

११. रैवतमनुपुत्र।

१२. विष्णुमत में व्यास की सामशिष्यपरंपरा के पौष्यंजि का शिष्य।

कृतिमत्—(सो. द्विमीढ.) भागवत मत में यवीनरपुत्र। इसे सत्यधृति भी कहते थे।

कृतिरथ—(सू. निमि.) प्रदीपकपुत्र। वायु मत में कीर्तिरथ।

कृतिरात—(सू. निमि.) विष्णु तथा भागवत मत में महाधृतिपुत्र। इसका नाम वायु मत में कीर्तिराज तथा भागवत मत में कृति है।

कृतेयु—(सो. पूरु.) भागवत तथा वायु मत में रौद्राश्व को घृताची से उत्पन्न पुत्र।

कृतौजस्—(सो. सह.) मत्स्य मत में कनकपुत्र। भागवत तथा विष्णु मत में धनकपुत्र।

कृत्तिका—प्राचेतस दक्ष ने सोम को दी सत्ताइस कन्याओं में से एक।

२. अग्नि नामक वसु की पत्नी। इसका पुत्र स्कंद (भा. ६. ६; मत्स्य. ५. २७)।

कृत्नु भार्गव—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ७९)।

कृत्वी—कृष्णद्वैपायनपुत्र शुक की कन्या। इसका दूसरा नाम कीर्तिमती है। अजमीढ़ कुल में उत्पन्न नीप वा अणुह राजा की यह पत्नी थी। इसका पुत्र ब्रह्मदत्त।

कृप—रुशम एवं श्यावक के साथ इंद्र के सहायक के रूप में आया है (ऋ. ८. ३. १२; ४. २)।

२. (सो. अज.) उत्तर पांचाल देश के राजकुल में गौतम नामक मुनि का पौत्र। पांचाल देश, आज का रुहेलखंड है। गौतम का शरद्वत् नामक महान् तपस्वी पुत्र था। सत्यधृति का पुत्र शरद्वत, ऐसा भी कहीं कहीं उल्लेख मिलता है। इसकी तपस्या भंग करने के लिये इंद्र ने जालपदी नामक अप्सरा भेजी थी (म. आ. १२०. ६)। कुछ स्थानों पर इस अप्सरा को उर्वशी कहा गया है (भा. ९. २१. ३५; मत्स्य. ५०. १–१४)। कुछ स्थानों पर तो, सत्यधृति का तपोभंग करने के हेतु उर्वशी को भेजा गया, यों उल्लेख है। उस अप्सरा को देखते ही इसका वीर्यस्खलन हुआ। यह वीर्य, शर नामक घास के द्वीप पर गिरा, जिससे एक पुत्र एवं एक कन्या उत्पन्न हुई। कालोपरांत उसी वन में राजा शंतनु शिकार खेलने आया। वह इन्हें उठा कर ले गया, तथा उसने इनका पालन कृपापूर्वक किया। इसलिये कृप तथा कृपी उनका नामकरण हुआ (म. आ. १२०)। इनमें से कृपी अश्वत्थामा की माता तथा गुरु द्रोणाचार्य की पत्नी थी (म. आ. १२१. ११; विष्णु. ४. २०; अग्नि. २७७. गरुड. १४०)। शंतनु पुत्र तथा पुत्री को वन से उठा कर ले गये, यह बात तपःसामर्थ्य से गौतम ने जान ली। राजा के पास जा कर उसने अपने पुत्र को गोत्र आदि की जानकारी दी। उसे चारों प्रकार के धनुर्वेद तथा सब प्रकार की अस्त्रविद्या सिखायी (म.आ. १२०.१९–२०)। इसके बाद राजा धृतराष्ट्र ने, वेदशास्त्रों में निपुण कृपाचार्य के पास, अपने सब पुत्रों को अध्ययन के लिये भेजा। कौरवों ने द्रोणाचार्य के पहले कृपाचार्य के पास धनुर्वेद सीखा था (म. आ. परि. १. क्र. ७३; पंक्ति १३४)।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में था, फिर भी इसका मन पांडवों की ओर था। यह हमेशा कर्ण की निंदा करता था, तथा अर्जुन की प्रशंसा करता था। (म. वि. ४४.१; द्रो. १३३.१२-२३)। एक बार कृपाचार्य पांडवों की स्तुति तथा कर्ण की निंदा कर रहा था। कर्ण ने कहा, 'हे दुर्मति, यदि पुनः तुम इस तरह अप्रिय शब्द बोलोगे, तो इस तलवार से तुम्हारी जिव्हा काट दूँगा (म. द्रो. १३३.५२)'। इसी तरह हमेशा कर्ण तथा कृपाचार्य में ठन जाया करती थी। इसने भारतीय युद्ध में अतुल पराक्रम दिखा कर, अनेकों वीरों को स्वर्ग भेजा। जयद्रथवध के बाद कृप तथा अश्वत्थामा ने अर्जुन पर आक्रमण किया, तब अर्जुन के बाणों से कृपाचार्य बेहोश हुआ (म. द्रो. १२२.८)। इसने युद्ध में धृष्टद्युम्न पर अमोघ बाण छोड़ कर, उसे जर्जर कर दिया था (म. क. १८.५०)। दुर्योधन के वध के बाद, अश्वत्थामा अत्यंत क्रोधित हुआ। उसने कृपाचार्य से कहा कि, मैं पांडवों के पुत्रों को निद्रित अवस्था में ही मार डालना चाहता हूँ। तब कृपाचार्य ने उसे उपदेश किया, जिससे इसकी सही योग्यता का पता चलता है। कृपाचार्य ने कहा, 'उद्योग की स्थिति कमजोर होने पर केवल भाग्य कुछ नहीं कर सकता। इसलिये कभी भी कार्य के प्रारंभ में बड़ों से विचारविमर्श करना चाहिये। अतः हम धृतराष्ट्र, गांधारी, तथा विदुर की सलाह लें' (म. सौ. ३.३०-३३)। इसने विवाह नहीं किया। यह चिरंजीव है। कौरवों की मृत्यु के बाद इसने दुर्योधन का सांत्वन किया। पश्चात् स्वयं पांडवों के भय के कारण, घोडे पर सवार हो कर हस्तिनापुर की ओर रवाना हुआ (म. सौ. ९)। यह भविष्य में सावर्णिमन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक होनेवाला है (भा. ८.१३-१५)। कृपाचार्य रुद्रगण का अवतार था (म. आ. ६१)।

३. उत्तानपादपुत्र ध्रुव का पौत्र। शिष्ट के चार पुत्रों में से ज्येष्ठ।

कृपी—(सो. अज.) द्रोणाचार्य की स्त्री तथा विष्णु, वायु एवं मत्स्य के मत में सत्यधृतिकन्या। जालपदी नामक अप्सरा को देख कर, शरद्वत् का रेत शरस्तंभ पर स्खलित हुआ। उससे यह उत्पन्न हुई। शंतनु ने इसका लालनपालन किया। इसका पुत्र अश्वत्थामा (कृप देखिये)।

कृमि—(सो. अनु.) विष्णु तथा वायु के मत में उशीनरपुत्र।

२. (सो. ऋक्ष.) मत्स्य के मत में च्यवनपुत्र। कृत, कृतक, कृति आदि इसी के नाम रहे होंगे।

कृमिल—(सो. क्रोष्टु.) किंकिण देखिये।

कृश—इसने यज्ञद्वारा इन्द्र को प्रसन्न किया (ऋ. ८.५.४२)। यह सत्यवक्ता था (ऋ. ८.५९.३)। आश्विनों ने शयु के साथ इस पर भी कृपा की थी (ऋ. १०.४०.८)। सूक्तद्रष्टा कृश काण्व यही रहा होगा (ऋ. ८.५५)।

कृश वा **कृशतनु**—एक ऋषि तथा शृंग ऋषि का मित्र (म. आ. ३६)। इसने प्रतिग्रह न ले कर अपना सारा समय, तपस्या में ही व्यतीत किया। यह अत्यंत कृश था। इसी कारण इसका यह नामकरण हुआ। वीरद्युम्नपुत्र भूरिद्युम्न नष्ट हो गया था। तब तपोबल से उसे वापस ला कर उसने इसे उपदेशपर कई बातें भी बतायी थीं (म. शां. १२६)।

२. विकुंठदेवों में से एक।

कृशानु—सोमसंरक्षक गंधर्वों में से एक (तै. सं. १.२.७)। अश्विनों ने युद्ध में इसकी रक्षा की (ऋ. १.११२.२१)।

कृशाश्व—एक ऋषि तथा प्रजापति। प्राचेतस दक्ष ने अपनी साठ कन्याओं में से दो कन्याएं इसे दी थीं। उनका नाम अर्चि एवं धिषणा था। अर्चि को धूम्रकेश, तथा धिषणा को वेदशिरस्, देवल, वयुन तथा मनु ये पुत्र हुये। इसके अतिरिक्त इसे जया एवं प्रभा नामक दो कन्याएं भी थीं। किंतु ये किस स्त्री से उत्पन्न हुईं, इसका उल्लेख नहीं मिलता (वा. रा. बा. २१)। यह यजुर्वेदी ब्रह्मचारी था।

२. (सू. दिष्ट.) राजा सहदेव का पुत्र। इसका पुत्र सोमदत्त।

३. (सू. इ.) कृताश्व राजा का नामांतर।

४. नाट्यकला का आचार्य एक ऋषि (पा. सू. ४.३.१११)।

कृष्ण—(सो. यदु. वृष्णि.) वसुदेव को देवकी से उत्पन्न आठ पुत्रों में कनिष्ठ। इस का जन्म मथुरा में कंस के कारागृह में हुआ (भा. ९.२४.५५; १०.३; विष्णु. ४.१५; ५.३; ह. वं. १.३५; कूर्म. १.२४; गरुड. १.१३९)।

विवाह के पश्चात्, श्वशुरगृह में बहन को पहुँचाते समय, देवकीपुत्र द्वारा अपनी हत्या होगी यह जान कर, कंस ने

वसुदेवदेवकी को कारागार में रखा। देवकी के सात पुत्रों को क्रम से उसने पटक मारा। कृष्ण आठवाँ पुत्र है, जिसका जन्म विक्रम संवत् के अनुसार, भाद्रपद वद्य अष्टमी की मध्यरात्रि में रोहिणी नक्षत्र पर हुआ। वह दिन बुधवार था (निर्णयसिंधु)।

वसुदेव उग्रसेन का मंत्री था। उग्रसेन को बंदिस्त कर के कंस राजगद्दी पर बैठा था। अतः कंस पहले से वसुदेव को प्रतिकूल था। वसुदेव के देवकी से उत्पन्न पुत्रों को ही नहीं, बल्कि अन्य स्त्रियों से प्राप्त पुत्रों को भी कंस द्वारा मारे जाने का उल्लेख, भागवत को छोड़-कर, अन्य पुराणों में मिलता है (वायु. ९६.१७३-१७८)।

वसुदेव ने कृष्ण की रक्षा के लिये, गोकुल में नंद के घर पहुँचाया। गोकुल से यशोदा की कन्या ले कर वसुदेव पुनः कारागार में उपस्थित हुआ। कंस ने उस कन्या को भी मारने का यत्न किया, किन्तु वह हाथ से छूट गयी। यहीं कंस को पता लगा कि, वसुदेवसुत पैदा हो कर सुरक्षित स्थान पर पहुँच गया है।

नन्दकुलोपाध्याय गर्गमुनि ने गुप्तरूप से कृष्ण का जातक तथा नामकरण संस्कार किया। इसी समय कृष्ण के जीवनकृत्यों का भविष्यकथन भी किया।

बाललीला—प्रथम कंस ने कृष्णवधार्थ पूतना भेजी, जो उसकी बहन .वा दाई थी। गोकुल के बालकों को विषयुक्त स्तनपान करा कर मारने का क्रम पूतना ने जारी रखा। कृष्ण को स्तनपान कराने पर, कृष्ण ने उसका पूरा लहू चूस लिया तथा उसके प्राण लिये।

तृणावर्त असुर का भी, पत्थर पर पटक कर कृष्ण ने वध किया। उसी समय यशोदा को कृष्ण के मुँह में विश्वरूप-दर्शन हुआ। बकासुर, वत्सासुर, अघासुरादि का भी इसने वध किया। कालिया के फूत्कार के कारण, यमुनाजल विषयुक्त हुआ था। उसेभी मर्दन कर कृष्णने भगाया। धेनुकासुर, प्रलंबासुर, अरिष्ट, व्योम तथा केशि का भी कृष्ण ने वध किया। एक समय नन्द को यमुना से डूबते डूबते बचाया।

गोकुल का प्रतिवार्षिक 'इन्द्रोत्सव' बंद कर के कृष्ण ने वहाँ गोवर्धनउत्सव का आरंभ किया। इससे इन्द्र ने कुपित हो कर गोकुल पर अतिवृष्टि की। कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत का आश्रय ले कर गोकुलवासियों को इस संकट से बचाया।

कई पुराणों में कृष्ण के बालचरित्र का ही केवल वर्णन है। यह बाललीला पूतनावध से प्रारंभ हो कर केशिवध के पास समाप्त होती है। पूतना, धेनुक, प्रलंब, अघ इन का वध, इन्द्रगर्वहरण, कालियामर्दन, दावाग्निभक्षण, गोवर्धनोद्धार, रासक्रीड़ा तथा कंसवध ये घटनाएं सब स्थानों में वर्णित हैं, केवल क्रम में भिन्नता है। कहीं संक्षेप में तथा कहीं विस्तार से वर्णन है। विष्णुपुराण में संक्षेप में बाललीला का वर्णन आया है।

विशेषतः भागवत, ब्रह्मवैवर्त, हरिवंश एवं गर्गसंहिता में कृष्ण की केवल बाललीलाओं का वर्णन है। कृष्ण का पांडवों से संबंध केवल गर्गसंहिता में ही है। महाभारत-वर्णित कृष्णचरित्र पुराणों में नहीं मिलता। उसका पांडवों को अप्रतिम सहाय, राजकाजकौशल्य और गीता केवल महाभारत में ही अंकित है।

बाललीला में राधाकृष्ण-संबंध वर्णन करने की ब्रह्मवैवर्त पुराण की प्रवृत्ति है। यह संबंध आध्यात्मिक माना जाता है। राधाकृष्ण-विवाह ब्रह्मदेवद्वारा संपन्न हुआ था (ब्रह्मवै. ४. १५)।

कंसवध—कृष्ण की मल्लविद्या की कीर्ति सुन कर, कंस उसे अक्रूरद्वारा मथुरा ले आया। मथुरा में वसुदेव-देवकी से मिलना कंस को अप्रिय होगा यह अक्रूर द्वारा बताने पर भी, आत्मविश्वास के साथ कृष्ण अपने मातापिता से मिले। शहर में घूमते समय, एक धोबी से कृष्ण ने कपडे लिये, एक माली ने पुष्पहार गले में डाला तथा कुब्जा ने चंदन लेप चढ़ाया। शस्त्रागार में जा कर इसने भव्य धनुष का भंग किया। यह सब देख कर कंस ने चाणूर, मुष्टिक नामक मल्लों को, कृष्ण के साथ मल्लयुद्ध करने के लिये भेजा। मैदान के द्वार पर ही, कंस द्वारा छोडे गये कुवलयापीड हाथी को कृष्ण ने सहजता से मारा। मल्लयुद्ध में चाणूर तथा तोषलक को मारा। कृष्ण के ये सब पराक्रम देख कर, कंस का मस्तक चकराने लगा। कृष्ण ने उसे सिंहासन से खींच कर उसका वध किया। समुदाय ने कृष्ण की जयध्वनि की। वसुदेवदेवकी से मिल कर तथा उग्रसेन को गद्दी पर बिठा कर, कृष्ण ने मथुरा में शांति प्रस्थापित की। बलराम ने पूरे समय तक कृष्ण की साथ की।

शिक्षा—नंदादि गोपालों को मथुरा ला कर, तथा सत्कार कर कृष्ण ने उन्हें वापस गोकुल भेजा। यशोदा के सांत्वनार्थ उद्धव को गोकुल भेजा। गर्गमुनि द्वारा उपनयनसंस्कारबद्ध हो कर, रामकृष्ण, काश्य सांदीपनि के यहाँ अध्ययनार्थ अवंति गये। एकपाठी होने से ६४ दिनों में ही इन्हों ने वेदों का तथा धनुर्वेद

का अध्ययन किया (ब्रह्म. १९४. २१; ह. वं. २. ३३; भा. १०. ४५. ३६; विष्णु. ५. २१)। सांदीपनि ने इन्हें गायत्री मंत्रोपदेश देने का भी उल्लेख है (दे. भा. ४. २. १)। इसके उपनयन प्रसंग में देव, नंद, यशोदा तथा विधवा कुन्ती उपस्थित थीं (ब्रह्मवै. ४. १०१)। इस समय कृष्ण की आयु १२ वर्षों की थी (दे. भा. ४. २४)। गुरुदक्षिणा के रूप में सांदीपनि का, मृत पुत्र दत्त कृष्ण ने सजीव कर दिया (पद्म. ३. २४६; ब्रह्म. १९४. ३१)। यहीं पंचजनों का वध कर के, विख्यात पांचजन्य शंख कृष्ण ने प्राप्त किया (भा. १०. ४५. ४२; म. भी. २३. १६)।

विवाह—इसने शिशुपाल का पराभव कर के, भीष्मक राजा की कन्या रुक्मिणी का हरण किया। स्यमन्तकमणि-प्रसंग में, जांबवती तथा सत्यभामा से इसका विवाह हुआ। इसी समय सत्राजित का वध करनेवाले शतधन्वन् का इसने वध किया। कुछ काल के बाद, कृष्ण कुछ यादवों सह पांडवों से मिलने के लिये इन्द्रप्रस्थ गया। तब चातुर्माससमाप्ति तक पांडवों ने इसे वहीं रख लिया। उस काल में इसका कालिंदी से विवाह हुआ। बाद में द्वारका जाने पर, मित्रविंदा, सत्या (नाग्नजिती), भद्रा, कैकेयी तथा लक्ष्मणा (सुलक्षणा) का स्वपराक्रम से हरण कर के इसने विवाह किया (भा. १०.५८;९०.२९-३०)। इसके अष्टनायिकाओं में सुलक्षणा, नाग्नजिती तथा सुशीला थी। सुमित्रा, शैव्या, सुभीमा, माद्री, कौसल्या, विरजा (पद्म. सृ. १३. १५५-१५६) अनुविंदा तथा सुनंदा यों भिन्न नाम भी प्राप्त हैं (पद्म. पा. ७०-३३)। इन में कई नाम गुणदर्शक दीखते हैं।

कृष्ण ने नरकासुर का वध किया। उसके कारागृह में सोलह हजार स्त्रियाँ थीं। उन्हें मुक्त कर कृष्ण ने उनसे विवाह किये (भा.१०.५९.३३; विष्णु.५.२९.३१)। इस प्रकार उनके उद्धार का श्रेय भी संपादन किया। एक ही समय अनेक रूप धारण करने का कृष्ण में सामर्थ्य था।

नरकासुर का वध कर के लौटते समय, कृष्ण ने इंद्र का पारिजातक वृक्ष तोड दिया। तब क्रोधित हो कर इंद्र ने कृष्ण से युद्ध किया परंतु इन्द्र का बस नहीं चला। तब कृष्ण ने उससे कहा कि, जबतक मैं पृथ्वी पर हूँ, तब तक यह वृक्ष यहीं रहने दो। बाद में उसे ले जाना (पद्म. ३. २४८-२४९)।

कृष्ण के कुल अस्सी हजार पुत्र थे (पद्म. सृ. १३)। पुत्रों के नाम उनकी माताओं के चरित्र में देखिये।

जांबवती को पुत्र प्राप्ति हो इस हेतु से, कृष्ण ने महादेव की तपस्या कर के, उससे वर प्राप्त किया (म. अनु. ४६)।

एक बार यह अपनी स्त्रियों से क्रीड़ा कर रहा था। तब नारद के आदेशानुसार जांबवतीपुत्र सांब वहां गया। उस समय कृष्ण की पत्नियों ने मद्यपान किया था। अतएव वे उस पर मोहित हो गईं। तब कृष्ण ने उन्हें शाप दिया कि, 'तुम लोग चुरा ली जाओगी। किन्तु दाल्भ्यद्वारा बताये गये व्रत द्वारा तुम्हारा उद्धार होगा'। इसने सांब को शाप दिया कि, तुम कुष्ठरोगी बनोगे (पद्म. सृ. २३; स्कंद. ७.१.१०१)।

मथुरा में यशोदा की कन्या एकानंगा के साथ रामकृष्ण की भेंट हुई। इसके लिये ही कृष्ण ने कंस का वध किया (म. स. १.२१.१४२८-१४३०)। बाणासुर के हजार हाथ भी इसने तोड़े (ब्रह्मांड. ३.७३.९९-१०२; वायु. ८८.९८-१०१)।

इसके अश्वों के नाम शैब्य, सुग्रीव, मेघपुष्प तथा बलाहक थे (म. आश्व.१.४.२४२४)। पांडवों के राजसूय तथा अश्वमेध में यह उपस्थित था (म. आश्व. ८. ९)।

जरासंधवध—कंसवध के कारण जरासंध क्रुद्ध हुआ। कंस जरासंध का दामाद था। उस समय जरासंध सम्राट था। जरासंध के कारागार में हजारों नृप बंदिवान थे। उन्होंने भी कृष्ण के पास अपनी मुक्तता के लिये संदेश भिजवाया था। कृष्ण ने यादवसभा में इस प्रश्न को उठाया। जरासंध ने मथुरा पर आक्रमण किया। कई राजा उसके सहायक थे। कृष्ण ने उसका सत्रह बार पराजय किया। कालयवन का भी जरासंध ने सहाय्य लिया। कालयवन ने मथुरा को चारों ओर घेरा डाला। कृष्ण, इस समय अगतिक हो कर भागते भागते, मुचकुंद सोया था वहां आया। पीछे कालयवन भी आ पहुँचा। कृष्ण चपलता से आँखों से ओझल हो गया। मुचकुंद कालयवन द्वारा मारा गया।

जरासंध के आक्रमण के भय से कृष्ण मथुरा छोड कर सुदूर द्वारका में आ बसा। वहाँ इसने अपनी नयी राजधानी बसायी। जरासंध भी द्वारका पहुँचा। तब कृष्ण प्रवर्षणगिरि में जा छिपा। जरासंध ने वहाँ भी आग लगा दी तथा वह लौटा। कृष्ण बच गया। कुछ स्थानों पर प्रवर्षणगिरि की जगह गोमंतक का उल्लेख है।

इसी समय इंद्रप्रस्थ से युधिष्ठिर ने दूतद्वारा अपना राजसूय यज्ञ का विचार कृष्ण को कथन कर, उसको पाचारण किया। कृष्ण के सामने प्रश्न निर्माण हुआ कि, किस को अग्रस्थान दे। उद्धव ने, प्रथम इंद्रप्रस्थ जा कर पश्चात् जरासंध के यहाँ जाने की मंत्रणा, कृष्ण को दी। कृष्ण ने स्वयं इंद्रप्रस्थ जा कर, जरासंध के बंदिस्त राजाओं को तुरन्त ही मुक्त करने का आश्वासन दूतद्वारा भेजा।

राजसूय यज्ञ के लिये भी, जरासंध जैसे प्रतापी प्रतिस्पर्धी का विनाश आवश्यक था। इसलिये ब्राह्मण वेष में कृष्ण, अर्जुन तथा भीम जरासंध के पास उपस्थित हुए। वहाँ गदायुद्ध में भीमद्वारा जरासंध का वध हुआ। उसके पुत्र को गद्दी पर बिठा कर, ये सब लौट आये (म. स. १२.२२)।

शिशुपालवध--करुषाधिप पौंड्रक वासुदेव, तथा करवीराधिप शृगाल यादव का कृष्ण ने वध किया। भीष्म ने राजसूय यज्ञ में कृष्ण को अग्रपूजा का मान दिया। इस कारण शिशुपाल ईर्ष्या से भड़क उठा। तब सुदर्शन चक्र से कृष्ण ने शिशुपाल का वध किया। यज्ञसमाप्ति के बाद यह द्वारका गया। बाद में शाल्व, दंतवक्र तथा विदूरथ का भी वध कृष्ण ने किया।

भारतीययुद्ध—पांडव वनवास में थे। उस समय उनके यहाँ कृष्ण गया था। कृष्ण ने कहा, 'मेरे होते हुए द्यूतक्रीडा असंभव हो जाती थी।' कुछ दिन वहीं रह कर, सुभद्रा तथा अभिमन्यु को लेकर यह द्वारका गया (म. व. १४.२४)। पांडव काम्यकवन में थे। कृष्ण सत्यभामा के साथ वहाँ गया था। कुछ दिन वहाँ रह कर द्वारका लौटा (म. व. १८०.२२४)। दुर्योधन के कथनानुसार दुर्वास पांडवों के यहाँ गया था। तब द्रौपदी की सहायता कर कृष्ण ने दुर्वास ऋषि को तुष्ट किया (म. व. परि. १.२५)। अभिमन्यु के विवाहार्थ कृष्ण उपप्लव्य गया था। तब सम्मिलित राजाओं की उपस्थिति में इसने पांडवों के हिस्से का प्रश्न उठाया। दुर्योधन को अमान्य है यह जान कर, इसने उधर जाने का निश्चय किया (म. वि. ६७)। अर्जुन तथा दुर्योधन कृष्ण के समीप युद्धार्थ सहायता माँगने गये। दुर्योधन की माँग के अनुसार उसे यादव सेना दी। स्वयं अर्जुन के पक्ष में गया। युद्ध में प्रत्यक्ष भाग न लेने की कृष्ण की प्रतिज्ञा थी। फिर भी अर्जुन ने उसे ही माँग लिया (म. उ.७)।

इस प्रकार युद्ध की तैयारियाँ कौरव-पांडव कर रहे थे। तब युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के यहाँ कृष्ण को मध्यस्थ के नाते भेजा। किन्तु कुछ लाभ न हुआ। कृष्ण आयेगा, इस लिये धृतराष्ट्र ने हस्तिनापुर से वृकस्थल तक मार्ग सुशोभित किया था (म. उ. ७१.९३)। दुर्योधन ने कृष्ण को भोजन का निमंत्रण दिया। कृष्ण ने उसे अमान्य किया (म. उ. ८९.११)। वहाँ दिये गये भाषण से कौरवों के सब दुष्कृत्य स्पष्ट हुए। सब सदस्यों को पांडवों का पक्ष न्यायसंगत प्रतीत हुआ। भीष्म द्रोणादिक भी कृष्ण के समर्थक बने। भीष्म, द्रोणाचार्य, गांधारी, धृतराष्ट्र, कण्व, नारदादि ने अनेक प्रकार से दुर्योधन को समझाया। किन्तु वह नहीं माना।

सभा की शांति नष्ट होते देख, दुःशासन ने दुर्योधन को इशारे से बाहर जाने को कहा। भीष्म ने इस समय, 'क्षत्रियों का विनाश काल समीप है,' यों प्रकट किया। दुर्योधन का कृष्ण को बंदिस्त करने का विचार था, जो सात्यकि ने सभा में प्रकट किया। उल्टे दुर्योधन को ही पांडवों के यहाँ बाँध कर ले जाने का सामर्थ्य कृष्ण ने विदित किया। तब धृतराष्ट्र, विदुरादि ने दुर्योधन की पर्याप्त निर्भर्त्सना की। कृष्ण ने इस समय अपना उग्र विश्वरूप प्रकट किया। सब भयभीत हुये। कृष्ण शांति से सभागृह के बाहर आया। दुर्योधन के न मानने की बात धृतराष्ट्रद्वारा विदित होते ही कृष्ण ने हस्तिनापुर छोडा (म. उ. १२९)। बाहर आकर कर्ण को उसका पांडवों से भ्रातृसंबंध कथित कर, उसे पांडवपक्ष में आने का आग्रह किया। उसके न मानने पर, कृष्ण उपप्लव्य चला आया। युद्धार्थ तैयारियाँ प्रारंभ हुई (म. उ. १३८-१४१)।

कृष्ण ने धृष्टद्युम्न तथा सात्यकि की सहायता से पांडव सेना की बलिष्ठ सिद्धता की (म. उ. १४९.७२)। अर्जुन की प्रार्थना पर कृष्ण ने उसका रथ दोनों सेनाओं के बीच ला कर खडा किया। आप्तजन तथा बाँधवों के संहार का चित्र सामने देखकर अर्जुन [illegible] की बातें करने लगा। कृष्ण ने उसे 'गीता' सुना[illegible] पुनः युद्धार्थ सिद्ध किया (म. भी. २३-४०)। यह दिन मार्गशीर्ष शुद्ध त्रयोदशी था।

कृष्ण ने पांडवों को महान् संकटों से बचाया। रथ के अश्वों की सेवा की। उन्हें पानी तक पिलाया (म. द्रो. १७५.१५)। भगदत्त के वैष्णवास्त्र से अर्जुन की रक्षा की (म. द्रो. २८.१७)। अभिमन्युवध के बाद, सुभद्रा का सांत्वन किया (म. द्रो. ५४.९)। भूरिश्रवा को अन्तिमसमय में स्वर्ग की जानकारी दी (म. द्रो. ११८.

९६८*)। अंधकार उत्पन्न कर के, जयद्रथवध की प्रतिज्ञा-पूर्ति अर्जुन द्वारा करवाई (म. द्रो. १२१)। घटोत्कच को युद्ध में भेज कर, कर्ण की वासवी शक्ति से अर्जुन की रक्षा की (म. द्रो. १५४)। द्रोणवध के लिये, असत्य भाषण की सलाह युधिष्ठिर को दी (म. द्रो. १६४)। गांडीव धनुष्य दूसरे को देने की सलाह युधिष्ठिर से सुनते ही, अर्जुन उस पर तरवार खींच कर दौडा। इस समय उसे कृष्ण ने कौशिक-कथा बताकर इस कृत्य से परावृत्त किया (म. क. ४९; अर्जुन देखिये)। रथ को पाँच अंगुल धरती में गाड़ कर, कर्ण के सर्पयुक्त बाण से अर्जुन की रक्षा की (म. क. ६६.१०८८*)। धर्म को शल्यवध करने के लिये कहा (म. श. ६.२४-३८)। भीमद्वारा दुर्योधन की जाँघ पर गदाप्रहार करा के उसका वध करवाया (म. श. ५७.३-१०)। इन सब कृत्यों के लिये दुर्योधन ने इसे दोष दिया (म. श. ६०)।

गांधारी की सांत्वना के लिये धर्म ने कृष्ण को हस्तिनापुर भेजा (म. श. ६१.३९)। कृष्ण ने कौरवों के अन्यायपूर्ण व्यवहार उसे बताये। फिर भी गांधारी ने कृष्ण को दुर्मरण का शाप दिया (म. स्त्री. २५)।

धृतराष्ट्र भीम से मिलने आया। लोहप्रतिमा उसकी गोद में सरका कर कृष्ण ने भीम की रक्षा की (म. स्त्री. ११.१५)। अश्वत्थामा के अस्त्र से उत्तरा के गर्भ की रक्षा की (म. सौ. १६.८; उत्तरा देखिये)। इसने वसुदेव को भारतीययुद्ध कथा बतायी (म. आश्व. ५९)।

यादवी--कण्व ऋषि का उपहास करने के कारण, इसने सांब को शाप दिया (पद्म. उ. २५२)। इसी सांब को मूसल पैदा हुआ। उसी मूसल से सब यादवों का संहार हुआ। सांब, चारुदेष्ण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध मृत हो गये। पुत्रों की मृत्यु देख कर कृष्ण क्रोधित हुआ। गद का पतन देख कर इसका क्रोध अनिवार्य हुआ। तब बचे हुए सब यादवों का इसने वध किया। इस समय दारुक तथा बभ्रु से कहा, 'भगवान्, बचे हुए अधिकांश लोगों की हत्या तो तुम से कर दी थी। अब हमें बलराम की खोज करनी चाहिये।' कृष्ण ने यादवों में किसी का खास प्रतिकार नहीं किया, क्यों कि, कालचक्र अब उलटा चल रहा है, यह उसने देख लिया (म. मौ. ४)।

निर्याण--कृष्ण का निर्याणसमय समीप आ गया। इसका उद्धव को पता चलते ही उसने कृष्ण की प्रार्थना की, "मुझे भी अपने साथ ले चलिये।" कृष्ण ने उसे अध्यात्म का बोध किया (भा. ११.७-२९)। यह बोध अवधूतगीता वा उद्धवगीता नाम से विख्यात है।

अनन्तर द्वारका में दुश्चिह्न प्रकट होने लगे। बलराम ने सागर तट पर देह विसर्जन किया। कृष्ण अश्वत्थ वृक्ष के नीचे, दाहिनी जाँघ पर बाँया पैर रख कर, चिन्तनावस्था में वृक्ष को चिपक कर बैठा था। इसी समय जरा नामक व्याध ने तलुवे पर मृग समझ कर तीर मारा, जो इसके बायें तलवे में लगा। यह देखकर व्याध अत्यंत दुःखित हुआ। उसने कृष्ण से क्षमायाचना की। कृष्ण ने उसकी सांत्वना की, तथा उसे आशीर्वाद दिया।

कृष्ण का सारथि दारुक वहाँ आया। उसने कृष्ण की वन्दना की। इसी समय कृष्ण का रथ भी गुप्त हो गया। कृष्ण ने दारुक से कहा, "मेरा प्रयाणसमय समीप आ गया है। द्वारका जा कर यह अनिष्ट प्रकार उग्रसेन से कथन करो। द्वारका शीघ्र ही समुद्र में डूबेगी। अतः सब लोगों को द्वारका से सुदूर जाने को बताओ"।

दारुक से यह वृत्त सुन कर द्वारका में हाहाकार मच गया। देवकी तथा रोहिणी ने देह विसर्जित किये। अष्ट-नायिकाओं ने कृष्ण के साथ अग्निप्रवेश किया (ब्रह्म. २११-१२)। प्रद्युम्नादिकों की पत्नियों ने भी यही किया।

इसी समय अर्जुन भी इन्द्रप्रस्थ से आया। स्त्रियों तथा बालकों को लेकर वह इन्द्रप्रस्थ आ रहा था कि, द्वारका समुद्र में डूबी (म. मौ. ८.४०; देवकी तथा अष्टनायिका देखिये)।

मृत्युकाल में कृष्ण की आयु १२५ से भी अधिक थी (भा. ११.६.२५; ब्रह्मवै. ४.१२९.१८)। १२५ की आयु में कृष्ण का निर्याण हुआ (भवि. प्रति. १.३.८१)। कृष्ण अर्जुन से ३ महीने ज्येष्ठ था।

सर्वज्ञ कृष्ण--कृष्णचरित्र अपूर्व है। जन्म से निर्वाण तक प्रत्येक अवस्था में, इसने असामान्यता प्रकट की। कारागृह में जन्म ले कर, सुरक्षा के लिये गोकुल आना पड़ा। नन्द के घर बालकृष्ण ने बाललीला की। गोप-गोपिकाओं के साथ ग्वालों का कार्य कर के मुरलीधर तथा राधाकृष्ण नाम प्राप्त किये। मल्लविद्या से ख्याति तथा लोकप्रियता संपादित कर के कुश्ती के मैदान में कंस का वध किया। सम्राट जरासंध के साथ मुकाबला करने से हस्तिनापुर के राजकारण में इसका प्रवेश हुआ। जरासंध-वध तथा स्वयंवरों में शिशुपालादि बलिष्ठ नृपों को पराजित करने से युद्धकुशलता प्रकट हुई। आध्यात्मिक अधिकार के कारण भीष्म ने इसे राजसूययज्ञ में अग्रपूजा

का मान दे कर सम्मानित किया। भारतीययुद्ध में अर्जुन का सारथ्य तथा कुशल संयोजक की इसकी भूमिका थी।

युद्ध के प्रारंभ में अर्जुन युद्धपरावृत्त होने लगा। गीता सुना कर उसें पुनः युद्धप्रवृत्त किया। अन्तसमय उद्धव को ज्ञान दिया। भगवद्गीता तथा उद्धव का उपदेश ये अध्यात्म्यशास्त्र के अपूर्व ग्रंथ हैं। कर्म कर के कर्मबंधन से मुक्ति पाने के लिये दोनों ग्रंथों में संकेत हैं। ज्ञान, भक्ति तथा लोकाचार का अटूट संबंध प्रतिपादन करने से, कृष्ण का यह बोध अमर हुआ है। विशेषतः इन ग्रंथों ने कृष्ण को पूर्णावतार बना दिया है।

द्वैत, विशिष्टाद्वैत, अद्वैत आदि मतप्रतिपादक प्राचीन आचार्यों के भाष्यस्वरूप ग्रंथ भगवद्गीता पर उपलब्ध हैं। आधुनिक साहित्य में तिलकजी का 'गीतारहस्य' ज्ञानमूलक, भक्तिप्रधान, निष्काम कर्मयोग का प्रतिपादक है। महात्मा गांधी का 'अनासक्तियोग' ग्रंथ गीताप्रतिपादन के स्पष्टीकरणार्थ ही है।

युद्धारंभ में कृष्ण ने अर्जुन से गीता कह कर युद्धप्रवृत्त किया। पश्चात् अर्जुन गीतोपदेश भूल गया, तथा पुनः एक बार उसे सुनने की उसने कृष्ण से प्रार्थना की। कृष्ण ने कहा, "मैं भी उस समय विशेष योगावस्था में था। उस समय जो प्रतिपादन किया, वह मैं अब दुहरा नहीं सकता। तथापि उसका कुछ अंश मैं तुम्हें कथन करता हूँ।" उसी का नाम 'अनुगीता' है (म. आश्व. १६-५०)। भगवद्गीता का महत्व अनुगीता को प्राप्त नहीं हुआ।

विश्वरूपदर्शन—कृष्णचरित्र में विश्वरूपदर्शन एक महत्वपूर्ण भाग है। १. बाललीला में कृष्ण ने, मृत्तिका भक्षण की। कृष्ण ने यशोदाद्वारा किये गये मृत्तिकाभक्षण के आरोप को अस्वीकृत किया। मुँह खोलने को बताने पर, यशोदा को मुँह में विश्वरूपदर्शन हुआ।

२. अक्रूर को विश्वरूपदर्शन दिया।

३. हस्तिनापुर में कृष्ण दौत्यकर्म करने गया था। दुर्योधन कृष्ण को बंदिस्त करने को उद्युक्त हुआ। इस समय कृष्ण ने अपना उग्र स्वरूप प्रकट किया, जिसका वर्णन विश्वरूप के समान ही है।

४. भारतीय युद्ध के प्रारंभ में, गीता के ग्यारहवें अध्याय में अर्जुन को अपना विश्वरूप बताया। वहाँ उसका विस्तृत वर्णन है। उसकी भयानकता से अर्जुन भी घबराया। उसने सौम्यरूप धारण करने की कृष्ण से प्रार्थना की।

५. भारतीययुद्ध में कृष्ण की हाथ में शस्त्र धारण न करने की प्रतिज्ञा थी। भीष्म की ठीक इसके विपरीत, कृष्ण को शस्त्र उठाने को विवश करने की प्रतिज्ञा थी। घमासान लड़ाई में अर्जुन को भीष्म के सामने हारते देख, कृष्ण ने चतुर्भुज रूप धारण कर भीष्म पर धावा बोल दिया। प्रतिज्ञापूर्ति के आनंद में भीष्म ने हाथ जोड़ कर शस्त्र नीचे रखा।

६. इन्द्रप्रस्थ में अर्जुन को अनुगीता सुना कर द्वारका लौटते समय, मरुभूमि में कृष्ण की उत्तंक ऋषि से भेंट हुई। उत्तंक ने कृष्ण के होते हुए, भारतीय युद्ध के भयानक संहार का उत्तरदायित्व इसपर डाल कर, इसकी निर्भर्त्सना की। उत्तंक की सांत्वना के लिये कृष्ण ने वहाँ भी उसे विश्वरूपदर्शन कराया तथा इच्छित वर दिये (म. आश्व. ५४. ४)।

युद्ध में सब बांधवों का वध होने के कारण युधिष्ठिर अत्यंत अस्वस्थ हुआ। वक्तृत्वपूर्ण भाषण द्वारा युधिष्ठिर का मन कृष्ण ने शांत किया। भीष्म के द्वारा भी कृष्ण ने अनेक प्रकार का ज्ञान धर्म को दिलाया, जो महाभारत के शान्ति एवं अनुशासन पर्व में उपलब्ध है।

इस कारण से ही बालकृष्ण, मुरलीधर, गोपालकृष्ण, राधाकृष्ण, भगवान् कृष्ण आदि अनेक अवस्थाओं में इसकी उपासना प्राचीन काल से आजतक प्रचलित है। प्रत्येक अवस्था पर कई रचित ग्रंथ हैं। अतः यह पूर्णावतार है।

ऐतिहासिक चर्चा—पाणिनि के समय, कृष्ण सन्माननीय माना जाता था। तथापि क्षत्रिय नहीं समझा जाता था। सामान्य क्षत्रियवाचक शब्द से 'गोत्रक्षत्रियाख्येभ्यो बहुलं वुञ्' (पा. सू. ४.३.९९) इस सूत्र से प्रत्यय बताया है। वासुदेव क्षत्रिय न होने के कारण, 'वासुदेवार्जुनाभ्यां वुन्' (पा. सू. ४.३.९८) इसने पुनः वुन् बताया है। यह स्पष्टीकरण पतंजलि ने किया है। इससे स्पष्ट है कि, सोमवंश के क्षत्रिय यादवकुल से कृष्ण का संबंध बाद में जोड़ा गया।

वासुदेव तथा अर्जुन को नरनारायण अवतार मान कर, उपास्य देवताओं में भी सम्मीलित कर लिया गया था। इससे इनका क्षत्रियत्व लुप्त हो कर उससे भी श्रेष्ठ उपाधि इन्हें प्राप्त हो गयी थी। इसलिये पाणिनि को स्वतंत्र सूत्र बनाना पड़ा।

महाभारत में प्राप्त नर-नारायण उपासना का संप्रदाय पाणिनि तथा पतंजलिकाल में भी प्रचलित था। नर-नारायण का स्थान कृष्णार्जुन को ही दिया जाता था।

ययाति की जरा का स्वीकार न करने के कारण, यदुकुल आक्षिप्त माना जाता था। यह आक्षेप कृष्णावतार से दूर हुआ तथा यदुकुल उज्ज्वल हो गया।

ख्रिस्त के पूर्व दो सदी के करीब लिखे गये 'घोसुंडी शिलालेख' में वासुदेवपूजा का निर्देश है।

२. (स्वा. उत्तान.) हविर्धान राजा को हविर्धानी नामक भार्या से उत्पन्न छः पुत्रों में चौथा।

३. विश्वक का कार्ष्णि तथा कृष्णीय पैतृक नाम। इस विश्वक का कृष्ण नाम का कोई पूर्वज होगा (विश्वक कार्ष्णि तथा कृष्णीय देखिये)।

४. कद्रूपुत्र नागों में से एक।

५. शुक्राचार्य को पीवरी से उत्पन्न चार पुत्रों में से एक।

६. (आंध्र. भविष्य.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा ब्रह्मांड के मतानुसार सिंधुक का भ्राता।

कृष्ण आंगिरस—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ८.८५.३-४)।

कृष्ण आत्रेय—यह आयुर्वेद पृथ्वी पर लाया (म. शां. २०३.१९)। अग्निवेश, भेड, हारित आदि इसके ही शिष्य थे (चरकसंहिता)।

कृष्ण देवकीपुत्र—घोर आंगिरस का शिष्य (छां. उ. ३.१७.६)। वसुदेव-देवकीपुत्र कृष्ण, तथा यह एक होने का प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

नामसादृश्य तथा तप, दान, आर्जव, अहिंसा, सत्य आदि कथित गुण, गीताप्रतिपादित दैवी संपत्ति के साथ मिलते हैं। तथापि मरणकाल में अक्षय (अक्षित), अच्युत (अच्युत) तथा प्राणसंशित वृत्ति रखने का घोर आंगिरस का उपदेश गीता में नहीं है। गीता में केवल ईश्वरध्यान तथा प्रणवोच्चार बताया है।

इसलिये घोर आंगिरस का शिष्य कृष्ण देवकीपुत्र तथा गीताप्रतिपादक भगवान् कृष्ण एक नहीं हैं। पुराणों में घोर आंगिरस का कृष्णचरित्र में निर्देश भी नहीं है।

कृष्ण द्वैपायन—बादरायण तथा यह एक ही है (मत्स्य. १४. १४-१६)।

कृष्ण पराशर—पराशर कुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि। इसके कुल में कार्ष्णायन, कपिमुख, काकेयस्थ, जनपादि तथा पुष्कर मुख्य आदि थे (पराशर देखिये)।

कृष्ण हारित—एक आचार्य (ऐ. आ. ३. २. ६)। इसने अपने शिष्य को वाग्देवता संबंधी उपासना का एक प्रकार बताया। ऋग्वेद-कृष्ण हारित (शां. आ. ८. १०) कृष्ण हारित नामक महर्षि ने कालात्मक प्रजा उत्पन्न की। इस कारण इसके शरीर से ... हुए, परंतु इसने छंदों से अपना शरीर संपन्न किया। इस कारण छंदसंहिता का आरंभ है, यह सात्विक अर्थ इसने बताया (ऐ. आ. ३. २. ६)।

कृष्णदत्त लौहित्य—श्यामजयंत लौहित्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३. ४२. १; वंश देखिये)।

कृष्णधृति सात्यकि—सत्यश्रवस का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३. ४२. १; वंश देखिये)।

कृष्णीय—विश्वक कार्ष्णि देखिये।

केकय—एक राजा। इसे एक बार अरण्य में एक राक्षस ने पकड़ लिया। इसने अपने राज्य में लोग कैसे धार्मिक हैं, यह बताया तथा कहा कि, इसी कारण मुझे राक्षसों का भय नहीं लगता। इसे राक्षस ने छोड़ कर घर जाने को कहा (म. शां. ७८; अश्वपति कैकय देखिये)।

२. (सो. अनु.) शिबिराजा के चार पुत्रों में चौथा।

३. भारतीययुद्ध में पांडव पक्ष का राजा (म. उ. १६८.१३)।

४. एक सूताधिप। इसे मालवी नामक स्त्री से कीचकादि पुत्र हुए। इसकी दूसरी पत्नी मालवी की बहन थी। उसकी कन्या सुदेष्णा, जो विराट की भार्या थी (म. वि. परि. १. क्र. १९; पौम. ५४-३६)।

५. इसकी कन्या कैकेयी। यह दशरथ की पत्नी थी (मार्क. १०८)।

६. भारतीययुद्ध में दुर्योधन पक्ष का राजा (म. उ. १९६.५)।

केतव—वायु मत में व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा के शाकपूर्ण रथीतर का शिष्य (व्यास देखिये)।

केतु—(स्वा.) ऋषभदेव तथा जयंती के सौ पुत्रों में से एक। इसके पिता ने जंबुद्वीप के नौ वर्षों में से अजनाभवर्ष के नौ खंड किये। तथा उन में से एक इसे दिया।

२. तामसमनु के पुत्रों में से एक (भा. ८.१)। संभवतः इसका नामांतर रहा होगा।

३. दनु तथा कश्यप का पुत्र। यही केतु नामक ग्रह होगा।

४. ऋषियों के एक संघ का नाम (म. शां. १९.१२)।

५. धूमकेतु का नामांतर। प्रजा की अत्यंत वृद्धि हो रही है, यह देख कर ब्रह्मदेव ने मृत्यु नामक एक कन्या निर्माण की। उसे प्रजा का संहार करने के लिये कहा, तब वह रोने लगी। उसके अश्रुओं से अनेक रोग उत्पन्न हुए, इसलिये उसने तप किया। इस तप के कारण, उसे वर मिला कि, तुम्हारे निमित्त किसी को भी मृत्यु नहीं आयेगी। तब उसने एक दीर्घ श्वास छोड़ा, जिससे केतु उत्पन्न हुआ। उस केतु को एक शिखा थी। इसे केतु वा धूमकेतु कहते हैं (विष्णुधर्म. १.१०६)।

६. (सो.) मत्स्य के मत में द्रुह्यपुत्र।

केतु आग्नेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१५६)।

केतु वाज्य—वाज्यऋषि का शिष्य। इसका शिष्य कौहल (वं. ब्रा. १)।

केतुजाति—पराशरकुल के ऋषिगण।

केतुमत्—दनुपुत्र दानवों में से एक।

२. (सो. क्षत्र.) धन्वन्तरि का पुत्र। इसे भीमरथ या भीमसेन नामक एक पुत्र था।

३. एकलव्य का पुत्र तथा निषध देश का राजा। यह दुर्योधन के पक्ष में था। कलिंग के वध के बाद भीम ने इसका वध किया (म. भी. ५०.७०)। मयसभा में उपस्थित क्षत्रियों के बीच का केतुमान् यही होगा।

४. (सू. इ.) पृथुराजा द्वारा नियुक्त दिक्पालों में से तीसरा। अर्थात् यह पश्चिम का दिक्पाल होगा (पृथु देखिये)।

५. (सू. नाभाग) भागवत मत में अंबरीषपुत्र।

६. प्रतर्दनदेवों में से एक।

७. सुतार नामक शिवावतार का शिष्य।

८. दारुक नामक शिवावतार का शिष्य।

केतुमती—सुमालि राक्षस की स्त्री। रावण की नानी।

केतुमाल—(स्वा.) आग्नीध्र राजा के नौ पुत्रों में कनिष्ठ। इसकी स्त्री मेरुकन्या देववीति थी। इसका वर्ष इसी के नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५.२)। इसकी माता का नाम उपचिति था।

केतुवर्मन्—त्रिगर्ताधिपति सूर्यवर्मा का भ्राता। अर्जुन ने इसका वध किया (म. आश्व. ७३.१५)।

केतुवीर्य—कश्यप एवं दनु का पुत्र।

२. मगधराज। इसकी कन्या सुकेशी, जो मरुत्त से ब्याही गयी थी।

केतुशृंग—त्रिधामन् नामक शिवावतार का शिष्य।

केदार—एक राजर्षि (दे. भा. ९.४२)।

केदारेश्वर—एक शिवावतार। नरनारायण इसे पृथ्वी पर लाये। यह उस भाग का अधिपति है (शिव. शत. ४२)। भूतेश इसका उपलिंग है (शिव. कोटि. १)।

केरल—कश्यपगोत्र का गोत्रकार गण।

केलि—ब्रह्मधान का पुत्र।

केवल—(सू. दिष्ट.) नर राजा का पुत्र। इसका पुत्र बंधुमत्।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के अजित्‌देवों में से एक।

३. ब्रह्मांड मतानुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

केवलबर्हि—(सो. यदु.) भागवत मत में अंधकपुत्र।

केश—ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ का एक ऋषि (पद्म. सृ. ३४)।

केशलंब—तप नामक शिवावतार का शिष्य।

केशिध्वज—(सू. निमि.) कृतध्वज जनक का पुत्र। यह आत्मविद्याविशारद था (भा. ९.१३.२०) इसका पुत्र भानुमत् जनक (खांडिक्य देखिये)।

केशिन्—कश्यप एवं दनु का पुत्र (ह. वं. १.३.८६)। इसने प्रजापति की देवसेना एवं दैत्यसेना नामक दो प्रसिद्ध कन्याओं का हरण किया। दैत्यसेना इसके वश में हुई। परंतु देवसेना आक्रोश करने लगी तथा 'कोई तो भी छुड़ावो' कह कर चिल्लाने लगी। इसी समय देवसेना का आधिपत्य जो स्वीकार कर लेगा, ऐसा सेनापति ढूँढने के लिये इन्द्र मानसपर्वत पर आया। उसने केशी से युद्ध कर के देवसेना को बचाया (म. आर. ११३.८-१५)। कुछ दिनों के बाद, इसने चित्रलेखा तथा उर्वशी आदि अप्सराओं को भगा लिया। यह पुरूरवा (बुधपुत्र) ने देखा। उसने इस दानव से युद्ध कर, इन दोनों को छुडाया (मत्स्य. २४.२३. पद्म. सृष्टि. १२.७६)।

२. वसुदेव को कौशल्या से उत्पन्न पुत्र।

३. कंस ने कृष्ण वध के लिये केशी नामक दैत्य भेजा था। इसने अश्वरूप धारण कर कृष्ण पर आक्रमण किया। परंतु अश्व ने खाने के लिये फैलाये मुख में हाथ डालकर, कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.३७.२६; म. स. परि. ४, क्र.२१;पंक्ति. ८४३-८४४)। यह ऋष्यमूक पर्वत पर रहता था (गर्ग. सं. १.६)।

केशिन् दार्भ्य वा दाल्भ्य—एक राजा तथा सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १३.१०.८)। उच्चैःश्रवस् कौपयेय की बहन का पुत्र (जै. उ. ब्रा. ३.२९.१)। पांचाल इसके प्रजाजन थे, इसलिये केशिन् इसकी एक शाखा रही होगी (क. सं. ३०.२; बौ. श्रौ. २०.२५)। याज्ञिक विधि के बारे में, इसका खंडिक से एकमत नहीं होता था (मै. सं. १.४.१२; श. ब्रा. ११.८.४.१)। दीक्षा का महत्व इसे सुवर्ण पक्षी ने सिखाया (कौ. ब्रा. ७.४; केशिन् सात्यकामि देखिये)। उच्चैःश्रवस् कौपयेय मरने पर केशिन् दार्भ्य दुःख के कारण, वन में भटकने लगा। उस समय उच्चैःश्रवस् इसे धूम्ररूप में मिला। इसके पूछने पर, मृत्यु के बाद धूम्रशरीर उसे कैसे प्राप्त हुआ यह बताया। यह उससे प्रेम से गले मिलने लगा किन्तु वह हाथ में नहीं आया (जै. उ. ब्रा. ३. २९–३०)।

केशिन् सात्यकामि—एक आचार्य। इसने केशिन् दार्भ्य को सप्तपदी शाक्वरी मंत्र की विशेष जानकारी दी (तै. सं. २.६.२.३; मै. सं.१.६.५)।

केशिनर—(सू. इ.) भविष्य मत में सुनक्षत्रपुत्र।

केशिनी—कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक अप्सरा।

२. सगर की दो स्त्रियों में से ज्येष्ठ (म. व. १०४.८)। इसके शैब्या, भानुमती एवं सुमति नामांतर भिन्न भिन्न स्थानों पर मिलते हैं। इसकी सौत का नाम सुमति था (भा. ९.८.१५)। सगर ने इन दोनों स्त्रियोंसहित पुत्रप्राप्ति के लिये तपस्या कर, शंकर से पुत्रप्राप्ति का वरदान प्राप्त किया। इससे सगर को असमंजस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (सगर देखिये)। यह विदर्भकन्या थी (वायु. ८८.१५५)।

३. (सो. पूरु.) सुहोत्र के पुत्र अजमीढ की तीन स्त्रियों में से एक। इसे जह्नु, जन, रुचिन् आदि तीन पुत्र हुए (म. आ. ८९.२८)।

४. विश्रवस् ऋषि की पत्नी। इससे रावण, कुंभकर्ण, बिभीषण आदि तीन पुत्र हुए (भा. ४.१.३७; ७.१.४३)।

५. दमयंती के मायके की चेटी। दमयंती का नल ने त्याग किया। इसे दमयंती ने चार बार बाहुक के पास भेजा। पहली बार उसकी जानकारी, दूसरी बार उसकी विस्तृत जानकारी, तीसरी बार नलद्वारा पकाये माँस का कुछ हिस्सा मँगाना तथा चौथी बार इसी के साथ अपने दोनों अपत्यों को भेज कर, क्या होता है यह सविस्तर रूप से पुछवाया।

६. एक अप्रतिम लावण्यवती राजकन्या। इसने अपना स्वयंवर रचा था। इसमें अंगिरा ऋषि का पुत्र सुधन्वा एवं प्रह्लादपुत्र विरोचन आया था। इनमें जो श्रेष्ठ होगा उसे वरण करूँगी ऐसा केशिनी ने कहा। तब इनका आपस में विवाद हुआ। प्राणों की बाजी लगा कर वे प्रह्लाद के पास गये। प्रह्लाद ने बताया कि, सुधन्वा का पक्ष सही है। प्रह्लाद के कहने पर उदार अंतःकरणवाले सुधन्वा ने विरोचन को छोड दिया। केशिनी ने विरोचन का वरण किया (म. स. ६१; उ. ३५*)। यह कथा 'भूमि के लिये असत्य नहीं बोलना चाहिये,' यह समझाने के लिये उद्योगपर्व में विदुर ने धृतराष्ट्र को बताई। द्रौपदीवस्त्रहरण के समय, यही कथा यह स्पष्ट करने के लिये बताई गई कि, असद्धर्म से व्यवहार न करते हुए, अगर कोई प्रश्न पूछे, तो योग्य तथा सत्य निर्णय देना चाहिये। सत्यकथन के लिये कभी डर अथवा लज्जा, संकोच नहीं मानना चाहिये।

यह कथा दो स्वरूपों में प्राप्त है। उद्योगपर्व में कहा गया है कि, स्वयंवर होने पर ही यह वादविवाद हुआ; परंतु सभापर्व में कहा गया है कि, आपस में झगडा होते समय यह वादविवाद हुआ, तथा प्रह्लाद ने कश्यप से पूछ कर निर्णय दिया।

७. कश्यप तथा प्राधा की कन्या।

८. बृहद्ध्वज देखिये।

केसरप्राबंधा—वैतहव्यों ने इसकी एक बकरी मार कर पकायी। पश्चात् उस पातक से वे नष्ट हुए। इस संबंध में इसका निर्देश है (अ. वे. ५.१८.११)। भृगु का वध करने के कारण, उत्कर्ष के शिखर पर पहुँचे हुए वैतहव्य सृंजय नष्ट हुए (अ. वे. ५.१९.१)।

केसरिन्—अंजनी का पति तथा एक वानर। (वा. रा. उ. ६६)। यह गोकर्ण नामक पर्वत पर रहता था। अंजनी तथा मार्जारास्या नामक इसकी दो स्त्रियाँ थीं। एक बार शंबसादन नामक असुर ने, अनाचार बन कर ऋषियों को कष्ट दिये। तब इसने ऋषियों की आज्ञा से उससे युद्ध किया तथा उसका वध किया। ऋषियों ने संतुष्ट हो कर इसे आशीर्वाद दिया, 'तुझे अच्छे स्वभाववाला, भगवद्भक्त तथा बलवान् पुत्र होगा।' तदनुसार हनुमान् उत्पन्न हुआ (वा. रा. सु. ३५)।

२. गरुड वानर का पुत्र। जांबवत् का कनिष्ठ भ्राता।

कैकरसप—कश्यपकुलीन गोत्रकार (मत्स्य. १९९.७)।

कैकसी—सुमाली राक्षस की कन्या तथा विश्रवा ऋषि की पत्नी। इसके विवाह की मँगनियाँ होने पर सुमाली कुछ भी कारण बता कर, उनकी माँग को अस्वीकार करता था। इसका परिणाम यह हुआ कि, सबों ने मँगनी करना बंद कर दिया। कन्या का यौवन ढल रहा है, यह देख कर इसके पिता ने विश्रवा को, इसका वरण करने की सलाह दी। समय का ख्याल न रख, ऐन संध्या के समय यह विश्रवा के सामने जा खडी हुई। ऋषि ने इसका मनोगत ताड़ लिया। क्रूर घटिका होने के कारण इसे तीन अपत्य बुरे तथा इसकी इच्छानुसार चौथा पुत्र अच्छा हुआ। उनके नाम क्रमशः रावण, कुंभकर्ण, शूर्पणखा (शूर्पनखा), एवं बिभीषण थे (वा. रा. उ.९; स्कंद. ३.१.४७)।

कैकेय—अश्वपति कैकेय एवं सुमित्रा देखिये।

२. (सो. अनु.) भागवत तथा विष्णु मत में शिबि का पुत्र।

कैकेयी—केकय देश के राजा अश्वपति की कन्या, एवं राजा दशरथ की कनिष्ठ किंतु अत्यंत प्रियपत्नी। इसका पुत्र भरत। भरत के लिये ही इसने राम को वनवास दिलाया, जिससे दशरथ की मृत्यु हुई।

राजा दशरथ देवदानवों के युद्ध में, देवताओं की सहायता करने गये। उस समय रथ के पहिये की कील टूट गयी। कैकेयी ने अपना हाथ वहाँ लगा कर राजा को बचाया। राजा ने इसे दो वर माँगने को कहा (ब्रह्म. १२३)। इससे पता चलता है, कि यह युद्ध में रही होगी (कलहा देखिये)। राम के यौवराज्यभिषेक के दिन समीप आये। गांव सजाने लगे तब अभिषेक की बात मंथरा ने इसे बतायी। दशरथ ने कैकेयी के महल में सतत रहते हुए भी, इसे अभिषेक की बात का पता लगने नहीं दिया था। मंथरा के बता देने के बाद, राजा ने इसे, अभिषेक का समाचार भिजवाया। रामयौवराज्याभिषेक का समाचार मंथरा से सुन कर, इसने आनंद प्रदर्शित किया। भरत तथा राम मेरे लिये समान हैं यों कह कर, समाचार लानेवाले मंथरा को पुरस्कार देना चाहा। मंथरा ने इसके मन में जहर भर दिया। उसने कहा, 'रोने के समय में क्यों हँसती हो?' (वा. रा. अयो. ७.३)। राम के ऐश्वर्य तथा भरत की हीनदशा का चित्र, मंथरा ने कैकेयी के सामने प्रस्तुत किया। इस कारण सामान्य स्त्रीस्वभावसुलभ इसका मन मत्सर से भड़क उठा। देवासुरसंग्राम के समय से बचे हुए वरदानों की याद उसीने दिलायी। मंथरा की सलाह के अनुसार, कैकेयी ने दशरथ को दो वरदानों का स्मरण दिला कर, राम के लिये वनवास तथा भरत के लिये राज्य माँगा। राजा ने ये दोनों वरदान दिये। यथार्थ बात तो यह थी कि, कैकेयी के पिता ने पहले से ही यह व्यवस्था कर रखी थी। बूढ़े राजा को लड़की ब्याहते समय, कैकेयी के पिता ने यह शर्त रखी थी कि, इसके पुत्र को राजगद्दी मिले। दशरथ ने यह शर्त स्वीकार भी की थी, परंतु इस बात का कैकेयी को पता न था।

भरत ने कैकेयी की बहुत निर्भर्त्सना की, जिसके कारण इसका सारा षड्यंत्र नष्ट हो गया। भरत ने इसका वर्णन निम्नलिखित विशेषणों से किया है—क्रोधी, अविचारी, घमंडी, अपने को भाग्यवान समझने वाली, ऐश्वर्यलुब्ध, दुर्जन होते हुए सज्जन की तरह दिखने वाली, दुष्ट, तथा पापबुद्धि (वा. रा. अयो. ९२.१६)।

भरत ने राम को लाने के लिये सपरिवार वन जाना निश्चित किया। तब सुमित्रा एवं कौसल्या के साथ कैकेयी भी वन जाने के तयार हुई (वा. रा. अयो. ८३.६; सुवेधा २. देखिये)।

कैटभ—मधुदैत्य का अनुज। इसका वध विष्णु ने किया (मधुकैटभ देखिये)।

२. एक राक्षस। इसके अश्वत्थ, पिप्पलादि दो ब्रह्मभक्षक पुत्र थे। उन का अगस्ति ने सौरि शनैश्वर की मदद से नाश किया (ब्रह्म. ११८)।

कैतव—शकुनिपुत्र उलूक का नामांतर (म. उ. १६०. ९)।

कैतवक—शकुनि का नामांतर (म. स. ५४.१)।

कैरात—कश्यपकुल का गोत्रकार।

कैराति—अंगिराकुल का गोत्रकार।

कैरिशिय—सुत्वन् का पैतृक नाम।

कैलासक—एक सर्प (म. उ. १११.११)।

कैशोर्य—काप्य का पैतृक नाम (बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८)।

कोक—सत्रासह नामक पांचाल के राजा का पुत्र (श. ब्रा. १३.५.४.१७)।

कोकिल—एक राजपुत्र का नाम (काठक-अनुक्रमणी, वेबर)।

कोचरश---एक राजा। इसकी भार्या सुप्रभा। वह एकादशी के दिन विष्णु के सामने जागरण कर रही थी। उस समय वहाँ शौरी नामक ब्राह्मण आया। राजारानी को आनंद से देवता के सामने नाचते देख, ब्राह्मण बहुत खुश हुआ। रानी ने उसे अपना पूर्वजन्मवृत्त कथन किया। उसने कहा, 'पूर्वजन्म में मैं एक वेश्या थी। यह राजा एक शूद्र था। एकादशी के दिन बीमारी के कारण, सहजरूप से जागरण तथा उपवास हो गया। देवताओं के नाम भी मुँह से निकल पडे। इस कारण अब राजकुल में जन्म हुआ'। यह वृत्तांत सुन कर ब्राह्मण ने भी एकादशीव्रत प्रारंभ किया। कालांतर में तीनों को वैकुंठ प्राप्त हुआ (पद्म. उ. ८१)।

कोटरक---एक सर्प (म. आ. ३१.८)।

कोटरा---बाणासुर की माता। यह पुत्र के प्राणों की रक्षार्थ, कृष्ण के सामने मुक्तकुंतला एवं वस्त्ररहित खडी हुई थी (भा. १०.६३.२०; बाण देखिये)।

कोटिक या **कोटिकाख्य**---(सो. अनु.) सुरथपुत्र। इसने जयद्रथ के लिये द्रौपदी की पूँछताँछ की थी। पश्चात् जयद्रथ द्रौपदी को हरण कर ले जा रहा था। तब पांडवों से हुए युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. व. २४८, २४९; २५५.२४)।

कोटिश---एक सर्प (म. आ. ५२.५)।

कोपचय---अंगिराकुल का गोत्रकार।

कोपवेग---युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.१४)।

कोमरक---जनमेजय के सर्पसत्र का एक सर्प (म. आ. ५२.१५)।

कोरकृष्ण---वसिष्ठकुल का ऋषिगण। पाठभेद-कौरकृष्ण।

कोरव्य---कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कोल---कुशिकगोत्र का मंत्रकार।

कोलब---वायु तथा ब्रह्मांडमत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के लांगलि का शिष्य। पाठभेद--कोहल।

कोलासुर---एक दैत्य। कहोड का पिता पिप्पलाद दुग्धेश्वर के पास तपस्या कर रहा था। एक बार वह ध्यानस्थ था। उस समय कोलासुर उसे यातना देने पहुँचा। तब कहोड ने एक कृत्या निर्माण कर उसका वध किया (पद्म. उ. १५७)।

कोलाहल---(सो. अनु.) मत्स्य मत में सभानरपुत्र। कालनर, कालानर, कालानल तथा यह एक ही है।

कोष---एक आचार्यकुल (श. ब्रा. १०.५.५.८; सुश्रवस् देखिये)।

कोहल---वायु तथा ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा में लांगलि का शिष्य। पाठभेद् कोलब् (व्यास देखिये)। जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.९)।

२. भगीरथ देखिये।

कौकुर---कुकुरवंशोत्पन्न कारस्कर राजा।

कौकुरुण्डि---उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

कौकूस्त---इसके द्वारा यज्ञ में विपुल दक्षिणा और नाने का निर्देश है (श. ब्रा. ४.६.१.१३)।

२. तामस मन्वन्तर के योगवर्धनों में से एक (मनु देखिये)।

कौचकि---अंगिराकुल का गोत्रकार।

कौचहस्तिक---भृगुकुल का गोत्रकार।

कौच---हिरण्याक्ष एवं देवताओं के बीच हुए युद्ध में वायु ने इसका वध किया। (पद्म. सृ. ७५)।

कौटिल---भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार।

कौटिल्य---चाणक्य देखिये।

कौणकुत्स---एक ऋषि (म. आ. ८.२१)।

कौणप---एक सर्प (म. आ. ५२.५)।

कौणपाशन---कद्रूपुत्र सर्प।

कौठरव्य---एक आचार्य (सां. आ. ७.१४; ८.२)। इसने अक्षरोपासना या अक्षरों के संबंध की जानकारी प्रचार में लायी (ऐ. आ. ३.२)।

कौण्डिनी---पाराशरीकौण्डिनीपुत्र देखिये।

कौण्डिन्य---हिरण्यकेशि शाखा के पितृतर्पण में इसका उल्लेख है। यह सूत्रकार था। परंतु इसने किसपर सूत्र रची यह नहीं कह सकते (स. औ. २०.८.२०)।

२. एक आचार्य। 'ह' कार को क वर्ण होता है,' इस कथन के लिये, सम्मानार्थ लिये गये कई आचार्यों के नामों में इसका भी नाम समाविष्ट है (तै. प्रा. ५.३८)।

३. शांडिल्य का शिष्य। इसका शिष्य कौशिक (बृ. उ. २.६.१.४; ६.१, विदर्भिन् देखिये)।

४. एक महर्षि। यह कुण्डिनकुलोत्पन्न था (म. स. ४.१४)। यह युधिष्ठिर के अश्वमेध का एक सदस्य था (जै. अश्व. ६३)। यह स्थावर (बेउर) में रहता था। इसकी

स्त्री आश्रमा। दुर्वांकुरमाहात्म्य बताने के लिये इसकी कथा दी गयी है (गणेश. १.६३)।

५. एक ऋषि। इसका आश्रम हस्तिमती एवं साभ्रमती नदियों के संगम पर था। एक बार अतिवृष्टि के कारण, आश्रम में पानी आया। इसलिये इसने नदी को सूख जाने का शाप दिया तथा स्वयं विष्णुलोक चला गया (पद्म. उ. १४५)।

कौतस्त--अरिमेजय प्रथम एवं जनमेजय का पैतृक नाम।

कौत्स--महित्थि का शिष्य। इसका शिष्य मांडव्य (श. ब्रा. १०.६.५.९; बृ. उ. ६.५.४)। वेद अनर्थक है, इस कौत्स के मत का निरुक्त में निषेध दर्शाया गया है (नि. १.१५)।

एक आचार्य (आ. श्रौ. १०.२०.१२; आश्व. श्रौ. १.२.५; ७.१,१९; आ. ध. १.१९.४.२८.१)।

२. भृगुकुल का गोत्रकार।

३. अंगिराकुल का गोत्रकार।

४. विश्वामित्र का शिष्य। विश्वामित्र के मना करने पर भी, इसने रघुराजा के पास से चौदह कोटि मुहरें दक्षिणा में ला कर उसे दी (स्कन्द. २.८.५)। रघुवंश में बरतंतुशिष्य कौत्स की, ठीक ऐसी ही कथा दी गयी है (र. वं. ५)।

५. एक ब्रह्मर्षि। भृगुवंशीय राजा भगीरथ ने इसे अपनी कन्या हंसी दी थी (म. अनु. २०० कुं; दुर्मित्र कौत्स एवं सुमित्र कौत्स देखिये)।

कौत्सायन--मंत्रद्रष्टा (मैत्र्यु. ५.१)।

कौथुम पाराशर्य--वायु तथा ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा में एक।

कौथुमि--हिरण्यनाभ नामक ब्राह्मण का पुत्र। एक बार यह जनक के आश्रम में गया। वहाँ उसने ब्राह्मणों से विवाद किया तथा कोपविष्ट हो कर एक ब्राह्मण का वध किया। इस कारण इसे महारोग तथा कुष्ठ हुआ। ब्रह्महत्या इसके पीछे लगी। सारे तीर्थ करने पर भी उसने पीछा न छोड़ा। आगे चल कर, पिता की सलाह के अनुसार इसने श्राव्यसंज्ञक सूक्त का सूर्य के सामने निरंतर जप किया एवं पुराणश्रवण किया। इससे इसका उद्धार हुआ (भवि. ब्राह्म. २११)।

कौपयेय--उच्चैःश्रवस् का पैतृक नाम।

कौबेरक--कश्यपकुल के गोत्रकारगण।

कौब्जायनि--मौब्जायनि का पाठभेद।

कौमानरायण--कौलायन का पाठभेद।

कौभ्य--बभ्रु का पैतृक नाम।

कौरकृष्ण--कोरकृष्ण का पाठभेद।

कौरयाण--पाकस्थामन् का पैतृक नाम (ऋ. ८.३.२१)।

कौरव्य--कुरु वंश का एक राजा। परीक्षित के शासन में, यह अपने स्त्रीसहित सुख से रहता था (अ. वे. २०.१२७.८; खिल. ५.१०.२; सां. श्रौ. १२.१७.२; वैतानसू. ३४.९)। बाल्हिक प्रातिपीय राजा को कौरव्य कहा गया है (श. ब्रा. १२.९.३.३)। एक आख्यायिका में, आर्ष्टिषेण एवं देवापि भी कौरव्य नाम से संबोधित किये गये हैं (नि. २.१०)। यह वसिष्ठकुल का गोत्रकार था।

२. ऐरावत कुलोत्पन्न एक नाग तथा उलूपी का पिता। जनमेजय के सर्पसत्र में इसके कुल के ऐंडिल, कुंडल, मुंड, वेणिस्कन्ध, कुमारक, बाहुक, शृंगबेग, धूर्तक, पात, तथा पातर ये कुल दग्ध हुए (म. आ. ५२.१२)।

कौरव्यायणीपुत्र--एक आचार्य। 'खं' शब्द का आकाश अर्थ लेने के लिये इसका मत माना गया है (बृ. उ. ३.५.१.१)।

कौरिष्ट--कश्यपकुल का ऋषिगण।

कौरुक्षेत्रिन्--अंगिराकुल का गोत्रकार।

कौरुपति--अंगिराकुल का गोत्रकार।

कौरुपथि--शांत्युदक करते समय किस मंत्र का उपयोग करना चाहिये, इस संबंध में इसके मत का निर्देश किया गया है (कौ. ९.१०)।

कौरुपांचाल--आरुणि के लिये यह शब्द प्रयुक्त होता था क्यों कि, वह इसी प्रांत का था (श. ब्रा. ११.४.१.२)। इसका व्यवसाय भी इसी नाम से दर्शाया जाता है (श. ब्रा. १.७.२.८)।

कौलकावती--इस नाम के दो ऋषियों ने रथप्रोत दार्भ्य से एक विशिष्ट यज्ञ कराया था (मै. सं. २.१.३)।

कौलायन--वसिष्ठकुल का ऋषि। पाठभेद-कौमानरायण।

कौलितर--एक दास (ऋ. ४.३०.१४)। यह शंबर का नाम रहा होगा। यहाँ इसका अर्थ कुलितर का पुत्र है।

कौशल--एक राजवंश। इस वंश के सात राजाओं का निर्देश प्राप्त है।

कौशल्य--अगस्त्यकुल के गोत्रकारगण।

२. अंगिराकुल के गोत्रकारगण।

३. पिप्पलाद का आश्वलायनकुल का एक शिष्य।

४. सुकर्म ब्राह्मण का शिष्य। इसने सामवेद का अध्ययन किया (भा. १२.६)।

५. जटीमालिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

६. कोसल देश का इस अर्थ में प्रयुक्त। कौसल्य पाठभेद भी मिलता है (कौसल्य देखिये)।

कौशापि--भृगुकुल के गोत्रकारगण।

कौशांबेय--प्रोती का पैतृक नाम।

कौशिक--कौडिण्य का शिष्य। इसके शिष्य गौपवन तथा शांडिल्य थे (बृ. उ. २.६.१; ४.६.१)। वायु तथा ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)। एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)। एक ऋषि (मत्स्य. १४५.९२-९३)। अथर्ववेद के गृह्यसूत्र का रचयिता कौशिक नामक एक आचार्य था। शांत्युदक देते समय कौन सा मंत्र कहा जावे, इस संबंध में इसके मत का उल्लेख है (कौ. ९.१०; शुना कौशिक देखिये)। इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं। १. कौशिकगृह्यसूत्र, २. कौशिकस्मृति, इस स्मृति का उल्लेख हेमाद्रि ने परिशेषखंड में किया है (१.६.३१; ६.३.७)। उसी तरह नीलकंठ ने भी इस स्मृति का उल्लेख श्राद्धमयूख में किया है। इसके नाम पर एक शिक्षा भी है। कौशिकपुराण भी इसीने रचा (C. C.)

कौशिक कुल के मंत्रकार--कौशिक कुल में १३ मंत्रकार दिये हैं। उन के नाम--१ विश्वामित्र, २ देवरात, ३ बल, ४ शरद्वत्, ५ मधुछंदस्, ६. अघमर्षण, ७ अष्टक, ८ लोहित, ९ भूतकाल, १० अम्बुधि, ११ धनंजय, १२ शिशिर, १३ शालंकायन (मत्स्य. १४५. ११२-११४)।

२. (सो. अमा.) कुशाश्व, गाधिन्, विश्वामित्र आदि लोगों का सामान्य नाम। विश्वामित्र के ब्राह्मण होने पर उसके कुल में उत्पन्न हुआ एक ऋषि। इसकी हैमवती नामक स्त्री थी। (म. उ. ११५.१३)।

३. सत्यवचनी ब्राह्मण। गांव के पास संगम पर यह तपस्या करता था। सत्य कहते समय, योग्य तारतम्य इस में न था। एक बार कुछ पथिक, चोरों के आक्रमण के कारण, इसके आश्रम में जा छिपे। लुटेरे (चोर) पूछने आये। इसने सत्य बात कह दी तब चोरों ने पथिकों को मार डाला। इस कारण, यह ब्राह्मण अधोगति को प्राप्त हुआ। सत्य बोलते समय तारतम्य रखना चाहिये यह समझाने के लिये कृष्ण ने अर्जुन को यह कथा बतायी है (म. क. ४९)।

४. एक गायक। यह विष्णु के अतिरिक्त किसी का गुणगान नहीं करता था। इसके अनेक शिष्य थे। इसकी कीर्ति सुन कर, कलिंग देश का राजा इसके पास आया तथा 'मेरी कीर्ति गाओ' कहने लगा। तब कौशिक ने कहा "यह विष्णु के अतिरिक्त किसी का गुणगान नहीं करता।" सब शिष्यों ने गुरु का समर्थन किया। राजा ने अपने नौकर को अपना गुणगान करने को कहा। तब कौशिक ने, मैं विष्णु के अतिरिक्त किसी का गुणगायन नहीं सुनता, यह कह कर अपने कान बंद कर लिये। इसके शिष्यों ने भी अपने कान बंद कर लिये। अंत में इसने नुकीली लकड़ी से अपने कान एवं जबान छेद डाली। ऐसे एकनिष्ठ गायन से ईश्वर की सेवा कर, यह वैकुण्ठ सिधारा (आ. रा. ५)।

५. सावर्णि मन्वंतर में होनेवाले सप्तर्षियों में से एक। यह गालव का नामांतर है।

६. शरपंजरावस्था में भीष्म के पास आया हुआ एक ऋषि (भा. १.९.७)।

७. एक ऋषि। वृक्ष के नीचे तप करते समय, वृक्ष पर से एक बगली ने इस पर विष्ठा कर दी। इसने क्रोधित होकर ऊपर देखा। ऊपर देखते ही तप के प्रभाव से वह पक्षिणी निर्जीव हो कर नीचे गिरी। अपने कारण यह बुरी घटना हुई देख इसे अतुल दुःख हुआ। गांव में यह भिक्षा मांगने एक पतिव्रता के घर गया। पतिकार्य में व्यस्त होने के कारण, भिक्षा देने में उसे देर हो गयी। इस कारण पतिव्रता ने इससे क्षमा-याचना की। फिर भी यह उस पर नाराज हुआ। तब उस स्त्री ने कहा कि मैं बगली नहीं हूँ। तुम्हें अभी भी धर्म समझ में नहीं आया है। उसे समझने के लिये तुम मिथिला के धर्मव्याध के पास जाओ। इसे यह बात ठीक जँची तथा इसका क्रोध शांत हुआ। पश्चात् यह धर्मव्याध के पास गया। धर्मव्याध ने इसे धर्म अनेक प्रकार से समझाया। तदनुसार यह अपने मातापिता की शुश्रूषा करने लगा। युधिष्ठिर ने वनवास में मार्कंडेय से पतिव्रतामाहात्म्य के बारे में पूछा, तब उसने यह कथा बताई (म. व. १९६-२०६)।

८. कुरुक्षेत्र में रहनेवाला ब्राह्मण। पितृवर्ती आदि सात पुत्रों का पिता (पितृवर्तिन् देखिये)।

९. जरासंध के हंस नामक सेनापति का उपनाम या नामांतर (म. स. २०. ३०)।

१०. एक राजा। यह रात्रि में मुर्गा बन जाता था। विशाला इसकी स्त्री थी। सर्वत्र अनुकूलता होने पर भी, अपना पति रात को कुक्कुट हो जाता है, यह देख उसे बहुत दुःख होता था। वह गालव ऋषि के पास गयी। ऋषि ने राजा का पूर्ववृत्तांत उसे निवेदन किया। पिछले जन्म में, यह शक्ति प्राप्त करने के लिये बहुत कुक्कुट खाने लगा। इस बात का कुक्कुट राजा ताम्रचूड को पता लगा। उसने इसे शाप दिया कि, रात्रि में तू कुक्कुट होगा। ज्वालेश्वर लिंगके पूर्व में स्थित लिंग की पूजा करने से राजा मुक्त होगा। गालव ऋषि ने यह कथा विशाला को बताई। तदनुसार इसने काम किया तथा शापमुक्त हुआ। उस दिन से उस लिंग को कुक्कुटेश्वर कहने लगे (स्कंद. ५. २. २१)।

११. (सो. यदु.) मत्स्य, विष्णु एवं वायु मत में विदर्भपुत्र।

१२. (सो. वृष्णि) विष्णु तथा मत्स्य मत में वैशाली से उत्पन्न वसुदेवपुत्र। वायु मत में वैशाखी से उत्पन्न वसुदेवपुत्र।

१३. गाधिन् देखिये।

१४. प्रतिष्ठान नगर का एक ब्राह्मण। यह कुष्ठरोगी था, परंतु इसकी स्त्री पति की अत्यंत सेवा करती थी। यह व्यसनी ब्राह्मण अपनी स्त्री के कंधे पर बैठ कर वेश्या के घर जा रहा था। राह में सूली पर चढ़े हुए मांडव्य ऋषि को इसका धक्का लगा। तब ऋषि ने धक्का लगानेवाले की सूर्योदय के पूर्व मृत्यु होगी, यों शाप दिया। परंतु इसके पत्नी के पातिव्रत्य के कारण, सूर्योदय ही नहीं हुआ। तब देवताओं ने इसकी स्त्री को संतुष्ट किया तथा अनुसूया के द्वारा इसके पति को जीवित किया (मार्क. १६.१४-८८; गरुड. १ १४२)।

कौशिकायनि—एक आचार्य। घृतकौशिक का शिष्य। वैजपायन तथा सायकायन इसके शिष्य थे (बृ. उ. २.६.२; ४.६.२)।

कौशिकी—जमदग्नि की माता सत्यवती। नदी में इसका रूपांतर हुआ, तब उसे यह नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. बा. ३४; म. आ. २०७.७; व. ८२; ११३; भी १०.१७)।

कौशिकीपुत्र—आलंबीपुत्र तथा वैयाघ्रपदीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य कात्यायनीपुत्र (बृ. उ. ६.५.१)।

कौशिल्य—सामवेदी श्रुतर्षि।

कौशीतक—इस ऋषि ने वकुलासंगम पर परमेश्वर की सेवा की (पद्म. उ. १६८)।

कौशीती—ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

कौश्रेय—सोमदक्ष का पैतृक नाम (का. सं. २०.८; २१.९)।

कौषारव वा **कौषारवि**—मैत्रेय का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ८.२८)।

कौषीतकि—एक ऋषि। इसके नाम पर कौषीतकि ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, सांख्यायन, श्रौत तथा गृह्यसूत्र आदि ग्रंथ हैं। उसमें इसके नाम से संबंधित कुछ मत आये हैं। कौषीतकि या कौषीतकेय यह कहोड़ का पैतृक नाम है (श. ब्रा. २.४.३.१; छां. उ. ३.५.१)। लुशाकपि ने इसे तथा इसके शिष्यों को शाप दिया था (पं. ब्रा. १७.४.७. ३)। इन शिष्यों में दो अध्यापक थे। पहला कहोड एवं दूसरा सर्वजित् (सां. ब्रा. १४.२४.७१)।

इसे ही सांख्यायन कहते हैं। इंद्रप्रतर्दनसंवाद में प्राणतत्व को संसार का मूलाधार कहा है (कौषी. उ. २.१)। इसका शिष्य सर्वजित् (कौषी. २.७)। इसने पुत्र को उपदेश दिया (छां. उ. १.५.२; कुषीतक सामश्रवस देखिये)। यह प्राण को ब्रह्म मानता था।

कौषीतकेय—कहोड का पैतृक नाम।

२. इसने सोमतीर्थ पर तपस्या की। शंकर के प्रसन्न होने पर, वहां सोमेश्वर नामक शिवलिंग की इसने स्थापना की (पद्म. उ. १६१)।

कौषेय—एक ब्रह्मर्षि (वा. रा. उ. १.४)।

कौष्टिकि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार ऋषि।

कौष्य—सुश्रवस का पैतृक नाम।

२. शंख का पैतृक नाम।

कौसला—कृष्णपत्नी सत्या का दूसरा नाम।

कौसल्य—पर आट्णार तथा हिरण्यनाभ देखिये।

कौसल्य आश्वलायन—एक तत्त्वज्ञ। प्राणी की उत्पत्ति किससे हुई, यह इसकी पृच्छा थी (प्रश्नोपनिषद. १.१)।

कौसल्या—कोसल देश के भानुमान् राजा की कन्या तथा राजा दशरथ की पटरानी। इसे हजार गाँव स्त्रीधन के स्वरूप में नैहर से मिले थे (वा. रा. अयो. ३१. २२-२३)। इसका पुत्र रामचंद्र। यह दशरथ की पहली स्त्री थी। राम को युवराज्याभिषेक करने की बात निश्चित हुई। यह समाचार कौसल्या को राम के द्वारा ही मिला। कैकेयी को बताने के लिये राजा स्वयं गया था। भरत के कहने से पता चलता है कि, कौसल्या कैकयी के साथ बहन सा व्यवहार करती थी (वा. रा. अयो. ७२.

१०)। परंतु कैकेयी एवं उसके परिवार के लोग बार बार इसका अपमान करते थे (वा. रा. अयो. २०. ३९)। कैकेयी व्यंगवचनों से इसका मर्मभेद करती थी (वा. रा. अयो. २०. ४४)।

राम इसके पास वन जाने के लिये अनुमति माँगने गया। तब लक्ष्मण ने, पिता का निग्रह कर राज्य पर अधिकार करने का उपाय सुझाया। उस समय कौसल्या ने प्रच्छन्न रूप से संमति दी (वा. रा. अयो. २१. २१)। संभवतः निरुपाय हो कर इसने संमति दी होगी। राम को इस बात की स्पष्ट कल्पना थी कि, वन जाने के बाद माता की कुछ भी कदर नहीं होगी (वा. रा. अयो. ३१.११)। पंद्रहवें वर्ष राम के लौटने पर भरत राज्य एवं कोश लौटा देगा, इसकी संभावना न थी (वा. रा. अयो. ६१.११)।

राम के वन चले जाने के बाद, यह दशरथ से मर्मस्पर्शी बातें करने लगी। उस समय दयनीय अवस्था में दशरथ ने कौसल्या को हाथ जोडे। तब कौसल्या को अपनी भूल ध्यान में आयी। पुत्रशोक से व्याकुल होने के कारण, कटुवचन कहे, यह बात उसने मान्य की (वा. रा. अयो. ६२.१४)।

यह मृदु स्वभाव की थी। पतिसुख से वंचित तथा सौतद्वारा सताये जाने के कारण, यह उदासीन वृत्ति से रहती थी। इस वृत्ति का राम के चरित्र पर बहुत परिणाम हुआ। राम के चरित्र में अंतर्भूत धार्मिकता का अंश इसी की देन थी।

२. काशीराज की कन्या अंबिका (म. आ. १००.४.१०७५*)।

३. कृष्णपिता वसुदेव की एक पत्नी।

कौसवी—द्रुपदपत्नी सौत्रामणी का नामांतर।

कौस्ति—भृगुकुल का गोत्रकार।

कौसुरबिंदु—प्रोति का पैतृक नाम।

कौसुरुबिंदि—प्रोति कौशांबेय का पैतृक नाम।

कौहल—मित्रविंद एवं प्रातरह्न का पैतृक नाम।

क्रतु—एक ऋषि। यह स्वायंभुव मन्वंतर में ब्रह्मा के अपान से उत्पन्न हुआ। यह स्वायंभुव दक्ष का दामाद था। दक्षकन्या संतति इसकी पत्नी। इसे वालखिल्य नामक साठ हजार पुत्र हुए। वे सब ऊर्ध्वरेत होने के कारण, उनका वंश नहीं है। ये सब अरुण के आगे सूर्य के साथ रहते है।

क्रतु की दो बहनें पुण्य तथा सत्यवति थी। ये दोनों पूर्णमाससुत पर्वश की स्नुषायें थी (ब्रह्मांड २.१२.२६-२९)।

यह शिववर से वैवस्वत मन्वन्तर के प्रारंभ में उत्पन्न हुआ। ब्रह्माजी ने प्रजा निर्माण करने के लिये, जो मानस पुत्र निर्माण किये थे, उनमें यह था (मत्स्य. ३.६-८)। यह प्रमुख प्रजापतियों में से एक था (म. अ. २.३; मत्स्य. १७१.२७-२८; ३.६-८; वायु. ६५.२२; विष्णु. १.७.४-५;१०; म. स. ११.१२; आ. ५९.१०; ६०.४; शां. २०४)। यह ब्रह्मदेव के हाथ से उत्पन्न हुआ (भा. ३.१२)। कर्दम प्रजापति की नौ कन्याओं में से क्रिया इसकी स्त्री थी। उससे इसे साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए। ये वालखिल्य ऋषि अंगूठे जितने थे तथा ब्रह्मर्षि थे। उनके चित्रकेतु, सुरोचि, विरजा, मित्र, उल्बण, वसुभृद्यान एवं द्युमान आदि नाम थे। इसी तरह, इसकी दूसरी स्त्री से शांति आदि पुत्र हुए (भा. ४.१)। सन्नति नामक स्त्री से वालखिल्य हुए (विष्णु. १.१०.१०-११)।

२. एक ऋषि। वैवस्वत मन्वन्तर में इसे परिवार नहीं था (वायु. ७०.६६; ब्रह्मांड. ३.८; लिंग. १.६३.६८; कूर्म. १.१९.)। इसने अगस्त्य के पुत्र इध्मवाह को गोद में लिया था। इस नाम से ही क्रतु के वंशजों को आगस्त्य नाम पड़ा (मत्स्य. २०२.८)। कुछ पुराणों में बताया है कि, इससे ब्राह्मणों की उत्पत्ति नहीं हुई (वायु. ६५.४९-५०; ब्रह्मांड. ३.१.४९-५१)।

३. पांचाल देश का एक क्षत्रिय। इसका कर्ण ने वध किया (म. क. ५१.४६)।

४. एक राक्षस। वैश्वानरकन्या हयशिरा इसकी स्त्री थी (भा. ६.६.३४)।

५. भृगुऋषि द्वारा उत्पन्न बारह भार्गव देवों में से एक (वायु. ६५.८७)। इसकी माता पौलोमी (मत्स्य. १९५.१३-१४)।

६. दस विश्वेदेवों में से एक।

७. श्रीकृष्ण का जांबवती से उत्पन्न पुत्र (भा. १०.६१.१२)।

८. फाल्गुन माह में पर्जन्य नामक सूर्य के साथ घूमनेवाला यक्ष (भा. १२.११.४०)।

९. उल्मुक एवं पुष्करिणी के छः पुत्रों में चौथा (भा. ४.१३.१७)।

१०. वैवस्वत मन्वन्तर में हुआ। यह आयु नाम से पौष माह में सूर्य के साथ साथ घूमता है।

११. स्वायंभुव मन्वन्तर में जितदेवों में से एक।

१२. स्वायंभुव मन्वन्तर में सप्तर्षियों में से एक।

१३. अगस्त्य कुल का गोत्रकार।

१४. अमिताभ देवों में से एक।

क्रतुजित् जानकि—एक ऋषि। दृष्टि साफ होने के लिये, कमजोर आखोंवाले रजनकोणेय द्वारा इसने त्रिहविष्का नामक इष्टि करायी (तै. सं. २.३.८.१)। यह रजनकोणेय का उपाध्याय था (क. सं. ११.१; क्रतुविद् देखिये)।

क्रतुविद्—एक ऋषि। विश्वंतर के सोमयज्ञ में श्यापर्णो का प्रवेश हुआ। उनके द्वारा बताये गये सोम की विशिष्ट परंपरा में अरिंदम ने क्रतुविद को उपदेश दिया। इसने जानकि को उपदेश दिया (ऐ. ब्रा. ७.३४)।

क्रतुस्थला—यक्ष २. देखिये।

क्राथ—शुक्तिमान पर्वत के पूर्व में स्थित एक राजा। भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था।

२. (सो. क्रोष्टु.) विदर्भराज के चार पुत्रों में से एक। इसका पुत्र कुंति या कृति। भविष्य में क्राथ पाठभेद है।

क्रथक—विश्वामित्र कुल का एक गोत्रकार।

क्रथन—अमृत का रक्षणकर्ता एक देव (म. आ. २८.१८)।

२. एक असुर (म. स. ९.१३)।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

४. वरुणलोक का असुरविशेष।

५. रामसेना में इस नाम के दो वानराधिपति थे (वा. रा. यु. २६.४२)।

६. कश्यप एवं खशा का पुत्र।

क्रथल—एक ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

क्रातुजातेय—राम का पैतृक नाम।

क्राथ—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। इसे भीमसेन ने युद्ध में मारा (म. स. ३५.१५)।

२. एक क्षत्रिय (म. आ. ६१.३८)।

३. एक राजा। इसके पुत्र का भारतीय युद्ध में अभिमन्यु ने वध किया।

क्रिया—स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्षप्रजापति की कन्या। धर्म ऋषि की स्त्री (म. आ. ६०.१३)। इसका पुत्र योग। इसके साठ हजार वालखिल्य हुए।

२. कर्दम ऋषि की नौ कन्याओं में एक। क्रतु ऋषि की पत्नी।

३. द्वादशादित्य में से अंशुमान् आदित्य की स्त्री।

क्रिवि—व्यक्ति के लिये प्रयुक्त देशवाचक शब्द। सायण इसका अर्थ कुँआँ लेते हैं (ऋ. ८.२०.२४; २२.१२; क्रैव्य पांचाल देखिये)। पांचाल देश का यह प्राचीन नाम है।

क्रीत वैतहोत्र—इसका कुरु देश से संबंध था (मै. सं. ४.२.६)।

क्रुंच आंगिरस—सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १३.९.११; ११.२०)। इसके दो साम हैं। उसके कारण, इसे आवश्यक छठवाँ दिन प्राप्त होता था।

क्रैव्य पांचाल—क्रिवि देश का राजा। इसने परिवक्रा (एकचक्रा) नगरी के निकट अश्वमेध किया (श. ब्रा. १३.५.४.७; क्रिवि देखिये)।

क्रोडोदय—वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

क्रोडोदरायण—वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

क्रोध—यह ब्रह्मदेव की भृकुटि से उत्पन्न हुआ (भा. ३.१.२२)। एक बार जमदग्नि श्राद्ध कर रहे थे। यह वहाँ गया। जमदग्नि ने होमधेनु के दूध से खीर तयार की थी। इसने सर्प रूप धारण कर खीर पर गरल डाला, परंतु जमदग्नि क्रोधित न हुआ क्योंकि, उसने क्रोध को जान लिया था। तब क्रोध भयभीत हो कर शरण में आया। कहने लगा, "प्राप्तज्ञान से मैं सारे भार्गवों को शीघ्रकोपी समझाता था। अब अनुभव से ज्ञात हुआ कि, भार्गव क्षमाशील है।" उसने अभययाचना की। जमदग्नि ने उसे अभयदान दिया, तथा कहा "पितरों के क्रोध को तुम ही सम्हालो"। पितरों ने इसे नाराज हो कर शाप दिया। क्रोध को इसलिये नकुलयोनि प्राप्त हुई। आगे चल कर पितरों को संतुष्ट कर, इसने उःशाप की याचना की। पितरों ने उःशाप दिया, 'धर्म की सभा में कृष्ण की उपस्थिति में उंच्छवृत्ति ब्राह्मण की कथा कहने पर तुम मुक्त हो जावोगे।' (जै. अ. ६७; उंच्छवृत्ति देखिये)।

२. ब्रह्मदेवपुत्र अधर्म के वंशज लोभ तथा निकृति का पुत्र। इसकी हिंसा नामक बहन थी, जिससे क्रोध को कलि एवं दुरुक्ति नामक दो संतान हुई (भा. ४.८.३)।

३. अष्टभैरवों में से एक।

४. काला एवं कश्यप का पुत्र (म. आ. ५९.३४)।

क्रोधदान—(सू. इ.) भविष्य मत में शाक्यवर्धन का पुत्र।

क्रोधन—कौशिक ऋषि के सात पुत्रों में से एक।

२. (सो. कुरु.) अयुत राजा का पुत्र। इसका पुत्र देवातिथि।

३. पितृवर्तिन् देखिये।

क्रोधनायन—पराशरकुल का गोत्रकार।

क्रोधवश—कश्यप एवं क्रोधा या क्रोधवशा के पुत्रों में ज्येष्ठ (म. आ. ५९.३१)। क्रोधा के सब पुत्रों का क्रोधवश सामान्य नाम है। इनके वंशजों का भी यही नाम था। इनके वंशजों में से कुछ लोगों को, कुबेर ने सौगंधिक नामक सरोवर के रक्षणार्थ नियुक्त किया था। इस सरोवर के कुछ सौगंधिक नामक कमल लेने के लिये भीम आया। इन्होंने उसे कुबेर की अनुमति लिये बिना हाथ नहीं लगाने दिया। इस कारण भीम का इनसे युद्ध हुआ। भीम ने इनमें से बहुतों का वध किया (म. व. १५१–१५२)।

२. इंद्रजित का राक्षस अनुयायी। यह तथा इसके साथ कुछ राक्षस, वानरों से अदृश्य हो कर युद्ध कर रहे थे। तब अंतर्धानविद्यापटु बिभीषण ने इसे प्रकट किया। वानरों ने इसे मार डाला। (म. व. २६९.४)।

३. महातल का सर्पविशेष। ये सब कद्रू के वंशज थे। ये गरुड़ से बहुत डरते थे। इसलिये क्वचित् तापद बनते थे (भा. ५.२४)।

क्रोधवशा—क्रोधा देखिये।

क्रोधशत्रु—काला एवं कश्यप का पुत्र।

क्रोधहंतृ—काला एवं कश्यप का पुत्र।

२. पांडवपक्षीय एक रथी (म. उ. १७१.१९)। सेनाबिंदु यही होगा।

क्रोधा—दक्षप्रजापति की कन्या तथा कश्यप की स्त्री। क्रोधवशा इसका नामांतर है। इसके पुत्रों को भी क्रोधवश कहते हैं (म. आ. ५९.१२)।

क्रोधिन्—वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

क्रोष्टकि—क्रोष्टुकि देखिये।

क्रोष्टाक्षिन्—अंगिराकुल का गोत्रकार।

क्रोष्टु—अंगिराकुल का गोत्रकार।

२. (सो. यदु.) यदु का पुत्र। इसका पुत्र वृजिन (नि)वान्। ब्रह्म, हरिवंश एवं पद्मपुराण में इसेही वृष्णि कहा गया है। क्रोष्टुकुल में से ज्यामघ, भजमान, वृष्णि एवं अंधक इन स्वतंत्र वंशों का प्रारंभ होता है।

क्रौंच—हिमवान् पर्वत का मेना से उत्पन्न पुत्र। जिस द्वीप में यह रहता था, उसका नाम इसी के कारण क्रौंचद्वीप पड़ा। यह मैनाक का पुत्र है (ह. वं. १.१८)।

२. विष्णु मत में व्यास की ऋक् शिष्यपरंपरा के शाकपूणी का शिष्य (व्यास देखिये)।

क्रौंचिकीपुत्र—वैदभृतीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य भालुकिपुत्र। ये दो रहे होंगे (बृ. उ. ६.५.२)।

क्रौंची—कश्यप एवं ताम्रा की कन्या।

क्रौष्टुकि—एक आचार्य। इसने द्रविणोदस् शब्द का अर्थ इंद्र माना है (नि. ८. २.)। यह एक वैयाकरण था (बृहद्दे. ४. १३७; छंदस्. ५.)। इसे क्रोष्टुकि भी कहा है (अथर्वपरि.)।

क्षत्तृ—विदुर का नाम। दासीपुत्र के अर्थ में यह नाम विदुर को दिया गया है (म. आ. २ कुं.)।

क्षत्र—मनस, यजत एवं अवत्सार के साथ इसका उल्लेख ऋग्वेद में आता है (ऋ. ५. ४४. १०)।

क्षत्रंजय—(सो. नील.) धृष्टद्युम्न का पुत्र (म. द्रो. ९. ४९)। द्रोण के हाथ से यह मारा गया (म. द्रो. १३०. १९)।

क्षत्रदेव—(सो. नील.) शिखंडी का पुत्र। यह उत्तम रथी था (म. उ. १७१. १०; भी. ९१. १३; द्रो. २२. १६०)। दुर्योधनपुत्र लक्ष्मण ने इसका वध किया (म. क. ४. ७७)।

क्षत्रधर्मन् (क्षत्रवर्मन्)—धृष्टद्युम्न का पुत्र (म. उ. १७१. ७)। द्रोणाचार्य द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १०१. ६२)।

क्षत्रबंधु—एक राजा। यह दिखने में बड़ा क्रूर एवं हिंसक था। परंतु ज्ञानी होने के कारण इसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. ८०)।

क्षत्रवर्मन्—क्षत्रधर्मन् देखिये।

क्षत्रवृद्ध—(सो. पुरूरवस्.) आयुराजा का द्वितीय पुत्र। ये कुल पांच भाई थे। यह नहुष का छोटा भाई था। इसका पुत्र सुहोत्र। इससे काश्यवंश आरंभ हुआ।

२. रौच्य मन्वंतर का एक मनुपुत्र।

क्षत्रश्री प्रातर्दनि—यह भरद्वाजों का आश्रयदाता है (ऋ. ६.२६.८)।

क्षत्रोपेक्ष—(सो. यदु.) श्वफल्क यादव के तेरह पुत्रों में से एक।

क्षत्रौजस्—(शिशु. भविष्य.) वायुमत में अजातशत्रु का पुत्र। विष्णु तथा ब्रह्मांड मत में क्षेमधर्मपुत्र।

क्षपाविश्वकर—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

क्षम—सुधामन् देवों में से एक।

क्षमा—दक्षकन्या तथा पुलह की स्त्री।

२. ब्रह्माधान की कन्या।

क्षेत्रज्ञ—(शिशु. भविष्य.) भागवत मत में क्षेमधर्मन् का पुत्र।

पुत्र

नाम

स्वा

से

८५

हुअ

१०.

इस

हुई

बहुत

बात

बाह

यश

सभा

इस

इस

पश्चा

शिव

१.३

रुद्र.

क्षेमधन्वन्—क्षेमधृत्वन् पौण्डरिक देखिये।

२. धर्मसावर्णि मनु का पुत्र। क्षेमधर्मन् नाम भी प्राप्त है।

क्षेमधर्मन्—(शिशु. भविष्य.) भागवत, मत्स्य, ब्रह्मांड तथा विष्णु मत में काकवर्ण का पुत्र। वायु में इसे क्षेमवर्मन् कहा गया है (क्षेमधन्वन् २. देखिये)।

क्षेमधी—(सू. निमि.) चित्ररथ जनक का पुत्र। विष्णु में इसे क्षेमारि कहा गया है।

क्षेमधूर्ति—साल्व का सचिव तथा सेनापति। सांब ने इसे पराजित किया (म. व. १७.११)। भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था। बृहत्क्षत्र ने इसका वध किया (म. द्रो. ८२.६)। क्रोधवंश के एक राक्षस का यह अंशावतार था (म. आ. ६१.५९)।

२. कुरुष देश का अधिपति एवं एक क्षत्रिय। भीम ने इसका वध किया (म. क. ८.३२–४५)।

३. (सो. कुरु) धृतराष्ट्रपुत्र (क्षेममूर्ति देखिये)।

४. एक क्षत्रिय। बृहन्त का बंधु। सात्यकि के साथ इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. २०.२५–४८)।

क्षेमधृत्वन् पौंडरिक—(सू. इ.) सुदामन् नदी के तट पर पौंडरीकयज्ञ कर के इसने समृद्धि प्राप्त की। पुराणों में इसे पुंडरीकपुत्र क्षेमधन्वन् कहा है (पं. ब्रा. २२.१८.७)।

क्षेमभूमि—(शुंग. भविष्य) वायुमत में भागवतपुत्र।

क्षेममूर्ति—धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया। दाक्षिणात्य प्रति में क्षेममूर्ति, एवं उत्तरीय प्रति में क्षेमवृद्धि पाठभेद प्राप्त है (म. आ. परि.१ क्र.४१. पंक्ति १९)।

२. पुलह तथा श्वेता का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.७.१८०–१८१)।

क्षेमवर्मन्—क्षेमधर्मन् देखिये।

क्षेमवृद्धि—साल्व राजा का सेनापति (म. व. १७.११)।

क्षेमशर्मन्—दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। भारतीय युद्ध में द्रोणाचार्य सेनापति थे। उन्होंने सेना की रचना सुपर्णाकार की थी। उस में गरुड की गर्दन की जगह कलिंग, सिंहल आदि राजाओं के साथ यह राजा भी पूर्ण तयारी से खडा था (म. द्रो. २०.६)।

क्षेमा—एक अप्सरा। कश्यप एवं मुनि की कन्या।

क्षेम्य—(सो. पूरु.) उग्रायुध राजा का पुत्र। इसे सुवीर नामक पुत्र था।

२. क्षेम ४. देखिये।

क्षेमि—सुदक्षिण का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.६.३; ७.१)।

२. व्यास पराशरकुलोत्पन्न एक ऋषि।

ख

खगण—(सू. इ.) भागवत मत में वज्रनाभ का पुत्र। इसका पुत्र विधृति। विष्णु मत में शंखनाभ तथा वायु मत में शंखण यही होगा।

खगम—एक तपस्वी ब्राह्मण। यह एक बार अग्निहोत्र कार्य में निमग्न था। उस समय सहस्रपाद नामक एक मित्र ने विनोद से तृण का सर्प इसके ऊपर फेंका। इस कारण यह मूर्च्छित हो गया। सावधान होने के बाद इसने शाप दिया, 'जिस प्रकार के साँप से तूने मुझे डराया है, उसी प्रकार का तृणतुल्य सर्प तू होगा'। यह शाप सुन कर दुःख से विव्हल हो कर, मित्र ने दया की याचना की। तब खगम ने उःशाप दिया, "भृगुकुल में प्रमति को रुरु नामक पुत्र होगा। उससे भेंट होगी, तब तू शापमुक्त हो कर पूर्वस्वरूप को प्राप्त होगा" (म. आ. ११)।

खंज—मनुवंशी राजा। ब्रह्मदेव के वरदान के कारण, यह महापराक्रमी हुआ। अर्जुन ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ६)।

खट्वांग—(सू. इ) विश्वसह राजा का पुत्र। देवदैत्यों के युद्ध में, यह देवताओं की मदद करने स्वर्ग गया था। युद्ध समाप्त होने पर, देवताओं ने इसे वर मांगने को कहा। इसने पूछा कि, उसकी आयु कितनी अवशेष

है। उन्हों ने कहा कि, केवल मुहूर्तमात्र शेष है। तब और कुछ न माँग कर, यह द्रुतगामी विमान पर बैठ कर शीघ्र ही अयोध्या आया। अपने पुत्र दीर्घबाहु को गद्दी पर बैठ कर, आत्मस्वरूप में लीन हो गया (भा.९.९)। दिलीप प्रथम को खट्वांग मानते है (ब्रह्म. ८. ७४; हं.वं. १.१५.१३)। वस्तुतः दिलीप द्वितीय को खट्वाँग कहना चाहिये (दिलीप देखिये)।

खड्गधर--सौराष्ट्र देश का एक राजा। इसके मदमत्त हाथी का मद, एक ब्राह्मण ने गीता के सोलहवें अध्याय के पठनसामर्थ्य से उतारा (पद्म. उ. १९०)।

खड्गबाहु--एक राजा। इसके पुत्र का दुःशासन नामक सेनापति था। वह मदमत्त हाथी से गिर कर मर गया। अगले जन्म में वह हाथी हुआ। सिंहल देश के राजा ने वह हाथी खड्गबाहु को दिया। खड्गबाहु ने उसे एक कवि को तथा कवि ने मालव देश के राजा को दिया (पद्म. उ. १९१)।

खड्गहस्त - दक्षसावर्णि मनु का पुत्र।

खड्गिन्--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भारतीययुद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. क. ६.२)।

खंडपाणि--(सो. कुरु. भविष्य) भविष्य एवं विष्णु के मत में अहीन का पुत्र। अन्य पुराणों में दंडपाणि पाठभेद हैं।

खंडिक औद्भारि--केशिन् का गुरु तथा एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)। केशिन् के यज्ञ में शेर ने गाय को मारा। प्रायश्चित् क्या है, यह पूछने पर सब लोगों ने उसे इसके पास भेजा। इसने सभा बुला कर विचार किया तथा प्रायश्चित बताया (श. ब्रा. ११. ८. ४. १)। यह केशिन् का प्रतिस्पर्धी था। खंडिक एवं खांडिक्य एक ही होंगे (मै. सं. १. ४. १२)।

खनक--विदुर का मित्र। यह पच्चीकारी के काम में अत्यंत कुशल था। पांडवों को मारने के लिये दुर्योधन ने पुरोचन के द्वारा लाक्षागृह तैयार कराया। पांडव लाक्षागृह में रहने लगे। एक दिन खनक, विदुर की आज्ञा से विदुर की चिह्नस्वरूप अंगूठी ले कर युधिष्ठिर के पास आया। विदुर के द्वारा बताया गया समाचार उसने निवेदन किया। युधिष्ठिर ने संतुष्ट हो कर, पुरोचन को पता न लगते हुए पांडवों की लाक्षागृह से मुक्ति करने के लिये, इससे कहा। इसने लाक्षागृह के मध्य से खंदक तक एक सुरंग बनायी (म. आ. १३५.१)।

खनपान--(सो. अनु.) भागवतमत में अंगराज-पुत्र, विष्णुमत में पारपुत्र, मत्स्य एवं वायु मत में दधिवाहनपुत्र। अपानद्वार न होने के कारण, इसे अनपान कहते थे। इसका पुत्र दिविरथ।

खनित्र--(सू. दिष्ट.) भागवतमत में प्रमति राजा का पुत्र। इसका पुत्र चाक्षुप। विष्णु तथा वायु के मत में प्रजानिपुत्र। इसका पुत्र क्षुप। सदाचारी होने के कारण इसके उपर अभिचार का परिणाम नहीं हुआ (मार्कं. ११४-११५)।

खनिनेत्र--(सू. दिष्ट.) भागवतमत में रंभपुत्र। वायु एवं विष्णु मत में विविंशपुत्र। वायुमत में इसका पुत्र करंधम तथा विष्णुमत में अतिभूति।

इसके कुल चौदह भाई थे। यह अत्यंत दुष्ट था। इसलिये इसने सब भाईयों का हक छीन कर स्वयं अकेले ने राज्य किया। यह प्रजा को अप्रिय था, इसलिये शीघ्र ही पदच्युत हुआ। पश्चात् इसका पुत्र सुवर्चा गद्दी पर बैठा (म. आश्व. ४)। यह हिंसा से उद्विग्न हो कर तपस्या करने लगा (मार्कं. ११७)। इसका पुत्र बलाश्व।

खर--विश्रवा ऋषि का राका से उत्पन्न पुत्र। शूर्पणखा इसकी बहन तथा रावण सौतेला भाई था (म. व. २५९. ८)। शूर्पणखा के कथन से पता चलता है कि, दूषण इसका भाई था (वा. रा. अर. १७)। यह बचपन में वेदवेत्ता, शूर तथा उत्कृष्ट सदाचारी था। यह पितासहित गंधमादन पर्वत पर रहता था। दक्षिण दिशा में यह रावण का सीमारक्षक अधिकारी था (वा. रा. अर. ३१)। इसके अधिकार में चौदह सेनापति तथा चौदह हजार सैनिक थे (वा. रा. अर. १९; २२)।

शूर्पणखा ने रामलक्ष्मण से प्रेमयाचना की। राम के संकेतानुसार लक्ष्मण ने उसके नाक, कान काट डाले। वह आक्रोश करते हुए जनस्थान में खर के पास गयी। खर ने अपने चौदह सेनानायक एवं, चौदह हजार सैनिक राम पर आक्रमण करने भेजे। राम ने सब का वध किया। अपने सेनापति दूषण के नेतृत्व में सेना तयार कर, इसने स्वयं राम पर आक्रमण किया। राम ने लक्ष्मण को सीता की सुरक्षा के लिये, एक पर्वत की गुहा में जाने को कहा। उन के जाने के बाद, राम कवच धारण कर, युद्ध के लिये तत्पर हुआ। युद्ध प्रारंभ होने के बाद, राम ने केवल धनुष बाण से दूषण

त्रिशिरस् तथा खर को ससैन्य मार डाला। यह सारी घटना डेढ़ मुहूर्तों में हुई।

प्रेक्षक के नाते उपस्थित अकंपन राक्षस भाग कर लंका गया। उसने रावण को सारा वृत्तांत निवेदित किया (वा. रा. अर. १८-३१)। इस युद्ध में, यह बात स्पष्ट दिखाई देती है कि, राम धनुष से युद्ध करते थे। राक्षसों के पास धनुष न थे। इसे मकराक्ष नामक पुत्र था। इसने जनस्थान के ऋषियों को अत्यंत कष्ट दिया था। इस कारण, इसकी मृत्यु से उन्हें बहुत आनंद हुआ, तथा उन्होंने राम की अत्यंत प्रशंसा की (वा.रा. अर. ३०)।

२. लंबासुर का भाई, एक असुर (मत्स्य. १७९.६७)।

३. विजर का पुत्र।

खरवाच्—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार।

खलीयस—व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा के शालीय का पाठभेद।

खल्यायन—धूम्रपराशर के कुल में से एक ऋषिगण।

खशा—प्राचेतस दक्षप्रजापति तथा असिक्नी की कन्या। यह कश्यप प्रजापति से ब्याही गयी थी। इससे यक्ष राक्षस आदि उत्पन्न हुए।

खस्तृप—पितृवर्तिन् देखिये।

खाडायन—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

खांडव—भृगुकुल के मित्रयुकुल में उत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।
२. पौंड्रव का पाठभेद।

खांडवायन—एक ब्राह्मणवंश। परशुराम ने एक बड़ा भारी यज्ञ किया। उसमें पृथ्वी के साथ दस बाव (अंदाजन् दो गज) लंबी तथा नौ बाव ऊँची सुवर्णमय वेदिका कश्यप को अर्पण की। कश्यप की अनुमति से अन्य ब्राह्मणों ने उसके टुकड़े कर, आपस में बाँट लिये। इस कारण, वे ब्राह्मण खांडवायन नाम से प्रसिद्ध हुए (म. व. ११७. ११-१३)।

खांडिक्य—(सू. निमि.) भागवतमत में मितध्वज-पुत्र। यह क्षत्रिय था। इसे खांडिक्यजनक कहा गया है। केशिध्वज इसका चचेरा भाई था। खांडिक्य कर्ममार्ग में अत्यंत प्रवीण था। केशिध्वज आत्मविद्याविशारद था। एक दूसरे को जीतने की इनकी इच्छा हुई। केशिध्वज ने खांडिक्य को राज्य के बाहर भगा दिया। यह मंत्री तथा पुरोहित के साथ अरण्य में चला गया (भा. ९.१३.२१)।

इधर ज्ञाननिष्ठ केशिध्वज ने कर्मबंधन से मुक्त होने के लिये, बहुत से यज्ञ किये। एक बार वह यज्ञ कर रहा था, तब निर्जन वन में एक व्याघ्र ने उसकी गाय को मारा। उसने ऋत्विजों से इसका प्रायश्चित्त पूछा, जिन्होंने उसे कशेरु के पास भेजा। कशेरु ने भृगु के पास तथा भृगु ने शुनक के पास प्रायश्चित्त पूछने को कहा। अंत में शुनक के कहने पर वह अरण्य में खांडिक्य के पास गया। खांडिक्य ने उसे देखते ही उसकी निर्भर्त्सना की एवं उसके वध के लिये तत्पर हुआ। परंतु केशिध्वज ने सारी स्थिति निवेदन की। तब खांडिक्य ने यथाशास्त्र धेनुवध का प्रायश्चित्त बताया।

केशिध्वज ने तदनुसार यज्ञभूमि के स्थान पर जा कर, यज्ञ सफल बनाया। खांडिक्य को गुरुदक्षिणा देना शेष रह गया। अतः केशिध्वज खांडिक्य के पास आया। खांडिक्य पुनः उसका वध करने को उद्यत हुआ। केशिध्वज ने बताया कि, 'वह वध करने नहीं आया है। अपितु गुरुदक्षिणा देने आया है। आप गुरुदक्षिणा माँगे'। खांडिक्य ने सब दुःखों से मुक्ति पाने का मार्ग उससे पूछा। केशिध्वज ने इसे देह की नश्वरता तथा आत्मा के चिरंतनत्व का महत्त्व समझाया, तथा कहा कि, 'सारे दुःखों का नाश योग के सिवा किसी अन्य मार्ग से नहीं हो सकता'। तदनंतर खांडिक्य ने योगमार्ग का कथन करने के लिये कहा। केशिध्वज ने उसे परब्रह्म का उपदेश कर, मोक्षपद के पास ले जानेवाला योग बताया (विष्णु. ६.६-७; नारद. १.४६-४७; केशिन् दाल्भ्य देखिये)।

खाति—तामस मनु का पुत्र।

खादिर—द्राह्यायण का दूसरा नाम (द्राह्यायण देखिये)।

खार्गलि—लुशाकपि का पैतृक नाम तथा मातृनामोद्भूत नाम।

खालीय—व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा के शालीय का पाठभेद।

खिलि तथा खिलिखिलि—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार एवं प्रवर।

खेल—एक राजा। इसकी स्त्री विश्पला। इसका पैर युद्ध में टूट गया। तब अश्विनों ने एक रात में इसे लोहे का पैर लगा कर, दूसरे दिन युद्ध के लिये तैयार कर दिया (ऋ. १.११६.१५)। अगस्त्य इसके पुरोहित थे।

ख्याति—(स्वा. उत्तान.) भागवत मत में उल्मुक तथा पुष्करिणी का पुत्र।

२. (स्वा.) भृगुपत्नी। कर्दम तथा देवहूती की कन्या।

३. तामस मनु का पुत्र।

४. उरू एवं षडाग्नेयी का पुत्र।

ख्यातेय—नीलपराशर कुल का एक ऋषि।

ग

गगनमूर्धन्—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

गंगा—एक स्वर्गीय देवी। एक समय सब देवियाँ ब्रह्मदेव के पास गयीं। उनके साथ गंगा तथा इक्ष्वाकुकुलोत्पन्न महाभिष भी गया। यकायक इनके वस्त्र वायु के कारण उड गये। सब लोगों ने सिर नीचे कर लिया। परंतु महाभिष निःशंक इनकी ओर देखता रहा। यह देख कर ब्रह्माजी ने शाप दिया "तुम मृत्युलोक में जन्म लोगे एवं गंगा तुम्हारी स्त्री होगी। वह तुम्हें अप्रियसे कृत्य करेगी। तुम्हें इसके कृत्यों के प्रति क्रोध उत्पन्न होगा। तब मुक्त हो कर तुम इस लोक में आओगे"। शाप सुन कर महाभिष ने प्रतीप के पेट में जन्म लेने का निश्चय किया।

वसिष्ठ के शाप के कारण मृत्युलोक में आने वाले अष्टवसु इसे राह में मिले। उन्होंने इसके पेट में जन्म लेने का निश्चय किया। परंतु उन्होंने यह शर्त रखी कि, जो भी पुत्र जन्म लेगा, इसे यह जल में छोड़ देगी। परंतु इसने भी यह शर्त रखी कि, जिससे मैं विवाह करूँगी उसे पुत्रेच्छा अवश्य रहेगी, इसलिये कम से कम एक पुत्र जीवित रहना ही चाहिये। तब अष्टवसुओं ने मान्य किया कि, अपने वीर्य से एक पुत्र वे इसे देंगे। वह वीर्यवान् परंतु निपुत्रिक रहेगा।

भगीरथ स्वर्ग से अपने पितरों के उद्धार के लिये गंगा नीचे लाया। जब यह समुद्र की ओर जा रही थी, तब राह में जह्नु ने इसे प्राशन कर लिया, तथा पुनः छोड़ दिया (भगीरथ एवं जह्नु देखिये)। एकबार प्रतीप ध्यानस्थ बैठा था। तब गंगा पानी से बाहर आई तथा उसकी दाँई गोद में आ कर बैठ गई। यह देख कर उसने इसकी इच्छा पूँछी। इसने अपना स्वीकार करने के लिये कहा। तब दाँई गोद में बैठने के कारण, स्नुषारूप में इसका स्वीकार करना उसने कबूल किया। गंगा ने अपनी शर्त रखी कि, आपकी स्नुषा होने के बाद, मैं जो कुछ भी करूँगी, उसके बारेमें अपका पुत्र कुछ भी हस्तक्षेप न करें। जब तक यह शर्त मान्य की जायेगी, तब तक आपके पुत्र का सहवास मैं मान्य करूँगी, तथा उसे सुख दूँगी। उसे पुण्यवान् पुत्र होंगे तथा उन्हीं के साथ उसे स्वर्गप्राप्ति होगी। इस प्रकार तय कर के गंगा अन्तर्धान हो गई।

कुछ दिनों के बाद महाभिष ने प्रतीप के घर शांतनु नाम से जन्म लिया। बड़ा होने पर, उसे अपने पिता से सारा समाचार मालूम हुआ। बाद में गंगा शांतनु पास गई, तब उसने इससे विवाह किया। इसके कुल आठ पुत्र हुए। उनमें से सात को इसने पानी में डुबा दिया। आठवें पुत्र को शांतनु ने डुबाने नहीं दिया। गंगा का आठवाँ पुत्र ही भीष्म है। बाद में उसे ले कर यह स्वर्लोक गई। वहाँ इसने सब प्रकार की शिक्षा उसे दी। शांतनु जब मृगया के हेतु आया, तब इसने भीष्म को उसे सौंप दिया (म. आ. ९१–९३)। गंगा जान्हवी (म. उ. १७९.३; भी. ११५.५२) तथा भागीरथी (म. अनु. १३९.७; आश्व. २.७) नामों से प्रसिद्ध है। भीष्म शांतनु को गंगाद्वार में पिंड दे रहा था। गंगा ने उसकी सहायता की (म. अनु. ८४)।

परशुराम से युद्ध करते समय, भीष्म के सारथी की मृत्यु हो गई। तब स्वयं घोडों को सम्हाल कर इसने भीष्म की रक्षा की (म. उ. १८३.१५–१६)। भीष्म ने अंबा का स्वीकार न करने के कारण, उसने तप कर के भीष्मवध के लिये पुरुषजन्म माँग लिया। एक बार नित्यक्रमानुसार, अंबा गंगास्नान करने गई थी, तब गंगा वहाँ आई। उसने इसे शाप दिया, 'तुम टेढी मेढी नदी बन कर केवल बरसात में ही बहोगी। अन्य दिनों में सूख जाओगी। बरसात में तुम्हारे पात्र में उतार भी नहीं मिलेगा' (म. उ. १८७.३४–३५)। भीष्मवध के बाद इसके दुख का निरसन श्रीकृष्ण ने किया (म. अनु. २७४.२७ कुं.)।

गंगा ने एकबार प्राचीमाधव नामक विष्णु से पूछा कि, 'मुझमें पापी स्नान करते हैं। इन पापों से मेरी मुक्ति कैसी होगी?' विष्णु ने इसे रोज पूर्ववाहिनी सरस्वती में स्नान करने के लिये कहा। परंतु गंगा को यह तापदायक प्रतीत हुआ। तब उसने इसे त्रिस्पृशा का व्रत करने के लिये कहा। उससे यह पापमुक्त हुई। एकादशी, द्वादशी तथा त्रयोदशी जिस एक तिथि को स्पर्श करते हैं, उस तिथि को त्रिस्पृशा कहते हैं। इस दिन सुवर्ण की विष्णुमूर्ति की पूजा की जाती है (पद्म. उ. ३४)।

गज—यह राम सेना में वानरों का अधिपति था (पद्म. सृ. ३८; म. व. २६७. ३)।

२. दुर्योधन का मामा। शकुनि के कुल छः कनिष्ठ भाई थे। यह सबसे बड़ा था। भारतीययुद्ध में अर्जुनपुत्र इरावत् ने इसका वध किया (म. भी. ८६.२४; ४२)।

गजकर्ण—एक यक्ष (म. स. १०. १५)।

२. महिषासुर का पुत्र। तपश्चर्या कर के इसने शंकर को प्रसन्न किया तथा यह अमर हो गया। अंत में शंकर के त्रिशूल से इसकी मृत्यु हुई। इसकी इच्छानुसार शंकर ने इसकी कृत्ति (चर्म) धारण की, तथा कृत्तिवासस् नाम धारण किया। गजासुर का वध काशी में हुआ। इसलिये काशी के लिंग को कृत्तिवासेश्वर कहते हैं (शिव. रुद्र. यु. ५७)। यह तारकासुर का सैनिक था।

गजेन्द्र—इंद्रद्युम्न, जयविजय तथा हूहू देखिये। गजेन्द्रमोक्ष का आख्यान महाभारत में नहीं है।

गणपति—एक देवता। 'गणानां त्वा गणपति' (ऋ. २.२३.१), यह गणपति का सूक्त माना जाता है। यह ब्रह्मणस्पतिका सूक्त है। इसे ब्रह्मणस्पति भी कहते हैं। ऐसे अन्य नामक इतरत्र भी हैं (मै. सं. २. ६. १)। शंकर-पार्वती का पुत्र हो कर भी यह अयोनिज था (ब्रह्मवै. ३. ८; लिंग. १०५)। पार्वती ने अपने शरीर के उबटन की मूर्ति बना कर वह सजीव की (पद्म. सृ. ४३; स्कन्द. ७. १. ३८; मत्स्य. १५३)।

इसके अवतार—कृतयुग में कश्यपपुत्र विनायक:—यह सिंह पर आरूढ होता था। इसने देवांतक नरांतक का नाश किया।

त्रेतायुग में मयूरारूढ रहनेवाला शिवपुत्र मयूरेश्वर:—इसने सिंधू का वध किया।

द्वापारयुग में शिवपुत्र गजानन:—इसने सिंदूर का वध किया तथा वरेण्य राजा को गणेशगीता बताई।

कलियुग में अश्व पर आरूढ होनेवाला धूम्रकेतु:—यह म्लेच्छों का नाश करेगा (गणेश. २.१४९) अदिति के गर्भ से महोत्कट रूप में इसने अवतार लिया (गणेश २.५-६)।

पार्वती स्नान कर रही थी, तब द्वाररक्षक का कार्य करनेवाले गणपति ने शंकर को भी भीतर आने से रोका। तब इनका युद्ध हो कर शंकर ने इसका मस्तक तोड़ दिया। परंतु पार्वती के लिये, शंकर ने इन्द्र के हाथी का मस्तक ला कर, इसके धड़ पर जमा दिया (शिव. कु. १६)। शनि के दृष्टिपात से गणपति का मस्तक जल गया, परंतु देवों ने वहाँ हाथी का मस्तक लगा दिया (ब्रह्मवै. ३. १८; भवि. प्रति. ४.१२)। परशुराम ने शंकरद्वारा दिया गया परशु इस पर फेंका। परंतु परशु शंकर का होने के कारण, प्रतिकार न करते हुए, इसने वह आक्रमण दाँतों पर सह लिया। इसी से इसका एक दाँत टूट गया। उसे इसने हथियार के समान हाथ में ले लिया (ब्रह्मवै. ३. ४१-४४)।

एकदंत नाम प्राप्त होने के अन्य कारण भी प्राप्त हैं (काण २. देखिये)। गणपति मेरा वध करेगा, ऐसा ज्ञात होते ही सिंदूरासुर ने, इसको नर्मदा में फेंक दिया। वहाँ गणपति के रक्त से नर्मदा लाल हो गई। इसीलिये अभी भी नर्मदा में नर्मदागणपति प्राप्त होते हैं। इसने सिंदूरासुर का वध कर के उसके स्वाभाविक रक्त से अपने शरीर का लेपन किया। पश्चात् पुण्येश्वर के पास सिंदूरवाड़ को अवतार समाप्त किया (गणेश. २.१३७)। इसीलिये गणपति को सिंदूर प्रिय है। कृष्ण के बालचरित्र के अनुसार गणपति का भी बालचरित्र है। अपनी बाललीलाओं में इसने अनेक असुरों का वध भी किया है (गणेश. १.८१-१०६)।

गृत्समद, राजा वरेण्य तथा मुद्गल आदि इसके बड़े भक्त हैं। इसने शंकर को गणेशसहस्रनाम (गणेश १. ४४-४५) तथा वरेण्य को गणेशगीता बताई (गणेश. २. ११८-१४८)। शंकर ने एक फल इसे न दे कर कुमार को दिया, तब चंद्र ने हँस दिया। इसलिये इसने चंद्र को अदर्शनीय होने का शाप दिया। परंतु बाद में उःशाप दे कर, केवल गणेशचतुर्थी के दिन अदर्शनीय माना (गणेश. १.६१)। उसी प्रकार गणेशचतुर्थी छोड़ कर अन्य दिनों में, गणेश को तुलसी भी वर्ज्य है (ब्रह्मवै. ३.४६)।

इसके जन्मदिन वैशाख पौर्णिमा, ज्येष्ठ शुद्ध चतुर्थी, भाद्रपद शुद्ध चतुर्थी तथा माघ शुद्ध चतुर्थी हैं। शुक्लपक्षीय तथा कृष्णपक्षीय चतुर्थी तिथि इसे प्रिय है। सिद्धि तथा बुद्धि इसकी दो पत्नियाँ हैं (गणेश. १.१५)। इसकी उपासना से कार्तवीर्य अव्यंग हुआ था (गणेश. २.७३–८३)। इसके चार हाथ हैं तथा इसका वाहन मूषक है।

इस पर लिखे गये प्रसिद्ध ग्रंथः—गणेशपुराण, मुद्गलपुराण, ब्रह्मवैवर्त का गणेश खंड, भविष्यपुराण का ब्राह्मखंड, गणेशतापिनी, गणेशाथर्वशीर्ष, गणेश तथा हेरंब उपनिषद्। याज्ञवल्क्य स्मृति में विनायक-शांति दी है (याज्ञ. १.२७०)।

अष्ट विनायक के स्थान— १. मोरगांव (मोरेश्वर), २. रांजनगांव (गणपति), ३. थेऊर (चिंतामणि), ४. जुन्नरलेण्याद्रि (गिरिजात्मज), ५. मुरुड, पाली (बल्लालेश्वर), ६. सिद्धटेक (गजमुख), ७. ओझर (विघ्नेश्वर) ८. मढ (विनायक)। ये सब स्थान पूना के आसपास हैं। इनके अतिरिक्त अड़तालीस तथा एकसौवीस स्थान भी हैं। काशी में छप्पन विनायकों की सूचि प्राप्त है (गणेश. २.१५४)।

महाभारत जैसा विस्तृत ग्रंथ लिखने में व्यास ने गणपति की सहायता प्राप्त की थी। मैं बीच में नहीं रुकूँगा, ऐसी शर्त गणपति ने रखी थी। उसी प्रकार व्यास ने भी शर्त रखी थी कि, बिना अर्थ समझे आगे नहीं लिखोगे। गणपति को लिखने के लिये अधिक समय लगे तथा स्वयं को समय मिले, इस हेतु से व्यास ने महाभारत में अनेक कूट सम्मिलित किये हैं (म. आ. १. परि. १ क्र. १; गांगेय और बाण देखिये)।

गणपति का और एक रूप निकुंभ है। वाराणसीस्थित निकुंभ की आराधना करने पर भी दिवोदास की पत्नी सुयशा को पुत्र न हुआ। इसलिये निकुंभमंदिर दिवोदास ने उध्वस्त किया। निकुंभ ने भी वाराणसी नष्ट होने का शाप दिया। तालजंघादि हैहयों ने वाराणसी नगरी उध्वस्त की, तथा दिवोदास को भगा दिया। अन्त में निकुंभ की फिर से स्थापना हुई। वाराणसी समृद्ध हो गई। इस कथा में वर्णित निकुंभ ही गणपति नाम से प्रसिद्ध हुआ। गणेश, गणपति, गणेश्वर, बहुभोजन और कामपूरक नाम से भी निकुंभ का वर्णन प्राप्त है (वायु. ९२.३६–५१)।

यह ओंकाररूप है। गणपति उपासना का मतलब परब्रह्म की उपासना है (गणेशाथर्वशीर्ष; गणेश. १.१३–१५)। इसलिये इसे सर्व विद्या तथा कलाओं का अधिपति मानते हैं। किसी भी देवता के उपासक सर्वप्रथम गणपति की पूजा करते हैं (पद्म. सृ. ६३)।

प्रणव का अर्थ ॐकार है। अ, उ तथा म का ॐकार बनता है। तुरीय नामक एक चतुर्थ भाग भी ॐकार में समाविष्ट हैं। जागृति, स्वप्न, सुषुप्ति तथा तुरीय इन चार अवस्थाओं का ॐकार द्योतक है। ॐकार का जप तथा ध्यान का उपनिषदों में विशेष माहात्म्य है। साध्य तथा साधन दोनों रूपों में ॐकार वर्णित है। इसलिये वेदों का प्रारंभ ॐकार से करने की प्रथा शुरू हो गई। आगे चल कर, ॐकार से ही गजमुख गणेशजी का स्वरूप विकसित हुआ। ॐकार का लेखन तथा गणेशजी की मूर्ति में साम्य भी है। गजमुख गणेश सामान्यतः खिस्त के पंचम सदी के पूर्व उपलब्ध नहीं है। कालिदास ने निकुंभ का गौण रूप से निर्देश किया है। भवभूति ने स्पष्ट रूप से गजमुख का निर्देश किया है। ज्ञानेश्वरी में गजमुख तथा ॐकार की एकता स्पष्ट की है। इस एकता से ही, उपनिषदप्रतिपादित ॐकार, वेद में तथा सार्वत्रिक सर्वकार्यारंभ में आद्य स्थान में आ गया है।

गंडकंडू—एक यक्ष।

गंडष—(सो. यदु.) शूर का पुत्र।

गंडा—पशुसख की स्त्री (म. अनु. १४१.५. कुं.)। इसे चंडा भी कहते थे।

गतायु—(सो. पुरूरवस्.) वायुमतानुसार पुरूरवीपुत्र।

गति—(स्वा.) देवहूति तथा कर्दम की कन्या। पुलह की पत्नी।

गतिन—विश्वामित्रगोत्र का प्रवर।

गद—(सो. यदु. वसु.) कृष्ण का सौतेला भाई। यह भारतीय युद्ध में पांडव पक्ष का था। यह यादवी में मारा गया (म. मौ. ४. ४४.)।

२. एक असुर। इसे मार कर इसकी अस्थियों से गदा बनवायी। इसे हाथ में धारण करने के कारण विष्णु को गदाधर कहते है (अग्नि. ११४; वायु. १०९.३–१२)।

गदवर्मन्—(सो. यदु.) शूर का पुत्र।

गद्गद—जांबवत् तथा केसरी इन वानरों का पिता (वा. रा. यु. ३०.)।

गंधमाद—रामसेना का एक सेनापति, जो वानरों की सेना लेकर राम की सहायता करने आया था (भा. ९. १०. १९; म. व. २६७.५)।

२. (सो. यदु.) श्वफल्क के तेरह पुत्रों में से एक।

गंधमोक्ष—(सो. यदु.) श्वफल्क का पुत्र।

गंधर्व—एक मानववंश। कश्यप तथा अरिष्टा की संतति को गंधर्व कहते हैं। हाहा, हूहू, तुंबुरु, किन्नर आदि इनके भेद हैं। गंधर्वों का देश हिमालय का मध्यभाग है। गंधर्व तथा किन्नर देश भी पुराणों में निर्दिष्ट हैं।

गंधर्व की स्त्रियाँ अप्सराएँ हैं। कश्यप-खशा के संतान अप्सराएँ कही जाती हैं।

चित्ररथ, विश्वावसु, चित्रसेन आदि गंधर्वनृपों का निर्देश सर्वत्र आता है। चित्ररथ गंधर्व तथा पांडवों का संघर्ष प्रसिद्ध है।

उर्वशी, घृताची, मेनका, रंभा आदि अप्सराओं का निर्देश भी सर्वत्र आता है।

ऋषि, मुनि राजाओं के साथ पत्नी आदि रूप में भी अप्सराएँ दिखती हैं।

इस वंश के लोक सुरूप, शूर तथा विशेष शक्तिशाली थे (यक्ष देखिये)।

गंधर्वसेना—कैलास पर स्वयंप्रभा नगरी में रहनेवाले धनवाहन नामक गंधर्व की कन्या। यह सोमवार का व्रत करने के कारण कुष्ठरहित हुई (स्कंद. ७.१.२४–२५)।

गंधर्वायण बालेय आग्निवेश्य—एक पांचाल (बौ. श्रौ. २०.२५)।

गंधवती—सत्यवती का नामांतर (म. आ. ५७.६७)।

गभस्तिनी प्रातिथेयी—लोपामुद्रा की बहन तथा दध्यञ्च् ऋषि की स्त्री (ब्रह्म. ११०.७.६१)।

गंभीर—(सो. आयु.) रभसपुत्र (भा. ९.१७.१०)।

२. भौत्य मनु का पुत्र।

गंभीरबुद्धि—इंद्रसावर्णि मनुपुत्र (मनु देखिये)।

गय—एक दैत्य। विष्णु ने इसका कीकट देश में नाश किया। इसकी देह पांच कोस तथा सिर एक कोस लंबी थी (स्कंद. ५.१.५९)।

उसका शरीर अत्यंत विशाल था। यह विष्णुभक्त था, इसलिये ब्राह्मणों ने इसकी पवित्र देह, यज्ञ के लिये माँगा। इस ने लोकोपकारार्थ अपनी देह विष्णुजी को दे दी। तत्पश्चात् ब्रह्मा ने इसे कोलाहल पर्वत के पास उत्तर की ओर सिर कर के दक्षिणोत्तर सुलाया। यह न हिले, इसलिये इसपर आदिगदाधर की स्थापना की। इसे सबका उद्धार करने का वरदान दिया। यह स्थान कीटक देश में है। इसके पैर प्रभासक्षेत्र में हैं। गया-क्षेत्रमाहात्म्य उपलब्ध है (वायु. १०५–११२.)।

२. (स्वा. उत्तान.) भागवत मतानुसार उल्मुक तथा पुष्करिणी का पुत्र।

३. (स्वा. उत्तान.) भागवत मतानुसार हविर्धान का पुत्र।

४. (स्वा. प्रिय.) विष्णु तथा भागवत मतानुसार नक्त तथा द्युति का पुत्र। इसकी स्त्री गयंती। इसके चित्ररथ, सुगति तथा अवरोधन नामक तीन पुत्र थे (भा. ५.१५. ६)।

५. (सो. आयु.) आयु का पुत्र (म. आ. ७०. २३)।

६. (सो पुरूरवस्.) अमूर्तरजस् का पुत्र (म. स. ८.१७; शां. ३७.१-९)। यह बड़ा धर्मात्मा एवं यज्ञ करनेवाला था। लगातार सौ वर्षों तक यह यज्ञ करता रहा। गयादेश में यज्ञयाग करते समय, इसने सरस्वती नदी को आमंत्रित किया। सरस्वती वहां प्रादुर्भूत हुई। इसी नदी को विशाला कहने लगे (म. व. ९३.१२१)।

७. (सू.) इला अथवा सुद्युम्न राजा का पुत्र। यह गयापुरी में राज्य करता था (भा. ९.१.४१; पद्म.सृ.८)।

८. ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र।

९. ऊरु तथा पद्मांगी का पुत्र।

गय आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.९–१०)।

गय प्लात—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.६३–६४)। यह प्लति का पुत्र था (ऐ. ब्रा. ५.२)। इसने अपने सूक्त में एक स्थान पर उल्लेख किया है कि, नहुषपुत्र ययाति के यज्ञ में जानेवाले देव इसे धन दें (ऋ. १०.६३.१७)। अदिति तथा कश्यप के साथ इसका उल्लेख आया है (अ. वे. १.१४)।

गयंती—नक्तपुत्र गय की स्त्री।

गर—सुबाहु का पुत्र। यह विशेष धार्मिक न था। हैहय, तालजंघ, शक, यवन, पारद, कांबोज तथा पल्लव राजाओं ने मिलकर इसका राज्य हरण किया। इसलिये यह अपने कुटुंबसहित भार्गव ऋषि के आश्रम में रहने गया। वहीं जाकर यह अल्पकाल में ही मर गया। इसकी स्त्री कल्याणी तथा पुत्र सगर (पद्म. उ. २०)।

२. सामद्रष्टा एवं इंद्र का मित्र (पं. ब्रा. ९.२.१६)।

३. वीरभद्र देखिये।

गरिष्ठ—एक ऋषि। यह इंद्र की सभा में उपस्थित था (म. स. ७.११)।

गरुड—विष्णु का वाहन, एक पक्षी।

श्येन एक शक्तिशाली पक्षी के रूप में वेदों में आता है। यह संभवतः गरुड का वेदकालीन नाम है। बाद के संस्कृत साहित्य में श्येन का अर्थ 'बाज' दिया है।

सुपर्ण श्येन का पुत्र है (ऋ. १०. १४४. ४)। श्येन तथा सुपर्ण भिन्न थे (ऋ. २.४२.२)।

श्येन ने स्वर्ग से सोम पृथ्वी पर लाया (ऋ. ३. ४३. ७; ४. २६. ६; ८. ९५. ३; ९. १००. ८)। सोम को श्येनाभृत कहा है (ऋ. १.८०.२; ८.९५.३)।

गरुड स्वर्ग से अमृत लाया। यह निवेदन पुराणों ने किया है। अन्त में यह विष्णु का सेवक तथा वाहक हो गया।

यह कश्यप तथा विनता का पुत्र तथा अरुण का कनिष्ठ बंधु था। अरुण ने अपनी माता को शाप दिया था (अरुण ३. तथा विनता १. देखिये)। उसके अनुसार, वह कद्रू नामक सौत का दास्यत्व कर रही थी। इधर अंडे से बाहर निकलते ही, गरुड तीव्र गति से आगे बढा तथा उड गया (म. आ. २०. ४-५; स. ५९. ३९; उ. ११०)। वालखिल्यों ने इंद्र उत्पन्न करने के लिये किये तप का फल कश्यप को दिया। वही फल कश्यप ने विनता को दिया। तब उसने एक अंडा डाला। उसीसे गरुड उत्पन्न हुआ (म. आ. २७. अनु. २१ कुं.)।

यह उड कर जाने लगा, उस समय गरुड को पक्षियों का इंद्र मान कर वालखिल्यों ने अभिषेक किया। उडते समय यह इतना प्रखर तथा तीव्र प्रतीत होने लगा कि इसके तेज से लोगों के प्राण घबराने लगे। तभी इसे अग्नि समझ कर लोग इसकी स्तुति करने लगे। यह जानकर इसने अपना तेज संकुचित किया। बादमें इसने अपने बडे भाई अरुण को पीठ पर बैठा कर, पूर्वदिग्भाग में ले जाकर रखा (म. आ. परि. १ क्र. १४; अरुण देखिये)।

तदनंतर यह कद्रू के दास्यत्व में बद्ध हुई अपनी माँ विनता के पास गया। वहाँ इसने देखा कि, विनता अत्यंत दुःखी तथा कष्ट में है। इतने में कद्रू ने नागों के उपवन में जाने का निश्चय किया। स्वयं विनता के कंधे पर बैठ कर, उसने अपने अनुचर नागों को कंधे पर ले जाने की आज्ञा गरुड को दी। उडते उडते यह इतनी ऊँचाई पर गया कि, सूर्य की उष्णता के कारण सब नाग नीचे गिर गये। तब इन्द्र की स्तुति कर कद्रू ने वर्षा करवाई। बाद में नाग इससे मन चाहे जैसी आज्ञा करने लगे। तब गरुड ने माता के पास शिकायत की। विनता ने इसे दासीभवन की समस्त कथा बताई तथा नागों का कपट भी बताया। तब गरुड ने माता की दास्यत्वमुक्ति के लिये कद्रू से उपाय पूछा। उसने दास्यत्व के बदले में अमृत माँगा (म. आ. २१. २-३)।

गरुड ने अमृत लाने के लिये माता से अनुमति माँगी। क्षुधानिरसन के लिये क्या है, सो पूछा। तब माँ ने इसे निषादों को खाने के लिये कहा। खाते खाते, निषाद समझ कर इसने एक ब्राह्मण तथा उसकी केवट पत्नी को भी खा लिया। इससे गरुड का गला इतना जला कि, इसे उन्हें छोड देना पड़ा (म. आ. २४)। उगलते समय कुछ निषाद भी बाहर आये। वे म्लेच्छ बने (पद्म. सृ. ४७)। इतने में यह उस स्थान पर आया, जहाँ इसका पिता कश्यप तपस्या कर रहा था। इसने क्षुधानिवारणार्थ कुछ माँगा। तब पिता ने एक सरोवर में लड रहे हाथी तथा कछुवा— जो पूर्वजन्म में सगे भाई हो कर भी एक दूसरे के दुश्मन थे—दोनों को खाने के लिये कह कर, इसे शुभाशीर्वाद दिया। कश्यपद्वारा दर्शाये गये सरोवर में लड रहे हाथी तथा कछुवा को इसने पंजे से उठा लिया। उड कर यह एक सौ योजन लंबी तथा उसी परिमाण में मोटी वटवृक्षशाखा पर बैठा। इतने में वह शाखा टूट गई। इसी शाखा से उलटे लटक कर, वालखिल्य तपस्या कर रहे थे। यह देख कर इसने वह शाखा चोंच में पकड़ी। हाथी, कछुवा तथा वालखिल्यों के साथ उड कर, यह पुनः कश्यप के पास आया। कश्यप ने कुशल प्रश्न पूछ कर वालखिल्यों का क्रोध ढाल दिया। बाद में उस शाखा से छूट कर वालखिल्य हिमालय पर गये। कश्यप के कथनानुसार गरुड ने वह शाखा एक पर्वतशिखर पर रख दी। वहीं उस हाथी तथा कछुए को खा कर, यह अमृतार्थ आगे बढा।

अमृतप्राप्ति के लिये गरुड आ रहा है, यह जान कर देवों ने इससे लडने की तैय्यारी चालू की। बाद में इसका यक्ष, गंधर्व तथा देवों से युद्ध हुआ, परंतु उसमें उनका पराभव हो गया। इस समय इन्द्र ने इस पर अपना वज्र फेंका; किंतु इसपर कुछ भी असर नहीं हुआ। इसने इंद्र के तथा जिस दधीचि की हड्डियों से वह वज्र बना था, उस दधीचि के सम्मान के लिये, अपने एक पर का त्याग किया। बाद में यह अमृतगुफा की ओर मुडा। वहाँ सुदर्शनचक्र के समान एक चक्र उस गुफा की रक्षा कर रहा था। चारों ओर अग्नि का परकोटा था (यो. वा. १.९)।

अतिसूक्ष्म रूप धारण कर के, इस चक्र के बीच में स्थित तुंबी के छेद से इसने भीतर प्रवेश किया। परंतु अमृत के दोनों ओर दो नाग थे। जो भी कोई उनके दृष्टिपथ में आता, एकदम भस्म हो जाता था। उनके दृष्टिपथ में आ कर भस्म न होवे, इसलिये इसने उनकी आँखों में धूल झोंक दी। उन्हें आँखे बंद करने के लिये मजबूर कर के स्वयं अमृत कुंभ ले कर बाहर निकला। इतने में इसकी विष्णु से भेंट हुई। तब संपूर्ण कुंभ पास में होते हुए भी, इसने एक बूंद अमृत को भी स्पर्श नहीं किया, यह देख कर विष्णु अत्यंत प्रसन्न हुए। तथा उसने इसे दो वर माँगने के लिये कहा। इन दो वरों से, 'मैं तुम्हारे साथ लेकिन ऊँचा रहूँ, तथा बिना अमृत प्राशन किये भी मैं अमर रहूँ' ऐसे दो वर इसने विष्णु से माँगे, तथा पूछा कि 'मैं तुम्हारी सेवा किस प्रकार कर सकता हूँ'? तब विष्णु ने कहा, 'तुम मेरे वाहन बनो। तुम्हारे प्रथम वर की पूर्ति के लिये, मैं रथ में बैठूँगा, तब तुम मेरे ध्वज पर बैठो' (म. आ. २८-२९)।

बाद में पुनः यह बदरिकाश्रम में कश्यप के पास आया तथा आपबीती उसे बताई। कश्यप तथा तत्रस्थ ऋषिओं ने इसे नारायणमाहात्म्य का निवेदन किया। तदनंतर इसकी तथा इंद्र की मित्रता हो कर, इंद्र ने इसे अमृत ले जाने का कारण पूछा। गरुड द्वारा बताये जाने पर इंद्र ने कहा, 'तुम्हारी माता को कपट से दासी बनाया गया है। हम कपटाचरण से ही उसकी मुक्ति करायेंगे'। सख्यत्व दर्शाने के लिये इंद्र ने इसे वर दिया, 'सर्प तुम्हारा भक्ष्य बनेंगे'। बाद में इसने अमृतकुंभ दर्भ पर रखा तथा सर्पों से कहा, कि तुम स्नानादि कर के इसका भक्षण करो। इस प्रकार सब साँप जब स्नान के लिये गये थे, तब इंद्र ने आ कर अमृतकुंभ का हरण कर लिया। इस प्रकार साँपों को धोखा दे कर, इसने अपनी माता की मुक्ति की।

इसकी पत्नियों के नाम भासी, क्रौंची, शुकी धृतराष्ट्री एवं श्येनी थे (ब्रह्माण्ड. ३.७.४४८-४४९)।

एक बार इंद्र ने सुमुख नामक नाग को अमरत्व दिया। क्रुद्ध हो कर गरुड इंद्र के पास गया। 'तुम मेरे मुख से मेरा भक्ष्य क्यों छीन रहे हो? मैं सरलता से विष्णु का वहन कर सकता हूँ, इसलिये मैं सबसे, अर्थात् विष्णु से भी बलवान् हूँ।' ऐसी बढ़ाईयाँ यह करने लगा। इसका गर्व हरण करने के लिये विष्णु ने लीला से अपना एक हाथ इसके शरीर पर रखा। इससे इसके प्राण घबराने लगे। तब यह विष्णु की शरण में गया। उस सुमुख नामक नाग को अपने अंगूठे से उठा कर, विष्णु ने गरुड की छाती पर रखा। तब से वह सुमुख गरुड की छाती पर है (म. उ. १०३)।

गालव नामक ऋषि इसका मित्र था। गालव जब गुरुदक्षिणा की विवंचना में था, तब गरुड उसके पास आया। उसकी सहायता के हेतु से गरुड ने उसे पीठ पर बैठाया। चारों ओर घूम कर, दोनों ऋषभ पर्वत पर शाण्डिली नामक एक ब्राह्मणी के आश्रम में आ उतरे। यह तथा गालव उसी आश्रम में विश्राम कर रहे थे। तब गरुड ने सोचा कि, यह ब्राह्मणी अत्यंत तपोनिष्ठ है। इसे वैकुंठ ले जाना चाहिये। तभी अंशतः उपकार इसपर हो सकेगा। परंतु ब्राह्मणी को यह पापविचार प्रतीत हुआ। उसने योगबल से इसके पर तोड़ डाले। गरुड ने उससे क्षमायाचना की। तब इसे पहले से भी शक्तिपूर्ण पर प्राप्त हुए। फिर दोनों मित्र मार्गक्रमण करने लगे। मार्ग में गालव का गुरु विश्वामित्र मिला। वह दक्षिणा के लिये उतावली करने लगा। तब त्वरित द्रव्यप्राप्ति की इच्छा से गरुड उसे ययाति राजा के पास ले गया। परंतु ययाति के पास द्रव्य नहीं था। इस कारण, उसने अपनी कन्या माधवी इसे इस शर्तपर दी कि, इससे उत्पन्न पुत्रों पर ययाति का अधिकार होगा। गालव से उसने कहा, 'कोई भी राजा तुम्हारी इच्छित कीमत दे कर इसे ले लेगा।' बाद में गुरुदक्षिणार्थ अश्वप्राप्ति का साधन प्राप्त होते ही इसने गालव को विदा किया। पश्चात् यह अपने स्थान पर वापस लौट आया (म. उ. १०५.१११)।

इसे सुमुख, सुनामन्, सुनेत्र, सुवर्चस्, सुरूप् तथा सुबल नामक छः पुत्र थे (म. उ. ९९.२-३)। महाभारत के इसी अध्याय में एक और नामावलि दी गयी है। इस नामावलि के प्रारंभ में कहा गया है, 'गरुड के कुल के अन्य नाम बता रहा हूँ'। अन्त में कहा गया है, 'ये सब गरुडपुत्रों में से है'।

इंद्र ने सुमुख को अमरत्व दिया। इस कारण इंद्र से लड़ने गरुड गया था। तब इसने स्वयं ही बताया था, 'मैं ने श्रुतश्री, श्रुतसेन, विवस्वान्, रोचनामुख, प्रस्तुत, तथा कालकाक्ष राक्षसों का वध कर के अचाट कर्म किये हैं' (म. उ. १०३)।

इसके विभिन्न कार्यों से इसे विभिन्न नाम प्राप्त हुएं। उनमें से, काश्यपि इसका पैतृक नाम तथा वैनतेय इसका मातृक नाम है। सुपर्ण, तार्क्ष्य, सितानन, रक्तपक्ष, सुवर्णकाय, गगनेश्वर, खगेश्वर, नागांतक, पन्नगाशन, सर्पाराति, विष्णुरथ, अमृताहरण, सुधाहर, सुरेंद्रजित्, वज्रजित्, गरुत्मत्, तरस्विन्, रसायन, कामचारिन्, कामायुष, चिराद आदि इसके अनेक नाम हैं। इसका रूप अति विचित्र था। इसके मस्तक, पर, चोंच तथा नख गरूडपक्षी के समान थे। शरीर तथा इंद्रियाँ मनुष्य जैसी थीं।

इसीके वंश के पिंगाक्ष, निबोध, सुपुत्र तथा सुमुख ने व्यासपुत्र जैमिनि की महाभारत पर की शंकाओं का निरसन किया (मार्कं. ४)। ये चारों श्वास रोक कर वेदपठन करते थे (मार्कं. ४.४)। इसने ही गरुडपुराण कश्यप को बताया (गरुड़. १.२)। इसकी उपासना काफ़ी प्राचीन है। इसकी गायत्री प्रसिद्ध है (महाना. ३.१५; गरुड़ोपनिषद् देखिये)।

गरुड केवल व्यक्ति का नाम न हो कर, समुदाय एवं मनुष्यजाति का नाम होगा।

गर्ग--(सो. काश्य.) दिवोदासपुत्र प्रतर्दन के दो पुत्रों में से एक (ह. वं. १.३०)।

२. (सो. पूरु.) मन्यु नृप का पुत्र। इसका पुत्र शिनि।

३. यादवों का पुरोहित। इसने कृष्ण का नामकरण तथा उपनयन संस्कार किया (भा. १०.८)। देवकी को पुत्र होते ही तत्काल उनका वध करने का क्रम कंस ने जारी किया। इन पुत्रों को दीर्घायु बनाने का उपाय वसुदेव ने इससे पूछा। तब इसने देवीभागवत श्रवण करने का उपाय उसे बताया। कारागृह में वह असंभव था, इसलिये गर्गमुनि ने स्वयं देवीभागवत का पाठ किया। देवी ने वरदान दिया कि, शीघ्र ही कृष्णावतार होगा (दे. भा. १.२)। गर्ग ने चौसष्ठ कलाओं पर एक ग्रंथ लिखा होगा (म. अनु. ४९.३८ कुं.)। गर्गस्मृति से हेमाद्रि तथा माधवाचार्य ने उद्धरण लिये हैं।

यह प्रसिद्ध ज्योतिषी था। इसने कृष्णजन्म का जातक ठीक ठीक कथन किया था। गर्गसंहिता नामक बारह हजार श्लोकों का कृष्णचरित पर एक ग्रंथ उपलब्ध है। वह इसी गर्ग का है, ऐसा कहा जाता है। इतिहास पर लिखे गये इस ग्रंथ के अनुसार, ज्योतिष पर भी एक गर्गसंहिता पहले होनी चाहिये। बृहद्‌गार्गीय संहिता नामक एक ग्रंथ हाल ही में पाया जाता है। गर्ग के वारिशास्त्र तथा मयूरचित्रक नामक दो ग्रंथ उपलब्ध हैं। इन दोनों ग्रंथों में वर्षा के भविष्य के संबंध में विस्तीर्ण जानकारी अर्थात् वायुविद्या है। मयूरचित्रक, गर्ग तथा भागुरि का संवादरूप ग्रंथ है (कविन्त्ररिप्र)। गर्ग ने वास्तुशास्त्र पर एक ग्रंथ लिखा था (मत्स्य. २५२)।

४. कलिंग देश का निवासी। मुख से विश्वनाथ का नाम लेते, यह कंधे पर गंगा की डोली लेकर जा रहा था। राह में ब्रह्मराक्षस बने सोमदत्त तथा कल्माषपाद से इसकी भेंट हुई। उनपर तुलसीमिश्रित गंगाजल डालने से सोमदत्त तर गया तथा कल्माषपाद पश्चात्तापदग्ध हुआ। सरस्वती के द्वारा आश्वासन दिये जानेपर, छः मास काशी में रहकर कल्माषपाद अपने राज्य लौटा (नारद. १.१४१)।

५. एक ऋषि (पितृवर्तिन् देखिये)। इसने भीष्मपंचकव्रत किया था (पद्म. उ. २४)।

६. अंगिराकुल का गोत्रकार।

७. ऋषभ नामक शिवावतार का शिष्य।

८. लकुलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

गर्ग भारद्वाज--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.४७)।

गर्गभूमि--(सो. क्षत्र.) वायुमतानुसार गार्ग्यपुत्र।

गर्दभीमुख--कश्यपकुल का गोत्रकार।

गर्दभीमुख शांडिल्यायन--एक आचार्य। इसका गुरु उदरशांडिल्य (वं. ब्रा. २)।

गर्दभीविपीत--गौतमकुल का एक ऋषि।

२. भारद्वाजकुल का एक ऋषि।

३. एक तत्त्वज्ञ। जनक ने याज्ञवल्क्य को बताया कि, इसने श्रोत्र ब्रह्म है, ऐसा कहा है (बृ. उ. ४.१.५)। इसे विभीत भी कहते हैं।

गर्भ--(सो. तुर्वसु.) मत्स्य के मतानुसार यह तुर्वसुपुत्र है।

गर्व--धर्म ऋषि का पुत्र। इसकी माता पुष्टि।

गलूनस आर्क्षाकायण--एक आचार्य। इसका तथा जैवलि का साम के बारे में संवाद हुआ है (जै. उ. ब्रा. १. ३८.४)।

गवय--यह रामसेना का वानर था। राम ने जब यज्ञ किया, तब अश्व के रक्षणार्थ शत्रुघ्न के साथ इसे भेजा गया था (म. व. २६७.३; पद्म. सृ. ३९; पा. ११)।

गवल्गान--यह सूत था तथा संजय का पिता था।

गवाक्ष--शकुनि का भ्राता। भारतीययुद्ध में यह इरावत् के द्वारा मारा गया (म. भी. ८६.२४-३४)।

२. रामसेना का एक वानराधिपति (म. व. २६७.४)।

३. भारतीययुद्ध में भीम के द्वारा मारा गया राजा (म. द्रो. १३२.२०)।

गविजात—एक ब्रह्मर्षि (च्यवन तथा शृंगिन् देखिये)।

गविष्ठ—कश्यप तथा दनु का पुत्र। एक दानव (म. आ. ५९.२९)

२. अंगिरसपुत्र देवों में से एक।

गविष्ठिर आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१.१२; १०.१५०.५; अ. सं. ४.२२.५; आश्व. श्रौ. १२.१४.१; ब्रह्मांड. ३.३२)। यह अत्रिगोत्र का प्रवर है।

गवेषण—(सो. यदु. वृष्णि.) अक्रूर के पुत्रों में से एक।

गवेष्टिन्—दनुपुत्र।

गाग्र—(सो. पुरूरवस्.) वायु के मतानुसार भुवनमन्युपुत्र। इसके पुत्रों को गाग्र यह सामान्यनाम दिया गया है। अन्य पुराणों से प्रतीत होता है कि, ये गर्ग होंगे।

गांगेय—भीष्म का मातृक नाम (म.आ. ९४.७७)।

२. गणपति देखिये।

गांगोदधि—अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार।

गांग्यायनि—चित्र का पैतृक नाम। गार्गायणि नामांतर है (कौ. उ. १.१)।

गाणगारि—आश्वलायन देखिये।

गातु आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.३२)।

गातु गौतम—संवर्गजित् लामकायन का शिष्य (वं. ब्रा. २)।

गात्र—उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

गात्रवत्—कृष्ण का लक्ष्मणा से उत्पन्न पुत्र (भा. १०.६१.१५)।

गाथिन्—विश्वामित्र का पिता तथा कुशिक का पुत्र। सर्वानुक्रमणी में इसका निर्देश है। गाथिन् कौशिक कुछ ऋचाओं का द्रष्टा है (ऋ. ३.१९–२२)। विश्वामित्र ने शुनःशेप को दत्तक लिया। इसलिये यह, मूलवंश के तथा गाथिन् के वंश के, यज्ञयागादि दैवी कर्मों में तथा मंत्रसाध्य कर्मों में, प्रामुख्य प्राप्त करनेयोग्य हुआ (ऐ. ब्रा. ७.१८)। विश्वामित्र के वंश के लिये, गाथिन् शब्द बहुवचन प्रयुक्त होता है (आश्व. श्रौ. ७.१८)। यह अंगिराकुल का गोत्रकार तथा इंद्र का अवतार था (वेदार्थदीपिका ३)। पुराणों में इसे गाधि कहा गया है (विश्वामित्र देखिये)।

गाथिन—विश्वामित्र तथा विश्वामित्रवंशजों का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.१८)।

गाधि—(सो. अमा.) वायुमतानुसार कुशाश्वपुत्र, भागवत तथा विष्णु मतानुसार कुशांबुपुत्र। इसीको कौशिक कहते हैं। यह कान्यकुब्ज देश का अधिपति था। इसकी माता पुरुकुत्स की कन्या थी। इसे सत्यवती नामक कन्या थी। उसे ऋचीक ऋषि ने इससे माँगा। तब इसने उससे एक हजार श्यामकर्ण घोडे ले कर, सत्यवती उसे दी। ऋचीक ऋषि ने दिये चरु के प्रभाव से, इसे विश्वामित्र नामक पुत्र हुआ (ऋचीक देखिये; म. आ. १६५; व. ११५; शां ४९; अनु. ७ कुं; भा. ९.१५.४; १६.२८; ह. वं. १.२७)।

२. कोशल देश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। यह श्रोत्रिय एवं बुद्धिमान् था। यह बचपन से ही विरक्त था। कुछ इच्छाओं की सिद्धि के लिये, यह भाइयों को छोड कर तपस्या करने के लिये अरण्य में एक सरोवर के किनारे गया। विष्णुदर्शन होने तक पानी में तप करने का इसने निश्चय किया। दर्शन दे कर विष्णु ने इसे वर माँगने का कहा। इसने विष्णु से मायिक संसारमाया दिखलाने की प्रार्थना की।

एक दिन स्नान करते समय, मंत्र हाथ में ले कर पानी मथना इसने प्रारंभ किया। तब इसे ऐसा दृश्य दिखा कि, जोरों का तूफान आने के कारण, पत्ते के समान उसका शरीर नीचे गिर गया है। स्वजन रो रहे हैं, तथा शुष्क शरीर चिता में डाल कर जला डाला गया है। बाद में भूतमंडल देश की सीमा पर, एक ग्राम में, एक चांडाल स्त्री के उदर में गर्भवास की नरकयातना भोगते हुए इसने अपने को देखा। बाद में क्रमशः बढते बढते, यह विषयलोलुप बन गया। इसने चांडालकन्या से विवाह किया। वहाँ इसे संतति प्राप्त हो कर, यह वृद्ध हुआ। तदनंतर यह अरण्य में वास करने लगा। कुछ कालोपरांत, घर के लोगों की मृत्यु होना प्रारंभ हुआ। यह प्रमत्त के समान वन में घूमने लगा। घूमते घूमते यह कीर लोगों की राजधानी में आया। वहाँ के राजा की मृत्यु हो गयी थी। हाथी ने इस चांडाल को सूँड से पकड कर गंडस्थल पर बैठाया। इसलिये लोगों ने इसे राजा बनाया। इस प्रकार गवल नाम से इसने आठ वर्षों तक कीर देश का राज चलाया। बाद में, नागरिकों को ज्ञान हुआ कि, अपना राजा चांडाल है। उन्हों ने अग्निप्रवेश किया। उनके

...म से, यह स्वयं भी अग्निप्रवेश करने को सिद्ध हो गया, ...या अग्निराशि पर गिर गया। इसके अवयव जलने लगे। इसी समय, सरोवर के जल में अघमर्षण करनेवाला ...धि ब्राह्मण, इस दीर्घस्वप्न से जागृत हुआ।

...चार घटिकाओं के बाद, इसका स्वप्नभ्रम नष्ट हुआ। ...न की सब घटनाओं का स्मरण कर, यह विचार करने ...गा। तदनंतर गाधि ने दस साल तक तपस्या की। तब इसे ...र्शन दे कर विष्णु ने बताया कि, तुमने देखी हुई सब ...रा मेरी माया है। विष्णुवचन की सत्यासत्यता आजमाने ...लिये, यह पुनः कीर देश में गया। विष्णुद्वारा ...का मोह निरसन होने के पश्चात्, यह जीवन्मुक्त हुआ ...यो. वा. ५.४४.४९)।

गानबंधु—वाराहकल्प के घोरकल्प में से प्रसिद्ध ...गनाचार्य। तत्कालीन नारद ने इससे गायन सीखा। ...गे चल कर कुछ कारणवश, इसे उलूकयोनि प्राप्त हुई ...अ. ११. ७)।

गांदम—एकयावन का पैतृक नाम (तां. ब्रा. २१. ४, २०; तै. ब्रा. २. ७. ११. २)। तैत्तिरीय ब्राह्मण ...कायन पाठ है।

गांदिनी—काशिराज की कन्या, तथा यदुवंश के ...फल्क की पत्नी। अक्रूर आदि इसके पुत्र थे (भा. १०. १)। यह अनेक वर्षों तक गर्भ में थी। इसका कारण ...इसके पिता ने पूछा। इसने कहा कि, 'अगर तुम मुझसे ...गो दान कराओगे, तो ही मैं जन्म लूँगी'। इसके ...ता ने यह कबूल किया (वायु. ९६. १०५–१०९; ...ब्र. १. १४. ९–१०)।

गांधार—(सो. द्रुह्यु.) भागवत मतानुसार आरब्ध ..., विष्णु मतानुसार सेतुपुत्र या आरद्वत् का, मत्स्य ...मतानुसार शरद्वत् का तथा वायुमतानुसार अरुद्ध का ...। गांधार देश के राजाओं को, विशेषतः शकुनि को ...ह नामाभिधान होता था (गांधार नग्नजित् देखिये)।

गांधार नग्नजित्—एक गांधार राजा। इसे सोम-...प्रयक ज्ञान प्राप्त था (ऐ. ब्रा. ७. ३४)। शतपथ ...ब्राह्मण में इसका अथवा स्वर्जिन्नाग्नजित् का, नग्नजित् ...ना उल्लेख मिलता है। एक बार, प्राण शब्द के अर्थ के ...बंध में दिया हुआ इसका मत, राजन्यबंधु होने के ...कारण अस्वीकृत हुआ (८.१.४.१०)। सायणाचार्य ...गांधार तथा नग्नजित् को दो पृथक् व्यक्ति मानते हैं (ऐ. ब्रा. ...भाष्य.)।

गांधारकायन—अगस्त्यकुल का एक गोत्रकार।

गांधारी—गांधार देशाधिपति सुबल की कन्या (म. आ. ९०. ६१)। इसने बाल्यावस्था में रुद्र की आराधना की थी, जिस कारण इसे सौ पुत्र होंगे ऐसा वरदान मिला। कुरुवंश में संतति का अभाव था। इसी कारण भीष्म आदि लोगों ने धृतराष्ट्र के लिये, गांधारी की माँग की (म. आ. १०३. ९–१०)। तदनुसार सुबल ने धृतराष्ट्र को गांधारी दी। यह महापतिव्रता थी। धृतराष्ट्र अंधा था। इसलिये इसने भी अपनी आँखों पर पट्टी बाँध कर अंधत्व अंगिकार किया। यह परपुरुष का दर्शन भी न करती थी (म. आ. १०३.१३)।

वर के अनुसार इसके उदर में गर्भ रहा। इसे समाचार मिला कि, कुंती को युधिष्ठिर उत्पन्न हुआ है। जल्दी पुत्र हो, इसलिये इसने बलपूर्वक अपना गर्भ बाहर निकाला (म. आ. १०७.१०–११)। उससे मृतप्राय सा मांस का पिंड बाहर आया। इतने में वहाँ व्यास आये। यह सारा हाल देख कर उन्हें इस पर बड़ी दया आई। उन्होंने गर्भ के सौ टुकड़े करवा दिये। पश्चात् घृतकुंभ मँगवा कर, उसमें गर्भ रखने का आदेश दिया। कहा कि, 'यथा-अवसर योग्य काल पा कर गर्भ व्यवस्थित हो जायेगा'। तदनुसार योग्य समयपर गर्भ सजीव हुआ (म. आ. १०७.१२–१४)। इसी समय कुंती को भीम उत्पन्न हुआ (म. आ. ११४.१४)। गांधारी को दुर्योधन आदि सौ कौरव तथा दुःशला नामक कन्या यों एक सौ एक संतानें हुई (धृतराष्ट्र देखिये)।

दुर्योधन ने पांडवों से शत्रुता प्रारंभ की, तब गांधारी ने हितोपदेश दिया। उसका कुछ भी परिणाम नहीं हुआ (म. उ. १२७)। दुर्योधन की मृत्यु के समय, कृष्ण ने इसे सांत्वना दी (म. श. ६२)। गांधारी ने रणक्षेत्र में आ कर, पुत्रशोक से संतप्त हो, सब के शव (प्रेत) दिखाये। कृष्ण को शाप दिया कि, छत्तीस वर्षों में तेरे कुल का क्षय होगा। तब कृष्ण ने हँस कर कहा कि, यह मुझे मालूम ही था (म. स्त्री. २६.४१–४३)। इसके बाद व्यास आदि लोगों ने इसका सांत्वन किया। दुर्योधनवध तथा दुःशासन का रक्त-प्राशन, इस विषय पर भीम से इसका संवाद हुआ। तब भीमसेन ने कहा, 'दुःशासन का लहू दांत तथा ओठों के अंदर बिल्कुल ही नहीं गया' (म. स्त्री. १४.१४)। एक बार इसकी संतापपूर्ण दृष्टि धर्म के पैरों की अंगुलियों पर पड़ी। इससे उसकी अंगुलियों के अत्यंत सुंदर नख विद्रूप हो गये (म. स्त्री. १५.७)। द्रौपदी तथा कुन्ती अपने

अपने पुत्रों के लिये शोक कर रही थीं। इसने उनकी सांत्वना की (म. स्त्री. १५-१७)।

इसके बाद, गांधारी धृतराष्ट्र के साथ पांडवों के पास ही रहने लगी। युधिष्ठिर अत्यंत सुस्वभावी था। इन्हें किसी भी चीज की कमी नहीं होने देता था। किंतु भीम हमेशा कठोर भाषण करता था। इससे वैराग्य उत्पन्न हो कर, गांधारी धृतराष्ट्र, कुन्ती तथा विदुर के साथ वन में गई। वहाँ इसने पति के साथ देहत्याग किया (भा. १.१३.२७; ९.२२-२६; म. आश्र. ४५)।

२. क्रोष्टु की पत्नी। इसे सुमित्र अथवा अनमित्र नामक एक पुत्र था (ब्रह्म. १४.२; ३४; ह. वं. २.३४.१)।

३. अजमीढ की तीसरी पत्नी।

४. कश्यप तथा सुरभि की कन्या।

५. कृष्णपत्नी। इसने अंत में अग्निप्रवेश किया (म. मौ. ७)।

गायत्री—एक देवपत्नी। पुराने काल में चाक्षुष मन्वन्तर में ब्रह्मदेव ने यज्ञ प्रारंभ किया। शंकर, विष्णु आदि देव तथा भृगु आदि ऋषि आये थे। यज्ञदीक्षा के लिये, ब्रह्माजी ने अपने स्वरा नामक पत्नी को पुकारा। वह किसी कार्य में मग्न थी। इधर मुहूर्त टल रहा था। इस लिये इन्हों ने गायत्री को पुकारा। तब यह आई तथा स्वरा के स्थान पर बैठी।

बाद में स्वरा मंडप में आई। अपने स्थान पर गायत्री को बैठी देख कर, क्रोध से उसने सब को जड़ हो जाने का शाप दिया। तब गायत्री ने भी उसे वही शाप दिया। बाद में, देव जड़ अर्थात् जलरूप रहें, तथा प्रत्येक नदी देवता हो, ऐसा तय हुआ। सावित्री तथा गायत्री पश्चिमवाहिनी नदीयाँ बनीं। विष्णु कृष्णा का तथा शंकर वेण्या का स्वामी बना (पद्म. उ. ११३)। सावित्री ने देवों को शाप दिया। तब गायत्री ने यह बताया कि, शाप का उपयोग कैसे किया जावे (पद्म. सृ. १७)।

पश्चात् ब्रह्मदेव ने एक स्त्री, यज्ञकार्य के लिये लाने की आज्ञा, इन्द्र को दी। इन्द्र ने एक अधिराज की (ग्वाले की) कन्या उठा लाई। उसकी स्थापना ब्रह्मदेव के पास की। ब्रह्मदेव ने इसका गांधर्वविधि से स्वीकार किया (पद्म. सृ. १६-१७; सावित्री, बुडिल तथा अश्वपति २ देखिये)।

गायत्री मंत्र तथा गायत्री छंद की प्रशंसा ब्राह्मण, उपनिषद तथा महाभारतादि पुराणों में प्राप्त है (छां.उ. ३.१२.१; म. आश्व. ९९.३२-३७; ११५.२७.२९)।

गायत्री को वेदमाता कहा है (म. आश्व. ९९.२४)। गायत्री को सूर्यांश मान कर उसे सावित्री कहते हैं (बृ. उ. ५.१४.५)। जै. उ. ब्रा. में गायत्र्युपनिषद कहते हैं (जै. उ. ब्रा. ४.१७)। इस ग्रंथ में गायत्र साम की अत्यंत प्रशंसा की है।

गायन—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

गार्गि—विश्वामित्र का पुत्र।

गार्गिहर—गार्ग्यहरि का पाठभेद।

गार्गी वाचक्नवी—वचक्नु ऋषि की कन्या होने के कारण, इसे गार्गी वाचक्नवी कहते हैं। यह अत्यंत ब्रह्मनिष्ठ थी तथा परमहंस की तरह रहती थी। वैदेह जनक की सभा में याज्ञवल्क्य से इसका वाद हुआ (बृ. उ. ३.६.१; ८.१; आश्व. गृ. ३.४.४; सां. गृ. ४.१०; अथर्वपरि. ४३.४.२३)। ऋग्वेदियों के ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में इसका नामोल्लेख आता है।

गार्गीय—भृगुकुल का गोत्रकार।

गार्ग्य—एक आचार्यपरंपरा। गर्ग परंपरा के लोग गार्ग्य नाम से प्रथित हुए। वेद, प्रातिशाख्य, यज्ञ, व्याकरण, ज्योतिष, धर्मशास्त्र आदि विषय में अनेक ग्रंथ तथा विचार उपलब्ध हैं। यह कार्य एक का नहीं। परंपरा में आगे अनेक शिष्यप्रशिष्य द्वारा यह संपन्न हुआ, इस में संदेह नहीं। यहाँ केवल निर्देश किये हैं। काल तथा भिन्नता प्रकट करना अशक्य है।

एक व्याकरणकार। पाणिनि ने तीन बार इसका उल्लेख किया है (पा. सू. ७. ३. ९९; ८. ३. २०; ४. ६७)।

ऋक्प्रातिशाख्य तथा वाजसनेय प्रातिशाख्य में भी गार्ग्यमत उद्धृत किया है (ऋ. प्रा. १३. ३०)।

निरुक्त में भी गार्ग्यमत है (नि. १.३.१२; ३..३)। यास्क तथा रथीतर के साथ इसका निर्देश है (बृहद्देवता १. २६)। सामवेद का पदपाठ गार्ग्यविरचित है।

सामवेद परंपरा में शर्मदत्त का गार्ग्य पैतृक नाम है। सामवेदियों के उपाकर्मांग तर्पण में इसका नाम है (जैमिनि देखिये)।

एक गृह्यकर्मविशारद। शान्त्युदक तथा मधुपर्क विषयक इसके मत उपलब्ध है (कौ. सू. ९. १०; १३. ७; १७, २७)।

एक तत्त्वज्ञ। यह गौतम का शिष्य था। इसका शिष्य अग्निवेश्य (बृ. उ. ४. ६. २)।

एक ज्योतिषी के नाते हेमाद्रि ने इसका निर्देश किया है (C. C)। केतु की कर्णिका ऊर्ध्वनिर्गमित आकार की है (वायु. ६४. ६३), यह ज्योतिषशास्त्रीय सिद्धान्त इसने प्रस्थापित किया।

यह अंगिराकुल का एक गोत्रकार तथा मंत्रकार है। परंतु ऋग्वेद में गार्ग्य का मंत्र नहीं है।

धर्मशास्त्रकार—वृद्धयाज्ञवल्क्य का एक श्लोक विश्वरूपरचित विवरण नामक ग्रंथ में है। उसमें उल्लेख है कि यह धर्मशास्त्रकार है (१. ४–५)। गार्ग्य के ग्रंथ का एक वचन लिया गया है, उससे पता चलता है कि, गार्ग्य का धर्मशास्त्र पर कोई ग्रंथ अवश्य उपलब्ध होगा। अपरार्क, स्मृतिचन्द्रिका, मिताक्षरा आदि ग्रंथों में श्राद्ध, प्रायश्चित्त तथा आह्निक आदि विषयों पर इसके उद्धरण लिये गये हैं। पाराशरधर्मसूत्र में भी यह धर्मशास्त्रकार है, यों उल्लेख है। अपरार्क में इसके ग्रंथ से ज्योतिषविषयक श्लोक भी लिये गये हैं। गर्गसंहिता के ज्योतिषविषयक श्लोक भी प्राप्त हुए हैं। स्मृतिचन्द्रिका में ज्योतिर्गार्ग्य एवं बृहद्गार्ग्य इन दो ग्रंथों का उल्लेख हुआ है। नित्याचारप्रदीप में गर्ग तथा गार्ग्य नामक दो भिन्न स्मृतिकारों का उल्लेख है।

पुरुवंश के गर्ग तथा शिनि की संतति को गार्ग्य यह सामान्यनाम दिया जाता था। यह क्षत्रिय थे, परंतु तप से ये गार्ग्य तथा शैन्य नाम के ब्राह्मण हो गये थे (भा. ९.२१.१९; विष्णु. ४. १९.९)। कैकयदेशाधिपति युधाजित् राजा का गार्ग्य नामक पुरोहित था। यह युधाजित् राजा की ओर से गंधर्वदेश जीतने के लिये राम के पास आया था। उसने तक्ष तथा पुष्कलों की सहायता से यह कार्य पूर्ण किया (वा. रा. यु. १००)।

२. एक ऋषि। रुद्र ने ययाति को एक सोने का रथ दिया। वह रथ उसके कुल में प्रथम जनमेजय पारिक्षित तक था। परंतु गार्ग्य के एक अल्पवयीन पुत्र ने उसे कुछ कहा, तब जनमेजय ने उसका वध कर दिया। तब गार्ग्य ने उसे शाप दिया तथा वह रथ जनमेजय के पास से चेदिपति वसु के पास गया। उसके बाद, वह रथ जरासंध, भीम तथा अंत में कृष्ण के पास गया (वायु. ९३.२१–२७; ह. वं. १.३०)।

३. विश्वामित्र के पुत्रों में से एक का नाम (म. अनु. ७.५५. कुं.)।

४. एक ऋषि। शूकदेवी नामक त्रिगर्त राजा की कन्या शिशिरायण गार्ग्य को दी थी। गार्ग्य पुरुष है अथवा नहीं, यह देखने का उसने प्रयत्न किया। परंतु बारह वर्ष की कड़ी तपश्चर्या के कारण, इसका वीर्य स्खलित नहीं हुआ। इससे सबकी कल्पना ऐसी हुई कि, यह नपुंसक है। बाद में दक्षिण में जा कर इसने शंकर की आराधना की तथा यादवों का पराभव करनेवाला पुत्र माँग लिया। तब ग्वालकन्या गोपाली से इसे कालयवन नामक महापराक्रमी पुत्र हुआ (विष्णु. ५.२३; ह. वं. १.३५.१२)। अन्य कई स्थानों में इस कथा का उल्लेख है (कालयवन देखिये)। इसे क्वचित् गर्ग भी कहा गया है। इसे यादवों का उपाध्याय कहा है। यादवों के उपाध्याय को गर्ग तथा कुलनाम गार्ग्य दोनों लगाते थे (वृद्धगर्ग तथा वृद्धकन्या देखिये)। इसने धर्म को धर्मरहस्य बताया (म. अनु. १९०.९ कुं.)।

४. (सो. काश्य.)। यह वायु के मतानुसार वेणुहोत्र-पुत्र। गर्ग तथा भार्ग इसके नामांतर है।

शार्कराक्ष गार्ग्य, शिशिरायण गार्ग्य, तथा सौर्यायणि गार्ग्य देखिये।

गार्ग्य बालाकि—गर्गगोत्रीय बलाक नामक ऋषि का पुत्र। अपने ब्रह्मज्ञान के प्रति अभिमानी बन कर, काफी स्थानों पर इसने अपने ज्ञान की प्रशंसा की। एकबार काशिराज अजातशत्रु के पास जा कर इसने उससे कहा, 'मैं तुम्हें बताता हूँ कि ब्रह्म क्या है'। अजातशत्रु ने उस ज्ञान के बदले इसे हजार गायें देने का निश्चय किया। तब बालाकि ने प्रतिपादन प्रारंभ किया, परंतु अजातशत्रु ने इसके सब तत्त्वों का खंडन किया। तब अपने गर्व के प्रति लज्जित हो कर इसने अजातशत्रु को ब्रह्मज्ञानकथन की प्रार्थना की। तब अजातशत्रु ने कहा, 'अध्यापन क्षात्रधर्म के विरुद्ध है। इसलिये मैं इस राजसिंहासन का त्याग करता हूँ। तुम इसका स्वीकार करो, तब मैं अध्यापन योग्य बनूंगा'। ऐसा करने के बाद, अजातशत्रु ने बालाकि को ब्रह्मविद्या प्रदान की (कौ. उ. ४.१)। इसे दृप्तबालाकि भी कहते थे (श. ब्रा. १४.५.१)।

गार्ग्यहरि—अंगिराकुल का गोत्रकार। गार्गिहर पाठभेद है।

गार्ग्यायण—उद्दालकायन का शिष्य। इसका शिष्य पाराशर्यायण (बृ. उ. ४.६.२)।

२. भृगुकुल का एक गोत्रकार

गार्ग्यायणि—गार्ग्यायनि देखिये।

गार्दभि—विश्वामित्र के पुत्रों में से एक। पाठभेद-गर्दभि (म. अनु. ७.५१ कुं.)।

२. भृगुकुल का गोत्रकार।

गार्द्वायण—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषि।

गाल—एक राजा। इसने नीलपर्वत पर एक मंदिर बनवाया था। इन्द्रद्युम्न ने जगन्नाथक्षेत्र इसके काबू में दिया (स्कन्द. २.२.२६)।

गालव—विदर्भीकौंडिन्य का शिष्य। इसका शिष्य कुमारहारित (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)।

२. विश्वामित्र का एक शिष्य (म. उ. १०४-११६)। गुरु की अत्युत्कृष्ट सेवा कर के, इसने पूर्ण कृपा संपादन की। इसके द्वारा विशेष आग्रह किये जाने के कारण, विश्वामित्र ने किंचित् रोष से आठसौ श्यामकर्ण अश्व गुरुदक्षिणा के रूप में माँगे (म. उ. १०४.२६)। यह सुन कर, यह अत्यंत भयभीत हुआ। इसने विष्णु की आराधना की। इसकी निस्सीम भक्ति से तुष्ट हो कर, विष्णु ने गरुड को इसके पास भेजा, तथा इसको मदद करने के लिये कहा। गरुड गालव के पास गया। इसकी इच्छा जान कर, अश्व ढूँढने के लिये ये दोनों बाहर निकले। जाते जाते गरुड इसे ययाति के पास ले गया। उस समय ययाति की सांपत्तिक स्थिति अच्छी नहीं थी। वह स्वयं अरण्य में रहता था। गालव की इच्छापूर्ति के लिये आवश्यक द्रव्य भी उसके पास नहीं था, फिर आठसौ अश्वप्राप्ति तो असंभव ही थी। फिर भी अपनी कन्या माधवी, उसके होनेवाले पुत्रों पर अधिकार रख कर, ययाति ने इसे दी, तथा उसके सहाय्य से इसने गुरुदक्षिणा की पूर्ति की (म. उ. १०४-११७; माधवी देखिये)।

इसका आश्रम जयपुर से तीन मील की दूरी पर था। इसका दूसरा आश्रम चित्रकूट पर्वत पर था।

३. विश्वामित्र का पुत्र। सत्यव्रत राजा के निंद्य आचरण से सर्वत्र अकाल पड गया। उस समय अपने तीन पुत्र तथा पत्नी के उदरनिर्वाह का कुछ भी विचार न करते हुए, विश्वामित्र तपश्चर्या करने के लिये चला गया। काफी अर्से तक इसकी पत्नी ने कुछ उपाययोजना कर के मुश्किल से बच्चों को जिलाया। एक बार उदरनिर्वाह के लिये कुछ भी प्राप्त न हुआ। बच्चे भूख से तिलमिला कर रोने लगे। मजबूर हो कर, इस पुत्र के गले को दर्भरज्जु से बाँध कर वह इसे बेचने के लिये जाने लगी। इतने में राह में सूर्यवंशीय इक्ष्वाकुकुलोत्पन्न सत्यव्रत राजा उससे मिला। उसके द्वारा पूछे जाने पर उसने संपूर्ण हकीकत बताई। तब सत्यव्रत ने कहा, "विश्वामित्र के आने तक रोज थोडा माँस मैं तुम्हें दूँगा। उस पर अपना निर्वाह करो"। तब पुत्र को बेचने का विचार रहित कर के, वह स्वगृह लौट आई। तबसे उसके इस पुत्र का नाम गालव प्रचलित हुआ (ह. वं. १.१२; वायु. ८९.८३-९२; ब्रह्म. ७.१०२-१०९; म. अनु. ७.५२ कुं. ब्रह्मांड. ३.६३.८६-८९; ६६.७२)।

४. कुंतल राजा का पुरोहित। अरिष्टाध्याय सुना कर इसने राजा को बताया, 'जल्द ही तुम्हारी मृत्यु का योग है'। अतः राजकन्या चंपकमालिनी का चन्द्रहास से विवाह करने की संमति राजा ने दी (जै. अ. ५१)।

५. सावर्णि मन्वन्तर में होनेवाला सप्तर्षियों में से एक (भा. ८.१३.१५)।

६. अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

७. एक व्याकरणकार (नि. ४.३; पा. सू. ६.३.६१; ७.१.७४; ३.९९; ८.४.६७)। यह, राजा ब्रह्मदत्त का मित्र था। यह बडा योगाचार्य था। इसने क्रमशिक्षा का प्रथन किया। लोगों में क्रमपाठ का प्रचार किया (ह. वं. १.२०.१३, २४.३२)। बाभ्रव्य पांचाल (ब्य) ने क्रमपाठ निर्माण किया। नंतर गालव ने शिक्षाग्रंथ का निर्माण किया, एवं क्रम का प्रचार किया (म. शां. ३३०. ३७-३८)।

बाभ्रव्य पांचाल तथा गालव भिन्न व्यक्ति है। ऋक्प्रातिशाख्य तथा पाणिनि इन्हें अलग व्यक्ति मानते हैं। ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में गालव का नाम नहीं हैं किंतु बाभ्रव्य का नाम मिलता है (आश्वलायनगृह्यसूत्र)। मत्स्य में गुबालक पाठ है। यह मंत्रिपुत्र कहा गया है (मत्स्य. २०.२४; बाभ्रव्य पांचाल देखिये)।

८. वायु के मतानुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा का याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

इसकी स्मृति का हेमाद्रि ने उल्लेख किया है।

गालवि—अंगिराकुल का गोत्रकार। इसे गालविन् नामांतर है।

गाविष्ठिर—संजय का पैतृक नाम (संजय ८. देखिये)।

गिरिका—एक पर्वतकन्या। कोलाहल पर्वत को शुक्तिमती नदी से जुडवाँ अपत्य हुए। उनमें से यह गिरिका नामक कन्या शुक्तिमती नदी ने उपरिचर वसु को दी। बाद में राजा ने इस के साथ विवाह किया। उससे इसे बृहद्रथ आदि छः पुत्र, तथा काली अथवा मत्स्यगंधिनी नामक कन्या हुई (म. आ. ५७)।

गिरिक्षत्र—(सो. वृष्णि.) विष्णुमत में श्वफल्कपुत्र।

गिरिक्षित्—दुर्गहपुत्र। इसका पुत्र पुरुकुत्स (ऋ. ४. ४२.८)। इसी कुल में त्रसदस्यु हुआ (ऋ. ५.३३.८)

गिरिक्षित् औच्चामन्यव—एक ऋषि। इसका अभिप्रतारिन् काक्षसेनि के साथ गायत्रसाम के बारे में संवाद हुआ था (पं. ब्रा. १०.५.७)।

गिरिज बाभ्रव्य—एक ऋषि। सत्र के यज्ञीय पशु के अवयव सब ऋत्विजों में किस प्रकार बाँट दिये जावें, इसकी जानकारी इसे एक गंधर्व से मिली। वह इसने सब को बताई (ऐ. ब्रा. ७.१)।

इसके पहले यह जानकारी देवभाग को थी, परंतु मृत्यु तक वह उसने किसी को न बताई।

गिरिश—ऋषभ नामक शिवावतार का शिष्य।

गिरिशर्मन्—शेषावतार देवदत्त का पुत्र। इसने बड़े बड़े विद्वानों को जीता था। अंत में यह शंकर का परमभक्त हुआ (भवि. प्रति. ४.११)।

गिरिशर्मन् कांठेविद्धि—ब्रह्मवृद्धि का शिष्य (वं. ब्रा. १)।

गीतविद्याधर—एक प्रसिद्ध गंधर्व। पुलस्त्य को इसके गायन से तकलीफ होने लगी। सूअर का स्वाँग ले कर इसने उसे और भी तंग किया। इसलिये शाप से उसने इसे सूअर बना दिया। उःशाप माँगने पर, इक्ष्वाकु के द्वारा मारे जाने पर पूर्ववत् बनोगे, ऐसा उःशाप दिया। अनंतर यह पूर्ववत् हुआ (पद्म. स. ४६)।

गुंगु—एक देश और लोग। ऋग्वेद में ये अतिथिग्व के मित्र बन कर आये हैं (ऋ. १०.४८.८)।

गुणकेशी—इंद्रसारथि मातलि तथा उसकी पत्नी सुधर्मा की कन्या। ढूँढने पर भी इसके लिये योग्य वर नहीं मिला। अंत में नागलोक के चिकुरनाग के सुमुख नामक पुत्र को इसने पसंद किया। उसका गरुड से वैर था। मातलि सुमुख को इंद्र के पास ले गया। वहाँ उसे अमृत पिला कर अमरत्व प्रदान किया। विष्णु ने गरुड को समक्ष कर उनका वैरभाव नष्ट किया, तथा सुमुख से गुणकेशी का विवाह करवाया (म. उ. ९५.१०३)।

गुणनिधि—श्रोत्रिय यज्ञदत्त का पुत्र। यह अत्यंत दुर्गुणी तथा व्यसनी था। शिवपूजा देखने के कारण, तथा शिवदीप की बाती प्रज्वलित करने के कारण, यह मुक्त हुआ (शिव. रुद्र. सृ. १८)। तदनंतर कुबेर ने इसे उत्तर दिशा का अधिपति नियुक्त किया (स्कंद. ४. १. १३)।

गुणवती—सत्राजित् देखिये।

गुणाकर—प्लक्षद्वीप का राजा। इसकी पत्नी सुशीला। इसकी कन्या सुलोचना (पद्म. क्रि. ५)।

२. पुलह तथा श्वेता का पुत्र।

गुप्त—वैपश्चित दार्ढजयंति गुप्त लौहित्य यह इसका पूरा नाम है (जै. उ. ब्रा. ३.४२)। गुप्त इसका सही नाम है। बाकी तीनों पैतृक नाम हैं।

गुप्तक—पांडवों के समकालीन सिंधु देश का राजा।

गुरु—बृहस्पति का नामांतर। मरीचि प्रजापति की सुरूपा नामक पुत्री तथा अंगिरस की स्त्री। देवाचार्य बृहस्पति उसका पुत्र था। इसे ही गुरु कहते थे। यह महाबुद्धिमान् तथा वेदवेदाङ्गपारंगत था (विष्णुधर्म. १. १०६; बृहस्पति देखिये)।

२. (सो. पुरूरवस्.) भागवत मतानुसार संकृतिपुत्र। मत्स्य में इसे गुरुधि, विष्णु में रुचिरधि तथा वायु में गुरुवीर्य कहा गया है। गुरुवीत तथा गौरवीति यही रहा होगा। अंगिराकुल का गोत्रकार भी यही होगा (सांकृति देखिये)।

३. भौत्य मनु का पुत्र।

गुरुक्षेप—(सू. इ. भविष्य.) विष्णुमत में बृहत्क्षणपुत्र।

गुरुधि—(सो. पुरूरवस्.) मत्स्य मतानुसार संकृतिपौत्र तथा महायशस् का पुत्र (गुरु २. देखिये)।

गुरुभार—गरुडपुत्र।

गुरुवीत—अंगिराकुल का मंत्रकार (गुरु २. देखिये)।

गुरुवीर्य—(सो. पुरूरवस्.) वायु के मत में सांकृतिपुत्र (गुरु २. देखिये)।

गुर्वक्ष—बलि दैत्यों के सौ पुत्रों में से एक।

गुह—कार्तिकेय का नाम (भा. ३.१.२२)।

२. शृंगवेर नामक नगरी का किराताधिपति। यह दशरथ का परममित्र था। राम अयोध्या से निकल कर दंडकारण्य जा रहा था, तब एक रात गुह के घर रहा था। उस समय गुह ने उसका अच्छा आदरातिथ्य किया। राम के वनवास के बारह वर्ष वहीं व्यतीत हो, ऐसी प्रार्थना गुह ने राम से की। गुह द्वारा लाये गये फलादिकों को स्पर्श कर, राम ने दर्शाया कि, वह परान्नग्रहण नहीं करता। राम ने वहाँ रहना भी अमान्य कर दिया। उस दिन, राम तथा सीता दर्भ बिछा कर सोये, तथा गुह राम की रक्षा के लिये खड़ा रहा। उस समय राम के विचित्र प्रारब्ध के बारे में इसके मन में विचार आ रहे थे। इस विषय पर इसका लक्ष्मण से संभाषण भी हुआ (वा. रा. अयो. ५०.५१)। दूसरे दिन गुह ने राम की आज्ञानुसार गंगा के दक्षिण तीर पर उन्हें पहुँचा दिया (वा. रा. अयो. ५२)।

राम चित्रकूटपर्वत पर था। भरत बड़ी सेना के साथ उसे वापस लाने के लिये गया। उस समय भरत रामनाशार्थ जा रहा है, इस संदेहवश इसने अपनी सेना सज्ज की। भरत का सत्य हेतु ज्ञात होते ही, इसने उसे ससैन्य गंगापार पहुँचाया। भरत के साथ यह स्वयं चित्रकूट तक गया था (वा. रा. अयो. ८४-८७)।

गुहवासिन्—वाराहकल्प के वैवस्वत् मन्वन्तर के सत्रहवें चौकडी का यह शंकरावतार है। इसका स्थल हिमालय का महोत्तुंगक्षेत्र है। इसके निम्नलिखित चार पुत्र थेः-उतथ्य, वामदेव, महायोग तथा महाबल (शिव. शत. ५)।

गृत्स—एक महासुर। इसने अपने मित्र भृगु के पत्नी का अपहरण किया। उसने इसे शाप दिया। शाप के कारण यह अलर्क नाम का कृमि बन गया। यह कृमि अष्टपद, तीक्ष्णदंष्ट्र तथा सूचिसमान तीक्ष्णकेशयुक्त था। कर्ण के अंक पर परशुराम निद्रित था। उस समय, इस कृमि ने कर्ण की जाँघ में छेद किया। जाँघ से निकले रक्त के स्पर्श से, परशुराम की नींद खुल गयी। परशुराम के दर्शन से अलर्क शापमुक्त हो गया। (म. शां. ३.१२-२३)।

गृत्समद—यह एक व्यक्ति का तथा कुल का भी नाम है। यह अंगिरस् कुल के शुनहोत्र का पुत्र हैं (सर्वानुक्रमणी देखिये)। यह बाद में भार्गव हो गया।

गृत्समद शब्द की व्युत्पत्ति, ऐतरेय आरण्यक में आयी है। गृत्स का अर्थ है प्राण, तथा मद का अर्थ है अपान। इसमें प्राणापानों का समुच्चय था, इसलिये इसे गृत्समद कहते है (ऐ. आ. २.२.१)।

यह तथा इसके कुल के व्यक्ति, ऋग्वेद के दूसरे मंडल के द्रष्टाएँ हैं (ऐ. ब्रा. ५.२.४; ऐ. आ. २.२.१; सर्वानुक्रमणी देखिये)।

एक बार तपप्रभाव से इसे इंद्र का स्वरूप प्राप्त हुआ। इस बारे में तीन आख्यायिकाएँ प्रसिद्ध है। (१) धुनि तथा चुमुरि ने इसे इंद्र समझ कर घेर लिया। 'मैं इंद्र नहीं हूँ,' यह बताने के लिये इसने इंद्र का उत्कृष्ट वर्णन करनेवाला 'स जनास इंद्रः' (ऋ. २.१२), यह टेकयुक्त सूक्त कहना प्रारंभ किया। (२) इंद्रादिक देवता वैन्य के यज्ञ में गये। वहाँ गृत्समद भी था। वैत्य इंद्र का वध करने के हेतु से वहाँ आये। इंद्र गृत्समद का रूप ले कर भाग गया। असुरों ने गृत्समद को घेरा। उस समय एक सूक्त से इसने इंद्र का उत्कृष्ट वर्णन किया (ऋ. २. १२)। (३) गृत्समद के घर में अकेले आये इंद्र को देख कर शत्रुओं ने घेरा। तब इंद्र गृत्समद का रूप ले कर भाग गया। घर के गृत्समद को उन्हों ने इंद्र समझ कर पकड़ लिया। तब इसने यह सूक्त कह कर इंद्र का वर्णन किया (ऋ. २.१२)।

ऋग्वेद के दूसरे मंडल में गृत्समद का बार बार उल्लेख आता है (ऋ. २.४.९; १९.८ इ.)। इसे शुनहोत्र भी कहा है (ऋ. २.१८.६; ४१.१४; १७)। ऋग्वेद के दूसरे मंडल की ऋचाओं का उल्लेख गार्त्समद ऋचा के नाम से प्राप्य है (सां. आ. २२.४; २८.२)।

यह भृगुकुल का गोत्रकार, प्रवर तथा मंत्रकार है। गृत्समद भार्गव शौनक ऋग्वेद का सूक्तद्रष्टा है (ऋ.२.१-३; ८-४३; ९.८६; ४६-४८)। एक बार चाक्षुष मनु का पुत्र वरिष्ठ इंद्र के सहस्रवार्षिक सत्र में आया। साम अशुद्ध गाने के लिये इसे दोष दे कर, रुक्ष अरण्य में क्रूर पशु बनने का शाप वरिष्ठ ने इसे दिया। परंतु शंकर की कृपा से यह मुक्त हुआ (म. अनु. १८.२०-२८)।

गृत्समद का भृगुवंश में उल्लेख है (मत्स्य. १९५.४४-४५)। गृत्समद का पैतृक नाम शौनक है। यह शुनहोत्र का औरस पुत्र तथा शुनक का दत्तक पुत्र था। अतः प्रथम यह आंगिरस कुल में था, एवं बाद में भृगुकुल में गया (ऋग्यनुक्रमणी २)

२. एक ऋषि। भृगु के कहने पर ब्राह्मण बने वीतहव्य का पुत्र। इसका पुत्र सुचेतस्।

३. दंडकारण्य में रहनेवाला एक ऋषि। इसके सौ पुत्र थे (अ. रा. ८)।

४. (सो. क्षत्र.) वायु तथा विष्णु मतानुसार सुनहोत्रपुत्र। आयुकुल के सुहोत्र या सुतहोत्र राजा के तीन पुत्रों में कनिष्ठ। इसे शुनक नामक पुत्र था (ब्रह्माण्ड. ११.३२.३४; ह. वं. १.२९.६७)।

५. भीष्म शरपंजर में पड़े थे, तब उनके पास आया हुआ एक ऋषि (भा. १.९.७)।

६. इंद्र का मुकुंदा से उत्पन्न पुत्र। एक बार रुक्मांगद बाहर गया था, तब उसकी पत्नी मुकुंदा काममोहित हुई। इंद्र ने रुक्मांगद का रूप ले उससे संभोग किया। उसे गर्भ रहा तथा पुत्र उत्पन्न हुआ। यही गृत्समद था। आगे चल कर, यह बड़ा विद्वान हुआ। यह वादविवाद में किसी से पराजित नहीं होता था। एक बार मगध देश के राजा के घर, वसिष्ठादि मुनि श्राद्ध के लिये एकत्रित हुए। तब अत्रि ने तुम पंक्तिपावन नहीं हो, कह कर इसका उपहास किया।

माता के पास आ कर, इसने पूछताछ की। तब मुकुंदा ने इसका जन्मवृत्त का इसे कथन किया। इसने मुकुंदा को शाप दिया 'तुम कंटकवृक्ष बनोगी'। उसने भी उलटा शाप दिया 'तुम्हें दैत्य पुत्र होगा' बाद में 'गणानां त्वा' मंत्र का अनुष्ठान कर के, इसने गणपति को प्रसन्न कर ब्राह्मण्य भी प्राप्त किया (गणेश. १.३७)।

गृध्र—कृष्ण को मित्रविंदा से उत्पन्न पुत्र (भा. १०. ६१.१६)।

गृध्रिका—कश्यप तथा ताम्रा की कन्या।

२. अरुण की पत्नी। उसके पुत्र संपाति तथा जटायु ब्रह्माण्ड. ३. ७. ४४६)।

गृहपति—एक ऋषि। नर्मदा के किनारे नर्मपुर में विश्वानर नामक एक मुनि ब्रह्मचर्य से वेदाध्ययन कर के रहता था। गोत्र शांडिल्य। पत्नी का नाम शुचिष्मती। यह अत्यंत आचारशील था। इसे पुत्र न था। स्त्री की इच्छानुसार इसने काशी जा कर वीरेश्वर के पास कड़ी तपश्चर्या की। एक दिन इसे ईश्वर का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ। अभिलाषाष्टक कहने पर, 'जल्द ही पुत्र होगा', ऐसा वर इसे प्राप्त हुआ। बाद में इसे गृहपति नामक पुत्र हुआ। गृहपति से नवम वर्ष चालू था, नारद ने आ कर बताया कि इसे बारहवे मास में विद्युत् अथवा अग्नि से भय है। इसने तप कर के शंकर को प्रसन्न किया। शंकर ने इसे अग्नि यह उपाधि दी। इसके द्वारा काशी में स्थापित लिंग को अग्नीश्वर नाम है (शिव. शत. १५)।

२. अग्नि गृहपति सहरपुत्र देखिये।

गृहेषु—धर्मसावर्णि मनु का पुत्र।

गैरिक्षित—त्रसदस्यु तथा यास्क का पैतृक नाम।

गो—मानस नामक पितरों की कन्या।

२. (सो. पूरु.) ब्रह्मदत्त राजा की भार्या तथा देवल ऋषि की कन्या। इसे सरस्वती अथवा सन्नति भी कहते हैं।

३. शमीक ऋषि की भार्या। इसका पुत्र शृंगिन् ऋषि।

४. वरुण का सेनापति (वा. रा. उ. २३)।

५. इसे गौ नामांतर प्राप्त है। विधिमानसपुत्र पुलस्त्य ऋषि से इसे वैश्रवण नामक सामर्थ्यसंपन्न पुत्र हुआ (म. व. २५८.१२)।

६. शुक्र की पत्नी।

७. यति देखिये।

गो आंगिरस—एक सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १६.७.७; ला. श्रौ. ६.११.३)।

गोकर्ण—एक शिवावतार। सातवें वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर के सोलहवें चौखट में गोकर्ण नामक शिवावतार हुआ। जिस वन में यह निवास करता था, इसका नाम भी गोकर्ण हो गया। इसके चार पुत्र थेः-कश्यप, उशनस्, च्यवन एवं बृहस्पति (शिव. शत. ५)।

२. आत्मदेव देखिये।

गोखल—विष्णुमतानुसार व्यास की ऋक् शिष्य परंपरा के वेदमित्र का, एवं भागवत, वायु तथा ब्रह्मांड मतानुसार देवमित्र का शिष्य। भागवत में गोखल्य पाठ है।

गोखल्य—शाकल्य ऋषि का शिष्य। उसने इससे ऋग्वेद की एक शाखा का अध्ययन करवाया (भा. १२. ६.५७; गोखल देखिये)।

गोणायनि—गोणीपति का पाठभेद।

गोणीपति—अंगिराकुल का गोत्रकार।

२. अत्रिकुल का गोत्रकार।

गोतम—कश्यपकुलोत्पन्न एक ऋषि (भवि. प्रति. ४.२१)।

२. व्यास देखिये।

गोतम राहूगण—एक ऋषि। ऋग्वेद में इसके बहुत सूक्त हैं (ऋ. १.७४-९३; ९.३१; ६७.७-९, १०. १३७.३)। इसका अनेक स्थानों पर उल्लेख है (ऋ. १.६२.१३; ७८.२; २; ५)। अंगिरस् से इसका बार बार संबंध आता है (ऋ. १.६२.१; ७१.२)। इसका राहूगण यह पैतृक नाम ऋग्वेद एवं अन्यत्र भी मिलता है (ऋ. १.७८.५; श. ब्रा. १.४.१.१०; ११.४.३.२०)। यह माथव विदेह का पुरोहित था (श. ब्रा. १.४.१.१०)। वैदेह जनक तथा याज्ञवल्क्य का यह समकालीन था। एक स्तोम का यह कर्ता है (श. ब्रा. १३.५.१.१; आश्व. श्रौ. ९.५.६)। अन्यत्र भी इसका उल्लेख है (अ. वे. ४. २९.६; १८.३.१६; बृ. उ. २.२.६)। इसे वामदेव तथा नोधस् नामक दो पुत्र थे (आश्व. श्रौ. १२.१०)।

इसका भद्र नामक एक साम है। इस साम के फलस्वरूप गौतम को श्रेष्ठपद प्राप्त हुआ। इसी कारण, इसके पहले के तथा बाद के लोग गौतम नाम से प्रसिद्ध हुएँ (पं. ब्रा. १३.१२.६-८)। इसका गौतम नामक भी एक साम है (पं. ब्रा. १२.३.१४)।

गोतमीपुत्र—भारद्वाजीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ६.५.१)।

गोत्रवत्—कृष्ण एवं लक्ष्मणा का पुत्र।

गोधा—मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३४.६-७)।

गोनर्द—काश्मीर का नृप। यह जरासंध का सहायक था (ह. वं. २.३५.३९)।

गोपति—कश्यप एवं प्राधा का पुत्र।

२. पांडवपक्षीय पांचाल राजा (म. द्रो. २२.४३)।

३. शिबिपुत्र। गायों ने इसकी रक्षा की थी। पृथ्वी ने कश्यप से याचना की, 'यह मेरे संरक्षकों में से एक होवे'। तदनुसार कश्यप ने इसका अभिषेक किया (म. शां. ४९.७०)।

४. एक राक्षस। कृष्ण ने इरावती के तट पर इसका वध किया (म. व. १३.३०)।

५. विश्वभुज् नामक अग्नि का नामांतर। इसकी स्त्री नदी (म. व. २०९.१९-२७)।

गोपद—तुषित देवों में से एक।

गोपन—अत्रिकुल का गोत्रकार।

गोपवन आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.७३-७४)। ऋग्वेद में इसका उल्लेख है। अंगिरस् से इसका प्रत्यक्ष संबंध दिखता है (ऋ. ८.७४.११)। पौतिमाष्य देखिये।

गोपायन—गौपायन का पाठभेद।

गोपालि—गौरपराशरकुल में से एक।

गोपाली—एक ग्वालन। इसको गार्ग्य से हुआ पुत्र कालयवन नाम से प्रसिद्ध है (कालयवन देखिये)।

गोबल वार्ष्ण—एक आचार्य। (तै. सं. ३.११.९.३; जै. उ. ब्रा. १.६.१)। इसने नचिकेताग्नि के लिये पाँच दिशाओं में पाँच पाँच ईंटें रखीं, जिनसे इसे पशु प्राप्त हुए (तै. ब्रा. ३.११.९३)।

गोभानु—(सो. तुर्वसु.) विष्णु तथा वायु मतानुसार वह्निपुत्र। मत्स्य मतानुसार गर्भपुत्र।

गोभिल—वत्समित्र का शिष्य (वं. ब्रा. ३)। यह कुलनाम अनेक लोगों के लिये प्रयुक्त होता है (पुष्पमित्र, अश्वमित्र, वरुणमित्र, मूलमित्र, वत्समित्र, गौल्गुलवीपुत्र तथा बृहद्वसु देखिये)। यह कश्यप कुल का एक गोत्रकार था। गोभिलगृह्यसूत्र, गोभिलगृह्यकारिका, गोभिलपरिशिष्ट आदि इसके द्वारा रचित ग्रंथ हैं (C. C.)। इनमें से गोभिलगृह्यसूत्र प्रकाशित हुआ है। यह सामवेद का है। गोभिलस्मृति आनंदाश्रम में छपवायी गई है। उसमें तीन प्रपाठक हैं। इस ग्रंथ का आरंभ एवं अंत पढ़ने से लगता है कि, उसका नाम कर्मप्रदीप रहा होगा। उसमें श्राद्धकर्मादि लक्षणों, नित्यकर्म, संस्कार आदि का निरूपण है। यह स्मृति गोभिलगृह्यसूत्र के स्पष्टीकरणार्थ रची गयी। हेमाद्रि ने गोभिल को राणायनीय तथा कौथुमशाखा का सूत्रकार माना है (प्रातायण देखिये)। गोभिलगृह्य तथा खादिरसूत्र में पर्याप्त साम्य है।

२. कुबेर का दूत। विदर्भ देश के राजा सत्यकेतु की कन्या तथा उग्रसेन की स्त्री पद्मावती, एक दिन जलक्रीडा कर रही थी। कुबेर का गोभिल नामक दूत आकाशमार्ग से जा रहा था। यह पद्मावती का सौंदर्य देख कर मोहित हुआ। उसे अंतर्ज्ञान से पहचान कर, उसकी प्राप्ति के लिये इसने उग्रसेन का रूप धारण किया। पास ही एक वृक्ष के नीचे गाते हुए यह आ बैठा। इससे मोहित हो कर वह फँस गयी (पद्म. भू. ४९)।

गोम—शंभु का पुत्र।

गोमत्—कश्यप तथा मुनि का गंधर्वपुत्र।

गोमतीपुत्र—(आंध्र. भविष्य.) भागवत तथा विष्णु मतानुसार शिवस्वाति का पुत्र।

गोमयान—कश्यप कुल का गोत्रकार। विभुत वंशमालिका में से यह एक था।

गोमुख—मातलि का पुत्र। इंद्रपुत्र जयंत का यह सारथी था (म. उ. ९८.१८)।

गोमेदगंधिक—अंगिराकुल का गोत्रकार।

गोरथ—वसिष्ठकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

गोलभ—एक गंधर्व। वालि से इसका लगातार पंद्रह वर्षों तक युद्ध चलता रहा। अन्त में, वालि ने इसका वध किया (वा. रा. कि. २२.२७-२७)।

गोवासन—एक क्षत्रिय। यह शैव्य नाम से प्रसिद्ध है। भारतीययुद्ध में यह कौरवों के पक्ष में था (म. द्रो. ७०.२८)। इसने एक हजार सैनिकों के समवेत, विजयी काशिराजपुत्रों का विरोध किया।

गोवृषभध्वज—कृपाचार्य का नामान्तर (म. द्रो. ८०.१४)।

गोशर्य—एक ऋषि। यह अश्विनों का कृपापात्र है (ऋ. ८.८.२०)। यहाँ इसे सायण ने गोशर्य ऋषि कहा है। पक्थ, कण्व तथा त्रसदस्यु के साथ साथ इसका उल्लेख आया है (ऋ. ८.४९.१०; ५०.१०)।

गोश्रु जाबाल—एक यज्ञकर्ता। सुदक्षिण क्षैमि, प्राचीनशालि तथा शुक्र जाबाल, ये सब इसके समकालीन थे (जै. उ. ब्रा. ३.७.७)।

गोश्रुति वैयाघ्रपद्य—एक ऋषि। सत्यकाम जाबाल ने इसे वाणी, श्रोत्र, मन तथा प्राण का महत्त्व तारतम्यभाव से बताया। प्राणों का महत्त्व कथन किया। आगे चल

कर, महत्वप्राप्ति के हेतु से एक व्रत भी निवेदित किया (छां. उ. ५.२.३)।

गोषूक्तिन् काण्वायन--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१४-१५)। इसके नाम से एक गोषूक्त-साम प्रसिद्ध है (पं. ब्रा. १९.४.९)। प्रतिग्रह के कारण इसे लगा हुआ दोष, इस साम से नष्ट हुआ (गौषूक्ति देखिये)।

गोष्ठायन--भृगुकुल का गोत्रकार।

गौडिनि--वसिष्ठकुल का गोत्रकार (जौडिलि देखिये)।

गौतम--एक ऋषि। अरुण, आग्निवेश्य, उद्दालक आरुणि, कुश्रि, मेधातिथि, साति तथा हारिद्रुमत, का यह पैतृक नाम है।

प्राचीनयोग्य, शांडिल्य, आनभिम्लात, गार्ग्य, भारद्वाज, वात्स्य, मांटि, सैतव आदि गौतम के शिष्य थे।

यह दीर्घतमस् का पुत्र था। इसकी माता का नाम प्रद्वेषी (म. आ. ९८.१७; १०३७* स. ४.१५; ११.१५)। इसके पिता आंगिरसकुल के थे (म. अनु. १५४.९)। वह बृहस्पति के शाप के कारण जन्मांध हुआ था (ऋ. १.१४७; म. आ. ९८.१५)।

कुछ स्थानों पर, दीर्घतमस् ने ही गौतम नाम धारण किया, ऐसा प्रतीत होता है (बृहद्दे. ३.१२३; म. शां. ३४३; मत्स्य. ४८.५३-८४)। गौतम नाम से गौतम के पशु-तुल्य वर्तन का बोध होता है (वायु. ९९.४७-६१; ८८-९२; ब्रह्मांड. ३.७४. ४७-६१; ९०-९४; मत्स्य. ४८. ४३-५६; ७९-८४)। गौतम को औशीनरी नामक शूद्र स्त्री से कक्षीवत् आदि पुत्र हुए (दीर्घतमस् देखिये)।

गौतम वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियो में से एक था। ब्रह्मदेव की मानसकन्या अहल्या इसकी स्त्री थी (अहल्या देखिये)। जनक का पुरोहित शतानंद इसका पुत्र था (म. व. १८५)। इसका अंगिरस् से नदीमाहात्म्य के संबंध में संभाषण हुआ था (म. अनु. २५)। इसके नाम से गोदावरी का नाम गौतमी हुआ (दे. भा. ११.९)।

अन्न का अकाल पड़ने के कारण, वृषादर्भि राजा दान कर रहा था। जिन सप्तर्षियों ने उसे दान लेना अमान्य कर दिया, उनमें से एक गौतम था (म. अनु. ९३)। गौतम को उत्तंक नामक एक शिष्य था। उसे गौतम ने अपनी कन्या दी थी। उत्तंक ने सौदास राजा के पास से कुंडल ला कर, गुरुपत्नी को गुरुदक्षिणा में दी (म. आश्व. ५५-५६)।

गौतम का आश्रम पारियात्र पर्वत के पास था। इसने वहाँ साठ हजार वर्षों तक तप किया। तब स्वयं यम वहाँ आया। उस समय गौतम ने उससे पूछा, 'पितरों का ऋण किस प्रकार चुकाया जावे'। यम ने कहा, 'सत्य, धर्म, तप तथा शुचिर्भूतता का अवलंब कर के मातापितरों का पूजन करना चाहिये। इससे स्वर्गादि की प्राप्ति होती है' (म. शां. १२७)। बारह वर्षों तक अकाल पड़ा। इसने भोजन दे कर ऋषियों को बचाया (नारद. २.७३)। यही वर्णन दे कर, शक्तिउपासना का महत्व बताया गया है (दे. भा. १२.९; शिव. कोटि. २५-२७)।

गौतम तथा भगीरथ ने तप कर के शंकर को प्रसन्न किया तथा गंगा माँगी। शंकर ने गौतम को गंगा दी। वही गौतमी के नाम से प्रसिद्ध हुई (पद्म. उ. २६८. ५२-५४)। गौतमी-(गोदावरी) माहात्म्य विस्तृत रूप में उपलब्ध है (ब्रह्म. ७०-१७५)।

न्यायशास्त्र लिखने वाले गौतम का निर्देश प्राप्त है (शिव. उमा. २.४३-४७)। यह अंगिराकुल का एक ऋषि तथा प्रवर है। त्र्यंबकेश्वर का अवतार इसी के लिये हुआ था (शिव. शत. ४३)। यही ज्योतिर्लिंग नासिक के पास त्र्यंबकेश्वर नाम से प्रसिद्ध है।

शाखाप्रवर्तक--यह व्यास की सामशिष्य परंपरा का हिरण्यनाभ का शिष्य है (व्यास देखिये)। वायु तथा ब्रह्मांड के मतानुसार यह सामवेद की राणायनि शाखा के नौ उपशाखाओं में से एक शाखा का आचार्य है (द्रा. श्रौ. १.४.१७)। गौतम का आचार्य रूप में उल्लेख है (ला. श्रौ. १.३.३; ४.१७)। उसी प्रकार सामवेद के गोभिल-गृह्यसूत्र में भी गौतम का उल्लेख अनेक बार आया है।

धर्मशास्त्रकार--गौतमस्मृति यह ग्रंथ गद्यमय है। उसमें ग्रंथकर्ता द्वारा किया हुआ अथवा बाहर से लिया गया एक भी पद्य श्लोक नहीं है। इस ग्रंथ के कुल अठ्ठाईस विभाग किये गये हैं। कलकत्ता प्रत में, एक विभाग अधिक है। परंतु हरदत्तद्वारा रचित मिताक्षरा में इस विभाग का बिल्कुल उल्लेख नहीं है। इससे प्रतीत होता है कि, यह भाग प्रक्षिप्त होगा। वेंकटेश्वरआवृत्ति कलकत्ताआवृत्ति से ली गई है।

धर्मसूत्रकार--गौतमधर्मसूत्र में चातुर्वर्णियों के व्यवहार के नियम, उपनयनादि संस्कार, विवाह तथा उसके प्रकार, प्रायश्चित, राजधर्म, स्त्रियों के कर्तव्य, नियोग, महापातक तथा उपपातकों के लिये प्रायश्चित, कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, आदि प्रकारों का विचार किया गया है। गौतमधर्मसूत्र में संहिता, ब्राह्मण, पुराण, वेदांग आदि के काफी उल्लेख आये है। गौतम ने तैत्तिरीय आरण्यक

के पच्चीस उद्धरण तथा कई मत अपने ग्रंथ में लिये हैं।

गौतमधर्मसूत्र का उल्लेख सर्वप्रथम बौधायनधर्मसूत्र में प्राप्त है। उसी प्रकार वसिष्ठधर्मशास्त्र, अपरार्क, तंत्रवार्तिक, वेदांतों पर लिखा गया शांकरभाष्य आदि ग्रंथो में भी गौतमधर्मसूत्र के काफी उद्धरण लिये गये हैं। मनुस्मृति में गौतम का उतथ्यपुत्र के नाम से उल्लेख है (मनु. ३. १६)। भविष्यपुराण में भी, गौतम का सुरापाननिषेध के बारे में उल्लेख है। गौतमधर्मसूत्र का उल्लेख बौधायन, वसिष्ठ आदि धर्मशास्त्रकारों ने किया है। इससे प्रतीत होता है कि, यह वसिष्ठ तथा बौधायन के पूर्व का होगा। यवनों का उल्लेख भी आया है। यवन शब्द का अर्थ स्वयं गौतम ने दिया है, 'ब्राह्मण को शूद्रा सेउत्पन्न संतति'। इसी अर्थ से यह शब्द गौतमधर्मसूत्र में आया है (४.१७)। इससे प्रतीत होता है कि, ब्राह्मण तथा शूद्र के मिश्रण से बनी यवनजाति भारत में ग्रीकों के आने के पहले भी थी। उसपर से गौतम का काल निश्चित करना असंभव है। गौतमधर्मसूत्र पर हरदत्त ने मिताक्षरा नामक टीका तथा मस्करी तथा असाहाय ने भाष्य भी लिखे है। मिताक्षरा, स्मृतिचन्द्रिका आदि ग्रंथों में, श्लोकगौतम, अपरार्क एवं दत्तकमीमांसा में वृद्धगौतम तथा बृहद्गौतम इन ग्रंथों का उल्लेख है। उसी प्रकार जीवानंद ने १७०० श्लोको की गौतमस्मृति छपवायी है। यह स्मृति कृष्ण ने युधिष्ठिर को, चातुर्वर्ण्य के धर्मकथन करने के लिये बतायी, ऐसा उस स्मृति में उल्लेख है। परंतु वह स्मृति महाभारत के आश्वमेधिकपर्व से ली गई होगी। क्यों कि, पराशरमाधवीय में तथा अन्य कई ग्रंथों में, इस स्मृति के श्लोक आश्वमेधिकपर्व से लिये गये हैं। आह्निकसूत्र, पितृमेधसूत्र तथा दानचंद्रिका के अतिरिक्त न्यायसूत्र, गौतमीशिक्षा आदि गौतम के ग्रंथ हैं।

२. एकत, द्वित तथा त्रित का पिता (म. श. ३५.९; त्रित देखिये)।

३. इसे चिरकारिन् नामक पुत्र था। इसने उसे पापकर्मी माता का वध करने के लिये कहा। परंतु चिरकारिन् के दीर्घसूत्री आचरण के कारण, यह काम नहीं हो सका (म. शां. २५८. ७-८)।

४. पूषन् नामक सूर्य के साथ घूमनेवाला एक ऋषि (भा. १२. ११. ३९)।

५. मध्यदेश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। इसे बिलकुल वेदज्ञान नहीं था। एक गांव में, एक अमीर शूद्र के पास यह गया। उससे इसे एक विधवा स्त्री दी। उसके साथ यह कालक्रमणा कर रहा था। इसका एक मित्र इसके पास आया तथा उसने इसे दुराचरण से परावृत्त किया।

गौतम वहाँ से निकला। राह में यह नाडीजंघ नामक कश्यपपुत्र के पास आया। वह राजधर्मन् के नाम से प्रसिद्ध था। गौतम का यथोचित सत्कार कर के, अपने राजा विरूपाक्ष के पास, वह इसे ले गया। राजा के द्वारा पूछे जाने पर इसने सब हकीकत बतायी। राजा के घर इसे ब्राह्मणोंसह उत्तम भोजन तथा अच्छी दक्षिणा मिली। संपत्ति का भार सिर पर ले कर यह एक वटवृक्ष के नीचे बैठा। वहाँ बैठे बैठे, राजधर्मन् का वध करने का विचार इसके मन में आया। इस विचार के अनुसार, वध कर के, उसे जला कर उसकी संपत्ति ले कर यह रवाना हुआ। परंतु जल्द ही विरूपाक्ष ने इसे राक्षसोंद्वारा पकड़ लाया तथा इसके टुकड़े टुकड़े करके शबरों को खाने के लिये दिये। यह कृतघ्न होने के कारण, किसी शबर ने इसे नहीं खाया। बाद में राजधर्मन् जीवित होने के बाद, उसने गौतम को जीवित किया, तथा द्रव्य दे कर घर पहुँचाया। गौतम ने शूद्र स्त्री के द्वारा, पापकर्म करनेवाले अनेक पुत्र निर्माण किये। तब देवताओं ने इसे शाप दिया, 'यह दुष्ट विधवा स्त्री के द्वारा प्रजोत्पादन कर के नरक में जावेगा' (म. शां. १६२-१६७)।

६. अंगिकुल का एक ब्रह्मर्षि। वैन्य ऋषि को विधाता कहने पर इसने अत्रि से स्पष्टीकरण माँगा था (म. व. १८३)। सत्यवत् जीवित है, ऐसा बता कर इसने द्युमत्सेन को धीरज बँधाया था (म. व. २८२-१३)।

७. ब्रह्मदेव ने यज्ञ के लिये, इस नामका ऋत्विज निर्माण कर के, गया में यज्ञ किया (वायु. १०६.३८)।

८. दारुक नामक शिवावतार का शिष्य (नोधस् वामदेव देखिये)।

गौतम आंध्र—(आंध्र. भविष्य.) वायुमतानुसार शिवस्वामिन् का पुत्र।

गौतम आरुणि—एक ऋषि। इससे चैकितानेय वसिष्ठ का ब्रह्मज्ञान के संबंध में संवाद हुआ था (जै. उ. ब्रा. १.४२.१)।

गौतम कूष्मांड—कक्षीवत् की संतान के लिये सामान्य नाम (ब्रह्मांड. ३.७४.९९)। कूष्मांड के लिये वायु में कृष्णांग पाठभेद है (वायु. ९९.९७)। गृहस्थों के नित्यतर्पण में, देवता की तरह कूष्मांड का समावेश है (विष्णु. ३.११.३२; ५.३०.११)।

गौतम व्यास—यह वैवस्वत मन्वन्तर में हुआ (व्यास देखिये)।

गौतमी—अश्वत्थामन् की माता (भा. १.७.४७)।

२. एक वृद्ध ब्राह्मण स्त्री (अर्जुनक देखिये)। इसने अपने पुत्र को मारनेवाले सर्प को 'भूतदया' के कारण छोड़ दिया।

गौतमीपुत्र—भारद्वाजीपुत्र का शिष्य। कात्यायनीपुत्र तथा आत्रेयीपुत्र इसके शिष्य थे (बृ. उ. ६.५.१–२ काण्व.)।

२. वात्सीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य आत्रेयीपुत्र (बृ. उ. ६.४.३१. माध्यं.)।

गौतमीपुत्र आंध्र—(आंध्र. भविष्य.) मत्स्यमतानुसार शिवस्वाति का पुत्र।

गौपवन—गोपवन का वंशज। यह पौतिमाष्य एवं कौशिक का शिष्य था (बृ. उ. २.६.१; ४.६.१)।

गौपायन—वसिष्ठकुल का गोत्रकार। पाठभेद-गोपायन

२. सुबंधु आदि भाई गौपायन के वंश के थे। असमाति ऐक्ष्वाक के ये पुरोहित थे। इन्हें छोड़ कर राजा ने दूसरे पुरोहित बुलाये, तब ये राजा पर मंत्रतंत्र छोड़ने लगे। इसीसे क्रुद्ध हो कर आये हुए पुरोहितों ने इनका वध किया (ऋ. सायणभाष्य. १०.५७; बृहद्दे. ७.८३; पं. ब्रा. १३.१२.५; जै. ब्रा. ३.१६७)।

गौपालायन—शुचिवृक्ष का पैतृक नाम (औपोदिति देखिये)।

गौपालेय—उपोदिति का पैतृक नाम।

गौर—शुक एवं पीवरी का पुत्र।

२. विकुंठ देवों में से एक।

गौरग्रीव—अत्रिकुल का गोत्रकार।

गौरजिन—अत्रिकुल का गोत्रकार।

गौरपराशर—एक ऋषि। इसके कुल में कांडूषप, वाहनप, जैहाप, भौमतापन तथा गोपालि ये प्रसिद्ध ऋषि हुए।

गौरपृष्ठ—एक क्षत्रिय। यम की सभा में इसकी उपस्थिति का उल्लेख मिलता है (म. स. ८.१९)।

गौरप्रभ—शुक एवं पीवरी का पुत्र।

गौरमुख—उग्रसेन का उपाध्याय। सांब से, इसका सूर्यविषयक संवाद हुआ था (भवि. ब्राह्म. १३९)।

२. शमीक ऋषि का शिष्य। इसने गुरु की आज्ञा पा कर परीक्षित् राजा को उसकी मृत्यु निवेदित की (म. आ. ३८.१४–१९)।

३. एक राजा। इसने चिंतामणि मणि की सहायता से सुप्रतीकपुत्र दुर्जय को ससैन्य भोज दिया। इसका वैभव देख कर मोहित हुए दुर्जय ने, उस मणि की इससे याचना की। गौरमुख के न देनेपर उसने इससे युद्ध किया। इसी कारण दुर्जय का संपूर्ण नाश हुआ (वराह. ११–१५)।

गौरवाहन—पांडवों का समकालीन एक राजा (म. स. ३१.१५)।

गौरवीति—अंगिराकुल का गोत्रकार तथा प्रवर।

गौरवीति शाक्त्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२९; ९.१०८. १; २; १०. ७३; ७४; ऐ. ब्रा. ३.१९;८.२)।

विभिंदुकी के किये गये सत्र में यह प्रस्तोतृ था (जै. ब्रा. २.२३३)। यह शक्ति का पुत्र था, ऐसा कहा गया है। इससे पता चलता है कि, यह तथा पराशर एक ही व्यक्ति रहे होंगे। गौरिवीति शाक्त्य का एक साम गौरिवित नाम से प्रसिद्ध है (तां. ब्रा. ११.५.१३–१५)। ऋषभ याज्ञतुर का यह पुरोहित था (श. ब्रा. १२.८.३.७)। ऋषभ याज्ञतुर की गाथा गौरीवीति शाक्त्य ने की होगी (श. ब्रा. १३. ५.४–१५)। इसका गौरीविति ऐसा भी पाठ है (तां. ब्रा. ११.५; १२.१३; २५.७; श. ब्रा. १२.८.३.७)।

गौरशिरस्—एक ऋषि (म. स. ७.९)।

गौराश्व—एक क्षत्रिय। यमसभा में उपस्थित (म. स. ८.१७)।

गौरिक—(सू. इ.) वायुमतानुसार युवनाश्वपुत्र। मांधातृ का मूल नाम।

गौरी—मत्स्यमतानुसार अंतिनार की कन्या। मांधातृ की माता (युवनाश्व तथा प्रसेनजित् देखिये)।

२. (सुदेव ९. देखिये)।

गौरीविति शाक्त्य—गौरवीति देखिये।

गौरुंडि—एक ऋषि। उपाकर्मांगतर्पण में इसका संग्रह है (जैमिनि देखिये)।

गौर्गुलवि—एक ऋषि। उपाकर्मांगतर्पण में इसका संग्रह है (जैमिनि देखिये)।

गौल्गुलवीपुत्र गोभिल—एक ऋषि। इसका पिता बृहद्वसु। पिता के पास इसने सामवेद का अध्ययन किया (वं. ब्रा. ३)।

गौश्र—गुश्री का वंशज। इसे मधुक नामक एक ऋषि ने 'सोमवल्ली की देवता कौन है?' ऐसा प्रश्न पूछा था (सां. ब्रा. १६.९;२३.५)।

गौश्रायणि—एक आचार्य। चित्र का पैतृक नाम। जाबालसत्र में यह पुरोहित था (सां. ब्रा. २३.५)।

गौश्ल—यज्ञ में शस्त्रकथन का बुलिल आश्वतर का सांप्रदाय इसने अनुचित सिद्ध किया। वहाँ अपनी पद्धति से शस्त्रकथन करवाया (ऐ. ब्रा. ६. ३०; गो. ब्रा, २. ६. ९)।

गौषूक्ति—इष श्यावाश्वि के शिष्य का नाम (जै. उ. ब्रा. ४.१६.१; पं. ब्रा. १९. ४. ९; गौषूक्तिन् काण्वायन देखिये)।

ग्रंथिक—पांडव द्रौपदी सहित अज्ञातवास में थे, तब नकुल ने (विराट के घर) यह नाम धारण किया था (म. वि. १२.१०)।

ग्रसन—तारकासुर का सेनापति। तारकासुर ने इंद्र से युद्ध किया। वहाँ यह उसके साथ था (पद्म. सृ. ४२)। आगे चल,कर यम के साथ तारकासुर का युद्ध हुआ। इस में यह विष्णु के द्वारा मारा गया। (मत्स्य. १५०–१५१)।

ग्रामणी—देववती का पिता।

ग्रामद्—भृगुकुल का गोत्रकार।

ग्राम्यायणि—भृगुकुल का गोत्रकार।

ग्राला—कश्यपप्रजापति की स्त्री। दक्ष प्रजापति की कन्याओं में से एक।

ग्रावाच्यवन—ब्रह्मदेव के पुष्करक्षेत्र के यज्ञ के होतृगणों में से एक ऋत्विज (पद्म. सृ. ३४)।

ग्रावाजिन—स्वायंभुव मन्वंतर का अजित देव।

ग्लाव मैत्रेय—एक आचार्य। बक दाल्भ्य तथा यह एक ही है (छां. उ. १.१२.१.२; गो. ब्रा. १.१.३१)। पंचविंश ब्राह्मण के सर्पसत्र में यह प्रस्तोतृ था। षड्विंश ब्राह्मण में भी इसका उल्लेख है (१.४)।

घ

घटजानुक—एक ऋषि (म. स. ४.११)।

घटोत्कच—(सो. कुरु.) भीम तथा हिडिंबा का पुत्र। जन्मतः इस का सिर घट के समान तथा केशरहित था, अतः इसका घटोत्कच (घट + उत्कच) नामकरण हुआ। इस नाम के अतिरिक्त, इसे भैम्य, भैमसेनी, हैडिंब या हैडिंबेय कहते थे (म. आ. १४३)। स्मरण करते ही उपस्थित रहने का, इसने अपनी दादी कुन्ती से वादा किया था (म. आ. १४३.३७)। इसकी शिक्षा माता के पास हुई। हिडिंबा ने इसे राक्षसीविद्याओं में प्रवीण बनाया।

एक बार पांडव गंधमादन पर्वत पर चढ रहे थे। आरोहण में, भीम के अतिरिक्त अन्य सब थक गये। इस वेला में, कुन्ती ने घटोत्कच का स्मरण किया। तुरन्त प्रकट हो कर, इसने ऋषियों के साथ सब को नरनारायण आश्रम तक पहुँचा दिया (म. व. १४५.१–९)।

पितृसेवा के उद्देश्य से हिडिंबा ने इसे पांडवों की ओर भेज दिया। धर्मराज ने इसका यथोचित गौरव किया, एवं इसके विवाह का निश्चय किया। कृष्ण ने कहा, 'मुरु दैत्य की कन्या मौर्वी (कामकटंकटा) घटोत्कच के लिए योग्य है।' वह भगदत्त राजा के प्राग्ज्योतिषपुर में थी। बल तथा बुद्धि द्वारा अपने को जीतनेवाले पुरुष के साथ विवाह करने का, उसने प्रण किया था। सब की प्रेरणा से, बुद्धि, राक्षसीविद्या तथा शरीरबल के क्षेत्र में, घटोत्कच ने उसे जीत लिया। इंद्रप्रस्थ में इसका विवाह मौर्वी के साथ संपन्न हुआ। इनका पुत्र बर्बरीक था (स्कंद. १.२.५९–६०)।

राजसूययज्ञ के समय, यह करभार लाने के लिए, दक्षिण दिग्विजय में लंका गया था (म. स. २८.३०९; परि. १.१५)। कुंभकोणआवृत्ति ही में इसके लंका-प्रयाण का उल्लेख उपलब्ध है। बंबई की आवृत्ति में सहदेव द्वारा दूत भेजने का विवरण प्राप्त है। वह दूत घटोत्कच ही होगा।

महाभारत के अनुसार, यह बड़ा होने के बाद हिडिंबा इसे ले कर कुन्ती के पास आई। इस समय घटोत्कच का ब्याह हो चुका था। महाभारत में इसकी पत्नी का नाम नहीं है। घटोत्कच की पत्नी देवी कामा की कृपा से अजेय थी। उसे एक विचित्र प्रश्न पूछ कर, घटोत्कच काबू में लाया, तथा नख से सेनानिर्मिति कर उसे जीत लिया। इसके अंजनपर्वन् एवं मेघवर्ण नामक दो पुत्र थे।

भारतीययुद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था। इसका रथ आठ पहियों का तथा सौ अश्वों का था। इसके रथ पर गृध्रपक्षी का ध्वज था। विरूपाक्ष नामक राक्षस इसका सारथ्यकर्म करता था। यह हाथ में पौलस्त्य धनुष्य रखता था (म. द्रो. १५०.१२-१४)।

द्रोण सेनापति थे। एक दिन रात्रि में युद्ध हुआ। कर्ण की वासवी शक्ति के कारण, अर्जुन की उससे युद्ध करने की हिम्मत नहीं हो रही थी। इस समय कृष्ण ने घटोत्कच का गौरव किया, तथा कहा, 'रात्रि की वेला में युद्ध करने से तुम्हारी शक्ति प्रज्वलित हो उठती है, अतः तुम महासमर करो।' इस प्रसंग में, इसके साथ युद्ध करने के लिए दुर्योधन ने बकबंधु अलायुध तथा अलंबुष नामक दो दैत्यों को भेज दिया। इसने दोनों का वध किया। अलंबुष का सिर काट लिया। उसे हाथ में ले कर यह दुर्योधन के सामने प्रस्तुत हुआ। घटोत्कच ने उससे कहा, 'रिक्तपाणिर्न पश्येत् राजानम्।' अर्थात्, 'राजा लोगों का दर्शन, खाली हाथों नही लेना चाहिये।' यों कह कर इसने अलंबुष का सिर दुर्योधन के सामने फेंक दिया। उपहासयुक्त शब्दों में, चिढ़ाते हुए इसने कहा, 'राजन् चन्द पलों ही में मैं कर्ण के मस्तक का उपहार पेश करने के लिए आता हूँ।'

यह समाचार सुन कर कर्ण भी एक बार थर्रा उठा। बाध्य एवं अगतिक बन कर कर्ण ने इस पर वासवी शक्ति का प्रयोग किया। उस प्राणहारक शक्ति को देख कर मरने के पहले घटोत्कच ने पर्वतप्राय देह धारण की। शक्ति लगते ही, यह कौरवसेना पर जा गिरा। मृत्यु के उपरान्त भी, इसकी देह ने शत्रुदल का एक भाग कुचल कर पीस डाला। परिणामस्वरूप अर्जुन वासवी शक्ति से निर्भीक हुआ (म. द्रो. १४८-१५४)। मार्गशीर्ष कृष्ण एकादशी की मध्यरात्रि को इस की मृत्यु हुई (भारतसावित्री)।

घटोत्कच का रूप भयानक था। उसकी देह विशाल थी। बाप से बेटा सवाई था। गंधमादन पर्वत का प्रसंग इसका सबूत है। इसके अतिरिक्त, बुद्धि, प्रत्युत्पन्नमतित्व, मातृपितृभक्ति तथा आनंदीवृत्ति आदि गुणों से इसका चरित्र विभूषित हुआ है। इसके नेत्र विद्रूप थे। कान शंकु के आकार के थे। मुख बड़ा था। ओष्ठ आरक्तवर्ण के थे। दाढ़ें तीक्ष्ण थीं। नासिका लंबी एवं सीना चौड़ा था। पिंडुलियाँ टेढ़ीमेढ़ी तथा मोटी थी। कुल मिला कर आकृति तथा आवाज़ खौफ़नाक थीं। इस का जनक मनुष्य होने पर भी, यह अमानुष था। बलशाली राक्षस-पिशाच, बचपन में भी इसे थाम नहीं सकते थे। बाल्यकाल ही से इसका रूप उग्र था। जन्मतः यह अस्त्रविद्यापारंगत एवं कामरूपधर था। पैदा होते ही, इसने मातापितरों के पैर पकड़ लिए थे।

घटोदर--रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. उ. २७; म. स. ९. १४)।

२. पूतना देखिये।

घंट--वसिष्ठकुल का एक ब्राह्मण। इसने बिल्वदल (बेलपत्र) से शंकर की १०० वर्षों तक सेवा की। आगे-चलकर इसने देवल ऋषि की नातन की माँग की। यह कुरूप है, ऐसा पता लगने के कारण, उसने इसे अस्वीकार किया। तब इस ने उसका हरण कर उससे गांधर्वविवाह किया। उसके पिता ने इसे शाप दिया; परंतु नये रिश्ते को याद कर, निशाचर याने राक्षस न हो कर उलूक होगे तथा इंद्रद्युम्न की सहायता करने पर मुक्त होगे,' ऐसा उःशाप दिया (स्कंद. १. २. ७)।

घंटाकर्ण--शिव का एक गण। शंकर के नाम वा गुणों के अतिरिक्त कुछ भी कानों को सुनने न मिले, इसलिये यह कान को घंटा बांधता था। इसलिये इसका नाम घंटाकर्ण हुआ। यह स्कंद का पार्षद था (म. श. ४४. २२)।

घंटामुख--विभावसु देखिये।

घन--लंका का एक राक्षस (वा. रा. सु. ६)।

घर्म तापस--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११४)।

घर्म सौर्य-- मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०. १८१. ३)।

घुश्मेश्वर--शंकर का बारहवाँ अवतार। देवगिरि के पास वेरूल में है। घुश्म के संरक्षणार्थ यह वहाँ आया (शिव. शत. ४२)। व्याघ्रेश्वर इसका उपलिंग है (शिव. कोटि. १)।

घूर्णिका--देवयानी की दायी का नाम (म. आ. ७३. २४)।

घृणि--मरीचिपुत्र (मरीचि देखिये)।

२. (सू. इ.) धुंधुमार का पुत्र (पद्म. सृ. ८)।

घृतकौशिक--पराशर्यायण का शिष्य। इसका शिष्य कौशिकायनि (बृ. उ. २. ६. ३; ४. ६. ३; २. ५. २१; ४. ५. २७. माध्यं.)

२. विश्वामित्र देखिये।

घृतपृष्ठ--(स्वा. प्रिय.) भागवतमतानुसार प्रियव्रत को बर्हिष्मती से उत्पन्न पुत्र। क्षीरोद से वेष्टित क्रौंचद्वीप

का यह अधिपति था। इसने अपने द्वीप के वर्षसंज्ञक सात भाग किये थे। आम, मधुरुह, मेघपृष्ठ, सुधामन्, भ्राजिष्ठ, लोहितार्ण तथा वनस्पति नामक सात पुत्रों को उन्हीं के नाम दे कर, ये वर्ष विभाजित कर दिये थे (भा. ५.१. २५; २०.२०)।

घृताची—एक अप्सरा। कश्यप तथा प्राधा की कन्या (म. आ. १५४.२)। इसी के कारण रेतस्खलन हो कर, भरद्वाज से द्रोण, व्यास से शुक, प्रमति से रुरु तथा रौद्राश्व से ऋतेयु आदि पुत्र हुये। प्रमति तथा रौद्राश्व के पास यह दीर्घकाल तक रहती थी।

२. माघ मास में आदित्य के साथ घुमनेवाली अप्सरा (भा. १२,११.३९)।

घृताशिन्—एक ऋषि। इसने गोपीमोहन कृष्ण का ध्यान किया। इसलिये इसे गोपी का जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. पा. ७२)।

घृतेयु—(सो. पूरूरवस्.) विष्णु वायु तथा मत्स्य मतानुसार रौद्राश्वपुत्र।

घृतौद—महावीर १ देखिये।

घोर—हिरण्याक्ष की सेना का एक असुर। कार्तिकेय ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ७५)।

२. कण्वपुत्र।

घोर आंगिरस—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ३.३६.१०)। अन्य वैदिक ग्रंथों में इसका उल्लेख है (सां. ब्रा. ३०.६; छां. उ. ३.१७.६; आश्व. श्रौ. १२.१०)। इसने देवकीपुत्र कृष्ण को ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया, (छां. उ. ३.१७.६)। कठ संहिता में अश्वमेधखंड में इसका उल्लेख है (२६.७)। अथर्ववेद का भिषज से, तथा आंगिरस वेद का घोर से संबंध है (आश्व. श्रौ. १०–७; सां श्रौ. १६.२)

२. वैवस्वत मन्वंतर के अंगिरस् ऋषि के आठ पुत्रों में से एक (म. अनु. १३२.४३ कुं; अंगिरस् देखिये)।

३. लंकास्थित एक राक्षस। लंकादहन के अवसर पर हनुमत् ने इसका घर जलाया था (वा. रा. सु. ५४)।

घोष—कक्षीवत्पुत्री घोषा का पुत्र। पज्रिय कक्षीवत् के साथ इसका भी उल्लेख आता है (ऋ. १.१२०.५; घोषा देखिये)।

२. धर्म ऋषि तथा लंबा का पुत्र।

३. (शुंग. भविष्य.) पुलिंद का पुत्र। इसका पुत्र वज्रमित्र। विष्णु मतानुसार इसका नाम घोषवसु है।

घोषा—कक्षीवत् की ब्रह्मवादी पुत्री (ऋ. १०.३९–४०)। कुष्ठरोग होने के कारण, इसे पिता के घर अविवाहित रहना पड़ा। अश्विनों की कृपा से इसका कुष्ठ दूर हुआ (ऋ. १०.३९; ३-६), तथा इसे पति भी मिला (ऋ. १.११७)।

रोगग्रस्त रहने के कारण, यह साठ वर्षों तक पिता के घर में अविवाहित स्थिति में रही। पिता की तरह अश्विनों को प्रसन्न कर, यह निरोगी हुई तथा इसे पति मिला (बृहद्दे. ७.४२; ४८)। इसके पति का नाम नहीं मिलता। इसे घोष तथा सुहस्त्य नामक पुत्र थे (बृहद्दे. ७.४८; सुहस्त्य देखिये)। मातापिता पुत्र को शिक्षा देते है, उसी तरह शिक्षा देने के लिये इसने अश्विनों से प्रार्थना की थी (ऋ. १०.३९.६)। शत्रुओं से युद्ध करने में समर्थ बनाने के संबंध में इसकी प्रार्थना का उल्लेख है (ऋ. १०.४०.५)।

घौषेय—घोष तथा सुहस्त्य देखिये।

घ्राण—तुषित देवों में से एक।

च

चकोर—(आंध्र. भविष्य.) सुनंदन का पुत्र। वायु में इसे सातकर्णि, विष्णु में चकोरशातकर्णि, एवं ब्रह्मांड में शातकर्णि कहा गया है।

चक्र—एक ऋत्विज। जनमेजय के सर्पसत्र में, यह उन्नेतृ नामक ऋत्विज का काम करता था। इसके साथ पिशंग का उल्लेख प्राप्त है (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

चक्र—रावण की सेना का एक राक्षस (वा. रा. यु. ६.२४)।

चक्रक—विश्वामित्र का पुत्र।

चक्रदेव—एक यादव (म. स. १४.५६)।

चक्रधनु—कपिल ऋषि का नामांतर।

चक्रधर्मन्--विद्याधर का नामांतर (म. स. परि. १. क्र. ३. पंक्ति. ६)।

चक्रपाणि--सिंधु दैत्य के पिता का नाम (गणेश २. ७३.५)।

चक्रमालिन्--रावण के सचिवों में से एक।

चक्रवर्तिन्--सर्वश्रेष्ठ नृपों की उपाधि। कार्तवीर्यार्जुन हैहय, भरत दौष्यन्ति पौरव, मरुत्त आविक्षित वैशाल, महामन महाशाल आनव, मांधातृ यौवनाश्व ऐक्ष्वाक, शशबिंदु चैत्ररथि यादव, आदि राजाओं को चक्रवर्तिन् कहा, गया है।

अंतरिक्ष, पाताल, समुद्र तथा पर्वतों पर अप्रतिहत गमन करनेवाले, सप्तद्वीपाधिपति तथा सर्वाधिक सामर्थ्ययुक्त नृपों को चक्रवर्तिन् कहते है (वायु. ५७.६८-८०; ब्रह्माण्ड २.२९.७४-८८; मत्स्य. १४२.६३-७३)।

हिमालय से महासागर तक, तथा पूर्वपश्चिम १००० योजन भूमि का अधिपति चक्रवर्तिन् है (कौटिल्य. पृ. ७२५)।

कुमारी से बिंदुसरोवर तक भूमि के अधिपति को चक्रवर्तिन् संज्ञा दी जाती थी (काव्यमीमांसा १७)।

समुद्रपर्यंत भूमि का अधिपति सर्वश्रेष्ठ नृप समजते थे (ऐ. ब्रा. ८. १५; र. वं. १)।

वेदों में चक्रवर्तिन् शब्द नही है। सम्राज् आदि शब्द उपलब्ध है।

अंबरीष नाभाग, गय आमूर्तरयस, दिलीप ऐलबिल खट्वांग, बृहद्रथ अंग, भगीरथ ऐक्ष्वाक, ययाति नाहुष, रंतिदेव सांकृति, राम दाशरथि, शिबि औशीनर, सगर ऐक्ष्वाक, सुहोत्र ये सर्वश्रेष्ठ नृप थे (म. द्रो. ५५-७०; शां. २८)।

२. अंगिरसकुल का गोत्रकार।

चक्रवर्मन्--बल का पुत्र। कर्ण के पूर्वजन्म का नाम।

चक्रवात--तृणावर्त राक्षस का नामांतर।

चक्रायण--उपस्त मुनि का पिता।

चक्रिक--एक व्याध। यह मातृपितृभक्त एवं विष्णु-भक्त था। विष्णु को फलोपहार अर्पण करने के पहले, यह स्वयं एक एक फल चख रहा था। उससे से एक फल इसके गले में अटक गया। वह फल विष्णु को अर्पण करने के लिये, इसने अपनी गर्दन स्वयं काट ली। विष्णु ने इसे जीवित कर, दर्शन दिया। बाद में, द्वारकाक्षेत्र में मृत्यु होने के कारण, इसको मुक्ति मिल गयी (पद्म. क्रि. १६)।

चक्रिन्--अंगिरा कुल का गोत्रकार।

चक्षु--(स्वा. उत्तान.) सर्वतेजस् एवं आकूति का पुत्र। इसकी स्त्री नड्वला। यह छठवाँ मनु माना जाता है।

२. (सो. नील.) विष्णु मत में पुरुजानुपुत्र। इसे ही भागवत में अर्क, मत्स्य में पृथु, एवं वायु में रिक्ष कहा गया है।

३. तुषित देवों में से एक।

४. (सो. अनु.) भागवत मत में अनुपुत्र। इसे ही विष्णु एवं मत्स्य में चाक्षुष, ब्रह्मांड में कालचक्षु, तथा वायु में पक्ष कहा गया है।

चक्षुस् मानव--मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०६.४-६)।

चक्षुस् सौर्य--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१५८)।

चंचला--एक वेश्या। इसने विष्णु के मंदिर की दीवार को सहज भाव से एक उँगली चूना लगाया। इस पुण्य के प्रभाव से इसे वैकुंठ प्राप्त हुआ (पद्म. ब्र. ६)।

चंचु--(सू. इ.) विष्णु, वायु एवं भविष्य मत में हरितपुत्र। भागवत में इसे चंप कहा गया है।

चंचुलि--विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

चंड--एक व्याध। शिवरात्रि के दिन, सहज ही शिव पर बिल्वपत्र डालने के कारण, यह जीवन्मुक्त हुआ (पद्म. उ. १५४; स्कन्द. १.१.३३)।

२. त्रिपुरासुर का अनुयायी। त्रिपुर तथा शंकर के युद्ध के समय, इसका एवं नंदी का युद्ध हुआ था (गणेश. १.४३; चंडमुंड देखिये)।

३. विष्णु के पार्षदों में से एक।

४. अष्टभैरवों में से एक।

५. बाष्कल का पुत्र।

६. काश्यप तथा सुरभि का पुत्र (शिव. शत. १८)।

चंडकौशिक--कक्षीवत् ऋषि का पुत्र। इसके प्रसाद से बृहद्रथ को जरासंध हुआ (म. स. १६.१७९*)।

चंडलुंडक--गरुड़पुत्र।

चंडबल--राम की सेना का सुप्रसिद्ध वानर। कुंभकर्ण ने इसका वध किया।

चंडभार्गव च्यावन--च्यवनवंश का एक ऋषि। जनमेजय के सर्पसत्र में यह होता का काम करता था (म. आ. ४८.५)।

चंडमुंड--शुंभनिशुंभ के सेनापति। चंड तथा मुंड ये दो असुर शुंभनिशुंभ के अनुयायी थे।

शुंभ की ओर से, यह दोनों देवताओं की सेना से लड रहे थे (पद्म. उ. १७)। शुंभ एवं शंकर के युद्ध में भी, शुंभ ने इन्हें जालंधर के शोधार्थ भेजा था।

एक बार इन्हें एक सुंदर स्त्री दिखाई दी। उसे वश करने के लिये, शुंभनिशुंभ ने इन्हीं की योजना की। यह सुंदर स्त्री कालिका देवी का मायावी रूप था। पश्चात्, कालिका देवी ने इन्हें मार डाला।

कई ग्रंथों में, उस सुंदर स्त्री को देवी चंडी कहा है। यही कथा, कुछ भिन्नता से अन्य ग्रंथों में भी आयी है (वायु. ५५; मार्क. ८४)।

चंडश्री—(आंध्र. भविष्य.) मत्स्यमत में विजय का पुत्र। इसके लिये चंद्रविश, चंद्रश्री एवं दंसश्री नाम प्रयुक्त हैं।

चंडा—गंडा देखिये।

चंडाश्व—(सू. इ.) कुवलाश्व का पुत्र। इसका भद्राश्व नामांतर भी प्राप्त है।

चंडिक—अंगारिक का नामांतर।

चंडी—उद्दालक की पत्नी। इसकी कथा कलहा की तरह ही है (जै. अ. १६)।

चंडीश—रुद्रगणों में से एक। इसके चंडी, चंड, चंडेश्वर, चंडघंट आदि नाम प्राप्त हैं। दक्षयज्ञविध्वंस के समय, इसने पूषन् नामक ऋत्विज को बाँधा था (भा. ४.५.१७; पद्म. उ. १३.५९)।

चंडोदरी—अशोकवन की एक राक्षसी (वा. रा. सुं. ४)।

चतुरंग—(सो. अनु.) भागवत एवं विष्णु मत में चित्ररथ अथवा रोमप का पुत्र। ऋष्यशृंग के पुत्रकामेष्टि यज्ञ के कारण, इसका जन्म हुआ। इसका पुत्र पृथुलाक्ष (भा. ९.२३.१०)।

चतुर्मुख—ब्रह्मदेव का नामांतर। कमल में से ब्रह्मदेव का जन्म होते ही, उसने चारों दिशाओं की ओर देखा। चारों ओर देखते ही उसे चार मुख प्राप्त हुए। इसी कारण उसे यह नाम पड़ा (भा. ३.८.१६; ब्रह्मन् देखिये)।

चन्द्र—अत्रि तथा अनसूया का पुत्र। यह सोम नाम से भी प्रसिद्ध था (भा. ४.१३; म. शां. २००.२४)। इसे सूर्य तथा भद्रा का पुत्र भी कहा गया है।

यह स्वायंभुव मन्वन्तर में पैदा हुआ था (म. आ. ६०. २४)। इसके जन्म की अनेक आख्यायिकाएं प्राप्त है। अत्रि ने दसों दिशाओं से इसे उत्पन्न किया (विष्णुधर्म. १.१०६; स्कन्द. ४.१.१४)। यह अत्रि की आँखों से उत्पन्न हुआ (ह. वं. १.२५; ६ ९; वायु. ९०.५)।

चन्द्र तथा आकाश में स्थित चन्द्रमा दोनों एक ही है। दक्ष प्रजापति की सत्ताईस कन्यायें इसे पत्नीरूप दी गयी थीं। चन्द्र की इन सत्ताईस पत्नियों के नाम बाद में सत्ताईस नक्षत्रों को प्राप्त हुए (म. आ. ६०.१२; १५; ह. वं. १.२५.२२; स्कन्द. ७.१.२०)।

पृथ्वी की औषधि वनस्पति, चन्द्र से प्रभावित होने के अनेक निर्देश प्राप्त हैं। इसने तपस्या करने पर, इसकी आँखों से सोमरस टपकने लगा। इसीसे सब औषधियाँ उत्पन्न हुईं (स्कन्द. ७.१.२०)। इसका क्षय होने पर पृथ्वी की औषधि वनस्पतियाँ सूख गयी (म. श. ३४)। इसने अमृत दे कर अनाथ मारिषा की रक्षा की। इन सब कथाओं से चन्द्र—चन्द्रमा रूपक की पुष्टि मिलती है।

चन्द्र के सत्ताईस पत्नियों में, रोहिणी पर इसकी विशेष प्रीति थी। यह न सह कर, इसकी अन्य स्त्रियों ने अपने पिता दक्ष के पास शिकायत की। दक्ष ने चन्द्र को समझाया। परंतु कुछ लाभ नहीं हुआ।

दक्ष ने चन्द्र को शाप दिया कि, तुम्हें क्षयरोग हो जावेगा। क्षय से चन्द्र क्षीण होने लगा। उसका दुष्परिणाम पृथ्वी की औषधिवनस्पतियों पर हुआ। देवों को मजबूरी से दक्ष के पास प्रार्थना करनी पड़ी। दक्ष ने कहा, 'चन्द्र का पंद्रह दिन क्षय तथा पंद्रह दिन वृद्धि होगी, परंतु उसके लिये चन्द्र को सब पत्नियों की ओर समान ध्यान देना पड़ेगा। पश्चिम सागर के पास सागरमुख में स्नान करना होगा'। वहाँ स्नान करने के बाद चन्द्र को पूर्ववत् कान्ति प्राप्त हुई। इसीलिये इस क्षेत्र को प्रभास नाम प्राप्त हुआ (म. श. ३४)।

शशपानतीर्थ पर देव तथा दैत्यों ने अमृतपान किया। वहाँ कुछ देरी से आने के कारण, इसे अमृत प्राप्त नहीं हुआ। वहाँ का तीर्थ पीने के लिये देवों ने इसे कहा। एक खरगोश उस तीर्थ का प्राशन कर रहा था। उसेभी इसने खा लिया। वह अभी भी इसके उदर में है। (स्कन्द. ७. १. २५८)।

अत्रिपुत्र सोम यह चन्द्र का ही नामांतर है। एकबार सोम अत्यंत बलिष्ठ हुआ। राजसूययज्ञ कर के इसने त्रैलोक्य को जीत लिया। बृहस्पति की पत्नी तारा का जबरदस्ती हरण कर लिया। उसके लिये तारकामय नामक बहुत बड़ा युद्ध हुआ। ब्रह्मदेव ने मध्यस्थता की। इसने तारा को वापस किया।

परंतु वह गर्भवती थी। बृहस्पति ने तारा को गर्भ का त्याग करने के लिये कहा। तब तारा ने एक वृक्ष पर उसे छोड़ दिया। वह गर्भ अत्यंत तेजस्वी था। यह देख कर पुनः बृहस्पति तथा चन्द्र लड़ने लगे। तब तारा ने कहा कि, 'गर्भ चन्द्र का है'। वह गर्भ चन्द्र को दिया गया। यही बुध हैं। यहीं से चन्द्रवंश प्रारंभ हुआ (भा. ९. १४; ह. वं. १.२५; पद्म. पा. १२; ब्रह्म ९; मत्स्य. २३; दे. भा. १.११; वायु. ९०.२-९)।

सोमवंश का प्रथम राजा सोम ही था। इसकी पत्नी रोहिणी। इसकी राजधानी प्रयाग थी। (पद्म. उ. १५६; सोम तथा पुरूरवस् देखिये)। बदरिकाश्रम में तप कर के इसने ग्रहाधिपत्य प्राप्त किया (स्कन्द. २.३.७)। इसने उमासहित सोम की आराधना की, इसलिये इसे सोम नाम प्राप्त हुआ (स्कन्द. ४.१.१४)।

धर्म प्रजापति को वसु नामक स्त्री से उत्पन्न अष्टवसुओं में से एक का नाम सोम है (म. आ. ६०.१७; लिंग. ६१)। यह वैवस्त मन्वन्तर का था। पीछे वर्णित सभी कथा इसीकी होनी चाहिये।

सोमवंश---भारत का प्राचीन इतिहास सोम एवं सूर्य-वंश का ही इतिहास है। सोम चंद्र का ही नामांतर है। सोम तथा सूर्य इन दोनों वंशों का मूलपुरुष वैवस्वत मनु है। सूर्यवंश वैवस्वत मनु के पुत्र से शुरू होता है। सोमवंश उसकी कन्या इला से प्रारंभ होता है।

वैवस्वत मनु की कन्या इला सोमपुत्र बुध से ब्याहीं थी। उसीसे पुरूरवस्-आयु-नहुष-ययाति तक का वंशविस्तार हुआ। इसे ही पुरूरवस् वा ऐल वंश कहते है।

पुरूरवस्पुत्र अमावसु से कान्यकुब्ज में अमावसुवंश शुरू हुआ।

आयुपुत्र वृद्धशर्मन् वा क्षत्रवृद्ध से काश्य वा काशिवंश का प्रारंभ हुआ। रजिवंश, अनेनस्वंश तथा रंभवंश ये भी आयुवंश की उपशाखाएं हैं। क्षत्रवृद्ध का द्वितीय पुत्र प्रतिक्षत्र था। उसीसे पुरूरवस् (ऐल) वंश की एक अलग उपशाखा निर्माण हुई।

नहुषपुत्र ययाति के अनु, पूरु, द्रुह्यु, तुर्वसु एवं यदु नामक पाँच पुत्र थे। इन पाँच पुत्रों से पुरूरवस् वंश की पाँच उपशाखाएं निकली। ये उपशाखाएं इस प्रकार है-

(१) तुर्वसुवंश---यह दुष्यन्त के समय पुरुवंश मे सम्मीलित हुवा।

(२) पूरुवंश---अजमीढ, कुरु, चेदि, जह्नु, द्विमीढ, नील।

(३) अनुवंश---उशीनर (केकय, मद्रक), तितिक्षु (अंग, वंग, कलिंग, सुह्म, पुंड्र)।

(४) यदुवंश---अनमित्र, अंधक, कुकुर, क्रोष्टु, ज्यामघ, भजमान, रोमपाद, वसुदेव, विदर्भ, विदूरथ, विष्णु वृष्णि, सहस्रजित्, सात्वत, हैहय।

(५) द्रुह्युवंश---द्रुह्यु का वंश पुराणों में मिलता है। उसकी शाखाएँ नहीं हैं।

सूर्यवंश की विस्तृत समीक्षा के लिये विवस्वत् देखिये।

२. (सू. इ.) भागवत मत में विश्वरंध्री का पुत्र (इन्दु देखिये)।

३. (सू. इ.) भानु राजा का पुत्र। इसे श्रुतायु नामक पुत्र था।

४. दाशरथि राम के सुज्ञ नामक मंत्री के पुत्रों में से एक। अश्वमेध का अश्व वापस लाने के लिये हुए युद्ध में, कुश ने इसका वध किया (वा. रा. उ. १)।

५. कृष्ण तथा नाग्नजिती के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१३)।

६. कश्यप तथा दनु का पुत्र।

चंद्रकला--माधव ५. देखिये।

चंद्रकांत---एक गंधर्व। इसकी कन्या सुतारा।

चंद्रकेतु---हंसध्वज राजा का भ्राता।

२. (सू. इ.) वायुमत में लक्ष्मण पुत्र।

३. भारतीय युद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा। यह कृपाचार्य का चक्ररक्षक था। अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. वि. ५२. ९२८* पंक्ति ६; द्रो. ४७. १५)।

चंद्रगिरि---(सू. उ.) मत्स्य तथा पद्म मत में तारापीड का पुत्र (पद्म. सृ. ८)।

चंद्रगुप्त---(मौर्य. भविष्य.) एक राजा। नंदवंश नष्ट होने पर यह गद्दी पर बैठा। यह महापद्म नंद की मुरा नामक शूद्रा से उत्पन्न पुत्र था। इस कारण इसके वंश का नाम मौर्यवंश हुआ, ऐसा प्रवाद है। आचार्य चाणक्य ने सब नंदों का नाश कर के इसे सिंहासन पर बैठाया। इसने कुल चौबीस वर्ष राज्य किया। इसे वारिसार नामक पुत्र था (भा. १२.१.१३)। इसने पौरसाधिपति सुलून राजा की यवन कन्या के साथ विवाह किया। इसका पुत्र बिंदुसार (भवि. प्रति. १. ७)।

२. कार्तवीर्यार्जुन का मंत्री। इसने जमदग्नि ऋषि का शिरच्छेद किया (ब्रह्मांड. ३. ३०. ८)।

चंद्रदेव—पांचाल देश का नृप। यह युधिष्ठिर का चक्ररक्षक था। भारतीययुद्ध में कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४४. १५)।

२. दुर्योधन के पक्ष का नृप। भारतीययुद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ४४. २९.)।

चंद्रप्रवर्शन—कश्यप तथा सिंहिका के पुत्रों में कनिष्ठ। चंद्रप्रमर्दन इसका नामान्तर है।

चंद्रप्रभ—एक राजा। यह मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र था।

चंद्रभानु—(सो. यदु. वृष्णि.) कृष्ण तथा सत्यभामा का पुत्र (भा. १०. ६१. १०)।

चंद्रमस्—अत्रि तथा अनुसूया का पुत्र।

२. कश्यप एवं दनु का पुत्र।

३. समुद्र के दक्षिण तट पर निवास करनेवाला ऋषि। इसने जटायु के भाई संपाति को अध्यात्मज्ञान दिया। सीता की खोज के लिये आये वानरों को, मार्ग दिखाने का आदेश इसने जटायु को दिया। पश्चात् यह स्वर्ग सिधारा।

चंद्ररूपा—राथंतरकल्प के प्रजापति की पत्नी। इसने त्रिरात्र तुलसीव्रत किया था (पद्म. उ. २६)।

चंद्रवती—प्रचेतस् एवं मारिषा की कन्या। यह प्राचेतस् दक्ष की बहन थी।

चंद्रवर्मन्—कांबोज देश का नृप (म. आ. ६१. ५५६*)।

चंद्रवाह—काकुत्स्थ शशाद राजा का नामांतर।

चंद्रविद्म—(आंध्र. भविष्य.) भागवत मत में विजय का पुत्र (चंडश्री देखिये)।

चंद्रशर्मन्—मायापुरी का अग्निहोत्री ब्राह्मण। यह देवशर्मन् का शिष्य था। देवशर्मन् की कन्या गुणवती इसकी पत्नी थी। एक बार देवशर्मन् तथा यह अरण्य में दर्भ समिधा लाने के लिये गये। एक राक्षस ने इन दोनों के प्राण लिये। अत्यंत धार्मिक होने के कारण यह वैकुंठ गया। यह कृष्ण के समय अक्रूर नाम से प्रसिद्ध हुआ (पद्म. कु. ८८-८९)।

२. सूर्यवंश का एक राजा। यह कुरुक्षेत्र में रहता था। एक बार सूर्यग्रहण के समय, तुलापुरुषदान देने की इच्छा से, इसने एक ब्राह्मण को बुलाया। परंतु वह निंद्य दान होने के कारण, तुलापुरुषदान करते ही उस में से एक चंडालयुग्म उत्पन्न हुआ। इसीमें ब्राह्मण ने गीता के नवम अध्याय का पाठ प्रारंभ किया था। अतः उसके प्रत्येक अक्षर से एकेक विष्णुदूत उत्पन्न हो कर, उन्होंने इस चांडालयुग्म को भगा दिया। वह चांडालयुग्म मनुष्योपकारी पाप एवं निंदा थे (पद्म. उ. १८३)।

३. मागध देश का ब्राह्मण। इसने गुरुहत्या की थी। विदुर के साथ कालिंजर पर्वत जाने पर इसे एक सिद्ध मिला। उसके उपदेश से इसने सोमवती अमावास्या के दिन, पुष्करतीर्थ में स्नान किया तथा यह शुद्ध हुआ (पद्म. सृ. ९१-९२)।

चन्द्रशेखर—एक राजा। यह पुष्य का नाती तथा पौष्य का पुत्र था। इसका राज्य दृषद्वती नदी के किनारे करवीर में था।

इसके पिता पौष्य ने पुत्र के लिये, शंकर की आराधना की। शंकर ने उसे प्रसादरूप में एक फल दिया। उस फल के तीन भाग कर के पौष्य ने अपनी तीन स्त्रियों को दिये। बाद में पौष्यस्त्रियों को तीन भागपुत्र पैदा हुए, जो, उन तीनों को जोड कर एक पुत्र बन सके। तीन भागों से बनने के कारण, इसे त्र्यंबक नाम मिला।

सूर्यवंशीय राजा ककुत्स्थ एवं मनोरमा की कन्या तारावती से इसका विवाह हुआ। तारावती को कपोत मुनि के शाप से, भृंगी तथा महाकाल ये भैरव एवं वेताल-योनि के पुत्र हुए (कालि. ५०-५२)। इसे दमन, उपरिचर तथा अलर्क नामक तीन औरस पुत्र थे।

चन्द्रश्री—(आंध्र. भविष्य.) विष्णु के मत में विजय का पुत्र (चंडश्री देखिये)।

चन्द्र सावर्णि—चौदहवाँ मनु (मनु देखिये)।

चन्द्रसेन—सिंहलद्वीप का राजा तथा मंदोदरी का पिता।

२. दुर्योधनपक्षीय एक राजा। भारतीययुद्ध में यह शल्य का चक्ररक्षक था। यह युधिष्ठिर के द्वारा मारा गया (म. श. ११.५३)।

३. पांडवपक्षीय क्षत्रिय राजा (म. स. ३७.२२)। यह समुद्रसेन राजा का पुत्र था (म. आ. १७७.११)। भारतीययुद्ध में अश्वत्थामा ने इसका वध किया (म. द्रो. १३१.१२९)। यह एक उत्तम रथी था (म. उ. १६८.१८)। इसके रथ को सामुद्र अश्व जोडे गये थे। पाठभेद-चन्द्रदेव।

४. हंसध्वज राजा का बंधु।

चन्द्रहर्तृ—कश्यप तथा सिंहिका का पुत्र।

चन्द्रहास—केरलाधिपति सुधार्मिक राजा का पुत्र। इसका जन्म मूल नक्षत्र पर हुआ था। इसके अतिरिक्त, दारिद्र्यदर्शक छठवीं अंगुलि इसके बायें पैर को थी।

इस अशुभ चिन्ह के कारण, इसका जन्म होते ही, शत्रुओं ने इसके पिता का वध किया। इसकी माता ने सहगमन किया। इस प्रकार यह अनाथ हो गया। एक दाई ने इसको सम्हाला। वह इसे कौंतलकापुरी ले गई। वहाँ तीन वर्षों तक मजदूरी कर के उसने इसका भरण पोषण किया। कुछ दिनों के बाद वह मृत हुई। भिक्षान्न सेवन कर के इसने दिन बिताये। बाद में कुछ स्त्रियों ने इसका पालन किया। यह पाँच साल का हुआ, तब अन्य लड़कों में खेलने लगा। इसे बहुत स्त्रियों ने नहला धुला कर खाना खिलाया।

एक दिन सहजवश यह धृष्टबुद्धि प्रधान के घर गया। वहाँ ब्राह्मणभोजन चालू था। वहाँ निमंत्रित योगीश्वर तथा मुनियों को चन्द्रहास को देख कर, अत्यंत विस्मय हुआ। उन्होंने इसे आशीर्वाद दिया कि, यह राजा बनेगा। उसी प्रकार उन्होंने धृष्टबुद्धि से कहा, 'तुम्हारी संपत्ति की रक्षा भी यही करेगा।' इससे क्रुद्ध हो कर तथा मन में शंका आ कर, उसने इस बालक को जल्लादों के हाथों में सौंप दिया। जल्लाद वध करने के लिये, इसे अरण्य में लाये। फिर भी यह पूरे समय हास्यवदन ही था। मार्ग में मिला हुआ शालिग्राम, इसने बडी भक्ति से अपने मुख में रखा था। जल्लादों ने तीक्ष्ण शस्त्र उठाये। इसने उनकी स्तुति की। इससे जल्लादों के मन में इसके प्रति पूज्य बुद्धि उत्पन्न हुई। उन्होंने इसका वध न कर के, केवल छठवी अंगुलि काट ली। वही अंगुलि धृष्टबुद्धि प्रधान को दे कर इनाम प्राप्त किया।

जल्लादों द्वारा वन में छोड़े जाने के बाद, यह अरण्य में इधर उधर घूमने लगा। इस समय कुलिंद देश का राजा, मृगया के हेतु से इसी अरण्य में आया था। इस बालक को देख कर, राजा का मन द्रवित हुआ। उसने इसकी पूछताछ की। पश्चात् चंदनावती नगरी में इसे अपने साथ ले जा कर, उसे रानी मेधावती को सौंप दिया। राजा ने इसका नाम चन्द्रहास रखा। सब विद्याएँ भी इसे सिखायी। चन्द्रहास के कारण कुलिंद में सर्वत्र आनंद फैल गया। शिक्षाप्राप्ति के समय, चन्द्रहास केवल 'हरि' शब्द का ही उच्चारण करता था। इससे कुपित हो कर गुरु ने इसकी शिकायत राजा के पास की। परंतु, राजा ने कहा, 'इसकी इच्छा के अनुसार इसे व्यवहार करने दो।' आठ वर्ष की आयु में इसका व्रतबंध हुआ। तदनंतर इसने वेदाध्ययन किया। बाद में यह धनुर्विद्या में भी प्रवीण हो गया। पंद्रह वर्ष की आयु होते ही इसने दिग्विजय करने की इच्छा दर्शाई। परंतु कुलिंद ने कहा, 'अपनेसे बलवान राजाओं को भला तुम किस प्रकार जीत सकोगे? जाने की इच्छा हो, तो जाओ। कौंतल राजा के दुश्मन मुझे हमेशा त्रस्त करते है। क्योंकि मैं उसका अंकित हूँ'।

यह सुन कर चन्द्रहास दिग्विजय करने गया। इसने सब राजाओं को जीत लिया। इस प्रकार विजयी हो कर तथा अपरंपार संपत्ति ले कर यह चंदनावती लौटा। यह सुन कर कुलिंद इसका स्वागत करने आया।

बाद में कुलिंद के कथनानुसार, चन्द्रहास ने अपने सेवकों द्वारा कौंतल राजा को करभार भेजा। सेवकों ने उसे बताया, 'कुलिंद राजा सुखी है। उसके पुत्र चन्द्रहास ने दिग्विजय कर के यह संपत्ति भेजी है'। इससे विस्मयाभिभूत हो कर कौंतल चन्द्रहास को देखने चंदनावती आया। कुलिंद से मिल कर उसने कहा, 'पुत्रजन्म का वृत्त तुमने हमें क्यों नहीं सूचित किया'। चंद्रहास का सारा जन्मवृत्तांत कुलिंद ने उसे बताया। इससे कौंतल ने चन्द्रहास को पहचान लिया, तथा मन ही मन कुछ शंकित हुआ। पुनः चन्द्रहास का वध करने के विचार उसके मन में आये। इस संबंध में एक पत्र अपने पुत्र मदन को लिख कर, वह ले जाने के लिये चन्द्रहास से कहा।

चन्द्रहास कुंतल नगरी के लिये रवाना हुआ। राह में एक रम्य स्थान पर यह सोया था। उस स्थान पर राजकन्या चंपकमालिनी अपनी सखियों के साथ आई। उसके साथ धृष्टबुद्धि प्रधान की कन्या विषया भी थी। उसने चन्द्रहास को सरोवर के किनारे निद्रामग्न अवस्था में देखा। अपने पैरों से नूपुर निकाल कर धीरे-धीरे वह उसके पास गई। वहाँ उसने एक पत्र देखा। उसने वह पत्र पढा। उस पत्र में चन्द्रहास के लिये विषप्रयोग की सूचना थी। इससे उसका प्रेमी हृदय भग्न हो गया। उसने पत्र के 'विषमस्मै' शब्द के बदले आम के गोंद से 'विषयास्मै' लिखा। पश्चात् पत्र बंद कर वहीं रख दिया। इस प्रकार धृष्टबुद्धि से इसकी रक्षा हुई। बाद में यह पत्र ले कर चन्द्रहास, मदन के पास गया। यह पत्र पढ कर मदन को अत्यंत आनंद हुआ। इधर विषया ने भी देखी की, 'यही पति मुझे प्राप्त हो' इस इच्छा से

उत्कट आराधना की। तदनंतर योग्य मुहूर्त पर मदन ने चन्द्रहास तथा विषया को विवाहबद्ध कर दिया।

इसी समय, धृष्टबुद्धि ने चंदनावती में कुलिंद को बद्ध कर के, प्रजा पर अनन्वित अत्याचार किये। इस प्रकार अत्याचार से प्राप्त धन ले कर वह कुंतलपुर आया। वहाँ वाद्यों का वादन हो रहा था। मदन ने चन्द्रहास को विषया दी, यह वृत्त उसे मालूम हुआ। वह अत्यंत संतप्त हुआ तथा मदन पर क्रोधित हुआ। परंतु बाद में मदन ने उसे समझाया। फिर भी चन्द्रहासवध की कल्पना उसके मन से नहीं हटी।

देवी के दर्शन के लिये जाने की आज्ञा, धृष्टबुद्धि ने चन्द्रहास को दी। वहाँ उसने इसके वध के लिये दो अंत्यज रखे। परंतु इस समय भी धृष्टबुद्धि के दुर्दैव से चन्द्रहास के बदले मदन का वध हुआ। इसके पूर्व ही कौंतल ने अपनी कन्या चंपकमालिनी तथा सब राज्य चन्द्रहास को दिया। पश्चात् वह स्वयं अरण्य में चला गया।

चन्द्रहास राजा बन गया, ऐसा सुन कर धृष्टबुद्धि क्रोध से पागल सा हो गया। चंडिकादर्शन के लिये न जा कर, चन्द्रहास ने कुलप्रथा तोड़ दी, यह सुन कर भी इसे अत्यंत क्रोध आया। वह तुरंत चंडिकामंदिर में गया। वहाँ मदन मृत पड़ा हुआ था। इस समय कृतकर्म का उसे अत्यंत पश्चात्ताप हुआ। उसका मन कहने लगा, 'वैष्णवों से द्रोह करने का यह दुष्परिणाम है'। अंत में पुत्रशोक अनावर हो कर स्तंभ पर सिर पटक कर उसने प्राण दिये।

यह वृत्त सुन कर चन्द्रहास को अत्यंत दुःख हुआ। अपने मांस का होम कर के इसने देवी को प्रसन्न किया। देवी ने इसे दो वरदान दिये। इन वरों से मदन तथा धृष्टबुद्धि जीवित हो गये।

कुलिंद राजा कौंतल के अत्याचारों से त्रस्त हो कर पत्नी समेत अग्निप्रवेश कर रहा था। इतने में धृष्टबुद्धि ने चन्द्रहास का वृत्त उसे कथन किया। बाद में चन्द्रहास अपने पिता के आज्ञानुसार राज्य करने लगा।

युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय, इसने उसका अश्वमेधीय अश्व पकड़ लिया था। परंतु श्रीकृष्ण की आज्ञानुसार अर्जुन ने इसके साथ संधि कर ली। इस कारण, चन्द्रहास ने अश्वमेध में काफी सहायता की। चन्द्रहास को विषया से मकराक्ष तथा चंपकमालिनी से पद्माक्षनामक दो पुत्र हुए (जै. अ. ५०-५९)।

चन्द्रहास की राजधानी चंदनावती कौंतलपुर से छः योजन दूर थी (जै. अ. ५२)। चंदनावती बड़ोदा का प्राचीन नाम है। परंतु कुंतलपुर वर्तमान खेड़ा जिला का सरनाल ग्राम है। इसलिये बड़ोदा को चंदनावती नहीं कह सकते। कनिंगहॅम ने लिखा है कि, कुंतलपुर ग्वालियर प्रांत में है।

चन्द्रा—वृषपर्वा दानव की कन्या तथा शर्मिष्ठा की भगिनी।

२. कृष्ण के समय की एक गोपी (पद्म. पा. ७७)।

चन्द्रार्कभिकिर—कश्यप तथा खशा का पुत्र।

चन्द्रावली—कृष्ण की प्रियपत्नी (पद्म. पा. ७०)।

चन्द्रावलोक—(सू. इ.) मत्स्य के मत में सहस्राश्व पुत्र। इसका पुत्र तारापीड।

चन्द्राश्व—(सू. इ.) विष्णु के मत में कुवलयाश्वपुत्र। भागवत, वायु तथा मत्स्य मत में दृढपुत्र।

चन्द्रोदय—विराट का भाई (म. द्रो. १३३.४०)।

चमस—(स्वा. प्रिय.) ऋषभ को जयंती से उत्पन्न पुत्र। यह महायोगी था। इसने विदेह के यज्ञ में जा कर, उसे आत्मोपदेश दिया (भा. ५.४.११; ११. ५.२)।

चंप—चंपु देखिये।

२. (सो. अनु.) मत्स्य तथा विष्णु के मत में पृथुलाक्ष का पुत्र। इसने मालिनीनगर को चंपा नाम दे दिया।

चंपक—कुंडलनगरी के सुरथ का पुत्र (पद्म. पा. ४९)।

चंपकमालिनी—कौंतल देश के राजा की कन्या तथा चन्द्रहास की पत्नी। इसे पद्माक्ष नामक पुत्र था।

२. रामपुत्र कुश की चंपिका नामक ज्येष्ठपत्नी से हुई नौ कन्याओं में से एक।

चंपा—चन्द्रसेना नामक राक्षस स्त्री का नामांतर।

चंपिका—रामपुत्र कुश की दो पत्नियों में से ज्येष्ठ। इसे चंपकमालिनी आदि नौ कन्यायें हुई।

चयस्सेन—बृहत्कल्प का इंद्र। गौतमपत्नी अहल्या से इसने अनैतिक संबंध रखा था (ब्रह्म. ६.२.५)।

चर—मणिवर तथा देवजनी का पुत्र।

चरक—आयुर्वेदीय 'चरकसंहिता' नामक महान् ग्रंथ का कर्ता। यह विशुद्ध नामक ऋषि का पुत्र तथा अनन्त संज्ञक नाग का अवतार था। संभवतः यह नागवंश का होगा। भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेश का वर्णन इसके ग्रंथ में अधिक आता है। इससे यह उसी प्रदेश का रहनेवाला होगा (भावप्रकाश)।

शतपथब्राह्मण में चरक का निर्देश है। शतपथब्राह्मण, चरकसंहिता एवं याज्ञवल्क्यस्मृति में शारीरविषयक

विवेचन प्रायः समान है। चरक तथा याज्ञवल्क्य दोनों ने मानवी अस्थिसंख्या ३६० बताई हैं। याज्ञवल्क्य तथा चरक दोनों एक ही वैशंपायन के शिष्य थे।

चरकसंहिता--उपलब्ध आयुर्वेदीय संहिताओं में 'चरकसंहिता' सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ है। सुश्रुतसंहिता शल्यतंत्र-प्रधान तथा चरकसंहिता कायाचिकित्साप्रधान ग्रंथ है। इस ग्रंथ में चिकित्सा-विज्ञान के मौलिक तत्त्वों का जितना उत्तम विवेचन किया गया है, उतना अन्यत्र नही हैं। इसके अतिरिक्त, इस ग्रंथ में सूत्ररूप में सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, वेदान्त, मीमांसा इन आस्तिक दर्शनों का, चार्वाक आदि नास्तिक दर्शनों का, तथा परोक्ष रूप से व्याकरण आदि वेदांगों का भी संकलन सुन्दरता से किया गया है। इस लिये, इस ग्रंथ को यथार्थता से 'अखिल-शास्त्रविद्याकल्पद्रुम' कहा जा सकता है।

'चरक संहिता' में दी गयीं आयुर्वेदीय विद्यापरंपरा इस प्रकार है। आयुर्वेद सर्वप्रथम ब्रह्मा ने निर्माण किया। ब्रह्मा से प्रजापति ने, प्रजापति से अश्विनीकुमारों ने, उनसे इंद्र ने, तथा इंद्र से भरद्वाज ने आयुर्वेद का अध्ययन किया। फिर भरद्वाज के प्रभाव से दीर्घ, सुखी तथा आरोग्यजीवन प्राप्त कर अन्य ऋषियों में उसका प्रचार किया। तदनन्तर पुनर्वसु आत्रेय ने अग्निवेश, भेड, जतूकर्ण, पराशर, हारीत तथा क्षीरपाणि नामक छः शिष्यों को आयुर्वेद का उपदेश किया। इन छः शिष्यों में सब से अधिक बुद्धिमान् अग्निवेश ने सर्वप्रथम 'अग्निवेशतंत्र' नामक एक संहिता का निर्माण किया (च.सू.अ. १)। इसी ग्रंथ का प्रतिसंस्कार बाद में चरक ने किया, तथा उसका नाम 'चरकसंहिता' पड़ा। उपलब्ध चरकसंहिता के चिकित्सास्थान, के १७ अध्याय तथा १२-१२ अध्याय के कल्पस्थान तथा सिद्धिस्थान चरक ने लिखे मूल संहिता में नहीं थे। उनकी पूर्ति दृढबल ने की (च. चि. ३०)।

बौद्ध त्रिपिटक ग्रंथ में, कुषाणवंशीय राजा कनिष्क का राजवैद्य यों कह कर चरक का निर्देश प्राप्त है। योगसूत्र,कार तथा महाभाष्यकार पतंजलि तथा चरक एक ही थे ऐसी जनश्रुति है। कनिष्क तथा पतंजलि का काल इसापूर्व दूसरी सदी निश्चित है। वह चरक काल होगा।

वैशंपायनशिष्यत्व, एवं पाणिनि तथा शतपथ में निर्देश के कारण चरककाल भारतीययुद्ध से नजदीक होने का संभव है। पाश्चात्य चिकित्सापद्धति के आचार्य हिपोक्रिटीस (इ. पू. ६००) ने भी इसके सिद्धान्तों का भाव लिया है, ऐसा कई विद्वानों का मत है। ऐसा हो तो, याज्ञवल्क्यकालीन चरक तथा कनिष्ककालीन चरक ये दो अलग व्यक्तियाँ मानना होगा।

२. कृष्णयजुर्वेद का एक शाखाप्रवर्तक। इसका सही नाम कपिष्ठल-चरक था। प्रवरमाला में इसका नामोल्लेख है।

३. कृष्णयजुर्वेद की एक उपशाखा। कृष्णयजुर्वेद में 'चरक' नाम धारण करनेवाली बारह शाखाएँ (भेद) हैं। उनके नाम :--चरक, आह्वरक, कठ, प्राच्यकठ, कपिष्ठलकठ, आरायणीय, वारायणीय, वार्तान्तवेय, श्वेताश्वतर, औपमन्यव, पातण्डनीय, तथा मैत्रायणीय। इनमेंसे मैत्रायणीय शाखा में मानवादि छः भेद हैं। चरक वाराहसूत्रानुयायी तथा मैत्रायणीय मानवसूत्रानुयायी है (चरणव्यूह)।

कृष्णयजुर्वेद की एक शाखा, कृष्णयजुर्वेद की सामान्य संज्ञा, तथा कृष्णयजुर्वेद पढनेवाले लोग, ये तीन ही अर्थ से 'चरक' नाम का निर्देश उपलब्ध है (श. ब्रा. ३.८.२.२४; ४.१.२.१९; २.३.१५; ४.१.१०; ६.२.२.१-१०; ८.१.३.७; ७.१.१४.२४)।

कृष्ण यजुर्वेद की सर्व शाखाओं के लिये चरक यह नाम प्रयुक्त होता है। तथापि महाराष्ट्र में कृष्णयजुर्वेद की चरक नामक ब्राह्मणज्ञाति उपलब्ध है। वह ज्ञाति मैत्रायणी शाखा की है। उनका सूत्र मानव एवं वाराह है। चरक ब्राह्मणग्रंथ का निर्देश ऋग्वेद के सायणभाष्य में भी आया है (ऋ. ८.६६.१०)।

'चरक' नाम का शब्दशः अर्थ, 'प्रायश्चित्त करनेवाले' ऐसा है। वैशंपायन के लिये जिन्होंने प्रायश्चित्त किया, वे सब वैशंपायनशिष्य चरक नाम से प्रसिद्ध हुए। वैशंपायन को 'चरकाध्वर्यु' कहा गया है (वैशंपायन देखिये)।

पुरुषमेध में, चरक (आचार्य) को बलिप्राणियों में समाविष्ट किया गया है (वा. सं. ३०.१८)। शुक्ल तथा कृष्णयजुर्वेद का परस्परविद्वेष इससे प्रकट होता है।

याज्ञवल्क्य के अनुयायियों के लिये यह नाम प्रयुक्त नहीं होता था। क्यों कि, उन्होंने वैशंपायन के लिये प्रायश्चित नहीं किया (वैशंपायन तथा व्यास देखिये)। श्यामायनि (उदीच्य), आसुरि (मध्य) तथा आलंबि (प्राच्य) ये चरकाध्वर्यु तथा तैत्तिरीयों के मुख्य है। वपा तथा पृषदाज्य में प्रथम अभिघार किसे किया जावे, इस विषय में चरकाध्वर्यु का याज्ञवल्क्य से मतभेद है (श. ब्रा. ३.६.३.२४)।

चरंत—(सो. क्षत्र.) वायु के मत में आर्ष्टिषेण-पुत्र।

चरिष्णु—होनेवाले सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक (मनु देखिये)।

चर्मवत्—शकुनि का कनिष्ठ भ्राता। भारतीययुद्ध में इरावत् ने इसका वध किया (म. भी. ८६.२४)।

चर्मशिरस्—व्युत्पत्ति बतानेवाला एक आचार्य (नि. ३.१५)।

चर्षणी—वरुण नामक नवम आदित्य की पत्नी। इसे भृगु नामक पुत्र था (भा. ६.१८.४)।

२. अर्यमा आदित्य के मातृका से उत्पन्न पुत्रों का नाम (भा. ६.६.४२)।

चलकुंडल—भृगुकुल का गोत्रकार।

चलि—भृगुकुल का गोत्रकार।

चालिक—भृगुकुल का गोत्रकार।

चलुभि—यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

चाक्र—एक आचार्य। रेवोत्तरस् स्थपति पाटव चाक्र (श. ब्रा. १२.८.१.१७), तथा रेवोत्तरस् पाटव चाक्र स्थपति (श. ब्रा. १२.९.३.१), इन भिन्नभिन्न नामों से इसका उल्लेख प्राप्त है। इसने कौरव्य राजा बाह्लिक प्रातिपीय के विरोध की पर्वाह न करते हुए, दुष्टरीतु को, दस पीढियों के बाद, पुनः राजगद्दी पर स्थापित किया।

चाक्रायण—उषस्त का पैतृक नाम।

चाक्षुष—क्षुप देखिये।

२. चक्षु ४. देखिये।

३. विश्वकर्मा का पुत्र। इसे विश्वेदेव तथा साध्यगण नामक दो पुत्र थे।

४. भौत्य मन्वन्तर का देवगण।

५. अग्नि देखिये।

६. चक्षु का पुत्र (भा. ८. ५. ७)। यह षष्ठ मन्वंतर का अधिपति एवं मनु था। चक्षु सर्वतेजस् तथा आकूति का यह पुत्र था। इसे नड्वला नामक पत्नी थी (भा. ४. १३. १५)। भागवत में अन्यत्र, इसके पिता चक्षु को ही मनु माना है।

यह अंग राजा का पुत्र था। यह पुलह ऋषि की शरण में गया। पुलह ने इसे उपदेश किया। इस उपदेश के अनुसार, इसने विरजा नदी के किनारे बारा साल तक घोर तपस्या की। तपस्या का प्रथम वर्ष वृक्ष के सूखे पत्ते खा कर यह रहा। पश्चात् केवल पानी पी कर तथा आखिर केवल वायुभक्षण कर के इसने तप किया। इस प्रकार बारह वर्ष तक इसने वाग्भव मंत्र का त्रिकाल जप किया। इससे देवी प्रसन्न हो गई। उसने इसे मन्वन्तराधिपत्य तथा दस उत्तम पुत्र दिये (दे. भा. १०. ९)।

मार्कंडेय पुराण में इसकी जीवनकथा अलग ढंग से दी गयी है (मार्क. ७३)। पहले जन्म में यह ब्रह्मदेव के चक्षुओं से उत्पन्न हुआ था। अतः इस जन्म में इसे चाक्षुष नाम प्राप्त हो गया। जन्मतः इसे पूर्वजन्म का ज्ञान था। अनमित्र राजा को यह भद्रा से उत्पन्न हुआ। जन्मते ही सात दिन के अंदर इसने हँस दिया। तब भद्रा ने इसे पूछा, 'तुम्हें हँसी कैसे आई?' तब इसने कहा, 'स्वार्थबुद्धि से एक मार्जारी तथा एक जातहारिणी मुझे खाने के लिये घात लगाये बैठी हैं। तुम भी उन्हीं के अनुसार, 'आगे यह मुझे सुख देगा,' इस स्वार्थबुद्धि से मेरा भरणपोषण कर रही हो।' तब 'मैं स्वार्थी नहीं हूँ,' यह दर्शाने के लिये, भद्रा इसे वहीं छोड़ कर चली गई। उस समय जातहारिणी इसे उठा कर ले गई।

उसी समय विक्रान्त की पत्नी हैमिनी प्रसूत हुई थी। उसकी शय्या पर जातहारिणी ने इसे रखा। विक्रान्त का पुत्र बोध नामक ब्राह्मण के घर ले जा रखा। बोध ब्राह्मण का पुत्र उसने खा लिया। यह जातहारिणी रोज इसी प्रकार पुत्रों की अदल-बदल कर के, क्रम से आनेवाला तीसरा पुत्र खा लेती थी।

विक्रान्त ने इसका नाम आनंद रखा। उपनयन होने के बाद इसे गुरु को सौंपा। गुरु ने इसे माँ को नमस्कार कर के आने के लिये कहा। तब संपूर्ण हकीकत बता कर इसने पूछा, 'मैं किस माता को प्रणाम करूं?'

बाद में स्वयं ही इसने विक्रान्त को कहा, 'तुम्हारा पुत्र विशाल ग्राम में बोध नामक ब्राह्मण के घर में है। उसे ले आओ। मैं वन में तपश्चर्या करने जा रहा हूँ' (विक्रान्त देखिये)। बाद में यह वन में जा कर तपश्चर्या करने लगा। ब्रह्मदेव ने आ कर इसे तपश्चर्या से पराङ्मुख किया, तथा कहा, 'तुम छठवें मनु बननेवाले हो, अतएव अपनी कर्तव्यपूर्ति के लिये सिद्ध रहो'। ब्रह्मदेव के कथनानुसार यह कार्यप्रवण हुआ। उग्र राजा की कन्या विदर्भा से इसने विवाह किया। उससे इसे दस पुत्र हुए (मनु देखिये)।

कूर्मावतार तथा समुद्रमंथन इसीके मन्वन्तर में हुए (भा. ८.५.७-१०)।

चाणक्य—एक विद्वान् ब्राह्मण। शिशुनागवंश का अंतिम राजा महानंदिन् था। इसके बाद शूद्रापुत्र नंद गद्दी पर आया। उसका तथा सुमाल्य आदि अन्य आठ नंदों का संहार इसने किया। मौर्य चंद्रगुप्त को गद्दी पर बैठाया। नंदो का राज्यकाल सौ वर्षों का था। उनमें से अंतिम बारह वर्षों में आठ नंदों का इसने संहार किया (भा. १२.१; विष्णु ४.२२–२४; वायु. ९९. मत्स्य. २७२; ब्रह्मांड. ३.७४)। इसे ही विष्णुगुप्त, कौटिल्य तथा कौटिलेय कहते हैं। इसका 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' एक सुप्रसिद्ध ग्रंथ है। (विष्णुगुप्त देखिये)।

चाणिक्य—एक राजर्षि। शुक्लतीर्थ पर तप करने के कारण, इसे सिद्धि प्राप्त हुई (पद्म. सृ. १९.१४)।

चाणूर—युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४.२२)।

२. कंस की सभा का एक मल्ल। कृष्ण धनुर्योग के लिये मथुरा आया, तब उसने इसका वध किया (म. स. परि. १. क्र. २१ पंक्ति. ८४६; भा. १०.४४)।

चातकि—भृगुकुल का गोत्रकार।

चालुर्मास्य—सवितृ नामक पाँचवें आदित्य एवं पृश्नी की संतानों में से एक (भा. ६.१८.१)।

चांद्रमसि—भृगुकुल का गोत्रकार।

चांधनायन—आनंदज का पैतृक नाम (वं. ब्रा.१.१)।

चामुंडा—दुर्गा देखिये।

चांपेय—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५८. कुं.)।

चायमान—अभ्यावर्तिन् का पैतृक नाम (ऋ. ६.२७. ५;८)।

चारु—कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चारुगुप्त—कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र।

चारुचंद्र—कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र।

चारुचित्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भारतीययुद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११.१९)।

चारुचित्रांगद—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चारुदेष्ण—विष्णु, भागवत, तथा महाभारत के मत में कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र। इसकी बहन चारुमती। यह भोज के हाथों मारा गया। (म. मौ. ४.४३)।

२. मद्रदेशीय राजपुत्र। इसकी पत्नी मंदोदरी।

चारुदेह—कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र (भा. १०. ६१.८)।

चारुनेत्रा—एक अप्सरा (म. स. १०.११)।

चारुपद—(सो. पूरु.) भागवत मत में मनस्यु का पुत्र। इसका नाम विष्णु में अभय, मत्स्य में पीतायुध तथा वायु में जयद दिया गया है।

चारुमती—कृष्ण तथा रुक्मिणी की कन्या। यह कृतवर्मन् के पुत्र बलि की भार्या थी।

चारुमत्स्य—विश्वामित्र का एक पुत्र (म. अनु. ७.५९ कुं.)।

चारुवर्मन्—दशार्णाधिपति। इसकी कन्या सुमना। वह दम की पत्नी थी (मार्क. १३०)।

चारुशीर्ष—इन्द्र का प्रियमित्र तथा एक राजर्षि। यह आलंब गोत्रज था। इसलिये इसका आलंबायन नाम प्रचलित हुआ। इसने गोकर्णक्षेत्र में सौ वर्षों तक उग्र तपस्या की। इसे सौ पुत्र हुए (म. अनु. १८.५)।

चारुहासिनी—कौंडिन्यपुर के भीम राजा की पत्नी (गणेश. १.१९.७)। रुक्मांगद इसका पुत्र था।

चार्वाक—नास्तिक जड़वाद का प्रातिनिधिक आचार्य। यह बृहस्पति का शिष्य था। बृहस्पतिसूत्र जडवाद का ग्रंथ है। इस ग्रंथ में केवल प्रत्यक्ष प्रमाण तथा ऐहिक सुख को ही परमश्रेय माना है।

तत्त्वज्ञान—चार्वाकप्रणीत 'नास्तिक जड़वाद' के अनुसार, केवल भौतिक जगत् ही सत्य है। पंचमहाभूतों में से पृथ्वी, जल, वायु तथा अग्नि चार भूत प्रत्यक्ष एवं सत्य हैं, आकाश अप्रत्यक्ष है। इन चार भूतों के योग से ही विश्व के समस्त पदार्थों की उत्पत्ति है। आत्मा पृथक नहीं है। चार भूतों के योग से ही चैतन्य उत्पन्न हो जाता है। मरने के बाद जीव नाम की कोई वस्तु शेष नहीं रह जाती। चतुर्भूतों का विलय हो जाता है। उनके योग से उत्पन्न चैतन्य नष्ट हो जाता है। अतः परलोक, स्वर्ग, नरक, ये सब कवि-कल्पनाएँ है। संसार का नियंत्रण करनेवाला राजा ही परमेश्वर है। धर्मकर्म धूर्त पुरोहितों का जीविकासाधन है। भस्मीभूत देह का पुनरागमन नहीं होता। अतः जब-तक जिये सुखपूर्वक जिये। ऋण कर के भी घृतपान करे।

इस मत के प्रतिपादकों में पुराण कश्यप, अजितकेशकंबलिन्, पकुध, काच्छायन आदि आचार्य प्रमुख थे।

इस विचारधारा के प्रतिपादन के लिये, चार्वाक के नाम का प्रातिनिधिक रूप से निर्देश किया जाता है। इस मत का प्रतिपादन करनेवाले चार्वाकदर्शनादि कई ग्रंथ भी उपलब्ध है।

एक सामान्य लोकमान्य मत चार्वाक प्रतिपादन करता है। अतः चार्वाकदर्शन को लोकायतदर्शन भी कहते हैं।

२. दुर्योधन का मित्र। ब्राह्मणों का अवमान करने से इसका नाश हुआ (म. शां. ३९-४०)। इसका पुनर्जन्म भी यहाँ दिया है।

चिकित्वत्—तुषित देवों में से एक।

चिकुर—एक सर्प। यह आर्यक का पुत्र तथा सुमुख का पिता था (म. उ. १०१.२४)।

चिक्लित—लक्ष्मीपुत्र।

चिक्षुर—महिषासुर का सेनापति। चिक्षुराक्ष इसका नामांतर है (महिषासुर देखिये)।

चित्ति—स्वायंभुव मन्वन्तर के अथर्वण ऋषि की भार्या। इसे दध्यच् नामक अश्वमुखी पुत्र था (भा. ४. १.४२)।

चित्र—एक सर्प (म. स. ९.८)।

२. दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। भारतीययुद्ध में प्रतिविंध्य ने इसका वध किया (म. क. १०.११)।

३. पांडवपक्षीय चेदि राजा। भारतीय युद्ध में कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५०)

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११२.३०)।

५. (सो. वृष्णि.) वृष्णि राजा का पुत्र। इसका नाम भागवत में चित्ररथ तथा वायु में चित्रक दिया है। वायु में इसे पृश्निपुत्र कहा है।

६. एक राजा। सोभरि के सूक्त में इसका उल्लेख है (ऋ. ८.२१.१७-१८)। यह सोभरि का आश्रयदाता था (ऋ. ८.२१.१८)।

७. द्रविड देश का एक राजा। यह त्रिवेणीसंगम पर स्नान करने से मुक्त हुआ (पद्म. उ. १२९; चित्रगुप्त देखिये)।

चित्र गार्ग्यायणि—एक क्षत्रिय नृप। आरुणि ने इससे ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया (कौ. उ. १.१)। चित्र गांग्यायणि इसीका नामान्तर है।

चित्र गौश्रायणि—एक आचार्य (सां. ब्रा. २३. ५)।

चित्रक—(सो. वृष्णि.) वृष्णिपुत्र (चित्र ५. देखिये)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

३. एक राजा। राजसूय यज्ञ में इसने पांडवों की सहायता की थी।

चित्रकुंडल—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चित्रकेतु—स्वायंभुव मन्वन्तर में वसिष्ठ ऋषि तथा ऊर्जा का पुत्र (भा. ४.१.४१)।

२. शूरसेन देश का राजा। इसको एक करोड़ स्त्रियाँ थीं पर वे सारी वन्ध्या थीं।

एक बार अंगिरस ऋषि इसके पास आये। तब इसकी प्रार्थनानुसार उन्होंने यज्ञ किया। उसमें आदित्य को हविर्भाग देने के बाद, इसकी पटरानी कृतद्युति ने हुतशेष भक्षण किया। इससे उसे पुत्र हुआ। परंतु यह उसकी सौतों को सहन न हो कर, उन्होंने बालक को विष दे दिया। इससे सब शोकाकुल हो गये। इतने में अंगिरस् ऋषि तथा नारद वहाँ प्रकट हुए। 'अनित्य के लिये शोक करना उचित नहीं है,' ऐसा उपदेश उन्होंने इसे किया। अपने दुख को सम्हाल कर, इसने पुत्र की उत्तरक्रिया की। पश्चात् नारद का उपदेश ले कर, यह तपस्या करने यमुना के किनारे गया।

दूसरे जन्म में यह विद्याधरों का राजा बना। एक बार यह विमान में घूम रहा था। तब इसने देखा कि, शंकर पार्वती को गोद में ले कर, सभा में बैठे हैं। यह देख कर इसने हँस दिया। तब पार्वती ने इसे, 'तुम राक्षस बनोगे' ऐसा शाप दिया। यह परम विष्णुभक्त था। इस कारण, शाप देने की शक्ति होते हुए भी, इसने पार्वती को उलटा शाप नहीं दिया। इसने उससे क्षमा माँगी, तथा यह वापस गया। पार्वती के शाप से यह वृत्रासुर बना (भा. ६. १४-१७)।

३. दशरथपुत्र लक्ष्मण के चन्द्रकेतु नामक पुत्र का नामांतर। यह चंद्रकांतनगर में रहता था (भा. ९.११. १२)।

४. (सो. नील.) पांचालदेश का राजा। यह द्रुपद का पुत्र था। द्रोणाचार्य ने इसके भाई वीरकेतु का वध किया। इसलिये क्रोधित हो कर इसने द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया। परंतु द्रोणाचार्य ने इसका भी वध किया (म. द्रो. १२२)। इसे सुकेतु नामक पुत्र था (म. आ. १८६; क. १८.२१)।

५. (सो. वृष्णि.) भागवत मतानुसार देवभाग एवं कंसा का ज्येष्ठ पुत्र।

६. (सो. वृष्णि.) श्रीकृष्ण तथा जांबवती का पुत्र।

७. गरुड का पुत्र (म. उ. ९९. १२)।

चित्रगंधा—गोकुल की एक गोपी। जाबालि ऋषि ने श्रीकृष्ण की उपासना की थी। इसलिये गोकुल के प्रचंड

नामक ग्वाले के घर उसे चित्रगंधा नामक गोपी का जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. आ. ७२)।

चित्रगु--श्रीकृष्ण का सत्या से उत्पन्न पुत्र।

चित्रगुप्त--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

२. पूर्वकाल में कायस्थ जाति में मित्र नामक गृहस्थ था। उसकी दो संतानें थीं। चित्र नामक पुत्र, तथा चित्रा नामक पुत्री। मित्र की मृत्यु के बाद, उसकी स्त्री सती हुई। कालांतर में चित्र एवं चित्रा प्रभासक्षेत्र में सूर्य की आराधना करने लगे। इसका ज्ञान देख कर, यमधर्म ने इसको अपने कार्यालय में लेखक नियुक्त किया। यही चित्रगुप्त नाम से प्रसिद्ध हुआ (स्कंद. ७.१.१३९)। इसने धर्म का रहस्य यम को बताया (म. अनु. १९३. १३ कुं.)। चित्रलेखा ने चित्रगुप्त को ऐश्वर्यसंपन्न बनाया। इस ऐश्वर्य को देख, वैवस्वत मन्वन्तर में विचित्रवस्तु निर्माण करनेवाला विश्वकर्मा इसका प्रतिस्पर्धी बन गया (भवि. प्रति. ४.१८)।

चित्रचाप--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया।

चित्रज्योति--प्रथम मरुद्गणों में से एक।

चित्रदर्शन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चित्रधर्मन्--क्षत्रिय राजा। भारतीययुद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था।

चित्रध्वज--चंद्रप्रभ नामक राजा का पुत्र। इसने कृष्ण को प्रिय लगनेवाली सुंदरी की उपासना की। इसलिये इसे सुंदर गोपकन्या का जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. पा. ७२)।

चित्रबर्ह--गरुडपुत्र।

चित्रबाण--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चित्रबाहु--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

२. कृष्ण का एक पुत्र। यह महारथी था (भा. १०. ९०.३३)।

चित्रभानु--(सो. वृष्णि.) कृष्ण का नाती। यह महारथी था (भा. १०.९०.३३)।

चित्रमहस् वासिष्ठ--सूक्तद्रष्टा (ऋ.१०.१२२)।

चित्रमुख--एक ऋषि। यह प्रथम वैश्य था। बाद में यह ब्राह्मण बना तथा ब्रह्मर्षि हुआ। इसने अपनी कन्या वसिष्ठपुत्र को दी थी (म. अनु. ५३. १७. कुं.)।

चित्ररथ--एक राजा। यह तुर्वशों का शत्रु था। इन्द्र ने सुदास के लिये सरयू नदी के तट पर अर्ण तथा चित्ररथ का वध किया (ऋ. ४.३०.१८)।

इसके लिये कापेय ने द्विरात्रयज्ञ किया। इस कारण इसके कुल को क्षत्रपतित्व प्राप्त हुआ, एवं अन्य लोग इसके आश्रित हुए। इससे इस कुल के श्रेष्ठत्व का पता चलता है (पं. ब्रा. २०.१२.५)। इसके कुल में ज्येष्ठ राजपुत्र सिंहासन पर बैठता था, एवं उसके भाई उसके अनुचर होते थे (शौनक देखिये)।

२. (सो. पुरु.) कुरु का पुत्र (म. आ. ८९.४४)।

३. मुनि तथा कश्यप के देवगंधर्व पुत्रों में से एक (अंगारपर्ण देखिये)। युधिष्ठिर ने यज्ञ किया, तब इसने उसे सौ अश्व दिये (म. स. ४८.२२)। चतुर्विध आश्रमों से किसी एक आश्रम का मनुष्य, तथा चातुर्वर्ण्यों में से किसी एक वर्ण का मनुष्य, जिन लक्षणों पर से पहचाना जा सकता है, वे लक्षण इसने युधिष्ठिर को बताये। उसी प्रकार उसे तापत्यसंवरणाख्यान बता कर, पांडव तापत्य किस प्रकार हैं, यह समझाया (म. आ. १५९-१६०)।

४. (स्वा. प्रिय.) गय को गयंती से उत्पन्न पुत्रों में से ज्येष्ठपुत्र। इसे ऊर्णा नामक स्त्री से सम्राट नामक पुत्र हुआ (भा. ५.१५.१४)।

५. वीरबाहु का पुत्र। कुश की कन्या हेमा के स्वयंवर के समय, इसने अन्य लोगों पर मोहनास्त्र डाल कर, हेमा का हरण किया। परंतु कन्या को चोरी से ले जाना ठीक नहीं, इसलिये इसने मोहनास्त्र वापस लिया। यह स्वयं नगर के बाहर खडा हुआ। तत्पश्चात् युद्ध हुआ, जिसमें इसने सब को पराजित किया। लव को यह पराजित न कर सका। तब पास ही खडे हो कर, युद्ध का अवलोकन करनेवाला वीरबाहु आगे बढा। उसने लव को मूर्च्छित किया। कुश वीरबाहू को बाँध लाया। राम ने उन्हें बताया कि, यह मेरा मित्र है, तथा उसे छुडाया। बाद में लव की मूर्च्छा उतरने पर, हेमा का चित्ररथ से विवाह करवाया। पश्चात् वीरबाहु को राम ने बडे सम्मान से बिदा किया (आ. रा. राज्य. २.३)।

६. (सू. निमि.) सुपार्श्व जनक का पुत्र। विष्णु मतानुसार इसे संजय कहा गया है। इसका क्षेमधी नामक पुत्र था।

७. (सो. अनु.) राजा रोमपाद का नामांतर। दशरथ इसका मित्र था। यह निपुत्रिक था, इसलिये दशरथ ने अपनी पुत्री शांता इसे दत्तक दी। इसने शांता ऋष्यशृंग ऋषि को दी। बडी युक्ति से उसे अपनी नगरी में निमंत्रित कर, स्वयं पुत्रकामेष्टि यज्ञ करवाया तथा दशरथ

से भी करने को कहा। इसी कारण दोनों राजाओं को पुत्र हुए। इसे चतुरंग नाम एक पुत्र हुआ (भा. ९.२३. ७-२०)।

८. दशरथ का सारथि।

९. (सो. क्रोष्टु.) भागवत मतानुसार रुशेकु तथा मत्स्य मतानुसार सौम्य का पुत्र (रुशेकु देखिये)।

१०. वृष्णिपुत्र (चित्र ५. देखिये)।

११. मार्तिकावतक देशीय राजा। यह जमदग्नि का समकालीन था। इसकी क्रीडा देखते रहने के कारण, रेणुका को नदी से घर वापस आने में देर हुई (म. व. ११६.६; जमदग्नि देखिये;)।

१२. भारतीययुद्ध में पांडवों के पक्ष का एक शैब्य राजा (म. द्रो. २२.५१)।

१३. (सो. नील.) द्रुपदपुत्र। द्रोणाचार्य ने इसका वध किया। इसे वीरकेतु, चित्रवर्मा तथा सुधन्वा नामक तीन भाई थे (म. द्रो. ९८.३७)।

१४. अंग देश का राजा। इसकी स्त्री प्रभावती, ऋषि देवशर्मा की रुचि नामक स्त्री की बहन थी। प्रभावती के घर होनेवाले विवाह समारंभ में अप्सराओं द्वारा नीचे डाले गये पुष्पों में से कुछ पुष्प, रुचि ने अपने बालों में लगाये। यह देख कर प्रभावती ने कहा, 'मुझे भी ऐसे पुष्प दो'। तब रुचि ने यह बात अपने पति को बताई। उसके पति देवशर्मा ने अपने शिष्य विपुल द्वारा ऐसे पुष्प मँगवाये (म. अनु. ७७. कुं.)।

१५. (सो. कुरु. भविष्य.) भविष्य मतानुसार निश्चक्र का पुत्र। मत्स्य मतानुसार भूरिपुत्र, भागवत मतानुसार उक्तपुत्र, वायु तथा विष्णु मतानुसार उष्णपुत्र। इसने एक हजार वर्ष राज्य किया।

चित्ररूप---रुद्रगणों में से एक।

चित्ररेखा---कृष्ण की प्रिय गोपी (पद्म. पा. ७७)।

२. बाणासुर के कुंभांड नामक प्रधान की कन्या। यह उषा की सखी थी। यह चित्रकला में कुशल थी। इसने कृष्ण के नाती अनिरुद्ध को योगसामर्थ्य से उठा लाया था। चित्रलेखा भी इसका नाम है; (भा. १०.६२.१४)।

चित्ररेफ---(स्वा. प्रिय.) मेधातिथि के सात पुत्रों में से एक। इसका खंड इसी के नाम से प्रसिद्ध है (भा. १०.६२.१४)।

चित्रलेखा---एक अप्सरा। पुरूरवस् ने केशिन् नामक दैत्य को मार कर इसे मुक्त किया था।

२. पार्वती की सखी। पूर्वजन्म में यह शतशृंग की कन्या थी। जन्म से ही इसे बकरी का मुख था।

इसके पूर्वजन्म में यह बकरी थी। महीसागर संगम में केवल इसका धड़ गिरा। इसके धड़ ने राजकुल में जन्म लिया। सिर अलग जा गिरने के कारण, वह उसी रूप में जन्मा। बाद में स्तंभतीर्थ पर इसने व्रत, उद्यापन आदि किया। सिर ढूँढ कर उसका भस्म कर संगम में डाला। स्कन्द के द्वारा बाँधा गया मंदिर जीर्ण हो गया था। उसे सोने का बना कर इसने उसका जीर्णोद्धार किया। तब शंकर ने इससे कहा, तुम्हारे 'कुमारी' नाम के कारण, मैं यहाँ "कुमारीश" के नाम से प्रसिद्ध होऊंगा। शंकर ने इसे महाकाल नामक सिद्ध से विवाह करने के लिये कहा। तदनंतर उससे विवाह कर के यह रुद्रलोक में गई। वहाँ पार्वती ने इसे चित्रलेखा नामक अपनी सखी बनायी (स्कन्द. १.२.३.९)।

३. चित्रगुप्त देखिये।

चित्रवती---वसु की पत्नी।

चित्रवर्मन्---(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११.१८-१९)।

२. (सो. नील.) द्रुपदपुत्र पांचाल। भारतीय युद्ध में द्रोण ने इसका वध किया (म. द्रो. ९८. ३७-४१)। इसका बंधु वीरकेतु।

३. पांचाल सुचित्र का पुत्र। भारतीययुद्ध में द्रोण ने इसका वध किया (म. क. ४.७८)।

४. सीमंतिनी देखिये।

चित्रवाहन---मणलूर नगर का पांड्य राजा। प्रभंजन इसका मूल (आदि) पुरुष था। मलयध्वज तथा प्रवीर इसके अन्य नाम हैं। अर्जुन तीर्थयात्रा करने जाने लगा। उस समय इसने अपनी कन्या चित्रांगदा, अर्जुन की इच्छानुसार, विवाहविधि से इसे दी। बाद में अर्जुन से उसे बभ्रुवाहन नामक पुत्र हुआ। उसी के हाथ में इसने राज्य-सूत्र दिये (म. आ. २०७.१४; स. परि. १. क्र. १५)। भारतीययुद्ध में अश्वत्थामा ने इसका वध किया (म. क. ५६.)।

चित्रवेगिक---एक सर्प (म. आ. ५२.१७)।

चित्रशिखंडिन्---मरीचि, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, तथा वसिष्ठ इन सप्तर्षियों के समुदाय के लिये यह संज्ञा दी गयी है (भवि. ब्राह्म. २२; म. शां. ३२२.२७)।

चित्रसेन--(सू. दिष्ट.) भागवत मतानुसार निरष्यंत-पुत्र। इसका पुत्र दक्ष।

२. देवसावर्णि मनु का पुत्र।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. क. ४.२२.)।

४. अभिसारपुरी का क्षत्रिय राजा। अर्जुन ने इसे पराजित किया (म. स. २४.१८)। यह दुर्योधन के पक्ष में था। श्रुतकर्मन् ने भारतीय युद्ध में इसका वध किया (म. क. १०.१४)।

५. पांडवों के पक्ष का राजा। भारतीययुद्ध में समुद्रसेन ने इसका वध किया (म. क. ४.२७)।

६. कर्णपुत्र। भारतीययुद्ध में नकुल के द्वारा यह मारा गया (म. श. ९.१९)।

७. द्रुपद का पुत्र। भारतीय युद्ध में कर्ण ने इसे मारा (म. क. ३२-३७)।

८. जरासंध का सेनापति (म. स. २०.३०)।

९. एक गंधर्व (म. स. ४.३१.)। विश्वावसु नामक गंधर्व का पुत्र। इसकी गणना देवर्षियों में होती है। इसने देवलोक में अर्जुन को गंधर्वविद्या सिखायी (म. व. ४५.६)। इन्द्र के कहने पर, इसने उर्वशी को अर्जुन के पास भेजा था (म. व. परि. १. क्र. ६.)। इंद्र के कहने पर, घोषयात्रा हेतु निकले दुर्योधन का अपमान करने के लिये, यह वहाँ गया (म. व. २२९.२८)। इसके साथ कर्ण का युद्ध हुआ। अंत में कर्ण पराजित हो कर भाग गया। इसने दुर्योधन को बाँध लिया, एवं उसे यह इंद्रलोक ले गया (म. व. २३१)। अंत में अर्जुन ने इसे पराजित किया (म. व. २३१-२३३)।

१०. एक राजा। इसने अनेक पाप किये थे। एक बार, एक बाघ का पीछा करते हुए, यह एक अरण्य में गया। तब कई अंत्यज स्त्रियों को इसने जन्माष्टमी का व्रत करते हुए देखा। राजा को भूख लगी थी। इसलिये उन स्त्रियों ने, नैवेद्य के लिये जो अन्न लाया था, उसमें से थोड़ा अन्न माँगा। उन्होंने इसे यह व्रत बताया तथा अन्न नहीं दिया। इससे इसकी पापबुद्धि नष्ट हो गई। इसने यह व्रत करने के, बाद इसका उद्धार हुआ (पद्म. ब्र. १३)।

चित्रसेना--एक अप्सरा। कश्यप की प्राधा से उत्पन्न कन्या।

चित्रा--(सो. वसु.) वायुमतानुसार वसुदेव की मदिरा से उत्पन्न पुत्री।

२. सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

३. चित्रगुप्त की स्त्री।

४. वाराणशी के सुवीर नामक वैश्य की स्त्री। इसने एक संन्यासी की सेवा की एवं उसे आदरपूर्वक भोजन कराया था (पद्म. भू. ८६; दिव्यादेवी देखिये)। इस कारण अगले जन्म में यह राजकन्या बन गयी।

५. एक अप्सरा (म. अनु. ५०.४७ कुं.)।

चित्राकुमारी--(सो. वसु.) वायुमतानुसार वसुदेव की पौरवी से उत्पन्न पुत्री।

चित्राक्ष--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११.१८)।

चित्रांग--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

२. एक योद्धा। राम ने अश्वमेध यज्ञ किया, तथा अश्व की रक्षा के लिये शत्रुघ्न को ससैन्य भेजा। चित्रांग ने उसकी सेना पर बाणवृष्टि की। पुष्कल तथा चित्रांग का घमासान युद्ध हुआ, जिसमें पुष्कल ने चित्रांग का वध किया (पद्म. पा. २७)।

चित्रांगद--एक गंधर्व। इसने शंतनु के पुत्र चित्रांगद का माया के द्वारा वध किया (म. आ. ९५.१०)।

२. सीमंतिनी नामक राजकन्या का पिता (शिव. उमा. २)।

३. (सो. कुरु.) शंतनु का सत्यवती से उत्पन्न पुत्र। शंतनु की मृत्यु के बाद यह गद्दी पर बैठा। परंतु बाद में चित्रांगद गंधर्व ने हिरण्वती नदी के किनारे तीन वर्ष युद्ध कर के इसका वध किया (म. आ. ९५)। इसे संतति न होने के कारण, इसके बाद विचित्रवीर्य राजगद्दी पर बैठा।

४. कलिंगदेशीय राजपूर नगरी का राजा (म. आ. १७७.१९)। दुर्योधन ने इसकी कन्या का हरण किया था (म. शां ४.२)।

५. द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित एक राजा। यह दशार्ण देश का राजा था। अर्जुन ने इसे पराजित किया (म. आश्व. ८६.६)।

चित्रांगदा--चित्रवाहन राजा की कन्या। अर्जुन की भार्या। इसका पुत्र बभ्रुवाहन (चित्रवाहन देखिये)। इसने पांडवों के राजसूय यज्ञ के लिये करभार दिया था (म. स. परि. १. क्र. १५)। यह बभ्रुवाहनसहित याग के लिये हस्तिनापुर गयी थी (म. आश्व. ८९.२५)। पांडवों के महाप्रस्थान के समय, यह अपने पिता के घर वापस आ गयी।

२. कापोत देखिये।

चित्रायुध—पांचाल राजा। द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित राजाओं में से यह एक था (म. आ. १७७.१०.)। भारतीय युद्ध में कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०. ५०)। यह महारथी था (म. उ. १६८.१६)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११.१८)।

चित्राश्व—शाल्व देशाधिपति द्युमत्सेन का पुत्र। सावित्री के पति सत्यवान् का यह नामांतर था। बचपन में इसे अश्व बहुत प्रिय थे। यह मिट्टी के अश्व बनाता था, उनके चित्र खींचता था। अतः इसका नाम चित्राश्व पड़ा (म. व. २७८.१३)।

२. एक राजर्षि (म. अनु. १६५.४९)।

चित्रोपचित्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११. १८)।

चिदि—(सो. क्रोष्टु.) मत्स्य एवं वायु मत में कौशिक का पुत्र। विष्णु एवं पद्म में इसे चेदि कहा गया है। भागवत में इसे उशिक का पुत्र कहा गया है। इसके देश का नाम चेदि था। इसके वंशज चैद्य या चेदि कहलाते थे (भा. ९.२४.२)।

चिबिलक—(आंध्र. भविष्य.) लंबोदर राजा का पुत्र। विष्णु में इसका नाम दिविलक, तथा मत्स्य में अपीतक दिया है। इसका पुत्र मेघस्वाति।

चिरकारिन् वा चिरकारिक—मेधातिथि गौतम के दो पुत्रों में से कनिष्ठ। इसकी माता अहल्या। गौतम ऋषि को अहल्या के व्यभिचार का पता चला। तब उसने इसे मातृवध करने के लिये कहा। परंतु चिरकारी अपने नाम के अनुसार दीर्घसूत्री था। यह विचार करते बैठा रहा। बाद में, पत्नी का वध करने के लिये कहने पर, गौतम ऋषि को पश्चाताप हुआ। वह पत्नी के पास आया। चिरकारी शस्त्र ले कर मातृवध के लिये खड़ा था। पिता को देखते ही शस्त्र नीचे रख कर, इसने पिता को नमन किया। विचारी होने के कारण, इसके हाथों हत्या नहीं हुई (म. शां. २५८; स्कंद. १.२.६)।

चिरांतक—गरुडपुत्र (म. उ. ९९.१३)।

चीरवासस्—एक यक्ष (म. स. १०.१७)।

२. दुर्योधनपक्षीय एक राजा (म. आ. ६१.५६)। चीरवास इसीका पाठभेद है।

चुमुरि—एक अनार्य राजा। यह तथा इसका मित्र धुनि, दभीति ऋषि को सताते थे। दभीति के कहने पर, इंद्र ने इन दोनों का वध किया (ऋ. १.११२.२३)। अन्यत्र, शम्बर, पिप्रु तथा शुष्ण के साथ इन दोनों का इंद्रद्वारा पराभूत होने का, तथा इनके दुर्गों को नष्ट करने का उल्लेख है (ऋ. ६.१८.८)।

चूडाला—शिखिध्वज राजा की भार्या। यह आत्मज्ञानी थी। इसका पति राज्य छोड़ कर अरण्य में चला गया। उसको आत्मज्ञान का मार्ग दर्शा कर, इसने पुनः राज्य करने के लिये प्रेरित किया (यो. वा.७७-१११)।

चूर्णनाभ—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

चूल भागवित्ति—मधुप पैंग्य का शिष्य (बृ. उ. ६.३.९-१०)। माध्यंदिन आवृत्ति में निर्दिष्ट चूड इसीका पाठभेद है।

चूलि—एक ऋषि। यह तपस्या कर रहा था। सोमदा नामक गंधर्वी इसकी सेवा कर रही थी। तपश्चर्या पूर्ण होने के बाद, गंधर्वी ने पुत्रप्राप्ति की इच्छा दर्शाई। इसने एक मानसपुत्र निर्माण कर के उसे दिया। उसका नाम ब्रह्मदत्त (वा. रा. आ. ३३)।

चेकितान—वृष्णिवंशीय क्षत्रिय राजा। यह पांडवों के पक्ष में था (म. स. ४९.९; उ. २५.२; ५६.२;१९६. २३; भी. १९.१४)। यह द्रौपदीस्वयंवर में गया था। भारतीययुद्ध में भी यह था। इसके रथ के अश्व कुछ पीलाहट लिये थे। सुशर्मा के साथ, काफी देर तक, इसका युद्ध हुआ। द्रोण ने इसके सारथी पार्ष्णि को मार डाला (म. द्रो. १२५)। भारतीययुद्ध में यह दुर्योधन के द्वारा मारा गया (म. श. ११.३१)।

२. एक ब्राह्मण। यह कृषि करता था। एक दिन यह खेती का काम कर, पसीने से लथपथ हो घर आया। पसीना न पोंछ कर ही जल्दी में इसने शंकर की पूजा कर, नैवेद्य अर्पण किया। मरणोपरांत यह शिवलोक गया। वीरभद्र ने इसे शाप दिया, 'पसीना न पोंछने के पहले ही शिव पूजन किया, इसलिये तुम्हारे शरीर से हमेशा पसीने की धाराएँ बहती रहेंगी। तुम्हें स्वेदगण नाम मिलेगा' (पद्म. पा. ११७)।

चेदि—(सो. यदु. रोमपाद.) उशिक का पुत्र। यह विदर्भपुत्र रोमपाद के वंश में से एक था। इससे चैद्यनृप पैदा हुएँ। (भा. ९. २४. १-२; चिदि, शिशुपाल तथा कशु चैद्य देखिये)। चेदि देश विंध्य के पश्चिम भाग में था। इस देश के नृप महाभारतादि ग्रंथों में प्रसिद्ध हैं।

चेदिप—(सो. ऋक्ष.) उपरिचर वसु का पुत्र एवं चेदि देश का राजा (भा. ९. २२. ६)।

चेनातकि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

चेलक शांडिल्यायन—एक ऋषि। एक विशेष उपासना के प्रकार का यह ज्ञाता था (श. ब्रा. १०. ४. ५. ३)।

चैकितानेय—सामविद्या का एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १. ३७. ७; ४२. १; २. ५२)। इसका सही नाम वसिष्ठ चैकितानेय था। साम के बारे में लिखते समय, इसका नामनिर्देश प्राप्त है (बृ. उ. १. ३. २४)। षड्विंश ब्राह्मण (४१), तथा वंशब्राह्मण में भी इसका उल्लेख आया है (२)। बहुत सारे ग्रंथों में इसका निर्देश चैकितानेय नाम से प्राप्त है। शंकराचार्य ने चैकितानेय का अर्थ, चैकितान का पुत्र लगाया है। परन्तु वंशब्राह्मण के भाष्य में, चैकितानेय एक विशेष नाम माना गया है। यह वासिष्ठ आरैहण्य का शिष्य था। ब्रह्मदत्त का यह पैतृक नाम था।

चैकितायन—दाल्भ्य का पैतृक नाम (छां. उ. १. ८. १)

चैत्य—मरुद्गणों के प्रथम गणों में से एक।

चैत्र—यज्ञसेन का पैतृक नाम (का. सं. २१. ४)।

२. स्वारोचिष मन्वंतर के मनु का पुत्र।

चैत्ररथ—चित्ररथ राजा का पुत्र। भारतीययुद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था।

चैत्रसेनि—चित्रसेन पांचाल का पुत्र। यह पांडववंशीय था तथा भारतीययुद्ध में पांडवों के पक्ष में था।

चैत्रा—ज्यामघ राजा की भार्या तथा शिबि राजा की कन्या। शैब्या इसीका नामान्तर है।

चैत्रायण—अत्रिकुल का गोत्रकार।

चैत्रियायण—यज्ञसेन का वंशज। इसने छंदोभिद् नामक इष्टकों की चिति से, पशुओं की प्राप्ति कर ली (तै. सं. ५.३.८.१)।

चैद्य—(सो. अज.) मत्स्य मत में मैत्रेयपुत्र।

चैद्योपरिचर वसु—(सो. ऋक्ष.) उपरिचर वसु देखिये।

२. शिशुपाल को चैद्य कहते थे (कशु तथा चेदि देखिये।

चैल—व्यास की सामशिष्यपरंपरा के वायु मतानुसार शंगीपुत्र का शिष्य।

चैलकि—जीवल का पैतृक नाम (श. ब्रा. २.३.१. ३४)।

चोल—द्रमिड देश का क्षत्रिय राजा (म. स. परि. १. क्र. १५, पंक्ति ५६)।

२. कांतिपुर का राजा। अनंतशयन में बड़े ठाटबाट से इसने श्रीरंग की पूजा की। तदनंतर विष्णुदास नामक ब्राह्मण ने तुलसीपत्र से श्रीरंग की बड़ी भक्ति से पूजा की। एक गरीब ब्राह्मण की यह मजाल देख कर, राजा बड़ा ही क्रोधित हुआ।

पश्चात् इन दोनों ने तय किया कि, जो श्रेष्ठ विष्णुभक्त होगा, वह पहले वैकुंठ जावेगा। तदनंतर इसने दानदक्षिणा, यज्ञयाग आदि प्रारंभ किया। विष्णुदास ने माघ तथा कार्तिक व्रत, तुलसीवन का पोषण, एकादशी, द्वादशाक्षर मंत्र, उसी प्रकार विष्णुस्मरण, पूजन, नृत्य, गायन, तथा जागरण यह क्रम प्रारंभ किया। अन्त में इस भक्ति प्रभाव से विष्णुदास इसके पहले वैकुंठ गया। तब इसे उपरति हो कर, भक्ति छोड़ बाकी सब तुच्छ हैं, यह इसने जान लिया। इसने यज्ञ में छलांग लगाई। परंतु विष्णु ने इसे झेल लिया। विष्णु इसे स्वर्ग ले गया। चोल तथा विष्णुदास को स्वर्ग में सुशील तथा पुण्यशील ये नये नाम प्राप्त हो गये। वे ईश्वर के द्वारपाल बने। राज्यत्याग के बाद इसने अपने भतीजे को गद्दी पर बैठाया। (पद्म. उ. १०८.१०९; स्कंद. २.४.२६-२७)।

चौक्षि—भृगुकुल का गोत्रकार।

चौलि—वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

च्यवतान मारुताश्व—एक राजा। यह मरुताश्व का वंशज था। ध्वन्य, पुरुकुत्स तथा यह संवरण के आश्रयदाता थे (ऋ. ५. ३३. ९)।

च्यवन—(सो. नील) एक राजा। दिवोदास को मित्रेयु नामक एक पुत्र था। च्यवन उसका पुत्र है। इस को बाद में सुदास नामक एक पुत्र हुआ (भा. ९. २२. १)।

२. (सो. ऋक्ष.) भागवत, विष्णु तथा वायु के मत में सुहोत्र का पुत्र, तथा मत्स्य के मत में सुधन्वन् का पुत्र।

३. गोकर्ण नामक शिवावतार का शिष्य।

४. एक धर्मशास्त्रकार। अपरार्क तथा मिताक्षरा ग्रंथों में इसके धर्मशास्त्र का उल्लेख प्राप्त है (अप. १. २०७. ३; २६४-२६५; मिता. ३. ३०; ३. २९२)। निम्नलिखित विषयों पर इसने रचे काफी सूत्र तथा

श्लोकों का उद्धरण, इन दो ग्रंथो में दिया हैं:—(१) गोदान के समय कहे जानेवाले मंत्र, (२) कुत्ता, चण्डाल, प्रेत, चिताधूम, मद्य, मद्यपात्र आदि अस्पर्श वस्तुओं का स्पर्श होने पर किये जानेवाला प्रायश्चित्तविधी, (३) गोवध का प्रायश्चित्तविधी।

भास्करसंहिता के अन्तर्गत जीवदानतंत्र का यह रचयिता है (ब्रह्मवै. २. १६)। हेमाद्रि, माधवाचार्य, एवं मदनपारिजात इन तीन ग्रंथों में इसके आधार लिये गये हैं।

च्यवन भार्गव—एक प्राचीन ऋषि। ऋग्वेद में इसे एक वृद्ध तथा जराक्रान्त व्यक्ति के रूप में दिखाया गया है। इसे अश्वियों ने पुनः युवावस्था तथा शक्ति प्रदान की, तथा इसे अपनी पत्नी के लिये स्वीकार्य तथा कन्याओं का पति बना दिया (ऋ. १.११२.६; १०; ११७.१३; ११८.६; ५.७४.५; ७.६८.६; १०.३९.४)।

ऋग्वेद में सर्वत्र इसे च्यवान कहा गया है। च्यवन नाम से इसका निर्देश, ऋग्वेद के अतिरिक्त अन्य सभी वैदिक ग्रंथों में, निरुक्त में तथा महाकाव्य में मिलता है। (नि. ४.१९)। सर्वानुक्रमणी में इसे भार्गव कहा है (ऋ. १०.१९)। यह भृगु का पुत्र था।

ब्राह्मणों में इसे दाधीच कहा गया है (श. ब्रा. ४.१.५; पं. ब्रा. १४.६.१०)। ग्राम के बाहर बैठे हुए, भयानक आकृतिवाले, तथा अत्यंत वृद्ध च्यवन को, बालकों ने पत्थर मारे, आदि कथाएँ पुराणों के समान ब्राह्मणों में भी प्राप्य है। यह सामों का द्रष्टा भी था (पं. ब्रा. १३.५.१२; १९.३.६)।

ऋग्वेद में, इसे अश्विनों का मित्र, तथा इंद्र एवं उसका एक उपासक पक्थ तुर्वयाण का विरोधक दर्शाया है (ऋ. १०.६१.१-३)। भृगु का अन्य पुत्र विदन्वत् ने इसे इंद्र के विरुद्ध सहायता की थी (जै. ब्रा. ४.१.५.१३)। आगे चल कर, इंद्र से इसकी संधि हो गई (ऋ. ८.२१.४)।

यह भृगु ऋषि तथा पुलोमा का पुत्र था। पुलोमा के उदर में भृगुवीर्य से गर्भसंभव हुआ। एक बार, भृगु नदी पर स्नान करने गया। तब पुलोम नामक राक्षस ने पुलोमा का हरण किया। कई ग्रंथों में, इस राक्षस का नाम दमन भी दिया गया है (पद्म. पा. १४)।

भय के कारण, मार्ग में ही पुलोमा प्रसूत हो गई। अतः इस पुत्र को च्यवन नाम प्राप्त हो गया। च्यवन के दिव्यतेज से पुलोम जल कर भस्म हो गया। बालक को ले कर पुलोमा भृगुआश्रम में वापस आई (म. आ. ४-६; ६०.४४)।

बडा होने पर, च्यवन वेदवेदांगों में निष्णात बना। पश्चात् यह कठोर तपस्या करने लगा। तपश्चर्या करते समय, इसके शरीर पर एक बड़ा वल्मीक तैय्यार हो गया। इसी वन में, राजा शर्याति अपने परिवार के साथ क्रीडा करने आया। उसकी रूपवती कन्या सुकन्या अपनी सखियों के साथ घूमते घूमते, उस वल्मीक के पास आई। उसने देखा कि, वल्मीक के अंदर कुछ चमक रहा है। चमकनेवाला पदार्थ क्या है, यह देखने के लिये उसने काँटों से उसे टोका। इससे च्यवन ऋषि की आँखें फूट गईं। अत्यंत संतप्त हो कर, इसने संपूर्णसेना समेत राजा का मलमूत्रावरोध कर दिया। राजा हाथ जोड कर इसकी शरण में आया। च्यवन ने कहा, 'तुम्हारी कन्या मुझे दो'। राजा ने यह मान्य किया। सुकन्या का वृद्ध च्यवन से विवाह हो गया (म. आ. ९८)।

बाद में उसी वन में, सुकन्या अपने पतिसमवेत वास करने लगी। एक दिन अश्विनीकुमारों ने उसे देखा। उसने सुकन्या से कहा, 'तुम हमारे साथ चलो'। तब इसने अपने पातिव्रत्य से अश्वियों को आश्चर्यचकित कर दिया। सुकन्या ने कहा, 'मेरे पति को यौवन प्रदान करो'। अश्विनीकुमारों के प्रसाद से च्यवन तरुण हुआ। एक तालाब में डुबकी लगाने के कारण, च्यवन पुनः युवा हो गया, ऐसी कथा ब्राह्मणों में दी गयी है (श. ब्रा. ४.१.५.१)।

अश्वियों का इस उपकार का बदला चुकाने के लिये, च्यवन अपने श्वसुर के गृह में गया। शर्याति राजा के हाथ से एक विशाल यज्ञ करवा कर, अश्विनीकुमारों को यह हविर्भाग देने लगा। परंतु अश्वियों को हविर्भाग मिलना, इंद्र को अच्छा न लगा। उसने इसे मारने के लिये वज्र उठाया। च्यवन ने इन्द्र के नाशार्थ मद नामक राक्षस उत्पन्न किया। उसे देखते ही भयभीत हो कर, इन्द्र इसे शरण आया। इसी समय से, अश्विनीकुमारों को यज्ञ में हविर्भाग मिलने लगा (म. व. १२१-१२५; अनु. २६१ कुं; भा. ९.३; दे. भा. ७.३-७)।

एक बार प्रयागक्षेत्र में च्यवन ने उदवासव्रत का प्रारंभ किया। रातदिन यह जल में जा कर बैठता था। सब मछलियाँ इसके आसपास एकत्रित हो जाती थीं। एक बार कुछ मछुओं ने मछलियाँ पकड़ने के लिये जाल लगाया। तब उसमें मछलियों के साथ, च्यवन ऋषि भी

पकडा गया। मछुएँ घबरा कर नहुष राजा के पास गये। राजा ने ऋषि की पूजा की। कहा, 'आपको जो चाहिये आप मुझ से माँग लें'। तब च्यवन ने कहा, 'मेरी योग्य कीमत आँक कर इन मछुओं को दे दे'। अपना संपूर्ण राज्य देने के लिये राजा तैय्यार हो गया। फिर भी च्यवन की योग्य कीमत आँकी नहीं गई। तब गविजात नामक ऋषि ने राजा को इसे गोधन देने के लिये कहा। राजा-द्वारा गायें दी जाने पर, यह अत्यंत संतुष्ट हुआ। पश्चात् इसने नहुष को गोधन का महत्त्व समझाया (म. अनु. ८५-८७)।

कुशिकवंश के कारण, अपने वंश में भिन्नजातित्व का दोष उत्पन्न होगा, यह इसने तपःसामर्थ्य से जान लिया। उस वंश का नाश करने के उद्देश्य से, यह कुशिक राजा के पास गया। उससे कहा, 'हे राजा! मैं तपश्चर्या करना चाहता हूँ। इसलिये तुम अपनी भार्यासमवेत अहर्निश मेरी सेवा करो'। राजा ने ऋषि का यह कहना मान्य किया। तदनंतर राजा को इसने भोजन लाने को कहा। भोजन लाते ही, च्यवन ने उस भोजन को जला कर भस्म कर दिया। तदनंतर यह राजपर्यंक पर निद्राधीन हो गया। राजा अपनी भार्या सहवर्तमान इसके पैर दबाने लगा। इसप्रकार एक ही करवट पर, यह २१ दिन तक सोया रहा। तब तक बिना कुछ खाये पीये, राजा इसके पैर दबाते बैठ गया।

२१ दिन के बाद नींद से जागृत हो कर, यह यकायक भागने लगा। क्षण में यह दिखता था, क्षण में अदृश्य हो जाता था। ऐसी स्थिति में भी, राजा इसके पीछे भागता रहा। यह अदृश्य होते ही, राजा राजमहल में आया। उसने देखा, च्यवन सो रहा है।

कुछ समय के बाद, यह जागृत हुआ। किंतु दूसरी करवट ले कर पुनः २१ दिन तक सोया। बाद में जागृत होते ही, च्यवन ने रथ को घोड़ों के बदले एक ओर कुशिक को तथा दूसरी ओर उसकी पत्नी को जोत लिया। स्वयं हाथ में चाबुक ले कर, उन्हें मारते हुए यह अरण्य से रथ हाँकने लगा। यह सब च्यवन ने इसी उद्देश्य से किया कि, त्रस्त हो कर कुशिक उसका तिरस्कार करें। तब इस निमित्त को ले कर, यह उसे जला कर भस्म कर सके। इसी उद्देश्य से इसने कई प्रकारों से कुशिक को अत्यधिक कष्ट दिये। पर कुछ फायदा नहीं हुआ। अन्त में प्रसन्न हो कर इसने उस राजा को वर दिया, 'तुम्हारे कुल में ब्राह्मण उत्पन्न होगा' (म. अनु. ८७-९०)।

इसे मनुपुत्री आरुषी से और्व नामक एक पुत्र हुआ (म. आ. ४-६)। इसका आश्रम गया में था (वायु. १०८.७६)। च्यवन एक उत्कृष्ट वक्ता था, तथा सप्तर्षियों में से एक था (म. अनु. ८५)। इसे प्रमति नामक एक पुत्र था (म. आ. ८.२)। यह भृगुगोत्र का एक प्रवर भी था। यह ऋषि तथा मंत्रकार था (भार्गव देखिये)। इसे कांचन ऐसा नामांतर था (वा. रा. उ. ६६.१७)।

च्यवान––च्यवन भार्गव ऋषि का नामांतर। ऋग्वेद में सर्वत्र यही रूप निर्दिष्ट है (च्यवन भार्गव देखिये)।

छ

छगल––दंडीमुंडीश्वर नामक शिवावतार का शिष्य।

छगलिन्––कृष्णयजुर्वेद का एक शाखाप्रवर्तक। वैशंपायनशिष्य कलापिन् का यह शिष्य था। पाणिनि ने इसका निर्देश किया है (पा. सू. ४.३.१०९)। चार अप्रसिद्ध उपनिषदों में छागलेयोपनिषद् प्रसिद्ध हुआ है (डॉ. श्री. कृ. बेलवलकर स. १९२५)। 'छगलिन् प्रोक्त' ब्राह्मण ग्रंथ अध्ययन करनेवाले को छागलेयिन कहते थे।

छंदोगमाहकि––ब्रह्मवृद्धि का पैतृक नाम।

छंदोगेय––अत्रिकुल का गोत्रकार।

छंदोदेव––मतंग को इंद्र की कृपा से मिला हुआ नाम (मतंग देखिये)।

छाया––संज्ञा को सूर्य का तेज सहन नहीं होता था, इसलिये उसने अपनी ही प्रतिकृतिस्वरूप यह स्त्री निर्माण की। अपने पति की सेवा तथा बच्चों के लालन-पालन करने के लिये इसे रखा। तदनंतर इसे तीन पुत्र हुए। इससे इसमें सापत्नभाव बढ़ गया। यह श्राद्धदेव,

यम तथा यमुना इन संज्ञापुत्रों को सापत्नभाव से देखने लगी। यम को यह सहन नहीं हुआ। उसने छाया पर लत्ताप्रहार किया। तब इसने उसे शाप दिया। इस शाप से, सूर्य ने पहचान लिया कि, यह कौन है। तब वह संज्ञा के पास चला गया (विवस्वत्, संज्ञा, तथा यम देखिये)।

ज

जघन---धूम्राक्ष का पुत्र (गणेश. २.३१.१२)।

जंगारि---विश्वामित्रकुल का गोत्रकार।

जंघ---रावण के पक्ष का एक राक्षस।

जंघाबंधु---युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१४)।

जंघारि---विश्वामित्र का पुत्र।

जटायु---गरुड जाति का एक मानव। विनता-पुत्र *अरुण को श्येनी से उत्पन्न दो पुत्रों में से यह एक था* (म. आ. ६०.६७; वा. रा. अर. १४.३; ३३)। यह एक राजा था, जो योग्य रीति से अपनी प्रजा का पालन करता था (वा. रा. अर. ५०. २०)। राम ने जब इसे सर्वप्रथम देखा, तब उसे लगा, यह कोई राक्षस होगा। आगे चल कर, राम एवं सीता को यह गृध्रस्वरूप में दिखाई दिया। राम ने पूछा, 'तुम कौन हो?' अपना परिचय दे कर इसने कहा, 'रामलक्ष्मण जब बाहर जायेंगे तब मैं सीता की रक्षा करूँगा' (वा. रा. अर. १४.३; ३३–३४; ५०)। यह हितचिंतक है, यों बाद में प्रतीत होने लगा।

यह दशरथ का मित्र था (म.व.२६३.१;वा. रा. अर. १४.३)। अपनी स्नुषा के समान सीता को, रावण की गोद में देख कर इसे अत्यंत क्रोध आया। यह रावण से युद्ध करने के लिये तैय्यार हो गया। रावण सीता को ले जा रहा था, तब इसने उसे उपदेश किया। उपदेश में रावण को वेदतत्त्व बता कर, परस्त्रीअपहार के लिये इसने उसका निषेध किया (वा. रा. अर. ५०)। इसने रावण से कहा, 'तुम चुपचाप सीता को छोड दो, अन्यथा परिणाम अच्छा नहीं होगा'। परंतु रावण ने यह नहीं माना। तब दोनों में युद्ध छिडका। इसने अपने तीक्ष्ण नखों से, तथा चोंच से रावण को घायल किया। रक्त से लथपथ कर दिया। रावण के द्वारा छोडे गये सब बाण इसने पंखों से उडा दिये। अंत में रावण ने इसके पंख तोड कर, इसे मृतप्राय कर दिया।

इस प्रकार, जटायु को हतबल कर, सीता को रावण ले गया। सीता को खोजते हुए रामलक्ष्मण वहाँ आये। सीता का हरण रावण ने किया, यह वृत्त जटायु ने राम को बताया। इसने कहा, 'चूंकि सीता का हरण विन्द मुहूर्त पर किया गया है, अतएव वह तुम्हें पुनः अवश्य प्राप्त होगी (वा. रा. अर. ६८.१२)'। राम ने इसे पूज्य मान कर आलिंगन किया (वा. रा. अर. ६७. २३; ६८.२६–३६)। तदनंतर इसने प्राणत्याग किया। रामलक्ष्मण ने इसे पूज्य मान कर इसकी उत्तरक्रिया की। इस समय इसकी आयु साठ हजार वर्षों की थी (म. व. २७९; आ. रा. सार. ७; वा. रा. अर. ५०–५२; ६८.२६–३६)।

जटायु की मृत्युवार्ता ज्ञात होते ही, अंगदादि वानरों की सहायता से, संपाति वहाँ आया। उसने जटायु का तर्पण किया (वा. रा. कि. ५८.२३–४५)। संपाति इसका बडा भाई था (वा.रा. कि.५३.२३;म. आ. ६५)। इसे काक, गृध्र तथा कर्णिक नामक तीन पुत्र थे (ब्रह्मांड ३.७-४४८)। स्वयं जटायु तथा संपाति में, वे मनुष्यों से भिन्न है, ऐसी भावना नहीं थी (वा. रा. कि. ५६.४)।

जटासुर---एक राक्षस। वनवास के समय पांडव एक बार बदरिकाश्रम आये। तब ब्राह्मण के वेष में यह राक्षस उनके पास रह कर, अपने तप की प्रशंसा करता रहा। पांडवों के शस्त्रास्त्र तथा द्रौपदी का हरण करने का यह सोचता था। परंतु शक्तिशाली भीम के सामने इसकी चाल नही चलती थी। भीम पहचान गया था कि, यह अवश्य कोई राक्षस है।

एक दिन भीम अरण्य में गया था। अर्जुन इंद्रलोक गया था। यह अवसर देख, द्रौपदी, धर्म, नकुल

तथा सहदेव को ले कर, यह भागने लगा। सहदेव ने अपने आप को मुक्त कर लिया। धर्मराज ने इसे बहुत उपदेश दिया परंतु इसने एक न सुनी। इतने में गदाधारी भीम वहाँ आ पहुँचा। उसने इससे मल्लयुद्ध कर के इसका वध किया (म. व. १५४)। इसे अलंबुस नामक पुत्र था (म. द्रो. १४९.५-९)।

२. मद्राधिपति। धर्मराज की मयसभा में यह एक सदस्य था (म. स. ४.२१.)।

जटिन्—पातालस्थित एक नाग। रावण ने इसपर विजय प्राप्त की थी (वा. रा. यु. ७)।

जटिल—एक ब्रह्मचारी। शंकर ने जटिल नामक ब्रह्मचारी का रूप धारण किया था।

दक्षयज्ञ में सती के देहत्याग के बाद, हिमालय को मैना से पार्वती उत्पन्न हुई। वह शंकर के लिये तपस्या कर रही थी। 'जटिल ब्रह्मचारी' का वेष धारण कर शंकर वहाँ आया। इसने शंकर की बहुत निंदा की। यह और भी निंदा करेगा, यह सोच कर पार्वती ने अपनी सखी विजया के द्वारा, इसको भगाने की सोची। इतनेमें शंकर अपने असली रूप में प्रकट हुआ। कुमारसंभव के पंचम सर्ग से इस कथा का काफी साम्य है। इसे ब्रह्मचारिन् भी कहा गया है (शिव. शत. ८४)।

जटिला—गौतम के वंश की एक स्त्री। सप्तर्षि इसके पति थे (म. अ. १८८. १४)।

जटीमालिन्—एक शिवावतार। वाराह कल्प के वैवस्वत मन्वंतर में उन्नीसवीं चौखट में हिमालय पर यह शिवावतार हुआ। वहाँ, इसके क्रमानुसार हिरण्यनामन्, कौशल्य, लोकाक्षिन्, प्रधिमि ये चार पुत्र हुएँ (शिव. शत. ५)।

जड—जनस्थान का कौशिकगोत्री दुराचारी ब्राह्मण। यह एक बार व्यापार करने गया, तब चोरों ने इसके प्राण ले लिये। पूर्वजन्म के पापों के कारण, यह पिशाच्च हुआ। इसका पुत्र अत्यंत सदाचारी था। पिता का उत्तरकार्य करने के लिये वह काशी जाने निकला। वह उसी स्थान पर आया, जहाँ उसका पिता झाड पर पिशाच्चअवस्था में रहता था। उसने गीता के तीसरे अध्याय का पाठ किया। उसे श्रवण कर, यह मुक्त हुआ (पद्म. उ. १७७)। मार्कंडेय पुराण में भी एक जड का उल्लेख है।

जतृण—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

जन—(सो. पूरु.) अजमीढ एवं केशिनी का पुत्र (म. आ. ८९. २८)।

जन शार्कराक्ष्य—एक ऋषि। अश्वपति कैकेय, अरुण औपवेशि तथा उसके पुत्र उद्दालक आरुणि का यह समकालीन रहा होगा। उद्दालक आरुणि के पास, यह तत्वज्ञान सीखने के लिये गया था (श. ब्रा. १०. ६. १. १; छां. उ. ५. ११. १; १५. १)।

जनक—निमि या विदेहवंश का कुलनाम। इनकी वंशावलि भी पुराणों में कई स्थानों पर मिलती है। (ब्रह्मांड. ३. ६४; वायु. ८९; भा. ९. १३; विष्णु. ४. ४; गरुड. १. १३८)। सूर्यवंशीय इक्ष्वाकुपुत्र निमि से निकली हुई यह एक वंशशाखा है। यह वंशावलि अनेक स्थानों पर मिलती है, फिर भी उनमें साम्य नहीं है। विशेषतः भागवत आदि पुराणों में कुछ व्यक्ति अधिक जोड़ दिये गये हैं। विदेहवंश का द्वितीय पुरुष मिथिजनक था। इसीने मिथिलानगरी स्थापित की। इसीसे 'जनक' यह सामान्यनाम चल पड़ा। जनक नाम से इस वंश के लोगों का उल्लेख करने की रीति है (श. ब्रा. ११. ३. १. २; ४. ३. २०; ६. २. १; बृ. उ. ३. १. १; ४.१.१; २.१; जै. ब्रा. १.१९.२; कौ. उ. ४.१)। याज्ञवल्क्य वाजसनेय तथा श्वेतकेतु आरुणेय से इसकी अनेक विषयों पर चर्चा हुई थी। वैदिक वाङ्मय में भी ब्रह्मवेत्ता के रूप में, महापुरुष का स्थान इसे प्राप्त है (तै. ब्रा. ३. १०. ९. ९)। इसने सप्तरात्र नामक याग किया (सां. श्रौ. १६. २. ७. ७)। वैदेह जनक को सावित्राग्निविद्या का उपदेश अहोरात्र के अभिमानी देवों ने दिया (तै. ब्रा. ३. १०. ९. २१; भरद्वाज देखिये)। यह याज्ञवल्क्य का समकालीन था। उस समय इसका नाम दैवराति था। वंशावलि के अनुसार, राम का श्वशुर सीरध्वज जनक से, यह जनक कई पीढियों बाद का है।

२. एक राजा। भागवत तथा विष्णु मत में यह निमिपुत्र तथा वायु मतानुसार नेमिपुत्र था। वसिष्ठ के शाप के कारण, निमि का देहपात हुआ। देवताओं के कहने पर ब्राह्मणों ने उसके देह का मंथन किया। उसमें से यह उत्पन्न हुआ। इसे जनक, विदेह मिथिल आदि अन्य नाम थे। इसने मिथिला नगरी की स्थापना की। इसका पुत्र उदावसु। इसके वंशजों को जनक नाम से ही संबोधित किया जाता है (भा. ९. १३. १३; ६. ३. २०)। पंचशिख के साथ इसका अध्यात्मविषय पर संवाद, प्रजापालन करने के

लिये क्षत्रिय के आवश्यक कार्य, इस विषय पर पत्नी से हुआ संभाषण, तथा अश्मन् नामक ब्राह्मण से संवाद आदि प्रसिद्ध हैं (म. शां. १८; २८; ३०७)। इसने अपने योद्धाओं को स्वर्ग तथा नरक दिखाये थे (म. शां. १००)।

आगे चल कर इच्छामरणी जनक प्राणत्याग कर, स्वर्ग जा रहा था। मार्ग में इसे यमलोक मिला। वहाँ अनेक जीव नाना यातनाएँ पाते हुए इसने देखे। पुण्यवान् जनक को स्पर्श करती हुई हवा, उन पापी जीवों को जा लगी। इस कारण उनके सब दुःखों का नाश हुआ। उन्होंने जनक को वहीं रहने का आग्रह किया। तदुपरांत यम ने इसे नरकलोक की सारी जानकारी दी, एवं इसे स्वर्ग जाने को कहा। जनक ने उसकी एक न सुनी। यम के कहने पर, अपना सारा पुण्य दुखियों को बाँट कर, सारे पापियों का इसने उद्धार किया (पद्म. पा. ३०)।

३. विदेह देश का राजा। इसकी चार स्त्रियाँ थीं। उनमें सुमति पटरानी थी। बहुत वर्षों तक पुत्रसंतान न होने के कारण, इसने, पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। तब दो पुत्र तथा सीता, नामक कन्या इसे पृथ्वी से प्राप्त हुए। पृथ्वी के कथनानुसार इसने, १६ वर्षों तक नरकासुर का पालन किया। त्रेतायुग के पूर्वार्ध की यह घटना है (कालि. ३८)।

नारद ने अमंगल ब्राह्मण का रूप धारण कर इसका गर्वपरिहार किया (गणेश. १. ६५)। जनक के संबंध में बहुत सी कथाएँ हैं। वे किसी एक जनक की न हो कर निमिवंश में उत्पन्न अन्यान्य लोगों की हैं। उदाहरणार्थ—याज्ञवल्क्य के समय दैवराति जनक था। उसके बाद काफी वर्षों के पश्चात्, राम का श्वसुर सीरध्वज जनक हुआ। नरकासुर का पालन करनेवाला जनक, कृष्णसमकालीन बहुलाश्व होगा (दैवराति, बहुलाश्व तथा सीरध्वज देखिये)।

४. भास्कर संहिता के 'वैद्यसंदेहभजन' तंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २. १६.१५)।

५. (प्रद्योत. भविष्य.) विशाखयूप का पुत्र।

जनदेव—जनकवंशीय ज्ञानी राजा। इसके पास सौ आचार्य थे, जिनसे इसने आत्मप्राप्ति का उपाय पूछा। इसका समाधान कोई भी न कर सका। एक बार पंचशिख इसके पास आया। इसने वही प्रश्न उससे पूछा। उसने इसे मोक्ष का मार्ग बताया (म. शां. २११)। वंशावलि में इसका नाम नहीं मिलता (२. धर्मध्वज देखिये)।

जनपादप—विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

जनमेजय—(सू. दिष्ट.) भागवत मत में सुमतिपुत्र। विष्णु एवं वायु मत में सोमदत्तपुत्र।

२. (सो. पूरु.) पूरु का पुत्र। इसे प्राचीन्वत् नामक पुत्र था। इसकी पत्नी मागधी सुनंदा।

३. (सो. पूरु.) दुष्यन्तपुत्र (म. आ. ७८.१८)।

४. (सो. अनु.) विष्णु, वायु तथा मत्स्य मत में पुरंजयपुत्र। भागवत मत में सृंजयपुत्र।

५. (सो. अनु.) मत्स्य मत में बृहद्भ्रपुत्र तथा वायु मत में दृढरथपुत्र।

६. (सो. अज.) भल्लाट का पुत्र (वायु. ९९.१८२; मत्स्य, ४९. ५९)। इसके लिये उग्रायुध कार्ति ने, नीपों का संहार किया। अंत में उग्रायुध ने जनमेजय का भी वध किया। अतएव इसे 'कुलपांसन' कहते हैं (म. उ. ७२.१२)। कुलपांसन का शब्दशः अर्थ, दुर्वर्तन से अपने कुल का नाश करनेवाले लोग, यों होता है।

अठारह कुलघातक लोगों के नाम उपलब्ध हैं (म. उ. ७२.१२)।

जनमेजय कौतस्त—कुतस्त का पुत्र। अरिमेजय प्रथम इसका भाई था। ये दोनों भाई पंचविंश ब्राह्मण के सर्पसत्र में अध्वर्यु तथा प्रतिप्रस्थातृ थे।

दूसरे जनमेजय परिक्षित के द्वारा किया गया सर्पसत्र, तक्षशिला समीप के सर्पलोगों का संहार था। पंचविंश ब्राह्मण का सर्पसत्र सर्पलोगों ने अपने स्वयं के लिये किया था (२५. १५.३)।

पंचविंश ब्राह्मण के सर्पसत्र में, कौनसा कार्य किसने किया इसका इस प्रकार निर्देश है:—१. जर्वर (गृहपति), २. धृतराष्ट्र ऐरावत (ब्रह्मा), ३. पृथुश्रवस् दौरेश्रवस (उद्गाता), ४. ग्लाव (प्रस्तोतृ), ५. अजग (प्रतिहर्तृ), ६. दत्त तापस (होतृ), ७. शितिपृष्ठ (मैत्रावरुण), ८. तक्षक वैशालेय (ब्राह्मणाच्छंसी), ९. शिख (नेष्टृ), १०. अनुशिख (पोतृ), ११. अरुण आट (अच्छावाक), १२. तिमिर्घ दौरेश्रुत (आग्नीध्र), १३. कौतस्त अरिमेजय (अध्वर्यु), १४. जनमेजय (प्रतिप्रस्थातृ), १५. अर्बुद (ग्रावस्तुत्), १६. अजिर (सुब्रह्मण्य), १७. चक्र (उन्नेतृ), १८. पिशंग, १९. पंड (अभिगर), २०. कुपंड (अपगर)।

इन दोनों सर्प सत्रों का नाम एक है, तथापि इनका परस्पर संबंध नहीं है। एक सर्पों के नाश के लिये है, तथा दूसरा उनकी सुस्थिति के लिये है (पं. ब्रा. २५.१५)। दूसरा सत्र किसने किया, बता नहीं सकते।

जनमेजय पारीक्षित—सो. (पूरु.) कुरुपुत्र परीक्षित् का पुत्र। इसको जनमेजय पारीक्षित-प्रथम कहते है।

वेदों में इसे पारीक्षित जनमेजय कहा है (श. ब्रा. १३. ५.४.१; ऐ. ब्रा. ७.३४; ८. ११; २१; सां. श्रौ. १६. ८. २७)। इसकी राजधानी का नाम आसन्दीवत् (ऐ. ब्रा. ८.२१; श. ब्रा. १३.५.४.२)। इसके बंधुओं के नाम उग्रसेन, भीमसेन तथा श्रुतसेन थे। इसने ब्रह्महत्या की थी। पापक्षालनार्थ अश्वमेधयज्ञ भी किया था। उसमें पुरोहित इन्द्रोत दैवाप शौनक था (श. ब्रा. १३.५.३.५) तुरकावषेय का भी नाम प्राप्य है (ऐ. ब्रा. ८.२१)।

इसका अग्नियों के साथ, तत्त्वज्ञानविषय में संवाद हुआ था (गो. ब्रा. १.२.५)।

मणिमती से इसे सुरथ तथा मतिमन् ये दो और पुत्र थे (ह. वं. १. ३२. १०२)। इसके भाइयों का नाम भी कई जगह आया है (श. ब्रा. १३.५.४.२; अग्नि. २७८. ३२; गरुड. १. १४०)।

कठोर वचन से संबोधन करने के कारण, गार्ग्यपुत्र का, इसने वध किया। ब्रह्महत्या के कारण, इसे राज्य-त्याग करना पडा। शरीर में दुर्गंधि भी उत्पन्न हुई। इसी कारण लोहगंध जनमेजय तथा दुर्बुद्धि नाम से यह ख्यात हुआ। इन्द्रोत दैवाप शौनक ने अश्वमेध करा के इसे ब्रह्महत्यापातक से मुक्त किया। फिर यह राज्य नहीं पा सका।

सुरथ को वह राज्यपद मिला। ययाति को रुद्र से दिव्य रथ प्राप्त हुआ था। इस ब्रह्महत्या के कारण, पूरुकुल मे वंशपरंपरा से आया हुआ, वह रथ वसुचैद्य को दिया गया। वहाँसे बृहद्रथ, जरासंध, भीम तथा अंत में कृष्ण के पास आया। कृष्ण निर्याण के बाद वह रथ अदृश्य हुआ (वायु. ९३.२१–२७; ब्रह्मांड. ३. ६८.१७–२८; ह. वं. १.३०.७–१६; ब्रह्म. १२.७–१७)।

'अबुद्धिपूर्वक किया गया पाप प्रायश्चित्त से नष्ट हो जाता है,' इस संदर्भ में भीष्म ने युधिष्ठिर को जनमेजय की यह पुरानी कथा बतायी है (म. शां. १४६–१४८)।

२. (सो. कुरु.) यह द्वितीय जनमेजय पारीक्षित है। 'जनमेजय' का अर्थ है, 'लोगों पर धाक जमानेवाला'। अर्जुन–अभिमन्यु–परीक्षित्–जनमेजय इस क्रम से यह वंश है। परीक्षित् ने मातुलकन्या (उत्तर की कन्या) से विवाह किया था। उससे, जनमेजय, भीमसेन, श्रुतसेन तथा उग्रसेन नामक चार पुत्र हुएँ। तक्षक ने परीक्षित् की हत्या की। उस समय उम्र में जनमेजय अत्यंत छोटा था। फिर भी हस्तिनापुर के सिंहासन पर इसे ही अभिषेक हुआ। इसने प्रजा का पुत्रवत् पालन किया। इसका पुत्र प्राचीन्वत् (म. आ. ४०)।

इसकी पत्नी, काशी के सुवर्णराजा की कन्या वपुष्टमा (काश्या) थी।

एक बार यह कुरुक्षेत्र में दीर्घसत्र कर रहा था। सारमेय नामक श्वान वहाँ आया। इसने श्वान को मार भगाया। उसकी माँ देवशुनी सरमा पुत्र को ले कर वहाँ आयी। उसने अपने निरपराध पुत्रों की ताडना का कारण पूछा। इसे उसने पश्चात् शाप दिया, 'तुम्हें दैवी विघ्न आवेगा'।

तक्षक से प्रतिशोध लेने के लिये, इसने तक्षशिला पर आक्रमण किया। उसे जीत कर ही यह हस्तिनापुर लौटा। उस समय उत्तंक ने इसे सर्पसत्र की मंत्रणा दी। सब सर्पों का नाश करने का निश्चित हुआ। यज्ञमंडप सजा कर सर्पसत्र प्रारंभ हुआ। इतने में स्थपति (शिल्पी) नामक व्यक्ति वहाँ आया। उसने कहा, 'एक ब्राह्मण तुम्हारे यज्ञ में विघ्न उपस्थित करेगा'। अगणित सर्प वेग के साथ उस कुंड में गिरने लगे। तक्षक भयभीत हो कर इंद्र की शरण में गया। इंद्र ने उसकी रक्षा का आश्वासन दिया। पश्चात् वासुकि की बारी आयी। वह जरत्कारु नामक अपने बहन के पास गया। जरत्कारु का पुत्र आस्तीक था। आस्तीक ने वासुकि को अभय दिया। बाद में राजा ने अपने प्रमुख शत्रु तक्षक को आवाहन करने की ऋत्विजों से विनंति की। तक्षक इंद्र के यहाँ आश्रयार्थ गया था। 'इंद्राय तक्षकाय स्वाहा', कह कर ऋत्विजों ने आवाहन किया। इंद्रसहित तक्षक वहाँ उपस्थित हुआ। अग्नि को देखते ही इंद्र ने तक्षक का त्याग किया। इतने में आस्तीक वहाँ पहुँचा। उसने राजा की स्तुति की। वर माँगने के लिये राजा से आदेश मिलते ही, आस्तीक ने सर्पसत्र रोकने को कहा। विवश हो कर राजा को सर्पसत्र रोकना पडा। इस तरह स्थपति तथा सरमा की शापवाणी सच्ची साबित हुई।

श्रुतश्रवस् को सर्पजाति के स्त्री से उत्पन्न हुआ पुत्र सोमश्रवस् इस यज्ञ में, था। श्रुतश्रवस् को राजा ने आश्वासन दिया था, 'तुम्हें जो चाहिये सो माँग लो, मैं उसकी पूर्ति करूँगा' (म. आ. ३.१३–१४)।

सर्पसत्र के ऋत्विज––१. चंडभार्गव च्यावन (होतृ), २. कौत्स जैमिनि (उद्गातृ), ३. शार्ङ्गरव (ब्रह्मन्), ४. पिंगल (अध्वर्यु), ५. व्यास (सदस्य), ६. उद्दालक,

७. प्रमदक, ८. श्वेतकेतु, ९. पिंगल, १०. असित, ११. देवल, १२. नारद, १३. पर्वत, १४. आत्रेय, १५. कुंड, १६. जठर, १७. धालघट, १८. वात्स्य, १९. श्रुतश्रवस्, २०. कोहल, २१. देवशर्मन्, २२. मौद्गल्य, २३. समसौरभ (म. आ. ५३.४–९)।

व्यास के शिष्य वैशंपायन ने जनमेजय को भारत कथन किया (म. आ. १.८–९; फ. ३)। इसे काश्या नामक पत्नी से दो पुत्र हुए; एक चंद्रापीड तथा दूसरा सूर्यापीड (ब्रह्म. १३.१२४)। इसने सर्पसत्र किया, जिसमें तुर कावषेय पुरोहित था (भा. ९.२२.३५)।

यह बडा दानी था। इसने कुंडल तथा दिव्य यान ब्राह्मणों को दान दिये (म. अनु. १३७.९)।

सर्पसत्र के बाद राजा जनमेजय ने पुरोहित, ऋत्विज आदि को एकत्रित कर के, अश्वमेध का आरंभ किया। वहाँ व्यास प्रगट हुआ। उस समय इसने व्यास की यथाविधि पूजा की। कौरव-पांडवों के युद्ध के संबंध में अनेक प्रश्न पूछे। उससे कहा, 'अगर आपको यह ज्ञात था कि, इस युद्ध का अन्त क्या होगा, तो आपने उन्हें परावृत्त क्यों नहीं किया?' व्यास ने कहा, 'हे राजन्! उन्होंने मुझसे पूछा न था। बिना पूछे मैं किसी को कुछ भी नहीं बताता। तुम्हारे इस अश्वमेध में इन्द्र बाधा डालेगा तथा इतःपर पृथ्वी पर कहीं भी अश्वमेध न होगा'।

दूसरा जनमेजय पारीक्षित अत्यंत धार्मिक था। इसने अपने यज्ञ में वाजसनेय को ब्रह्मा बनाया। तब वैशंपायन ने इसे शाप दिया। ब्राह्मणों ने क्षत्रियों का उपाध्यायकर्म बंद कर दिया। परंतु वाजसनेय लोगों की सहायता से इसने दो अश्वमेध किये। यह पराक्रमी होने के कारण, अन्य क्षत्रियो ने इसका समर्थन किया। वाजसनेयों का समर्थन करने के कारण, ब्राह्मणों ने इसे पदच्युत कर अरण्य में भेज दिया। ब्राह्मणों के साथ कलह करने से इसका नाश हुआ (कौटिल्य पृ. २२)। इसके बाद शतानीक राजा बना।

इस समय तक, याज्ञवल्क्य द्वारा उत्पन्न वेद को प्रतिस्पर्धी वैशंपायनादि ने मान्यता नहीं दी थी। वाजसनेयों को राज्याश्रय प्राप्त होने के बाद भी, वैशंपायनों ने काफी गडबड की। वादविवाद कर के, वाजसनेयों को हराने के काफी प्रयत्न किये। परंतु जनमेजय ने उनकी एक नहीं चलने दी। लोगों का तथा ब्राह्मणों का विरोध, इतना ही नहीं, राज्यत्याग भी स्वीकार किया। परंतु वाजसनेयों को इसने समाज में मान्यता प्राप्त कर दी दी। इसलिये इसे महावाजसनेय कहते हैं (मत्स्य. ५०.५७–६४; वायु. ९९. २४५–२५४)।

जनश्रुत कांडिव्य—जनश्रुत याने लोकप्रसिद्ध। यह हृत्स्वाशय का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

जनश्रुत वारक्य—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ३. ४१.१)।

जनापीड—(सो. तुर्वसु.) वायुमत में शरूथपुत्र। ब्रह्मांड में इसे आक्रीड कहा है।

जनार्दन—विनशद्द ब्राह्मण का पुत्र। यह हंसडिंभक का मित्र था (ह. वं. ३. १०४.४)।

जंतु—(सो. पूरु. ऋक्ष.) विष्णुमत में सुधन्वन् का पुत्र। भागवत में इसे जह्नु कहा है।

२. (सो. यदु. क्रोष्टु.) पुरुहूतपुत्र।

३. (सो. नील.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा वायु के मत में सोम का ज्येष्ठ पुत्र।

जंतुधना—यातुधान की माता।

जन्यु—तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक। इसके लिए अन्य नाम भी प्रयुक्त है (पद्म. सृ. ७)।

जपालय—पराशरकुल का गोत्रकार। पाठभेद-व्यासपायन।

जबाला—सत्यकाम जाबाल की माता का नाम।

जमदग्नि—एक ऋषि तथा परशुराम का पिता। ऋग्वेद में इसका अनेक बार उल्लेख आया है (ऋ. ३.६२.१८;८.१०१.८;९.६२.२४;६५.२५; अ. वे. ४.२९.३)। इन निर्देशों से मित्रावरुण, अश्विनौ एवं सोम से जमदग्नि का संबंध प्रतीत होता है। सौदास के यज्ञ में, वसिष्ठपुत्र शक्ति ने विश्वामित्र को वाद में पराजित किया। उसे यज्ञ में से भगा दिया। तब सूर्य से ससर्परी नामक वाणी का सामर्थ्य बढानेवाली विद्या ला कर, जमदग्नि ने उसे विश्वामित्र को दी तथा उसके कुल की वृद्धि की। ससर्परी का अर्थ है भाषणकौशल्य। इस स्थान पर, जमदग्नि को वयोवृद्ध कहा है (ऋ. ३. ५३.१५–१६)। यहाँ बहुवचन का निर्देश होने के कारण, यह कुल का निर्देश प्रतीत होता है।

संहिता ग्रंथों में भी, यह विश्वामित्र के पक्ष का, तथा वसिष्ठ के प्रतिपक्ष का बताया गया है (तै. सं. ३.१.७.३)। परंतु हरिश्चंद्र के राजसूय में विश्वामित्र होता, वसिष्ठ ब्रह्मा तथा जमदग्नि अध्वर्यु थे (ऐ. ब्रा. ७.१६)। चतूरात्र नामक यज्ञ करने के कारण, इसके वंश में कोई भी दरिद्री नहीं हुआ (तै. सं. ७.१.९.१; पं. ब्रा. २१.१०)।

असित, अत्रि, कण्व तथा वीतहव्य के साथ इसका निर्देश है (अ. वे. २.३२.३०; ६.१३०.१)।

अन्य कई स्थानों में इसका उल्लेख है (अ. वे. ४. २९.३; ५.२८.७; ६.१३७.१; १८.३.१५-१६)। यह बड़ा तपस्वी था (तै. सं. ३.३.५.२)। जमदग्नि भार्गव के ऋग्वेद में काफी सूक्त है (ऋ. ३.६२.१६-१८; ८. १०१; ९.६२; ६५; ६७.१६-१८; १०.११०; १३७. ६; १६७)।। जमदग्नि शब्द का अर्थ नेत्र लिया है (वा. सं. १३.५६, महीधर भाष्य)।

यह अक्षर ब्रह्म का उपदेश करता था। वेदप्रचार के लिये तथा अक्षर ब्रह्म के उपदेश के लिये, इंद्र ने इसकी योजना की थी (तै. आ. १.९)।

भृगुकुल के ऋचीक नामक ऋषि को, गाधिराजकन्या सत्यवती से जमदग्नि उत्पन्न हुआ (म. आ. ६०.४६; व. ११६.८; ह. वं. १.२७.३५. ब्रह्म. १०; स्कंद. ६.६६) भृगुकुल के लोगों को भृगुपुत्र कहते थे (पद्म. उ. २६८. १)। इसका पैतृक नाम आर्चिक था। रेणुका इसकी पत्नी थी। उससे इसे रुमण्वत्, सुषेण, वसुमत, विश्वावसु तथा परशुराम नामक पाँच पुत्र हुए (रेणुका देखिये)।

जमदग्नि अत्यंत क्रोधी था। एकबार लीलया यह बाण छोड़ रहा था। उन्हें लाने के लिये, इसने रेणुका से कह दिया। कड़ी धूप होने के कारण, रेणुका थक गई। विश्रांति के लिये, एक वृक्ष के नीचे थोड़ी देर के लिये, वह बैठ गई। उसे बाण वापस लाने में देर हो गई। तब क्रोधित हो कर इसने देरी का कारण पूछा। रेणुका-द्वारा देरी का कारण बताया जाते ही, यह सूर्य पर क्रोधित हुआ। बाण से सूर्य को छेदने के लिये तैय्यार हो गया। तब सूर्य इसकी शरण में आया। उसने इसे छाता, तथा पादत्राण दिये तथा कहा, 'मैं तुम्हारे उदर से जन्म लूँगा'। बाद में वह परशुराम के रूप में, जमदग्नि के घर में उत्पन्न हुआ। (म. अनु. ९५)।

एकबार रेणुका सरोवर पर स्नान करने गई थी। वहाँ उसने चित्ररथ अथवा चित्रांगद को, अपनी भार्याओं के साथ क्रीड़ा करते हुए देखा। उसका ऐश्वर्य देख कर उसके मन में राजा के प्रति अभिलाषा उत्पन्न हुई। उसकी क्रीड़ा देखते हुए, वह थोडी देर तक वहीं खडी रही। इससे उसे घर जाने में विलंब हुआ। उसीसे जमदग्नि अत्यंत क्रोधित हुआ। पुत्रों से अपने माता का शिरच्छेद करने के लिये इसने कहा। परंतु परशुराम को छोड़ अन्य किसी ने भी इसका कहना नहीं माना। इससे जमदग्नि ने उनका भी वध किया। बाद में परशुराम ने अपनी माता का शिरच्छेद किया। तब जमदग्नि ने प्रसन्न हो कर परशुराम को वर माँगने के लिये कहा। परशुराम ने वरद्वारा अपनी माता तथा भाइयों को जीवित किया (भा. ९.१५.१६; विष्णुधर्म १.३५-३६)

यह इतना क्रोधी था, तथापि कालवशात् अत्यंत शांत हो गया। यह सचमुच शांत बना है अथवा नहीं, यह देखने के लिये, एकबार क्रोध सर्परूप धारण कर, पितृतिथि के दिन इसके घर आया। जमदग्नि ने उस दिन श्राद्ध के लिये खीर बनाई थी। उस खीर में सर्परूपी क्रोध ने अपना गरल डाल दिया। परंतु यह क्रोधित नहीं हुआ। तब क्रोध ने इसकी स्तुति की (जै. अ. ६८)। स्त्री-पुत्रादिकों के वध का स्मरण कर, इसे अत्यंत पश्चात्ताप हुआ। क्रोध के ही कारण यह अनर्थ हुआ, यह सोच कर इसने क्रोध का त्याग कर दिया (रेणु. २७)।

गंगातीर पर एक हजार वर्ष तपस्या कर के, जमदग्नि ने इन्द्र से कामधेनु माँग ली। उसी समय इन्द्र ने इसे वरदान दिया, 'तुम्हें एक ईश्वरांशभूत पुत्र होगा'। कश्यप ने इसे षड्क्षर मंत्र दिया था (पद्म. उ. २६८)।

एकबार हैहय देशाधिपति कार्तवीर्य, ससैन्य जमदग्नि के आश्रम में, आया। कामधेनु की सहायता से जमदग्नि ने उसका उत्कृष्ट आदिरातिथ्य किया। बाद में कार्तवीर्य के मन में जमदग्नि के ऐश्वर्य के बारे में असूया उत्पन्न हुई। वह कामधेनु को बलात्कार से ले जाने लगा। उस समय कामधेनु ने अपने शरीर से काफी यवन निर्माण किये। उनके द्वारा कार्तवीर्य का पराभव हुआ। तब कार्तवीर्य ने जमदग्नि के आश्रम का विध्वंस कर, कामधेनु का हरण कर लिया। यह वृत्त परशुराम को ज्ञात होते ही, उसने कार्तवीर्य का वध कर के, गाय को छुड़ा लिया। परंतु कार्तवीर्य के वध का कृत्य जमदग्नि को बूरा लगा। कार्तवीर्य-पुत्रों ने पिता के वध का बदला लेने के लिये, परशुराम की अनुपस्थिति में, जमदग्नि को इक्कीस बाणों से विद्ध किया तथा उसकी हत्या कर डाली। यह वृत्त परशुराम को ज्ञात होते ही, उसने क्षत्रियों का इक्कीस बार निःपात कर, जमदग्नि के वध का बदला ले लिया (म. शां. ४९.५६; ब्रह्मवै. ३. २४; ब्रह्मांड. ३.४५; कार्तवीर्य देखिये)।

कई स्थानों पर उल्लेख है कि, जमदग्नि का वध कार्तवीर्य ने ही किया (म. द्रो. परि. १; क्र. ८. पंक्ति. ८३० के आगे; वा. रा. बा. ७५)। इसे घूँसे मार कर इसका वध किया गया (पद्म. उ. २६८.३७)। वैवस्वत मन्वन्तर के

सप्तर्षियों में से यह एक था (मत्स्य. ९; ब्रह्म. ५; मार्कं. ७९)।

श्राद्धविधि का प्रारंभ जमदग्नि ने किया। यह भृगुकुल का गोत्रकार तथा प्रवर भी था।

जंबुमालिन्—रावण के मंत्री प्रहस्त का पुत्र। हनुमान् ने अशोकवन उध्वस्त किया। रावण की आज्ञा से, हनुमान् को रोकने के लिये यह वहाँ गया। हनुमान् ने इसका वध किया (वा. रा. सुं. ४२-४४)।

२. एक राक्षस। यह भी हनुमान् के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ४३)।

जंबूक—शंबूक देखिये।

जंभ—*बलि का मित्र*। इसे जंभासुर भी कहते थे। इंद्र तथा बलि के युद्ध में, इंद्र के वज्र के आघात से बलि मूर्च्छित हो गया। वहाँ इसने सिंह पर आरूढ हो कर, इंद्र से युद्ध किया। इंद्र ने इसका वध किया (भा. ८.११. १३)।

२. तारकासुर का एक प्रमुख हस्तक। तारकासुर के युद्ध में, *विष्णु ने इसका वध किया। इसकी कन्या कयाधु* (भा. ६.१८.१२)।

३. रावणपक्षीय राक्षस तथा ताटकापति सुंद का पिता।

४. रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ४)।

५. जालंधर की सेना का एक राक्षस (पद्म. उ. १२)।

६. कश्यपपत्नी दिति के पुत्रों में से एक (पद्म. उ. २३०)।

७. कश्यप एवं दनु का पुत्र।

८. संह्लाद का पुत्र। इसका पुत्र शतदुंदुभि (ब्रह्मांड. ३.५.३८-३९)।

जंभक—इंद्र के द्वारा मारा गया एक दैत्य। तारकासुर की सेना का यह एक नायक था (वा. सं. ३०.१६, सां. आ. १२.६५)।

जय—(सो. पुरूरवस्.) भागवत मत में पुरूरवस्-पुत्र।

२. (सो. पुरूरवस्.) भागवत मत में मन्युपुत्र।

३. (सो. प्रति.) वायुमत में विजयपुत्र। भागवत में इसे कृत तथा विष्णु में यशकृत नाम है।

४. (सो. प्रति.) भागवत एवं वायु के मत में संजयपुत्र, विष्णु मत में संजय का पुत्र।

५. (सो. प्रति.) भागवत मत में संकृतिपुत्र।

६. (सो. नील.) मत्स्यमत में महासत्वपुत्र। भागवत मत में संजय, एवं विष्णु तथा वायु के मत में संजय यही था।

७. (सू. निमि.) भागवत मत में श्रुतपुत्र, विष्णु एवं वायु के मत में सुश्रुतपुत्र।

८. (स्वा. उत्तान.) भागवत मत में वत्सर का स्वर्वीथी से उत्पन्न पुत्र।

९. विश्वामित्रपुत्र (भा. ९.१६.३६)।

१०. शुक्राचार्य तथा पीवरी से उत्पन्न पांच पुत्रों में से एक।

११. विष्णु के द्वारपालों में से एक (जयविजय देखिये)।

१२. विकुंठ देवों में से एक।

१३. यमसभा का एक क्षत्रिय (म. स. ८.१४)।

१४. (सो. यदु.) भागवत मत में कंक तथा कर्णिका का पुत्र।

१५. (सो. यदु.) भागवत मत में कृष्ण तथा भद्रा का पुत्र।

१६. (सो. यदु.) भागवत मत में युयुधानपुत्र। मत्स्य तथा विष्णु में यही असंग है।

१७. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीययुद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११०.२९-३५)।

१८. पांडव पक्ष का राजा। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ५६.४०)।

१९. दुर्योधन पक्ष का एक राजा (म. द्रो. ५२.१६)। जयद्रथवध के समय, इसने अर्जुन के साथ युद्ध किया था (म. द्रो. ६६.३६)।

२० अज्ञातवासकाल में युधिष्ठिर का गुप्तनाम (म. वि. ५. ३०; २२.१२)।

जय ऐन्द्र—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८०)।

जयक लौहित्य—*यशस्विन् जयंत लौहित्य का शिष्य* (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

जयत्सेन—(सो, कुरु.) मत्स्य, वायु एवं महाभारत के मत में सार्वभौम का कैकयी से उत्पन्न पुत्र। भविष्य, भागवत तथा विष्णु मत में इसे जयसेन कहा गया है। इसे सुश्रवा नामक स्त्री तथा अराचिन नामक पुत्र था (म. आ. ९०-१७)

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीय युद्ध में, भीम ने इसका वध किया (म. श. २५.९.)।

३. (सो. प्रति.) विष्णु मत में अहीनपुत्र, तथा वायु के मतानुसार अदीनपुत्र। भागवत में इसे जयसेन कहा गया है।

४. भारतीययुद्ध में पांडव पक्षीय राजा (म.उ.४.१६)।

५. दुर्योधन के पक्ष का मगध का राजा। कालेय के आठ पुत्रों में से प्रथम-पुत्र का, यह अंशावतार था। भारतीययुद्ध में श्वेत ने इसे त्रस्त कर, दो बार इसका धनुष तोडा था। अंत में अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. भी. परि. १. क्र. ४. पंक्ति. ९)।

६. भारतीययुद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा (म. श. ६. ३)।

७. विराटनगर में नकुल का गुप्तनाम (म. वि. ५.३०; २२.१२.)।

जयद--(सो. पूरु.) वायुमत में मनस्युपुत्र (चारुपद देखिये)।

जयद्वल—अज्ञातवासकाल में सहदेव का गुप्तनाम (म. वि. ५.३०; २२.१२)।

जयद्रथ--(सो. अनु.) भागवत, विष्णु एवं वायु के मत में बृहन्मनस्‌पुत्र। मत्स्य में बृहन्मनस् की जगह इसे बृहद्भानु का पुत्र कहा गया है। बृहन्मनस् को दो पत्नियाँ थीं। एक यशोदेवी तथा दूसरी सत्या। यह दोनों चैद्य की कन्याएँ थी। इनमेंसे जयद्रथ यशोदेवी का पुत्र था (वायु. ९९.१११)। इसे संभूति नामक पत्नी तथा विजय नामक पुत्र था (भा. ९.२३.११)

२. (सो. अज.) भागवत के मत में बृहत्काय का, विष्णु तथा वायु के मत में बृहत्कर्मन् का, तथा पद्म एवं मत्स्यके मत में बृहदिषु का पुत्र।

३. सिंधुदेशाधिपति वृद्धक्षत्र का पुत्र (म. द्रो. १२१. १७)। धृतराष्ट्रकन्या दुःशला का यह पति था (म. आ. १०८. १८; द्रो. १४८)।

यह सिंधु, सौवीर तथा शिबि देशों का राजा था। यह पांडवों का द्वेष करता था। इसे बलाहक, आनीक, विदारण आदि छः भाई थे (म. व. २५०.१२)।

पांडव वनवास में थे। जयद्रथ स्वयंवर के लिये अपने देश से शाल्व देश जा रहा था। इसके साथ छः भ्राता, शिबिकुलोत्पन्न सुरथ राजा का पुत्र कोटिक अथवा कोटिकास्य, त्रिगर्तराजपुत्र क्षेमंकर, इक्ष्वाकुकुलोत्पन्न सुभवपुत्र सुपुष्पित, एवं कलिंदपुत्र थे। इसके सिवा अंगारक, कुंजर, गुप्तक, शत्रुंजय, संजय, सुप्रवृद्ध, प्रभंकर, भ्रमर, रवि, शूर, प्रताप तथा कुहन नामक सौवीर देश के द्वादश राजपुत्र तथा सेना भी थी। जाते जाते, इसने उसी काम्यकवन में पड़ाव डाला, जहाँ पांडव रहते थे। पास ही पांडवों का आश्रम था। वे मृगया के लिये बाहर गये थे। आश्रम में धौम्य ऋषि, दासी, एवं द्रौपदी ये तीन ही व्यक्ति थे। द्रौपदी को देखते ही, उसे अपने वश में लाने की इच्छा जयद्रथ को हुई। इसने पूछताछ करने के लिये, कोटिक को उसके पास भेजा। वहाँ जा कर कोटिक ने द्रौपदी से पूछा, 'तुम कौन हो? यहाँ क्यों आई हो?' द्रौपदी के द्वारा सब वृत्तांत कथन कर दिये जाने के बाद, कोटिक वापस आया। उसने जयद्रथ को सब बताया। यह सुनते ही, सेना से निकल कर जयद्रथ द्रौपदी के पास गया। जयद्रथ को पहचान कर द्रौपदी ने उसका उचित आदरसत्कार किया। द्रौपदी की प्राप्ति के लिये जयद्रथ ने काफी प्रयत्न किये। अन्त में द्रौपदी को इसके निर्लज्ज कृत्य के प्रति अत्यंत क्रोध आया।

द्रौपदी ने इसे तुरन्त निकल जाने को कहा। परंतु उसे बरज़ोरी से अपने रथ में डाल कर इसने भगाया। यह देख कर धौम्य ऋषि ने इसका पीछा किया। (म. व. २४६–२५२)। इतने में पांडव आश्रम में लौट आये। आते ही द्रौपदी की दासी ने संपूर्ण वृत्त उन्हें बताया। काफी दूर भागे गये जयद्रथ के समीप वे पहुँच गये। काफी देर तक युद्ध हुआ। कोटिकादि कई जयद्रथपक्षीय वीर मारे गये। इसने देखा, अपना पक्ष पराजित हो रहा है। पांडवों की दृष्टि बचा कर, इसने रणांगण से पलायन किया। जयद्रथ भाग गया, यह ज्ञात होते ही, अर्जुन तथा भीम ने इसका पीछा किया। संपूर्ण सेना का नाश होने के बाद, धौम्य ऋषि तथा अन्य पांडव आश्रम लौट आये। काफी देर पीछा करने के बाद, अर्जुन तथा भीम ने जयद्रथ को पकड़ा। भीम ने इसकी अच्छी मरम्मत की। परंतु वध न करते हुए, इसके केशों का पाँच हिस्सों में मुंडन कर, भीम इसे आश्रम में लाया। युधिष्ठिर ने जयद्रथ से, द्रौपदी क्षमायाचना करने के लिये कहा। युधिष्ठिर ने भीम से कहा, 'तुम जयद्रथ का वध मत करो। उससे दुःशला दुखित होगी। धृतराष्ट्र एवं गांधारी भी शोकमग्न होंगे'। जयद्रथ का वध न कर के उसे छोड़ दिया गया।

इस प्रकार पांडवों के द्वारा इसकी दुर्दशा हुई। इसने मन में अत्यंत अपमानित स्थिति का अनुभव किया। समस्त सेना को राजधानी वापस भेज कर, यह अकेला ही गंगाद्वार चला गया। यहाँ तीव्र तपश्चर्या से इसने शंकर को प्रसन्न किया। 'मैं सब पांडवों को जीत सकूँ,' ऐसा वर इस

ने शंकर से माँगा। शंकर ने इसे बताया, 'अर्जुन की अनुपस्थिति में बाकी पांडवों का पराभव तुम कर सकोगे'। इससे संतुष्ट हो कर यह अपने नगर लौट आया। इस वर के कारण ही अभिमन्युवध के समय, यह पांडवों का पराभव कर सका (म. व. २५२.२५६)।

भारतीययुद्ध में अर्जुन संशप्तकों से युद्ध करने में व्यस्त था। मौका देख कर, इसने पांडवों का पराभव किया। अकेला अभिमन्यु चक्रव्यूह में घिरा कर मारा गया। अर्जुन ने घोर प्रतिज्ञा की, 'कल सूर्यास्त के पहले मैं जयद्रथ का वध करूंगा'। इस प्रतिज्ञा से घबरा कर, यह स्वदेश वापस लौटने का विचार करने लगा। उसी रात्रि में दुर्योधन इसे ले कर द्रोणाचार्य के पास गया। द्रोणाचार्य ने इसकी रक्षा का आश्वासन दे कर, इसे रोक लिया (म. द्रो. ५१–५२)।

जयद्रथ-वध की प्रतिज्ञापूर्ति के बारे में अर्जुन अत्यंत चिंतित था। द्रोण ने शकटव्यूह की रचना कर, उसके अंदर चक्रव्यूह तथा सूचिव्यूह की रचना की। पश्चात् इन तीन व्यूहों के अंदर उसने जयद्रथ को बैठाया। तथा वह स्वयं व्यूह के द्वार पर खडा रहा (म. द्रो. ५७–६३)।

कृष्ण ने अर्जुन को सत्वर व्यूह में प्रविष्ट होने के लिये कहा। वहाँ द्रोण तथा अर्जुन युद्ध में मिले तथा काफी देर तक उनका युद्ध हुआ। अंत में कृष्ण की सलाह के अनुसार, द्रोण को छोड कर अर्जुन आगे जाने लगा। तब द्रोण ने उसे कहा 'मुझे न जीत कर व्यूह में प्रविष्ट होना तुम्हारे लिये अयोग्य है'। यह सुन कर अर्जुन ने कहा, 'आप आचार्य तथा मेरे गुरु हैं। शत्रु नहीं। मैं आपका शिष्य हो कर पुत्र के सदृश हूँ। युद्ध में आपको जीत सके, ऐसा पुरुष इस लोक में कोई नहीं है' (म. द्रो. ६६)।

मार्ग के अनेक योद्धाओं का वध करता हुआ, अर्जुन आगे बढा। मार्ग में उसके अश्व प्यासे हो गये। रथ रोक कर, तथा जयद्रथ के पास पहुँचने के लिये अभी काफी अवकाश है, यह सोच कर अर्जुन रुक गया। वहीं बाणगंगा निर्माण कर, उसने अपने अश्वों को पानी पिला दिया तथा वह आगे बढा। वह जयद्रथ के समीप पहुँचा। इतने में युधिष्ठिर ने अर्जुन की सहायता के लिये युयुधान को भेजा (म. द्रो. ७५)। बाद में युधामन्यु तथा उत्तमौजस् नामक दो चक्ररक्षक (म. द्रो. ६६.३५), एवं सात्यकि तथा भीमसेन व्यूह का भेद कर वहाँ तक पहुँचे। इन सब को एकत्रित देख कर, दुर्योधन भयभीत हो गया, एवं जयद्रथ के पास रक्षणार्थ जा बैठा (म. द्रो. ७४–७६)। इतने में जयद्रथ को बाहर निकालने के हेतु से, कृष्ण ने समस्त सेना में ऐसा आभास निर्माण किया कि, मानों सूर्य का अस्त हो रहा है। उस समय जयद्रथ ने सूर्यास्त देखने के लिये गर्दन उठाई। तब कृष्ण ने 'वह रहा जयद्रथ,' ऐसा संकेत अर्जुन को किया। अर्जुन ने तत्काल इसका सिर काट दिया एवं संध्या कर रहे जयद्रथ-पिता वृद्धक्षत्र के गोद में गिराया। यह घटना मार्गशीर्ष कृष्ण नवमी को हुई (भारतसावित्री)।

जयद्रथ का सिर काट कर, उसके पिता की ही गोद में क्यों डाला गया, इसके लिये कृष्ण ने अर्जुन को निम्नांकित कथा बताई।

कृष्ण ने कहा, "वृद्धक्षत्र जयद्रथ का पिता था। काफी लंबी कालावधि के बाद उसे यह पुत्र हुआ। उसके जन्म के समय आकाशवाणी हुई, 'तुम्हारा यह पुत्र कुलशील तथा निग्रहादि गुणों से प्रसिद्ध योद्धा बनेगा। परंतु लडते समय रणांगण में ऐसा योद्धा उसकी गर्दन काटेगा, जिसकी ओर इसका ध्यान नहीं है'। इसे सुन कर वृद्धक्षत्र ने कहा, 'लडते समय जो कोई मेरे पुत्र का मस्तक काट कर भूमि पर गिरायेगा, उसका भी मस्तक शतधा विदीर्ण होगा'। इतना कह कर, तथा जयद्रथ को राजगद्दी पर बैठा कर, वह स्यमंतपंचक के बाहर वन में गया, और उग्र तपश्चर्या करने लगा। इसलिये वृद्धक्षत्र के ध्यान में न आये, इस तरह दिव्यास्त्र से जयद्रथ का सिर काट कर उसीकी गोद में डाल दिया है। यदि जयद्रथ का मस्तक तुम भूमि पर गिराओगे, तो तुम्हारा मस्तक शतधा विदीर्ण हो जायेगा"। जयद्रथ का सिर गोद में गिरते ही, वृद्धक्षत्र का मस्तक शतधा विदीर्ण हो गया (म. द्रो. १२१)। जयद्रथ का ध्वज वराहचिह्न का था (म. द्रो. ८०.२०)।

इसके एक पुत्र का वध, अर्जुन ने द्रौपदीस्वयंवर के समय किया (म. आ. २१८.१२)। इसका दूसरा पुत्र दुःशला से उत्पन्न सुरथ। अश्वमेध के समय अश्व के साथ अर्जुन आया, यह सुनते ही उसने प्राणत्याग किया (म. आश्व. ७७.२७)।

४. धर्मसावर्णि का पुत्र।

५. ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र।

जयध्वज—(सो. यदु. सह.) भागवत, विष्णु, मत्स्य एवं वायु के मत में सहस्रार्जुनपुत्र। इसका पुत्र तालजंघ। यह महारथी था (पद्म. स. १२)।

जयंत—(सो. यदु. वृष्णि.) मत्स्य मत में वृषभ-पुत्र तथा पद्म मत में ऋषभपुत्र (पद्म. स. १३)। पद्म में इसीका नामांतर श्वफल्क रहा होगा।

२. पांचालदेश का राजा। पांडवपक्षीय महारथी (म. उ. १६८.१०)।

३. इंद्र का पौलोमी से उत्पन्न पुत्र (म. आ. १०६. ४; भा. ६.१८.७)। देवासुर युद्ध में इसने कालेय राक्षस का वध किया (पद्म. सृ. ६६.)।

४. भीम का गुप्त नाम। जयेश देखिये।

५. धर्म ऋषि का मरुत्वती से उत्पन्न पुत्र। इसे उपेन्द्र कहते थे (भा. ६.६.८)।

६. दशरथ के अष्टप्रधानों में से एक (वा.रा.बा.७)।

७. एक रुद्र एवं रुद्रगण।

८. विष्णु का एक पार्षद (भा. ८.११.१७)।

९. त्रेतायुग में परमेश्वर का नाम (भा. ११.५.२६)।

१०. यशस्विन् लौहित्य का नाम (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१; दक्ष जयंत लौहित्य देखिये)।

जयंत पाराशर्य—एक आचार्य। विपश्चित् का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

जयंत वारक्य—कुबेर वारक्य का शिष्य। उसका दादा कंस वारक्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

२. सुयज्ञ शांडिल्य के नाम से भी एक जयंत वारक्य का उल्लेख है (जै. उ. ब्रा. ४.१७.१)।

जयंती—स्वायंभुव मन्वंतर के यज्ञ नामक इंद्र की कन्या, तथा ऋषभदेव राजर्षि की भार्या। इसे भरतादि सौ पुत्र थे (भा. ५.४.८)।

२. वर्तमान वैवस्वत मन्वंतर के पुरंदर नामक इंद्र की कन्या, तथा वारुणि भृगु के पुत्र शुक्र की स्त्री। देवताओं के नाश के लिये, शुक्राचार्य उग्र तपश्चर्या कर रहे थे। तप में विघ्न उपस्थित करने के लिये, इंद्र ने शुक्राचार्य के पास इसे भेजा। वहाँ जाने पर जयंती ने उत्कृष्ट प्रकार से उसकी सेवा की। बाद में शंकर से शुक्राचार्य को वरप्राप्ति होते ही, उसने इसका हेतु पहचाना। इसे साथ ले कर वह घर आया और गृहस्थाश्रम का उपभोग करने लगा। इससे उसे देवयानी नामक कन्या हुई (मत्स्य. ४७; पद्म. सृ. १३; उशनस् देखिये)।

३. सुषेण राजा की कन्या। यह इसने राजपुत्र माधव को दी थी (पद्म. क्रि. ६)।

जयरात—कलिंग देश के भानुमत् राजा का भाई। भारतीय युद्ध में इसका भीम ने वध किया (म. द्रो. १३०. ३१)।

जयवर्मन्—दुर्योधन पक्ष का राजा (म. द्रो. १३१. ८६)।

जयविजय—कर्दम प्रजापति को देवहूती से उत्पन्न पुत्र। ये बडे विष्णुभक्त थे। हमेशा अष्टाक्षर मंत्र का जप तथा विष्णु का व्रत करते थे। इससे इन्हें विष्णु का साक्षात्कार होता था। ये यज्ञकर्म में भी कुशल थे।

एकबार मरुत्त राजा के निमंत्रण से, ये उसके यज्ञ के लिये गये। उसमें जय 'ब्रह्मा,' तथा 'विजय' याजक हुआ। यज्ञसमाप्ति पर राजा ने इन्हें विपुल दक्षिणा दी। वह दक्षिणा ले कर घर आने के बाद, दक्षिणा का बँटवारा करने के बारे में इनमें झगड़ा हुआ। अन्त में जय ने विजय को, 'तुम मगर बनोगे' ऐसा शाप दिया। विजय ने भी जय को, 'तुम हाथी बनोगे' ऐसा शाप दिया। परंतु शीघ्र ही कृतकर्म के प्रति पश्चात्ताप हो कर, यह दोनों विष्णु की शरण में गये। विष्णु ने आश्वासन दिया, 'शाप समाप्त होते ही मैं तुम्हारा उद्धार करूँगा'। शाप के अनुसार, एक मगर, तथा दूसरा हाथी बन कर, गंड़की के किनारे रहने लगे। बाद में एक दिन हाथी कार्तिकस्नान के हेतु से गंड़की नदी में उतरा। मगर ने उसका पैर पकड़ लिया। तब इसने विष्णु को पुकारा। विष्णु ने आ कर दोनों का उद्धार किया। उन्हें वह विष्णुलोक ले गया। पश्चात् जय तथा विजय विष्णु के द्वारपाल बने (स्कन्द. २.४.२८; पद्म. उ. १११-११२)।

बाद में सनकादि देवर्षियों को, विष्णुदर्शन के लिये इन्हों-ने जाने नही दिया। अतः उनके शाप से, वैकुंठ से पतित हो कर, ये असुरयोनि में गये। इनमें से जय ने हिरण्याक्ष का जन्म लिया। पृथ्वी सिर पर धारण कर के वह उसे पाताल ले गया। तब वराह अवतार धारण कर के, विष्णु ने इसका वध किया एवं पृथ्वी की रक्षा की (भा. ३.१६.३२; पद्म. उ. २३७)।

अश्वियों ने, 'तुम पृथ्वी पर तीन बार जन्म लोगे' ऐसा शाप इन्हे दिया। इन्होंने भी अश्वियों को, 'तुम भी एक बार पृथ्वी पर जन्म लोगे' ऐसा शाप दिया। शाप के अनुसार, जयविजय ने क्रमशः हिरण्याक्ष तथा हिरण्य-कश्यपु के रूप में जन्म लिया। बाद में रामावतार के समय रावण तथा कुंभकर्ण, तथा कृष्णावतार में शिशुपाल तथा वक्रदन्त नामों से ये प्रसिद्ध हुएँ।

जयशर्मन्---अवंतीनगर के शिवशर्मा ब्राह्मण का पुत्र। व्यसनी हो कर भी, इसने अधिकमास में वद्य–एकादशी का व्रत आचरण किया। लक्ष्मी ने इसे एकादशी-माहात्म्य बताया (पद्म. उ. ६२)।

जयसेन---जयत्सेन १.२. देखिये।

२. (सो. क्षत्र.) भागवत मत में अहीनपुत्र (जयत्सेन देखिये)।

३. क्षत्रिय राजा मागध (म. स. ४.२३)।

४. अवंत्य राजा। इसे राजाधिदेवी नामक स्त्री थी। इसके पुत्र विंदानुविंद एवं कन्या मित्रविंदा थी। वह कृष्ण को विवाह में दी गयी थी।

जया---कृशाश्व प्रजापति की कन्या तथा पार्वती की दासी (स्कंद. १.३.२.१८)। यह पार्वती की सखी होने का उल्लेख भी प्राप्त है। (वामन ४; पद्म. उ. १६)।

जयानीक---द्रुपदपुत्र पांचाल। भारतीययुद्ध में यह अश्वत्थामा से मारा गया (म. द्रो. १३१.१२.७)।

२. विराट का भाई (म. द्रो. १३३.२९)।

जयावह---मणिवर तथा देवजनी का पुत्र।

जयाश्व---जयानीक का भ्राता। अश्वत्थामा ने भारतीययुद्ध में इसका वध किया (म.द्रो.१३१.१२७)।

२. विराट का भाई (म. द्रो. १३३.२९)।

जयेश---विराट नगरी में भीम द्वारा धारण किया गया गुप्त नाम (म. वि. ५.३०; २२.१२; भांडारकर प्रति: जयंत)।

जर---जरस् देखिये।

जरत्कारु---ऐरावत सर्प तथा एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७६)।

२. एक ऋषि। कारु का अर्थ है शरीर। शरीर को तप से क्षीण करता हैं, वह जरत्कारु, यह इस शब्द की व्युत्पति है (म. आ. ३६.३)। यह यायावरों का पुत्र था (म. आ. ४१.१६)।

ब्रह्मचारी अवस्था में जरत्कारु तीर्थयात्रा कर रहा था। तब इसे घास के आश्रय से एक गड्ढे में लटकनेवाले वीरणक नामक पितर दिखे। घास का जड़ चूहों द्वारा कुतरा जा रहा था। इसी कारण उनका आधार कब टूट जावेगा कह नही सकता था। उनकी इस अवस्था का कारण इसने पूछा। उन्होंने कहा, 'जरत्कारु अविवाहित होने के कारण हमारा वंश खंडित हो गया है। इस लिये हमारी यह स्थिति हो गई है। केवल तप के भरोसे हम आज तक जीवित हैं। परंतु उस तप को कालरूपी चूहा दिनरात कुतर रहा है। अतः किस तरह क्यों न हो, हमारे पुत्र से विवाह करने को कहो'। तब इसने कहा, 'मैं तुम्हारा ही पुत्र हूँ। मैं ने ब्रह्मचर्यावस्था में रहने का निश्चय किया था। तुम्हारी यह स्थिति देख कर मैंने अपना विचार बदल दिया है। मेरे ही नाम की कन्या मुझे भिक्षा में प्राप्त हो। उसके पोषण की जिम्मेवारी मुझ पर न हो। इस शर्तपर, उससे मैं विवाह कर लूँगा'।

वृद्ध होने के कारण, कोई भी इसे कन्या नहीं देता था। पश्चात् अरण्य में वासुकि ने अपनी जरत्कारु नामक भगिनी इसे दी, तथा उसका पोषण करने की जिम्मेवारी स्वयं उठा ली। विवाह होने पर पतिपत्नी एकत्र रहने लगे। परंतु इसने शुरु में ही इसे चेतावनी दी कि, 'मेरे मन के विरुद्ध अगर तुम व्यवहार करोगी, तो मैं तुम्हें छोड़ दूँगा'।

एक दिन यह अपनी पत्नी की गोद में सिर रख कर सोया था। सायंकाल होने के बाद, संध्यालोप न हो, इसलिये उसने पति को जाग्रत किया। तब 'मैं सोया हूँ। सूर्य की क्या मजाल है कि, वह अस्तायमान हो?' ऐसा क्रोध में कह कर यह पुनः तप करने के लिये चला गया (म. आ. ४३.२९)। इस समय जरत्कारु गर्भवती थी। उसे आस्तीक नामक पुत्र हुआ। जरत्कारु की पत्नी कश्यपकन्या मनसा से, आस्तीक का जन्म हुआ (दे. भा. ९. ४७-४९; मनसा देखिये)।

३. जरत्कारु की पत्नी (जरत्कारु २. देखिये)।

जरत्गौरी---आस्तीक की माता जरत्कारु का नामांतर।

जरस्---वसुदेव को रथराजी नामक स्त्री से उत्पन्न द्वितीय पुत्र। इसे 'जर' नामांतर है। यह क्षत्रिय था, परंतु दुराचरण से व्याध बना। इसीके बाण से कृष्ण की मृत्यु हुई। बाद में भल्लतीर्थ में इसकी मृत्यु हो गई (भा. ११. ३०.३३; म. मौ. ५.१९-२२; स्कन्द. ७.१.२३९-२४१)।

जरा---एक राक्षसी; तथा जरासंध की उपमाता (जरासंध देखिये)। जरासंध ने कृष्णादिकों का वध करने के लिये गदा फेंकी। उसका प्रतिकार करने के हेतु, बलराम ने स्थूणाकर्ण नामक अस्त्र फेंका। इन दोनों के बीच में आने के कारण, इसकी मृत्यु हो गई (म. द्रो. १५६.१४)।

जरासंध---(सो. मगध.) वायु मत में नभस्-पुत्र। भागवत, विष्णु एवं मत्स्य मत में राजा बृहद्रथ का पुत्र। इसलिये इसे बार्हद्रथि नामांतर था।

बृहद्रथ राजा ने काशिराज की जुडवाँ कन्याओं से विवाह किये थे। लंबी कालावधि तक वह अनपत्य रहा।

काक्षीवत तमपुत्र चंड़कौशिक ने उसे पुत्रप्राप्ति के लिये प्रसादस्वरूप एक आम्रफल दिया। दोनों पत्नियों से समभाव से व्यवहार करूँगा, ऐसी उसकी प्रतिज्ञा थी। अतः उसकी दोनों पत्नियों ने, उस फल आधा आधा भक्षण किया। कुछ काल के बाद, उन्हें आधा आधा पुत्र हुआ। वे टुकडे उन्होंने दासियों के द्वारा चौराहे पर ले जा कर, रखवा दिये।

पश्चात् जरा अथवा गृहदेवी नामक राक्षसी ने उन तुकडों को जोड दिया। उससे एक बालक निर्माण हुआ। बाद में इस बालक को खाने के लिये, वह खींच कर ले जाने लगी। परंतु उस बलवान् बालक को वह खींच नहीं सकी। बाद में उस बालक ने रुदन प्रारंभ किया। तब राजा बाहर आया। राक्षसी ने वह बालक उसे दे डाला। राजा ने इसका नाम जरासंध रखा (म. स. १६–१७; मत्स्य. ५०)।

"बृहद्रथ की एक ही पत्नी को बालक के दो टुकड़े हुएँ। उसने उन्हें चौराहे पर फेंक दिया। जरा नामक राक्षसी उन टुकड़ों के पास बैठ कर, लीलावश बारबार 'जीवित हो,' ऐसा कहने लगी। इस मंत्र से उन जुडे टुकडों में जान आ गई," ऐसी भी कथा प्राप्त है (भा. ९.२२)।

इसका जन्म विप्रचित्ति दानव के अंश से हुआ था (म. आ. ६१.४)। यह मगध देश का अधिपति था। इसकी राजधानी का नाम गिरिव्रज था। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था। परंतु धनुष्य उठाते समय, घुटनों पर गिर कर यह फजीहत हुआ। अतः सीधा अपने देश वापस चला गया (म. आ. १७८–१८१८*)। रुक्मिणीस्वयंवर में भी यह उपस्थित था। वहाँ भीष्मक के सामने इसके द्वारा किया गया कृष्णस्तुतियुक्त भाषण, इसके कृष्णद्वेष से विसंगत प्रतीत होता है (ह. वं. २.४८)।

इसने अपनी दो कन्यायें तथा सहदेव की कनिष्ठ बहनें, अस्ति तथा प्राप्ति कंस को दी थीं। कंसवध की वार्ता उनके मुख से ज्ञात होते ही, इसने सेनासहित मथुरा पर आक्रमण किया। इसकी सेना तेईस अक्षौहिणी (विष्णु. ५.२२) अथवा बीस अक्षौहिणी थी (ह. वं. २.३६)। कृष्ण तथा बलराम नगर के बाहर आ कर, इससे युद्ध करने के लिये तैय्यार हो गये।

जरासंध जैसे शक्तिमान् शत्रु से टक्कर देनी थी। बलराम तथा कृष्ण को इस काम में प्रभावी शस्त्रों की आवश्यकता थी। अतः कृष्ण ने शार्ङ्ग धनुष, अक्षय तुणीर तथा कौमोदकी गदा प्राप्त की। बलराम ने भी संवर्तक हल तथा सौनंद मुसल प्राप्त किया (ह. वं. २. ३५.५९–६५; विष्णु. ५.२२. ६–७)।

जरासंध के द्वारा मथुरा के चारों द्वारों पर आक्रमण करने के लिये, जिन राजाओं की योजना की थी, वे निम्नलिखित है:—

दक्षिण में—दरद, चेदिराज तथा स्वयं जरासंध;

उत्तर दिशा में—पूरुकुलोत्पन्न वेणुदारि, विदर्भाधिपति सोमकराज, भोजेश्वर रुक्मिन्, सूर्याक्ष तथा मालवेश, अवंतिदेश के विंद तथा अनुविंद, दंतवक्त्र, छागलि, पुरमित्र, विराट, कौरव्य, मालव, शतधन्वा, विदूरथ, भूरिश्रवा, त्रिगर्त, बाण एवं पंचनद;

पूर्व में—उलूक, कैतव, अंशुमान् राजा का पुत्र एकलव्य, बृहत्क्षत्र, बृहद्धर्मन्, जयद्रथ, उत्तमौजस, शल्य, कौरव, कैकेय, वैदिश, वामदेव तथा सिनि देश का राजा सांकृति;

पश्चिम में—मद्रराजा, कलिंगपति, चेकितान, बाह्लिक, काश्मीराधिपति गोनर्द, करुषेश द्रुमराजा, किंपुरुष तथा पर्वतप्रदेश का अनामय (ह. वं. २.३५)।

इस प्रकार इसने व्यवस्था की। परंतु यादव सेना संख्या में कम होते हुए भी, उसने इसकी पराजय की। इस युद्ध में, एकबार बलराम इसे मारने के लिये प्रवृत्त हो गया था। परंतु आकाशवाणी ने उसे सुझाया, 'इसका वध किसके द्वारा होगा यह तुम्हें मालूम है, इसलिये तुम इसका वध मत करो' (ह. वं. २.३६)। जरासंध को बलराम ने कई बार जीता। परंतु इसका वध नहीं किया। इसके साथ के राजाओं पर, उसने अच्छा हाथ चलाया (ह. वं. २.६२.५.१२)।

इस युद्ध में भाग लेनेवाले राजाओं की तीन सूचियाँ प्राप्त हैं, परंतु वे एक दूसरे से मेल नहीं रखती। एक में चेदिराज शिशुपाल है, तो दूसरी में चेदिराज पुरुषोत्तम। एक में सिनिराज सांकृति, तो दूसरे में केशिराज सांकृति। कहीं एक ही सूचि में, दरद तथा दरदेश्वर नामक दो राजाओं का उल्लेख है। इनके अतिरिक्त राजाओं का भी मेल नहीं बैठता (ह. वं. २.३४)।

इस प्रकार इसने मथुरा पर कुल सत्रह बार आक्रमण किये। हर समय इसका पराभव ही हुआ। बिना किसी कारण, यह कृष्ण से शत्रुत्व रखता था। जयद्रथ के आक्रमण से बचने के लिये, कृष्ण ने मथुरा छोड़ी। पश्चिम समुद्र तट पर रैवतक पर्वत के पास, द्वारका में नये राज्य

की स्थापना की। इस युद्ध में कृष्ण के पक्ष में, कुल अठारह राजकुल थे (म. स. १३; विष्णु. ५.२२; ब्रह्म. १९५)। इस प्रकार, इस युद्ध में पराजित हो कर, यह वापस लौटा। पश्चात् इसने अपनी सहायता के लिये कालयवन को आमंत्रित किया (ह. वं. २.५३)।

यद्यपि कृष्ण ने इसका पराभव किया था, तथापि यह अत्यंत शूर था। इसे राज्य प्रदान कर, इसके मातापिता ने वनगमन किया। पश्चात्, इसने अतुल पराक्रम दर्शाया। भोजकुल के सब क्षत्रियों को पादाक्रांत कर, उन्हें अपने काबू में लाया। तब सभीयों ने इसे सार्वभौमपद पर स्थापित किया (म. स. १३)। गिरिव्रज राजधानी में, ९९ बार घूमा कर इसके द्वारा फेंकी गई गदा, ९९ योजन दूर मथुरा के पास आ कर गिरी। हंस तथा डिंभक नामक दो पराक्रमी भाई इसके सेनापति थे (म. स. १३)। कर्ण तथा जरासंध का युद्ध हो कर, उसमें कर्ण विजयी हुआ। इससे इसमें तथा कर्ण में मित्रत्व उत्पन्न हो कर, इसने उसे मालिनीनगरी अर्पण की (म. शां. ५.६)। जरासंध की सहायता से ही, कंस ने पिता का राज्य छीना (हं. वं. २.३४.६-७)।

धर्मराज के मन में, राजसूय यज्ञ करने की इच्छा उत्पन्न हुई। उसने कृष्ण को इन्द्रप्रस्थ बुला कर उसकी सलाह ली। कृष्ण ने उसे कहा, 'चूंकि जरासंध ने ८६ राजाओं को कैद कर रखा है, उसे बिना जीते राजसूय यज्ञ पूरा न हो सकेगा'। भागवत में २०८०० राजाओं का उल्लेख है। इसका निश्चय था कि, उन राजाओं को यह महादेव को बलि चढायेगा। प्रत्येक कृष्ण चतुर्दशी को यह एक एक राजा की बलि भैरव को चढाता था।

इसलिये जरासंध को जीतने के लिये कृष्ण तथा अर्जुन को ले कर, कृष्ण गिरिव्रज में गया। उन्होंने ब्राह्मणवेश धारण किया था। इसके महाद्वार पर रखी गई अत्यंत बड़ी तीन दुंदुभियों को फोड कर, उन्होंने इसके घर गमन किया। जरासंध ने उनसे मिल कर उनका सत्कार किया तथा इच्छा पूछी। कृष्ण ने कहा, 'इन दोनों का मौनव्रत है, इसलिये हम मध्यरात्रि के बाद वार्तालाप करेंगे'। मध्यरात्रि के बाद जरासंध अर्घ्यपाद्य दे कर उनका सत्कार करने लगा। उन्होंने उसे ग्रहण नहीं किया। तब उनकी आकृति देख कर, जरासंध ने पहचाना कि, वे क्षत्रिय है। उनसे आगमन का कारण पूछा। कृष्ण ने तीनों के नाम बता कर कहा, 'जिससे युद्ध करने की तुम्हारी इच्छा हो, उससे तुम युद्ध करो'।

जरासंध ने कृष्ण तथा अर्जुन को नालायक मान कर, भीम से युद्ध करने का निश्चय किया। सहदेव को राज्याभिषेक कर स्वयं युद्ध प्रारंभ किया। प्रथम इनका गदायुद्ध हुआ, परंतु एक दूसरे के शरीरों पर काफी बार आघात होने के कारण गदायें टूट गईं। द्वंद्वयुद्ध प्रारंभ हुआ। यह युद्ध दिनरात चलता था। यह युद्ध कार्तिक शु. १ से कार्तिक शु. १४ तक १४ दिन (म. स. २१.१७-१८), २५ दिन (पद्म.उ. २७९) अथवा २७ दिन (भा. १०.७२. ४०) चल रहा था। युद्ध के अंतिम दिन दोनों अत्यंत थक गये थे। कृष्ण की उत्तेजना से भीम ने जरासंध का वध किया (म. स. २२.६; क. २०-२४)। अंतिम दिन में भीम ने जरासंध को फाड डाला। यह पुनः जुड कर युद्ध के लिये सिद्ध हो गया। यह देख कर भीम इस विचार में पड़ा, इसकी मृत्यु कैसी हो। इतने में कृष्ण ने एक तृण हाथ में ले कर उसका छेद किया। दाहिने हाथ का तृण बाँई ओर, तथा बाँयें हाथ का तृण दाहिनी ओर फेंकने का संकेत कृष्ण ने भीम को किया। भीम ने वैसा करते ही जरासंध की मृत्यु हो गई (पद्म. उ. २५२; २७८)। कृष्ण को यह युक्ति उद्धव ने सुझाई थी।

जरासंध मृत होते ही, इसका पुत्र सहदेव शरण आया। कृष्ण ने उसे अभय दिया। उसको राज्य पर स्थापित कर के सब राजाओं को कारागृह से छुड़ा दिया। बाद में उन सब राजाओं को राजसूय यज्ञ में आमंत्रित कर, यह भीमार्जुन के साथ इन्द्रप्रस्थ लौटा (म. स. २२; पद्म. उ. २५२)। परंतु महाभारत में लिखा है कि, जरासंध वध का कृत्य दिग्विजय के पहले किया गया। भागवत में लिखा है कि, सारा दिग्विजय पूरा होने के बाद, जरासंध अजित रहा, इसलिये यह आक्रमण करना पड़ा।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

जरितारि—मंदपाल ऋषि को शार्ङ्गी जरिता से उत्पन्न पुत्र (म. आ. २२४.६; अनु. ५३.२२ कुं.)।

जरिता शार्ङ्गी—मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१४२.१; २)।

२. मंदपाल ऋषि की पत्नी। शार्ङ्ग एक पक्षी की जाति है। मंदपाल से इसे चार पुत्र हुएँ। उनके नाम जरितारि, सारिसृक्व, द्रोण तथा स्तम्बमित्र थे (म. आ. २२४.६)। ये ही नाम उपरोक्त सूक्तों के क्रम से दो दो ऋचाओं के द्रष्टाओं के हैं। उन पुत्रों को मंदपालद्वारा भगा दिये जाने पर, वे दावाग्नि में घिर गये। परंतु उपरोक्त दो मंत्रों से, अग्नि की प्रार्थना करने पर दावाग्नि से ये मुक्त हो गये। सायण ने इस कथा का अनुक्रमणी के

आधार से संबंध जोड़ा है। महाभारत तथा अनुक्रमणी में प्रथम पुत्र के नाम में मतभेद है। महाभारत में जरि-

जह्नावी—यह शब्द ऋग्वेद में दो बार आया है (ऋ. १.११६. १९; ३.५८.६)। जन्हु की स्त्री, वा सायण के

३. (सो. पूरु.) मिथिल का पुत्र। इसका पुत्र सिंधुद्वीप (म. अनु. ७.३.कुं.)। जह्नु आदि विश्वामित्रकुल के लोग, महाभारत में कई जगह पूरुवंश में दिये हैं। दूसरे स्थल में भिन्न प्रतिपादन है (म. शां. ४९)।

४. (सो. पूरु. कुरु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य, तथा वायु के मत में कुरु के पाँच पुत्रों में तीसरा। इसका पुत्र सुरथ। उस से हस्तिनापुर में कुरुवंश का विस्तार हुआ।

५. तामस मन्वन्तर का एक ऋषि।

जाजलि—एक ऋषि। इसे अपने तप पर घमंड हो गया था। तुलाधार नामक एक धर्मात्मा वैश्य से संवाद करने पर, इसका घमंड नष्ट हुआ। इसे पश्चिमी समुद्र के किनारे पर मुक्ति मिली (म. शां. २५३–२५७; भा. ४. ३१.२)।

२. विष्णु, वायु, ब्रह्मांड तथा भागवत के मत में व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा के पथ्य का शिष्य।

३. भास्करसंहिता के वेदांगसारतंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

४. ऋग्वेदी श्रुतर्षि।

जाटासुरि—जटासुर के पुत्र अलंबुष का नामांतर।

जाटिकायन—एक ऋषि। शांत्युदक करते समय किस मंत्र का उपयोग करना चाहिये, इस विषय में इसका मत दिया गया है (कौ. सू. ९.१०)।

जात शाकायन्य—एक ऋषि। कर्म के एक विशिष्ट संप्रदाय प्रवर्तक के नाते इसका के उल्लेख है (क. सं. २२.७)। यह शंख कौष्य का समकालीन था।

जातूकर्ण—जातूकर्ण्य ६. देखिये।

जातूकर्ण्य—आसुरायण एवं यास्क का शिष्य। इसका शिष्य पाराशर्य (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। यह कात्यायनी का पुत्र था (सां. आ. ८.१०)। अलीकयु वाचस्पत्य तथा अन्य ऋषियों का यह समकालीन था। अन्य काफी स्थानों में इसका उल्लेख है (ऐ. आ. ५.३.३; सां. श्रौ. १.२.१७; ३.१६.१४; २०.१९; १६.२९.६; का. श्रौ. ४.१.२७; २०.३.१७; २५.७.३४; सां. ब्रा. २६.५)। संधिनियम के बारे में विचार करनेवाला, यह एक आचार्य था (ऋ. प्रा. ४.१२३; १५८; ५.२२)। सांख्यायन श्रौतसूत्र में इसे जल जातूकर्ण्य कहा है।

एक पैतृक नाम के नाते, जातूकर्ण्य शब्द का उपयोग भी प्राप्त है।

धर्मशास्त्रकार—विश्वरूप ने, वृद्ध याज्ञवल्क्य से लिये गये एक उद्धरण में, जातूकर्ण्य का धर्मशास्त्रकार के नाते उल्लेख किया है। स्मृतिचन्द्रिका में दी गयी, 'आंगिरस स्मृति' के एक उद्धरण में, जातूकर्ण्य को उपस्मृतिकार कहा है। इसी प्रकार विद्यार्थियों के कर्तव्य, अन्य जाति की स्त्री से विवाह का प्रतिबंध, श्राद्धकाल आदि के संबंध में जातूकर्ण्य के सूत्र प्राप्त है। जातूकर्ण्य ने आचार तथा श्राद्ध आदि पर काफी प्राचीन सूत्र लिखे थे। बारह राशियों में से, कन्या राशि के संबंध में जातूकर्ण्य के एक श्लोक का उल्लेख, अपरार्क ने किया है। इससे प्रतीत होता है कि, जातूकर्ण्य का काल ईसवी सन २०० से ४०० के बीच का होगा। श्रौतसूत्र में एवं हलायुध तथा हेमाद्रि के ग्रंथों में भी इसके आधार लिये गये है (का. श्रौ. ४.१.२७; २०.३.१७; २५.७.३५; सां. श्रौ. १.२.१७; ३.१४; २०.१९; १६.२९.६)।

२. (सू. दिष्ट.) भागवत के मत में देवदत्त पुत्र।

३. (सू. नरि.) एक ऋषि (म. स. ४.१२)। अग्निवेश्य का यह नामांतर था (भा. ९.२.२१)।

४. व्यास की ऋक्‌शिष्य परंपरा के शाकल्य मुनि का शिष्य। इसने शाकलसंहिता का अध्ययन किया था (व्यास देखिये)।

५. वसिष्ठगोत्र का प्रवर।

६. एक व्यास (व्यास देखिये)। जातूकर्ण ऐसा पाठ भी उपलब्ध है। यह जरथुष्ट्र से मिलने के लिये ईरान गया था (दसातिर. १३.१६३)।

७. ब्रह्मांड पुराण की परंपरा का एक आचार्य।

जातूष्ठिर—एक व्यक्ति। इंद्र ने इसकी सहायता की थी (ऋ. २.१३.११)।

जान—वृश का पैतृक नाम।

जानकि—ऋतुजित् (तै. सं. २.३.८.१; क. सं. ११.१), तथा अयस्थूण (बृ. उ. ६.३.१०) का पैतृक नाम। उपनिषदों में इसे चूल भागवित्ति का शिष्य तथा सत्यकाम जाबाल का गुरु कहा गया है। उपरोक्त वर्णित सारे जानकि एक हैं या अनेक, यह कहा नहीं जाता।

२. एक ऋषि। विश्वंतर के सोमयाग में, श्यापर्ण के प्रवेश करने के बाद, एक विशिष्ट पद्धति की सोम की परंपरा बतायी गयी। यह परंपरा ऋतुविद् ने जानकि को सिखायी (ऐ. ब्रा. ७.३४)।

३. दुर्योधनपक्षीय क्षत्रिय राजा (म. आ. ६१.३६)। स्वर्ग में रहनेवाले चंद्रविनाशन दैत्य का यह अंशावतार था।

जानंतपि—अत्यराति का पैतृक नाम।

जानपदी—जालपदी या जालवती का नामांतर।

जानश्रुति---पौत्रायण का पैतृक नाम (छां. उ. ४. १.१; २.१)। इस उदार गृहस्थ ने सर्वत्र अन्नछेत्र खोल दिये थे (रैक्व देखिये)।

जानश्रुतेय---उपावि, उलक्य, औपावि, नगरिन्, तथा सायक का पैतृक नाम।

जानुजंघ---एक क्षत्रिय (म. आ. १.१७६. अनु. २७१.५९ कुं.)।

२. तामस मन्वन्तर में से मनुपुत्र।

जांदकार---सूर्य के समीप रहनेवाले अठारह विनायकों में से एक (सांब. १६)। जांदकार का शब्दशः अर्थ है 'सहायता करनेवाला'। यह हमेशा यम का कार्य करता है।

जाबाल---महाशाल तथा सत्यकाम का मातृक नाम। एक सत्र का यह गृहपति था (सां. ब्रां. २३.५)।

२. भृगुकुल का गोत्रकार।

३. विश्वामित्र का एक पुत्र।

४. विश्वामित्रकुल का गोत्रकार तथा एक ऋषिगण।

५. ब्रह्मांड मत में व्यास की यजुःशिष्य परंपरा के, याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

६. भास्करसंहिता के तंत्रसारतंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २. १६)।

जाबालायन---माध्यंदिनायन का शिष्य। इसका शिष्य उद्दालकायन (बृ. उ. ४.६.२; काण्व)।

जाबालि---विश्वामित्र का पुत्र।

२. दशरथ का एक मंत्री। यह राम के विवाह में उपस्थित था (वा. रा. बा. ६९.४)। पित्राज्ञा तोड कर अयोध्या आने के लिये, इसने राम को कहा। इसलिये राम ने इसका निषेध किया (वा. रा. अयो. १०८)।

रामसभा का धर्मशास्त्री के नाते भी इसका उल्लेख प्राप्त है। जाबालनीति नामक इसका एक ग्रंथ है। भारत के 'कणिकनीति' से वह साम्य रखता है।

३. एक ऋषि। इसके वंश में पैदा हुए लोगों को भी यही नाम प्रयुक्त है। मंदार पर्वत पर इसकी तपश्चर्या की जगह थी। इसके लाखों शिष्य थे। निपुंधिक राजा ऋतंभर को पुत्रप्राप्ति के लिये, इसने विष्णुसेवा, गोसेवा तथा शिवसेवा करने के लिये कहा।

एक दिन यह अरण्य में गया था। वहाँ तालाब के किनारे, एक सुंदर तथा तरुण तापसी तपश्चर्या करती हुई इसे दिख पडी। उसे जानने के लिये, यह वहाँ सौ वर्ष तक रुका। उसकी समाधि समाप्त होने पर, जाबालि ने उसकी जन्मकथा पूछी। बाद में कृष्णोपासना का रहस्य उससे जान कर, यह स्वयं कृष्ण की आराधना करने लगा। उस तपश्चर्या के फलस्वरूप, गोकुल के प्रचंड नामक गोप के घर में, चित्रगंधा नामक गोपी का जन्म इसे मिला (पद्म. पा. ३०.७२;१०९)।

४. एक ऋषि। एकबार यह घोर तपश्चर्या कर रहा था। इन्द्र ने रंभा को इसके पास भेजा। रंभा ने इसको मोहित किया। उससे इसे एक कन्या हुई। बाद में उस कन्या का चित्रांगद राजा ने हरण किया। तब जाबालि ने उसे कुष्ठरोगी बनने का शाप दिया (स्कन्द. ६.१४३-१४४)।

५. भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि (भृगु देखिये)। इसकी लिखी एक स्मृति प्रसिद्ध है। हेमाद्रि तथा हलायुध ने उस में से आधार लिये हैं।

जामघ---(सो.) भविष्य के मत में पारावतसुत का पुत्र।

जामदग्निय---एक पैतृक नाम। जमदग्नि के दो वंशजों के लिये यह नाम प्रयुक्त है (तै. सं. ७.१.९.१)। और्व लोगों को जामदग्निय कहा गया है (पं. ब्रा. २१.१०.६)।

जामदग्न्य---परशुराम का पैतृक नाम।

२. सावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

जामि---यामि देखिये।

जामित्र---तुषित देवों में से एक।

जांबवत्---प्रजापति तथा रक्षा का पुत्र। इसकी पत्नी व्याघ्री। इसकी कन्या जांबवती (ब्रह्मांड. ३.७.३०१)। ब्रह्मदेव की जम्हाई से यह पैदा हुआ (वा. रा. बा. १७)। यह ऋक्षों का राजा था (वा. रा. यु. ३७)।

२. एक वानर। सीताशोध के लिये इसने राम की काफी सहायता की (वा. रा. यु. ७४)। रावणवध के बाद, राम का जय होने की वार्ता, नगाडे पीट कर इसने सब को बताई। राम के राज्याभिषेक के लिये समुद्र का पानी इसीने लाया था (वा. रा. यु. १२८)। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्वरक्षण के लिये, शत्रुघ्न के साथ यह भी गया था (पद्म. पा. ११.१५)।

३. वानर जाति का एक मानव। स्यमंतकमणि के लिये, कृष्ण से इसका अठ्ठाईस दिनों तक युद्ध हुआ। अन्त में कृष्ण रामावतार है, यह जान कर इसने उसकी स्तुति की। पश्चात् स्यमंतक मणि के साथ अपनी कन्या जांबवती इसने कृष्ण को दी (भा. १०.५६.३२; पद्म. उ. २७६)।

इसने दशांग पर्वत पर शिवलिंग की स्थापना की थी। उस लिंग को इसके नाम पर 'जांबवत लिंग' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. उ. १४३)।

जांबवती—ऋक्षराज जांबवत् की कन्या, तथा कृष्ण की अष्टनायिकाओं में से एक। इसे सांब, सुमित्र, पुरुजित्, शतजित्, सहस्रजित्, विजय, चित्रकेतु, वसुमत्, द्रविड तथा क्रतु नामक पुत्र, तथा एक कन्या थी (म. स. परि. १, क्र. २१, पंक्ति. १४११; भा. १०.५६.३२; ६१.१२; विष्णु. ४.१३)। अन्त में इसने अग्निप्रवेश किया (म. मौ. ८.७२)।

जायद्रथ—जयद्रथपुत्र सुरथ का नामांतर।

जायंत—जयंती से ऋषभदेव को उत्पन्न शतपुत्रों का नामांतर।

जायंतीपुत्र—आलंबीपुत्र का गुरु तथा मांडूकायनीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ६.५.२)।

जायंतेय—जायंत का नामांतर।

जार—वृषजार देखिये।

जारत्कारव—आर्तभाग का पैतृक नाम (बृ. उ. ३.२.१)।

जारासंधि—जरासंधपुत्र सहदेव का नामांतर।

जार्ति—तंति का नामांतर।

जालधि—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

जालंधर—एक दैत्य। यह समुद्र में पैदा हुआ। यह शास्त्रवेत्ता था। इसका वध शंकर ही कर सकेंगे, ऐसा ब्रह्मदेव ने इसे वरदान दिया था (स्कंद.,२.४.१४; पद्म. उ. ४-१९; शिव. रुद्र. यु. १४)।

समुद्र तथा गंगा का यह पुत्र, जालंधर देश में रहता था। इसका राज्य पाताल एवं स्वर्ग पर भी था। इसकी पत्नी वृंदा। शुक्र के साहाय्य से यह पृथ्वी का शासन करता था। संजीवनीविद्या भी इसे अवगत थी। यह सर्वथा अजेय था। इंद्रपद पर इसने कब्जा किया था। लक्ष्मीनारायण भी इसके घर में रहते थे।

नारद ने एक बार पार्वती के सौंदर्य की प्रशंसा की। इसने पार्वती को लाने के लिये राहू को भेजा। शंकर ने राहु को भगा दिया। अन्त में शंकर तथा जालंधर का घमासान युद्ध हुआ। शस्त्रयुद्ध के बाद मायायुद्ध शुरू हुआ। पार्वती के पास यह शंकर का रूप ले कर गया। विष्णु जालंधर का रूप ले कर वृन्दा के पास आया। वृंदा ने विष्णु को, द्वारपालद्वारा पराजित होने का शाप दिया। फिर भी विष्णुमाया से लज्जित हो कर, वृन्दा ने अग्निप्रवेश किया (शिव. रुद्र. यु. २३; आ. रा. सार. ४)।

दूसरी जगह यह कथा भिन्न रूप में आयी है। वृंदा ने विष्णु को शाप दिया, 'तुम्हारी स्त्रियों का भी इसी प्रकार हरण होगा'। बाद में वृंदा ने देहत्याग किया (पद्म. उ. १५)। शंकर ने इसका सिर सुदर्शन चक्र से काट दिया (स्कंद. २.४.१४-२२)।

'जालंधरायण-जालंधर-त्रिगर्त-कांग्रा' यह प्रदेश पाणिनिकाल से आज तक सतलज (शुतुद्रु) नदी के पश्चिम भाग में व्याप्त है।

जालपदी—देवकन्या। इसे देख कर शरद्वत् का रेतस्खलन हो कर, कृप एवं कृपी ये पैदा हुएँ (म. आ. १२०.६)।

जाहुष—एक राजा। अश्विनों की कृपा से इसका राज्य पुनः प्राप्त हुआ। च्यवन तथा यह, पक्थों का राजा तुर्वयाण के विरुद्ध के पक्ष में थे (ऋ. ७.७१.५)।

जाह्नव—विश्वामित्र का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २१.१२; जह्नु तथा विश्वामित्र देखिये)।

जिगीषु—पृथुक देवों में से एक।

जित्—एक देवप्रकार। स्वायंभुव मन्वन्तर में देवताओं को 'याम' कहते थे। उन्हीं में से एक प्रकार जित् नाम से प्रसिद्ध था।

जित—(सो. यदु.) भागवत में यदुपुत्रों में से एक।

जितकाम—मधुवन के शाकुनि ऋषि का पुत्र। यह अत्यंत विरक्त था, तथा संन्यास वृत्ति से रहता था (पद्म. स्व. ३१)।

जितवती—उशीनर की कन्या तथा द्यु नामक वसु की भार्या।

जितव्रत—(स्वा. उत्तान.) भागवत मत में हविर्धान का पुत्र। इसकी माता हविर्धानी।

जिताजित्—स्वायंभुव मन्वन्तर में से एक देवप्रकार।

जितारि—(सो. कुरु.) अविक्षित् का पुत्र।

जित्वन् शैलिनि—शिलीन ऋषि का पुत्र। इसका भ्राता जिन। एक स्थान पर इसका नाम शैलिन् आया है (बृ. उ. ४.१.५; माध्यं.)। परंतु काण्व प्रति में शैलिनि नाम दिया है (४.१.२)। जनक एवं याज्ञवल्क्य का यह समकालीन था। यह वाग्देवता को ब्रह्म मानता था।

जिन—जित्वन् देखिये।

२. पर्वरिक, अर्हत्, ऋषभ एवं बृहस्पति देखिये।

जिष्णु—विष्णु, इंद्र, एवं अर्जुन का नामांतर।

२. भौत्य मन्वन्तर के मनु का पुत्र।

जिष्णुकर्मन्—पांडवों के पक्ष का एक राजा। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५०)।

जिह्वक—भृगुकुल का गोत्रकार।

जिह्वावत् बाध्योग—असित वार्षगण का शिष्य। इसका शिष्य वाजश्रवस् (बृ. उ. ६.५.३)।

जीमूत—(सो. यदु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा वायुमत में व्योमपुत्र।

२. एक मल्ल। विराटगृह में भीम ने इसे मारा (म. वि. १२.२३)।

३. एक विप्रर्षि। यह उशीरबीज नामक क्षेत्र में रहता था (म. उ. १०९.२१)।

४. (सो. यदु.) भीम का पुत्र।

जीव—अंगिरस् का पुत्र (शुक्र देखिये)।

जीवनाश्व—अंगिराकुल का गोत्रकार। पाठभेद—युवनाश्व।

जीवंति—भृगुकुल का गोत्रकार।

जीवंती—एक पतिता वेश्या। रामनाम कहने से इसका उद्धार हुआ (पद्म. क्रि. १५)।

जीवल—अयोध्याधिपति ऋतुपर्ण का अश्वपाल। नल के अज्ञातवास में, यह उसके लिये सहानुभूति रखता था (म. व. ६४.११)।

जीवल चैलकि—एक यज्ञवेत्ता। अग्निहोत्र की जानकारी इसने दी है (श. ब्रा. २.३.१.३१-३५)।

जूहु—बृहस्पति की पत्नी (ऋ. १०.१०९)।

२. ब्रह्मदेव की पत्नी (सर्वानुक्रमणी)।

जूति—एक सूक्तकर्ता। यह वातरशन का पुत्र था। (ऋ. १०.१३६.१)।

जृंभक—एक यक्ष। धर्मारण्य के ऋषियों को यह त्रस्त करता था (स्कंद. ३.२.९)।

जेतृ—अमिताभ देवों में से एक।

जेतृ माधुच्छंदस—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १.११)।

जैगीषव्य—एक ऋषि (म. स. १२५ पंक्ति ५*; अनु. ४९.३७ कुं.)। इस के पिता का नाम शतशलाक (ब्रह्माण्ड. ३.१०.२०)। इसकी तीन पत्नियाँ थीः—१. पर्णा (मत्स्य. १७९), २. हिमवान की कन्या एकपाटला (ह. वं. १.१८.२४), ३. योगवती (पद्म. सृ. ९)। इसके शिष्य का नाम असित देवल था। उसे इसने अपने तप का अद्‌भुत तेज तथा लीलायें दर्शाई। इसमें ब्रह्मलोकगमन का सामर्थ्य था (म. श. ४९)। असित देवल के साथ इसका ब्रह्मप्राप्तिविषयक संवाद प्रसिद्ध है (म. शां. २२२)। अश्वशिरस् राजा के दरबार में, कपिल ने विष्णु का तथा इसने गरुड का रूप लिया था (वराह. ४)। इसे योगशास्त्र की जानकारी देने के लिये, ब्रह्मदत्त-पुत्र विष्वक्सेन ने, योगशास्त्र पर ग्रंथ लिखा (भा. ९. २१.२५-२६)।

इसने प्रभास क्षेत्र में घोर तपश्चर्या की। पूर्वकल्प में 'महोदय' नाम से प्रसिद्ध लिंग की इसने स्थापना की। शिव के प्रसन्न होने पर, 'मुझे ज्ञानयोग दीजिये,' यों वर इसने माँगा। इसके द्वारा स्थापित लिंग को आजकल सिद्धेश्वर कहते हैं (स्कंद. ७.१.१४)।

दूसरे स्थान पर विभिन्न कथा प्राप्त है। इस ऋषि ने जिद की, 'जब तक मुझे शिवदर्शन नहीं होगा, तब तक मैं पानी भी नहीं पीऊंगा'। शंकर को यह ज्ञात होते ही, वह पार्वती के साथ इसे दर्शन देने आया। शंकर ने इसकी सारी इच्छाएँ पूरी की, तथा इससे शिवलिंग की स्थापना करवायी (स्कंद. ४.२.६३)।

२. वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर में से शंकर का अवतार। यह काशी के दिव्य प्रदेश में दर्भासन पर बैठनेवाला महायोगी था। इसे सारस्वत, योगीश, मेघवाह तथा सुवाहन नामक चार पुत्र थे (शिव. शत.४)।

जैत्यद्रौणि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

जैत्र—कृष्ण का एक सेवक (भा. १०. ७१. १२)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. क. २५. १२-१३)।

जैत्रायण सहोजित—राजसूय यज्ञ करनेवाले एक राजा का नाम। (क. सं. १८. ५)। परंतु कापिष्ठल संहिता में इंद्र की उपाधि के रूप में यह शब्द प्रयुक्त किया है (कापि. सं. २८. ५)।

जैमिनि—एक ऋषि। यह कौत्सकुलोत्पन्न था, तथा युधिष्ठिर के यज्ञ में ऋत्विज था (भा. १०.७४.८)। मयसभा में प्रवेश करने के बाद, युधिष्ठिर ने बड़ा समारोह किया। उस समय यह उपस्थित था (म. स. ४.९)। भीष्म शरपंजर पर पड़ा था, तब अन्य मुनिगणों के साथ यह वहाँ था (म. शां. ४७.६५*)। जनमेजय के सर्पसत्र में यह उद्गाता था (म. आ. ४८.६)।

यह कृष्ण द्वैपायन व्यास का सामवेद का शिष्य था (म. आ. ५७.७४; व्यास देखिये)। यह लांगलि का भी शिष्य था।

जैमिनि ने अपनी शिष्यपरंपरा कैसी बढ़ायी, इसका पता कई प्राचीन ग्रंथों से मिलता है। किंतु उसमें एक-वाक्यता न होने के कारण, वह जानकारी यहाँ नहीं दी गई है (अग्नि. १५०.२८-२९; ब्रह्माण्ड. १.१३; २.३५. ३१; वायु. ६१.२७-४८; व्यास देखिये)।

जैमिनि ने लिखा हुवा, 'जैमिनि अश्वमेध' ग्रंथ प्रसिद्ध है। यह ग्रंथ इसने पूरे महाभारत के रूप में प्रथम लिखा था। परंतु उसमें पांडवों का गौरव कम था। इस कारण, अश्वमेध के सिवा इस ग्रंथ का बाकी भाग नष्ट करने की आज्ञा, व्यास ने इसे दी। उस आज्ञानुसार जैमिनि ने वह ग्रंथ नष्ट कर दिया।

'जैमिनि अश्वमेध,' महापुराण तथा उपपुराण से बिल्कुल भिन्न है। उसमें भागवत का निम्नलिखित उल्लेख है:—

'भारतं हरिवंशं च पुत्रदं धनदं भवेत्।
श्रीमद्भागवतं पुण्यं भुक्तिमुक्तिफलप्रदम्॥'

(जै. अ. ५८.९)। 'जैमिनि अश्वमेध का काल' ख्रि. पू. सौ वर्ष माना जाता है (पुराणनिरीक्षण, पृ. ८२)।

सामवेद के राणायनीय नामक शाखा का जैमिनीय नामक नवम भेद इसने लिखा है। यह संहिता कर्नाटक में विशेष ख्यातनाम है। उसी प्रकार जैमिनीय ब्राह्मण तथा जैमिनीयोपनिषद ब्राह्मण नामक सामवेद के ब्राह्मण इसने लिखे। ये दोनों ग्रंथ आज भी उपलब्ध है।

इसके अतिरिक्त निम्नलिखित ग्रंथ भी इसने लिखे हैं:—"जैमिनिसूत्र, जैमिनिनिघंटु, जैमिनिपुराण, ज्येष्ठ-माहात्म्य, जैमिनिभागवत, जैमिनिभारत, जैमिनिगृह्यसूत्र, जैमिनिसूत्रकारिका, जैमिनिस्तोत्र, जैमिनिस्मृति (C. C.)।

सुमन्तु, वैशंपायन, पुलस्त्य, तथा पुलह इनके समान यह भी वज्रनिवारक था (शब्दकल्पद्रुम)। इसका पुत्र सुमंतु (विष्णु. ३.६.२)।

जैमिनिगृह्यसूत्र के उपाकर्मांगतर्पण में, जैमिनि ने निम्नलिखित आचार्यों का उल्लेख किया है:—१. जैमिनि, २. तलवकार, ३. सात्यमुग्र, ४. राणायनि, ५. दुर्वासस्, ६. भागुरि, ७. गौरुण्डि, ८. गौर्गुलवि, ९. भगवान् औपमन्यव कारडि, १०. सावर्णि, ११. गार्ग्य, १२. वार्ष-गण्य तथा १३. दैवन्त्य (जैमिनि गृह्यसूत्र १.१४)। यह सामवेदी श्रुतर्षि था। ब्रह्मांडपुराण के प्रवर्तक ऋषियों की परंपरा में, इसका नामोल्लेख आता है।

जैमिनिसूत्र का परिचय—जैमिनि ने यज्ञप्रतिपादक ब्राह्मण ग्रंथ का वाक्यार्थ निश्चित करने के लिये सूत्ररचना की। जैमिनि रचित सूत्र 'पूर्वमीमांसा' वा 'कर्ममीमांसा' नाम से प्रसिद्ध है। यज्ञविषयक वाक्यों का अर्थविषयक मतभेद दूर कर के संगति लगाना, जैमिनिसूत्रों का मुख्य कार्य है। इन्हीं सूत्रों से वाक्यार्थविचारशास्त्र पैदा हुआ। सूत्रों की संख्या २५०० है। ये बारह अध्यायों में विभाजित है।

सूत्रांगों में जैमिनिसूत्र प्राचीनतम माने जाते हैं। इस विषय में प्राचीन आचार्यों का भी निर्देश जैमिनि ने किया है। 'जैमिनिसूत्रों' के उपर, शबरों की वृत्ति, शाबरभाष्य, प्रभाकर की बृहती (गुरुमत), कुमारिलभट्ट का वार्तिक (इ. स. ७००), पार्थसारथि मिश्र की शास्त्रदीपिका, मंडन-मिश्र के विधिविवेक एवं भावनाविवेक, खंडदेव की भाट्ट दीपिका, आदि ग्रंथ विख्यात हैं। यज्ञद्वारा प्राप्त होनेवाले स्वर्ग की अभिलाषा प्रारंभ में थी। धीरे धीरे टीकाकारों ने मोक्ष का भी अंतर्भाव पूर्वमीमांसाशास्त्र में कर दिया। 'बादरायणसूत्रों' में वेद का उत्तरभाग माने गये उपनिषदों के वाक्यों का विचार है। इसलिये बादरायणसूत्रों को उत्तर-मीमांसा नाम से ख्याति प्राप्त हुई।

जैवंतायन—एक ऋषि। रौहिणायन के शिष्य शौनक तथा रैभ्य के साथ इसका उल्लेख है (बृ. उ. ४.५.२९; पा. सू. ४.१.१०३)।

जैवंत्यायनि—भृगुकुल का गोत्रकार (भृगु देखिये)।

जैवलि—प्रवाहण का पैतृक नाम। जैवलि नामक राजा भी यही होगा। राजा जैवलि का गल्लूनक आर्क्षाकायण से साम के विषय में संवाद हुआ था (जै. उ. ब्रा. १. ३८.४; प्रवाहण देखिये)।

२. एक तत्त्वज्ञ। इसका शिष्य आरुणि (बृ. उ. ६. २.५.७)। यह क्षत्रिय था। ब्राह्मणों में आरुणि सब से प्रथम ब्रह्मज्ञानी हुआ (छां. उ. ५.३७; चित्र गार्ग्यायणि देखिये)।

जैह्मप—गौरपराशरकुलीन एक ऋषि। 'सामय' इसीका ही पाठभेद।

जैह्वलायनि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

जौह्विलि—गोह्विनी के लिये पाठभेद।

ज्ञाति—(सो. क्रोष्टु.) मत्स्यमत में वभ्रु का पुत्र। विष्णु मत में इसे धृति, भागवत मत में कृति, तथा वायु मत में आहुति नाम हैं।

ज्ञानगम्य—सोमकांत राजा का प्रधान (गणेश. २९.)।

ज्ञानभद्र—द्वापार युग का एक महायोगी। यह सौराष्ट्र में रहता था।

एक बार अकाल पड़ने के कारण, लगातार बीस दिनों तक इसे, तथा इसकी पत्नी को उपवास करना पड़ा। एक पर्वत पर जा कर यह एक कुम्हड़ा ले आया। इतने में भारी वर्षा के कारण, भीगा हुआ एक गोप ठंड से ठिठुरते हुए इसके घर आया। वह बीस दिनों से भूखा होने के कारण, वह कुम्हडा इन्होंने उस गोप को दिया। इससे वह संतुष्ट हो गया। बाद में उपवास के कारण, यह दोनों यकायक मृत हो गये। उससे दोनों को सायुज्य-मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. क्रि. २५)।

ज्ञानश्रुति––गोदावरी के किनारे स्थित प्रतिष्ठान (पैठण) शहर का पुण्यशील राजा। आकाश से उड़ने वाले हंस से इसे मालूम हुआ कि, रैक्व नामक ब्रह्मवेत्ता अपने से अधिक पुण्यवान है। तब इस पुण्यशील को ढूँढने के लिये, इसने अपने सारथि से कहा। सारथि द्वारा उसका पता लगने पर, बड़ा नजराना ले कर यह रैक्व के पास गया। परंतु उसने राजा का नजराना अस्वीकार कर दिया। राजा ने पूछा, 'यह निरिच्छ वृत्ति आपको कैसी प्राप्त हुई'? उसने बताया, 'यह सब गीता के छठवें अध्याय पढने का फल है' (पद्म. उ. १८०; रैक्व देखिये)।

ज्ञानसंज्ञेय—कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

ज्यामघ—(सो. क्रोष्टु.) विष्णु के मत में परावृत्त-पुत्र, मत्स्य तथा वायु के मत में रुक्मकवचपुत्र तथा भागवतमत में रुचकपुत्र। इसे चैत्रा अथवा शैब्या नामक पत्नी थी। इसे संतति नहीं थी। परंतु अपनी पत्नी के भय से, यह दूसरा विवाह नहीं कर सकता था।

एक बार भोज देश की राजकन्या का स्वयंवर संपन्न हुआ था। यह स्वयंवर में गया। पराक्रम से राजकन्या भोजा को जित कर, एवं रथ में बैठा कर, यह अपने नगर ले आया। परंतु चैत्रा ने पूछा, 'यह कौन है'। घबराकर इसने कहा 'यह तुम्हारी स्नुषा है'। पुत्रवती न होने के कारण, इन शब्दों से चैत्रा को अत्यंत दुःख हुआ। परंतु जल्द ही चैत्रा को विदर्भ नामक पुत्र हुआ। उसका भोजा से विवाह किया गया (भा. ९.२३.३५; वायु. ९५)।

हरिवंश में, यही कथा किंचित् अलग ढंग से दी गयी है। रुक्मेषु तथा पृथुरुक्म नामक बंधुओं ने मिल कर ज्यामघ राजा को राज्य से भगा दिया। तब अरण्य में आश्रम बना कर, यह शांत चित्त से रहने लगा। परंतु वहाँ के ब्राह्मणों ने इसकी राज्यतृष्णा जागृत कर, नर्मदा किनारे के दूरदूर के प्रदेशों पर आक्रमण करने को, इसे उत्सा हित किया। मृत्तिकावती नामक नगरी उन प्रदेशों की राजधानी था। बाद में ऋक्षवत् पर्वत पर आक्रमण कर, इसने उसे जीता। वहाँ की शुक्तिमती नामक नगरी में उपनिवेश प्रस्थापित किया। बाद में मृत्तिकावती प्रदेश जीतने के कारण प्राप्त, उपदानवी नामक कन्या साथ ले कर, यह अपने राज्य आया। 'यह कन्या मैंने तुम्हारे पुत्र के लिये लाई है' ऐसा इसने अपने पत्नी को झूठ ही बता दिया। परंतु पुत्र न होने के कारण, यह झूठ बोलना उसे नहीं जँचा। बाद में उस कन्या के तपःप्रभाव से वृद्ध काल में गर्भधारण कर, शैब्या ने विदर्भ नामक पुत्र को जन्म दिया। विदर्भ का उपदानवी से विवाह किया गया। उससे उपदानवी को क्रथ, कौशिक तथा लोमपाद नामक तीन पुत्र हुएँ (ह. वं. १.१.३७; ३३–२०; ब्रह्म. १४. १०–२०; लिंग. १.६८.३२–४१; मत्स्य. ४४.३२; ब्रह्मांड. ३.७०.३३ पद्म. सृ. १३.११–१९)। विष्णु पुराण में रुक्मकवच को ज्यामघ का पितामह कहा है। तथापि रुक्मकवच तथा रुचक एक ही होंगे।

ज्यामहानि––ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के लांगलि का शिष्य (व्यास देखिये)।

ज्येष्ठ––एक ब्रह्मर्षि तथा ज्येष्ठ साम का कर्ता। बर्हिषद से वेदपारग ज्येष्ठ ऋषि को सात्वतधर्म प्राप्त हुआ। इसके साम श्रीहरी को अत्यंत प्रिय थे। अविकंपन राजा को सात्वतधर्म इसी ब्रह्मर्षि से प्राप्त हुआ। (म. शां. ३३६. ४२)।

ज्येष्ठा––अलक्ष्मी देखिये।

२. सोम की सत्ताईस पत्नियों में से एक।

३. शुक्र की कन्या। द्वादशादित्यों में वरुण की स्त्री। इसे बल, अवर्त नामक पुत्र, तथा सुरा नामक कन्या थी (म. आ. ६०.५२–५३)।

ज्योति––स्वारोचिष मन्वन्तर के मनु का पुत्र।

२. वसिष्ठ का पुत्र। स्वारोचिष मन्वन्तर का प्रजापति (पद्म. सृ. ७)।

३. वंशवर्तिन् देवों में से एक।

ज्योतिर्धामन्––तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (भा. ८.१.२८)।

ज्योतिर्मुख––रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ३०.७३)।

ज्योतिर्लिंग––शिव के बारह अवतारों का सामूहिक नाम।

पुराणों में निर्दिष्ट ग्यारह ज्योतिर्लिंग के नाम इस प्रकार है:—(१) घुश्मेश, (२) त्र्यंबक, (३) मल्लिकार्जुन, (४) महाकाल, (५) रामेश्वर, (६) विश्वेश, (७) सोमनाथ, (८) ॐकार, (९) केदार, (१०) नागेश, (११) भीमाशंकर (१२) वैद्यनाथ।

इनमें से घुश्मेश, त्र्यंबक, मल्लिकार्जुन, महाकाल, रामेश्वर,, विश्वेश, एवं सोमनाथ इन ज्योतिर्लिंग के स्थान के बारे में मतभेद नहीं है।

ॐकार, केदार, नागेश, भीमशंकर तथा वैद्यनाथ इन ज्योतिर्लिंग के स्थान के बारे में मत भेद है।

(१) ॐकार — मांधाता में, ॐकारेश्वर एवं अमलेश्वर (परमेश्वर) ये दोनों मिल कर एक ज्योतिर्लिंग मानते हैं।

(२) केदार—हिमालय पर्वत में। १. केदार, २. मध्यमेश्वर, ३. तुंगनाथ, ४. रुद्रनाथ, ५. कल्पेश्वर, ६. पशुपतिनाथ यों छः लिंग हैं। इनमें से केदार एवं पशुपतिनाथ मिल कर एक ज्योतिर्लिंग माना जाता है। बाकी चार शिवलिंग ज्योतिर्लिंग के बाहर के शिवस्थान माने जाते हैं।

(३) नागेश—सौराष्ट्र में प्रभासपट्टण, महाराष्ट्र में औंढ्या नागनाथ, एवं अलमोडा में जागेश्वर इन तीनों स्थान पर नागेश ज्योतिर्लिंग माना जाता है।

(४) भीमशंकर—१. महाराष्ट्र में पूना के पास सह्याद्रिशिखर पर, २. आसाम में गोहट्टी के पास ब्रह्मपुर पर्वत पर एवं ३. हिमालय में नैनिताल के पास उज्जनक में भीमाशंकर ज्योतिर्लिंग माना जाता है।

(५) वैद्यनाथ—१. बिहार में संथाळ परगणा में देवघर, २. महाराष्ट्र में परळी वैजनाथ तथा ३. काश्मीर में पठाणकोट के पास वैजनाथ पपरोला, वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग माना जाता है।

और भी एक तेरहवा ज्योतिर्लिंग, बंगाल में जि. चटगांव, सीताकुंड (पूर्व पाकिस्तान) में चंद्रनाथ का स्थान माना जाता है। (शिव. शत. ४२.२-४; ६-५५)।

ज्योतिष्टम—कश्यप तथा अरिष्टा का पुत्र।

ज्योतिष्मत्—स्वायंभुव मन्वन्तर के मनु का पुत्र (पद्म. सृ. ७)।

२. मधुवन में रहनेवाले शाकुनि नामक ऋषि का पुत्र। यह अग्निहोत्री था तथा गृहकृत्यों में तत्पर था (पद्म. स्व. ३१)।

३. दक्षसावर्णि मन्वंतर का एक महर्षि।

४. मरुतों के प्रथम गणों में से एक।

ज्योतिस्—कश्यप एवं कद्रु का पुत्र।

ज्योत्स्ना—सोम की कन्या तथा वरुणपुत्र पुष्कर की स्त्री। ज्योत्स्ना काली इसीका नामांतर है (म. उ. ९६. १३)।

ज्वर—कश्यप तथा सुरभि का पुत्र।

२. एक रोग एवं बाणासुर का सैनिक। यह शिवजी के स्वेद (पसीना) से पैदा हुआ। यह बडा शक्तिशाली था। संसार के कल्याण के लिये, शिवजी ने इसके टुकडे टुकडे किये एवं वे इतस्ततः बिखेर दिये (म. शां. २७४)।

बाणासुर तथा कृष्ण के युद्ध में, बलराम को इसने जर्जर किया था। कृष्ण पर भी इसने हमला किया। अन्त में यह कृष्ण की शरण में आया। इसका त्रिपाद, त्रिशिरस् ऐसा स्वरूप वर्णन आता है (ह. वं. २.१२२-१२३; भा. १०.६३)।

ज्वलना—तक्षक की कन्या। सोमवंशी रौद्राश्व अथवा मतिनार की स्त्री।

ज्वाला—तक्षक की कन्या एवं ऋक्ष की पत्नी। इसका पुत्र मतिनार (म. आ. ९०.२४)।

२. नीलध्वज की स्त्री। नीलध्वज ने अर्जुन को अश्वमेध का अश्व वापस दिया, यह इसे अच्छा न लगा। इसने अर्जुन से युद्ध करने के लिये, नीलध्वज से पर्याप्त अनुरोध किया, किंतु इसकी एक न चली। पश्चात् यह उल्मुक नामक अपने भाई के पास गयी। इसने उसे अर्जुन से युद्ध करने को कहा। उसने भी इसकी बात नहीं मानी।

यह रुष्ट हो कर गंगा के किनारे गयी। गंगा का जल पैर को लगते ही इसने कहा, 'मुझे जो गंगास्पर्श हुआ है, यह महापाप हुआ है'। यह सुनकर गंगा विस्मित हो, सुमंगला देवी के रूप में प्रकट हुई। गंगा स्पर्श को पापी कहने का कारण गंगा ने इससे पूछा। तब ज्वाला ने कहा, 'तुम ने अपने सात पुत्रों को जल में डुबो कर मारा है। तदुपरांत तुमने शंतनु से आठवाँ पुत्र माँग लिया। उसका अर्जुन ने रणांगण में वध किया। अतः तुम निपुत्रिक एवं पापी हो'। यह सुन कर गंगा ने अर्जुन को शाप दिया, 'छः माहों में तुम्हारा शिरच्छेद होगा'। अर्जुन को शाप मिला देख, ज्वाला को आनंद हुआ। आगे चल कर, अर्जुन एवं बभ्रुवाहन के युद्ध में, यह बभ्रुवाहन के भाते (तूणीर) में बाणरूप से जा पहुँची, तथा अर्जुन का

इसने शिरच्छेद किया (जै. अ. १५)। पश्चात् अर्जुन-पत्नी उलुपी ने नागलोक में से अमृत ला कर अर्जुन को पुनः जीवित किया (अर्जुन देखिये)।

ज्वालायन--गोबुक्तिन् का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ४. १६.१)।

झ

झिल्ली--वृष्णिवंश का एक यादव। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१८; द्रो. १०.२८)।

ट

टण्ड--एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

टिट्टिभ--वरुण लोक का असुर।

ड

डंभोद्भव--दंभोद्भव देखिये।

डिभक--डिंभक देखिये।

डिंभक--जरासंध का प्रधान तथा हंस का कनिष्ठ भ्राता। इसे डिभक अथवा डिंभक भी कहते हैं (दुर्वासस् देखिये)। इसके भाई हंस की मृत्यु हो गयी। यह समाचार डिंभक को किसीने बताया। तब हंस के बिना इस लोक में नहीं रहूँगा, यह कह कर डिंभक ने यमुना में प्राण छोड़ दिये (म. स. १३.४१; ह. वं. ३.१०३-१२९)।

ढ

ढुण्ढा--एक राक्षसी।

ढुण्ढि--शक्ति-पुत्र। गणेश का नामान्तर। दुरासद देखिये।

त

तंसु—(सो. पूरु.) अंतिनारपुत्र। इसे इलिन नामक पुत्र था। इसे त्रस्नु नामांतर है। (म. आ. ९०.२६; अंतिनार देखिये)।

तकवान—एक मंत्रकार ऋषि (ऋ. १.१२०.६)। तकवान शब्द ऋग्वेद के एक मंत्र में मंत्रकार के रूप में आया हुवा है। संभवतः कक्षीवत् कुल का मंत्रकार होगा (ऋ. १.१२०.६)। दूसरे स्थान पर तकु शब्द का तकवे रूप आया है। तक का तकवान बना होगा। फिर भी ये सारे निर्देश अनिश्चित स्वरूप के है (ऋ. ९.९७.५२)।

ताक्षिबिंदु—अत्रिकुल का गोत्रकार।

तक्ष—(सू. इ.) दशरथपुत्र भरत को मांडवी से उत्पन्न पुत्र। अपने पुष्कर नामक भाई के साथ इसने गांधार देश पर आक्रमण किया। उस देश को जीत कर इसने तक्षशिला नगरी की स्थापना की (वा. रा. उ. १०१; विष्णु. ४. ४, वायु. ८८.१८९)।

तक्षक—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र एवं एक नाग (विष्णु. १. १५; मत्स्य. ६; म. आ. ५९. ४०; ह. वं. १. ३. १२)। इसे एक पत्नी तथा अश्वसेन एवं श्रुतसेन नामक दो पुत्र थे (म. आ. ३. १४५-१४६)।

अर्जुन ने खाण्डववन अग्नि को दिया, तब तक्षक की पत्नी तथा अश्वसेन वहाँ थे। अश्वसेन की माता ने उसे मुँह में ले लिया। वह आकाशमार्ग से भागने लगी। यह देखते ही अर्जुन ने उसका शिरच्छेद किया। परंतु तक्षक इंद्र का मित्र था। इसलिये अश्वसेन का रक्षण करना इंद्र ने अपना कर्तव्य समझा। इसलिये अर्जुन के विरुद्ध वर्तन करके इंद्र ने अश्वसेन की रक्षा की (म. आ. २१८. ९)।

इस समय तक्षक कुरुक्षेत्र में था (म. आ. २१९. १३; काश्यप २. देखिये)। पश्चात्, शमीक ऋषि का पुत्र शृंग की प्रेरणा से, अर्जुन का पौत्र परीक्षित् को गले में काट कर तक्षक ने उसका वध किया (परीक्षित् देखिये)।

जनमेजय के सर्पसत्र की कथा पुराणों में सुविख्यात है। जनमेजय तथा तक्षक का वैर वैद ऋषि का शिष्य उत्तंक के कारण हुआ। पौष्य राजा की पत्नी का उत्तंक गुरु था। पौष्यपत्नी ने उत्तंक को गुरुदक्षिणा के रूप में अपने कुंडल दिये (म. आ. ३.८५)। उत्तंक से ये कुंडल छीनने के लिये, एक क्षपणक का वेष धारण कर के, तक्षक उसका पीछा करने लगा। वह क्षण में दिखता था, क्षण में अदृश्य हो जाता था। रास्ते में, कुंडल भूमि पर रख कर, उत्तंक लघुशंका करने बैठा। उसे इस प्रकार व्यस्त देख कर, क्षपणक वेषधारी तक्षक ने उसके कुंडल चुरा लिये। आचमन कर के उत्तंक वापस आया। उसने देखा कि, पीछे पीछे आनेवाला क्षपणक कुंडल ले कर भाग रहा है। उत्तंक ने इसके पीछे दौडना प्रारंभ किया। इतने में, क्षपणक ने अपना मूल तक्षक का रूप धारण किया, तथा एक बिल के मार्ग से पाताल में पलायन किया। उत्तंक ने उस बिल को खोद लिया। तक्षक का पीछा करते करते उत्तंक पाताल पहुँचा। पाताल में, नागों की स्तुति कर के उत्तंक ने अपने कुंडल वापस ले लिये (म. आ. ३.१५४-१५८; दे. भा. २.१०)।

पश्चात्, तक्षक का वध करने के लिये, सर्पसत्र का आयोजन करने की सलाह, उत्तंक ने जनमेजय को दी। अपने पिता परीक्षित् के मृत्यु का बदला लेने के लिये, जनमेजय पहले से ही उत्सुक था। उसने सर्पसत्र आयोजित किया। इस सर्पसत्र में, इसके परिवार में से अठारह सर्पकुल जल कर भस्म हुएँ। उन सर्पकुलों के नाम ये थे। पिच्छांडक, मंडलक, पिंडसेक्तृ, रभेणक, उच्छिख, शरभ, भंग, बिल्वतेजस्, विरोहण, शिली, शलकर, मूक, सुकुमार, प्रवेपन, मुद्गर, शिशुरोमन्, सुरोमन्, महाहनु।

सर्पसत्र में, तक्षक भी मरनेवाला था। परंतु यह बच गया (म. आ. ४८.१८, आस्तीक तथा इन्द्र देखिये)।

२. (सू. इ.) प्रसेनजित् का पुत्र। इसका पुत्र बृहद्बल (भा. ९.१२.८)।

तक्षक वैशालेय—विराज का पुत्र (अ. वे. ७. १०.२९)। सर्पसत्र के ब्राह्मणाच्छंसी पुरोहित (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

तक्षन्—एक ऋषि। जीवल चैलकि से इसका कुछ विषयों में मतभेद हुआ था। ब्रह्मवर्चसकाम आरुणि को इसने अग्निसंबंध में जानकारी दी थी (श. ब्रा. २.३.१. ३१-३५)।

तंडि—कृतयुग का एक अंगिरसगोत्री ऋषि। इसने दीर्घकाल तक तपस्या की। शिवसहस्र नाम के योग से इसने शंकर को प्रसन्न किया। सूर्यकुलोत्पन्न राजा भिषज्वन्

इसका शिष्य था। शंकर ने इसकी स्तुति से प्रसन्न हो कर वर दिया, 'तुम्हारा पुत्र सूत्रकार होगा' (म. अनु. १६, लिंग. १.६५)। शिवपुराण में तंडि की जगह दंडि दिया गया है। उपमन्यु को शिवसहस्र नाम का व्रत केवल तंडि ने ही बताया है (शिव. उ. ३)। इस कारण, तंडि तथा दंडि एक ही रहने की संभावना दिखती है।

तत्त्वदर्शिन्--रौच्य मन्वन्तर का एक ऋषि।

२. पितृवर्तिन् का भाई। पितृवर्तिन् के सात भ्राता थे। उनमें से चार कांपिल्यनगर के सुदरिद्र ब्राह्मण से उत्पन्न हुए थे। उनमें से यह एक था (पितृवर्तिन् देखिये)।

तत्पुरुष--एक शिवावतार।

तनु--कृश देखिये।

तंति--धूम्रपराशर कुलोत्पन्न ऋषि। इसके लिये जांति पाठभेद उपलब्ध है।

तंतिपाल--अज्ञातवास के समय, विराट के यहाँ सहदेव ने धारण किया हुआ गुप्त नाम (म. वि. ३.७)। कुंभकोण प्रति में तंत्रीपाल पाठभेद है (म. वि. ४.१५)।

तंत्रीपाल--तंतिपाल देखिये।

तप--तामसमनु के पुत्रों में से एक (पद्म. सृ. ७)।

२. सुख देवों में से एक।

३. सुतप देवों में से एक।

तपती--विवस्वत् सूर्य की छाया से उत्पन्न कन्या (म. आ. ९०. ४०. भा. ९. २२. ४; ६. ६. २१)। यह अत्यंत रूपवती थी। इसकी सावित्री नामक बहन थी।

एकबार ऋक्षपुत्र संवरण मृगया खेल रहा था। उसका अश्व अचानक मृत हो गया। वह पास के पर्वत पर पैदल ही घूमने लगा। वहाँ तपती इसे दिखाई पडी। इसके रूपयौवन पर वह मोहित हुआ। अपने साथ गांधर्व-विवाह करने के लिये तपती से उसने प्रार्थना की। इस पर तपती ने कहा, 'हमारे विवाह के लिये, अपने पिता की संमति चाहिये'। पश्चात् सूर्याराधना कर, संवरण ने तपती से विवाह करने की अनुमति सूर्य से प्राप्त की। तपती से संवरण को कुरुवंशसंस्थापक कुरु नामक पुत्र हुआ (म. आ. १६०-१६२)।

तपन--पांडवपक्षीय पांचाल राजा। इसका कर्ण ने वध किया (म. क. ३२. ३७)।

२. एक देव। इस पर अमृत के रक्षण का भार सौंपा गया था (म. आ. २८. १८)।

३. रावण के पक्ष का एक असुर (वा. रा. उ. ४९)। गज नामक वानर द्वारा यह मारा गया।

तपस्--एक शिवावतार। वाराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर के ग्यारहवे चौखट के कलियुग में, गंगाद्वार पर यह शिवावतार हुआ। इसके चार पुत्र थे। उनके नाम लंबोदर, लंबाक्ष, केशलंब तथा प्रलंबक (शिव. शत. ५)।

तपस्य--तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपस्विन्--मत्स्यमत में चक्षुर्मनु का नड्वला से उत्पन्न पुत्र। चक्षुर्मनु के पुत्रों के नामावली में इसका नाम उपलब्ध नहीं है।

तपुर्मूर्धन् बार्हस्पत्य--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८२)।

तपोत्सुक--सुदरिद्र ब्राह्मण के चार पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

तपोद्युति--तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपोधन--तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपोनित्य पौरुशिष्टि--एक तत्त्वज्ञ तथा पुरुशिष्ट का पुत्र। इसके मत में, उपोषण तथा द्रव्यदान ही केवल तप है (तै. उ. १.९.१)। इसका 'तपोनित्य' नाम भी तप का पुरस्कार करने से आया होगा।

तपोभागिन्--तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपोमूर्ति--रुद्रसावर्णि मन्वंतर में होनेवाले सप्तर्षियों में से एक।

तपोमूल--तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपोयोगिन्--तामस मनु का पुत्र।

तपोरति--तामस मनु का पुत्र।

तपोराशि--तामस मनु का पुत्र (पद्म. सृ. ७)।

तम--गृत्समदवंशीय श्रव नामक ब्राह्मण का पुत्र। इसका पुत्र प्रकाश (म. अनु. ८.६३ कुं.)।

२. (सो. क्रोष्टु.) विष्णुमत में पृथुश्रव्य का पुत्र। धर्म एवं सुयज्ञ इसीका नामांतर था।

तमौजस्--(सो. अंधक.) असंमजस् राजा का पुत्र।

२. (सो. विदू.) मत्स्य मत में देवार्ह का पुत्र।

तंबि--अंगिराकुल का गोत्रकार।

तरंत--एक क्षत्रिय दाता। पुरुमीह्ळ तथा यह ये दोनो श्यावाश्व ऋषि के प्रतिपालक एवं आश्रयदाता थे (ऋ. ५.६१.१०)। पुरुमीह्ळ की भाँति यह भी विददश्व का पुत्र था। इसलिये, इसे 'वैदिदश्वि' यों पैतृक नाम था (ऋ. ५.६१.१०)। सायणद्वारा दिये गये शाट्यायन की आख्यायिकानुसार पुरुमीह्ळ तथा यह ये दोनों भाई थे। षड्गुरु की भी इसे संमती है।

इसकी पत्नी का नाम शशीयसी। इसको शशीयसी से एक पुत्र था। रथवीती दार्भ्य की कन्या को इन्होंने

इस पुत्र के लिये माँगा था। किंतु इस पुत्र का नाम प्राप्त नहीं है (बृहद्दे. ५.५०-८१)।

पुरुमीहळ तथा यह ये दोनों जन्म से क्षत्रिय थे। किंतु आपत्काल के जरियें इन्हे ऋषि बनना पडा। क्षत्रियों के लिये दानग्रहण का निषेध होने के बावजूद, ध्वस्त्र तथा पुरुषन्ति से इन्होंने दान स्वीकार कर के प्रतिग्रह-दोष मंत्रप्रभाव से हटा दिया (पं. ब्रा. १३.७१२; जै. ब्रा. ३. १३९)। अपने दान-कर्ताओं की प्रशस्ति भी इन्होंने बनायी थी (ऋ. ९.५८.३, शा. ब्रा. सायण-भाष्य; साम. २.४१०)। किंतु सर्वानुक्रमणी के अनुसार इस दानप्रशस्ति का कर्ता ये नहीं, बल्कि अवत्सार काश्यप था।

तरस—राम सेना का एक वानर। यह हनुमान के साथ पश्चिम द्वार का रक्षण करता था।

तरुक्ष—एक दाता। दास बल्बुथ के साथ ऋग्वेद की दानस्तुति में इसका उल्लेख आया है। वशाश्व्य का यह आश्रयदाता था। इससे दान मिलने का प्रशस्तीपूर्वक निर्देश वशाश्व्य ने किया है (ऋ. ८.४६.३२)।

तरुणक—एक सर्प (म. आ. ५२.१७)।

तर्ज—उत्तम मनु का एक पुत्र।

तर्पय—वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

तर्ष—अर्क नामक वसु का पुत्र।

तल—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

तलक—(आंध्र. भविष्य.) भागवत मत में हालेय का पुत्र। पंचपत्तलक, पत्तलक, एवं मंतुलक इसीके ही नाम है।

तलवकार—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)। जैमिनिगृह्यसूत्र के उपकर्मांगतर्पण में इसका उल्लेख है।

तवि—सोमतन्वि पाठभेद है।

ताटका—एक राक्षसी। यक्षिणी होने की वजह से, मनचाहे मायावी रूप यह ले सकती थी। हजार हाथियों का बल इसमें था।

यह सुकेतु नामक यक्ष की कन्या थी। सुकेतु को यह ब्रह्मदेव के वर से उत्पन्न हुई थी। जंभपुत्र सुंद की यह पत्नी थी। सुंद से इसे मारीच तथा सुबाहु ये पुत्र हुए।

सुंद के द्वारा कुछ अपराध होने के कारण, अगस्त्य ने शाप दे कर उसको नष्ट किया। बदला लेने के हेतु से अपने पुत्रों समेत, ताटका ने अगस्त्य पर आक्रमण किया। तब अगस्त्य ने मारीच को राक्षस होने का, तथा ताटका को मनुष्यभक्षक भद्दा राक्षसी होने का शाप दिया। तब से यह मारीच के साथ मलद तथा करुष देशों में आ कर रहने लगी। वह प्रदेश उजड कर 'ताटकावन' नाम से प्रसिद्ध हुआ।

पास ही में विश्वामित्र का आश्रम था। उसने यज्ञ प्रारंभ किया कि, यह माँ बेटे उसका विध्वंस करते थे। त्रस्त हो कर विश्वामित्र अयोध्या गया, तथा यज्ञ के संरक्षण के लिये, दशरथ के पुत्रों को ले आया। ताटका की सारी पापी हरकतें बता कर, उसने उन पुत्रों को इसका वध करने के लिये कहा। तब राम ने इसका वध किया (वा. रा. बा. २५-२६)।

ताडका—ताटका का नामांतर।

ताडकायन—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५६ कुं.)।

तांड—एक आचार्य। साम गायन करते समय गायत्री छंद के मंत्र का प्रस्ताव, अष्टाक्षरी होना चाहिये इस मत का यह प्रवर्तक था (ला. श्रौ. ७.१०.१७)। लाट्यायन श्रौतसूत्र में इसे पुराणताण्ड कहा गया है।

तांडविंद या तांडविंदव—एक आचार्य (सां. आ. ८.१०)।

तांडि—अंगिरागोत्र का प्रवर। 'सामविधान ब्राह्मण' में दिये निर्देश से, यह बादरायण का शिष्य प्रतीत होता है।

तांडिन्—एक छन्दःशास्त्रज्ञ आचार्य। महाबृहती छन्द को यह सतोबृहती छन्द कहता है (छन्दःशास्त्रम् ३.३६)।

तांड्य—एक आचार्य (श. ब्रा. ६. १. २. २५)। 'अग्निचिति' से संबंधित किसी विषय पर इसका उद्धरण दिया गया है।

वैशंपायन का यह शिष्य था। वैशंपायन के शिष्यों में से श्यामायनि, आरुणि, तथा यह, मध्यदेश के थे। सामवेद का 'तांड्य महाब्राह्मण' इसने निर्माण किया है। यह ग्रंथ सामवेद की कौथुम शाखा का है, एवं तंडिनो की परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है। उसे 'पंचविंश ब्राह्मण' अथवा 'प्रौढ ब्राह्मण' भी कहते है। विचक्षण का तांड्य यह पैतृक नाम है (वं. ब्रा. २)।

महाभारत में भी इसके नाम का निर्देश है (म. स. ७.१०; शां. २३६.१७)।

तान्व—पृथु का पुत्र (ऋ. १०.९३.१५)। पृथु राजाओं में इसका उल्लेख आया है। तन्व का वंशज, इस अर्थ से भी यह नाम प्रयुक्त होगा। पैतृक धन कन्या को नहीं, बल्कि पुत्र को मिलना चाहिये, ऐसा इसका मत था

(ऋ. ३.३१.२)। ऋग्वेद के एक सूक्त में, दुःशीम की इसने उदार दाता कह कर स्तुति की है (ऋ. १०. ९३. १४)।

तापनीय--ब्रह्मांडमत में व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य।

तापस--दत्त का उपनाम। यह जनमेजय कौतस्त के सर्पसत्र में होता था (पं. ब्रा. २५.१५)।

२. अग्नि, धर्म एवं मन्यु देखिये।

तामरसा--अत्रि की स्त्री (ब्रह्मांड. ३.८.७४.८७)।

तामस--धर्म एवं हिंसा का पुत्र।

२. (सो.) भविष्य मत में श्रवस् का पुत्र।

३. (स्वा. प्रिय.) प्रियव्रत का तीसरा पुत्र तथा उत्तम का भाई (भा. ८.१.२७)। कई ग्रंथों में इसे प्रियव्रत का वंशज कहा है (विष्णु. ३.१.२४)।

स्वराष्ट्र नामक राजा को विमर्द नामक राजा ने पदच्युत किया। स्वराष्ट्र राजा की पत्नी उत्पलावती, मृत्यु के बाद, हरिणी योनि में उत्पन्न हुई। स्वराष्ट्र का कामुक स्पर्श उस हरिणी को होने के कारण, यह पुत्र उत्पन्न हुआ (मार्के. ७१.४६)। माता को तामस योनि प्राप्त होने पर उत्पन्न होने के कारण, इसे तामस मनु कहते थे। पिता ने सारी बातें इसे बतायीं। तब इसने पिता के शत्रु विमर्द राजा को क़ैद कर लाया (मार्के. ७१.४७)। बाद में पिता के कहने पर इसने उसे छोड़ दिया। इस तरह राज्य प्राप्त कर यह सार्वभौम बना।

इसने नर्मदा के दक्षिण तट पर महेश्वरी की आराधना की। कामराजकूट का जय किया। वसंत एवं शरदऋतु में नवरात्र पूजा भी की। इस तपस्या से यह चतुर्थ मन्वंतराधिपति मनु बना (दे. भा. १०. ८)। यह अपनी भार्या के साथ स्वर्ग लोक गया। गजेंद्र मोक्ष की घटना इसी के ही काल में हुई थी (भा. ८. १; मनु देखिये)।

ताम्र--महिषासुर का कोशाध्यक्ष।

२. मुर दैत्य के सात पुत्रों में से एक। कृष्ण ने इसके पिता का वध किया। इस लिये अपने भाईयों सहित इसने कृष्ण पर आक्रमण किया। किंतु यह स्वयं मारा गया (नरक ३. देखिये)।

ताम्रतप्त--कृष्ण का रोहिणी से उत्पन्न पुत्र।

ताम्रध्वज--मयूरध्वज का पुत्र।

ताम्रलिप्त--वंगदेशीय क्षत्रिय (म. आ. १७७ १२; स. २७. २२)।

ताम्रलोचन--एक शिवगण।

ताम्रा--प्राचेतस दक्ष प्रजापति एवं असिक्नी की कन्या। यह कश्यप को दी गयी थी (कश्यप देखिये)।

२. वसुदेव की स्त्रियों में से एक। इसका पुत्र सहदेव।

ताम्रायण--वायुमत में व्यास की यजुःशिष्य परंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

ताम्रौष्ठ--एक यक्ष (म. स. १०. १६)।

तार--मयासुर का एक मित्र (मत्स्य. १७७)।

२. रामसेना का एक प्रमुख वानर (म. व. २८५. ९)। इसने निखर्वट राक्षस के साथ युद्ध किया। सुग्रीव की स्त्री रुमा इसकी कन्या थी। इसे तारापिता भी कहा गया है (वा. रा. उ. ३४. ४)।

३. मधुवन में रहनेवाले शाकुनि नामक ऋषि का पुत्र। यह अत्यंत तेजस्वी था (पद्म. सृ. ३१)।

तारक--कश्यप एवं दनु का पुत्र।

२. एक असुर। वज्रांग तथा वरांगी को ब्रह्मदेव के कृपाप्रसाद से यह पुत्र प्राप्त हुआ था (वज्रांग देखिये)। इसने पारियात्र पर्वत पर १०,००० वर्षोंतक तपस्या की। ब्रह्मदेव ने इससे वर माँगने को कहा। इसने अमरत्व माँगा। यह मिलना असंभव है, ऐसा मालूम होने पर इसने सात दिन के शिशु के द्वारा मृत्यु होने का वर माँगा।

इस वर के प्रभाव से उन्मत्त हो कर, इसने इंद्रादि देवों को पराजित किया। शंकर के औरस पुत्र के द्वारा ही तारकासुर की मृत्यु होगी ऐसा देवताओं का संकेत था। इसलिये शंकर ने पार्वती से विवाह किया। उन्हें स्कंद नामक पुत्र हुआ। स्कंद ने उम्र के सातवें दिन इसका वध किया (मत्स्य. १३०-१३९; १४६; पद्म. सृ. ४२; तारेय २. देखिये)।

इसके तीन पुत्र थे। उनके नामः--त्रिपुरोत्पादक- ताराक्ष (तारकाक्ष), कमलाक्ष तथा विद्युन्माली (म. क. २३.३-४; लिंग. १.७१)।

तारा--बृहस्पति की दो स्त्रियों में से दूसरी। सोम ने इसका हरण किया था। ऋग्वेद में इसका अस्पष्ट उल्लेख है (ऋ. १०.१०९)। सोम से इसे बुध नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह सोमवंश का मूलपुरुष था (चंद्र देखिये)।

२. सुषेण वानर की कन्या तथा वालिन् की स्त्री। इसके पिता का नाम तार (तार २. देखिये)। इसका पुत्र अंगद (वा. रा. किं. २२.१३)। वालिन् तथा सुग्रीव

का पूर्वापर वैर था। राम की सहायता से सुग्रीव ने वालिन् के उपर ज़ोरदार हमला किया। उस समय, सुग्रीव से सुलह करने की सलाह इसने वालिन् को दी थी।

३. सूर्यवंशीय हरिश्चंद्र राजा की पत्नी। इसे तारामती नामांतर था (तारामती देखिये)।

४. एक ब्रह्मवादिनी।

ताराक्ष--तारकासुर का पुत्र। इसे तारकाक्ष नामांतर था (म. क. २३.३-४)।

तारापीड--(सू. इ.) मत्स्य के मत में चन्द्रावलोक राजा का पुत्र। इसका पुत्र चन्द्रगिरि।

तारामती--शैब्य देश के राजा की कन्या तथा अयोध्यापति हरिश्चन्द्र की पत्नी (मार्क ७.९)। हरिश्चन्द्र की सौ पत्नियों में यह पटरानी थी। वरुणकृपा से इसे रोहित नामक पुत्र हुआ (दे. भा. ७.१४)।

विश्वामित्र की दक्षिणा पूर्ण करने के लिये, हरिश्चन्द्र ने इसको तथा राजपुत्र रोहित को, काशी के एक वृद्ध ब्राह्मण को बेच दिया (दे. भा. ७.२२)। पश्चात्, सर्पदंश से रोहित की मृत्यु हो गयी। उसे ले कर यह स्मशान गई। वहाँ लड़के खानेवाली राक्षसी समझ कर, लोग इसे राजा के पास ले गये। राजा ने चांडाल को इसका वध करने के लिये कहा। चांडाल ने यह कार्य करने की आज्ञा हरिश्चन्द्र को दी। उसने पत्नी को तथा पुत्र को पहचान लिया। यह अग्निप्रवेश करने को तैय्यार हुई। किंतु इन्द्र ने रोहित को जीवित किया। पश्चात् इन्द्र की कृपा से इसे स्वर्गप्राप्ति हुई (दे. भा. ७.२५-२७; हरिश्चंद्र देखिये)।

तारावती--चंद्रशेखर देखिये।

तारुक्ष्य--१. तार्क्ष्य देखिये।

तारेय--एक वानर। तारापुत्र अंगद का यह नामांतर है।

२. एक राक्षस। यह तारकासुर का पुत्र था। हिरण्याक्ष के पक्ष में यह लड़ रहा था। उस वक्त, अपने पिता के वध का बदला लेने के लिये इसने कार्तिकेय पर अग्न्यस्त्र तथा रौद्रास्त्र की वर्षा की। किन्तु ये सब अस्त्र प्रभावहीन साबित हुएँ। अन्त में कार्तिकेय ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ६९)।

तार्क्षी--तार्क्ष्य ६. देखिये।

तार्क्षी--एक पक्षिणी। पूर्वजन्म में, यह वपु नामक अप्सरा थी। दुर्वास ऋषि के शाप से, इसे पक्षियोनि प्राप्त हुई। कंधर तथा पक्षिरूपधारी मदनिका की यह कन्या बनी। द्रोण नामक पक्षी इसका पति था।

भारतीय युद्ध के समय, यह गर्भवती थी। गर्भवती अवस्था में, कौरव पांडवों के युद्धक्षेत्र के ऊपर से यह जा रही थी। उड़ते उड़ते, उस स्थान पर यह आई, जहाँ अर्जुन तथा भगदत्त का युद्ध हो रहा था। अर्जुन के बाण से इसका उदर विदीर्ण हुआ। उसमेंसे चार अंडे नीचे गिरे।

इसी समय सुप्रतीक नामक हाथी के गले की प्रचंड घंटा नीचे गिरी। तार्क्षी के चार अंडों को, बीच के पोले भाग में ले कर, वह घंटा कीचड़ में फँस गई। बाद में शमीक ऋषि उन अंडों को ले गया (मार्क. ३.२१-४४)। इसी समय तार्क्षी की मृत्यु हो गई। उन अंडे से बाहर निकले बच्चे, पिंगाक्ष, विबोध, सुपुत्र तथा सुमुख ये नाम से प्रसिद्ध हुएँ।

तार्क्ष्य--एक आचार्य (ऐ. आ. ३.१.६; सां. आ. ७.१९)। विशिष्ट ज्ञान संपादन करने के हेतु इसने गुरुगृह में रह कर उसकी गाय की रक्षा की। इसके नाम का 'तारुक्ष्य' पाठभेद कई जगह प्राप्त है। किंतु बहुत सारी जगह, इसे तार्क्ष्य ही कहा है (ऐ. आ. १.५.२; सां. श्रौ. ११.१४.२८; १२.११.१२; आश्व. श्रौ. ९.१)। अरिष्टनेमि तार्क्ष्य तथा यह एक ही होने की संभावना है। किंतु इस बारे में, निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता।

२. अरिष्टनेमि का पैतृक नाम।

३. कश्यप प्रजापति का नामांतर। तार्क्ष्य नाम धारण किये कश्यप को दक्ष ने अपनी कन्याएं दी थीं। सरस्वती से इसका संभाषण हुआ था (म. व. १८४. १; कश्यप देखिये)।

४. एक पराक्रमी पक्षी (खिल. २.४.१)। यह पक्षियों का राजा था (श. ब्रा. १३.४.३.१३)। संभवतः यह सूर्य का प्रतीक था। एक दिव्य अश्व के रूप में भी इसका उल्लेख प्राप्त है (ऋ. १.८९.६; १०.१७८.१)। सोम लाने के लिये, इसका उपयोग किया गया था (सुपर्ण ३. देखिये)।

५. कश्यप तथा विनता का पुत्र। इसका भाई गरुड।

६. एक यक्ष। मार्गशीर्ष माह में यह अंशुमान् सूर्य के साथ रहता है (भा. १२.११)। तार्क्षी इसीका नामांतर है।

७. कश्यप का नामान्तर (म. व. १८२.८)।

तार्क्ष्य वैपश्चित--एक आचार्य (आश्व. श्रौ. १०.७)।

तार्क्ष्यपुत्र--सुपर्ण तार्क्ष्यपुत्र देखिये।

तालक--वायु एवं ब्रह्मांड मत में व्यास की साम-शिष्य परंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य।

तालकृत्--अंगिरा कुल का गोत्रकार।

तालकेतु--कृष्ण के द्वारा मारा गया एक राक्षस।

२. भीष्म का नामांतर (म. भी. ४५.९; उ. १४८.५)।

३. कुवलयाश्व के द्वारा मारा गया एक राक्षस (मार्क. १८.२३)।

तालजंघ--(सो. सह.) कार्तवीर्य का नाती तथा जयध्वज का पुत्र। इसके पुत्रों को भी तालजंघ कहते थे, वीतहोत्र, शार्यात, तुंडिकेर, भोज तथा अवंती इन पाँच वंशों को, 'तालजंघ' यह संयुक्त नाम दिया जाता है।

तालजंघ को १०० पुत्र थे। उनमें से पाँच गण मुख्य थे। उनके पाठभेद से नामः--वीरहोत्र, भोज, आवर्ति, तुंडिकेर, तालजंघ। ये सारे तालजंघ नाम से ही प्रसिद्ध थे (वायु. ९४.५०-५२)।

परशुराम से डर कर, अपने सारे भाईयों सहित, यह हिमालय की गुफाओं में रहता था। परशुराम तप करने गया, तब यह निर्भय हो कर सपरिवार पुनः माहिष्मती नगर में आ कर रहने लगा।

कुछ कालोपरांत अयोध्या पर आक्रमण कर, इसने सगर के पिता फल्गुतंत्र को जीत लिया (ब्रह्मांड. ३.४७)। इसका बदला चुकाने के लिये; सगर ने और्व ऋषि द्वारा प्राप्त आग्नेयास्त्र से, इसको तथा इसके सारे परिवार को जला दिया। इनमें से केवल वीतिहोत्र बच गया (भा. ९.२३) इन्हें जीतने पर, और्व ऋषि की आज्ञा के कारण, सगर नें इनका वध नहीं किया। किन्तु इन्हें विद्रुप कर, छोड दिया (भा. ९.८.५; पद्म. उ. २०, वीतहव्य तथा बाहु देखिये)। भृगुकुल के साथ कलह करने से, हैहय तथा तालजंघों का नाश हुआ (कौटिल्य. पृ. २२)।

२. (सू. शर्याति.) शर्याति राजा का पुत्र (म. अनु. ८.८. कुं.)।

३. मुर दैत्य का पिता।

तालन--कलियुग का एक राजा। इसने महावती नगरी पर आक्रमण किया। इसके आठ पुत्र थे। उनके नाम :— अलिक, अल्लामति, काल, पत्र, पुष्पोदरी, वरीकरी, नरी तथा सुललित। अपना वनरस नामक नगर इसने इन पुत्रों को दिया। म्लेच्छों की पूजापद्धति से इसने असुर देवताओं की पूजा की (भवि. प्रति. ३.७)।

तिग्म— (सो. कुरु. भविष्य.) मत्स्यमत में उर्व-पुत्र, तथा विष्णुमत में मृदुपुत्र। तिमि, तिग्मज्योति, ये सारे एक ही है।

तिग्मकेतु--(स्वा. उत्तान.) भागवतमत में वत्सर तथा स्वर्वीथि का पुत्र।

तिग्मज्योति--(सो. कुरु. भविष्य.) भविष्यमत में मृदु का पुत्र।

तितिक्षा—स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्षप्रजापति की कन्या तथा धर्म की स्त्री। इसका पुत्र क्षेम।

तितिक्षु--(सो. अनु.) एक चक्रवर्तिन् सम्राट्। भागवत, मत्स्य, एवं वायु के मत में, चक्रवर्तिन् महा-मनस् का यह पुत्र था। विष्णु मत में, यह महामणि का पुत्र था। पश्चिमोत्तर भारत में राज्य स्थापन करनेवाला सम्राट् उशीनर इसका भाई था।

तितिक्षुवंश--पूर्व भारत में ख्यातिप्राप्त तितिक्षुवंश, तितिक्षु से ही प्रारंभ हुआ। यह वंश, अनुवंश की ही स्वतंत्र शाखा थी। तितिक्षुवंश में पैदा हुवे, बलि ने पूर्व भारत में बलाढ्य साम्राज्य स्थापन किया। बलि को अंग, वंग, कलिंग, सुह्म, पुंड्र नामक पाँच पुत्र थे। बलि के साम्राज्य के पाँच देश, इन पाँच पुत्रों के नाम से ही सुविख्यात हुवे।

अयोध्यापति दशरथ का समकालीन रोमपाद राजा अंगवंश का था। भारतीय युद्ध में, कर्ण तथा वृषसेन ये दोनों तितिक्षुवंशांतर्गत अंगवंश के थे।

तितिक्षु का भाई सम्राट् उशीनर का वंश, पश्चिमोत्तर भारत में केकय, मद्र आदि प्रदेशों में राज्य करता था (अनु. उशीनर, तथा बलि देखिये)।

तित्तिर वा **तित्तिरि**--(सो. कुकुर.) कपोतरोमन् का पुत्र। इसका पुत्र बहुपुत्र।

तित्तिरि--कश्यप तथा कद्रु का पुत्र एक नाग।

२. एक ऋषि तथा शाखाप्रवर्तक (म. स. ४.१०; पाणिनि देखिये)। अंगिरस्कुल के ऋषिओं की एक शाखा के, अंगिरस, तैत्तिरि, कापिभुव ये तीन प्रवर हैं। उनमें से तैत्तिरि का यह पिता होगा।

कृष्ण यजुर्वेद के एक शाखा का 'तैत्तिरीय' यह उप-नाम है। उस शाखा का मूल आचार्य तित्तिरि रहा होगा। वैशंपायन के शिष्य याज्ञवल्क्य के नेतृत्व में वह शाखा पहले थी। किंतु कुछ कारणवश, वैशंपायन ने याज्ञवल्क्य के नेतृत्व से वह शाखा निकाल ली। वह वैशंपायन के बाकी बचे ८५ शिष्यों ने धारण की। उस समय, उन्होंने

तित्तिरि पक्षियों के रूप लिये थे। उस कारण, उन्हें 'तित्तिरि,' एवं उनके शाखानुयायिओं को 'तैत्तिरीय' नाम प्राप्त हुआ (विष्णु. ३.५; भा. १२.६.६५)।

मत्स्य के मत में, तित्तिरि ऋषि अंगिराकुल के प्रवर का एक ऋषि है। एक शाखाप्रवर्तक के जरियें भी इसका उल्लेख प्राप्त है (पाणिनि देखिये)। हिरण्यकेशिन् लोगों के पितृतर्पण में इसका निर्देश आता है (स. गृ. २०.८. २०)।

तिथि---भृगुकुल का एक गोत्रकार।

२. कश्यप एवं क्रोधा की कन्या तथा पुलह की स्त्री।

तिमि--प्राचेतस दक्ष प्रजापति एवं असिक्नी की कन्या तथा कश्यप की भार्या।

२. (सो. पूरू. भविष्य.) भागवत मत में दुर्व का पुत्र (तिग्म देखिये)।

तिमिंगल---एक राजा। यह रामक पर्वत पर रहता था। राजसूय यज्ञ के समय, सहदेव ने इसे जीतकर धन प्राप्त किया (म. स. २८.४६)।

तिमिध्वज--वैजयन्त नगरी का राजा। यह शंबर नाम से भी प्रसिद्ध था।

इसका राज्य दक्षिण भारत में दंडकारण्य के पास था। डॉ. भांडारकरजी के मत में, आधुनिक कालीन विजयदुर्ग ही प्राचीन वैजयन्त नगरी है। डे के मत में, आधुनिक वनवासी शहर का वह प्राचीन नाम है।

देवासुर युद्ध चालू था। यह असुरों के पक्ष में मिल कर, इंद्र से युद्ध करने लगा। इन्द्र ने अयोध्या से दशरथ राजा को बुलाया। परंतु युद्ध करते समय, घायल हो कर दशरथ बेहोश हो गया। तब सारथ्य करनेवाली कैकयी ने बडे चातुर्य से रथ बाजू में ले कर दशरथ की रक्षा की। बाद में तिमिध्वज का क्या हुआ इसके बारे में कुछ उल्लेख नहीं है (वा. रा. अयो. ९; ब्रह्म.१२३)।

तिमिर्घ दौरेश्रुत---अग्नीध ऋत्विज का नामांतर। सर्पों उत्कर्षके के लिये किये गये सर्पसत्र में यह उपस्थित था (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

तिरश्ची आंगिरस---सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.९५-९६)। पंचविंश ब्राह्मण में भी इसके नाम का निर्देश आया है (१२.६.१२)। इसके सूक्तों में इंद्र की आराधना की गई है (ऋ. १२.६.१२)।

तिरिंदिर पारशव्य---एक राजा। सायण, के मत में, यह पर्शु का पुत्र था। इसलिये इसे पारशव्य पैतृक नाम प्राप्त हुआ।

किसी को दान देनेवाले राजा के रूप में, इसका निर्देश ऋग्वेद की एक दानस्तुति में प्राप्त है (ऋ. ८.६.४६-४८)। वत्स काण्व को इस राजा से दानस्वरूप उपहार मिला था (सां. श्रौ. १६.११.२०)। यह धन यदु राजाओं से तिरिंदिर ने प्राप्त किया था। यदु राजाओं को वेबर ईरानी मानते है, एवं भारत तथा ईरान के बीच घनिष्ठ संबंध का प्रमाण इस कथा को समझते है (इन्डि. स्टुडि. ४.३५६)।

तिर्यञ्च् आंगिरस--सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १२.६. १२)।

तिलोत्तमा--एक अप्सरा। यह काश्यप तथा अरिष्टा की कन्या थी। पूर्वजन्म में यह कुब्जा नामक स्त्री थी। दीर्घ तपस्या कर यह वैकुंठ गई। देवों के कार्य के लिये ब्रह्माजी ने इसे सुंदोपसुंद के पास भेजा था।

प्रत्येक वस्तु का तिलतिल सौंदर्य, इसके सौंदर्य निर्माण के लिये लिया गया था। इसलिये इसे तिलोत्तमा नाम प्राप्त हुआ। सुंदोपसुंद के नाशार्थ जाने के पहले, इसने सब देवों तथा ऋषियों की प्रदक्षिणा की। उस समय इसके मनमोहनी रूपयौवन से, शंकर तथा इंद्र आदि देवसभा के ज्येष्ठ देव भी विस्मित हो गये।

इसे देखते ही, सुंदोपसुंद का आपस में झगडा हो कर, एक ने दूसरे का वध कर दिया। तब ब्रह्मदेव ने इसे वरदान दिया, 'जहाँ जहाँ सूर्य का प्रवेश होगा, वहाँ तुम भी प्रविष्ट हो सकोगी। तुम्हारे लावण्य का प्रभाव दाहक एवं गहरा होगा। इस कारण कोई भी तुम्हारी ओर आँख उठा कर देख न सकेगा' (म. आ. २०३-२०४; पद्म. उ. १२६)।

यह अश्विन में त्वष्टा सूर्य के साथ घूमती है (भा १२.११)।

तीक्ष्णवेग---रावण-पक्षीय एक असुर।

तीर्णक---एक ऋषि। ब्रह्मदेव ने पुष्करक्षेत्र में किये यज्ञ में यह उपस्थित था (पद्म. सृ. १४)।

तीव्ररथ---हंसध्वज के सुमति नामक सचिव का पुत्र।

तुक्षय---अंगिरसकुल का एक मंत्रकार।

तुग्र---अश्वियों के कृपापात्र भुज्यु का पिता। इसलिए, भुज्यु को तुग्र्य अथवा तौग्र्य भुज्यु कहते हैं (भुज्यु देखिये)।

२. एक राजा। यह इंद्र का शत्रु था। (ऋ. ६.२०. ८;२६.४;१०.४९.४)।

तुग्य--भुज्य का पैतृक नाम। तौग्र्य इसका सही नाम रहा होगा।

तुजि--एक राजा। इसपर इंद्र की कृपा थी (ऋ.६. २६.४; १०.४९.४)। तूतुजि इसीका नाम होगा (ऋ. ६. २०.८)।

तुंड--नल वानर के द्वारा मारा गया, रावणपक्षीय एक राक्षस।

तुंडकोश--कश्यप तथा खशा का पुत्र।

तुमिंज औपोदिति--एक ऋषि। यह यज्ञसत्र में होतृ का काम करता था। संश्रवस् ऋषि के साथ, इडा के बारे में इसका वादविवाद हुआ था (तै. सं. १.७.२.१)।

तुंबरु--एक गंधर्व। कश्यप तथा प्राधा के पुत्रों में से एक। यह चैत्र माह के धाता नामक सूर्य के साथ रहता था (भा. १२.११.३३)। इसकी भार्या का नाम रंभा था (म. उ. ११५.४००* पंक्ति.४)।

ब्रह्माजी की सभा में, यह नारद के साथ गायन कर, भगवत् का गुण गाता था (भा. ५.२५.८)। श्रीकृष्ण के इंद्र और कामधेनु कृत अभिषेक के समय, यह कृष्ण के पास आया था (भा. १०. २७. २४)। यह अनुयादव का मित्र था (भा. ९.२४.२०)। गोग्रहण के समय अर्जुन का युद्ध देखने के लिये यह स्वयं आया था (म. वि. ५६. १२)। युधिष्ठिर के अश्वमेध में भी यह उपस्थित था (म.आश्व. ८८.३९)।

यह रंभा पर आसक्त होने के कारण, कुबेर ने शाप दे कर इसे विराध नामक राक्षस बनाया। बाद में रामलक्ष्मण से हुए युद्ध में मृत हो कर इसने अपना मूल रूप प्राप्त किया (वा.रा. अर. ५; विराध देखिये)।

२. एक गंधर्व। यह सुबाहु तथा मुनिकन्या का पुत्र था। इसे मनुवंशी एवं सुकेशी नामक दो कन्यायें थी (ब्रह्मांड. ३.७.१३)।

३. एक राक्षस। हिरण्याक्ष से हुए देवों के युद्ध में, वायु ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ७५)।

तुंबुरु--तुंबरु देखिये।

तुर कावषेय--एक वैदिक ऋषि। ओल्डेनबर्ग के मत में, वैदिक काल के अंतिम चरण में यह पैदा हुआ था (त्सी. गे. ४२. २३९)।

एक तत्त्वप्रतिपादक के जरिये इसका निर्देश ब्राह्मणों में प्राप्त है (श. ब्रा. १०.६.५.९)। कारोती नदी पर, अग्नि की वेदिका इसके द्वारा बनाई जाने का उल्लेख शांडिल्य ने किया है (श. ब्रा. ९.५.२.१५)। जनमेजय पारीक्षित (प्रथम) का यह पुरोहित था। इसीने उसे राज्याभिषेक किया (ऐ. ब्रा. ४.२७;७.३४;८.२१)। इसका शिष्य यज्ञवचस् राजस्तंबायन (बृ. उ. ६.५.४)। पंचविंश-ब्राह्मण में (२४.१४.५) उल्लिखित तुर तथा यह एक ही होगा।

इसने दूसरे जनमेजय पारीक्षित से सर्पसत्र करवाया (भा. ९. २२.३५)। दूसरे जनमेजय पारीक्षित के साथ भागवत ग्रंथ में, जोडा गया इसका संबंध केवल नामसाम्य के कारण हुआ है। वास्तव में यह प्रथम जनमेजय पारीक्षित का पुरोहित था। इसीलिये इसने उसे राज्याभिषेक किया था।

तुरश्रवस्--एक ऋषि। पारावत ने इन्द्र के लिये सोमयाग किया। वहाँ इस ऋषि ने दो साम कह कर इंद्र को प्रसन्न किया। इंद्र ने, उपस्थित ऋषियों में से केवल तुरश्रवस् ने सादर किये हवि का स्वीकार किया (पं. ब्रा. ९.४.१०)।

तुरु--एक राक्षस। हिरण्याक्ष के साथ हुए देवों के युद्ध में, वायु ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ७५)।

तुरुष्क--(तुरुष्क. भविष्य.) एक राजवंश। भागवत-मत में इस वंश में, कुल चौदह राजा हुए। इतरत्र इसे तुषार कहा गया है।

तुर्व--एक राजा। यह मनु का अनुयायी था (ऋ. १०.६२.१०)।

तुर्वश--एक वैदिक राजा तथा ज्ञातिसमूह। हॉपकिन्स के मत में, 'तुर्वश' एक ज्ञातिसमूह का नाम है, जिसका एकवचन उसके राजा का द्योतक है (उ. पु. २५८)। यदु राजा एवं ज्ञाति से तुर्वशों का घनिष्ठ संबंध था (ऋ. ४. ३०.१७; १०.६२.१०)।

दाशराज्ञ-युद्ध में, तुर्वश राजा ने सुदास के विरुद्ध युद्ध किया था। किंतु इस युद्ध में यह स्वयं पराभूत हुआ (ऋ. ७.१८.६)। इस युद्ध में भागने ('तुर') के कारण, इसका नाम तुर्वश पड़ गया (हॉपकिन्स. उ. पु. २६४)।

इस राजा पर इंद्र की कृपा थी। इस कृपा के कारण, दाशराज्ञ-युद्ध के पश्चात्, इंद्र ने इसकी सहायता की। अनु तथा द्रुह्यु के समान, यह पानी में डूब कर नहीं मरा। इसकी द्वारा की गयी इंद्रस्तुति में, 'तुमने यदुतुर्वशों की रक्षा की, उसी प्रकार हमारी रक्षा करो,' ऐसी प्रार्थना आयी है (ऋ. ४.४५.१)। उसी प्रकार, 'अतिथिग्व का कल्याण करनेवाले तुम यदुतुर्वशों का वध करो,' ऐसी भी प्रार्थना की गयी है। तुर्वश तथा यदु ने, अर्ण एवं चित्ररथ

राजाओं का सरयू के किनारे वध किया था (ऋ. ४.३०. १८)।

सुदास के पिता दिवोदास पर तुर्वश एवं यदु ज्ञातियों ने आक्रमण किया था (ऋ. ६.४५.२; ९.६१ २)। वृचीवत्, वरशिख तथा पार्थव ज्ञातियों का तुर्वशों से अतिनिकट संबंध था। यव्यावती तथा हरियूपीया नदीयों के तट पर, दैवरात तुर्वश को वृचीवन्तों ने मदद की थी (ऋ. ६.२७.५-७)। यदुतुर्वशों के पुरोहित कण्व थे (ऋ. ८.४.७)। इन्हें अभ्यावर्तिन् चायमान ने जीता था (ऋ. ६.२७.२८)। शोण सात्रासह पांचाल राजा से यदुतुर्वशों का काफी सख्यत्व था। तैतीस तुर्वश अश्व एवं छह हजार सशस्त्र सैनिकों के साथ इन्होंने पांचाल राजाओं को मदद की थी। ब्राह्मणों में अनेक तौर्वशों का निर्देश है (श. ब्रा. १३.५.४.१६)। अन्त में, तुर्वश लोग पांचालों में विलीन हो गये (ओल्डेनबर्ग-बुद्ध. ४०४)।

इन लोगों के निवासस्थान के बारे में निश्चित पता नहीं लगता। इन लोगों ने परुष्णी नदी को पार किया था (ऋ. ७.१८)। ये लोक पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर भरतों के देश में आगे बढे, ऐसा प्रतीत होता है (पिशेल, वेदि. स्टुडि. २.२१८)।

पुराणों में तुर्वशों का निर्देश 'तुर्वसु' नाम से किया गया है।

तुर्वसु—(सो. पुरूरवस्.) ययाति राजा को देवयानी से उत्पन्न पुत्र। पिता का वृद्धत्व इसने स्वीकार नहीं किया। अतः ययाति ने इसे शाप दिया। इस शाप की वजह से इसके छत्रचामर छीन लिये गये, एवं निंद्य आचरन करनेवाले पश्चिमभारत का यह राजा बना (भा. ९.२२)। इसे वह्नि नामक पुत्र था (भा. ९. २३.१६)।

तुर्वसुवंश—इसका वंश अनेक स्थानों पर प्राप्त है (मत्स्य. ४८; ब्रह्मांड. ३. ७४; वायु. ९९; ब्रह्म. १३; ह. वं. १. ३२; अग्नि. २७६; विष्णु. ४. १६; गरुड १. १३९; भा. ९. २३)। अग्निपुराण में, द्रुह्यु वंश के गांधार का इसी वंश में समावेश किया है। विष्णु आदि तीन पुराणों में, इस वंश का अंतिम भाग प्राप्त नहीं है। इस वंश के, मरुत्त ने पौरव दुष्यंत को गोद लिया। इस प्रकार यह वंश पौरवों में समाविष्ट हुआ। इसी वंश के अंतिम लोगों ने, दक्षिण में पांड्य तथा चोल राज्यों की स्थापना की (ययाति देखिये)।

वेदों में तुर्वसु को तुर्वश कहा है (तुर्वश देखिये,)।

तुर्वीति—तुर्वशों का राजा। वय्य के साथ (ऋ. १. ५४.६; २.१३.१२; ४.१९.६), एवं अकेले (ऋ. १. ३६. १८; ६१. १८; ११२. २३), इसका कई बार उल्लेख प्राप्त है। तीन स्थानों पर, इन्द्र ने इसे बाढ से बचाने का उल्लेख मिलता है (ऋ. १.६१.११; २. १३. १२; ४. १९. ६)।

तुलसी— शंखचूड नामक असुर की स्त्री। वृंदा के शरीर के पसीने से यह उत्पन्न हुई (पद्म. उ. १५)।

धर्मध्वज को यह माधवी से उत्पन्न हुई, ऐसा वैकल्पिक निर्देश भी प्राप्त है।

यह अत्यंत धर्मशील एवं पतिव्रता थी। इसके पातिव्रत्य के कारण, शंखचूड देवताओं के लिये अजेय था। विष्णु ने कपट से इसके पातिव्रत्य को भंग कर, शंकर से शंखचूड का वध करवाया (शंखचूड देखिये)। पश्चात् इसने विष्णु को शाप दिया, 'तुम शिलारूप होंगे'। तदनुसार विष्णु शालिग्राम बना (ब्रह्मवै. २.२१; शंखचूड देखिये)।

एकबार कामविद्ध हो कर यह गणपति के पास गयी। तब गणपति ने इसे शाप दिया, 'तुम वृक्षरूप होगी'। इस शाप के कारण, इसका मनुष्यदेह नष्ट हुआ। आगे चल कर समुद्रमंथन के अवसर पर, समुद्र से अमृत बाहर आया। उसकी कुछ बूँदें जमीन पर गिरी। उन में से ही तुलसी का पेड बाहर निकला। पश्चात् इस पेड को ब्रह्मा ने विष्णु को दिया (पद्म. सृ. ६१; स्कंद. २.४.८; वृंदा देखिये)।

तुलाधार—वाराणसी क्षेत्र में रहनेवाला एक वैश्य। जाजलि नामक एक द्विज को अपने तप की घमंड थी। वह इसने उतार दी। (म. शां. २५३-२५६)।

तुषार—(तुषार. भविष्य.) कलियुग के एक वंश का नाम। इस में १४ राजा हुएँ (मत्स्य. २७३, वायु. ९९; ब्रह्मांड. ३.७४)। इस वंश के राजा शकद्वीप में रहते थे (वै. का. राजवाडे. भा. इ. सं. मं. इतिवृत. १८३५. ५९)।

तुषित—स्वायंभुव तथा स्वारोचिष मन्वंतर के देवगण (मनु देखिये)।

तुषिता—स्वारोचिष मन्वंतर के वेदशिरस् ऋषि की स्त्री। इसे विभु नामक पुत्र था (भा. ८.१.२१)।

तुष्ट—हंसध्वज का प्रधान।

तुष्टि—धर्म ऋषि की पत्नी। स्वायंभुव मन्वंतर के दक्ष ने उस ऋषि को दश कन्याएँ दी। उनमें से यह एक थी।

तुष्टिमत्—कंस का भ्राता।

तुहुंड—दनुपुत्र।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

तूतुजि—इंद्र का एक आश्रित। इंद्र ने द्योतन नामक राजा के लिये तुग्र, वेतसु, दशोणि एवं इसको पराजित किया (ऋ. ६.२०.८)। तुजि एवं तूतुजि दोनों एक ही हैं।

तूर्वयाण—एक नृप। अतिथिग्व, आयु एवं कुत्स का यह शत्रु था, तथा दिवोदास का मित्र था। (ऋ. १.५३.१०; ६.१८.१३; १०.६१.१)।

तृक्षि—त्रसदस्यु का पुत्र (ऋ. ६.४६. ८; ८.२२.७; त्रासदस्यव देखिये)। द्रुह्यु तथा पुरु के साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ६.४६.८)

तृणक—एक क्षत्रिय (म. स. ८.१६)।

तृणकर्णि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

तृणबिंदु—(सू. दिष्ट.) भागवत एवं वायु के मतानुसार बंधु राजा का पुत्र। इसे विशाल, शून्यबंधु, धूम्रकेतु एवं इडविडा नामक चार संतानें थीं।

विष्णु एवं रामायण के मतानुसार बुध राजा का यह पुत्र था। इसकी स्त्री अलंबुषा। इसे विशाल एवं इलविला नामक दो संतानें थीं। इलविला पुलस्त्य को दी गयी थीं। यह त्रेतायुग के तीसरे पाद में राज्य करता था (ब्रह्मांड. ३.८.३६-६०; वायु. ७०.३१; २४.१५)। इसके पुत्र विशाल से वैशाली राजवंश का आरंभ हुआ।

२. वैवस्वत मन्वंतर के तेईसवाँ तथा चौबीसवाँ व्यास (व्यास देखिये)।

३. एक ऋषि। यह पांडवों के साथ काम्यकवन में रहता था (म. व. २६४)। यह अत्यंत धर्मशील तथा संयमी था। प्रत्येक माह, घांस के एक तृण को पानी में डुबा कर, उसके साथ जितने जलबिंदु बाहर आते थे, उतने ही पी कर यह रहता था। इसके इस नियम के कारण, इसका नाम तृणबिंदु हुआ (स्कंद. ७.१.१३८)।

४. वेन देखिये।

तृणावर्त—कृष्ण के द्वारा मारा गया एक असुर (पद्म. ब्र. १३)। कंस ने इसे कृष्णवध के लिये गोकुल भेजा था। इसने आँधी का रूप धारण कर गोकुल में प्रवेश किया, तथा सारे गोकुल को धूलिमय कर दिया। पश्चात् कृष्ण को ले कर यह उड़ गया। किंतु कृष्ण ने इसे एक शिला पर पछाड़ कर, इसके प्राण ले लिये (भा. १०.७.२६)।

तृत्सु—एक राजा एवं ज्ञातिसंघ। तृत्सु नामक राजा का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार आता है (ऋ. ७.१८.३.)।

तृत्सुओं के ज्ञातिसंघ का निर्देश भी प्राप्त है (ऋ. ७.१८.६,७,१५,१९;३३.५,६;८३.४,६,८)। इस संघ के लोक, दाशराज्ञ युद्ध में सुदास के सहायक थे। वसिष्ठ ज्ञातिसंघ के लोगों के साथ तृत्सुओं का घनिष्ठ संबंध था (सुदास देखिये)।

तेज—सुतप देवों में से एक।

तेजस्विन्—एक इंद्र। आगे चल कर, यही पांडुपुत्र सहदेव हुआ।

२. गोकुल का एक गोप। कृष्ण का यह परम मित्र था (भा. १०.२२.३१)।

तेजेयु—एक क्षत्रिय। यह रौद्राश्व का पुत्र था (म. आ. ८९.१०)।

तैटिकि—एक आचार्य (नि. ४.३)।

तैत्तिरि—तित्तिरि ऋषि का पुत्र।

तैत्तिरीय—वैशंपायन एवं याज्ञवल्क्य के सिवा यजुःशिष्यपरंपरा के अन्य शिष्यों का सामान्यनाम। इन्होंने तित्तिरि पक्षियों के रूप धारण कर, याज्ञवल्क्यद्वारा त्यक्त वेद का ग्रहण किया (व्यास देखिये)।

तैलक—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

तैलप—अत्रिकुल का गोत्रकार

तैलेय—धूम्रपराशरकुलोत्पन्न एक ऋषिगण।

२. अंगिराकुल का गोत्रकार।

तोंडमान—एक ऋषि। सोमकुल के सुवीर को यह नंदिनी नामक पत्नी से पैदा हुआ। पांडय राजा की कन्या पद्मा इसकी पत्नी थी। पूर्वजन्म में यह रंगदास था। व्यंकटाचल की उपासना कर यह मुक्त हुआ (स्कन्द. २.१.९-१०)। (भीम २३. देखिये)।

तोशलक—कंससभा का एक मल्ल। कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.४४.२७)।

तोष—तुषित देवों में से एक।

२. (स्वा.) भागवतमत में यज्ञ तथा दक्षिणा का पुत्र।

तौग्र्य—भुज्यु का पैतृक नाम।

तौरुष्य—लकुलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

तौल्वलि—आश्वलायन देखिये।

तौसुक—सौसुक के लिये पाठभेद।

त्याज्य—भृगु तथा पौलोमी का पुत्र। यह देवों में से एक था (मत्स्य. १९५.१३)।

त्रयी--सवितृ तथा पृश्नि की कन्या (भा. ६.१८)।

त्रय्यारुण--(सू. इ.) विष्णु, मत्स्य तथा पद्म मत में त्रिधन्वन् का पुत्र। इसका पुत्र त्रिशंकु (पद्म. सृ. ८)।

२. एक व्यास (व्यास देखिये)। भागवत में इसे अरुण कहा है।

३. (सो. पूरु.) उरुक्षय का पुत्र (त्रय्यारुणि ३. देखिये)।

त्रय्यारुणि--एक व्यास (व्यास देखिये)।

२. भागवत मतानुसार व्यास की पुराण शिष्यपरंपरा के रोमहर्षण का शिष्य।

३. (सो. पूरु.) भागवत तथा वायु के मतानुसार दुरितक्षय का पुत्र। इसने तपोबल से ब्राह्मणत्व प्राप्त किया। इसने रोमहर्षण से पुराणों का अध्ययन किया (भा. १२.७)। विष्णु मत में इसे त्रय्यारुण कहा है।

त्रसद--त्रसदस्यु का नामांतर।

त्रसदश्व--पृषदश्व २. देखिये।

त्रसदस्यु पौरुकुत्स्य--(सो. पूरु.) एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ४.४२; ५.२७; ९.११०)। यह 'पूरुओं का राजा' था (ऋ. ५.३३.८; ७.१९.३; ८.१९.३६)। इसका 'पौरुकुत्सि' (ऋ. ७.१९.३), तथा 'पौरकुत्स्य' (ऋ. ५.३३.८), नामों से उल्लेख आया है। इसका पैतृक नाम गैरिक्षित था।

यह पुरुकुत्स का पुत्र था (ऋ. ४.४२.८; ७.१९.३)। एक अत्यंत महान् विपत्ति के समय, पुरुकुत्स की पत्नी पुरुकुत्सानी के गर्भ से यह उत्पन्न हुआ (ऋ. ४.३८.१)। सायण के मत में, इसके जन्म के समय पुरुकुत्स कारागार में बन्दी था उसकी मृत्यु हो गयी थी।

यह गिरिक्षित् का वंशज था (ऋ. ५.३३.८), एवं इसका पिता पुरुकुत्स दुर्गह का वंशज था। अतः इसका वंशक्रम इस प्रकार प्रतीत होता है:- दुर्गह, गिरिक्षित, पुरुकुत्स, एवं त्रसदस्यु। त्रसदस्यु को हिरणिन् नामक एक पुत्र था (ऋ. ५.३३.७), एवं तृक्षि का यह पूर्वज था (ऋ. ८.२२.७)। त्रसदस्यु का पिता पुरुकुत्स सुदास का समकालीन था। किंतु यह सुदास का मित्र था, या शत्रु (लुडविग. ३.१७४), यह निश्चित रूप से नही कह सकते। सुदास का पूर्वज दिवोदास के साथ पूरु लोगों का एवं तुर्वसुओं का शत्रुत्व था, यह दाशराज्ञयुद्ध से ज़ाहिर होता है। तथापि यह युद्ध पुरुकुत्स के समय ही समाप्त हो गया था। त्रसदस्यु का इस युद्ध से कुछ भी संबंध नहीं था।

कालान्तर में कुरु तथा पूरु दोनों लोग एक हो गये। इसका प्रमाण त्रसदस्युपुत्र कुरुश्रवण के नाम से ज़ाहिर होता है। कुरुश्रवण तथा तृक्षि (ऋ. ८.२२.७), दोनों को भी 'त्रासदस्यव' (त्रसदस्यु का पुत्र) कहा गया है। द्रुह्यु तथा पूरु लोगों के साथ, साथ एक स्थान पर (ऋ. ६.४६.८), तृक्षि का भी उल्लेख प्राप्त है। जब तक कुछ विरोधी साक्षी नहीं मिलती, तब तक यह मानने में कुछ हर्ज नहीं है कि, कुरुश्रवण एवं तृक्षि दोनों भाई भाई थे। कुरु लोगों का निवासस्थान मध्यदेश में था। पूरु लोग सरस्वती के किनारे रहते थे। यह सरस्वती भी मध्यदेश की ही है। यह भी कुरु-पूरुओं का साधर्म्य एवं एकरूपता दर्शाता है।

इसने अपनी पचास कन्याएँ सोभरि काण्व को पत्नी के रूप में दी थीं (ऋ. ८.१९.३६)।

ऋग्वेद में, त्रिवृषन्, त्रसदस्यु, त्र्यरुण त्रैवृष्ण तथा अश्वमेध (ऋ. ५.२७.४-६) ये सारे समानार्थक, एवं एक ही व्यक्ति के नामांतर माने गये हैं। किंतु त्रिवृषन् अथवा त्र्यरुण के साथ, त्रसदस्यु का वास्तव में क्या संबंध था, यह वैदिक ग्रंथों से नही समझता।

प्राचीन काल में, प्रसिद्ध यज्ञ करने वाले के रूप में, त्रसदस्यु पर आटणार, वीतहव्य श्रायस तथा कक्षीवत् औशिज के साथ त्रसदस्यु का उल्लेख आया है (तै. सं. ५.६.५.३; क. सं. २२.३; पं. ब्रा. १३.३)। इन सब को पुरातन थोर राजा ('पूर्वे महाराजाः') कहा गया है (जै. उ. ब्रा. २.६.११)।

एक बार त्र्यरुण राजा अपना पुरोहित वृश जान को साथ ले कर रथ में जा रहा था। पुरोहित के द्वारा रथ द्रुत गति से चलाया जाने से, एक ब्राह्मण-पुत्र की रथ के नीचे मृत्यु हो गई। तब राजा ने पुरोहित से कहा, 'तुम रथ जब हाँक रहे थे, तब लड़का मृत हुआ। इसलिये इस हत्या के लिये जिम्मेवार, तुम हो।' परंतु पुरोहित ने कहा, 'रथ तुम्हारा होने के कारण, इस हत्या के जिम्मेवार तुम ही हो'। इस प्रकार लड़ते झगड़ते दोनों इक्ष्वाकु राजा के पास गये। इक्ष्वाकु राजा ने कहा 'चूँकि रथ पुरोहित के द्वारा हाँका जा रहा था, इसलिये हत्या करनेवाला वृश जान ही है'।

तदनंतर वार्श साम नामक स्तोत्र कह कर, वृश जान ने उस बालक को पुनः जीवित किया। फिर

भी इक्ष्वाकु राजा ने पक्षपात कर वृश जान को ही दोषी ठहराया, इसलिये इक्ष्वाकु राजा के घर से अग्नि गुप्त हो गया। यज्ञयाग बंद हो गये। पूछताछ करने पर राजा को पता चला कि, वृश जान को मैं ने दोषी कहा, इसलिये अग्नि मेरे घर से चला गया है। बाद में राजा वृश जान के पास गया। तब उसने वार्श सामसूक्त कह कर अग्नि को वापस लाया। इससे इक्ष्वाकु राजा के घर के यज्ञयाग पूर्ववत प्रारंभ हो गये (ऋ. ५.२१; सायण भाष्य में से 'शाट्यायन ब्राह्मण,' तथा तांड्य. ५. २.१)। इस कथा का ऋग्वेद से (५.२) संबंध दर्शाया गया है। यहाँ त्र्यरुण, त्रैवृष्ण तथा त्रसदस्यु को एक ही माना गया है, एवं उसे ऐक्ष्वाक कहा है। परंतु यह बात सायणाचार्य मान्य नहीं करते (ऋ. ५.२७.३; बृहद्दे. ५; १३-२२)।

इसका पुत्र कुरुश्रवण (ऋ. १०.३३.४)। इसे हिरणिन् नामक और भी एक पुत्र होगा। परंतु सायण के मतानुसार 'हिरणिन्' धनवान् के अर्थ का विशेषण है (ऋ. ५.५३.८; ६.६३.९)। यह अंगिरस् गोत्रीय मंत्रकार था।

२. (सू. इ.) पुरुकुत्स एवं नर्मदा का पुत्र (वायु. ८८.७४)। मत्स्य में इसे वसुद कहा है। भविष्य में इसके लिये त्रिशदश्व पाठभेद है। मत्स्य में नर्मदा को त्रसदस्यु की पत्नी बताया है (मत्स्य. १२.३६; ब्रह्म. ७.९५)। यह सूर्यवंश का था।

त्रसद्दस्यु---मांधातृ का नामांतर (भा. ९.६.३३)।

त्राक्षायणि---विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

त्रात ऐषुमत---निगड पार्णवल्कि का शिष्य (वं. ब्रा. १.३)।

त्रासदस्यव---तृक्षि तथा कुरुश्रवण का पैतृक नाम।

त्रिशदश्व---(सू. इ.) भविष्य के मतानुसार पुरुकुत्स का पुत्र। इसका रथ तीस घोडों का था। इसका राज्य सत्ययुग के दूसरे चरण में था।

त्रिककुद्---(सो. आयु.) भागवत मतानुसार शुचि राजा का पुत्र।

त्रिगर्त---एक क्षत्रिय (म. स. ८.१९)।

त्रिचक्षु---(सो. पूरु. भविष्य.) रुच का पुत्र। इसे नृचक्षु कहा गया है।

त्रिजट---गार्ग्य-कुल का एक वृद्ध ब्राह्मण। हल, कुदलि, तथा बेंत ले कर यह हमेशा वन में घूमता था। जमीन में हल चला कर यह अपना उदरनिर्वाह करता था।

वनवास गमन के पहले राम ने लक्ष्मण से कुछ दानधर्म करने के लिये कहा। उस समय, अपनी तरुण पत्नी के कथनानुसार, धनप्राप्ति की आशा से यह भी आया। इसे वृद्ध देख कर, राम को इसपर दया आयी। हाथ में एक लकडी ले कर, उसने इससे कहा, 'यह लकडी इन गायों के बीच में फेंको। जहाँ तक यह लकडी जावेगी, वहाँ तक की गौएँ तुम्हें दी जावेंगी।' इसने लकडी फेंकी। वह गायों को पार कर, सरयू के भी उसपार चली गई। तब राम ने उस क्षेत्र की सब गौएँ इसे दीं, तथा साथ में कुछ धन भी दिया (वा. रा. अयो. ३२.२९-४३)।

त्रिजटा---लंका की एक राक्षसी। रावण ने सीता के संरक्षण के लिये जो राक्षसियाँ रखीं थीं, उनमेंसे यह एक थी (म. व. २६४.५३)। स्वप्न में इसने देखा कि, रावण का नाश तथा राम का उत्कर्ष होनेवाला है। तब से सीता को कुछ तकलीफ न हो, यह व्यवस्था इसने जारी की (वा. रा. सुं. २७)।

त्रित---एक ऋषि तथा देवता। परंतु निरुक्त में इसे एक द्रष्टा कहा है (नि. ४.६)। इन्द्र ने त्रित के लिये अर्बुद का वध किया (ऋ. २.११.२०)। त्रित ने त्रिशीर्ष का (ऋ. १०.८.८), एवं त्वष्टृपुत्र विश्वरूप का वध किया (ऋ. १०.८.९)। मरुतों ने युद्ध में त्रित का सामर्थ्य नष्ट नहीं होने दिया (ऋ. ८.७.२४)। त्रित ने इन्द्र के लिये सोम पीसा (ऋ. ८.३२.२; ३४.४; ३८. २)। त्रित ने सोम दे कर सूर्य को तेजस्वी बनाया (ऋ. ९.३७.४.)। त्रित तथा त्रित आप्त्य, एक ही होने का संभव है। त्रित को आप्त्य विशेषण लगाया गया है। इसका अर्थ सायण ने उदकपुत्र किया है (ऋ. ८.४७. १५)। यह अनेक सूक्तों का द्रष्टा है। (ऋ. १.१०५; ८.४७; ६.३३; ३४; १०२; १०. १-७)। एक स्थान पर इसने अग्नि की प्रार्थना की है कि, मरुदेश के प्याऊ के समान पूरुओं को धन से तुष्ट करते हो (ऋ. १०.४)।

त्रित शब्द इंद्र के लिये उपयोग में लाया गया है (ऋ. १.१८७.१)। उसी प्रकार इंद्र के भक्त के रूप में भी इसका उल्लेख है (ऋ. ९.३२.२;१०.८.७-८)। त्रित तथा गृत्समद कुल का कुछ संबंध था, ऐसा प्रतीत होता है (ऋ. २.११.१९)। त्रित को विभूवस का पुत्र कहा गया है (ऋ. १०.४६.३)। त्रित अग्नि का नाम है

(ऋ. ५.४१.४)। त्रित की वरुण तथा सोम के साथ एकता दर्शाई है (ऋ. ८.४१.६; ९.९५.४)।

एक बार यह कुएँ में गिर पड़ा। वहाँ से छुटकारा हो, इस हेतु से इसने ईश्वर की प्रार्थना की। यह प्रार्थना बृहस्पति ने सुनी तथा त्रित की रक्षा की (ऋ. १.१०५. १७)। भेड़ियों के भय से ही त्रित कुएँ में गिरा होगा (१८)। इसी ऋचा के भाष्य में, सायण ने शाट्यायन ब्राह्मण की एक कथा का उल्लेख किया है। एकत, द्वित तथा त्रित नामक तीन बंधु थे। त्रित पानी पीने के लिये कुएँ में उतरा। तब इसके भाईयों ने इसे कुएँ में धक्का दे कर गिरा दिया, तथा कुँआ बंद करके चले गये। तब मुक्ति के लिये, त्रित ने ईश्वर की प्रार्थना की (ऋ. १. १०५)। यह तीनों बंधु अग्नि को उदक से उत्पन्न हुएँ थे (श. ब्रा. १.२.१.१-२; तै. ब्रा. ३.२.८.१०-११)।

महाभारत में, त्रित की यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। गौतम को एकत, द्वित तथा त्रित नामक पुत्र थे। यह सब ज्ञाता थे। परंतु कनिष्ठ त्रित तीनों में श्रेष्ठ होने के कारण, सर्वत्र पिता के ही समान उसका सत्कार होने लगा। एकत तथा द्वित का लोगों पर अधिक प्रभाव न पड़ता था। इन्हें विशेष द्रव्य भी प्राप्त नहीं होता था।

एक बार त्रित की सहायता से यज्ञ पूर्ण कर के, इन्होंने काफी गौऎं प्राप्त की। गौऎं ले कर जब ये सरस्वती के किनारे जा रहे थे, तब त्रित आगे था। दोनों भाई गौओं को हाँकते हुए पीछे जा रहे थे। इन दोनों को गौओं का हरण करने की सूझी। त्रित निःशंक मन से जा रहा था। इतने में सामने से एक भेड़िया आया। उससे रक्षा करने के हेतु से त्रित बाजू हटा, तो सरस्वती के किनारे के एक कुएँ में गिर पड़ा। इसने काफी चिल्लाहट मचाई। परंतु भाईयों ने सुनने पर भी, लोभ के कारण, इसकी ओर ध्यान नहीं दिया। भेड़िये का डर तो था ही।

जलहीन, धूलियुक्त तथा घास से भरे कुऎं में गिरने के बाद, त्रित ने सोचा कि, 'मृत्यु भय से मैं कुऎं में गिरा। इसलिये मृत्यु का भय ही नष्ट कर डालना चाहिये'। इस विचार से, कुएँ में लटकनेवाली वल्ली को सोम मान कर इसने यज्ञ किया। देवताओं ने सरस्वती के पानी के द्वारा इसे बाहर निकाला। आगे वह कूप 'त्रित-कूप' नामक तीर्थ-स्थान हो गया।

घर वापस जाने पर, शाप के द्वारा इसने भाईयों को भेड़िया बनाया। उनकी संतति को इसने बंदर, रीछ आदि बना दिया। बलराम जब त्रित के कूप के पास आया, उस समय उसे यह पूर्वयुग की कथा सुनाई गयी (म. श. ३५; भा. १०.७८)। आत्रेय राजा के पुत्र के रूप में, त्रित की यह कथा अन्यत्र भी आई है (स्कन्द. ७.१. २५७)।

२. मधुर्गिरु की मद्रकला से उत्पन्न पुत्रों में से एक।

३. आंगिरस् गोत्र का एक मंत्रकार।

४. ब्रह्मदेव के मानस पुत्रों में से एक।

त्रिधन्वन्—(सू. इ.) विष्णु, वायु तथा भविष्य के मतानुसार वसुमनस् का पुत्र; परंतु मत्स्य तथा पद्म के मतानुसार संभूति का पुत्र। भागवत में अरुणपुत्र त्रिबंधन का निर्देश आया है। वह तथा यह एक ही है।

त्रिधामन्—वर्तमान मन्वन्तर का दशम व्यास (व्यास देखिये)।

२. दसवाँ शिवावतार। इसने काशी में तपस्या की। इसे भृंग, बलबंधु, नरामित्र, तथा केतुशृंग नामक चार शिष्य थे। इसके समय भृगु ऋषि व्यास था (शिव. शत. ५)।

त्रिनाभ—कश्यप तथा दक्षा का पुत्र।

त्रिनेत्र—(मगध. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार निर्वृत्ति का पुत्र। वायु में इसको सुव्रत, ब्रह्मांड तथा विष्णु में सुश्रम, तथा भागवत में श्रम कहा गया है। मत्स्य के मतानुसार इसने अठ्ठाईस, तथा वायु तथा ब्रह्मांड के मतानुसार अड़तीस वर्षों तक राज्य किया।

त्रिपुर—एक असुरसंघ। मयासुर ने ब्रह्माजी के प्रसाद से तीन पुरों (नगरों) की रचना की। उन पुरों क्रमशः लोहमय, रौप्यमय, एवं सुवर्णमय थे। नगर पूर्ण होने के पश्चात्, उनका आधिपत्य तारकासुर के तारक्ष, कमलाक्ष एवं विद्युन्मालि इन तीन पुत्रों को दिया गया (म. क. २४.४)। ये तीन असुर 'त्रिपुर' नाम से प्रसिद्ध हुएँ।

मयासुर ने नगर निर्माण कर असुरों को दिये। उस समय उसने त्रिपुरों को चेतावनी दी कि, 'तुम्हें देवताओं को न तो त्रस्त करना चाहिये, नहीं तो उनका अनादर करना चाहिये'।

किंतु बाद में विपरीत बुद्धि हो कर, त्रिपुर अधर्माचरण करने लगे। इसलिये शिवजी के हाथ से इनका नाश हुआ। यह अधर्माचरण विष्णु ने इनमें फैलाया (शिव. रुद्र. ४.५)। त्रिपुरों में धार्मिकता होने के कारण, उनपर विजयप्राप्ति असंभव थी। इसलिये विष्णु ने बुद्ध के रूप में इन पुरों को धर्मरहित किया। बाद में देवों ने

युद्ध प्रारंभ किया (मत्स्य. १३०-१४०; भा. ७.१०; म. अनु. २६५.११ कुं.)।

इनसे युद्ध करते समय शंकर के शरीर से जो घर्मबिंदु निकले, वे ही रुद्राक्ष बने (पद्म. सृ.५९)। जिन अमृत-कुंडों के कारण वे अमर थे, उनका प्राशन देवताओं ने गोरूप से कर लिया। पश्चात् शिवजी ने त्रिपुर का दहन किया (पद्म. सृ. १३)। इसी समय तारकाक्ष, कमलाक्ष तथा विद्युन्मालि असुरों का अंत हुआ (म. द्रो. १७३. ५२-५८; शिव. १.७०-७२)।

त्रिपुरसुंदरी—एक देवी। अर्जुन को इसने आलाप दिया थी (पद्म. पा. ७४)।

त्रिबंधन—(सू. इ.) भागवत के मतानुसार अरुण का पुत्र (त्रिधन्वन् देखिये)। त्रिबंधन तथा यह एक ही हैं।

त्रिभानु—(सो. तुर्वसु.) भागवत के मतानुसार भानुमान् राजा का पुत्र। इसका पुत्र करंधम। विष्णु में त्रैसाव, वायु में त्रिसानु, तथा मत्स्य में त्रिसारि कहा गया है।

त्रिमार्ष्टि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

त्रिमूर्ति—इंद्रप्रमति का नामान्तर।

त्रिमूर्धन्—रावण का एक पुत्र।

त्रिवक्रा—कंसदासी कुब्जा का नामांतर (भा. १०. ४.२१)।

त्रिवरासांम—आर्षमानस के लिये पाठभेद।

त्रिवृषा—एक व्यास (व्यास देखिये)।

त्रिवेद कृष्णरात लौहित्य—श्याम जयन्त लौहित्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

त्रिशंकु—एक साक्षात्कारी तत्त्वज्ञ। यह ब्रह्म से एक-रूप हो गया था। अपना 'वेदानुवचन' (आत्मानुभव) वर्णन करते समय इसने लिखा है, 'मैं संसार को हिलाने-वाला हूँ। मेरे सामने सब तुच्छ है। मैं साकार हुआ पावित्र्य हूँ। मैं सूर्यस्थित अमर तत्त्व हूँ। मैं अमूल्य द्रव्यनिधि हूँ। मैं ज्ञानयुक्त, अमर, तथा अक्षय हूँ। (तै. उ. १.१०)।

पौराणिक त्रिशंकु, तथा यह दोनों अलग व्यक्ति प्रतीत होते है।

२. (सू. इ.) अयोध्या का राजा। यह निबंधन राजा का ज्येष्ठ पुत्र था। कई ग्रंथों में इसके पिता का नाम त्रय्यारुण या अरुण दिया है (ब्रह्म. ८.९७; ह. वं. १. १२; पद्म. सृ. ८; दे. भा. ७.१०)। इसका मूल नाम सत्यव्रत था। परंतु वसिष्ठ के शाप के कारण, इसे त्रिशंकु नाम प्राप्त हुआ।

इसका तथा इसका पिता त्रय्यारुण, एवं पुत्र हरिश्चंद्र का कुलोपाध्याय 'देवराज' वसिष्ठ था। वसिष्ठ से त्रिशंकु का पहले से ही शत्रुत्व था। कान्यकुब्ज का राजा विश्वरथ, जो आगे तपसाधना से विश्वामित्र ऋषि बना, त्रिशंकु का मित्र एवं हितैषी था। वसिष्ठ एवं विश्वामित्र इन दो महर्षियों के बीच, त्रिशंकु के कारण जो झगड़ा हुआ, उससे त्रिशंकु का जीवनचरित्र नाट्यपूर्ण बना दिया है।

वसिष्ठ एवं त्रिशंकु के शत्रुत्व की कारणपरंपरा, 'देवी भागवत' में दी गयी है। यह शुरू से दुर्वर्तनी था। इस कारण इसके बारे में किसी का भी अनुकूल मत न था। एक बार, इसने एक विवाहित ब्राह्मण स्त्री का अपहार किया। 'उस स्त्री की सप्तपदी होने के पहले मैंने उसे उठा लिया है, अतः मैं दोषरहित हूँ,' ऐसा इसका कहना था। किंतु इसकी एक न सुन कर, इसे राज्य के बाहर निकालने की सलाह, वसिष्ठ ने इसके पिता को दी। पिता ने इसे राज्य के बाहर निकाल दिया। वह स्वयं, दूसरा अच्छा पुत्र हो, इस इच्छा से राज्य छोड़ कर, तपस्या करने चला गया।

अयोध्या में कोई भी राजा न रहने के कारण, वसिष्ठ राज्य का कारोबार देखने लगा। किंतु राज्य की आमदानी दिन ब दिन बिगड़ती गई। लगातार नौ वर्षों तक राज्य में अकाल पड़ गया।

इस समय त्रिशंकु अरण्य में गुजारा करता था। जिस अरण्य में यह रहता था, उसी अरण्य में विश्वामित्र का आश्रम था। परंतु तपस्या के कारण, विश्वामित्र कहीं दूर चला गया था। इसलिये आश्रम में केवल उसकी पत्नी तथा तीन पुत्र ही थे। त्रिशंकु, रोज थोड़ा मांस, आश्रम के बाहर पेड़ में बाँध देता था। उससे विश्वामित्र की पत्नी तथा एक पुत्र का गुजारा चलता था। एक बार आ.. पशु न मिलने के कारण, इसने वसिष्ठ की गाय कामधेनु को मार डाला। तब वसिष्ठ ने उसे शाप दिया कि, 'तुम्हारे सिर पर तीन शंकु निर्माण होंगे। गोवध, स्त्रीहरण तथा पिता के क्रोध के कारण तुम पिशाच्च बनोगे, तथा तुम्हें लोग त्रिशंकु के नाम से पहचानेंगे'।

वसिष्ठ के इस शाप के कारण, त्रिशंकु तथा वसिष्ठ का वैर अधिक ही बढ़ गया। प्रथम इसे दुर्वर्तनी कह कर, वसिष्ठ ने इसे राज्य के बाहर निकल दिया। पश्चात्, कामधेनु वध के निमित्त से इसे पिशाच्च बनने का शाप

दिया। बाद में देवी की कृपा से इसका पिशाचत्व नष्ट हो गया। पश्चात् पिता ने भी इसे राजगद्दी पर बिठाया (दे. भा. ७.१२)।

तपश्चर्या से वापस आने पर विश्वामित्र को पता चला कि, उसके कुटुंब का पालनपोषण त्रिशंकु ने किया। तब त्रिशंकु के प्रति उसे कृतज्ञता महसूस हुई तथा उसने इसे वर माँगने के लिये कहा। तब सदेह स्वर्ग जाने की इच्छा त्रिशंकु ने विश्वामित्र के पास प्रकट की। बाद में विश्वामित्र ने इसे राज्य पर बैठाया, इससे यज्ञ करवाया, तथा सब देवता एवं वसिष्ठ के विरोध के बावजूद उसने त्रिशंकु को स्वर्ग पहुँचा दिया (ह. वं. १. १३)।

वाल्मीकि रामायण में, त्रिशंकु की सदेह स्वर्गारोहण की कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। सदेह स्वर्ग जाने की इच्छा त्रिशंकु ने वसिष्ठ के सामने रखी। वसिष्ठ ने इसे साफ उत्तर दिया कि, यह असंभव है। तब यह वसिष्ठ के पुत्रों के पास गया। उन्हों ने यह कह कर इसका निषेध किया कि, जब हमारे पिता ने तुम्हें ना कह दिया है, तब तुम हमारे पास क्यों आये? त्रिशंकु ने उन्हें जवाब दिया कि, 'दूसरी जगह जा कर, कुछ मार्ग मैं अवश्य ढूंढ लाऊँगा'। तब उन पुत्रों ने इसे शाप दिया कि 'तुम चांडाल बनोगे'। बाद में यह विश्वामित्र की शरण में गया।

विश्वामित्र ने उसे सदेह स्वर्ग ले जाने का आश्वासन दिया, एवं सब को यज्ञ के लिये निमंत्रण दिया। वसिष्ठ को छोड कर, अन्य सारे ऋषियों ने विश्वामित्र के इस निमंत्रण का स्वीकार किया। किंतु वसिष्ठ ने स्पष्ट शब्दों में संदेश भेजा कि, 'जहाँ यज्ञ करनेवाला चांडाल हो, उपाध्याय क्षत्रिय हो, वहाँ कौन आयेगा? इस यज्ञ के द्वारा स्वर्ग में भी भला कौन आयेगा?' यह संदेश सुन कर विश्वामित्र अत्यंत क्रोधित हुआ। उसने सारा वसिष्ठकुल भस्मसात् कर दिया, एवं वसिष्ठ को शाप दिया कि, 'अगला जन्म तुम्हें डोम के घर में मिलेगा'।

विश्वामित्र का यज्ञ शुरू हुआ। विश्वामित्र अध्वर्यु के स्थान में था। निमंत्रित करने पर भी देवता यज्ञ में नहीं आयें। तब अपना तपःसामर्थ्य खर्च कर विश्वामित्र ने त्रिशंकु को सदेह स्वर्ग ले जाना प्रारंभ किया। देखते देखते त्रिशंकु स्वर्ग चला गया। किंतु इन्द्रसहित सब देवताओं ने इसे नीचे ढकेल दिया। यह 'त्राहि त्राहि' करते हुए, नीचे सिर तथा ऊपर पैर कर के नीचे आने लगा।

यह देख कर विश्वामित्र अत्यंत क्रोधित हुआ। वह 'रुको, रुको' ऐसा चिल्लाने लगा। पश्चात् उसने दक्षिण की ओर नये सप्तर्षि एवं नक्षत्रमाला निर्माण किये। 'अन्यमिन्द्रं करिष्यामि, लोको वा स्यादनिन्द्रकः' ('या तो दूसरा इन्द्र निर्माण मैं करूँगा, या मेरा स्वर्ग ही इंद्ररहित होगा), ऐसा निश्चय कर विश्वामित्र ने नया स्वर्ग निर्माण करना प्रारंभ किया। उससे देव चिंताक्रान्त हुएँ। उन्होंने कहा कि जिस व्यक्ति को गुरुशाप मिला है, वह स्वर्ग के लिये योग्य नहीं है। विश्वामित्र ने कहा, 'मैं अपनी प्रतिज्ञा असत्य नहीं कर सकता। तब देवताओं ने उसे मान्यता दी। 'सद्यःस्थित ज्योतिश्चक्र के बाजू में दक्षिण की ओर तुम्हारे नक्षत्र रहेंगे, तथा उनमें त्रिशंकु रहेगा, ऐसा आश्वासन दे कर, विश्वामित्र की प्रतिज्ञा देवों ने पूर्ण की (वा. रा. बा. ५७-६१)। पश्चात् अपने तपःसाधना में त्रिशंकुआख्यान के कारण, बहुत भारी विघ्न आया है यह सोच कर, विश्वामित्र ने अपनी तपश्चर्या का स्थान दक्षिण की ओर पुष्करतीर्थ पर बदल दिया (६२)।

त्रिशंकुआख्यान की यही कथा स्कंदपुराण में काफी अलग तरीके से दी गई है। सदेह स्वर्ग जाने के लिये यज्ञ करने की त्रिशंकु की कल्पना, वसिष्ठ ने अमान्य कर दी, एवं इसे नया गुरु ढूँढने के लिये कहा। पश्चात् वसिष्ठ के पुत्रों से इसने यज्ञ करने की विज्ञापना की, जिससे उनसे इसे चांडाल होने का शाप मिला। तत्काल इसका शरीर काला एवं दुर्गंधयुक्त हो गया। तब अपने दुराग्रह के प्रति स्वयं इसीके मन में घृणा उत्पन्न हुई। घर लौटने के बाद, द्वार से ही इसने अपने पुत्र को राज्याभिषेक करने के लिये कहा। पश्चात् यह स्वयं सदेह स्वर्गारोहण के प्रयत्न में लगा।

जगन्मित्र विश्वामित्र के सिवा इसे अन्य कोई भी मित्र नहीं था। विश्वामित्र के यहाँ जाने पर, पहले तो इसे किसीने भीतर ही न जाने दिया। परन्तु बाद में विश्वामित्र से मुलाकात होने पर, उसने वसिष्ठपुत्रों के शाप की हकीकत इसे पूछ ली। वसिष्ठ से स्पर्धा होने के कारण, त्रिशंकु को सदेह स्वर्ग ले जाने की प्रतिज्ञा विश्वामित्र ने की। इसका चांडालत्व दूर करने के लिये, विश्वामित्र ने इसे साथ ले कर तीर्थयात्रा प्रारंभ की। परंतु इसका चांडालत्व नष्ट न हो सका।

बाद में अर्बुदाचल पर मार्कंडेय ऋषि इनसे मिले। उन्हें विश्वामित्र ने सारा वृत्तान्त, अपनी प्रतिज्ञा के सहित बताया। इसका चांडालत्व दूर होने की

तरकीब भी मार्कंडेय ऋषि से पूछी। मार्कंडेय ने इसे हाटकेश्वरक्षेत्र में आ कर, पातालगंगा में स्नान, तथा हाटकेश्वर का दर्शन लेने के लिये कहा। हाटकेश्वर-दर्शन के पश्चात् इसका चांडालत्व दूर हुआ।

पश्चात् यज्ञ की सामग्री एकत्रित करने के लिये, विश्वामित्र ने इसे कहा। त्रिशंकु के यज्ञ की तैयारी पुरी होते ही, विश्वामित्र स्वयं ब्रह्मदेव के पास गया। ब्रह्माजी से विश्वामित्र ने कहा कि, 'त्रिशंकु को सदेह तुम्हारे लोक में लाने के लिये, मैं उससे यज्ञ करवा रहा हूँ। इसलिये आप सब देवों के साथ यहाँ आ कर, यज्ञभाग का स्वीकार करे'। तब ब्रह्मदेव ने कहा, 'देहान्तर के बिना स्वर्गप्राप्ति असंभव है। इसलिये यज्ञ करने के बाद त्रिशंकु को देहान्तर (मृत) करना ही पडेगा। वरना उसका स्वर्गप्रवेश असंभव है'। यह सुन कर विश्वामित्र संतप्त हुआ, तथा उसने कहा, 'मैं अपनी तपश्चर्या के सामर्थ्य से, त्रिशंकु को सदेह स्वर्गप्राप्ति दे कर ही रहूँगा'।

इतना कह कर, विश्वामित्र त्रिशंकु के पास वापस आया। स्वयं अध्वर्यु बन कर, विश्वामित्र ने यज्ञ शुरु किया। शांडिल्य आदि ऋषियों को उसने होता आदि ऋत्विजों के काम दिये। बारह वर्षों तक विश्वामित्र का यज्ञ चालू रहा। पश्चात् अवभृतस्नान भी हुआ। किंतु त्रिशंकु को स्वर्गप्रवेश नहीं हुआ।

वसिष्ठ के सामने अपना उपहास होगा, यह सोच कर इसे अत्यंत दुख हुआ। विश्वामित्र ने इसे सांत्वना दी, एवं कहा की, 'समय पाते ही मैं प्रतिसृष्टि निर्माण करूँगा'।

प्रतिसृष्टि निर्माण करने की शक्ति प्राप्त हो, इस हेतु से विश्वामित्र ने शंकर की आराधना शुरू की। पश्चात् वैसा वर भी शंकर से उसने प्राप्त किया, एवं प्रतिसृष्टि निर्माण करने का काम शुरू किया।

ब्रह्मदेव ने विश्वामित्र के पास आ कर उससे कहा, 'इंद्रादि देवों का नाश होने के पहले, प्रतिसृष्टि निर्माण करना बंद करो'। विश्वामित्र ने जवाब में कहा, 'अगर त्रिशंकु को सदेह स्वर्ग प्राप्त हो जाये, तो मैं प्रतिसृष्टि निर्माण करना बंद कर दूँगा'। ब्रह्मदेव के द्वारा अनुमति दी जाने पर, निर्माण की गई प्रतिसृष्टि अक्षय होने के लिये, विश्वामित्र ने ब्रह्मदेव से प्रार्थना की। तब ब्रह्मदेव ने कहा, 'तुम्हारी सृष्टि अक्षय होगी, परंतु यज्ञार्ह नहीं बन सकती'। इतना कह कर, ब्रह्मदेव त्रिशंकु के साथ सत्यलोक गया (स्कन्द. ५.६.२.७)। भविष्य के मतानुसार, त्रिशंकु ने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

इसकी पत्नी का नाम सत्यरथा था। उससे इसे हरिश्चन्द्र नामक सुविख्यात पुत्र हुआ (ह. वं. १.१३. २४)।

त्रिशंकु की धार्मिकता का वर्णन, विश्वामित्र के मुख में काफी बार आया है (वा. रा. बा. ५८)। इसने सौ यज्ञ किये थे। क्षत्रियधर्म की शपथ ले कर इसने कहा है, 'मैंने कभी भी असत्य कथन नहीं किया, तथा नहीं करूँगा। गुरु को भी मैं ने शील तथा वर्तन से संतुष्ट किया है, प्रजा का धर्मपालन किया है। इतना धर्मनिष्ठ होते हुए भी, मुझे यश नहीं मिलता, यह मेरा दुर्भाग्य है। मेरे सब उद्योग निरर्थक हैं, ऐसा प्रतीत होता है'। विश्वामित्र को भी इसके बारे में विश्वास था (५९)। वसिष्ठ को भी त्रिशंकु के वर्तन के बारे में आदर था। 'यह कुछ उच्छृंखल है, परंतु बाद में यह सुधर जाएगा' ऐसी उसकी भावना थी (ह. वं. १.१३)।

वनवास के समय इसका वर्तन आदर्श था। वहाँ इसने विश्वामित्र के बालकों का संरक्षण किया, इससे इसकी दयालुवृत्ति जाहीर होती है। ब्राह्मण की कन्या के अपहरण के संबंध में जो उल्लेख आये है, उसका दूसरा पक्ष हरिवंश तथा देवी भागवत में दिया गया है। उस मॉमले में इसकी विचारपद्धति उस काल के अनुरूप ही प्रतीत होती है। वसिष्ठ की गाय इसने जानबूझ कर मारी, यह एक आक्षेप है। किंतु वसिष्ठ के साथ इसका शत्रुत्व था। गोहत्या का यही एक समर्थनीय कारण हो सकता है।

सदेह स्वर्ग जाने की इच्छा, इसके विचित्र स्वभाव का एक भाग है। सदेह स्वर्ग जाना असंभव है, यों वसिष्ठ ने कहा था। तथापि वसिष्ठ विश्वामित्रादि ऋषि स्वर्ग में जा कर वापस आते थे, यह हरिश्चन्द्र की कथा से प्रतीत होता है। त्रिशंकु की कथा में भी वैसा उल्लेख आया है। कुछ दिन स्वर्ग में जा कर, अर्जुन ने इन्द्र के आतिथ्य का उपभोग किया था, ऐसा उल्लेख भी महाभारत में प्राप्त है। इस दृष्टि से त्रिशंकु को भी स्वर्ग जाने में कुछ हर्ज नहीं था। परंतु वसिष्ठ के द्वारा अमान्य किये जाने पर, इसे ऐसा लगा, 'अपना तथा वसिष्ठ का शत्रुत्व है, इसीलिये वह अपनी इच्छा अमान्य कर रहा है'। इन्द्रादि देवों ने भी इसे स्वर्ग में न लेने का कारण, 'गुरु का शाप' यही कहा है। स्वर्गप्राप्ति के लिये देहान्तर

उदीच्य देशों में था। इनका अंक तथा लक्षण (राज्यचिह्न) का निर्देश भी प्राप्त है (काशिका. ४. ३. १२७)। दाक्षिकूल तथा दाक्षिकर्ष ये इनके प्रमुख ग्राम थे। कर्ष का अर्थ है 'गढ़ैया'। दाक्षि लोग प्राच्य देश, भरत जनपद, एवं उशीनर देश के बाहर, पश्चिमोत्तर भारत में बसे थे। शेरकोट (उशीनर) तथा गंधार के समीप 'दक्षसंघ' का स्थान होगा। पाणिनि स्वयं गांधार का रहनेवाला था। वह दक्षसंघ में से एक होना संभवनीय है। इसलिये उसको दाक्षिपुत्र कहा गया है। (वासुदेवशरण–पा. भा. १४)

दक्ष कात्यायनि आत्रेय--शंख बाभ्रव्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१; ४.१७.१)।

दक्ष जयंत लौहित्य—कृष्णरात लौहित्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

दक्ष पार्वति—एक प्राचीन राजा। इसने प्रजा एवं समृद्धि, प्राप्त करने के लिये यज्ञ किया। इसे कुछ लोग 'दाक्षायण–यज्ञ' अथवा 'वसिष्ठ–यज्ञ' कहते हैं। उसके वंशजों को उस यज्ञ से राज्यप्राप्ति हुई (श. ब्रा. १.४. १.६; सां. ब्रा. ४.४)।

दक्ष प्रजापति--एक सृष्टिनिर्माणकर्ता देवता एवं ऋषि। ऋग्वेद में, सृष्टि की उत्पत्ति भू, वृक्ष, आशा, अदिति, दक्ष, अदिति इस क्रम से हुई (ऋ. १०.७२. ४–५)। अदिति से दक्ष उत्पन्न हुआ, एवं दक्ष से अदिति उत्पन्न हुई, यों परस्पर विरोधी निर्देश ऋग्वेद में हैं। इस विरोध का परिहार, 'ये सारी देवों की कथा हैं (देवधर्म), यों कह कर निरुक्त में किया गया है (नि. ११.२३)।

पुराणों में दी गयी 'दक्षकथा' का उद्गम उपरिनिर्दिष्ट ऋग्वेदीय कथा से ही हुआ है। पुराणों में, दक्ष प्रजापति ब्रह्मदेव के दक्षिण अंगूठे से उत्पन्न हुआ (विष्णु १.१५; ह. वं. १.२; भा. ३.१२.२३)। स्वायंभुव मन्वंतर में यह पैदा हुआ था। स्वायंभुव मनु की कन्या प्रसूति इसकी पत्नी थी। इससे दक्ष को सोलह कन्याएँ हुई। उनमें से श्रद्धा, मैत्री, दया, शांति, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया, उन्नति, बुद्धि, मेधा, तितिक्षा, तथा मूर्ति ये तेरह कन्याएँ इसने प्रजापति को भार्यारूप में दी। स्वाहा अग्नि को, स्वधा अग्निष्वात्तों को तथा सोलहवी सती शंकर को दी गयी (भा. ४.१)। ब्रह्मदेव के दाहिने अंगूठे से जन्मी हुई स्त्री दक्ष की पत्नी थी। उसे कुल ५०० कन्याएँ हुई (म. आ. ६०.८–१०)।

एकबार सृष्टि निर्माण करनेवाले प्रजापति यज्ञ कर रहे थे। दक्ष प्रजापति वहाँ आया। उस समय शंकर तथा ब्रह्मदेव छोड, अन्य सब देव खडे हो गएँ। इससे यह क्रोधित हुआ, एवं इसने शंकर को शाप दिया। नंदिकेश्वर ने भी इसे शाप दिया। दक्ष के शाप को अनुमति देने के कारण, ऋषियों को शाप मिला, 'जन्ममरणों का दुख अनुभव करते हुएँ तुम्हें गृहस्थी के कष्ट उठाने पडेंगे'। इसी समय भृगु ऋषि ने भी शंकर के शिष्यों को दुर्धर शाप दिये (भा. ४.२; ब्रह्मांड. १.१.६४)। इस प्रकार दक्ष तथा शंकर इन श्वसुर–दामाद में शत्रुत्व बढ़ने लगा।

ब्रह्मदेव ने दक्ष को प्रजापतियों के अध्यक्षपद का अभिषेक किया। उससे गर्वांध हो कर, इसने शंकर आदि सब ब्रह्मनिष्ठों को निमंत्रित न करते हुए, यज्ञ प्रारंभ किया। प्रथम वाजपेय यज्ञ कर, बाद में बृहस्पतिसव प्रारंभ किया। इस यज्ञ में दक्ष ने सारे ब्रह्मर्षि, देवर्षि तथा पितरों का उनकी पत्नीयों के सहित सम्मान किया, एवं उन्हें दक्षिणा दे कर संतुष्ट किया।

दक्ष के घर में हो रहे यज्ञ की वार्ता, दक्षकन्या सती ने सुनी। तब वहाँ चलने की प्रार्थना उसने शंकर से की। किंतु उसने वह प्रार्थना अमान्य की। मजबूरन सती को अकेले ही जाना पड़ा। इसके साथ नंदिकेश्वर, यक्ष, तथा शिवगण भी भेजे गये। यज्ञमंडप में माता तथा भगिनियों के सिवा, अन्य किसी ने सती का स्वागत नहीं किया। स्वयं दक्ष ने उसका अनादर किया। इस कारण सती ने पिता की खूब निर्भर्त्सना की, तथा क्रोधवश वह स्वयं आग में दग्ध हो गयी।

यह वर्तमान सुन कर, शंकर ने वीरभद्र का निर्माण किया, एवं उसे दक्षवध करने की आज्ञा दी। महाभारत के अनुसार, वीरभद्र शंकराज्ञा के अनुसार दक्षयज्ञ में गया। उसने दक्ष से कहा कि, मैं तुम्हारे यज्ञ का नाश करने आया हूँ। तत्काल दक्ष शंकर की शरण में आया (म. शां. परि. १.२८)। फिर भी उसने दक्षवध किया।

दक्षवध के बाद ब्रह्मदेव ने शंकर का स्तवन किया। तब दक्ष को बकरे का सिर लगा कर जीवित किया गया। तत्काल दक्ष ने शंकर से क्षमा माँगी (भा. ४.३–७)। वायुपुराण में दक्ष का अर्थ 'प्राण' दिया है (१०.१८) दक्ष का यज्ञ दो बार हुआ। तथा ऋषि दो बार मारे गये। प्रथम यज्ञ, स्वायंभुव मन्वंतर में हुआ। दूसरा यज्ञ चाक्षुष मन्वंतर में संपन्न हुआ (ब्रह्मांड. २.१३.४५; ६५–७२; सती देखिये)।

दक्ष प्राचेतस प्रजापति---एक ऋषि। प्राचीनबर्हि-पुत्र प्रचेतस् एवं कंडुकन्या मारिषा का यह पुत्र था।

सवर्णा नामक समुद्रकन्या को प्राचीनबर्हि से प्रचेतस् नामक दस पुत्र हुएँ। उनके तप करते समय, पृथ्वी पर अनेक जातियों के वृक्ष बढ़े। अत्यधिक वृक्षवृद्धि के कारण, पृथ्वी जंगलमय हो गई। अनाज का उत्पादन बंद हो गया। इससे क्रुद्ध हो कर वे दस प्रचेतस्, वृक्षों का नाश करने लगे। तब वृक्षों के राजा सोम ने उनसे कहा, 'संपूर्ण पृथ्वी अब वृक्षशून्य हो गई हैं। अब वृक्षों का नाश बंद कीजिये'। पश्चात् कंडु की कन्या मारिषा से प्रचेतस् का विवाह हुआ।

सोम का आधा तेज तथा प्रचेतस् का आधा तेज मिल कर, इसे दक्ष नामक तेजस्वी पुत्र हुआ। यही प्राचेतस दक्ष प्रजापति है (ह. वं. १.२; म. आ. ७०; भा. ४. ३०;६.४; ब्रह्म. २.३४; ३९-४०; विष्णु. १.१४.१५)।

दक्ष ने अपने वीर्य के द्वारा, एवं मन के द्वारा सृष्टि का निर्माण किया। मानससृष्टि से प्रजासृष्टि वृद्धिंगत नहीं हुई। इसलिये विंध्याचल के समीप के अघमर्षणतीर्थ में इसने तपस्या की। इस तपस्या से प्रसन्न हो कर, श्रीहरि ने पंचजन प्रजापति की कन्या असिक्नी (वीरिणी) भार्या रूप में इसे दी, एवं प्रजावृद्धि करने के लिये इसे कहा। उस स्त्री से इसे हर्यश्व नामक दस हजार पुत्र हुएँ। दक्ष ने उन्हें प्रजा निर्माण करने के लिये कहा। परन्तु नारद की सलाह के अनुसार, उन्होंने यह कार्य नहीं किया। बाद में नारद के कहने पर, ब्रह्मदेव ने दक्ष को समझाया। तब इसने पुनः साठ कन्याएँ निर्माण कीं (भा. ६.४-६)।

प्राचेतस दक्ष को इस के समान गुणशील संपन्न एक हजार पुत्र हुएँ। उन्हें नारद ने 'मोक्षशास्त्र' एवं 'सांख्यज्ञान' का उपदेश दे दिया। इस उपदेश से वे विरक्त हो कर, घर से निकल गएँ। तब इसने 'पुत्रिकाधर्म' के अनुसार, दौहित्रों को अपना पुत्र मानने का संकल्प किया, एवं उस कार्य के लिये पचास कन्याएँ उत्पन्न कीं (म. आदि. ७५.६-८)।

उनमें से धर्म को दस, कश्यप को तेरह, चन्द्र को सत्ताईस, भूत, अंगिरस् तथा कृशाश्व, इनको प्रत्येक को दो दो, तथा तार्क्ष्य नामक कश्यप को चार कन्याएँ इसने विवाह में दे दी (भा. ६.४-६)। अन्य स्थान पर दिया है कि, असिक्नी वीरण प्रजापति की कन्या थी, जिससे दक्ष को पाँच हजार पुत्र हुएँ (ब्रह्मांड. ३.२.५)। वीरिणी तथा असिक्नी एक ही है। हरिवंश तथा विष्णु-पुराण में, दक्षकन्याओं का विभाजन कुछ भिन्न है। उन ग्रंथों में, इसकी कन्याओं की संख्या साठ दी गई है। उनमें से धर्म को दस, कश्यप को तेरह, सोम को सत्ताईस, अरिष्टनेमि को चार, भृगुपुत्र को दो, अंगिरस को दो, इसने विवाह में देने का निर्देश है (ह. वं. १.३; विष्णु १.१५)। दक्ष को सुव्रता नामक एक कन्या और थी। उसे दक्ष, ब्रह्म, धर्म, तथा रुद्र नामक चार पुत्र हुएँ। उन चार पुत्रों में से चार मनु उत्पन्न हुएँ, जिनके वर्ण से पुत्रत्व तय होने के कारण, उन्हें सावर्णि कहते हैं (वायु. १००.४२)।

दक्ष के पहले, संकल्प, दर्शन, एवं स्पर्श से संतति निर्माण होती थी। दक्ष के पश्चात् मैथुन से संतति-निर्मिति होने लगी (मत्स्य ५.२)।

सृष्टि-निर्माण का क्रम दक्ष के चरित्र में दिया है। सृष्टि-निर्माणशास्त्र पर यह कथा प्रकाश डालती है।

दक्षपितर--दक्ष प्रजापति के पुत्रों का नामांतर (तै. सं. १.२.३)।

दक्षसावर्णि--दक्ष का पुत्र। यह दक्ष तथा उसी की कन्या सुव्रता से चाक्षुष मन्वंतर में उत्पन्न हुआ। यह नवम मन्वन्तराधिप मनु था।

यह वरुण से उत्पन्न हुआ था (भा. ८.१३.१८)। इसे दत्तपुत्र भी कहा गया है। किंतु 'दत्त' दक्ष का ही अपभ्रंश होगा (मार्क. ९१; मनु देखिये)। इस मन्वन्तर का अधिपति एवं वैवस्वत मनु का पुत्र करुष माना गया है (दे. भा. १०.१३)। इसे रोहित नामांतर है (ह. वं. १.७.६३; वायु. १००)।

दक्षिणा--रुचि को आकूति से उत्पन्न कन्या। यह यज्ञ को दी गई थी। यज्ञ से इसे तुषित नामक बारह पुत्र हुएँ। यज्ञ इसका भाई ही था। किंतु वह विष्णु का अवतार होने के कारण, उसने लक्ष्मीरूप से अवतीर्ण अपनी दक्षिणा नामक बहन से ही विवाह किया (भा. ४.१)।

एक बार राधा के सामने, दक्षिणा कृष्ण की गोद में बैठ गई। क्रोधित हो कर, राधा ने इसे वहाँ से भगा दिया। बाद में यह लक्ष्मी के शरीर में प्रविष्ट हुई। वहाँ से ब्रह्माजी के पास गई। पश्चात् ब्रह्माजी से इसका विवाह संपन्न हुआ (ब्रह्मवै. २.४२)।

दंड--(सू. इ.) इक्ष्वाकुपुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र। यह जन्मतः मूढ, विद्याहीन तथा उन्मत्त था। यह अति शूर तथा विद्वान था, परंतु इसके घोर नामक दोष के

कारण, इक्ष्वाकु ने इसे दूर का राज्य दिया। किस स्थान का राज्य इसे दें, इसका विचार कर, इक्ष्वाकु ने इसे विंध्याद्रि तथा शैवल पर्वत के बीच का आधिपत्य दिया। इसका राज्य विंध्य, तथा नील पर्वतों के बीच था। इसने विंध्य के दो शिखरों के बीच, मधुमत्त नामक नगरी बसाई (पद्म. सृ. ३४; ३७)। नगर का नाम मधुमंत भी दिया गया है (वा. रा. उ. ७९)। इसने उशनस् शुक्र को पुरोहित बनाया था (वा. रा. उ. ७९.१८)।

यह अनेक वर्षों तक जितेन्द्रिय था। एक बार चैत्र माह में यह भार्गवाश्रम में गया था। तब वहाँ इसने गुरु की ज्येष्ठ कन्या अरजा को, कामातुर हो कर देखा। तब उसने कहा, 'मैं तुम्हारी गुरुभगिनी हूँ। इसलिये मेरे पिता के पास तुम मेरी याचना करो। उनसे संमति मिलने पर पाणिग्रहणविधि से मेरा वरण करो'। इस उन्मत्त ने उसकी एक न सुनी। उस पर बलात्कार कर के, यह स्वनगर भाग गया। इधर ऋषि आश्रम में वापस आया, तब उसने देखा कि, राजा ने बड़ा ही अन्याय किया है। उसने राजा को क्रोध से शाप दिया, 'बल कोशादि सहित तुम एक सप्ताह में नष्ट हो जावोगे। इन्द्र तुम्हारे राज के उपर धूली की वर्षा करेगा'।

इसने अरण्यवासी लोगों को, राज्य छोड़ कर जाने के लिये कहा। अरजा को देहशुद्धि के लिये, वहीं सरोवर समीप १०० वर्षों तक तपस्या करने के लिये कहा। बाद में ऋषि के जाने पर राजा नष्ट हो गया। इन्द्र की आज्ञा से वहाँ १०० योजन (वा. रा. उ. ८१), ४०० योजन (पद्म. सृ. ३७) धूली की वर्षा हो कर वह देश अरण्यप्राय हो गया। तबसे उस प्रदेश को दंडकारण्य नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. ८०-८१)। इसे दंडक नामांतर था। राम के द्वारा, 'दंडकारण्य निर्मनुष्य क्यों है?' ऐसा पूछा जाने पर अगस्त्य ने दंडक की उपरिनिर्दिष्ट कथा उसे बताई।

२. सूर्य का एक पार्षद। इसे दंडिन् नामांतर है।

३. (सू. इ.) कुवलाश्व का पुत्र (चन्द्राश्व देखिये)।

४. वृत्र का छोटा भाई 'क्रोधहंता' का अंशावतार (म. आ. ६१.४३)। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था। यह मगधाधिपति विदंड राजा का पुत्र एवं दंडधार का भाई था (म. आ. १७७.११)। पांडवों के राजसूययज्ञकालीन दिग्विजय में भीम ने इसे जीता था। इसने भीम के साथ कर्ण पर गिरिव्रजपुर में आक्रमण किया था (म. स. २७.१५)।

भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था। इसका वध अर्जुन ने किया (म. क. १३.१९)।

५. कर्ण के द्वारा मारा गया पांडव पक्षीय राजा (म. क. ४०.५०)।

६. उत्कल के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ। इसीने दंडकारण्य का निर्माण किया (ह. वं. १.१०.२४)।

७. (सो. आयु.) आयु के पाँच पुत्रों में से चौथा (पद्म. सृ. ४२)।

दंड औपर—एक ऋषि। इसने किये एक व्रत का निर्देश आया है (तै. सं. ६.२.९.४; मै. सं. ३.८.७)।

दंडक—एक चोर। इसने केवल पाप किये थे। एक बार यह विष्णु मंदिर में चोरी करने गया था। वहाँ सर्पदंश से इसकी मृत्यु हुई (पद्म. ब्र. २)।

२. इक्ष्वाकु के सौ पुत्रों में से तृतीय (भा. ९.६.३; पद्म. सृ. ८; दंड देखिये)।

दंडकर—एक चोर। चोर होते हुए भी इसने किये विष्णुपंचक व्रत के कारण यह मुक्त हुआ (पद्म. ब्र. २३)।

दंडकेतु—पांडवपक्षीय पांड्य राजा (म. द्रो. २२. ५८)।

दंडगौरी—एक अप्सरा।

दंडधार—मगधाधिपति विदंड का पुत्र। इसका भाई दंड। यह क्रोधवर्धन राक्षस का अंशभूत था (म. आ. ६१.४४)। यह कौरवपक्षीय रथी एवं हस्तियुद्ध में अत्यंत प्रवीण था। राजसूययज्ञ के समय, भीम ने इसे जीता था (म. स. २७.१५)। भारतीययुद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. १३.१५)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में भीम ने इसे मारा (म. आ. परि. १. क्र. ४१, पंक्ति २३; क. ६२.२-५)।

३. पांडव पक्षीय एक चैद्य राजा। इसका वध कर्ण ने किया (म. क. ४०.४८-४९)।

४. एक पांचाल। इसका वध कर्ण ने किया (म. क. ४४.२९)।

दंडनायक—रवि के वामभाग में रहनेवाला इन्द्र। इसे ही दंडि नामांतर है। यह दंडनीतिकार होने के कारण, इसे दंड नामक दूसरा नाम प्राप्त हुआ (सांब. १६; पिंगल देखिये)।

दंडपाणि—(सो. कुरु. भविष्य.) मत्स्य तथा भागवत मत में वहीनर पुत्र तथा वायुमत में मेधाविपुत्र (खंडपाणि देखिये)।

२. काशिराज उर्फ पौंड्रक का पुत्र। कृष्ण ने इसके पिता का शिरच्छेद करने पर, इसने पुरोहित के कथनानुसार, महेश्वर नामक यज्ञ किया। शंकर प्रसन्न होने पर, उसके पास इसने कृष्ण के नाश के लिये एक कृत्या माँगी। वह कृत्या जोर से चिल्ला कर द्वारका गई। परंतु कृष्ण के द्वारा सुदर्शन चक्र छोड़ते ही, वह घबरा कर वाराणसी में लौट आई। वहाँ उस चक्र ने उस कृत्या का, इसका तथा सब लोगों का संहार किया एवं इसका नगर जला दिया (पद्म. उ. २७८)।

३. प्रजा देखिये।

दंडभृत्—रामायण कालीन एक वीरपुरुष। राम के अश्वमेध अश्व के रक्षणार्थ, यह शत्रुघ्न के साथ गया था (पद्म. पा. ११)।

दंडश्री—(आंध्र. भविष्य.) वायु तथा ब्रह्मांडमत में विजय का पुत्र (चंड्श्री देखिये)।

दंडिन्—भृगुकुल का गोत्रकार। इसके लिये दर्भि पाठभेद है।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

दंडीमुंडीश्वर—वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर की सातवी चौखट का शिवावतार। वहाँ इसके क्रमशः निम्नलिखित शिष्य हैं:—छगल, कुंडकर्ण, कुंभांड तथा प्रवाहक (शिव. शत. ५)।

दत्त—सांदीपनि का पुत्र। कृष्ण सांदीपनि का शिष्य था। उस ने गुरुदक्षिणा के रूप में, शंखासुर से इस गुरु पुत्र को मुक्त किया। श्वेतसागर से उसे वापस ला कर सांदीपनि को अर्पण किया।

२. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (पद्म. सृ. ७)।

३. पुलस्त्य एवं प्रीति का पुत्र। यह पूर्वजन्म में स्वायंभुव मन्वंतर में अगस्त्य था (मार्क. ४९.२४–२६)।

दत्त आत्रेय—एक देवता। विष्णु के अवतारों में से यह एक था। यह अत्रि ऋषि एवं अनसूया का पुत्र था। अत्रि ऋषि के दत्त, सोम, दुर्वासस् ये तीन पुत्र थे (भा. ४.१.१५–३३)। उनमें से दत्त विष्णु का, सोम ब्रह्माजी का, एवं दुर्वासस् रुद्र याने शंकर के अवतारस्वरूप थे। इसे निमि नामक एक पुत्र था (म. अनु. १३८.५ कुं.)।

आजकल के जमाने में, ब्रह्मा–विष्णु–महेशात्मक त्रिमुखी दत्त की उपासना प्रचलित है। इसे तीन मुख, छः हस्त चित्रित किये जाते हैं। दत्तमूर्ति के पीछे एक गाय, एवं इसके आगे चार कुत्ते दिखाई देते हैं। किंतु पुराणों में त्रिमुखी दत्त का निर्देश उपलब्ध नहीं है। उन ग्रंथों में, त्रिमुख में अभिप्रेत तीन देवताओं को तीन अलग व्यक्ति समझ कर, उन्हे दत्त, सोम, एवं दुर्वासस् ये तीन अत्रिपुत्र के नाम दिये गये है। दत्त के आगे–पीछे गाय एवं कुत्ते रहने का निर्देश भी पुराणों में उपलब्ध नहीं है।

महाराष्ट्र में, त्रिमुख दत्त का प्राचीनतम निर्देश सरस्वती गंगाधर विरचित, 'गुरुचरित्र' ग्रंथ में मिलता है। उस ग्रंथ में इसे परब्रह्मस्वरूप मान कर, इसे तीन सिर, छः हस्त, एवं धेनु तथा श्वान के समवेत वर्णन किया है। औदुंबर वृक्ष के समीप इसका निवासस्थान दिखा दिया है। 'गुरुचरित्र' का काल लगभग इ. स. १५५० माना जाता है। महाकवि माघ के शिशुपालवध काव्य में, दत्त को विष्णु का अवतार कहा है (इ. स. ६५०)। दत्त अवतार का यह प्रथम निर्देश है।

अवतारकार्य—दत्त अवतार का मुख्य गुण क्षमा है। वेदों का यज्ञक्रियासहित पुनरुज्जीवन, चातुर्वर्ण्य की पुनर्घटना, तथा अधर्म का नाश यही इसका अवतारकार्य है (ब्रह्म. २१३.१०६–११०; ह. वं. १.४१)।

इसने संन्यासपद्धति का प्रचार किया (शिव. शत. १९.२६) तथा कार्तवीर्य के द्वारा पृथ्वी म्लेंच्छरहित की (विष्णुधर्म. १.२५.१६)।

आत्मज्ञान एवं शिष्यपरंपरा—दत्त ने अपने पिता अत्रि से पूछा, 'मुझे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति किस प्रकार होगी?' अत्रि ने इसे गोतमी (गोदावरी) नदी पर जा कर, महेश्वर की आराधना करने को कहा। इस प्रकार आराधना करने से, इसे आत्मज्ञान प्राप्त हुआ। गोदावरी तीर के उस स्थान को 'ब्रह्मतीर्थ' कहते है (ब्रह्म. ११७)।

यह ब्रह्मनिष्ठ था। इसे धर्म का दर्शन हुआ था (पद्म. भू. १२.५०)। इसके अलर्क, प्रह्लाद, यदु तथा सहस्रार्जुन नामक शिष्य थे। उन्हें इसने ब्रह्मविद्या दी (भा. १. ३.११)। इसने अलर्क को आत्मज्ञान, योग, योगधर्म, योगचर्या, योगसिद्धि तथा निष्कामबुद्धि के संबंध में उपदेश दिया (मार्क. ३५–४०)।

आयु, परशुराम तथा सांकृति भी दत्त के शिष्य थे।

दत्त-आश्रम—गिरिनार में दत्त का आश्रम (विष्णुपद) था। पश्चिम घाट में मल्लीकीग्राम (माहूर) में दत्त

का आश्रम था। उस स्थान पर परशुराम ने जमदग्नि को अग्नि दी, एवं रेणुका सती गई। इसलिए वहाँ मातृतीर्थ निर्माण हुआ (रेणुका. ३७)।

आयु को पुत्रदान—ऐलपुत्र आयु को पुत्र नहीं था। पुत्र प्राप्ति के लिये वह दत्त के पास आया। दत्त स्त्रियों के साथ क्रीडा कर रहा था। मदिरापान के कारण इसकी आँखे लाल थीं। इसकी जंघा पर एक स्त्री बैठी थी। गले में यज्ञोपवीत नहीं था। गाना तथा नृत्य चालू था। गले में माला थी। शरीर को चंदनादि का लेप लगा हुआ था। आयु ने वंदना करके पुत्र की माँग की। दत्त ने अपनी बेहोष अवस्था उसे बता दी। इसने कहा, 'वर देने की शक्ति मुझमें नही है'। आयु ने कहा, 'आप विष्णु के अवतार है'। अन्त में दत्तात्रेय ने कहा, 'कपाल' (मिट्टी के भिक्षापात्र) में मुझे माँस एवं मदिरा प्रदान करो। उसमेंसे माँस खुद के हाथों से तोड कर मुझे दो'। इस प्रकार उपायन देने पर इसने प्रसन्न हो कर, आयु को प्रसादरूप में एक श्रीफल दिया, एवं वर बोले, '*विष्णु का अंश धारण करनेवाला पुत्र तुम्हें प्राप्त होगा*'। इस वर के अनुसार आयु को नहुष नामक पुत्र हुआ। पश्चात् नहुष ने हुंड नामक असुर का वध किया (मार्क. १६; ३७; पद्म. भू. १०३–१०४)।

सहस्रार्जुन को वरप्रदान—दत्तचरित्र से संबंधित इसी ढंग की और एक कथा महाभारत में दी गयी है। गर्गमुनि के कहने पर कार्तवीर्यार्जुन राजा दत्त आत्रेय के आश्रम में आया। एकनिष्ठ सेवा कर के उसने इसे प्रसन्न किया। तब दत्त ने अपने वर्तन के बारे में कहा, 'मद्यादि से मेरा आचरण निंद्य बन चुका है। स्त्री भी मेरे पास हमेशा रहती है। इन भोगों के कारण मैं निंद्य हूँ। तुम पर अनुग्रह करने के लिये मैं सर्वथा असमर्थ हूँ। किसी अन्य समर्थ पुरुष की तुम आराधना करो'। परंतु अन्त में कार्तवीर्यार्जुन की निष्ठा देख कर, इसने विवश हो कर उसे वर माँगने के लिए कहा। कार्तवीर्य ने इससे चार वर माँगे, जो इस प्रकार थे:—१. सहस्रबाहुत्व, २. सार्वभौमपद, ३. अधर्मनिवृत्ति, ४. युद्धमृत्यु।

दत्त आत्रेय ने वरों के साथ कार्तवीर्य को सुवर्ण विमान (म. व. परि. १.१५.६) तथा ब्रह्मविद्या का उपदेश भी दिया (भा. १.३.११)। कार्तवीर्य ने भी अपनी सर्व संपत्ति दत्त को अर्पण की (म. अनु. १५२–१५३)। कार्तवीर्य की राजधानी नर्मदा नदी के किनारे स्थित माहिष्मती नगरी थी।

दत्तजन्मकाल—दत्तजन्मकाल मार्गशीर्ष सुदी चतुर्दशी को दोपहर में वा रात्रि में माना जाता है। दत्तजयन्ति का समारोह भी उसी वक्त मनाया जाता है। कई स्थानों में, मार्गशीर्ष सुदी पौर्णिमा के दिन सुबह, शाम, या मध्यरात्रि के बारह बजे दत्तजन्म मनाया जाता है।

दत्तप्रणीत ग्रंथ—अवधूतोपनिषद्, जाबालोपनिषद्, अवधूतगीता, त्रिपुरोपास्तिपद्धति, परशुरामकल्पसूत्र (दत्ततंत्रविज्ञानसार), ये ग्रंथ दत्त ने स्वयं लिखे थे।

दत्तमतप्रतिपादक ग्रंथ—अवधूतोपनिषद्, जाबालोपनिषद्, दत्तात्रेयोपनिषद्, भिक्षुकोपनिषद्, शांडिल्योपनिषद्, दत्तात्रेयतंत्र आदि ग्रंथ दत्तसांप्रदाय के प्रमुख ग्रंथ माने जाते हैं।

दत्तसंप्रदाय—तांत्रिक, नाथ, एवं महानुभाव संप्रदायों में दत्त को उपास्य दैवत माना जाता है। श्रीपाद श्रीवल्लभ (पीठापुर, आंध्र), श्रीनरसिंहसरस्वती (महाराष्ट्र), आदि दत्तोपासक स्वयं दत्तावतार थे, ऐसी उनके भक्तों की श्रद्धा है। प. प. वासुदेवानंदसरस्वती (टेंबेस्वामी) आधुनिक सत्पुरुष थे (इ. स. १८५४-१९१४)। वे दत्त के परमभक्त, एवं मराठी तथा संस्कृत भाषाओं में दत्तविषयक विपुल साहित्य के निर्माता थे। पदयात्रा कर के, एवं भारत के सारे विभागों में दत्तमंदिरादि निर्माण कर के, उन्होंने दत्तभक्ति तथा दत्तसंप्रदाय का प्रचार किया।

दत्त तापस—एक ऋषि। सर्पसत्र में इसने होतृ नामक ऋत्विज का काम किया था (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

दत्तामित्र—एक यवननृप (विपुल ३. देखिये)।

दत्तोलि—पुलस्त्य को प्रीति नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्र (अग्नि. २०.१३; मार्क. २२.२३)।

दधिक्रावन्—मरीचिगर्भ नामक देवों में से एक। ऋग्वेद में इस देवता पर एक सूक्त उपलब्ध है। उस सूक्त में 'दधिक्रावन्' शब्द 'अश्व' अर्थ में लिया गया है (ऋ. ४.४०)।

दधिमुख—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

२. रामसेना का एक वानर। यह सोमपुत्र था, तथा स्वभाव से भी सौम्य था (वा. रा. यु. ३०)। अपनी प्रचंड सेना के साथ, यह राम से आ मिला। किंतु रामरावणयुद्ध के समय यह वृद्ध था (म. व. २६७.७)। राम के अश्वमेधीय अश्व की रक्षा करने के लिये, शत्रुघ्न के साथ यह गया था (पद्म. पा. ११)।

दधिवाहन—वाराह कल्प के वैवस्वत मन्वन्तर में से अष्टम चौखट का शिवावतार। यह वसिष्ठ एवं व्यास की

सहायतार्थ प्रपन्न हुआ था। इसे कुल चार पुत्र थे। उनके नामः–कपिल, आसुरि, पंचशिख, तथा शाब्वल। ये सारे पुत्र योगी थे (शिव. शत. ४; योगेश्वर देखिये)।

२. (सो. अनु.) मत्स्य तथा वायु के मत में अंगपुत्र (खनपान देखिये)। यह दिविरथ का पिता था। अंगपुत्र इसीका ही नामांतर था (म. शां. ४९.७२)।

दध्यञ्च् आथर्वण—एक महान् ऋषि एवं तत्त्ववेत्ता। इसे दधीचि, एवं दधीच ये नामांतर थे। देवअसुर युद्ध में, इसने अपनी हड्डियाँ, वज्र नामक अस्त्र बनाने के लिये, देवों को प्रदान की थीं। इस अपूर्व त्याग के कारण, इसका नाम 'त्यागमूर्ति' के नाते प्राचीन भारतीय इतिहास में अमर हुआ।

यह अथर्वकुलोत्पन्न था। कई जगह, इसे अथर्वन् का पुत्र भी कहा गया है। इस कारण, इसे 'आथर्वण' पैतृक नाम प्राप्त हुआ। इसे 'आंगिरस' भी कहा गया है (तां. ब्रा. १२.८.६; गो. ब्रा. १.५.२१)। अथर्वन् एवं अंगिरस् लोग पहले अलग थे, किंतु बाद में वे एक हो गये। इस कारण इसे 'आंगिरस' नाम मिला होगा।

ब्रह्माण्ड के मत में, यह वैवस्वत मन्वंतर में पैदा हुआ था। च्यवन एवं सुकन्या का यह पुत्र था (ब्रह्माण्ड. ३.१. ७४)। किंतु भागवतमत में, यह स्वायंभुव मन्वंतर में पैदा हो कर, इसकी माता का नाम चिति वा शांति था (४.१.४२)।

इसके पत्नी का नाम सुवर्चा था (शिव. शत. २४; स्कन्द. १. १. १८)। कई जगह, इसके पत्नी का नाम गभस्थिनी वडवा दिया गया है। वह लोपामुद्रा की बहन थी। कुलनाम के जरिये, उसे 'प्रातिथेयी' भी कहते थे (ब्रह्म. ११०)।

इसे सारस्वत एवं पिप्पलाद नामक दो पुत्र थे। उसमें से सारस्वत की जन्मकथा महाभारत में दी गयी है (म. श. ५०)। एक बार अलंबुषा नामक अप्सरा को, इंद्र ने दधीचि ऋषि के पास भेज दिया। उसे देखने से दधीचि का रेत सरस्वती नदी में पतित हुआ। उस रेत को सरस्वती नदी ने धारण किया। उसके द्वारा सरस्वती को हुए पुत्र का नाम 'सारस्वत' रखा दिया गया। इसने प्रसन्न हो कर सरस्वती नदी को वर दिया, 'तुम्हारे उदक का तर्पण करने से देव, गंधर्व, पितर आदि संतुष्ट होंगे'।

इसका दूसरा पुत्र पिप्पलाद। यह सुभद्रा नामक दासी से उत्पन्न हुआ। एक बार, इसने पहन कर छोडी हुई धोती, इसकी दासी सुभद्रा ने परिधान की। स्नान के समय वस्त्र से चिपके हुए इसके शुक्रबिंदुओं से, सुभद्रा गर्भवती हुई। इसकी मृत्यु के पश्चात्, उस गर्भ को सुभद्रा ने अपने उदर फाड कर बाहर निकाला, एवं उसे पीपल वृक्ष के नीचे रख दिया। इस कारण, उस गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम 'पिप्पलाद' रख दिया गया। उसे वैसे ही छोड़ कर, सुभद्रा दधीचि ऋषि के साथ स्वर्गलोक चली गयी (ब्रह्म. ११०; स्कन्द. १.१.१७)।

दधीचि ऋषि का मुख अश्व के समान था। इसे अश्वमुख कैसा प्राप्त हुआ, वह कथा इस प्रकार है। इंद्र ने इसको 'प्रवर्ग्यविद्या' एवं 'मधुविद्या' नामक दो विद्याएँ सिखाई थीं। ये विद्याएँ प्रदान करते वक्त इंद्र ने इसे यों कहा था, 'ये विद्याएँ तुम किसी और को सिखाओंगे, तो तुम्हारा मस्तक काट दिया जायेगा'।

पश्चात् अश्वियों को ये विद्याएँ सीखने की इच्छा हुई। ये विद्याएँ प्राप्त करने के लिये, उन्होंनें दधीचि का मस्तक काट कर वहाँ अश्वमुख लगाया। इसी अश्वमुख से उन्होंने दोनों विद्याएँ प्राप्त की। इंद्र ने अपने प्रतिज्ञा के अनुसार इसका मस्तक तोड़ दिया। अश्वियों ने इसका असली मस्तक उस धड पर जोड़ दिया (ऋ. १. ११६. १३)। इन्द्र उस अश्व का सिर ढूँढता रहा। उसे वह 'शर्यणावत्' सरोवर में प्राप्त हुआ (ऋ. १. ८४. १३)।

सायणाचार्य ने शाठ्यायन ब्राह्मण के अनुसार दधीचि की ब्रह्मविद्या की कथा दी है। यह जीवित था तब इसकी ब्रह्मविद्या के कारण, इसे देखते ही असुरों का पराभव होता था। मृत्यु के बाद असुरों की संख्या क्रमशः बढ़ने लगी। इंद्र ने इसे ढूँढा। उसे पता चला कि, यह मृत हुआ। इसके अवशिष्ट अंगों को ढूँढने पर, अश्वियों को मधुविद्या बतानेवाला अश्वमुख, शर्यणावत् सरोवर पर प्राप्त हुआ। इसकी सहायता से इंद्र ने असुरों का पराभव किया (ऋ. १.११६.१३; सायणभाष्य देखिये)। ब्राह्मण ग्रंथ, उपनिषद् ग्रंथ, पुराण आदि में ब्रह्मविद्या के महत्त्व की यह कथा दी गयी है (श. ब्रा. ४.१.५.१८; ६.४.२.३; १४.१.१.१८; २०.२५; बृ. उ. २.५.१६.१७; ६३; भा. ६.९.५१–५५ दे. भा. ७.३६)।

मधुविद्या—इसका तत्त्वज्ञान 'मधुविद्या' नाम से प्रसिद्ध है। इस विद्या का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार हैः–'मधु का अर्थ मूलतत्त्व। संसार का मूलतत्त्व पृथ्वी, पृथ्वी का अग्नि,

इस क्रम से वायु, सूर्य, आकाश, चंद्र, विद्युत्, सत्य, आत्मा तथा ब्रह्म की खोज हर एक तत्त्वज्ञ को करनी पडती है। मूल तत्त्व पता लगाने से, आत्मतत्त्व का संसार से घनिष्ठ तथा नित्य संबंध ज्ञात होता है। संसार तथा आत्मतत्त्व ये एक दूसरों से अभिन्न है। चक्र के जैसे आरा, उसी प्रकार आत्मतत्त्व का संसार से संबंध हैं। संसार का मूल तत्त्व ब्रह्म है। ब्रह्म तथा संसार की प्रत्येक वस्तु परस्परों से अभिन्न है'।

ऋग्वेद की ऋचाओं में इसके द्वारा प्रतिपादित मधुविद्या, बृहदारण्यकोपनिषद' में उन मंत्रों की व्याख्या कर के अधिक स्पष्ट की गयी है।

इस विद्या के महत्त्व के कारण ही, दधीच का नाम एक तत्त्वज्ञ के रूप में वेदों में आया है (तै. सं. ५.१.४.४; श. ब्रा. ४.१.५.१८; ६.४.२.३; १४.१.१.१-८;२६; तां. ब्रा. १२.८.६; गो. ब्रा. १.५.२१; बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८)।

अस्थिप्रदान--वृत्र के कारण देवताएँ त्रस्त हुई। देवताओं ने वृत्रवध का उपाय विष्णु से पूछा। उसने कहा, 'दधीच की हड्डियों से ही वृत्र का वध होगा। उन हड्डियों के त्वष्टा से वज्र बना लो। हड्डियाँ माँगने को अश्वियों को भेजो'। हड्डियों के प्राप्त्यर्थ इस पर हथियार चलाने को त्वष्टा डरता था। किंतु आखिर वह राजी हुआ। उसने इसके शरीर पर नमक का लेप दिया। पश्चात् गाय के द्वारा नमक के साथ ही इसका मांस भी भक्षण करवाया। पश्चात् इसकी हड्डियाँ निकाली गयी। त्वष्टा ने उन हड्डियों से षट्कोनी वज्र तथा अन्य हथियार बनाये।

दधीचि के अस्थिप्रदान के बारे में, पुराणों में निम्नलिखित उल्लेख प्राप्त है। देवासुर संग्राम के समय, देवों ने इसके यहाँ अपने हथियार रखे थे। पर्याप्त समय के पश्चात् भी, उसें वापस न ले जाने से, दधीच ने उन हथियारों का तेज, पानी में घोल कर पी लिया। बाद में देवताएँ आ कर हथियार माँगने लगे। इसने सत्यस्थिति उन्हें कथन की, एवं उन हथियारों के बदले अपनी हड्डियाँ लेने की प्रार्थना देवों से की। देव उसे राजी होने पर, योगबल से इसने देहत्याग किया (म. व. ८८.२१; श. ५०.२९; भा. ६.९.१०; स्कंद. १.१.१७; ७.१.३४; ब्रह्म. ११०; पद्म. उ. १५५; शिव. शत. २४)।

इसका आश्रम सरस्वती के किनारे था (म. व. ९८.१३)। गंगाकिनारे इसका आश्रम था (ब्रह्म. ११०.८)। इसे 'अश्वशिर' नामक विद्या तथा 'नारायण नामक' वर्म विदित था। नारायण वर्म (कवच) का निर्देश भागवत में मिलता है (भा. ६.८)। दधीच-तीर्थ कुरुक्षेत्र में प्रख्यात है (म. व. ८१.१६३)।

मत्स्य तथा वायुमत में यह भार्गव गोत्र का मंत्रकार था। कई ग्रंथों में इसका ऋचीक नामांतर भी प्राप्त है (ब्रह्मांड २.३२.१०४)।

'ब्राह्मण एवं क्षत्रियों में श्रेष्ठ कौन', इस विषय पर क्षुप एवं दधीच ऋषि में बहुत बडा विवाद हुआ था। उस वाद में, प्रारंभतः दधीच का पराभव हुआ। किंतु अंत में यह जीत गया, एवं इसने ब्राह्मणों का श्रेष्ठत्व प्रस्थापित किया (लिंग. १.३६)। इसी विषय पर क्षुवथु के साथ भी इसका विवाद हुआ था। उस चर्चा में अपना विजय हो, इसलिये क्षुवथु ने विष्णु की आराधना की। पश्चात् विष्णु ब्राह्मणरूप में दधीच के पास आया। विष्णु एवं दधीच का युद्ध हुआ। पश्चात् इसने विष्णु को शाप दिया, 'देवकुल के सारे देव रुद्रताप से भस्मसात हो जायेंगे'।

दनायु--प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या तथा कश्यप की भार्या (कश्यप देखिये)।

दनु--प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या तथा कश्यप की भार्या (कश्यप देखिये)। इससे दानव उत्पन्न हुएँ। दानव एक जाति का नाम हैं। केशिन्, नमुचि, नरक, शंबर आदि दानव सुविख्यात थे। इसके पुत्र का नाम वृत्र था (श. ब्रा. १.५.२.९)।

दनुपुत्र--एक ऋषि। ऋग्वेद की कुछ ऋचाओं का यह द्रष्टा हैं (ऋ. ३.६.१-१४, कश्यप देखिये)।

दंतक्रूर--एक क्षत्रिय। इसे परशुराम ने मारा (म. द्रो. परि. १ क्र. ८. पंक्ति. ८३७)।

दंतवक्र--करुष देश का राजा। यह वृद्धशर्मन् तथा श्रुतदेवी का पुत्र था। कलिंगराज चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. शां. ४.६)। द्रौपदी स्वयंवर में, लक्ष्यवेध का असफल प्रयत्न इसने किया था। वहाँ इसका वक्र नाम से निर्देश है (म. आ. १८२४*)। पांडवों के राजसूययज्ञ के समय, दक्षिण दिग्विजय में सहदेव ने इसे जीता था (म. स. २८.३. भा. ९.२४.३७)। भारतीययुद्ध में इसे पांडवों की ओर से रण-निमंत्रण दिया गया था (म. उ. ४.२२)। शिशुपाल, शाल्व, सौभ, विदूरथ के बाद, कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.७८.१३; जयविजय देखिये)।

दंतिल--मतंग ऋषि का पुत्र। इसका भाई कोहल।

दंदशूक--क्रोधवशा से उत्पन्न सर्पों में से प्रमुख।

दभीति—इंद्र का एक कृपापात्र गृहस्थ। इंद्र ने इसके लिये चुमुरि तथा धुनि का वध किया (ऋ. २.१५.९; ६.२६.६; ७.१९.४; १०.११३.९)। इसके लिये इंद्र ने तीस हजार दासों का वध किया (ऋ. ४.३०.२१)। दस्युओं का भी वध किया (ऋ. २.१३.९)। अश्वियों ने तुर्वीति सह इस पर कृपा की (ऋ. १.११२.२३)। यह भी इंद्र की आराधना करता था (ऋ. ६.२०.१३)।

दम—(सू. दिष्ट.) भागवतमतानुसार मरुत्त का पुत्र। विष्णु, वायु एवं मार्कंडेय के मत में नरिष्यन्त का पुत्र। इस की माता का नाम इंद्रसेना बाभ्रवी। माता के उदर में इसका गर्भ नौ वर्षों तक रहा था।

इस ने दैत्यराज वृषपर्वन् से धनुर्वेद, दैत्यश्रेष्ठ दुंदुभि से अस्त्रसमुदाय, शक्ति से साङ्गवेद, तथा राजर्षि आर्ष्टिषेण से योगशास्त्र सीखे थे।

दशार्णाधिपति चारुवर्मन् की कन्या सुमना ने इसका स्वयंवर में वरण किया था।

इसका पिता नरिष्यन्त वानप्रस्थाश्रम में गया था। मुनिअवस्था में तपस्या कर रहे नरिष्यन्त का वपुष्मत् ने वध किया। इसलिये इसने वपुष्मत् का वध किया (मार्क. १३०.१३२; वपुष्मत ३. देखिये)।

२. (सो. क्रोष्टु.) विदर्भ का पुत्र एवं दमयंती का भ्राता।

३. अंगिराकुल का एक ऋषि। सुदमोदम एवं मोदम इसीका ही पाठभेद है।

४. आभूतरजस् देवों में से एक।

५. सुधामन् देवों में से एक।

६. विकुंठ देवों में से एक।

दमघोष—चेदि देश का राजा। इसकी पत्नी श्रुतश्रवा, कृष्ण की बुआ थी। इसका पुत्र शिशुपाल (म. व. १५.३; प्रत्यग्रह देखिये)।

दमन—एक ऋषि। इसके प्रसाद से भीम राजा को दम आदि चार संतान हुई (म. व. ५०.६)।

२. दमयंती का भाई (म. व. ५०.९)।

३. कौरवों के पक्ष का क्षत्रिय। यह पौरव का पुत्र था (म. भी. ५७.२०)।

४. (सो. वसु.) मत्स्य तथा वायुमत में वसुदेव का पौरवी से उत्पन्न पुत्र।

५. एक देव। यह अंगिरा तथा सुरूपा का पुत्र था।

६. एक शिवावतार। यह वराह कल्प के वैवस्वत मन्वंतर की तीसरी चौखट के कलि में पुरांतिक में पैदा हुआ था। इसके चार शिष्य थे। उनके नाम:-विशोक, विशेष, विपाप तथा पापनाशन। उस समय भार्गव नामक पुरुष व्यास था। उसकी सहायता इसने चार शिष्यों द्वारा की। यह निवृत्तिमार्ग का उपदेशक था (शिव. शत. ४)।

७. भारद्वाज का पुत्र। यज्ञोपवीत के बाद यह यात्रा करने निकला। राह में अमरकंटक के समीप इसकी गर्ग मुनि से भेंट हुई। उससे इसने काशीमाहात्म्य सुना एवं वहाँ तपस्या कर, यह मुक्त हुआ (स्कंद. ४.२.७४)।

८. एक राक्षस। इसीने भृगु ऋषि की स्त्री का हरण किया। यह तथा पुलोमन् एक ही व्यक्ति रहे होंगे (पद्म. पा. १४; अग्नि देखिये)।

दमनक—एक दैत्य। यह समुद्र में रहता था। मत्स्यावतार में, भगवान् विष्णु ने चैत्र शुक्ल चतुर्दशी के दिन इसका वध किया। इसका कलेवर धरती पर फेंक दिया। भगवान् के स्पर्श के कारण, यह सुगंधी तृण के रूप में पृथ्वी पर रह गया। यह तृण 'दौना' नाम से आज प्रसिद्ध है (स्कन्द. २.२.३९)।

दमयन्ती—विदर्भदेशाधिपति भीम राजा की कन्या तथा निषधदेश के राजा नल की पत्नी। भीम राजा की कन्या होने से इसका पैतृक नाम भैमी था। एक उपाख्यान के रूप में, नल-दमयंती की कथा महाभारत में दी गई है। विदर्भदेश के राजा भीम को संतति नहीं थी। एक बार अपने घर आये, दमन ऋषि का उसने स्वागत किया। इस ऋषि के आशीर्वाद से भीम राजा को दम, दांत, दमन आदि तीन पुत्र, एवं दमयन्ती नामक कन्या हुई (म. व. ५०.९)।

अपने अद्वितीय सौंदर्य से, इसने सब सुंदर स्त्रियों का गर्व हरण किया था। इसलिये इसे दमयन्ती नाम मिला। एक सुवर्ण हंस द्वारा इसने नल राजा के गुण सुने। उसीके द्वारा इसने अपना प्रेम नलराज को विदित किया। इसके स्वयंवर के समय देश देश के राजा एवं इंद्र, अग्नि, वरुण, आदि देव भी उपस्थित थे। उन सब का त्याग कर इसने निषधाधिपति नल का ही वरण किया। उससे इसे इंद्रसेना तथा इंद्रसेन नामक अपत्य हुएँ। राज्यसौख्य का उपभोग इन दोनों को, अधिक वर्षों तक नहीं मिला। द्यूत में नल अपना सब ऐश्वर्य तथा राज्य गँवा बैठा। नल-दमयन्ती को एक ही वस्त्र से वन में जाना पड़ा।

वन में नल एवं दमयंती पर अनेक संकट आये। इन संकटों से त्रस्त हो कर, दमयंती को सुप्तावस्था में अकेली

छोड़ कर नल चला गया। बाद में अयोध्या के ऋतुपर्ण राजा के यहाँ, बाहुक नाम से वह सारथ्यकर्म करने लगा।

बाद में इसे एक अजगर निगलने लगा। उस समय एक भील ने इसको बचाया। परन्तु उसके मन में दमयंती के लिये, पापवासना जाग्रत हुई। इस कारण, इसने अपने पातिव्रत्य सामर्थ्य से उसे दग्ध किया। तदनन्तर सार्थवाहों के काफिले के साथ, यह चेदिपुर आई, तथा सैरंध्री नाम धारण करने लगी। इसके पिता द्वारा इसकी खोज के लिये भेजे गये एक दूत ने इसे ढूँढ निकाला। पश्चात् यह अपने मायके में जा कर रहने लगी। नल का पता लगाने के हेतु, इसने अपना दूसरा स्वयंवर जाहीर किया। उस स्वयंवर में नल उपस्थित हुआ। नल तथा दमयंती का पुनर्मीलन हुआ। बाद में नल ने पुष्कर से अपना राज्य पुनः जीता। इससे इन दोनों का जीवन सुख से व्यतीत हुआ (म. व. ५४-७८; नल देखिये)।

दमयंती ने अपने दूसरे स्वयंवर का केवल नाटक रचाया था। इस स्वयंवर के लिये बाहुक (नल) एवं ऋतुपर्ण के सिवा और किसी को नहीं बुलाया था। इसके पिता भीम को भी इस स्वयंवर का पता नही था। बाहुक, नल ही है या नही, इसकी जाँच लेने के लिये, स्वयंवर का नाटक इसने रचाया था।

२. शैब्यपुत्र संजय की कन्या। एक बार, नारद तथा पर्वत ऋषि, बरसात शुरु होने कारण चार माहों तक, संजय राजा के घर में रहने के लिये आये। उनकी योग्य व्यवस्था कर, राजा ने दमयंती को उनकी सेवा के लिये नियुक्त किया।

बाद में नारद के प्रति इसके मन में प्रीति उत्पन्न हो गयी। पर्वत की अपेक्षा, नारद के आदरातिथ्य की ओर, यह जादा ध्यान देने लगी। पर्वत को संशय आ कर उसने नारद से पूछा। नारद ने कबूल किया कि, 'वह दमयंती से प्रेम करता है'। यह देख कर पर्वत ने क्रोधित हो कर नारद को शाप दिया, 'तुम वानरमुख बनोगे'। नारद ने भी पर्वत को शाप दिया, 'तुम स्वर्ग में न जा सकोगे'।

शाप के कारण, नारद वानर के समान दिखने लगा। तथापि दमयंती ने उसकी सेवा में कमी न की। संजय दमयंती के लिये वरसंशोधन कर रहा था। अपनी माता के द्वारा दमयंती ने पिता को सूचित किया कि, 'मैं नारद से प्रेम करती हूँ'। वानरमुख एवं भिक्षुक नारद को, अपनी कन्या देना राजा को योग्य न लगा। दमयंती की माता को भी जामात के नाते नारद पसंद नहीं था। तदनुसार उसने इसे समझाने का बहुत प्रयत्न किया। परंतु इसने कहा, 'मूर्ख राजपुत्र से शादी करने के बजाय, गायनविद्या जाननेवाले, गुणग्राही तथा मधुर संभाषण करनेवाले नारद का वरण ही श्रेयस्कर है।

अन्त में दमयंती के कथनानुसार, इसका विवाह संजय ने नारद से कर दिया। कालांतर में पर्वत मुनि ने अपना दिया हुआ शाप वापस लिया, तथा नारद पूर्ववत् दिखने लगा। दमयंती ने भी आनंद से यह वृत्तांत अपने मातापिता को बता दिया (दे. भा. ६. २६-२७; म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. २७४ से आगे; श्रीमती देखिये)।

दमवाह्य—अंगिरस् गोत्र का प्रवर। चमवाह्य इसका पाठभेद है।

दंभ—विप्रचित्ति दानव का पुत्र।

२. (सो. पुरूरवस्.) मत्स्य मतानुसार आयु का पुत्र।

दंभोद्भव—एक राजा। यह अपने ऐश्वर्य से मत्त हो कर, हमेशा ब्राह्मणों से पूछता था, 'मुझे से बढ़ कर श्रेष्ठ इस पृथ्वी पर कौन है'। ब्राह्मणों ने, इसका प्रश्न सुन कर, इसकी मज़ाक उडायी। फिर भी यह आदत से बाज न आया। तब ब्राह्मणों ने श्रेष्ठ नर-नारायण का नाम इसे बताया। यह सेनासहित नर-नारायण के आश्रम में गया। नरनारायण ने इसका पराभव किया, तथा इसका गर्व दूर किया। कृष्णदौत्य के समय परशुराम ने दंभोद्भव की यह कहानी बतायी है (म. उ. ९४; वि. ५१.९१७*; पंक्ति ३१*)। 'कौटिल्य के अर्थशास्त्र' में भी इसकी मदोन्मत्तता तथा नरनारायण के साथ युद्ध का निर्देश है। वहाँ डंभोद्भव पाठ है (कौटिल्य. पृ. २८)।

दंभोलि—दृढास्य का पुत्र। यह अगस्त्यकुलोत्पन्न था। परंतु इसके पिता दृढास्य को पुलह ने अपना पुत्र माना। इसलिये यह पौलह बना (विष्णु. १.१०.९)।

दया—कश्यप प्रजापति की स्त्री, एवं दक्ष प्रजापति की कन्या (स्कंद. १.२.१४)। यह धर्म की पत्नी थी, यों कई स्थानों पर उल्लेख है। इसे अभय नामक पुत्र था (भा. ४.१.५०)।

दरद—दुर्योधन के पक्ष का एक बाल्हिक राजा (म. आ. ६१.५५८*; पंक्ति. ६)।

दरिद्योत---(सो. कुकुर.) भागवत मतानुसार दुंदुभि का पुत्र । विष्णु तथा वायु में, इसे अभिजित् कहा गया है ।

दरीमुख---राम का सेनापति ।

दर्प---(स्वा.) धर्म का उन्नति से उत्पन्न पुत्र ।

दर्पणासि---कारुष राजा का पुत्र । इसने अपनी माता की आज्ञा के अनुसार, अपने पिता राजा कारुष का वध किया (भवि. ब्राह्म.८)।

दर्भक---(शिशु. भविष्य.) भागवत, विष्णु तथा ब्रह्मांड मतानुसार अजातशत्रु का पुत्र । वायु मतानुसार इसे दर्शक तथा मत्स्य मतानुसार वंशक कहा गया है ।

दर्भवाह---अगस्त्यकुलोत्पन्न एक ऋषि ।

दर्भि---एक ऋषि । इसने सातों समुद्रों से कहा था, 'तुम सारे एक तीर्थ उत्पन्न करो'। उन्होंने 'अर्धकील' नामक एक पापनाशक तीर्थ उत्पन्न किया (म. व. ८१. १३३-१३६)।

२. दण्डिन देखिये ।

दर्वा---उशीनर की पत्नी ।

दार्विन्---(सो. उशी.) विष्णुमतानुसार उशीनर का पुत्र ।

दर्श---कृष्ण का कालिंदी से उत्पन्न पुत्र (भा. १०. ६१.१४)।

२. धाता नामक आदित्य एवं सिनीवाली का पुत्र (भा. ६.१८.३)।

दर्शक---(शिशु. भविष्य.) वायुमत में विबिसारपुत्र ।

दर्शनीय---मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र ।

दल---(सू. इ.) राजा परीक्षित् का मंडूककन्या शोभना से उत्पन्न पुत्र (म. व. १९०.४३; शल देखिये)।

विष्णु एवं वायु मतानुसार, यह राजा पारियात्र का पुत्र था । भागवत में बल नाम उपलब्ध है । वंश तथा पुत्रसाम्य के कारण, परीक्षित् तथा पारियात्र ये दोनों व्यक्ति शायद एक ही प्रतीत होते है ।

२. कश्यप तथा दनु का पुत्र ।

दलेषु---बलिक्षु देखिये ।

दवशाद---गौतम नामक शिवावतार का पुत्र ।

दशग्व---एक आंगिरस कुल । नवग्व के साथ अनेक स्थानों पर इसका उल्लेख मिलता है (ऋ. १.६२.४; ३. ३९.५)। इंद्र ने इसका संरक्षण किया, ऐसा एक स्थान पर स्पष्ट उल्लेख है (ऋ. ८.१२.२)। आंगिरस का यह एक कुल रहा होगा ।

दशज्योति---सुभ्राज् का पुत्र (म. आ. १.४२)।

दशद्यु---एक राजा । इसका तुग्र से युद्ध हुआ था । इस युद्ध में इंद्र ने दोनों का ही संरक्षण किया (ऋ. १. ३३.१४; ६.२६.४)।

दशमी---ब्रह्मदेव की मानसकन्या ।

दशरथ---(सू. इ.) सूर्यवंश का एक विख्यात राजा । 'वाल्मीकिरामायण' का नायक एवं भारत की एक प्रातःस्मरणीय विभूति रामचंद्र का यह पिता था । इसीके नाम से राम, 'दाशरथि राम' नाम से प्रसिद्ध हुआ ।

यह अज राजा का पुत्र था । यह अतिरथी, यज्ञयाग करने वाला, धर्मनिष्ठ, मनोनिग्रही तथा जितेन्द्रिय था (वा. रा. बा. ६. २-४)। इसके पूर्वपुरुष अज-दीर्घबाहु-प्रजापाल इस रूप में भी प्राप्त है (पद्म. सृ. ८. १५३)। यह अयोध्या का राजा था (पद्म. पा. ७)। अतिविषयासक्त होने के कारण, इसके वृद्धावस्था के सारे दिन अनर्थकारी साबित हुएँ, एवं पुत्रशोक से इसे मरना पड़ा ।

कौसल्या, सुमित्रा तथा कैकेयी नामक दशरथ की तीन पत्नियाँ प्रसिद्ध हैं । दशरथ को कौसल्या, सुमित्रा, सुरूपा तथा सुवेषा नामक चार पत्नियाँ थीं, ऐसा भी कहा गया है (पद्म. पा. ११६)। किंतु वास्तव में इसे तीन सौ पचास विवाहित स्त्रियाँ थीं । इतनी पत्नियों के पति होनेवाले पुरुष की गृहस्थिती जैसी रहनी चाहिये, वैसी ही इसकी थी । 'वाल्मीकिरामायण' में प्राप्त सीता के उद्गारों से इसकी पुरी जानकारी मिलती है । सीता अनसूया से कहती है, 'राम जिस प्रकार का व्यवहार अपनी माता कौसल्या से करता है, उसी प्रकार का व्यवहार अन्य राजस्त्रियों से भी करता है । किंतु दशरथ हरएक स्त्री के तरफ उपभोग्य दृष्टि से देखता है । ऐसी स्त्रियों से भी राम माता के समान ही व्यवहार रखता है' (वा. रा. अयो. ११८. ५-६)। लक्ष्मण, भरत एवं राम के भाषण में भी इसके लिये आधार प्राप्त है । राम वनवासगमन कर रहा है, ऐसा ज्ञात होते ही, लक्ष्मण ने कौसल्या से कहा, 'विषयभोगों के नियंत्रण में रहनेवाला, तथा जिसकी बुद्धि का विपर्यास हो गया है, ऐसा यह विषयी तथा वृद्ध राजा, कैकेयी की प्रेरणा से क्या नहीं बकेगा' ? (वा. रा. अयो. २१. ३)।

कैकेयी से इसका विवाह इसकी विषयलंपटता पर कलश चढानेवाला है । इस विवाह के वक्त, यद्यपि कैकेयी बिलकुल जवान थी, बुढ़ापे की साया इसके शरीर पर

छाने लगी थी। कैकेयी से उत्पन्न पुत्र को, अयोध्या का सम्राट् बनाने का वचन दे कर, इसने कैकेयी के पिता को कन्यादान के लिये राजी किया था (वा. रा. अयो. १०७. ३)। राम के यौवराज्याभिषेक के समय भी, कैकेयी युवा अवस्था में थी, एवं बुढा दशरथ उसकी मुट्ठी में था।

अपने बुढे पिता ने अपने माँ को विवाह के समय दिये वचन के कारण, राम युवराज नहीं बनेगा, यह कैकेयीपुत्र भरत को अच्छा नही लगा। इस कारण, वह अपने ननिहाल चला गया। यह अवसर देख कर, उसके ननिहाल में से किसी को न बताते हुएँ, दशरथ ने राम को यौवराज्याभिषेक करने की तैय्यारी की। किंतु एक संकट टालने के लिये इसने कोशिस की, तो उधर कैकेयी ने दूसरा ही संकट खड़ा किया। परंतु उससे सूर्यवंश का यश मलिन न हो कर, अधिक उज्वल ही हुआ।

इसे शांता नामक एक कन्या थी। उसे इसने अंगदेश का राजा, एवं इसका परममित्र रोमपाद को दत्तक दिया था। ऋश्यशृंग ऋषि को शांता विवाह में दे कर, उस ऋषि के सहाय से, इन दोनों मित्रों ने पुत्रकामेष्टियज्ञ का समारोह किया (भा. ९. २३. ८)।

पुत्रकामेष्टियज्ञ की प्रेरणा इसे कैसी मिली, इसकी कथा पद्मपुराण में दी गयी है। इसने सौ अक्षौहिणी सेना के साथ, सुमानसनगरी पर आक्रमण किया, वहाँ के राजा साध्य से एक माह युद्ध कर के उसे बंदी बनाया। तब उसका अल्पवयी पुत्र भूषण इसके साथ युद्ध करने आया। परंतु उसका भी इसने पराभव किया। युद्धसमाप्ति के बाद, एक माह तक, यह साध्य तथा भूषण के साथ रहा। उन दोनों का परस्परप्रेम देख कर इसके मत में विचार आया, 'मुझे भी भूषण के समान गुणवान् पुत्र हो'। इसने साध्य राजा को पुत्रप्राप्ति का उपाय पूछा। साध्य ने इसे 'विष्णु को संतुष्ट करने को कहा।

बाद में सुमानसनगर साध्य राजा को देकर, यह अयोध्या लौट आया। अनेक व्रत करने के बाद इसने पुत्रकामेष्टियज्ञ किया। तब विष्णु ने प्रकट हो कर इसे वर माँगने के लिये कहा। तब इसने दीर्घायुषी, धार्मिक तथा लोगों पर उपकार करनेवाले चार पुत्र माँगे। विष्णु ने कौसल्या, सुमित्रा, सुरूपा, तथा सुवेषा को चार पुत्र होंगे, यों आशीर्वाद दिया। दशरथ ने विष्णु से अपना पुत्र होने के लिये कहा। विष्णु ने वह मान्य कर के 'चरु' (यज्ञ की आहुति के लिये पके चावल) में प्रवेश किया। दशरथ ने उस चरु के चार भाग कर के अपनी चार स्त्रियों को दिये। बाद में कौसल्या, सुमित्रा, सुरुपा तथा सुवेषा को क्रमशः राम, लक्ष्मण, भरत, तथा शत्रुघ्न नामक पुत्र हुएँ। ब्रह्मदेव ने उनके जातकर्मादि संस्कार किये। (पद्म. पा. ११६)।

पूर्वजन्म में यह धर्मदत्त नामक विष्णुभक्त ब्राह्मण था। इसने राक्षसयोनि प्राप्त हुएँ कलहा नामक स्त्री को अपना कार्तिकव्रत का आधा पुण्य दिया, एवं उसका उद्धार किया। इस जन्म में कलहा कैकेयी नाम से इसकी पत्नी बनी (पद्म. उ. १०६-१०७)।

ग्रहराज शनि के द्वारा, 'रोहिणीशकट' नक्षत्रमंडल का भेद होने का संकट, एक बार, पृथ्वी पर आया। यह ग्रहयोग ज्योतिषशास्त्र की दृष्टि से बड़ा ही खतरनाक समझा जाता है। उससे बारह वर्षों तक पृथ्वी में अकाल पड़ता है। उसे टालने के लिये, यह स्वयं नक्षत्रमंडळ में गया। धनुष्य सज्ज कर, इसने भयंकर संहारास्त्र की योजना की। यह देख कर, शनि इससे प्रसन्न हुआ, एवं उसने इष्ट वर माँगने के लिये इसे कहा। तब इसने कहा, 'जब तक पृथ्वी है, आकाश में चन्द्रसूर्य हैं, तब तक तुम रोहिणीशकट का भेद मत करो'। यह वर प्राप्त करते ही, दशरथ अपने नगर में वापस आया (पद्म. उ. ३३)।

अंत में श्रावण के शाप के अनुसार, पुत्रशोक से इसकी मृत्यु हुआी (श्रावण देखिये)। दशरथ की मृत्यु के बाद, भरत आने तक इसका शव अच्छा रहे, इस हेतु से, उसे तेल में रखा गया था (आ. रा. सार. ६)।

२. (सू. इ.) सूर्यवंश का राजा। यह मूलक का पुत्र था। रामपिता दशरथ के पूर्वकाल में यह अयोध्या का राजा था।

३. (सो. क्रोष्टु.) भविष्य, भागवत, विष्णु, वायु तथा पद्म के मतानुसार नवरथ का पुत्र (पद्म. सृ. १३)। मत्स्य के मतानुसार इसे दृढरथ नाम है।

४. (मौर्य. भविष्य.) विष्णु के मतानुसार सुयशस् का पुत्र। मत्स्य के मतानुसार यह शक का नाती था। अन्य पुराणों में इसका उल्लेख नहीं है।

५. रोमपाद १. देखिये।

दशवज—एक राजा। अश्विनों ने इसका संरक्षण किया था (ऋ. ८.८.२०)। इंद्र ने भी इसपर कृपा की थी (ऋ. ८.४९.१०; ५०.९)।

दशशिप्र—एक ऋत्विज। इसके घर सोम पी कर इंद्र प्रसन्न हुआ था (ऋ. ८.५२.२.)।

दशारि—(सो. क्रोष्टु.) भविष्यमत में निरावृत्ति का पुत्र। अन्यत्र इसे दशार्ह कहा गया है।

दशार्णा—गांधारराज सुबल की कन्या, तथा धृतराष्ट्र की पत्नी।

दशार्ह—(सो. क्रोष्टु.) भागवत, विष्णु तथा वायु मत में निर्वृति का पुत्र। मत्स्यमत में यह निर्वृति का पौत्र एवं विदूरथ का पुत्र था।

दशावर—वरुणलोक का एक असुर।

दशाश्व—(सू. इ.) इक्ष्वाकु के शतपुत्रों में से एक (म. अनु २.६ कुं.)। यह महिष्मती नगरी का राजा था। इसे मदिराश्व नामक पुत्र था।

दशोणि—ऋग्वेदकालीन एक राजा। पणियों से इसका युद्ध चल रहा था, तब इंद्र ने इसकी सहायता कर, पणियों को भगाया (ऋ. ६.२०.४)। द्योतमान से हुएँ युद्ध में, दशोणि पर इंद्र ने कृपा की (ऋ. ६.२०.८)। अन्य स्थानों पर आये 'दशोणि' शब्द का अर्थ 'दस ऊंगलियाँ' है। वह व्यक्तिवाचक शब्द नहीं है (ऋ. १०.९६.१२)।

दशोण्य—एक ऋत्विज। इस पर इंद्र की निरतिशय कृपा थी (ऋ. ८.५२.२)। दशशिप्र के साथ इसका निर्देश प्राप्त है।

दस्यवे वृक—एक राजा। इसके औदार्य का वर्णन प्राप्त है (ऋ.८.५५.१; ५६.२)। यह दस्युओं का विजेता, एवं स्तावकों का उदार प्रतिपालक था। वालखिल्यों में, कृश तथा पृषध्र के सूक्त में, इसका वर्णन आया है। इससे प्रतीत होता है कि, वे इसके आश्रयदाता थे। इसका ऋषि के रूप में भी निर्देश प्राप्त उल्लेख है (ऋ. ८.५१.२)। ऋग्वेद के छप्पनवें सूक्त से तर्क चलता है कि, इसका पिता पूतक्रतु तथा माता पूतक्रता थी (ऋ. ८.५६.४)।

दस्र—अश्विनीकुमारों में से एक। सहदेव इसीके अंश से उत्पन्न हुआ था (भा. ९.२२)।

दहन—एकादश रुद्रों में से एक।

दाकव्य एवं **दाकायन**—वसिष्ठकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

दाक्षपाय—कश्यपकुल का गोत्रकार।

दाक्षायण—एक राजवंश। 'दक्ष' राजा के वंशज संभवतः इस नाम से प्रसिद्ध हुएँ थे। इस वंश के राजा संस्कारविशेष के कारण, 'शतपथ ब्राह्मण' के समय तक, समृद्ध जीवन व्यतित कर रहे थे (श. ब्रा. २.४.४.६; दक्ष देखिये)।

अथर्ववेद एवं यजुर्वेद संहिताओं में, शतानीक सात्रजित ऋषि को दाक्षायणों ने स्वर्ण प्रदान करने का निर्देश प्राप्त है (अ. वे. १.३५.१-२; वा. सं. ३४.५१-५२; खिल. ४.७.७.८)। कई जगह, 'दाक्षायण' व्यक्तिवाचक न हो कर, 'स्वर्ण' अर्थ से भी प्रयुक्त किया है (ऐ. ब्रा. ३.४०)। महाभाष्य में, पाणिनि को दाक्षायण कहा गया है।

दाक्षायणी—सती का नामांतर।

दाक्षि—अंगिरस् कुल का गोत्रकार।

२. अत्रिकुल का गोत्रकार।

दाक्षीपुत्र—पाणिनि देखिये।

दांडिक्य—एक भोजवंशीय नृप। एक ब्राह्मणकन्या का इसने अपहरण किया। उससे इसका नाश हुआ। दंड राजा एवं यह दोनो एक ही होंगे (कौटिल्य पृ. २८)।

दातृ—सुख देवों में एक।

दात्रेय—अराल शौनक का पैतृक नाम (इन्डि. स्टडि. ४.३७३)। 'दार्तेय' (दृति का वंशज) इसीका ही पाठभेद रहा होगा।

दाधीच—च्यवन का पैतृक नाम। 'दाधीच' का शब्दशः अर्थ 'दध्यञ्च् का वंशज,' ऐसा होता है (पं. ब्रा. १४.६; च्यवन देखिये)।

दान—पारावत देवों में से एक।

२. सुख देवों में से एक।

दानकाय—वसिष्ठगोत्र का ऋषिगण।

दानपति—अक्रूर का नामांतर (भा. १०.४९)।

दानव—एक मानव जाति। कश्यप तथा दनु की संतति 'दानव' कहलाती थी।

देव एवं असुरों के संग्राम में, देवों के विरुद्ध पक्ष में दानव, असुर, राक्षस, पिशाच, आदि शामिल थे।

दानवों में निम्नलिखित लोग प्रमुख माने जाते थेः—केशिन्, तारक, नमुचि, नरक, बाण, विप्रचित्ति, वृषपर्वन्, शंबर, हिरण्यकशिपु।

दानवों का निवासस्थान प्रायः हिमालय के पश्चिम भाग का पर्वतप्रदेश रहा होगा।

२. कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार (कश्यप तथा दनु देखिये)।

दानिन्—सुख देवों में से एक।

दान्त—राजा भीमक का पुत्र तथा दमयंती का भ्राता (म. व. ५०.९)।

२. विकुंठ देवों में से एक।

३. सुधामन् देवों में से एक।

४. एक ऋषि। इसने भद्रतनु नामक ब्राह्मण को काम, क्रोध, लोभ आदि के लक्षण बताये, एवं उनका त्याग करने को उसे कहा (पद्म. क्रि. १७)।

दान्ता—एक अप्सरा (म. अनु. ५०.४८ कुं.)।

दाम—सुख देवों में से एक।

दामग्रन्थिन्—अज्ञातवास में विराटगृह में रहनेवाले नकुल का नाम (म. वि. ३.२)। भांडारकरपाठ-ग्रंथिक।

दामघोषि—शिशुपाल का पैतृक नाम।

दामचंद्र—पांडवपक्षीय एक राजा (म. द्रो. १३३. ३७)।

दामोष्णीष—एक ऋषि (म. स. ४.११)।

दारुक—कृष्ण का सारथि (म. व. २३.२७; भा. १०.५०; पद्म. उ. २५२)। रथ सज्ज करने के बारे में, कृष्ण से इसका संभाषण हुआ था। भारतीययुद्ध में, यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. ५६.१७-४१; मौ. ५.३)।

२. एक शिवावतार। यह बाराहकल्प के वैवस्वत मन्वंतर के इक्कीसवीं चौखट में संपन्न हुआ। इस कारण, उस स्थान का नाम दारुवन हुआ। प्लक्ष, दार्भायणि, केतुमत् तथा गौतम इसके पुत्र थे (शिव. शत. ५)।

३. एक दैत्य।

दारुकि—दारुक का पुत्र तथा प्रद्युम्न का सारथि (म. व. १९.३)।

दारुण—कश्यप एवं अरिष्टा का पुत्र।

२. गरुड का पुत्र (म. उ. ९९.९)।

दार्ढजयन्ति—वैपश्चित गुप्त लौहित्य तथा वैपश्चित् दृढजयन्त लौहित्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

दार्तेय—एक यज्ञवेत्ता। यज्ञ के संबंध में यथार्थ मत देनेवाला, ऐसा इसका उल्लेख मिलता है (क. सं. ३१. २)। दृति एवं वातवत् ऋषियों का यह पैतृक नाम है। उन्होंने खांडववन में सत्र किये थे। वह सत्र वातवत् ने अधूरा छोडा, परंतु दृति ने पूरा किया। इसलिये दार्तेयों का उत्कर्ष हुआ (पं. ब्रा. २५.३.६; अराल देखिये)।

दार्भायणि—दारुक नामक शिवावतार का शिष्य।

दार्भ्य—रथवीति का पैतृक नाम (बृहद्दे. ५.४९. ७१)। ऋग्वेद की ऋचा में इसका उल्लेख है (ऋ. ५. ६१.१७)। यह पैतृक नाम अन्यत्र भी कई बार आया है (तै. सं. २.६.२.३; मै. सं. १.४.१२; ६.५; श. ब्रा. ७.४)। यह नाम केशिन् तथा रथप्रोत के लिये भी प्रयुक्त है (मै. सं. २.१.३; दाल्भ्य देखिये)।

दालकि—एक ऋषि। वायुमत में यह व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा के शाकपूर्ण रथीतर का शिष्य था।

दालिभ—बक का पैतृक नाम (का. सं. १०.६)।

दाल्भ्य—एक राजा 'दाल्भ्य' का शब्दशः अर्थ 'दल्भ का वंशज' है। यह दार्भ्य का पर्यायवाची शब्द रहा होगा। यह केशिन् (पं. ब्रा. १३.१७.८), चैकितान (छां. उ. १.८.१; जै. उ. ब्रा. २.३८.१) तथा बक (छां. उ. १.२.१३; १२.१.३; का. सं. ३०.२; म. व. २७५; २८२.१७) का पैतृक नाम है। दार्भ्य एवं दाल्भ्य में गड़बड़ी जान पड़ती है (दार्भ्य देखिये)। एक वैयाकरण के नाते भी इसका उल्लेख प्राप्त है (शु. प्रा. ४.१६)।

२. द्युमत्सेन का मित्र।

३. उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (पद्म. सृ. ७)।

दावसु अंगिरस—एक सामद्रष्टा (पं. ब्रा. २५.५. १२.१४)।

दाशर्म—आरुणि का समकालीन एक आचार्य (क. सं. ७.६)।

दाशार्ह—मथुरा का राजा व्योमन् का पैतृक नाम। शिवमंत्र से यह पापमुक्त हुआ (स्कंद. ३.३.१)।

२. विदूरथ का मातृक नाम।

दाशूर—तपस्वी शरलोम का पुत्र। यह मगध देश के एक पर्वत पर रहता था। शरलोम की मृत्यु होने के कारण, यह शोकमग्न हुआ। तब इसके सामने अग्नि प्रकट हुआ। उसने वृक्षाग्र पर बैठ कर स्थिर रहने का वर, इसे प्रदान किया। इस प्रकार कदंब वृक्ष के अग्र पर यह बैठ गया। उससमय सारी दिशाएँ इसे स्त्रियों के समान दिखने लगी। फिर भी मानसिक यज्ञ से इसे आत्मबोध हुआ।

पश्चात् कदंब दाशूर ऋषि नाम से यह प्रसिद्ध हुआ इसे वनदेवता से एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। उसे इसने ज्ञानोपदेश दिया (यो. वा. ४.४. ८-५१)।

दासवेश—वेश देखिये।

दिक्पति—सत्य देवों में से एक।

दिंडि—सूर्य के सामने रथ में बैठनेवाला एक सेवक। यह सूर्य का प्रधान, एवं एकादश रुद्रों में से एक था

(भवि. ब्राह्म. ७६.१९)। ब्रह्माजी का शिरच्छेद इसके हाथ से हुआ था। सूर्य के सन्निध रहने से, उस पातक से यह मुक्त हुआ (सांब. १६)। इसे दिंडिन् भी कहा है।

यह महातपस्वी गणाधिपति था। पहले की गयी ब्रह्महत्या के निरसनार्थ, इसने सूर्याराधना की। सूर्य की कृपा से, यह ब्रह्महत्या से मुक्त हुआ। पश्चात् सूर्य से इसने क्रियायोग श्रवण किया (भवि. ब्राह्म. ६३)।

यह शंकर का अवतार था (भवि. ब्राह्म. ९१)। यह सूर्य के पूर्व में स्थित है। निरंतर भ्रमणशील होने के कारण, इसके लिये रुद्र नाम प्रयुक्त है (भवि. ब्राह्म. १२४)।

दिति—प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या, एवं कश्यप की भार्या (कश्यप देखिये)। ऋग्वेद में इसका तीन स्थानों पर उल्लेख है। उनमें से दो स्थानों पर, अदिति के साथ इसका उल्लेख आया है (ऋ. ५. ६२. ८; ४. २. ११)। तीसरे स्थान, इसका उल्लेख अदिति के साथ न हो कर, अग्नि, सवितृ एवं भग के साथ आया है (ऋ. ७. १५. १२)। कई वैदिक ग्रंथों में इसे 'देवी' कहा गया है (वा. सं. १८. २२; अ. वे. १५. १८. ४; १६. ६. ७)। अर्थववेद में इसके पुत्रों का निर्देश आया है वे दैत्य एवं देवों के शत्रु मालूम होते हैं (भा. ७.७.१)। इससे पता चलता है कि, दिति एवं अदिति एक पक्ष में न हो कर, विरोधी पक्ष में थी।

दिलीप (प्रथम)—(सू. इ.) अयोध्या के अंशुमत् राजा का पुत्र। अपने 'भगीरथ' प्रयत्नों से, गंगा नदी पृथ्वी पर लानेवाले परमप्रतापी भगीरथ राजा का यह पिता था (भा. ९.९; मत्स्य. १२.४४; पद्म. सृ. १०; उ. २१; ब्रह्म. ८.७५; लिंग. २.५.६; म. व. १०६.३७–४०)। रामायण में, भगीरथ का पिता दिलीप (प्रथम), एवं रघु का पितामह दिलीप खट्वांग, ये दोनों एक ही माने गये है (वा. रा. बा. ४२)। किंतु वे दोनों अलग थे।

अपने पितामह सगर का उद्धार करने के लिये इसने गंगा पृथ्वी पर लाने को चाहा। उसके लिये इसने तीस हजार वर्षों तक तपस्या की। किंतु गंगा लाने से पहले ही इसकी मृत्यु हो गयीं।

दिलीप खट्वांग—(सू. इ.) अयोध्या के सुविख्यात रघु राजा का पितामह। महाभारत में, खट्वांग नाम से इसका निर्देश प्राप्त है। रामायण में, भगीरथ का पिता दिलीप (प्रथम), एवं यह, ये दोनों एक ही माने गये है। किंतु वे दोनों अलग थे।

भागवत एवं विष्णुमत में विश्वसह का, ब्रह्मांड एवं वायुमत में विश्वमहत् का, तथा मत्स्यमत में यह रघु का पुत्र था। कई ग्रंथों में, इसे दुलिदुह का पुत्र भी कहा गया है (ब्रह्म. ८.८४; ह. वं. १.१५)। मत्स्य, पद्म, एवं अग्नि पुराणों में दी गयीं इसकी वंशावलि में एकवाक्यता नहीं है।

पितृ की कन्या यशोदा इसकी माता थी। इसकी पत्नी का नाम सुदक्षिणा था। इसका पुरोहित शांडिल्य था। दिलीप खट्वांग के प्रशंसा पर एक पुरातन श्लोक भी उपलब्ध है (ब्रह्मांड. ३.१०.९०–९२; ह. वं. १.१८; वायु. ७३.८४)।

काफी दिनों तक दिलीप राजा को पुत्र नहीं हुआ। पुत्रप्राप्ति के हेतु से, यह वसिष्ठ के आश्रम में गया। राजा के द्वारा विनंति की जाने पर, वसिष्ठ ने इसे पुत्र न होने का कारण बताया। वसिष्ठ बोले, "एक बार तुम इन्द्र के पास गये थे। उसी समय तुम्हारी पत्नी ऋतुस्नात होने का वृत्त तुम्हें ज्ञात हुआ। तुम तुरंत घर लौटे। मार्ग में कल्पवृक्ष के नीचे कामधेनु खडी थी। उसे नमस्कार किये बिना ही तुम निकल आये। उस लापरवाही के कारण उसने तुम्हें शाप दिया, 'मेरे संतति की सेवा किये बिना तुम्हें संतति नहीं होगी'। उस शाप से छुटकारा पाने के लिये मेरे आश्रम में स्थित कामधेनुकन्या नंदिनी की तुम सेवा करो। तुम्हें पुत्र होगा।" इसी समय वहाँ नंदिनी आई। उसे दिखा कर वसिष्ठ ने कहा, 'तुम्हारी कार्यसिद्धि शीघ्र ही होगी'।

इसने धेनु को चराने के लिये, अरण्य में ले जाने का क्रम शुरू किया। एक दिन मायावी सिंह निर्माण कर, नंदिनी ने इसकी परीक्षा ली। उस समय स्वदेहार्पण कर, धेनुरक्षण करने की सिद्धता इसने दिखायी। तब धेनु प्रसन्न हो कर, इसे रघु नामक विख्यात पुत्र हुआ (पद्म. उ. २०२–२०३)। यह कथा कालिदास के रघुवंश में पूर्णतः दी गयी है।

यह पृथ्वी पर का कुबेर था। इसने सैकडों यज्ञ किये थे। प्रत्येक यज्ञ में लाखों ब्राह्मण रहते थे। इसने सब पृथ्वी ब्राह्मणों को दान दी थी। इसीके यज्ञों के कारण, यज्ञ-प्रक्रिया निश्चित हुई। इसके यज्ञ में सोने का यूप था। इसका रथ पानी में डूबता नहीं था। दिलीप के घर पर 'वेदघोष,' 'धनुष की रस्सी की टँकार', 'खाओ', 'पियो', एवं 'उपभोग लो', इन पांच शब्दों का उपयोग निरंतर होता था (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. ५१०

से आगे; शां. २९.६४-७२)। सम्राट तथा चक्रवर्ति के नाते इसका निर्देश किया जाता था।

३. (सो. कुरु.) एक पौरव राजा। भागवत मत में ऋक्ष्य का, एवं विष्णु, मत्स्य तथा वायु के मत में भीमसेन का पुत्र।

दिलीवय--भविष्य मत में मनुवंशी दशरथ का पुत्र।

दिवंजय—उदारधी एवं भद्रा का पुत्र।

दिवस्पति—रौच्य मन्वंतर में होने वाला इंद्र।

दिवस्पर्श--तुषित देवों में से एक।

दिवाकर—गरुड का पुत्र (म. उ. ९९.१४)।

२. (सू. इ. भविष्य.) भागवतमत में भानु राजा का पुत्र। इसका पुत्र सहदेव। वायुमत में यह प्रतिव्यूह का पुत्र, एवं मत्स्य तथा विष्णुमत में प्रतिव्योम का पुत्र था। इसके शासनकाल में 'मत्स्यपुराण' का निर्माण हुआ (मत्स्य. २७१)। पौरव राजा अधिसोमकृष्ण तथा मगध देश का राजा सेनजित् इसके समकालीन थे।

३. (सो.) भविष्य मत में आतिथ्यवर्धन का पुत्र।

दिवावष्ट—कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण। दिवावस एवं दिवावसिष्ठ ये इसीके पाठभेद है।

दिवावष्टाश्व--कश्यपकुल का गोत्रकार।

दिवावस--दिवावष्ट देखिये।

दिवावसिष्ठ—दिवावष्ट देखिये।

दिवि—सत्य देवों में से एक।

दिविरथ—(सो. अनु.) भागवतमत में खनपान का पुत्र, एवं रथ राजा का पिता। विष्णुमत में यह पार का एवं वायु तथा मत्स्य मत में दधिवाहन का पुत्र था। इसका पुत्र धर्मरथ। महाभारत में इसे दधिवाहन का पुत्र कह कर, इसका पुत्र अंग बताया है (म. शां. ४९.२०२)।

दिवीलक—(आंध्र. भविष्य.) विष्णुमत में लंबोदर का पुत्र। इसका नाम अपीतक एवं चिवीलक भी प्राप्त है।

दिवोदास--(सो. काश्य.) भागवत तथा विष्णुमत में भीमरथपुत्र तथा विष्णुमत में अभिरथपुत्र। ब्रह्म तथा वायु मत में यह भीमरथ का ही दूसरा नाम है। महाभारत में इसे काशीपति सौदेव कहा गया है। इसका पितामह हर्यश्व हो कर, पिता सुदेव अथवा भीमरथ था। इसका पराजय हैहय वीतहव्य ने किया। तब यह भरद्वाज ऋषि की शरण में गया।

इसके द्वारा पुत्रकामेष्टियज्ञ करने पर, इसे प्रतर्दन वा अप्रतिरथ नामक शत्रुनाशक पुत्र हुआ। उसने हैहय वीतहव्यों का पराभव किया तथा वीतहव्य को भृगु के आश्रम में छिपने के लिये मजबूर कर दिया (म. अनु. ८ कुं.)। प्रतर्दन के साथ भारद्वाज ऋषि का स्नेहसंबंध था (क. सं. २१.१०)।

इसकी पत्नी का नाम दृषद्वती। इसे दृषद्वती से ही प्रतर्दन हुआ था (ब्रह्म. ११.४०.४८)। प्रतर्दन, अप्रतिरथ, शत्रुजित्, ऋतध्वज, तथा कुवलाश्व ये सारे एक ही है (भा. ९.१७. ६)।

इसे ययातिकन्या माधवी से प्रतर्दन हुआ, यह कथा महाभारत में दी गयी है (म. उ. ११५.१.१५)। किंतु कालदृष्टि से वह विसंगत अतएव असंभव मालूम पडती है। यह यमसभा का एक सदस्य था (म. स. ८.११)। 'भास्करसंहिता' के 'चिकित्सादर्पणतंत्र' का यह कर्ता है (ब्रह्मवै. २.१६)। धन्वन्तरि के आगे दिवोदास शब्द जोड़ा जाता है। वह शब्द वंशदर्शक होगा।

२. (सो. काश्य.) काशी देश का राजा। यह सुदेव का पुत्र तथा अष्टारथ का पिता था। परंतु ब्रह्म तथा महाभारत के सिवा अन्य स्थान की वंशावलि में, इतनी जानकारी भी नहीं मिलती।

हैहयवंशों से तुलना करने पर काश्यवंश में दो दिवोदासों को मान्यता देना अनिवार्य प्रतीत होता है। इसने भद्रश्रेण्य से काशी जीत ली, एवं वहाँ अपना राज्य स्थापित किया। किंतु निकुंभ के शाप से, इसे काशी छोड़ कर, गोमती तीर पर दूसरी राजधानी स्थापित करनी पड़ी। अतः हैहय तथा काश्य घरानों के झगड़ा कुछ काल के लिये स्थगित हुआ। किंतु भद्रश्रेण्य का पुत्र दुर्मद बड़ा होने पर, उसने दिवोदास का पराभव किया (म. अनु. ३०; ब्रह्म. ११.४८; १३.५४; ह. वं. १.२९; ब्रह्मांड. ३.६७; वायु. ९२.२६)। इसकी पत्नी का नाम सुयशा था। उससे इसे अष्टारथ नामक पुत्र हुआ था (ब्रह्म. १३.३१)।

दिवोदास अतिथिग्व—(सो. नील.) वैदिक युग का एक प्रमुख राजा। यह वध्र्यश्व का पुत्र, एवं भरतवंशान्तर्गत तृत्सु लोगों का सुविख्यात राजा सुदास का पिता (वा पितामह) था। 'अतिथिग्व' का शब्दशः अर्थ है, 'अतिथि का सम्मान करनेवाला'। यह उपाधि दिवोदास एवं सुदास को लगायी जाती थी (ऋ. १.५१.६; ७.१९.८)। 'अतिथिग्व' की उपपत्ति सायणाचार्य ने 'अतिथिगु का पुत्र' ऐसी दी है (ऋ. १०.४८.८)।

सरस्वती की कृपा से वध्र्यश्व को दिवोदास पुत्ररूप में प्राप्त हुआ (ऋ. ६.३१.१)। यह भरतों में से एक

था (ऋ. ६.१६.४; ५.१९), एवं तुर्वशों तथा यदुओं का विरोधी था (ऋ. ७.१९.८; ९.६१.२)। संभवतः इसके पुत्र का नाम 'पिजवन' हो कर, सुदास इसका पौत्र था। वध्न्यश्व, दिवोदास, पिजवन, तथा सुदास इस प्रकार इसका वंशक्रम होगा।

इसका महान् शत्रु शंबर एक दास एवं किसी पर्वतीय जाति का प्रधान था (ऋ. १.१३०.७; २.१२.११; ६.२६.५; ७.१८.२०)। इसने शंबर का कई बार पराभव किया (ऋ. १.५१.६; शंबर देखिये)।

अपने पिता वध्न्याश्व के समान, यह भी अग्नि का उपासक था (ऋ. ६.१६.५; १९)। इस लिये अग्नि को दैवोदास अग्नि नाम पड़ा (ऋ. ८.१०.२)। परुच्छेप के सूक्त में इसका संबंध दिखता है (ऋ. १.१३०.१०)। भरद्वाज के छठवें मंडल में इसके काफी महत्त्वपूर्ण उल्लेख हैं। इसका पुरोहित भरद्वाज था। आयु एवं कुत्स के साथ, यह इंद्र के हाथों से पराजित हुआ था। किंतु अदारसृत नामक साम के प्रभाव से, यह पुनः वैभवसंपन्न हुआ (पं. ब्रा. १५.३.७) भरद्वाज के साथ इसका संबंध पुराणादि में भी बार बार आया है। यह तथा दिवोदास नील वंशज एक ही होंगे।

ब्रध्न्यश्व को मेनका से एक कन्या तथा एक पुत्र हुएँ। उनमें से पुत्र का नाम दिवोदास, एवं कन्या का नाम अहल्या था। अहल्या शरद्वत गौतम को दी गयी थी (ह. वं. १.३२)। भागवतमत में यह मुद्गल का, विष्णुमत में वध्न्यश्व का, वायुमत में ब्रध्न्यश्व का, तथा मत्स्यमत में विंध्याश्व का पुत्र था। पुराणों में इसका पुत्र मित्रयु दिया गया है। परंतु वेदों में (ऋ. ८.६८.१७) इसका पुत्र इंद्रोत दिया है। ऋक्ष अश्वमेध, पूतक्रतु, प्रस्तोक तथा सौभरि ये लोग इसके समकालीन थे।

५. भृगुकुल का एक ऋषि, प्रवर तथा मंत्रकार (भृगु देखिये)। यह प्रथम क्षत्रिय था। बाद में ब्राह्मण बना (मत्स्य. १९५.४२; परुच्छेप दैवोदासि देखिये)।

५. दिव्यादेवी देखिये।

दिवोदास भैमसेनी—अरुणि का समकालीन (क. सं. ७. १. ८)।

दिव्य—(सो. क्रोष्टु.) वायुमत में सात्वत का पुत्र। भागवत एवं मत्स्यमत में इसे अंधक, एवं विष्णुमत में इसे दिव्यांधक कहा गया है (अंधक २. देखिये)।

दिव्यजायु—पुरूरवा के उर्वशी से उत्पन्न आठ पुत्रों में छठवाँ (पद्म. सृ. १२)।

दिव्यमान—पारावत देवों में से एक।

दिव्या—हिरण्यकशिपु की कन्या तथा भृगु की पत्नी।

दिव्यादेवी—प्लक्षद्वीप के दिवोदास राजा की कन्या। दिवोदास ने इसका विवाह रूपदेश का चित्रसेन राजा से निश्चित किया। विवाहविधि शुरु होते ही चित्रसेन मृत हो गया। तब विद्वान् ब्राह्मणों के कथनानुसार, इसने रूपसेन से विवाह किया। परंतु वह भी मृत हो गया। इस प्रकार इसके इक्कीस पति मृत हो गये।

बाद में मंत्रियों की सलाह के अनुसार, इसका स्वयंवर रचा गया। किंतु स्वयंवर के लिये आये हुएँ सारे राजा, आपस में लड़ कर मर गये। इस अनर्थपरंपरा से इस को अत्यंत दुख हुआ, एवं यह अरण्य में चली गई (पद्म. भू. ८५)।

एक बार उज्वल नामक शुक प्लक्षद्वीप में आया। शोकमग्न दिव्यादेवी को उसने 'अशून्यशयन' व्रत बताया। मनोभाव से यह व्रत चार वर्षों तक करने पर, विष्णु ने इसे दर्शन दिया, तथा वह इसे विष्णुलोक ले गया (पद्म. भू. ८८)।

पूर्वजन्म में यह चित्रा नामक वैश्य की स्त्री थी (चित्रा ४. देखिये)।

दिव्याधक—दिव्य देखिये।

दिष्ट—(सू. दिष्ट.) वैवस्वत मनु का पुत्र। इसका बंधु नाभाग (भा. ८. १३; नभग देखिये)।

दीक्षित—कण्व का आर्यावती से उत्पन्न पुत्र। यह द्विविद का भाई था (भवि. प्रति. ४. २१)।

दीननाथ—एक विष्णु भक्त राजा। यह द्वापर युग में पैदा हुआ। इसे संतान न थी। पुत्रप्राप्ति के लिये इसने गालव ऋषि की सलाह से, नरयज्ञ करने का निश्चय किया। योग्य मनुष्यों को ढूँढ़ लाने के लिये इसने दूत नियुक्त किये।

इन दूतों को, दशपुर नगरी के कृष्णदेव ब्राह्मण के सुशीला से उत्पन्न तीन पुत्र, योग्य दिखाई पड़े। ब्राह्मण एक भी पुत्र देने के लिये तयार नही था। चार लाख मुहरे दे कर, दूत जबरदस्ती उसका ज्येष्ठ पुत्र ले जाने लगे। ब्राह्मण ने प्रार्थना की 'उसे छोड दो। मैं स्वयं आ रहा हूँ'। पश्चात् ब्राह्मण के छोटे पुत्र को ले जाने की कोशिश दूतों ने की, तो माता ने उन्हे रोक लिया। तब

मँझले पुत्र को वे जबरन ले गये। मातापिता ने अत्यधिक शोक किया।

बाद में सेवकों का पड़ाव विश्वामित्र के आश्रम में पड़ा। तब विश्वामित्र ने ब्राह्मण के मँझले पुत्र के बदले, खुद को नरमेध के लिये बलि के रुप में प्रस्तुत किया। परंतु नौकरों ने वह मान्य नहीं किया। पश्चात् विश्वामित्र राजा के पास आया। विश्वामित्र ने राजा से कहा, 'पूर्णाहुति दे कर भी पुत्रप्राप्ति हो सकती है'। यह सुनते ही उस पुत्र को छोड़ कर, राजा ने यज्ञ किया। उस ब्राह्मणपुत्र की जान बचाने के पुण्य से, विश्वामित्र को स्वर्गप्राप्ति, तथा दीननाथ को पुत्रप्राप्ति हुई (पद्म. ब्र. १२; शुनःशेप देखिये)।

दीप्तलोचन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ९२.२६)।

दीप्ति—अमिताभ देवों में से एक।

दीप्तिकेतु—दक्षसावर्णि मनु का एक पुत्र।

दीप्तिमत्—सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

दीप्तिमेधस्—सुमेधस् देवों में से एक।

दीर्घ—मगध देश का एक क्षत्रिय। पांडु ने इसका वध किया (म. आ. १०५.१०)।

दीर्घजिह्व—दनुपुत्र। यह दानवों में से एक था।

२. एक विषैला सर्प। शेष के कोष में एक मृतसंजीवक मणि था। उसके संरक्ष कों में से यह एक था। (जै. अ. ३८)।

दीर्घजिह्वा—अशोकवन की एक राक्षसी।

दीर्घतपस्—(सो. काश्य.) राष्ट्र का पुत्र (दीर्घतमस् २. देखिये)। ब्रह्मपुराण में इसे काशेय का पुत्र बताया गया है (ब्रह्म. १३.६४)।

२. जंबुद्वीप के महेंद्र पर्वत पर रहने वाला एक तपस्वी। इसे पुण्य तथा पावन नामक दो पुत्र थे। उम्र के सौवें वर्ष में, पत्नी के सह इसकी मृत्यु हुई। उस कारण इसका पुत्र पावन शोकग्रस्त हुआ। तब पुण्य ने उसे उपदेश कर उसका मोहनिरसन किया (यो. वा. ५. १९-२१)। 'तृष्णाक्षय' के हेतु से यह कथा बताई गयी है।

३. एक व्यास। इसका पुत्र शुक (पद्म. पा. ७२)।

दीर्घतमस् मामतेय औचथ्य—अंगिरसकुल का एक सूक्तद्रष्टा ऋषि (ऋ. १. १४०-१६४)। यह ममता एवं उचथ्य ऋषि का पुत्र था। इसलिये इसे 'मामतेय' एवं 'औचथ्य' ये उपनाम प्राप्त हुएँ (ऋ. १. १५२. ६; ४. ४. १३)। 'दीर्घतपस्' इसीका ही पाठभेद है (वायु. ५९; ९८; १०२)।

बृहस्पति के शाप के कारण, यह जन्म के समय अंधा था (बृहद्दे. ४. ११. १५, २१-२५; ऋ. १. १४०-१६४)। इसलिये इसे 'दीर्घतमस्' (= दीर्घ अंधकार) नाम प्राप्त हुआ। यह सौ वर्षों तक जीवित रहा (ऋ. १. १५८. ६; सां. आ. २. १७)। सौ साल की बूढ़ी उमर में इसने 'केशव' परमेश्वर की उपासना की। उससे इसे दृष्टी प्राप्त हुअी, एवं लोग इसे 'गोतम' (= उत्तम नेत्रवाला) कहने लगे (म. शां. ३२८)। 'सुरभि' ने सूंघने पर इसे दृष्टि प्राप्त हुअी, ऐसी भी कथा उपलब्ध है (वायु. ९९)।

'भरत' राजाओं का यह पुरोहित था। भरत दौष्यंति को इसने 'ऐन्द्र अभिषेक' किया था (ऐ. ब्रा. ८. २३)। यह अभिषेक यमुना के किनारे संपन्न हुआ (भा. ९. २०. २५; भरत देखिये)। एक मंत्र गायक के रूप में, इसका उल्लेख ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १. १५८. १)।

एक बूढे एवं का भी व्यक्ति के रूप में, इसकी कई कथाएँ ऋग्वेद में उपलब्ध है। इस वृद्ध को सम्हालते-सम्हालते इसके नौकर त्रस्त हो गये। यह मर जाये, इस हेतु से उन्होंने इसे अग्नि में डाल दिया, पानी में गला दिया। अन्त में, त्रैतन नामक दास ने इसका सिर काट लिया, एवं इसकी छाती फोड़ दी। फिर भी, प्रत्येक समय अश्वियों ने इसकी रक्षा की (ऋ. १. १५८. ४-६; बृहद्दे. ४. ११. १४)। बाद में इसे नदी में फेका दिया गया। नदी में बहता हुआ, यह अंग देश के किनारे जा लगा। वहाँ इसने उशिज् नामक दासकन्या से विवाह किया। उशिज् से इसे कक्षीवत् आदि पुत्र हुएँ (बृहद्दे. ४. २३)।

पुराणों में यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। दीर्घतमस् को गर्भावस्था में ही सारे वेद, वेदांग तथा शास्त्र पूर्णतया अवगत थे (वायु. ९९. ३६-७८; ३७; मत्स्य. ४०; म. शां. ३२८-४७-४८)। विद्या के बल पर इसने प्रद्वेषी नामक रूपसंपन्न स्त्री से विवाह किया। उससे इसे गौतमादि अनेक पुत्र हुएँ। अपने कुल की अधिक वृद्धि हो, इस हेतु से इसने कामधेनु के पुत्रों से 'गो-रति' विद्या सीखी। उस विद्या के कारण, दिन के उजाले में, सब लोगों के समक्ष, यह स्त्रीसमागम करने

लगा। आश्रम के अन्य ऋषियों को यह पसंद नहीं आया। वे इसे आश्रम से भगा देने को उद्युक्त हो गये।

इसकी पत्नी प्रद्वेषी को पुत्रप्राप्ति हो गयी थी, एवं अंधा पति उसे अच्छा भी न लगता था। वह इसे भगाने के लिये अन्य आश्रमवासियों को सहाय करने लगी। वह कहने लगी, 'दीर्घतमस् से तलाक ले कर मैं दूसरा पति कर लुंगी'।

घर छोडने के लिये उद्युक्त हुए अपने पत्नी को काबू में रखने के लिये, इसने धर्मशास्त्रकार नाते से पत्नीधर्म के नये नियम प्रस्थापित किये। वे नियम इस प्रकार थे:— 'जन्मभर स्त्री को एक ही पति रहेगा, वही उसका ईश्वर होगा। पति जीवित रहे या मृत, दूसरा पति स्त्री नही कर सकेगी। अगर स्त्री ने दूसरा पति किया, तो वह पतित हो जावेगी। पति के बिना रहनेवाली स्त्रियाँ भी पतित रहेंगी। उनके पास धन होने पर भी, उन पतिशून्य स्त्रियों का परपुरुषसंभोग तथा तज्जन्य संतति व्यर्थ, अकीर्तिकर तथा निंदास्पद ही होंगी'।

बाद में प्रद्वेषी के कहने पर, इसके पुत्रों ने एक तख्ते पर इसे बांध कर, वह तख्ता गंगा में छोड दिया (म. आ. ९८.१८)। मत्स्य के अनुसार दीर्घतमस् अपने चचेरे भाई शरद्वत् के आश्रम में रहता था। दीर्घतमस् अपने स्नुषा से विषयवासनायुक्त भाषाण बोलने लगा। यह स्वैराचारी वर्तन शरद्वत् को अच्छा न लग कर, उसने इसे आश्रम के बाहर निकाल दिया (मत्स्य. ४८)।

नदी में छोड़ा गया दीर्घतमस् ऋषि, बहते-बहते आनव देश के सीमा के समीप आया। उस देश का राजा बलि सहजभाव से घूमते घूमते वहाँ आया था। उसने इस ऋषि को बडे सम्मान तथा आनंद से अपने अंतःपुर में रख लिया। तदनंतर बलि राजा ने सुदेष्णा नामक अपनी रानी को, संतति हेतु मन में रख कर, इस ऋषि की सेवा करने के लिये कहा। परंतु इसे अंध जान कर सुदेष्णा ने आप के बयाज, अपने "औशीनरी" नामक शूद्रवर्णीय दासी को इसके पास भेजा। उससे इस ऋषि को कक्षीवत्, दीर्घश्रवस् आदि ग्यारह पुत्र हुएँ (म. स. १९.५)। वायुपुराण में इन पुत्रों में से 'कक्षीवत्' का नाम "काक्षीवत्" दिया है।

बाद में बलि एवं दीर्घतमस् इन दोनों में, नवजातपुत्र किस का है, इस बारे में वाद शुरू हुआ। दीर्घतमस् ने राजा को सुदेष्णा द्वारा की गयी चालबाजी बतायी। तब ऋषि को शांत कर, तथा पत्नी को समझा कर, बलि ने फिर एक बार सुदेष्णा को दीर्घतमस् के पास भेज दिया। इससे उसे पाँच पुत्र उत्पन्न करवाये। उनके नाम अंग, वंग, पुंड्र, सुह्म तथा कलिंग थे। इन्हे बालेय क्षत्र तथा बालेय ब्राह्मण कहते है (ह. वं. १.३१; विष्णु. ४.१८; भा. ९. २०; २३; ब्रह्म. १.३)।

बाद में काक्षीवानादि पुत्रों को ले कर, यह गिरिव्रज (मत्स्य. ४८), वा गिरिप्रज (वायु. ९९) गया। कक्षीवान को इसने उदंक ऋषि के पास शिक्षाप्राप्ति के लिये भेजा (स्कन्द ३.१.१७-१८)।

महाभारत में, दीर्घतमस् ऋषि का निर्देश अनेक बार आया है। यह इन्द्रसभा में इन्द्र के मनोरंजन का काम करता था (म. स. ७.१०)। यह पश्चिम दिशा के आश्रय में रहता था (म. अनु. १६५.६२)। इसे आशिज, औशिज, तथा असित कहा गया है (वायु. ९९ ४४; मत्स्य. ४८.८३)। उशिज इसका पितामह होने के कारण, इसका पैतृक नाम 'औशिज' होना संभवनीय है।

इसका पुत्र कक्षीवत् एवं उसके भाईओं का 'गौतम' यह पैतृक नामांतर कई जगह प्राप्त है (मत्स्य. ४८.५३; ८४)। गोतम, दीर्घतमस् का ही अन्य नाम था। इसके पशुतुल्य आचरण के कारण, इसे यह नाम मिला (वायु. ९९; ब्रह्मांड. ३.७४.३)। कई जगह, इसे गौतम भी कहा है (म. शां. ३२८.५०; म. स. १९.५-७)। लो. तिलकजी ने ऋग्वेद के 'दीर्घतमस्' शब्द का अर्थ, 'दीर्घ दिन के बाद अस्तंगत होनेवाला सूर्य,' किया है (आर्यों का मूलस्थान पृ. १४६)।

कई ग्रंथों में, सुदेष्णा रानी की शूद्रा दासी का नाम 'उशिज्' बताया है। इसीलिये, उस शूद्रा से उत्पन्न, इसके कक्षीवत् एवं दीर्घश्रवस् ये पुत्र, 'औशिज' यह मातृक नाम से प्रसिद्ध हुएँ (दीर्घश्रवस् औशिज देखिये)

२. (सो. काश्य.) यह भागवत, विष्णु तथा वायु के मत में काशिराज राष्ट्र का पुत्र। इसे धन्वन्तरि नामक पुत्र था। वायु में दीर्घतपस् पाठभेद है।

दीर्घनीथ—एक वैदिक ऋषि। इंद्र ने इस को संपत्ति दी थी (ऋ. ८.५०.१०)।

दीर्घनेत्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.४२)।

दीर्घप्रज्ञ—दुर्योधनपक्षीय एक राजा (म. आ. ६१. १५)।

दीर्घबाहु--(सू. इ.) खट्वांग (दिलीप द्वितीय) राजा का पुत्र। इसका पुत्र रघु (भा. ९.१०.१)। मत्स्य तथा पद्मपुराण में यही अजपुत्र के नाते उल्लिखित है। यह विष्णुभक्त था। इसे गद्दी पर बिठा कर, खट्वांग आत्मस्वरूप में लीन हो गया। ब्रह्म, हरिवंश तथा शिवपुराण, 'दीर्घबाहु' को रघु का विशेषण मानते हैं। इसीलिये रघुवंश में 'दीर्घबाहु' का उल्लेख नहीं है। गरुड पुराण में रघु का उल्लेख न हो कर केवल दीर्घबाहु का ही निर्देश है।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ९२.२६)।

दीर्घयज्ञ--अयोध्या का राजा। राजसूय के समय, भीम ने इसे पराजित किया था (म. स. ३१.२)।

दीर्घरोमन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दीर्घलोचन--(सो. कुरु.) भीमद्वारा मारा गया धृतराष्ट्र का पुत्र (म. भी. ९२.२६)।

दीर्घश्रवस् औशिज—एक राजा। यह दीर्घतमस् एवं उशिज् का पुत्र था (दीर्घतमस् मामतेय देखिये)। यहाँ इसे वणिज् कहा गया है। इस पर अश्वियों ने कृपा की थी (ऋ. १.११२.११)। इस राजा को देश से निकाल दिया गया था। इसलिये यह भूख के कारण मर रहा था। एक साम गा कर इसने अन्न प्राप्त किया। (पं. ब्रा. १५.३.२५)। कक्षीवत् के साथ इसका निर्देश है।

दीर्घायु--एक क्षत्रिय। यह श्रुतायु का पुत्र था। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ६८.२९)।

दीर्घिका--वीरशर्मन् की कन्या। यह बहुत ऊँची थी। शास्त्रों में लिखा है, 'ऊँची लड़की से ब्याह करनेवाला, छे माह में मर जाता है'। इस लिये इससे ब्याह करने को कोई तयार नहीं होता था।

अच्छा पति मिले, इसलिये इसने तपश्चर्या शुरू की। तप करते करते यह वृद्ध हो गयी। पश्चात् एक कुष्ठ रोग पीडित वृद्ध गृहस्थ, इसके पास आया। उसकी शर्ते स्वीकार कर, इसने उससे विवाह किया। कालोपरांत पति ने इसे यात्रा करने का अपना विचार बताया। यह उसे कंधे पर ले कर चली। जाते जाते शूलि पर चढाये गये मांडव्य को, इसका धक्का लग गया। क्रुद्ध हो कर मांडव्य ने इसे शाप दिया। परंतु पातिव्रत्य प्रभाव से इस पर उस शाप का कुछ परिणाम नहीं हुआ (स्कंद. ६. १३५; मांडव्य देखिये)। शांडिली एवं यह एक ही रही होंगी।

दुःशल—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दुःशला—धृतराष्ट्र की कन्या। यह सिंधुराज जयद्रथ को विवाह में दी गयी थी (म. आ. १०८.१८)। इसका पुत्र सुरथ।

दुःशासन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का द्वितीय पुत्र (म. आ. १०८.२)। यह दुर्योधन की अनुमति से व्यवहार करता था, इसलिये उसने इसे यौवराज्य प्रदान किया था। यह पौलस्त्य का अंशावतार था। इसने शस्त्रास्त्रविद्या तथा धनुर्विद्या की शिक्षा द्रोण से ली थी।

द्रौपदी स्वयंवर के समय, उपस्थित राजाओं में यह भी शामिल था (म. आ. १७७.१)। बाद में द्रौपदी-सहित पांडव द्यूत में हार गये। कर्णद्वारा कानाफूसी मिलने पर, इसने भरी सभा में द्रौपदी का वस्त्रहरण किया। कृष्ण की आराधना कर, द्रौपदी ने अपनी रक्षा की। इसी समय दुःशासन का वध कर, उसके रक्त का प्राशन करने की घोर प्रतिज्ञा भीमसेन ने की (म. स. ६१.४६)।

पांडव अज्ञातवास में थे। तब उन्हें ढूँढने के उद्देश से कौरवों ने, मत्स्य-देश के विराट राजा की गोशालाओं का ध्वंस किया, तथा जबरदस्ती से उसकी गायों का हरण किया। इस हमलें में दुःशासन शामिल था (म. वि. ३३.३)। अर्जुन ने विराटपुत्र उत्तर को सारथि बना कर, गोहरण कर के भागनेवाले कौरवोंका, पीछा किया। तब दुःशासन, विकर्ण, दुःसह तथा विविंशति नामक चार योद्धाओं ने महाधनुर्धर अर्जुन पर एक साथ आक्रमण किया। दुःशासन ने, उत्तर को घायल किया अर्जुन के वक्षभाग पर प्रहार कर उसे जख्मी किया। परंतु आखिर अर्जुन ने अपने बाणों से इसे घायल किया, एवं इसे भगा दिया (म. वि. ५६.२१-२२)।

भारतीययुद्ध के प्रथम दिन के संग्राम में, नकुल के साथ इसका द्वंद्वयुद्ध हुआ था (म. भी. ४५.२२-२४)। पश्चात् भीष्मद्वारा इकठ्ठी की गयी सेना को भेद कर, भीम ने दुःशासनादि योद्धाओं पर आक्रमण किया। तब दुःशासन ने उसे घेर लिया (म. भी. ७३.१०)। भीष्मार्जुन युद्ध के समय शिखंडिन् को सामने ले कर अर्जुन युद्ध करने लगा। यह देखते ही भीष्म के संरक्षण के लिये, दुःशासन ने अर्जुन पर आक्रमण किया। दोनों में युद्ध हो कर, दुःशासन घायल हुआ (म. भी. १०६. ४३)।

पश्चात् सामने की कौरव सेना की पंक्ति तोड़ कर, अर्जुन उन्हें घायल करने लगा। उस समय पुनः दुःशासन तथा अर्जुन में युद्ध हो कर उसमें भी दुःशासन का पराभव हुआ (म. द्रो. ६५.५)।

अभिमन्यु का पराक्रम देख कर, द्रोण द्वारा की गई उसकी प्रशंसा, दुर्योधन से सही नहीं गई। उसने दुःशासनादि वीरों को उस पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। दुःशासन तथा अभिमन्यु में काफी देर तक तुमुल युद्ध हुआ। अभिमन्यु के प्रबल बाणों से, व्यथित हो कर दुःशासन रथ में गिर पड़ा। इसे प्रबल मूर्च्छा आई। इसका सारथि इसे रण से दूर ले गया (म. द्रो. ३९. ११-१२)।

बाद में रणांगण में, सात्यकि से मिलते ही घबरा कर दुःशासन भाग आया, तब द्रोण ने इसका अत्यंत उपहास किया (म. द्रो. ९८)। वास्तविक देखा जावे, तो सात्यकि के साथ हुएँ युद्ध में ही दुःशासन मर सकता था, परंतु द्रौपदी वस्त्रहरण के समय की, भीम की प्रतिज्ञा का स्मरण हो कर, उसने दुःशासन का वध नहीं किया (म. द्रो. ६६. २६)।

इस प्रकार घनघोर भारतीययुद्ध चालू ही था। उस समय भीम ने दुःशासन पर आक्रमण किया। दोनों का घमासान युद्ध हो कर, दुःशासन ने भीम पर साक्षात् मृत्यु के समान, प्रचंड शक्ति छोडी। परंतु भीम ने अपनी गदा यूँ फेंकी जिससे उस दारुण शक्ति का विदारण हो कर, वह गदा दुःशासन के मस्तक पर जा गिरी। तत्काल दुःशासन भूमि पर गिर पड़ा। उसके मस्तक से रुधिरस्राव होने लगा। तत्काल भीम इसपर झपटा। 'द्रौपदी वस्त्रहरण,' 'केशग्रहण' तथा वनगमन के समय, 'गौगौं' कहने का स्मरण उसे दे कर, एवं अपनी प्रतिज्ञा का भी स्मरण दिला कर भीम ने इसके गले पर पैर रखा। इसके दोनों हाथ पकड़े। पास ही में खडे दुर्योधन, कर्ण, कृपाचार्य अश्वत्थामा आदि वीरों की ओर देख कर भीम ने क्रोध से कहा, 'अगर किसी में सामर्थ्य हो तो वह इसकी रक्षा करे। मेरी प्रतिज्ञा के अनुसार, अब मैं इसका रक्तप्राशन करनेवाला हूँ'। इतना कह कर उसने दुःशासन का वक्षविदारण किया, तथा सब के सामने इसका रक्त प्राशन करने लगा। वक्षस्थलभेद होने के कारण, दुःशासन की तत्काल मृत्यु हो गई (म. क. ६१)।

दुःशासन की मृत्यु के बाद, गांधारी ने श्रीकृष्ण के पास, अत्यंत शोक व्यक्त किया। रोते-रोते वह बोली जिस प्रकार सिंह के द्वारा कोई प्रचंड हाथी मारा जाये, उस प्रकार भीम द्वारा मारा गया मेरा दुःशासन अपने प्रचंड बाहु फैला कर सोया है (म. स्त्री. १८. १९. २०)।

दुःशासन को दौःशासनि नामक एक अत्यंत पराक्रमी पुत्र था। भारतीययुद्ध में दौःशासनि तथा अभिमन्यु का प्रचंड युद्ध हुआ। अनेक वीरों से लड़ कर थका हुआ अभिमन्यु दौःशासनि के एक गदाप्रहार से बेहोश हो गया (म. द्रो. ४८. १२)। बाद में दौःशासनि को द्रौपदी पुत्र ने मारा (म. क. ४. १४)।

यह सब शस्त्रास्त्रविद्या, सारथ्यकर्म तथा धनुर्विद्या में निपुण, अत्यंत शूर एवं पराक्रमी था (म. उ. १६२. १९)। परंतु दुष्टबुद्धि एवं मत्सरी होने के कारण, इसका नाश हुआ।

२. खड्गबाहु के पुत्र का सेनापति। एक बार गर्व से एक उन्मत्त हाथी पर यह बैठा। उस हाथी ने पैरों के नीचे कुचल कर इसे मार डाला।

बाद में यह हाथी हुआ। सिंहल देश के नृप ने इसे खड्गबाहु को दिया। उसने इसे एक कवि को दिया। उसने इसे मालव राजा को बेंच दिया। उसने इसका अच्छा पालनपोषण किया। फिर भी यह मृतप्रायसा होने लगा। तब स्वयं राजा इसके पास आया। हाथी ने मनुष्यवाणी से उसे कहा, 'गीता के १७ वें अध्याय का पाठ करनेवाला कोई व्यक्ति मेरे पास आयेगा, तो मेरी मानसिक पीड़ा नष्ट होगी,'।

इतना कह कर इसने अपना पूर्ववृत्तांत राजा को निवेदन किया। राजा ने उपरोक्त प्रकार का ब्राह्मण लाकर उसके द्वारा अभिमंत्रित जल हाथी पर डलवाया। जल के गिरते ही यह दिव्यदेह धारण कर स्वर्ग गया (पद्म. उ. १९१)।

दुःशीम—एक दाता। तान्व ने अपने सूक्त में इसका उदार कह कर उल्लेख किया है (ऋ. १०.९३.१४)।

दुःषन्त—(सो. पूरु.) दुष्यंत देखिये।

दुःसह—धृतराष्ट्र के शत पुत्रों में से एक। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ११०.२९; ३५)।

२. लक्ष्मी की भगिनी 'अलक्ष्मी' का पति (लिंग. १.६)।

३. (सू. इ.) पुरुकुत्स का पुत्र। इसकी पत्नी का नाम नर्मदा।

दुःस्वभाव—दुर्बुद्धि देखिये।

दुदर्भ—सुहोत्र नामक शिवावतार का शिष्य।

दुंदुभि---मयासुर का पुत्र। मयासुर को हेमा नामक अप्सरा से दो पुत्र उत्पन्न हुएँ। उनमें से यह कनिष्ठ था (वा. रा. उ. १२.१३)।

दीर्घ तपस्या कर के इसने सहस्रावधि हाथियों का बल प्राप्त किया तथा महिष का रूप धारण किया। पश्चात् इसने समुद्र को युद्ध का आह्वान दिया। समुद्र ने इसे हिमालय के पास भेजा। हिमालय ने इसे वालिन् के पास भेजा। वालिन् के साथ हुएँ युद्ध में, दुंदुभि का पराजय हुआ। यह एक गुफा में जा छिपा। वहाँ वालिन् ने इसका वध किया।

मृत्यु के पश्चात् इसका कलेवर वालिन् ने दूर फेंका। वह मतंग ऋषि के आश्रम में जा गिरा। आश्रम की सारी वस्तुएँ रक्तरंजित हो गयी। वृक्ष भी टूट गये। तब मतंग ने क्रुद्ध हो कर वालिन् को शाप दिया, 'मेरे आश्रम में आते ही तुम मृत हो जावोगे'। तब से वह आश्रम वालिन् के लिये अगम्य हो कर, सुग्रीव का वासस्थान बन गया।

राम का सुग्रीव से दोस्ती का सुलूक हो गया। पश्चात् अपना सामर्थ्य दर्शाने के लिये, दुंदुभि के शरीर का कंकाल, राम ने अपने अंगूठे से दस योजन तक दूर उड़ा दिया (वा. रा. किं. ११.७-६५)। दुंदभि ने सोलह हजार स्त्रियों को कैद में रखा था। उन स्त्रियों की मुक्ति राम ने की। एक लाख स्त्रियों से एकदम विवाह करने का इसका संकल्प था (आ. रा. राज्य. १.११)।

२. एक गंधर्वी। ब्रह्मदेव की आज्ञानुसार अयोध्या में यह कैकेयी की मंथरा नामक दासी बनी (म. व. २५. ९.१०)।

३. (सो. यदु. कुकुर.) अंधपुत्र अंधक का पुत्र। इसका पुत्र अरिद्योत।

४. कश्यप तथा दनु का पुत्र।

५. सुतार नामक शिवावतार का शिष्य।

दुंदुभिनिह्राद---एक राक्षस। यह दिति का पुत्र, एवं प्रह्लाद का मामा था। देव-असुर युद्ध में, देवों का विजय एवं असुरों का पराभव होने लगा। देवों के इस विजय के लिये, ब्राह्मण ही उत्तरदायी है यह सोच कर, इसने ब्राह्मणों का संहार प्रारंभ किया। इस कार्य के लिये, काशी जैसे क्षेत्रों पर अपना अधिकार भी जमाया।

पश्चात् काशीवासी ब्राह्मणों को शंकर ने अभय दिया, 'मेरा स्मरण कर, जो ब्राह्मण दुंदुभिनिह्राद का विरोध करेंगे, वे सदा अजेय रहेंगे। बाद में शिवशक्ति से इस राक्षस का नाश हुआ। काशी के 'व्याघ्रेश्वरमाहात्म्य' में यह कथा दी गयी है (शिव. रुद्र. यु. ५८)।

दुरतिक्रम---शिवावतार सुहोत्र का शिष्य।

दुराचार---एक दुराचारी ब्राह्मण। वैताल आदि की पीड़ा से यह ग्रस्त था। धनुष्कोटितीर्थ, जाबालतीर्थ, एवं वेंकटाचलतीर्थ पर जाने के कारण, यह मुक्त हुआ (स्कंद. २. १. २. ५; ३. १. ३६)।

दुराधन---(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दुराधर---(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दुरासद---भस्मासुर का पुत्र। इसने शिव से पंचाक्षरी विद्या प्राप्त कर, उसका जाप किया। उस जाप से संतुष्ट हो कर, शंकर ने इसे इच्छित वर दिया। उस वर के प्रभाव से, प्रमत्त हो कर यह सब को कष्ट देने लगा। शीघ्र ही शक्तिपुत्र ढुंढि ने इसका वध किया। (गणेश. १. ३८-४२)।

दुरितक्षय---(सो. पूरु.) महावीर्य राजा का पुत्र। विष्णु मत में उरुक्षय इसीका नामांतर है। त्रय्यारुणि, कवि, एवं पुष्करारुणि नामक इसके तीन पुत्र थे (भा. ९. २१.१९)। तपस्या के कारण, वे सब ब्राह्मण हो गएँ।

दुर्ग---हिरण्याक्ष के वंश के रुरु दैत्य का पुत्र।

दुर्गम---एक दैत्य। दुर्गादेवी ने इसका वध किया (स्कंद १. २. ६५)।

२. रुरु दैत्य का पुत्र। इसने सब ब्राह्मणों तथा ऋषियों के आधारस्तंभ, वेदों का नाश किया। इस कारण नित्य नैमित्तिक कर्म बंद हो गये। सर्वत्र हाहाकार मच गया। तब चतुर्भुजादेवी ने इसका वध किया (शिव. उ. ५०)।

३. (सो. द्रुह्यु.) विष्णु मत में धृत का पुत्र। दुर्दम, दुर्मनस् एवं विदुष इसके नामांतर हैं।

४. रेवती १. एवं विपाठा देखिये।

दुर्गमभूत---(सो. वसु.) विष्णु मत में वसुदेव का रोहिणी से उत्पन्न पुत्र।

दुर्गह---सायण के मत में पुरुकुत्स का पिता। पुरुकुत्स को दौर्गह यह पैतृक नाम प्रयुक्त है (ऋ. ४.४२.८; पुरुकुत्स देखिये)।

दुर्गा---विश्वव्यापक आदिमाया का एक नाम। इसे त्रिगुणात्मिका एवं देवी भी कहते है (देवी देखिये)।

दुर्जय---दनुपुत्र दानवों में से एक।

२. (सू. इ.) दशाश्व शाखा में से सुवीर का पुत्र। इसे दुर्योधन नामक एक पुत्र था (म. अनु. २.१२)।

३. एक रुद्रगण।

४. खर राक्षस के बारह अमात्यों में से एक।

५. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०८.३८)।

६. पांडवपक्षीय एक राजा। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.४६)।

७. सुप्रतीक का पुत्र। इसने सब देश जीते। इसने हेतृप्रहेतृ की कन्या से विवाह किया (हेतृप्रहेतृ देखिये)। गौरमुख मुनि के पास चिंतामणि नामक एक मणि था। उसे प्राप्त करने के प्रयत्न में, यह मारा गया। जिस स्थान पर इसकी मृत्यु हुई, उस स्थान को 'नैमिषारण्य' कहते हैं (वराह. ११)।

दुर्जयामित्रकर्षण—(सो. सह.) अनंत का पुत्र। (सुप्रतीक १. देखिये)।

दुर्दम—(स्वा. प्रिय.) विक्रमशील राजा का पुत्र। इसकी माता का नाम कालिंदी था। प्रमुच नामक ऋषि की कन्या रेवती इसकी पत्नी थी।

२. दुर्गम का नामांतर (दुर्गम ३. देखिये)।

३. (सो. सह.) रुद्रश्रेण्य का पुत्र। कई ग्रंथों में, इसे भद्रश्रेण्य का पुत्र कह कर, इसका नाम दुर्मद बताया है (ह. वं. १.२९.६९; ब्रह्म. ११.४८)।

पद्म मत में यह भद्रसेन का पुत्र था। इसका पुत्र धनक (पद्म. सृ. १२)।

हैहय एवं काश्य कुलों की परस्पर स्पर्धा में भद्रश्रेण्य के अन्य पुत्रों का दिवोदास ने वध किया। किंतु अनजान होने से इसे छोड़ दिया। कालोपरांत इसने दिवोदास को पराजित कर, अपने पिता के वध का बदला लिया।

४. गोदावरी के तट पर प्रतिष्ठान नगर में रहनेवाला एक ब्राह्मण। यह किसी भी व्यक्ति से दान लेता था। इसलिये इसे नरक प्राप्त हुआ।

५. विश्वावसु गंधर्व का पुत्र। एक बार कैलास में वसिष्ठ, अत्रि आदि ऋषि शंकर की उपासना कर रहे थे। उस वक्त, अपनी सैंकडों पत्नियों के साथ यह वहाँ आया, तथा पास के 'हालास्यतीर्थ' में नग्नस्थिति में स्नान करने लगा। उसकी यह बदतमीजी को देख कर वसिष्ठ ने इसे शाप दिया, 'तुम राक्षस बनोंगे'। परंतु इसकी पत्नियों द्वारा प्रार्थना की जाने पर वसिष्ठ ने कहा, 'सोलह वर्ष के बाद तुम्हारा पति शाप से मुक्त हो कर तुम्हें वापस मिलेगा। बाद में राक्षस हो कर यह गालव ऋषि को खाने दौडा। तब भगवान् विष्णु के सुदर्शन चक्र के कारण इसकी मृत्यु हो गयी। पश्चात् इसका उद्धार हुआ। एवं विमान में बैठ कर यह गंधर्व लोक में गया (स्कन्द. ३.१.४)।

दुर्दमन—(सो. कुरु.) भविष्य तथा भागवत के मतानुसार शतानीक का पुत्र। इसके लिये उदयन तथा उद्यान नामांतर भी प्राप्त है।

दुर्धर—रावण का एक प्रधान (वा. रा. सुं. ४९. ११)।

२. रामसेना का एक वानर। इसके पिता का नाम वसु (वा. रा. यु. ३०.३३)।

३. महिषासुर के पक्ष का एक राजा।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११०.२९; ३५)।

दुर्धर्ष—हनूमत् द्वारा मारा गया रावण का सेनापति (वा. रा. सुं. ४६)।

२. राम के द्वारा मारा गया एक रावणपक्षीय राक्षस (वा. रा. यु. ९. २१)।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

४. हिरण्याक्ष के पक्ष का एक असुर। यम ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ७०)।

दुर्धार—अंगदेश के राजा मायावर्म का पुत्र (भवि. प्रति. ३.३१)।

दुर्बुद्धि—धृतराष्ट्र नाग का पुत्र। इसने अपने पिता के कहने पर, अपने बंधु की सहायता से, मृत हुएँ अर्जुन के सिर का हरण किया (जै. अ. ३९.६६-७६)।

दुर्बुद्धि जनमेजय— जनमेजय पारिक्षित २. देखिये।

दुर्मद—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया। (म. द्रो. १३०-३४)।

२. दुर्दम ३. देखिये।

३. वसुदेव का पौरवी से उत्पन्न पुत्र।

४. मयासुर का पुत्र। युद्ध के लिये वालिन् को इसने आह्वान दिया था। इस आह्वान को स्वीकार कर वालिन् ने इसे पराजित किया। पश्चात् यह भागने लगा। वालिन् ने इसका पीछा करने पर यह एक गुफा में जा कर छिप गया (आ. रा. सार. ८)।

दुर्मर्ष—एक असुर। समुद्रमंथन के वक्त इसने देवताओं से युद्ध किया था (भा. ८. १०. ३३)।

दुर्मर्षण--(सो. क्रोष्टु.) वसुदेव का बंधु। संजय को यह राष्ट्रपाली नामक भार्या से उत्पन्न हुआ था। (भा. ९. २४. ४२)।

२. (सो. कुरु.) भीम के द्वारा मारा गया धृतराष्ट्र का एक पुत्र (म. श. २५. ७)।

दुर्मित्र--(भविष्य.) कलियुग का एक राजा। यह बाह्लिक के बाद हुएँ पुष्पमित्र राजा का पुत्र था (भा. १२. १. ३४)।

२. (किलकिला. भविष्य.) भागवत मतानुसार किलकिला नगरी का एक राजा। विष्णु मतानुसार इसे पटुमित्र, तथा वायु एवं ब्रह्मांड मतानुसार पट्टमित्र कहते थे।

दुर्मित्र कौत्स--सूक्तद्रष्टा। इसके सूक्त में, यह कुत्सपुत्र होने का निर्देश है (ऋ. १०. १०५. ११)।

दुर्मुख--कश्यप एवं खशा का पुत्र।

२. कद्रु का पुत्र एवं एक सर्प।

३. सुहोत्र नामक शिवावतार का शिष्य।

४. राम के पक्ष का एक वानर (वा. रा. यु. ३०. २३)।

५. वरुण की सभा का एक राक्षस सभासद (म. स. ९.१३)।

६. हिरण्याक्ष के पक्ष का एक राक्षस। यम ने दुर्धर्ष का वध किया। इसलिये इसने चिढ़ कर यम पर आक्रमण किया किंतु यम ने खड्ग से इसका वध किया (पद्म. सृ. ६८.१८)।

७. रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. यु. ९.२)।

८. महिषासुर के पक्ष का एक असुर। महिषासुर के कोषाध्यक्ष ताम्र ने इसे बाष्कल के साथ देवी से युद्ध करने के लिये भेजा। उस युद्ध में, देवी ने इसका वध किया (दे. भा. ५.१३)। पूर्वजन्म में यह पौलस्त्यों में से एक था (म. आ. ६१.८३)।

९. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। यह द्रौपदी-स्वयंवर में गया था (म. आ. १७७.१)। सहदेव ने इसे पराजित किया (म. द्रो. १०९.२०)। इसे यशोधर नामक पुत्र था (म. द्रो. १५९.४)। 'भांडारकर' महाभारत में, इसके नाम का यशोधन पाठभेद उपलब्ध है।

दुर्मुख पांचाल--पांचाल देश का राजा। इसको बृहदुक्थ वामदेव ऋषि ने महाभिषेक किया तथा महाभिषेक का रहस्य बताया। इसी कारण यह सम्राट् हुआ (ऐ. ब्रा. ८.२३)। यह युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित रहा होगा (म. स. ४.१९)। इसका पुत्र जनमेजय। भारतीय-युद्ध में वह युधिष्ठिर के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३.३६)।

दुर्योधन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र तथा गांधारी के सौ पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र एवं 'भारतीय-युद्ध' का सूत्र-चालक। व्यास के महाभारत में एक 'खलनायक' के रूप में दुर्योधन की व्यक्तिरेखा चित्रांकित की गयी है। स्वजनों की हर एक वस्तु पर, पापी नजर डालनेवाला, लोभी, मत्सरी एवं मूढ राजा के रूप में इसका चरित्र महाभारत में दर्शाया गया है। किंतु दुर्योधन का यह चरित्रचित्रण एकांगी एवं इसके अन्य गुणों पर अन्याय करनेवाला है। यह उत्तम विद्यामंडित, रथी, सारथी, शस्त्रास्त्रविद्या में निष्णात, एवं उत्तम राज्य-शासक था (म. उ. १६२. १९)। गदायुद्ध में भी यह अत्यंत प्रवीण था (म. आ. १३१)। यह एक सच्चा मित्र भी था। कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य आदि अपने मित्रों के लिये इसने अपना सब कुछ न्योछावर किया, एवं उनकी आमरण मैत्री संपादित की। एक राजा के नाते यह प्रजाहितदक्ष एवं आदर्श था, यों प्रशस्ति स्वयं युधिष्ठिर ने दी है।

अतीव राज्यतृष्णा एवं पांडवों के प्रति मत्सर के कारण, आमरण इसने पांडवों का द्वेष किया। इसके यही द्वेष का पर्यवसान आखिर भारतीय-युद्ध जैसे दारुण युद्ध में हुआ। उस युद्ध में इसका सारे संबंधियों के साथ सर्वनाश हुआ। भारतीय-युद्ध के प्रारंभ में कृष्ण ने अर्जुन को गीता सुनाई, एवं गीता से स्फूर्ति पा कर अर्जुन ने उस युद्ध में विजय प्राप्त किया। इस लिये अर्जुन को ही लोग भारतीययुद्ध का नायक समझते है। किंतु महाभारत में हरेक व्यक्ति से मित्रता या शत्रुता के नाते संबंध रखनेवाला दुर्योधन यह एक ही सामर्थ्यशाली व्यक्ति है। दुर्दम महत्त्वाकांक्षा, संकुचित मनोवृत्ति, क्रूरता, एवं विनाश प्रवृत्ति इन स्वभावगुणों के कारण, दुर्योधन भारतीययुद्ध एवं महाभारत का खलनायक तथा नायक इन दो रूपोंमें एक ही साथ प्रतीत होता है।

जन्म--इसके जन्म के बारे में, महाभारत में दी गयी सारी आख्यायिकाएँ हेतुतः वक्रोक्तिपूर्ण, एवं इसके बारे में पाठकों का मन कलुषित कर देनेवाली है। यह कलि के अंश से उत्पन्न हुआ था। इसलिये इसके कारण सारे क्षत्रियों का नाश हुआ (म. आ. ६१.८०)। जन्म होते

ही दुर्योधन रोया। इसका रुदन गधे के चिल्लाने जैसा था। इसके रोते ही गधे, गीध, सियार, कौवे, आदि चिल्लाने लगे। तूफान चलने लगा, एवं दसों दिशाओं में खलबली मच गई। धृतराष्ट्र अत्यंत भयभीत हुआ। उसने भीष्म, विदुर, अनेक ब्राह्मणों तथा आप्तों को बुला कर कहा, 'राजपुत्र युधिष्ठिर दुर्योधन से बड़ा है। वह हमारे वंश का विस्तार भी करेगा। इस पर हमारा कुछ आक्षेप नही है। किंतु उसके बाद दुर्योधन राजा बनना चाहिये। हमारी इच्छानुसार वह राजा बनेगा, या नहीं, एवं बाद में क्या होगा, यह बताइये'।

धृतराष्ट्र ने यह कहते ही, क्रूर तथा हिंस्र पशु फिर से चिल्लाने लगे। चारों ओर से भयंकर अपशकुन हुएँ। उपस्थित ब्राह्मण एवं विदुर ने धृतराष्ट्र से कहा, 'इस पुत्र के जन्मकाल में, चूँ कि इतने अपशकुन हुएँ है, इससे स्पष्ट है कि, यह कुलक्षय करेगा। इसलिये इसका त्याग करना ही उचित है। तुम्हारे कुल का क्षेम एवं संसार का कल्याण यदि तुम चाहते हो, तो इस पुत्र का त्याग करो' (म. आ. १०७)।

अस्त्रविद्या--दुर्योधन युधिष्ठिर से छोटा था। किंतु दुर्योधन एवं भीम का जन्म एक ही दिन हुआ था। बचपन में कौरव एवं पांडव इकट्ठे खेलते थे। धनुर्विद्या, अस्त्रविद्या आदि की शिक्षा, इन सब भाईयों ने मिलजुल के द्रोणाचार्य से ली थी (म. आ. १२२-१२३)। गदा-युद्ध की शिक्षा इसने बलराम से प्राप्त की थी (भा. १० ५७. २६; विष्णु. ४.१३)।

पांडवों को विषप्रयोग---पांडवों का युद्धकौशल्य एवं दिन ब दिन बढ़ता हुआ सामर्थ्य देख कर, कौरवों, एवं विशेष कर इसके मन में; उनके प्रति मत्सर उत्पन्न हुआ। हर एक जगह पाडवों के आगे जाने की ईर्ष्या इसके मन में उत्पन्न हुई। कौरव-पांडवों के गुरु द्रोणाचार्य ने गुरुदक्षणा के रूप में, द्रुपद को रणांगण में जीत कर लाने की आज्ञा की। पांडवों को फजीहत करने के हेतु दुर्योधन ने सर्व प्रथम द्रुपद को जीतने का प्रयत्न किया। किंतु दुर्योधन का यह प्रयत्न विफल हुआ, एवं कौरवों की दुर्दशा हुई।

धनुर्विद्या एवं अस्त्रविद्या में पांडव कौरवों से कतिपय श्रेष्ठ है, यह जान कर उनके नाश के लिये, यह नये-नये षड्यंत्र रचने लगा। सारा राज्य मुझे ही प्राप्त हो, इस लोभ के कारण यह पांडवों के नाश के नये-नये मार्ग ढूँढ़ता रहा। इसका मामा शकुनि एवं इसका मित्र कर्ण, उस कार्य में इसकी सहायता करने लगे।

एक बार भीम शहर के बाहर बाग़ में सोया था। उस वक्त, उसे गंगा नदी में फेंक कर, एवं अर्जुन तथा युधिष्ठिर को कैद कर, राज्य हासिल करने की तरकीब इसने सोची। गंगा नदी के किनारे प्रमाणकोटि तीर्थ पर इसने जलक्रीडा समारोह का आयोजन किया। सारे पांडवों को इसने उस समारोह के लिये बुलाया। भीम अत्यंत खुक्खड़ है, यह जान कर, उसके तयार अन्न में कालकूट विष इसेन मिलाया। एवं बडे ही प्रेम से वह अन्न भीम को खिलाया। बाद में कौरव पांडव सारे मिल कर जलक्रीड़ा करने गये। वहाँ जलविहार से भीम थक गया, तथा गंगा किनारे आराम से सो गया। वहाँ के ठंडे वायु ने तथा विषप्रभाव ने उसे निश्चेष्ट बना दिया। यह अवसर पा कर, दुर्योधन नें उसे गंगा नदी में ढकेल दिया (म. आ. १२७)। इस तरह, भीमरूपी कंटक अपनी राह में से दूर हुआ, यह सोच कर दुर्योधन को अत्यंत आनंद हुआ। किंतु भीम पुनः वापस आया, एवं इसकी यह अधम कृति, उसने बंधुओं को बताई। इस प्रकार भीम का वध करने का दुर्योधन का षड्यंत्र विफल रहा। फिर भी, भीम के सारथी को इसने गला घोंट कर मार ही दिया (म. आ. १२८)।

लाक्षागृहदाह—भीम का वध करने का यह प्रयत्न असफल होने के पश्चात्, पांडव एवं उनकी माता कुंती को जला कर मार डालने का व्यूह इसने रचा। इसने वारणावत-तीर्थ में, अपने मित्र पुरोचन द्वारा एक लाक्षागृह बनवाया। पश्चात्, धृतराष्ट्र के द्वारा पांडवों को, तीर्थयात्रा के निमित्त वारणावत भिजवाने की व्यवस्था इसने की। इसने बनायें लाक्षागृह में पांडव जल कर मरनेवाले ही थे, किंतु विदुर की सहायता से वे बच गये। उनकी जगह, अपने पाँच पुत्रों सहित एक भीलनी जल कर मृत हो गई। उनकी छः लाशें देख कर दुर्योधन अत्यंत आनंदित हुआ। लाक्षागृह की इस दुर्घटना का दोष लोगों ने कौरवों पर ही लगाया। इस प्राणसंकट से पांडव बच गये, यह ज्ञात होते ही दुर्योधन अत्यंत शरमाया (म. आ. १२९-१३८)। यह वृत्त धृतराष्ट्र को ज्ञात होने पर, उसने पांडवों को इन्द्रप्रस्थ में ला रखा। धृतराष्ट्र का यह कृत्य दुर्योधन को बिल्कुल अच्छा नहीं लगा।

विवाह---द्रौपदीस्वयंवर में दुर्योधन उपस्थित था (म. आ. १७७. १)। दुर्योधन ने, कलिंग देश के राजा

चित्रांगद की कन्या का, स्वयंवर में हरण किया (म. शां. ४. १२-१३)। काशिराज की कन्या दुर्योधन की स्त्री थी (म. आ. परि. १. क्र. १०७. पंक्ति १)। इसकी पत्नी का नाम भानुमती था (स्कंद. ६. ७३-७४)। यह बलराम का भी दामाद था (मार्क. ६. ३)। इसका पुत्र लक्ष्मण तथा कन्या लक्ष्मणा।

अर्धराज्य-प्रदान—धृतराष्ट्र ने पांडवों को आधा राज्य दे कर इन्द्रप्रस्थ में रखा। वहाँ उन्होंने अगणित संपत्ति प्राप्त की। युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ किया। उसमें दुर्योधन धृतराष्ट्रसहित आया था। दुर्योधन को कोशागार का अधिकार दिया था। पांडव फजीहत हो इस हेतु से, इसने कोशागार में से अपरिमित द्रव्य खर्च किया परंतु द्रव्य की कमी नहीं पड़ी। इसके अतिरिक्त पांडवों की मयसभा देख कर, इसे पांडवों के तथा उनकी संपत्ति के प्रति, बड़ी ही ईर्ष्या उत्पन्न हुई (म. आ. १२९. ९-१०)। मयसभा की रचना में पानी की जगह जमीन, तथा जमीन की जगह पानी दीखता था। इससे इसकी फजीहत हो कर, अन्य स्त्रियों के साथ द्रौपदी भी हँसी। इससे इसे अत्यंत विषाद हुआ। यह हस्तिनापुर चला गया (म. स. परि. १. क्र. ३२. पंक्ति ११; अध्याय ४३)। पांडवों की संपत्ति देख कर दुर्योधन को बुरा लगा। तब धृतराष्ट्र ने इसे शील का महत्त्व निवेदित किया (म. शां. १२४)। परंतु उससे इसे कुछ फायदा नहीं हुआ।

द्यूतक्रीडा—पांडवों की संपत्ति हरण करने के हेतु से, इसने कपटद्यूत में पारंगत शकुनि मामा की अनुमति से, युधिष्ठिर को द्यूत खेलने के लिये आवाहन किया। द्यूत में पांडवों का सर्वस्व इसने जीत लिया। द्रौपदी की इसने भरी सभा में अवहेलना करवाई। इसने भीष्म-द्रोण आदि के प्रतिकार की भी पर्वाह नहीं की। द्यूत में हार जाने के कारण, पांडवों को बारह वर्ष वनवास तथा एक वर्ष अज्ञातवास का स्वीकार करना पड़ा। इसके अतिरिक्त अज्ञातवास में प्रकट होने पर, पुनः बारह वर्षों तक वनवास करना पडेगा, यह शर्त भी उन पर डाली गयी। इस तरह, पांडवों को वनवास में भेज कर, यह उनके राज्य का उपभोग लेने लगा।

पांडवों के वनवास गमन के पश्चात्, कीर्तिप्राप्ति की इच्छा से, इसने नीति से राज्य किया। किंतु पांडव कहाँ हैं, क्या करते हैं आदि के बारे में गुप्त खोज यह हमेशा करता रहता था।

घोषयात्रा—एकबार, पांडव द्वैतवन में हैं, यह ज्ञात होते ही, घोषयात्रा के निमित्त यह वहाँ गया। इसके साथ इसके अनुयायी कर्ण, दुःशासन आदि थे। गोधन के अवलोकन के बाद, यह द्वैतवन के समीप, सरोवर में क्रीड़ा करने के लिये गया। उस वन में, पांडवों के संरक्षण के लिये, इन्द्र ने चित्रसेन गंधर्व को रखा था। चित्रसेन वही सरोवर में अपनी स्त्रियों के साथ जल क्रीड़ा कर रहा था। उसने दुर्योधन से वहाँ आने के लिये मनाई की। दुर्योधन ने उसे ही वहाँ से चले जाने के लिये कहा। इससे क्रोधित हो कर उन दोनों में युद्ध हुआ। उसमें चित्रसेन ने कर्ण को भगा दिया तथा दुर्योधन को बद्ध कर दिया।

एक सैनिक के द्वारा यह वृत्त पांडवों को मालूम हुआ। तब भीम को बड़ा अच्छा लगा। परंतु युधिष्ठिर ने पांडवों को उपदेश दे कर दुर्योधन को छुड़वाया। अर्जुन ने चित्रसेन का पराभव किया तथा दुर्योधन को छुड़ाया। धर्मराज को वंदन कर, मानहानि से क्रोधित हो कर, यह हस्तिनापुर वापस गया।

हस्तिनापुर वापस आते ही, इसके मित्र कर्ण ने इसका अभिनंदन किया। किंतु दुर्योधन ने उसे सारी घटना सुनाई तथा कहा कि, 'यह मुक्तता अर्जुन द्वारा हो गई है।' इसीलिये प्रायोपवेशन कर, प्राणत्याग करने का निश्चय इसने किया। अपने भाई दुःशासन को बुला कर, शकुनि तथा कर्ण की सहायता से, राज्य करने के लिये इसने उसे कहा। कर्ण तथा शकुनि ने इसे बहुत समझाया परंतु इसका निश्चय नहीं बदला। इसने वल्कल परिधान किये तथा दर्भासन पर यह बैठ गया। 'आथर्व मंत्र' कह कर इसने होमहवन शुरू किया। इतने में इसने एक स्वप्न देखा। उस स्वप्न में इसे दिखा कि, इसका सारा कौरवपरिवार एवं अनुयायी दैत्य ही है। पश्चात् एक राक्षसी की सहायता से, यह पाताल में गया। वहाँ दैत्यों ने आशीर्वाद दे कर इसे वापस भेज दिया। हस्तिनापुर आने के पश्चात्, भीष्म ने इसे पांडवों से सख्य करने के लिये कहा; परंतु इसने उसका उपहास किया (म. व. २३७-२४१)।

वैष्णवयज्ञ—इसके बाद, दुर्योधन ने कौरवों की ओर से, कर्ण को दिग्विजय के लिये भेजा। उसके आने के बाद, दुर्योधन ने राजसूय यज्ञ करने का निश्चय किया। परंतु पुरोहितों ने कहा, 'यह यज्ञ युधिष्ठिर द्वारा किया गया है, अतः तुम न कर सकोगे'। तब दुर्योधन ने 'वैष्णवयज्ञ' किया तथा खिजलाने के हेतू, पांडवों को यज्ञ का निमंत्रण

दिया। उस पर युधिष्ठिर ने आनंद प्रदर्शित कर कहा, 'तेरह वर्ष पूर्ण होने के पहले हम नहीं आ सकते' (म. व. २४१ -२४३)।

द्रौपदी सत्वपरीक्षा—पांडवों का नाश करने की ही इच्छा दुर्योधन के मन में हमेशा रहती थी। एक बार अपने 'अयुत' नामक शिष्यपरिवार के साथ दुर्वास ऋषि इसके पास आया। इसने दीर्घकाल तक दुर्वास की कठिन सेवा की। संतुष्ट हो कर दुर्वास ने इसे वर माँगने के लिये कहा। तब कर्ण, शकुनि आदि की सलाह से इसने वर माँगा, 'जिस प्रकार आप यहाँ अतिथि बन कर आये हैं, उसी प्रकार शिष्यों सह आप पांडवों के पास काम्यकवन में जायें तथा उनका भोजन होने के बाद, द्रौपदी से अन्न माँग कर उसे त्रस्त करें। द्रौपदी अन्न न दे सके, तो उसे शाप दें' यह चाल दुर्वास को अच्छी नहीं लगी, परंतु निरुपाय हो कर उसने इसे मान्यता दी। पश्चात् पांडवों के पास जा कर, दुर्वास ने अन्न की याचना की। द्रौपदी के द्वारा यह माँग पूरी होने के बाद, दुर्वास के शाप से पांडव बच गये (दुर्वास देखिये)।

विराटनगरी में—बारह वर्ष वनवास के बाद, विराट के घर अज्ञातवास करने के लिये पांडव गये। दुर्योधन को कीचकवध का समाचार मिला (म. वि. २९.२७)। इसको शंका आई, 'चाहे जो हो, पांडव विराट के घर ही होंगे। इस समय यदि उन्हें ढूँढा गया, तो उन्हें पुनः बारह वर्षों तक वनवास में रहना पड़ेगा'। पांडवों को ढूँढने के हेतु, विराट का गोधन हरण करने का बहाना इसने सोचा, एवं उस काम के लिये इसने सुशर्मा को भेज दिया। परंतु वहाँ सुशर्मा का पराभव हुआ। बाद में भीष्मादिकों को साथ ले कर, इसने उत्तर दिशा से विराट नगरी पर आक्रमण किया। उस समय भी यह पराजित हुआ।

संजयदौत्य—इस प्रकार जो भी उपाय इसने किये, सब निष्फल हो कर पांडव प्रकट हुएँ तथा उपप्लव्य नगर में रहने लगे। यथान्याय आधा राज्य हमें मिले, इस हेतु से, उन्हों ने द्रुपद राजा के पुरोहित को धृतराष्ट्र के पास भेजा। परंतु उसका कुछ उपयोग नहीं हुआ। उल्टे धृतराष्ट्र ने ही संजय को युधिष्ठिर के पास भेजा। संजय ने धृतराष्ट्र का संदेश पांडवों को बताया, 'तुम पांडव धर्मात्मा हो। इसलिये हिंसारूप युद्ध न करते हुए भिक्षा माँग कर कहीं भी स्वस्थ चित्त से वास करो। भिक्षा से उपजीविका करना क्षत्रियों के लिये निंद्य है ऐसा यदि तुम सोचते हो, तो क्षत्रियधर्म से तुम कृष्ण या द्रुपद के दरबार में रह सकते हो। कृष्ण तुम्हारा मित्र है। तथा द्रुपद तुम्हारा श्वशुर है। उसके पास रहने पर वे तुम्हें ना नहीं करेंगे। इसलिये दो में से एक मार्ग का स्वीकार कर राज्यविभाग न माँग कर, चुपचाप रहो,' (म. उ. २७)। संजय का यह भाषण सुन कर युधिष्ठिर को अत्यंत आश्चर्य हुआ। उसने कृष्ण को धृतराष्ट्र के पास भेजा (म. उ. ७०)। फिर भी उसका कुछ उपयोग न हो कर युद्ध के सिवा पांडवों को कोई चारा नहीं रहा। पांडव तथा दुर्योधन सेनाएँ इकट्ठी करने लगे। मद्रदेश का राजा शल्य, पांडवों के पक्ष में जाना चाहता था। बडी युक्ति से दुर्योधन ने उसे अपने पक्ष में ले लिया (म. उ. ८.५३*)। कृष्ण की सहायता प्राप्त करने के लिये, दुर्योधन स्वयं द्वारका गया था। अर्जुन तथा यह कृष्ण के यहाँ एक ही साथ पहुँचे। अर्जुन ने स्वयं कृष्ण तथा दुर्योधन ने समस्त यादव सेना, अपने लिये कृष्ण से माँग ली (म. उ. ७.१९-२०)। बाद में दुर्योधन कृतवर्मा के पास गया। उसने एक अक्षौहिणी सेना इसे दी (म. उ. ७.२९; १९.१७)।

कृष्णदौत्य—दुर्योधन को युद्ध से परावृत्त करने के लिये कृष्ण (म. उ. ९३), परशुराम (म. उ. ९४. ३), कृपाचार्य (म. श. ३), द्रोण (म. उ. १३७. २२), भीष्म (म. भी. ११६.४६) तथा अश्वत्थामा (म. क. ६४.२०) ने प्रयत्न किये; परंतु उसका कुछ उपयोग नहीं हुआ। कण्व ने भी उसे काफी उपदेश किया। परंतु कुछ उपयोग न हो कर, इसने कण्व का केवल उपहास किया। इस कारण कण्व ने इसे शाप दिया (म. उ. ९५)।

पांडवों की ओर से, दौत्य करने के लिये कृष्ण हस्तिनापुर में आया। उस समय, दुर्योधन ने कृष्ण को भोजन के लिये बुलाया। किंतु कृष्ण ने उसे अस्वीकार कर दिया (म. उ. ८९.३२)। पश्चात् धृतराष्ट्र के दरबार में इसने कृष्ण से कहा, सुई के अग्र पर रहेगी, इतनी भी भूमि हम पांडवों को नहीं देंगे (म. उ. १२५.२७)। इतना कह कर भरी सभा से यह अपने बंधु तथा अनुयायियों सहित चला गया (म. उ. १२६.२४-२७)। कृष्णदौत्य के समय कृष्ण को कैद करने का षड्यंत्र इसने रचा था, किंतु वह असफल हो कर पुनः इसकी फजीहत हुई।

भारतीययुद्ध—इस प्रकार युद्ध प्रारंभ हुआ। कौरवपक्ष का पहला सेनापति भीष्म था। उसके बाद, अश्वत्थामा तक अनेक सेनापति हुएँ परंतु उनके होते हुए भी दुर्योधन का अनेक बार पराजय ही हुआ।

प्रमुख योद्धाओं का रण में पतन होने के बाद, दुर्योधन अत्यंत भयभीत हुआ (म. श. २८.२४)। अन्त में 'जलस्तंभन विद्या' के योग से यह द्वैपायन सरोवर के जल में छिप कर बैठ गया (म. श. २९.७)। यह वृत्त पांडवों को ज्ञात हुआ, तब वे वहाँ आये। उस समय दुर्योधन बाहर नहीं आता था, इसलिये युधिष्ठिर ने इसके साथ कठोर भाषण किया (म. श. ३०)।

मृत्यु—दुर्योधन बड़ा मानी तथा जिद्दी था। युधिष्ठिर के कहने पर द्वैपायन ह्रद से यह बाहर आया। गदायुद्ध की तय्यारी होने लगी। युधिष्ठिर ने इसे उदार भाव से कहा, 'पांडवों में से किसी एक के साथ तुम युद्ध करो। उस युद्ध में तुम्हारा जय होने पर, तुम्हारा राज्य तुम्हे वापस देने का आश्वासन हम देते हैं'। नकुल एवं सहदेव से गदायुद्ध कर के, उनका पराजय करना इसके लिये आसान था। फिर भी इसने तुल्यबल भीम को ही युद्ध के लिये आवाहन किया। आखिर भीम नें गदायुद्ध के नियम तोड़ कर इस पर गदाप्रहार किया एवं इसका वध किया (म. श. ३३)।

भीम नें गदा युद्ध के नियम तोड़ कर इसकी बायी जाँघ गदाप्रहार से छिन्नभिन्न कर दी। गदायुद्ध का सर्वमान्य संकेत है कि, नाभि के नीचे कभी भी प्रहार नही किया जाता। फिर भी गदायुद्ध में दुर्योधन का पराजय अशक्य देख कर जंघा पर गदाप्रहार करने का इशारा कृष्ण ने भीम को किया। उस इशारे के अनुसार गदा प्रहार कर के भीम ने दुर्योधन की बायी जाँघ तोड डाली। यह अधर्म देख कर बलराम भडक उठा। यह घटना मार्गशीर्ष वदि अमावस्या के दिन दोपहर में हुई (भारतसावित्री)।

दुर्योधन का मनोगत—मृत्यु के पहले, कृष्ण एवं दुर्योधन में जो संवाद हुआ, उससे दुर्योधन का व्यक्तित्व, मनोगत एवं मनोव्यथाओं पर गहरा प्रकाश पडता है। महाभारत के शल्यपर्व में दिया गया यह संवाद, दुर्योधनचरित्र की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

मृत्युशय्या पर पडे हुए दुर्योधन की ओर इशारा कर के कृष्ण ने कहा, 'इस दुर्योधन ने लोभवश, भीष्म द्रोण आदि का आज्ञापालन नहीं किया। अपने पिता के राज्य का उचित हिस्सा पांडवों द्वारा माँगने पर भी इसने नहीं दिया। यह अधम पुरुष न तो मित्र कहने के लायक है, न शत्रु। इस अवयवभग्न एवं काष्ठवत् मनुष्य के साथ बात करने में कुछ फायदा नहीं। चलो चलें। बडी अच्छी बात हुई, जो यह पापी पुरुष अपने बांधवों के साथ नष्ट हुआ।

कृष्ण का यह निंदागर्भ वक्तव्य सुन कर, दुर्योधन, यद्यपि खून से लथपथ तथा शक्तिहीन था, घुटनों के बल धरती पर हाथ टेक कर, ऊपर उछल पडा। जैसा कोई पूँछहीन साँप उछल कर सीधा खडा हो जाय। अपनी द्वेषभरी नजर चारों ओर घुमा कर, वेदना की तीव्रता के बावजूद, यह ठोस एवं कडे शब्दों में बोला, 'हे कंस के दास के पुत्र, तू बड़ा ही बेशरम है। भीम को जंघाघात करने को प्रेरित कर, तू ने मेरा अधर्म से वध किया है। धर्मयुद्ध करने वाले कुरुकुल का तू ने ही कुटिलता से संहार किया है'।

'लज्जा एवं घृणा ये चीजें तेरे पास नहीं है। शिखंडी को आगे बढ़ा कर, पितामह भीष्म को तू ने मारा। अश्वत्थामावध की किंवदन्ती उड़ा कर, तू ने ही द्रोण का वध करवाया। अर्जुनवध के लिये कर्ण ने रखी हुई 'अमोघशक्ति' घटोत्कच पर खर्च करने के लिये कर्ण को, तू ने ही विवश किया। हस्तविहीन भूरिश्रवा का वध तू ने ही करवाया। कर्ण के सर्पबाण से, रथ को जमीन में दबा कर, अर्जुन को तू ने ही बचाया। भूमि में फँसे हुए रथ चक्र को कर्ण बाहर निकाल ही रहा था, कि तू ने अधर्म से उस का वध करवाया। सीधे मार्ग से लड़ने पर, जय मिलना पांडवों के लिये असंभव था। इस कारण, अधर्म से लड़ने पर तू ने पांडवों को विवश किया'।

दुर्योधन ने आगे कहा, 'आयु भर, मैं ने दानधर्म किया, अत्युत्तम राज्य चलाया, धर्म एवं नीति के साथ आचरण किया। आखिर तक मैं ने धर्मयुद्ध किया, एवं धर्मयुद्ध करते करते ही मैं जा रहा हूँ। देवदुर्लभ तथा मानवों को अप्राप्य ऐश्वर्य का उपभोग मैं ले चुका हूँ। आज वैसा ही मृत्यु मुझे मिल रहा है। मैं सबांधव स्वर्ग सिधारूँगा। किंतु अधर्म पर चलनेवाले तुम, नरक में ही गमन करोगे'।

दुर्योधन के इस प्रकार कहने पर, उसपर आकाश से देवगंधर्वों द्वारा फुलों की बौछार हुई। स्वयं कृष्णार्जुन यह देख कर चकाचौंध हो गये, फिर साधारण जनता का क्या पूँछे? पश्चात् सारे लोग युद्धनिवासस्थान पर वापस लौटे

पश्चात् संजय दुर्योधन को मिलने के लिये आया। उस समय भी अन्य समाचार के साथ, दुर्योधन ने अपने धर्माचरण की गवाही पुनः पुनः दी।

अश्वत्थामा खबर लेने पहुँचा। दुर्योधन ने उसे सैनापत्य दे कर, फिर यही बात दुहरायी। अपना धर्मपालन तथा पांडवों के अनीतिमय आचरण का कड़ा निषेध इसने व्यक्त किया। अश्वत्थामा क्रोधवश पांडवों के संहारार्थ निकला। लगभग पूरे संहार की खबर दुर्योधन को स्वयं अश्वत्थामा ने दी। उस पर दुर्योधन ने संतोष व्यक्त किया, तथा यह पंचतत्त्व में विलीन हुआ (म. सौ. ९)।

दुर्योधन के अग्निसंस्कार का निर्देश प्राप्त नहीं है। फिर भी यह स्वर्ग में देवताओं के साथ बैठा हुआ युधिष्ठिर ने प्रत्यक्ष देखा (म. स्वर्गा. १.४-५)।

कौटिल्य के मत में, बांधवों के साथ वैर करने से इसका नाश हुआ (कौटिल्य. अर्थशास्त्र. पृ. २२)।

२. (सू. इ.) दुर्जय राजा का पुत्र। इसकी पत्नी नर्मदा। इसे सुदर्शना नामक कन्या थी। वह अग्नि को विवाह में दी गयी थी (म. अनु. २.१२-५० कुं.)।

दुर्व--(सो. कुरु. भविष्य.) नृपंजय राजा का पुत्र। मत्स्यमत में उर्व तथा विष्णुमत में मृदु पाठभेद है।

२. बुध ७. देखिये।

दुर्वाक्षी--वसुदेव के भाई वृक की पत्नी।

दुर्वार--कुंडलनगराधिपति सुरथ राजा का पुत्र। सुरथ राजा ने राम का अश्वमेधीय अश्व पकड़ लिया। उस अश्व को छुडाने के लिये शत्रुघ्न ने सुरथ से युद्ध किया। उस युद्ध में यह शामिल था (पद्म. पा.४९)।

दुर्वारण--जालंधर दैत्य का दूत। जालंधर की आज्ञानुसार, क्षीरसागर से देव-दैत्यों ने निकाले चौदह रत्न माँगने के लिये, यह इंद्र के पास गया। परंतु उन्हें देने से इन्कार कर, इंद्र ने जालंधर से युद्ध घोषित किया। पश्चात् देव दैत्यों का संग्राम हो कर, उस में यम के साथ इसका युद्ध हुआ (पद्म. उ. ५)। बाद में विष्णु या शंकर में से प्रथम किससे युद्ध किया जाये, यह समस्या जालंधर के सामने आई। तब इसने उसे सलाह दी, 'वह प्रथम शंकर से युद्ध करें' (पद्म. उ. १६)।

दुर्वासस् आत्रेय--बडे उग्र तथा क्रोधी स्वभाव का एक ऋषि (मार्क. १७.९-१६, विष्णु. १.९.४.६)। इसीके नाम से, क्रोधी एवं दूसरे को सतानेवाले मनुष्य को 'दुर्वासस्' कहने की लोकरीति प्रचलित हो गयी हैं।

जन्मकथा--दुर्वासस् का जन्म किस प्रकार हुआ, इसकी तीन अलग कथाएँ प्राप्त है। वे इस प्रकार हैः--

(१) ब्रह्माजी के मानसपुत्रों में से, दुर्वासस् एक था।

(२) अत्रि तथा अनसूया के तीन पुत्रों में से, दुर्वासस् एक था (भा. ४.१, विष्णु. १.२५)। पुत्रप्राप्ति के हेतु, अत्रि त्र्यक्षकुल पर्वत पर तपस्या करने गया। वहाँ उसने काफी दिनों तक तपस्या की। उस तपस्या के कारण, उसके मस्तक से प्रखर ज्वाला निकली, एवं त्रैलोक्य को त्रस्त करने लगी। पश्चात् ब्रह्मा, विष्णु, एवं शंकर अत्रि के पास आये। अत्रि का मनोरथ जान कर, अपने अंश से तीन तेजस्वी पुत्र होने का वर उन्होंने अत्रि को दिया। उस वर के कारण, अत्रि को ब्रह्मा के अंश से सोम (चंद्र), विष्णु के अंश से दत्त, एवं शंकर के अंश से दुर्वासस् ये तीन पुत्र हुएँ (शिव. शत. १९)।

(३) शंकर के अवतारों में से दुर्वासस् एक था (मार्क. १७.९-११; विष्णु. १.९.२)। शंकर ने त्रिपुर का नाश करने के लिये एक बाण छोड़ा। त्रिपुर का नाश करने के बाद, वह बाण छोटे बालक का रूप ले कर, शंकर की गोद में आ बैठा। उस बालक को ही दुर्वासस् नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. १६०.१४-१५)।

पुराणों में इसे अत्रि ऋषि का पुत्र एवं दत्त आत्रेय का भाई कहा गया है (ब्रह्म. ११७.२; अग्नि. २०.१२)। किंतु कौन से निश्चित काल में यह पैदा हुआ, यह कहना मुश्किल है। पौराणिक कथाओं में, कालदृष्टि से परस्परों से सुदूर माने गये अनेक राजाओं के साथ, इसका निर्देश प्राप्त है। उनके नाम इस प्रकार हैः--(१) अंबरीष (भागवत. ९.४.३५), (२) श्वेतकि (म. आ. परि. १. ११८), (३) राम दाशरथि (पद्म. उ. २७१.४४), (४) कुन्ती (म. आ. ६७), (५) कृष्ण (ह. वं. २९८-३०३), (६) द्रौपदी (म. व. परि. १ क्र. २५)।

इन निर्देशों से, प्रतीत होता है कि, नारद के समान दुर्वासस् भी तीनों लोक में अप्रतिबंध संचार करनेवाली एक अमर व्यक्तिरेखा थी। इंद्र से अंबरीष, राम एवं कृष्ण तक, तथा स्वर्ग से पाताल तक किसी भी समय या स्थान, प्रकट हो कर, अपना विशिष्ट स्वभाव दुर्वासस् दिखाता है। कालिदास के 'शाकुंतल' में भी, शकुंतला की संकटपरंपरा का कारण, दुर्वासस् का शाप ही बताया गया है। क्रुद्ध हो कर शाप देना, एवं प्रसन्न हो कर वरदान देना, यह दुर्वासस् के स्वभाव का स्थायिभाव था। इस कारण सारे लोग इससे डरते थे।

इसका स्वभाव बड़ा ही क्रोधी था। इसके क्रोध की अनेक कथाएँ पुराणों में दी गयी है। यह स्वयं कठोर व्रत का पालन करनेवाला तथा गूढ स्वभाव का था। इसके मन में क्या है, इसका पता यह किसी को नहीं लगने देता था।

स्वरूपवर्णन—इसका वर्ण कुछ पिंग-हरा तथा दाढी बहुत ही लंबी थी। यह अत्यंत कृश तथा पृथ्वी के अन्य किसी भी ऊँचे मनुष्य से अधिक ऊँचा था। यह हमेशा चिथड़े पहनता था। एक बिल्ववृक्ष की लंबी लकड़ी हाथ में पकड़ कर तीनों लोकों में स्वच्छन्दता से घुमने की इसकी आदत थी (म. व. २८७.४-६; अनु. १५९. १४-१५)। अपने क्रोधी स्वभाव से यह हमेशा लोगों को त्रस्त करता था।

और्व ऋषि की कन्या कंदली इसकी पत्नी थी। एक-बार इसने क्रोधित हो कर, शाप से उसको जला दिया (ब्रह्मवै. ४.२३-२४)।

जाबालोपनिषद में इसका निर्देश है (जा. ६; नारद तथा वपु देखिये)। नैमिनिगृह्यसूत्र के उपाकर्मांग तर्पण में दुर्वासस् का निर्देश है। उस से ज्ञात होता है कि यह एक सामवेदी आचार्य था। इसके नाम पर; आर्याद्विशती, देवीमहिम्नस्तोत्र, परशिवमहिमास्तोत्र, ललितास्तवरत्न आदि ग्रंथों का निर्देश है (C.C.)।

दुर्वासस् के क्रोध की एवं अनुग्रह की अनेक कथाएँ पुराणों में दी गयी है। उनमें से कुछ उल्लेखनीय कथाएँ नीचे दी गयी हैं।

अनुग्रह-कथा—(१) श्वेतकि नामक राजा का यज्ञ इसने यथासांग पूर्ण करवाया (म. आ. परि. १.११८)।

(२) एक बार शिलोञ्छवृत्ति से रहनेवाले मुद्गल की सत्वपरीक्षा इसने ली। अनन्तर उस पर अनुग्रह कर के, इसने उसे सदेह स्वर्ग जाने का वरदान दिया (म. व. २४६)।

(३) कुन्ती की परिचर्या से संतुष्ट हो कर, इसने कुन्ती को देवहूती नामक विद्या दी। उस विद्या के कारण, कुन्ती को इंद्रादि देवताओं से कर्णादि छः पुत्र हुएँ। (भा. ९.२४.३२)। इसने कुंती को 'अथर्वशिरस् मंत्र' भी दिए थे (म. व. २८९.२०)।

(४) एक बार स्नान करते समय, इसका वस्त्र बह गया। नग्न स्थिति में पानी के बाहर आना, इसे लज्जास्पद एवं कष्टकर महसूस हुआ। इसी समय पानी के उपरी भाग में द्रौपदी स्नान कर रही थी। दुर्वासस् की कठिनाई देख कर; उसने अपने वस्त्र का पल्ला फाड कर पानी के प्रवाह में उसे बहा दिया। उस पल्ले से इसका लज्जारक्षण हुआ। द्रौपदी की समयसूचकता से इसे अत्यंत आनंद हुआ। इस उपकार का प्रतिसाद देने के लिये, इसने द्रौपदी वस्त्रहरण के प्रसंग में, द्रौपदी का लज्जा-रक्षण किया (शिव. शत. १९)।

क्रोध-कथा—(१) स्वायंभुव मन्वन्तर में, एक विद्याधर द्वारा दी गई पुष्पमाला इसने इंद्र को दी। इंद्र का ध्यान न रहने के कारण, वह माला ऐरावत के पैरों के नीचे कुचली गयी। माला के इस अपमान को देख कर, यह भड़क उठा। इसने इंद्र को शाप दिया, 'तुम्हारी संपत्ति नष्ट हो जायगी'। इंद्र ने क्षमा माँगी। फिर भी इसने उःशाप नहीं दिया। तब विष्णु की आज्ञा से इंद्र ने समुद्रमंथन कर के संपत्ति पुनः प्राप्त की (विष्णु. १.९; पद्म. सृ. १-४)। समुद्रमंथन का यह समारोह चाक्षुष मन्वन्तर में हुआ (भा. ९.४; पद्म. सृ. २३१-२३३; ब्रह्म. वै. २.३६; स्कंद. २.९.८-९)।

(२) एक बार अम्बरीष राजा को इसने बिना किसी कारण ही त्रस्त किया। किंतु पश्चात् विष्णुचक्र से भीषित बचने के लिये, इसे अम्बरीष के ही पैर पकड़ने पड़े (अम्बरीष २. देखिये)।

(३) एकबार दुर्वासस् ने एक हजार वर्षों का उपवास किया। उस उपवास के बाद भोजन पाने के लिये, यह दाशरथि राम के पास गया। उस समय राम, काल से कुछ संभाषण कर रहा था। किसी को अन्दर छोड़ना मना था। आज्ञाभंग का दंड मृत्यु था। इस कारण, लक्ष्मण ने दुर्वासस् को भीतर जाना मना किया। दुर्वासस् क्रुद्ध हो कर शाप देने को तैयार हो गया। यह देख कर लक्ष्मण ने इसे भीतर जाने दिया। राम ने इच्छित भोजन दे कर इस को तृप्त किया। किंतु लक्ष्मण को आज्ञाभंग के कारण, देह छोड़ना पड़ा (वा. रा. उ. १०५; पद्म. उ. २७१)।

(४) एक बार द्वारका में यह कृष्णगृह में गया। कृष्ण ने अनेक प्रकार से इसका स्वागत किया। इसने कृष्ण का 'सत्वहरण' करने के लिये, काफी प्रयत्न किये। इसने अपनी जूठी खीर, कृष्ण तथा रुक्मिनी के शरीर को लगायी। उन्हें रथ में जोत कर, द्वारका नगरी में यह घूमने लगा। राह में रुक्मिणी थक कर धीरे-धीरे चलने लगी। तब इसने उसे कोड़े से मारा। फिर भी कृष्ण ने सहनशीलता नहीं छोड़ी। तब प्रसन्न हो कर दुर्वासस् ने कृष्ण

को वर दिया, 'तेरे शरीर के जितने भाग को जूठी खीर लगायीं है, उतने सारे भाग वज्रप्राय होंगे एवं किसी भी शस्त्र का प्रभाव उनपर नहीं पडेगा' (म. अनु. २६४ कुं.)। रथ खींचते समय, थक कर रुक्मिणी को प्यास लगी। तब कृष्ण ने उसे पीने के लिये पानी दिया। तब अपनी आज्ञा के बिना रुक्मिणी ने पानी पिया, यह देख कर दुर्वासस् ने उसे शाप दिया, 'तुम भोगावती नामक नदी बनोगी, मद्यादि पदार्थों का भक्षण करोगी, तथा पतिविरही बनोगी' (स्कन्द. ७. ४. २-३)।

(५) पांडव वनवास गये थे, तब दुर्वासस् ऋषि दुर्योधन के पास गया। दुर्योधन ने उसकी उत्कृष्ट सेवा की। तब प्रसन्न हो कर दुर्वासस् ने उसे वर माँगने के लिये कहा। दुर्योधन ने कहा, 'पांडव तथा द्रौपदी का भोजन होने के बाद, आप उनके पास भोजन माँग ने जायें, तथा आपकी इच्छा पूर्ण न होने पर उन्हें शाप दें'। दुर्योधन का यह भाषण सुन कर यह पांडवों का सत्वहरण करने के लिये, उनके पास गया। परंतु वहाँ भी इसकी कृष्ण के कारण, फजीहत हुई। यह कथा, केवल महाभारत के बंबई आवृत्ति में दी गयी है (म. व. परि. १ क्र. २५)।

(६) ब्रह्मदत्त के पुत्र हंस तथा डिंभक मृगया करते हुएँ दुर्वासस् के आश्रम में गये। वहाँ उन्होंने आश्रम का विध्वंस कर दुर्वासस् को अत्यंत कष्ट दिये। उस समय इसने अपना हमेशा का क्रोधी स्वभाव छोड़ सहनशीलता दर्शाई। परंतु बाद में हंस डिंभक अधिक ही त्रस्त करने लगे, तब कृष्ण के पास इसने शिकायत की, एवं कृष्ण से उनका वध करवाया (ह. वं. ३. १११-१२९)।

(७) तीर्थाटन करने के बाद, यह काशी में शिवाराधना करने लगा। काफी तपस्या करने के बाद भी शंकर प्रसन्न नहीं हुआ, तब यह शंकर को ही शाप देने लगा। यह देख कर शंकर को इसके प्रति, वात्सल्ययुक्त प्रेम का अनुभव हुआ। उसने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर इसे संतुष्ट किया (स्कन्द ४.२.८५)।

(८) दुर्वासस् एक बार गोमती के तट पर, स्नान करने गया था। उस समय, कई दैत्य वहाँ आये तथा उन्होंने दुर्वासा को पीटा। राक्षसनाश के लिये दुर्वासस् ने कृष्ण की आराधना की (स्कन्द ७.४.१८)।

(९) एक बार यह तप कर रहा था। इसके इस तप के कारण, सारे देव भयभीत हो गये। उन्होंने वपु नामक अप्सरा को, इसका सत्वहरण करने के लिये भेजा। उसका पापी हेतु जान कर, दुर्वासस् ने उसे शाप दिया, 'तुम गरुड पक्षिणी बनोगी' (मार्क. १)।

दुर्विगाह--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दुर्विनीत--पांड्य देश के इध्मवाहन का पुत्र। यह मातागमनी था। धनुष्कोटि तीर्थ में स्नान करने से यह मुक्त हुआ (स्कंद. ३.१.३५)।

दुर्विमोचन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. श. २५.१३)।

दुर्विरोचन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. १२०.६२)।

दुर्विषह--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. श. २५. १६)।

दुलिदुह--(सू. इ.) अनमित्र का पुत्र। यह महान् ज्ञाता था (ब्रह्मा. ८.८४; ह. वं. १.१५.२४)। अन्य प्रसिद्ध पुराणों में इसका नाम नहीं है (म. आ. १.१७३)।

दुवस्यु--वान्दन देखिये।

दुष्कंत--एक राजा। रावण ने इसे जीता था।

दुष्कर्ण--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। शतानीक ने इसका वध किया (म. भी. ७५.४८-४९)।

२. भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १३०.३४)।

दुष्टरीतु--संभवतः एक व्यक्ति का नाम (ऋ. २.२१. २; ६.१.१)।

दुष्टरीतु पौंस्यायन--सृंजय लोगों का राजा। इसके वंश में, लगातार दस पीढीयों से चलते आये राज्य से, इसे च्युत किया गया। परंतु चाक्र स्थपति ने बाह्लिक प्रातिपीय के विरोध की पर्वाह न करते हुए, इससे सौत्रामणी यज्ञ करवाया एवं इसे पुनः गद्दी पर बैठाया (श. ब्रा. १२.९. ३.१-३; १३)। दुष्टरीतु शब्द ऋग्वेद में दो बार आया है। किंतु वहाँ वह शब्द व्यक्तिवाचक है या नहीं, यह कहना मुष्किल है (ऋ. २.२१.२; ६.१.१)।

दुष्पण्य--पशुमान का पुत्र। दूसरे के लड़कों को भगा कर, यह पानी में डुबो देता था। राज्य की सीमा के बाहर निकाल देने पर भी, यह वही कार्य करता रहा। इसलिये ऋषियों ने इसे पिशाच होने का शाप दिया। किंतु सुतीक्ष्ण ने अग्नितीर्थ पर इसका क्रिया-कर्मांतर करने से यह मुक्त हो गया (स्कंद. ३.१.२२)।

दुष्प्रधर्ष--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. श. २५.१५)।

दुष्प्रधर्षण—धृतराष्ट्र का पुत्र। द्रौपदी के स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१)।

दुष्प्रहर्ष--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. श. २६.१८-१९)।

दुष्यंत--(सो. पूरु.) का सुविख्यात राजा एवं 'चक्रवर्ति' सम्राट् भरत का पिता। वैशाली देश का तुर्वसु राजा एवं करंधम का पुत्र 'चक्रवर्ति' मरुत्त आविक्षित ने 'पौरव' वंश में जन्मे हुए दुष्यंत को गोद में लिया। कुरुवंशीयों का राज्य मांधातृ के समय से हैहय राजाओं ने कबजे में लिया था। वह इसने पुनः प्राप्त किया, एवं गंगा तथा सरस्वती नदीयों के बीच में स्थित प्रदेश में अपना राज्य पुनः स्थापित किया। इसलिये इसे 'वंशकर' कहा जाता है (म. आ. ६२.३; भागवत. ९.२३.१७-१८)।

दुष्मंत, दुःषन्त आदि इसीके ही नामांतर थे। इसके पुत्र भरत को 'दौष्यन्ति' 'दौःषन्ति' आदि नाम इसके इन नामों से प्राप्त हुए थे (ऐ. ब्रा. ८.२३; श. ब्रा. १३.५.४.११-१४)। शतपथ ब्राह्मण के उपरोक्त उद्धरण में, भरत का पैतृक नाम 'सौद्युम्नि' दिया गया है। वह वस्तुतः 'दौष्यन्ति' चाहिये। मत्स्य पुराण में दुष्यंत को ही भरत दौष्यंति कहा है (मत्स्य. ४९.१२)।

इसके जन्मदातृ पिता एवं माता के नाम के बारे में एकवाक्यता नहीं है। भागवत में इसे रैभ्य राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.२०.७)। भविष्यमत में, इसके पिता का नाम तंसु था। हरिवंश में, तंसु के दुष्यंत आदि चार पुत्र दिये गये है (ह. वं. १.३२.८)। किंतु विष्णुपुराण में दुष्यंत को तंसुपुत्र अनिल का पुत्र कहा गया है (विष्णु ४.१९)। महाभारत 'कुंभकोणम्' आवृत्ति में इसके पिता का नाम ईलिन दिया है (म. आ. ८९.१४; मत्स्य. ४९.१०)। ईलिन को दुष्यंत आदि पाँच पुत्र थे, ऐसा भी उल्लेख मिलता है। ब्रह्मांड में इसे ईलिन का नाती कहा गया है। वायु पुराण में इसके पिता का नाम मलिन दिया है। इसके पिता के नाम के संबंध में जैसी गड़बड़ी दिखती है, उसी तरह इसकी माता के नाम के बारे में भी दिखाई पड़ती है। इसकी माता के उपलब्ध नाम है उपदानवी (वायु. ६९.२४), रथंतरी (म. आ. ९०.२९)।

पौरव वंश के इतिहास में, तंसु से दुष्यंत के बीच के राजाओं के बारे में, पुराणों में एकवाक्यता नहीं है।

लक्षी नामान्तर से इसे लक्षणा नामक दूसरी भार्या तथा उसे जनमेजय नामक पुत्र था। यह जानकारी महाभारत की कुंभकोणम् आवृत्ति में प्राप्त है (म. आ. ९०.९०१*; ८९.८७७*)। इसकी राजधानी गजसाह्वय (हस्तिनापुर) थी (म. आ. ६८.१२)।

तुर्वसु कुलोत्पन्न करंधम के पुत्र मरुत्त राजा ने अपना पुत्र मान कर, इसे अपना सारा राज्य दिया (भा. ९.२३.१६-१७; विष्णु. ४.१६)। यह राज्यलोलुप था। इसलिये इसने राज्य स्वीकार किया। राज्य मिलने के बाद, यह पुनरपि पौरववंशी बन गया (भा. ९.२३.१८)। ययाति के शाप के कारण, मरुत्त राजा का यह वंश पुरुवंश में शामिल हो गया (मत्स्य. ४८.१-४)। ययाति के शाप से, इसका तुर्वसु वंश से संबंध आया (वायु. ९९.१-४)।

ब्रह्मपुराण में तुर्वसुवंशीय करंधमपुत्र मरुत्त ने, अपनी संयता नामक कन्या संवर्त को देने के बाद, उन्हें दुष्यंत पौरव नामक पुत्र हुआ, ऐसा उल्लेख है (१३)। हरिवंश में यही हकीकत अलग ढंग से दी गयी है। यज्ञ करने के बाद, मरुत्त को सम्मता नामक कन्या हुई। वह कन्या उसने यज्ञ दक्षिणा के रूप में, संवर्त नामक ऋत्विज को दी। पश्चात् संवर्त ने वह कन्या सुघोर को दी। उससे सुघोर दुष्यंत नामक पुत्र हुआ। दुष्यंत अपनी कन्या का पुत्र होने के कारण, मरुत्त ने उसे अपनी गोद में ले लिया। इसी कारण तुर्वसु वंश पौरवों में शामिल हुआ (१.३२)।

पौरवों का छीना गया राज्य दुष्यंत ने पुनः प्राप्त किया, तथा पुरु वंश की पुनः स्थापना की। यह स्थिति प्राप्त होने के पहले ही, इसका दत्तविधान हुआ होगा। इसका राज्य हैहयों ने नष्ट कर दिया था। इसीलिये इस राज्यच्युत राजपुत्र को गोद लिया गया होगा। परंतु पौरवों की सत्ता को पुनर्जीवित करने के हेतु से यह अपने को पौरववंशीय कहने लगा। पौरव सत्ता का पुनरुज्जीवन, दुष्यंत ने हैहय सत्ता सगर द्वारा नष्ट की जाने पर, तथा सगर के राज्य के नाश के बाद ही किया होगा। अगर ऐसा होगा, तो यह मरुत्त से एक दो पीढियाँ तथा सगर से दो पीढियाँ आगे होगा।

एक बार यह मृगया के हेतु से, कण्व काश्यप ऋषि के आश्रम में गया। वहाँ इसने काण्व आश्रम में शकुन्तला को देखा। कण्व काश्यप बाहर गया हुआ था। इसलिये परस्पर संमति से दुष्यन्त एवं शकुंतला का गांधर्वविवाह हो गया। बाद में शकुन्तला को इससे गर्भ

रह कर भरत नामक पुत्र हुआ। परंतु यह विवाह छुपके से किये जाने के कारण, शकुंतला को यह अस्वीकार करने लगा। बाद में आकाशवाणी ने सत्य परिस्थिति बतायी। तब राजा को उसके स्वीकार में कुछ बाधा नहीं रही (म. आ. २. ६३-६९; ९०; द्रो. परि. १. क्र. ८, पंक्ति ७३० से आगे; शां. २९; आश्व. ३; भा. ९.२०. ७-२२; विष्णु. ४. १९-२१; ह. वं. १. ३८; वायु. ९९. १३२)। शकुंतला को दोषवती मानने से इसे दुष्यंत नाम प्राप्त हुआ, ऐसा इसके 'दुष्यंत' नाम का विश्लेषण 'शब्दकल्पद्रुम' में दिया है (दुष दोषवती मन्यते शकुन्तलाम् इति)। शकुन्तला से इसे भरत नामक पुत्र हुआ। उसे ब्राह्मण ग्रंथों में दौष्यंति नाम से, एवं अन्य ग्रंथों में सर्वदमन कहा गया है। दुष्यंत को पौरव कुल का आदि संस्थापक माना जाता है। राज्यशकट चलाने की इसकी पद्धति बहुत अच्छी थी (म. आ. ६२)।

२. (सो. अज.) अजमीढ का पुत्र। इसकी माता नीली (म. आ. ८९.२८)। परमेष्ठिन् राजा इसका भाई था। उत्तर एवं दक्षिण पंचाल देशों का राजवंश इन दो भाईयों से शुरू हुआ।

दूरसोम—मणिभद्र एवं पुण्यजनी का पुत्र।

दूर्व—गौड देश का एक ब्राह्मण (गणेश. १.३६.७६)।

दूषण—खर राक्षस का भाई (म. व. २६१.४३)। वज्रवेग तथा प्रमाथी नामक इसे दो भाई और थे। राम ने इसका वध किया (भा. ९.१०; म. व. २६१.४३)।

२. विश्ववसु एवं वाका का पुत्र।

दूषणा—ऋषभदेव के वंश के भौवन राजा की पत्नी। इसका पुत्र त्वष्टा।

दृढ—धृतराष्ट्र के पुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११२.३०; १३२.११३५*, पंक्ति २)।

२. दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। इसका अदृढ नाम भी उपलब्ध है (म. क. ४.४१)।

दृढक्षत्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढच्युत आगस्त्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.२५)। यह अगस्त्य ऋषि एवं कृष्णेक्षणा का पुत्र था। इसीलिये इसका पैतृक नाम 'अगस्ति' दिया गया है। विभिंदुकीय के सत्र में यह उद्गाता था (जै. ब्रा. ३.२३३)। इसका पुत्र इध्मवाह (भा. ४.२८)।

दृढजयंत—विपश्चित् दृढजयंत लौहित्य देखिये।

दृढद्युम्न—दृढस्यु का नामांतर।

२. अगस्त्य गोत्र का मंत्रकार (मत्स्य. १४५.११४-११५)। दृढायु इसीका नामांतर था (ब्रह्मांड. २.३२. ११९-१२०)

दृढधनु—(सो. अज.) विष्णु तथा वायु के मत में सेनजित् का पुत्र। दृढरथ एवं दृढहनु इसीका नामांतर है।

दृढधन्वन् कौरव—(सो. कुरु.) द्रौपदीस्वयंवर के लिये आया हुआ एक क्षत्रिय (म. आ. १७७.१५)।

दृढनेमि—(सो. द्विमीढ.) भागवत, वायु तथा मत्स्यमत में सत्यधृती का पुत्र। विष्णु मत में धृतिमान् का पुत्र।

दृढमति—एक शूद्र। इसके पीछे ब्रह्मराक्षस लगा हुआ था। किन्तु वेंकटाचल जाने पर उस पीड़ा से यह मुक्त हुआ (स्कन्द. २.१.१९)।

दृढरथ—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

२. (सो. क्रोष्टु.) मत्स्यमत में नवरथ का पुत्र (दशरथ ३. देखिये)।

३. (सो. अज.) मत्स्यमत में सेनाजित् का पुत्र (दृढधनु देखिये)।

दृढरथाश्रय—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढरुचि—प्रियव्रतपुत्र हिरण्यरेता का पुत्र।

दृढवर्मन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढसंध—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढसेन—द्रोण द्वारा मारा गया एक पांडवपक्षीय राजा (म. द्रो. २०.४०)।

२. (सो. मगध. भविष्य.) विष्णु तथा ब्रह्मांडमत में सुश्रम का तथा वायुमत में सुव्रत का पुत्र। द्युमत्सेन इसीका नामांतर है।

दृढस्यु—अगस्त्य एवं लोपामुद्रा का पुत्र। यह अत्यंत तपस्वी तथा विद्वान था। यह अरण्य में से समिधा के बड़ेबड़े गठ्ठर लाता था। इस कारण, इसे इध्मवाह नाम प्राप्त हुआ।

क्रतु ऋषि निःसंतान था। इसलिये उसने दृढस्यु को अपना पुत्र माना था। उसी तरह पुलह एवं पुलस्त्य इन दोनों की संतति दुष्ट होने के कारण, वे भी इसे अपना पुत्र मानते थे (म. व. ९७.२३-२५)। इसके दृढास्यु, दृढायु एवं दृढद्युम्न नामांतर थे।

दृढहनु—(सो. अज.) भागवत मत में सेनजित् राजा का पुत्र (दृढधनु देखिये)।

दृढहस्त—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढाच्युत—अगस्त्यपुत्र दृढास्यु का नामांतर।

दृढायु--(सो.) पुरूरवा को उर्वशी से उत्पन्न पुत्र। (म. आ. ७०.२२; पद्म. सृ. १२)।

२. अगस्त्यपुत्र (म. अनु. २७१.४० कुं.; दृढस्यु देखिये)।

दृढायुध--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढाश्व--(सू. इ.) भागवत, विष्णु तथा भविष्य-मत में कुवलयाश्व का पुत्र। मत्स्य एवं वायु मत में यह कुवलाश्व का पुत्र था। पद्ममत में यह कुवलाश्व का नाती तथा धुंधुमार का पुत्र था (पद्म. सृ. ८)।

दृढास्य--दृढस्यु का नामांतर।

दृति ऐंद्रोत--इंद्रोत दैवाप का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)। अभिप्रतारिन् काक्षसेनि के साथ इसका उल्लेख प्राप्त है (पं. ब्रा. १४.१.१२; १५)। 'दृतिवातवन्तौ' में निर्दिष्ट दृति भी यही रहा होगा (पं. ब्रा. २५.३.६)। 'महाव्रत' नामक श्रौतकर्म का सतत आचरण करने के कारण, इसका उत्कर्ष हुआ। यह सत्र भी इसी के नाम से प्रसिद्ध हुआ (का. श्रौ. २४.४.१६; ६.२९; आश्व. श्रौ. १२.३; सां. श्रौ. १३.२३.१; ला. श्रौ. १०.१०.७)। दृत तथा दृति दोनों एक ही रहे होंगे।

दृति ऐंद्रोत शौनक--इंद्रोत शौनक का पुत्र एवं शिष्य (वं. ब्रा. २)।

दृप्तबालाकि गार्ग्य--एक आचार्य (श. ब्रा. १४.५.१; बृ. उ. २.१.१)। गार्ग्य बालाकि ऋषि अत्यंत गर्विष्ठ होने के कारण, उसे यह नामांतर प्राप्त हुआ। काशी के अजातशत्रु नामक राजा का यह समकालीन था। अजातशत्रु को उपदेश देने के लिये यह गया था।

दृभीक--इंद्र ने इसका वध किया (ऋ. २.१४.३)।

दृशान भार्गव--एक मंत्रद्रष्टा (क. सं. १६.८)।

दृषद्वती--(सू. इ.) हर्यश्व राजा की पत्नी।

२. विश्वामित्र की स्त्री (ब्रह्म. १०.६७; ह. वं. १.२७; ब्रह्मांड. ६६.७५; वायु. ९२.१०३)।

३. काशी के दिवोदास (प्रथम) की पत्नी।

४. उशीनर की पत्नी।

दृष्टरथ--एक बड़ा राजा (म. अनु. २७१.५०. कुं.)।

दृष्टशर्मन्--(सो. वृष्णि.) विष्णुमत में श्वफल्क का पुत्र।

देय--सुख देवों में से एक।

देव--एक प्राचीन मानवजातिसंघ। प्राचीन वैदिक एवं पौराणिक ग्रंथों में, देव, असुर, राक्षस, पितर आदि ज्ञातिसंघों का, एवं इन ज्ञातियों के स्त्रीपुरुषों का निर्देश पुनः पुनः मिलता है। इन सारे ज्ञातिसंघों में, देव लोगों का ज्ञातिसंघ बौद्धिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से सर्वाधिक प्रगत एवं बलिष्ठ प्रतीत होता है।

आधुनिक काल में, पृथ्वी पर अनेक मानवजातियाँ रहती है। उसी प्रकार प्राचीन काल में, देव, असुर, गंधर्व, सर्प, नाग, गरुड, दानव, दैत्य आदि अनेक मानवजातियाँ अस्तित्व में थी। इन जातियों के स्त्रीपुरुषों को, सर्वसामान्य मानवों जैसे, हर्षखेदादि विकार थे। उनके विवाह हो कर उन्हें संतति पैदा होती थी। लड़ाई कर के वे आपस में झगड़ते भी थे।

सर्वथैव मानुषि रूप धारण किये हुएँ, ऐसे बहुत सारे देव प्राचीन ग्रंथों में प्राप्त है। वैदिक ग्रंथो में से, अग्नि, इंद्र, मित्र, वरुण आदि देवों का चरित्रचित्रण इसी मानुषि आकृति से मिलता-जुलता है। पुराणों में से, राम, कृष्ण, शिव, विष्णु आदि देवों का व्यक्तिचित्रण भी मानुषि ढंग का ही है।

निरुक्त में, द्यु, अंतरिक्ष एवं पृथ्वी, ये तीन प्रदेश देवों का निवासस्थान बताये गये हैं। इससे जाहीर है कि, कई देव पृथ्वी पर, कई अंतरिक्ष में, एवं कई द्युलोक में रहते थे। देवो मे से अष्ट वसु पृथ्वी पर, ग्यारह रुद्र अंतरिक्ष में, एवं बारह आदित्य द्युलोक में रहते थे। हिंदु श्राद्धविधि में, वसु, रुद्र, एवं आदित्य इन तीन देवताओं को पिता, पितामह एवं प्रपितामह मान कर उन्हें तर्पण किया जाता है।

मनुष्यों में से अनेक पुरुष देवजाति में प्रवेश पा सकते थे। जो पहले मनुष्य थे, किंतु पश्चात् देव हो गये, ऐसे ऋभु आदि व्यक्तिओं का निर्देश वैदिक ग्रंथो में प्राप्त है। अश्विनीकुमार भी पहले मनुष्य ही थे, किंतु बाद में वे देव हो कर, उन्हें यज्ञ की आहुति प्राप्त होने लगी। काशिराज धन्वन्तरि भी पहले मनुष्य था, किंतु पश्चात् पंचमहायज्ञ के वैश्वदेव में उन्हें देव के नाते प्रवेश प्राप्त हुआ। रामकृष्ण आदि अवतारी पुरुष भी पहले मनुष्य ही थे।

देवों के शासकवर्ग में, इंद्र, सप्तर्षि आदि लोग प्रमुख थे। इंद्रादि देवों के वर्णन से पता चलता है कि, वे भी पहले पराक्रमी मानव ही थे। अपने अतुल पराक्रम के कारण वे देव हो गये। पृथ्वी पर से सर्वाधिक पराक्रमी व्यक्ति को केवल देवत्व ही नहीं, इंद्रपद भी प्राप्त हो सकता था। प्रत्येक मनु के इंद्र एवं सप्तर्षि अलग रहते थे। इंद्रपद के प्राप्ति के लिये प्राचीन काल में कितने झगड़े

हुआ करते थे, एवं इंद्र के अश्वमेध यज्ञ का अश्व उड़ाने के कितने प्रयत्न अन्य राजाओं से होते थे, इसका साद्यंत इतिहास पुराणों में दिया गया है। जन्म से मनुष्य हो कर, इंद्रपद प्राप्त करनेवाले प्राचीन राजाओं में रजि, रजिपुत्र एवं नहुष, ये प्रमुख है। असुरों में से, प्रल्हाद, बलि, हिरण्यकशिपु ये राजा इंद्रपद प्राप्त करने में कामयाब हुएँ थे।

मनुष्य वंश के राजाओं में 'राजसूय यज्ञ' किया जाता था, उसी प्रकार देवज्ञाति के राजा भी चक्रवर्तिपद दर्शानेवाला वह यज्ञ करते थे। इस यज्ञ करनेवाले मनुष्य एवं देवज्ञाति के राजा क्रमशः 'मनुष्यराजन्' एवं 'देवराजन्' इन उपाधिओं से विभूषित किये जाते थे। प्राचीन चक्रवर्ति राजाओं में से, दिवोदास, वध्र्यश्व, वीतहव्य आदि सम्राट 'मनुष्यराजन्' थे, एवं सिंधुक्षित्, दीर्घश्रवस्, पृथु, कक्षीवत् आदि सम्राट् 'देवराजन्' थे (तां. ब्रा. १८. १०.५)।

देव, असुर, एवं मनुष्य ज्ञातियों में आपस में विवाह होते थे। पुराणों मे प्रसिद्ध, 'कच देवयानी' प्रणय में, कच देवों के पुरोहित बृहस्पति का पुत्र था, एवं देवयानी असुरों के पुरोहित शुक्र की कन्या थी। अन्त में, देवयानी का विवाह सोमवंशी क्षत्रिय नृप ययाति से हुआ। ययाति की द्वितीय पत्नी एवं देवयानी की सौत शर्मिष्ठा, असुर राजा वृषपर्वन् की कन्या थी।

ऋषि के पुत्र देवज्ञाति मे प्रविष्ट होने के कई उदाहरण भी प्राप्त हैं। भृगु ऋषि को पौलोमी नामक पत्नी से भुवन भौवन आदि बारह पुत्र हुएँ। ये भृगुपुत्र 'भृगुदेव' नाम से प्रसिद्ध हो गये (मत्स्य. १९५.१२-१४)।

देव एवं असुरों के संग्राम की कथाएँ वेदकाल से पौराणिक काल तक अप्रतिहत रूप में प्राप्त होती हैं। इन संग्रामों में देवों द्वारा किये गये बारह निम्नलिखित संग्राम विशेष तौर पर उल्लेखनीय हैः-(१) नारसिंह-हिरण्यकशिपुहनन, (२) वामन-बलिबंधन, (३) वराह-हिरण्याक्षहनन, समुद्रद्वैधीकरण, (४) अमृतमंथन-इंद्र एवं प्रह्लाद का युद्ध, प्रह्लादपराजय, (५) तारकामय-इंद्र द्वारा प्रह्लादपुत्र विरोचन का वध, (६) आड़िबक-इंद्र एवं आड़िबक का युद्ध (७) त्रैपुर-शंकर एवं त्रिपुर का युद्ध (८) अंधक-शंकर एवं असुर, पिशाच तथा दानव का युद्ध, (९) वृत्रघातक-वृत्र का वध, (१०) धात्र (ध्वजपात), (११) हालाहल-इंद्र एवं असुर का युद्ध, (१२) कोलाहल-इंद्र एवं दैत्यदानव का युद्ध (मत्स्य. ४७.४२-४५; ४६-७३; पद्म. सृ. १३.१८३-१९६)।

पद्मपुराण में 'आड़िबक' के स्थान में 'आजाव' एवं 'धात्र' के स्थान में 'ध्वजपात' संग्राम का निर्देश है। इन युद्धो में, देवज्ञाति के प्रमुख, इंद्र एवं शंकर बताये गये है। देव, पितर एवं मनुष्य ज्ञाति के मानवसंघ देवों के प्रमुख सहायक दर्शाये गये है। असुर ज्ञाति में हिरण्यकश्यपु, हिरण्याक्ष, बलि, प्रल्हाद, विरोचन, वृत्र, विप्रचित्ति, वृष ये असुर प्रमुख थे। उनके अनुयायी में पिशाच, दानव एवं असुर प्रमुख थे।

जिस में सामर्थ्य एवं शक्ति का साक्षात्कार है, वह हर एक व्यक्ति देव बन सकती है, ऐसी प्राचीन भारतियों की धारणा थी। इसी धारणा से, अग्नि, वायु, आदि पंचमहाभूतों को देव मानने की प्रवृत्ति वैदिक काल में निर्माण हुओ। इन पंचमहाभूतों से भी अधिक शक्ति 'ब्रह्म' में है, ऐसी धारणा उपनिषदों के काल में प्रचलित हुई। इसीलिये, उस काल में 'ब्रह्म' को देव कहने लगे। 'केनोपनिषद' में लिखा है कि, अग्नि, वायु आदि कितने भी सामर्थ्यशाली हो, उनकी शक्ति महद्भुत ब्रह्म के सामने कुछ भी नहीं है।

इस क्रम से, जिस में अधिक शक्ति हो, उसे देव मानने की प्रवृत्ति प्रस्थापित हुई। स्वायंभुव आदि मन्वन्तर में, सर्वश्रेष्ठ शासक राजा को 'इंद्र' उपाधि प्राप्त हुई। नाना तरह के अधिकार धारण करनेवाले साध्य, तुषित, तप, भृगु आदि लोग देवज्ञाति में शामिल किये गये। मानवों से जिन में अधिक सामर्थ्य था, वे यक्ष, गंधर्व, साध्य आदि ज्ञाति भी 'देवगण' में गिने जाने लगी।

संसार के आदिकरण को 'देव' कहलाने की प्रवृत्ति उपनिषत्काल में ही प्रचलित हुई। जनकसभा में विदग्ध शाकल्य ने याज्ञवल्क्य को पूछा, 'कति देवाः' (देव कितने है)? उत्तर में याज्ञवल्क्य ने कहा, 'संसार में एक ही देव है। पृथ्वी उसका शरीर है, अग्नि नेत्र है, ज्योति मन है। संसार के सारे जीवों का अधिष्ठान बना हुआ पुरुष पृथ्वी पर एक ही है, एवं वही केवल देव है।

दम (इंद्रियदमन), दया, दान, इन तीन 'द' कारों से कोई भी मनुष्य देवत्व पा सकता है, ऐसी भी एक धारणा भारतीय संस्कृति में दृढमूल है। इसी तत्त्व के विशदीकरण के लिये, 'बृहदारण्यकोपनिषद्' में एक कथा दी गयी है। एक समय देव, मनुष्य एवं दानव प्रजापति के पास ज्ञान के लिये गये। प्रजापति ने उन सब को 'द' अक्षर का उपदेश श्रेयप्राप्ति के लिये दिया। उस 'द' कार का अर्थ देव, दानव, एवं मनुष्यों ने अपने

अपने स्वभावानुरूप किया। देवों ने दमन (इंद्रिय-दमन) कर के, मनुष्यों ने दान से, एवं दानवों ने दया से श्रेयप्राप्ति करने की कोशिश की (बृ. उ. ५.२.१-३)। किंतु 'देवत्व' प्राप्त करने के लिये इन तीनों 'द' की जरूरत रहती है, ऐसा उपनिषदों का कहना है।

इसी ढंग की और एक कथा महाभारत के 'अनुगीता' में दी गयी है। प्रजापति के पास श्रेयप्राप्ति का उपाय पूछने, पन्नग, देवर्षि, नाग तथा असुर आ गये। प्रजापति ने सब को 'ॐ' अक्षर से ही उपदेश दिया। उस उपदेश का अर्थ, हर एक व्यक्ति ने अपने अपने स्वभाव के अनुसार ग्रहण किया। सर्पों ने दंश, असुरों ने दया, देवों ने दान एवं महर्षिओं ने दमन, इस अर्थ से यह 'ॐ' स्वरूप उपदेश का अर्थ किया, एवं वैसे ही आचरण उन्होंने करना शुरू किया (म. आश्व. २६)। इस कथा से प्राचीन समाज के सर्प, असुर, देव आदि भिन्नभिन्न ज्ञातिसंघ के स्वभाववैशिष्ट्यों का पता चलता है।

उपरिनिर्दिष्ट चर्चा से ज़ाहिर है कि, प्राचीन काल में देव नाम की मानवों की एक ज्ञाति थी। पश्चात् उस जाति के व्यक्तिओं के उपर अधिदैविक एवं आध्यात्मिक संस्कार कर के, देवों को अतिमानुषा एवं दैवी रूप दिया गया। उससे देव नामक मानवजाति का स्वरूप धुँधला सा हो गया। रामकृष्णादि महापुरुषों का मानुष तथा दैविक स्वरूप संमिश्ररूप में स्पष्ट है। इंद्रादि देव भी पहले मानव थे। अनन्तर देवत्व का आरोप उन पर किया गया। उपनिषदों में 'इंद्र-विरोचनसंवाद' में, एक विशेष अध्यात्मिक स्थान भी उन्हें दिया गया है। वरुण, गणपति, स्कंद, उमा, आदि देव पहले सिद्ध, समर्थ, पराक्रमशील व्यक्ति के स्वरूप में लोगों के आदरस्थान बने। अनन्तर उन्हें देवता बनाया गया। अन्त में उनको आध्यात्मिक शुद्ध-परब्रह्म रूप देने का प्रयत्न हुआ। शिवादि देवों का पहला रुद्रादि स्वरूप तथा बाद का शिवस्वरूप सर्वथा भिन्न है। आध्यात्मिकता इष्ट है। फिर भी इन देवों का वास्तव स्वरूपदर्शन तथा प्राचीन मानव समाज का विभागात्मक ज्ञान भी इतिहास के अध्ययन लिये आवश्यक है।

२. एक व्यास (व्यास देखिये)।

देवऋषभ—वैवस्वत मन्वन्तर के धर्म ऋषि को भानु नामक स्त्री से उत्पन्न पुत्र। इसका पुत्र इंद्रसेन (भा. ६.६.५)।

देवक—(सो. कुरु.) युधिष्ठिर को पौरवी से उत्पन्न पुत्र (भा. ९.२२.३०)।

२. (सो. कुकुर.) आहुक राजा का पुत्र। पूर्वजन्म में यह गंधर्वों का राजा था।

इसकी कन्या देवकी मथुरा के उग्रसेन राजा के मंत्री वसुदेव को दी गयी थी (म. आ. ६१.६२; भा. ९.२४; विष्णु. ४.१४)। पद्ममत में देवकी इसकी बहन थी। इससे साथ और छः बहनें इसने वसुदेव को दी थी। उग्रसेन इसका कनिष्ठ बंधु था। इसके पुत्र देववान्, उपदेव, सुदेव एवं देवरक्षित थे (पद्म. सृ. १३)।

देवक मान्यमान—एक असुर। यह ऋजुओं का शत्रु, एवं शंबर का स्नेही था (ऋ. ७.१८.२०)। कई लोगों के मत में, 'स्वयं को देव माननेवाले' शंबर का ही यह नामांतर था।

देवकर—(सू. इ.) भविष्यमत में अभिव्योम का पुत्र। इसका पुत्र सहदेव।

देवकी—देवक की कन्या एवं कृष्ण की माता। यह वसुदेव की पत्नी थी। इसके विवाह के समय आकाशवाणी हुई, 'इसके अष्टम पुत्र के द्वारा मथुरा के कंस राजा का वध होगा'। इसलिये कंस ने इसे एवं इसके पति वसुदेव को कारागृह में रखा। बाद में इसे कीर्तिमत्, सुषेण, भद्रसेन, ऋजु, संमर्दन, भद्र, बलराम तथा कृष्ण नामक आठ पुत्र हुएँ। कृष्णजन्म के बाद, उसे कंस से बचाने के लिये, कृष्ण को नंद के घर छोड़ने की सलाह इसने वसुदेव को दी थी। (पद्म. ब्र. १३)।

बलराम तथा कृष्ण के पहले जन्मे हुएँ, इसके छः पुत्रों को कंस ने मार डाला। कृष्ण द्वारा कंसवध होने के बाद, देवकी तथा कृष्ण का मिलन हुआ। उसने देवकी की उसके मृत पुत्रों से भेट करवायी (भा. ९. २४; १०. ३; ४४)। पूर्वजन्म में यह सुतपस् की पत्नी पृश्नि थी (भा. १०. ३)। कृष्णनिर्याण की वार्ता सुनते ही इसने अग्नि-प्रवेश किया।

२. शैब्य की कन्या (ब्रह्म. २१२. ४)। यह युधिष्ठिर की पत्नी थी। इसका पुत्र यौधेय (म. आ. ९०.८३)।

३. ऋषभदेव के वंश के उद्गीथ की पत्नी (भा. ५. १५)। भांडारकर संहिता में देविका पाठभेद उपलब्ध है।

देवकीपुत्र—कृष्ण का मातृक नाम (छां. उ. ३ १७.६; कृष्ण देवकीपुत्र देखिये)।

देवकुल्या--स्वायंभुव मन्वंतर के मरीचि ऋषि के पुत्र की कन्या। इसने पूर्वजन्म में विष्णु के पग धोये थे, इसलिये इस जन्म में इसे 'स्वर्धुनी' (गंगा नदी) का जन्म प्राप्त हुआ (भा. ४. १४)।

२. भागवतमत में पूर्णिमा की कन्या (प्रस्ताव देखिये)।

देवक्षत्र--(सो. क्रोष्टु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य, वायु एवं पद्ममत में देवरात का पुत्र। भविष्यमत में देवरथ का पुत्र।

देवगर्भ--एक ऋषि। ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ में, इसने होता का काम किया था (पद्म. सृ. ३४)।

देवज--(सू. दिष्ट.) संयमन राजा का पुत्र।

देवजनी--मणिवर की पत्नी।

देवजाति--कश्यपकुल का गोत्रकार। वेदजाति इसीका पाठभेद है।

देवजित्--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

देवतरस् श्यावसायन काश्यप--ऋश्यशृंग का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)। वंश ब्राह्मण में भी इसका उल्लेख है। वहाँ इसे काश्यप शिष्य 'शवस' का पुत्र एवं शिष्य बताया है।

देवताजित्--(स्वा. प्रिय.) सुमति एवं वृद्धसेना का पुत्र। इसकी स्त्री का नाम आसुरी, एवं पुत्र का नाम देवद्युम्न था (भा. ५.१५.२)।

देवदत्त--(सू. नरि.) भागवतमत में उरुश्रवस् राजा का पुत्र। अग्नि, कानीन तथा जातुकर्ण्य ये इसके तीन पुत्र थे।

देवदत्त शठ--एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

देवदर्श--कबंधायन का शिष्य। कबंध ने इसे अथर्ववेदसंहिता सिखायी थी। पिप्पलाद, ब्रह्मबल, मोद एवं शौल्कायनि आदि इसके चार शिष्य थे (व्यास देखिये)। वायु में वेदस्पर्श पाठ है। यह एक शाखाप्रवर्तक भी था (पाणिनि देखिये)। पाणिनि इसे देवदर्शन कहता है।

देवदर्शन--देवदर्श देखिये।

देवदास--मगध देश का एक ब्राह्मण। इसकी स्त्री उत्तमा अतीव पतिव्रता थी। इसके पुत्र का नाम अंगद तथा पुत्री का नाम वलया था। वलया ससुराल में सुखी थी।

इसका पुत्र अंगद तथा उसकी कन्या वलया गृहस्थी का भार उठाते थे। अतः इस पतिपत्नी ने तीर्थाटन के लिये जाने का निश्चय किया। मार्ग में एक सिद्ध इन्हें मिला। उसने एक उदाहरण बता कर इन्हें इंद्रप्रस्थ के बदरितीर्थ पर जाने के लिये कहा। तब यह दोनों इंद्रप्रस्थ गये। यमुना में स्नान करते ही, उद्धार हो कर यह दोनों स्वर्गलोक सिधारे (पद्म. उ. २१२)।

२. एक सुवर्णकार (रूपवती देखिये)।

देवद्युति--एक ऋषि। यह सरस्वती के किनारे आश्रम में रहता था। विष्णु के वर से इसे सुमित्र नामक पुत्र हुआ था।

देवद्युति ग्रीष्म ऋतु में पंचाग्निसाधन करता था। बड़ी भक्ति से उसने १००० वर्षों तक तपश्चर्या तथा विष्णुभक्ति की। उससे इसे अपूर्व तेज प्राप्त हुआ। वैशाख मास में एक दिन इसने विष्णु की स्तुति की। तब प्रगट हो कर विष्णु ने इसे वर माँगने के लिये कहा। परंतु निरिच्छ होने के कारण, इसने विष्णु की भक्ति ही माँगी (पद्म. उ. १२८)।

देवद्युम्न--(स्वा. प्रिय.) भागवतमत में सुमति का पुत्र (देवताजित् देखिये)।

देवन--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। यह देवक्षत्र के बाद राजगद्दी पर बैठा।

देवपाति--भृगुकुल का गोत्रकार।

देवप्रस्थ--एक गोप। यह कृष्ण का मित्र था (भा. १०.२२)।

देवबाहु--(सो. क्रोष्टु.) भागवतमत में हृदीक का पुत्र।

२. रैवत मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक (पद्म. सृ. ७)।

देवभाग--(सो. क्रोष्टु.) शूर का पुत्र। कंस की भगिनी कंसा इसकी पत्नी थी। उससे इसे चित्रकेतु, बृहद्बल एवं उद्धव नामक तीन पुत्र हुएँ।

देवभाग श्रौतर्ष--एक यज्ञवेत्ता ऋषि। यह श्रुत का पुत्र था। यज्ञपशु के शरीर के विभिन्न भाग किन्हें बाँट देना चाहिये, इसका ज्ञान इसे हुआ था। मृत्यु के समय भी, इसने यह गूढ़ज्ञान किसी को नहीं बताया। पश्चात् एक अमानवीय व्यक्ति ने यह ज्ञान बभ्रु के पुत्र गिरिज को बताया (ऐ. ब्रा. ७.१)।

दाक्षायणयाग के कारण, संजय तथा कुरु राजाओं में स्नेहभाव उत्पन्न हुआ। उस समय उन दोनों का यह पुरोहित था (श. ब्रा. २.४.४.५)। 'तैत्तिरीय ब्राह्मण' में सावित्र अग्नि के बारे में इसके मतों का उद्धरण दिया गया है (तै. ब्रा. ३.१०.९.११)। यज्ञ में इसके हाथों से

गलती होने के कारण, सृंजयों का नाश हुआ। यह वासिष्ठ सातहव्य का समकालीन था (तै. सं. ६.६.२.२)।

देवभूति--(शुंग. भविष्य.) भागवत तथा विष्णुमत में भागवत का पुत्र। देवभूमि तथा क्षेमभूमि इसी के नामांतर थे।

देवभूमि--(शुंग. भविष्य.) मत्स्य मत में पुनर्भव का, एवं ब्रह्मांड मत में भागवत का पुत्र। इसने दस वर्षों तक राज्य किया (देवभूति देखिये)।

देवमत--एक ऋषि। नारद के साथ इसका सृष्टि-उत्पत्ति के विषय में संवाद हुआ (म. आश्व. २४)।

देवमति--अंगिराकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

देवमलिम्लुच्--रहस्यु का उपनाम।

देवमानुषि--(सो. क्रोष्टु.) भागवत तथा वायु के मत में शूर राजा को अश्मकी से उत्पन्न पुत्र। इसे 'देवमीढुष' भी कहा गया है।

देवमित्र शाकल्य--मांडुकेय ऋषि का पुत्र। इसने सौभरि आदि शिष्यों को संहिता कथन की। भागवत में इसे शाकल्य का साथी माना गया है। परंतु वायु तथा ब्रह्मांड के मत में, यह शाकल्य का शिष्य था। देवमित्र शाकल्य ने पाँच संहितायें पाँच शिष्यों को सिखाई। उनके शिष्यों के नाम--मुद्गल, गोखल, मत्स्य, खालीय तथा शैशिरेय। इसके नाम का वेदमित्र पाठभेद भी प्राप्त है (वेदमित्र, याज्ञवल्क्य तथा व्यास देखिये)।

अपने अश्वमेध यज्ञ के समय, जनक राजा ने एक प्रण जाहिर किया। सम्मीलित ब्राह्मणों में जो सर्वश्रेष्ठ साबित हो, उसे हजार गायें, उनसे कई गुना अधिक सुवर्ण, ग्राम, रत्न तथा असंख्य सेवक दिये जायेंगे, ऐसा प्रस्ताव उसने ब्राह्मणों के सामने रखा। अनेक ब्राह्मण स्पर्धा के कारण झगड़ने लगे। इतने में ब्रह्मवाहसुत याज्ञवल्क्य वहाँ आया। उसने अपने शिष्यों से कहा, 'यह सारा धन ले चलो, क्योंकि मेरी बराबरी करनेवाला वेदवेत्ता यहाँ कोई नहीं है। जिसे यह असमान्य होगा, वह मेरा आह्वान स्वीकार करे'।

अनेक ब्राह्मण वाद के लिये सामने आये तथा अनेक महत्त्वपूर्ण विषय पर विवाद हुएँ। सब को जीतने पर याज्ञवल्क्य ने शाकल्य से कुछ उपमर्दकारक बातें कहीं। वह बोला, 'ब्राह्मण का बल विद्या तथा तत्त्वज्ञान में नैपुण्य होता है। किसी भी प्रश्न का उत्तर देने के लिये मैं तैयार हूँ। इसलिये कौन सा भी प्रश्न पूछने का मैं तुम्हें आह्वान देता हूँ'।

यह सुन कर, शाकल्य क्रोध से पागल सा हो गया। याज्ञवल्क्य के कथनानुसार इसने उसे हजार प्रश्न पूछे। उन सारे प्रश्नों के उत्तर याज्ञवल्क्य ने दिये। पश्चात् याज्ञवल्क्य द्वारा शाकल्य को प्रश्न पूछा जाने का समय आया। याज्ञवल्क्य ने शर्त लगायी, 'इन प्रश्नों का उत्तर न दे सके, तो शाकल्य को मृत्यु स्वीकारनी पड़ेगी'। शाकल्य ने वह शर्त स्वीकार की। पश्चात् याज्ञवल्क्य ने प्रश्न पूछे, परंतु शाकल्य उनके उत्तर न दे सका। इसलिये शाकल्य ने मृत्यु का स्वीकार किया।

देवमित्र शाकल्य की मृत्यु के कारण, सब ब्राह्मणों को ब्रह्महत्या का पातक लगा। अतः पवनपुर जा कर वहाँ उन्होंने द्वादशार्क, वालुकेश्वर तथा ग्यारह रुद्रों का दर्शन लिया। चार कुंडों में स्नान किया। वाडवादित्य के प्रसाद से उत्तरेश्वर का दर्शन ले कर, वे सारे मुक्त हो गये (वायु. ६०.६९)।

देवमीढ--(सू. निमि.) भागवतमत में कृतिरथ का तथा वायुमत में कीर्तिरथ का पुत्र।

२. (सो. क्रोष्टु.) भागवतमत में हृदीक का पुत्र। इसका पुत्र शूर। इसकी पत्नी का नाम ऐक्ष्वाकी था (मत्स्य. ४६)। देवमीढुष, देवमानुषि एवं देवमेधस् इसीके नामांतर हैं।

३. (सो. पूरु.) द्विमीढ का नामांतर।

४. (सो. वृष्णि.) वृष्णि के पाँच पुत्रों में से तीसरा (पद्म. सृ. १३)।

देवमीढुष--(सो. क्रोष्टु.) विष्णुमत में हृदीक का, तथा मत्स्यमत में भजमान का पुत्र (देवमीढ २. देखिये)।

देवमुनि ऐरंमद--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४६)। 'पंचविंश ब्राह्मण' के मत में यह तुर का ही नामांतर है (२५.१४.५)।

देवमेधस्--(सो. क्रोष्टु.) भविष्यमत में हृदीक का पुत्र (देवमीढ २. देखिये)।

देवयान--काश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

देवयानी--असुरोंके राजपुरोहित शुक्राचार्य की कन्या। पुरंदर इंद्र की कन्या जयंती इसकी माता थी। शुक्राचार्य को प्रसन्न कर, दस वर्षों तक उसके पास रहने के बाद जयंती को यह कन्या हुई। प्रियव्रतपुत्री ऊर्जस्वती इसकी माता थी, ऐसा भी उल्लेख प्राप्त है (भा. ५.१.२५)।

देवों के कथनानुसार संजीवनी विद्या सीखने के लिये बृहस्पतिपुत्र कच असुर गुरु शुक्राचार्य के पास आ कर रह गया। कच का आकर्षक व्यक्तिमत्त्व देख, देवयानी

उससे प्रेम करने लगी। कच से विवाह करने का प्रस्ताव इसने उसके सामने प्रस्तुत किया। किंतु गुरुकन्या मान कर कच ने इसका पाणिग्रहण नहीं किया। तब 'तुम्हारी विद्या तुम्हें फलद्रूप नहीं होगी,' ऐसा शाप देवयानी ने उसे दिया। निरपराध होते हुए शाप देने के कारण, क्रुद्ध हो कर, कच ने भी इसे शाप दिया, 'कोई भी ऋषिपुत्र तुम्हारा वरण न करेगा'। इसीसे इसे क्षत्रियपत्नी बनना पड़ा।

कच के वापस जाने के बाद, एक बार वृषपर्वन् राजा की कन्या शर्मिष्ठा, तथा यह अपनी सखियों के साथ क्रीड़ा करने गई। उस वन में अपने अपने वस्त्र किनारे रख कर, ये बालायें जलक्रीड़ा करने लगी। नटखट इन्द्र ने इनका मज़ाक उड़ाने के लिये, सब के वस्त्र मिल जुल कर रख दिये। जलक्रीड़ा समाप्त होने पर सब सखियाँ एकदम बाहर आईं, तथा गड़बड़ी में जो भी वस्त्र जिसे मिला, उसे पहनने लगी। भागवत में कहा है कि, नंदी पर बैठ कर नदी किनारे से शंकर जा रहे थे। इस कारण लज्जित हो कर, ये लड़कियाँ पानी से बाहर आयी, एवं वस्त्र परिधान करने लगी (भा. ९. १८)।

इस गड़बड़ी में, गल्ती से शर्मिष्ठा ने देवयानी की साड़ी पहन ली। अपनी साडी शर्मिष्ठा द्वारा पहनी देख कर, देवयानी अत्यंत क्रोधित हुई। देवयानी ने कहा, 'मेरी शिष्या होते हुए भी तुमने मेरा वस्त्र परिधान क्यों किया? तुम्हारा कभी भी कल्याण न होगा'। तब शर्मिष्ठा ने कहा, 'मैं राजकन्या हूँ तथा तुम मेरे पिता के पुरोहित शुक्राचार्य की कन्या हो। इतनी नीच हो कर भी, मेरे जैसी राजकन्या से टेढ़ी बात करने में तुम्हें शर्म आनी चाहिये'। इस प्रकार वे दोनों एक दूसरे को गालियाँ दे कर वस्त्रों का खींचतान करने लगीं। अन्त में शर्मिष्ठा ने वहीं एक कुएँ में इसे ढकेल दिया। इसकी मृत्यु हो गयी, ऐसे समझ कर वह नगर में वापस गई।

जिस कुएँ में देवयानी गिरी थी, उसके पास मृग के पीछे दौड़ता हुआ, नहुषपुत्र ययाति पहूँच गया। उदकप्राशनार्थ उस कुएँ में उसने झाँक कर देखा, तो भीतर एक अत्यंत तेजस्वी कन्या उसे दिख पड़ी। यह नग्न होने के कारण, उसने अपना उत्तरीय इसे पहनने के लिये दिया (भा. ९. १८)। बाद में ययाति ने इसे सारा वृत्तांत पूछा। तब इसने बताया, 'मैं शुक्राचार्य की कन्या हूँ'। यह ब्राह्मणकन्या है, यह जान कर ययाति ने इसका दाहिना हाथ पकड़ कर इसे बाहर निकाला। बाद में इससे बिदा हो कर, वह अपने नगर वापस गया।

देवयानी को ढूँढने के लिये घूर्णिका नामक एक दासी आयी। देवयानी ने उसके द्वारा, अपने पिता उशनस् शुक्र को संदेशा भिजवाया, 'मैं वृषपर्वन् के नगर में नहीं आऊंगी'। घूर्णिका ने यह वृत्त, वृषपर्वन् के राजदरबार में बैठे शुक्राचार्य को बताया। उसे सुनते ही शुक्राचार्य तुरंत वन में आया, एवं अपनी दुःखी कन्या से मिला। इसकी हालत देखते ही वह बोला, 'अवश्य ही पूर्वजन्म में तुमने कुछ पाप किया होगा, जिसके कारण तुम्हें यह सज़ा मिल रही है'। पश्चात् देवयानी ने उसे शर्मिष्ठा के शब्द बताये। उन्हें सुन कर शुक्राचार्य को अत्यंत क्रोध आया। परंतु देवयानी ने पिता की सांत्वना की, एवं कहा, 'वृषपर्वन् की कन्या ने, तुमसे भी मेरा ज्यादा अपमान किया है। उससे मैं बदला ले कर ही रहूँगी'।

बाद में कोपाविष्ट शुक्राचार्य, दैत्य राजा वृषपर्वन् का त्याग करने के लिये प्रवृत्त हुआ। वृषपर्वन् ने नम्रता से उसकी क्षमा माँगी। तब शुक्र ने कहा, 'तुम देवयानी को समझाओ, क्यों कि, उसका दुख मैं सहन नहीं कर सकता'। तब वृषपर्वन् ने कहा, 'आप हमारे सर्वस्व के स्वामी हैं। इसलिये आप देवयानी को हमें माँफ करने को कह दें'। यह सारा वृत्त शुक्राचार्य ने देवयानी को बताया। जवाब में इसने कहा कि, 'यह सब राजा मुझे स्वयं आ कर कहे'। तब वृषपर्वन् ने इससे कहा, 'हे देवयानी! तुम जो चाहो, मैं करने के लिये तैय्यार हूँ। किंतु तुम नाराज न हो'। तब देवयानी ने कहा, 'तुम्हारी कन्या शर्मिष्ठा अपनी सहस्र दासियों सह मेरी दासी बने, तथा जिससे मैं विवाह करूंगी, उसके घर भी वह दासी बन कर, मेरे साथ आये'।

देवयानी की यह शर्त मान्य कर, वृषपर्वन् ने शर्मिष्ठा को बुलावा भेजा। बुलानेवाली दासी ने देवयानी की शर्त के बारे में, सारा कुछ शर्मिष्ठा को पहले ही बताया था। देवयानी के पास जा कर, शर्मिष्ठा ने उसकी शर्त मान्य कर ली। तब देवयानी ने उपहास से उसे कहा, 'क्यों? मैं तो याचक की कन्या हूँ! राजा की कन्या पुरोहितकन्या की दासी भला कैसे हो सकती है?' शर्मिष्ठा ने कहा, 'मेरे दासी होने से, अगर मेरे हीनदीन ज्ञातिबांधव सुखी हो सकते है, तो दास्यत्व स्वीकार करने के लिये मैं तैयार हूँ'। तब देवयानी संतुष्ट हुई। बाद में इसका विवाह

ययाति राजा से हुआ। शर्त की अनुसार, शर्मिष्ठा भी इसकी दासी बन कर, ययाति के यहाँ गयी (म. आ. ७३. ७५; मत्स्य. २७–२९)।

बाद में इसकी दासी बनी हुअी शर्मिष्ठा को, ययाति से पुत्र उत्पन्न हुआ। तब यह क्रोधित हो कर, फिर एक बार अपने पिता के पास गयी। इस कारण शुक्र ने ययाति को शाप दिया 'तुम वृद्ध बन जाओगे'। अन्त में ययाति के द्वारा बहुत प्रार्थना की जाने पर शुक्र ने उसे उःशाप दिया, 'तुम अपना वार्धक्य तरुण पुरुष को दे सकोगे'।

देवयानी को ययाति से यदु तथा तुर्वसु नामक दो पुत्र हुएँ थे (वायु. ९३.७७–७८)। किन्तु उन दोनों ने ययाति का वृद्धत्व स्वीकारना अमान्य कर दिया। ययाति ने उन दोनों को शाप दे दिया।

रामायण में, देवयानी के केवल यदु नामक पुत्र का निर्देश आया है (वा. रा. उ. ५८)।

देवरक्षित—(सो. कुकुर.) विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मत में देवक का पुत्र। देवरंजित एवं देववर्धन इसीके नामांतर है (पद्म. सृ. १३)।

देवरक्षिता—देवक राजा की कन्या एवं वसुदेव की स्त्री। इसे गद आदि नौ पुत्र थे (भा. ९.२४)।

देवरंजित—(सो. कुकुर.) वायुमत में देवक का पुत्र (देवरक्षित १. देखिये)।

देवरथ—(सो.) भविष्यमत में कुशुंभ का पुत्र (देवरात २. देखिये)।

देवराज—(सू. इ.) विकुक्षि का नामांतर (मत्स्य. १२.२६)।

२. (सू. निमि.) देवरात का पाठभेद।

३. एक ब्राह्मण। यह किरात नगर में व्यापार करता था। यह अत्यंत धूर्त एवं शराबी था। एक बार तालाब में यह स्नान करने गया। वहाँ शोभावती नामक वेश्या से इसका संबंध जुड़ा। उसके कारण माँ, बाप तथा पत्नी का भी इसने वध किया।

एक बार यह प्रतिष्ठान नगर में गया। वहाँ इसने शिव का दर्शन लिया तथा शिवकथा सुनी। पश्चात् एक माह के बाद इसकी मृत्यु हुई। केवल अल्पकाल किये गये शिवपूजा के कारण, इसे कैलास में जाने का भाग प्राप्त हुआ (शिवपुराण माहात्म्य)।

४. काशी का राजा। इसकी कन्या सुदेवा। वह इक्ष्वाकु की पत्नी थी (पद्म. भू. ४२.६)।

देवराज वसिष्ठ—एक ऋषि। यह अयोध्या का राजा त्रय्यारुण का पुरोहित था। इसीके कारण त्रय्यारुण ने सत्यव्रत त्रिशंकु को, अयोध्या देश के बाहर निकाल दिया तथा अपना राज्य इस पर (अपने पुत्र) सौंप दिया (त्रिशंकु देखिये)। इसीके द्वारा विश्वामित्र ने आप को ब्राह्मण कहलवाया (JRAS १९१७. पृ. ४०–६७)।

देवराजन्—एक सन्मान्य उपाधि। देवों में से जिन्होंने राजसूययज्ञ किया, उन्हें यह उपाधि लगायी जाती थी (देव देखिये)। प्राचीन काल के सुविख्यात 'देवराजन्' की नामावली सायणाचार्य ने दी है। उनके नाम सिंधुक्षित् - सैन्धिक्षित, दीर्घश्रवस - दैर्घश्रवस, पृथु-पार्थ, कक्षीवत एवं काक्षीवत्। मानवों में जिन्होंने राजसूययज्ञ किये, उन्हें 'मनुष्यराजन्' कहा जाता था। 'मनुष्य-राजन्' के प्रमुख नाम–दैवोदास, वाध्र्यश्व, वैतहव्य। 'देवराजन्' एवं 'मनुष्यराजन्' के कुछ साम प्रसिद्ध है (पं. ब्रा. १८.१०.५)।

देवरात—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा। भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मत में यह करंभ का पुत्र था। वायुमत में करंभक का पुत्र। भविष्यमत में इसे देवरथ कहा गया है (पद्म. सृ. १३)।

२. एक ऋषि। भागवत के अनुसार इसका पुत्र याज्ञवल्क्य। वायु तथा ब्रह्मांड में ब्रह्मवाह पाठभेद है।

३. एक गृहस्थ। इसे कला नामक कन्या थी। उसके पति का नाम शोण था। मारीच द्वारा कला का वध होने के बाद, देवरात तथा शोण उसको ढूँढ़ने, विश्वामित्र के यहाँ गये। वहाँ से वसिष्ठ को साथ ले कर वे शिवलोक में गये। मरते, समय, 'हर' का नाम मुख से निकलने के कारण, इसकी कन्या कैलास में पार्वती की दासी बनी थी। पार्वती ने इसे एवं शोण को सोमव्रत समारोह के लिये ठैरने के लिये कहा। वह समारोह समाप्त होने पर ये दोनों वापस आये (पद्म. पा. ११२)।

४. युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४. २२)।

देवरात जनक—(सू. निमि.) विदेह देश के सुविख्यात 'जनक' राजाओं में से एक (म. शां. २९८)। भागवत एवं वायु में इसे सुकेतु का, तथा विष्णु में स्वकेतु का पुत्र बताया है। इसके घर में रुद्र ने एक शिवधनुष्य रखा था। 'सीता स्वयंवर' के समय, उस

धनुष का राम ने भंग किया (वा. रा. अयो. ६६)। राम का ससुर एवं सीता का पिता 'सीरध्वज जनक' से यह बहुत ही पूर्वकालीन था। यह याज्ञवल्क्य का समकालीन था। वायु में इसे 'देवराज' कहा गया है। धनुष का इतिहास बताते समय इसे निमि का पुत्र कहा गया है (वा. रा. बा. ६६.८)। किंतु 'रामायण' में दिया गया इसका वंशक्रम, पुराणों में दिये गये क्रम से अधिक विश्वासार्ह प्रतीत होता हैं। इसका पुत्र बृहद्रथ (दैवराति देखिये)।

देवरात वैश्वामित्र—शुनःशेप का नामांतर। शुनःशेप को विश्वामित्र ने पुत्र मान कर स्वीकार किया। उस समय शुनःशेप को यह नाम दिया गया (ऐ. ब्रा. ७.१७; सां. श्रौ. १५.२७)। पश्चात् एक गोत्र एवं प्रवर को भी यह नाम दिया गया। यह एक मंत्रकार भी था (अजीगर्त एवं जह्नु देखिये)

देवराति—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

देवल—एक ऋषि (क. सं. २२.११)। असित को एकपर्णा से उत्पन्न पुत्रों में से यह एक था। यह कश्यप गोत्र का एक मंत्रकार एवं प्रवर था। इसने हूहू गंधर्व को शाप दिया था (भा. ८.४)। असित देवल तथा देवल इन दोनों नामों से इसका निर्देश प्राप्त है। इसका छोटा भाई धौम्य। वह पांडवों का पुरोहित था (असित देखिये)।

धर्मशास्त्रकार—एक स्मृतिकार के नाते भी देवल सुविख्यात था। याज्ञवल्क्य पर लिखी गई 'मिताक्षरा' (१.१२८), 'अपरार्क,' 'स्मृतिचन्द्रिका' आदि ग्रंथों में देवल का उल्लेख किया गया है। उसी प्रकार देवल की स्मृति के काफी उद्धरण 'मिताक्षरा' में लिये गये हैं (१.१२०)। 'स्मृतिचन्द्रिका' में देवल स्मृति से ब्रह्मचारी के कर्तव्य, ४८ वर्षों तक पाला जानेवाला ब्रह्मचर्य, पत्नी के कर्तव्य आदि के संबंध में उद्धरण लिये गये हैं (स्मृ. ५२; ६३)। उसी प्रकार 'मिताक्षरा,' हरदत्त कृत 'विवरण,' अपरार्क आदि ग्रंथों में 'देवलस्मृति' में से आचार, व्यवहार, श्राद्ध, प्रायश्चित तथा अन्य बातों के संबंध में उद्धरण लिये गये हैं।

'देवल स्मृति' नामक ९० श्लोकों का ग्रंथ आनंदाश्रम में छपा है। उस ग्रंथ में केवल प्रायश्चित्तविधि बताया गया है। किंतु वह ग्रंथ मूल स्वरूप में अन्य स्मृतियों से लिये गये श्लोकों का संग्रह होगा। इसका रचनाकाल भी काफी अर्वाचीन होगा। क्योंकि, इस स्मृति के १७-२२ श्लोक तथा ३०-३१ श्लोक विष्णु के हैं, ऐसा अपरार्क में (३.१२००) बताया गया है। अपरार्क तथा स्मृतिचन्द्रिका में 'देवल स्मृति' से दायविभाग, स्त्रीधन पर रहनेवाली स्त्री की सत्ता आदि के बारे में उद्धरण लिये गये हैं। इससे प्रतीत होता है कि, स्मृतिकार देवल, बृहस्पति, कात्यायन आदि स्मृतिकारों का समकालीन होगा। देवल विरचित धर्मशास्त्र पर श्लोक एकत्रित कर, तीनसौ श्लोकों का संग्रह 'धर्मप्रदीप' में दिया गया हैं। उससे इसके मूल स्मृति की विविधता तथा विस्तार की पूर्ण कल्पना आती है।

२. जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य (म. आ. ४६.७)।

३. प्रत्यूष का पुत्र (म. आ. ६०.२५; विष्णु. १.१५.१७)। इसका भाई असित। स्वर्ग में जा कर, इसने पितरों को महाभारत का निरूपण किया था (म. आ. १.६४; असित देखिये)।

४. एक शिवशिष्य। शिव ने श्वेत नाम से दो अवतार लिये। उनमें से दूसरे का शिष्य।

५. कृशाश्व को धिषणा से उत्पन्न पुत्र (भा. ६.६. २०)।

६. एक ऋषि। ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ में, ब्राह्मणों का यह अग्नीध् था (पद्म. सृ. ३४)।

देववत्—एक वैदिक राजा। इसका नाती सुदास (ऋ. ७.१८.२२)। इसका रथ अप्रतिहतगति था (ऋ. ८. ३१.१५)। वध्र्यश्व, दिवोदास तथा सुदास, इस प्रकार यदि वंशावलि मानी जाय, तो सुदास को देववत् का दौहित्र मानना चाहिये।

२. रुद्रसावर्णि मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

३. (सो. कुकुर.) देवक का ज्येष्ठ पुत्र। उपदेव, सुदेव एवं देवरक्षित इसके बंधु थे (पद्म. सृ. १३)।

४. (सो. वृष्णि.) अक्रूर का पुत्र (पद्म. सृ. १३)।

५. एक ऋषि। पूर्वजन्म में यह केशव था। यह विष्णुस्वामी के मतों का अनुयायी था। इसने 'रामज्योत्स्नामय' नामक ग्रंथ लिखा (भवि. प्रति. ४.२२)।

देववती—ग्रामणी गंधर्व की कन्या एवं सुकेश राक्षस की पत्नी।

देववर—यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

देववर्णिनी—भारद्वाज ऋषि की कन्या तथा विश्रवा ऋषि की पत्नी। इसे वैश्रवण नामक पुत्र था।

देववर्धन--(सो. कुकुर.) भागवतमत में देवक का पुत्र (देवरक्षित देखिये)।

देववर्मन्--(मौर्य. भविष्य.) वायु तथा ब्रह्मांडमत में इंद्रपालित का पुत्र। इसने सात वर्षों तक राज्य किया। सोमशर्मा इसी का ही नामांतर है।

देववर्ष--प्रियव्रत राजा का पुत्र (भा. ५.२०.९)।

देववात--भरत का पुत्र। इसके भाई का नाम देवश्रवस् था।

इन दोनों का एक संपूर्ण सूक्त है। दृषद्वती, सरस्वती एवं आपया नदी के तट पर, इसने यज्ञ किये थे (ऋ. ३.२३.२)।

देववीति--(स्वा. प्रिय.) मेरु की नौ कन्याओं में से एक तथा अग्नीध्रपुत्र केतुमाल की स्त्री।

देवव्रत--मालिनी देखिये।

२. भीष्म का नामांतर (म. आ. ९०.५०; ९४. ६७)।

३. एक कर्मठ ब्राह्मण। एक बार एक कृष्णभक्त ने कृष्ण का पूजन किया। तीर्थ देने पर, इसने उसे अश्रद्धा से ग्रहण किया।

अतः इसे बाँस का जन्म मिला। पश्चात् पुण्यसंचय के कारण, उस बाँस से कृष्ण ने अपनी मुरली बनायी, एवं इसका उद्धार हो गया (पद्म. पा. ७३)।

देवशर्मन्--एक ऋषि। इसकी स्त्री रुचि (म. अनु. ७५. १८; ४१ कुं.)।

२. जनमेजय के सत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.९)।

३. वायुमत में व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा के शाकपूर्ण रथीतर का शिष्य (व्यास देखिये)।

४. एक सदाचारी ब्राह्मण। अपने पिता का वर्षश्राद्ध सुयोग्य ब्राह्मण के हाथों से, यह हर साल करता था। एकबार श्राद्ध के बाद यह आँगन में बैठा था। तब एक बैल तथा कुतिया का संभाषण इसने सुना। उस संभाषण से इसे पता चला कि, वे दोनों इसके मातापिता हैं, तथा श्राद्ध की गड़बड़ी से दोनों भूखे रह गये है।

अपने मातापिता को, बैल एवं कुतिया का जन्म कैसे प्राप्त हुआ, इसका कारण पूछने के लिये, यह वसिष्ठ के पास गया।

वसिष्ठ ने सारी घटनायें अन्तर्ज्ञान से ज्ञात कर, इसे बताया, 'रजस्वला स्थिति में तुम्हारी माता ने भोजन पका कर ब्राह्मणों को खिलाया। इस कारण उन दोनों को यह दुःस्थिति प्राप्त हुई है'। इस पर उपाय पूछने पर, वसिष्ठ ने भाद्रपद शुद्ध पंचमी को, ऋषिपंचमी व्रत करने के लिये इसे कहा। उसे करने के बाद, इसके मातापिता का उद्धार हुआ (पद्म. उ. ७७)।

५. एक ब्राह्मण। प्रत्येक पर्व में यह समुद्रसंगम पर श्राद्ध करता था। उस श्राद्ध से इसके पितर प्रत्यक्ष आ कर इसे आशीर्वाद देते थे। एक बार अपने पितरों के साथ यह पितृलोक गया। वहाँ अपने पितरों से भी अधिक सुखी अन्य पितर इसने देखे। उसका रहस्य पूछने पर इसे ज्ञात हुआ कि, उनके श्राद्ध महीसागरसंगम पर होते हैं। वहीं श्राद्ध करने का इसने निश्चय किया। पश्चात् यह पृथ्वी पर आया, एवं अन्य लोगों की सहायता से महीसागरसंगम पर इसने श्राद्ध किया। उससे इसके पितरों का उद्धार हुआ (स्कन्द. १. २. ३)।

६. पुरंदर नगर में रहनेवाला एक ब्राह्मण। इसने अनेक पुण्यकृत्य किये। किंतु उनसे इसके मन को शांति प्राप्त नहीं हुई। अन्त में भगवद्गीता के दुसरे अध्याय से इसे मनःशांति प्राप्त हुई। (पद्म. उ. १७६)।

७. मायापुरी में रहनेवाला अत्रिकुल का एक ब्राह्मण। इसकी कन्या का नाम गुणवती तथा दामाद का नाम चन्द्रशर्मा था। चंद्रशर्मा इसका शिष्य भी था। एक बार, ये दोनों अरण्य में दर्भसमिधा लाने के लिये गये। एक राक्षस ने इनका वध किया। अनेक प्रकार के धर्माचरणों के कारण, ये वैकुंठ गये (पद्म. उ. ८८; सत्यभामा देखिये)।

८. कावेरी नदी के उत्तरतट पर रहनेवाला एक ब्राह्मण। कार्तिक माह में अपने पुत्र को इसने स्नानादि कर्म करने के लिये कहा। उसने दुर्लक्ष किया। तब क्रुद्ध हो कर, इसने पुत्र को शाप दिया, 'तुम चूहा बनोंगे'। बाद में पुत्रद्वारा प्रार्थना की जाने पर, इसने उःशाप दिया, 'कार्तिकमाहात्म्य सुनने पर तुम मुक्त हो जावोंगे'।

उस शाप के अनुसार, इसका पुत्र चूहा बन कर अरण्य में गया। एक बार एक आँवले के वृक्ष के नीचे, विश्वामित्र ऋषि अपने शिष्यों को कार्तिकमाहात्म्य बता रहा था। उसे सुन कर वह ब्राह्मणपुत्र मुक्त हुआ (स्कंद. २.४.१२)।

९. विष्णु का एक अवतार। जालंधर दैत्य एवं देवताओं का युद्ध चल रहा था। उस समय, जालंधर दैत्य की पत्नी वृंदा को एवं उसकी सखी स्मरदूति को फँसाने के लिये, विष्णु ने देवशर्मा नामक तपस्वी का वेष धारण किया।

अपने को भरद्वाज गोत्रज ऋषि बता कर, देवशर्मा के रूप धारण करनेवाला विष्णु वृंदा को अपने आश्रम में ले गया। पश्चात् जालंधर का रूप धारण कर के, विष्णु ने देवशर्मा के आश्रम में वृंदा का उपभोग लिया (पद्म. उ. १८; जालंधर देखिये)।

देवश्रवस्--(सो. क्रोष्टु.) शूर राजा को मारिषा से उत्पन्न पुत्र। कंस की भगिनी कंसवती इसकी स्त्री थी। इसे सुवीर एवं इषुमान् नामक दो पुत्र थे (भा. ९.२४)।

२. एक ऋषि (म. शां. ४७.५)। यह विश्वामित्र के कुल में पैदा हुआ था, एवं उसीके वंश का एक प्रवर भी था। इसे कुशिक गोत्र का मंत्रकार भी बताया गया है।

देवश्रवस् भारत--भरतवंश का एक राजा। दृषद्वती, सरस्वती, एवं आपया नदीयों के तट पर, इसने देववात् राजा के साथ काफी यज्ञ किये थे (ऋ. ३.२३. २-३)। महाभारत (भांडारकर इन्स्टिटयूट आवृत्ति) में 'वेदश्रवस्' नाम से इसका निर्देश प्राप्त है।

देवश्रवस् यामायन--एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १७)। अनुक्रमणी में इसे यम का पुत्र कहा गया है।

देवश्रेष्ठ--रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

देवसावर्णि--रौच्य मनु का नामांतर। यह तेरहवाँ मनु था, एवं तेरहवें मन्वंतर का अधिपति था (भा. ८. १३; ब्रह्मवै. २.५४)। पुराणों में इसका ऋतधामा नामांतर दिया गया हैं (मत्स्य. ९; मनु देखिये)।

देवसेना--दक्ष प्रजापति की कन्या। केशी दैत्य इसे हरण कर ले जा रहा था। इस वक्त इद्र ने इसे छुड़ाया। पश्चात् इसने कार्तिकेय को वरण किया (म. व. २१३. १; २१८.४७)। महाभारत में दी गयी देवसेना की कथा रूपकात्मक प्रतीत होती है।

देवस्थान--एक ब्रह्मर्षि (म. शां. २०.१;४७.६)।

देवहव्य--एक ऋषि (म. स. ७.१६)।

देवहूति--स्वायंभुव मनु की कन्या, एवं कर्दम-प्रजापति की पत्नी (भा. ३.१२.५४)। इसे नौ कन्याएँ एवं कपिल नामक एक पुत्र था (भा. ३.२४)। कपिल ने इसे सांख्यशास्त्र का उपदेश दिया था। बाद में यह देहत्याग कर नदी बनी (भा. ९.३३)।

देवहोत्र--एक ऋषि। उपरिचर वसु के यज्ञ में यह ऋत्विज् था।

देवातिथि काण्व--एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.४)। इसके सूक्त में रुम, रुशम, श्यावक तथा कृप का उल्लेख है (ऋ. ८.४.२), तथा अन्त में कुरुंग की दानस्तुति की है (ऋ. ८.४.१९)। एकबार अकाल पड़ा। यह अपने पुत्रों के साथ कंदमूल लाने के लिये अरण्य गया। वहाँ इसे कूष्मांड के फल प्राप्त हुएँ। इसने एक साम कह कर, उन फलों को गायों में परिवर्तित कर दिया (पं. ब्रा. ९. २.१९)।

२. (सो. कुरु.) क्रोधन एवं कंडू का पुत्र। विष्णु, मत्स्य तथा वायु पुराणों में इसे अक्रोधन का पुत्र कहा गया है। वैदर्भी मर्यादा इसकी स्त्री थी एवं ऋष्य या रुच इसका पुत्र था (म. आ. ९०.२२; भा. ९.२२.११)।

देवाधिप--दुर्योधन के पक्ष का एक राजा (म. आ. ६१.२७)।

देवानंद--(सो. मगध. भविष्य.) प्रियानंद राजा का पुत्र। इसने बीस वर्षों तक राज्य किया।

देवानीक--(सू. इ.) क्षेमधन्वा का पुत्र (पद्म. सृ. ८)।

देवांतक--रावण का पुत्र। हनुमानजी ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ६.७०)।

२. एक राक्षस। यह हिरण्याक्ष राक्षस का मित्र था। उसकी ओर से युद्ध करते समय, यह यम के हाथों मारा गया (पद्म. सृ. ७०)।

३. एक असुर। यह रौद्रकेतु का पुत्र था। इसने अपने कृत्यों द्वारा त्रैलोक्य को त्रस्त कर रखा था। तब विनायक ने कश्यप के गृह में अवतार ले कर, इसका वध किया।

४. कालनेमि का पुत्र।

देवापि आर्ष्टिषेण--(सो. कुरु.) कुरुवंश का एक राजा एवं सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.९८)। इसके सूक्त में शंतनु राजा का उल्लेख भी प्राप्त है।

शंतनु तथा यह दोनों कुरुवंश का राजा प्रतीप एवं सुनंदा के पुत्र थे। उनमें से यह ज्येष्ठ तथा शंतनु कनिष्ठ बंधु था। फिर भी शंतनु गद्दी पर बैठा। इसी कारण राज्य में १२ वर्षों तक अवर्षण हुआ। ब्राह्मणों ने उससे कहा, 'तुम छोटे भाई हो कर गद्दी पर बैठे हो, इस कारण भगवान् वृष्टि नहीं करते है'।

शंतनु ने देवापि को राजसिंहासन पर बैठने के लिये बुलवाया। परंतु देवापि ने उसे कहा, 'तुम्हारा पुरोहित बन कर मैं यज्ञ करता हूँ। तब वर्षा होगी।' तब इसने ऋग्वेद में इसके नाम से प्रसिद्ध सूक्त का उद्घोष किया (नि. २. ११)। त्वचारोग होने के कारण, इसने राज्य अस्वीकार कर दिया तथा यह तपस्या करने अरण्य गया। सौ वर्ष का अवर्षण होने के कारण, शंतनु की प्रार्थना से इसने यज्ञ

किया (बृहद्दे. ७.१४-८; ८.७)। इससे प्रतीत होता है, क्षत्रिय हो कर भी, इसने ब्राह्मणवर्ण स्वीकार कर पौरोहित्य किया। पृथूदक नामक तीर्थ पर तपस्या कर के, इसने यह ब्राह्मणत्त्व प्राप्त किया था (म. श. ३९.१०)।

'बृहस्पति की स्तुति कर, इसने वर्षा करवाई। अपने सूक्त में इसने स्वयं को 'औलान' कहलाया है (ऋ. १०. ९८.११)। पुराण में कुछ भेद से यही जानकारी उपलब्ध है।

महाभारत में इसे प्रतीप एवं शैब्या-स्त्री सुनंदी का पुत्र बताया गया है (म. आ. ९०.४६)। भागवत, मत्स्य, वायु एवं विष्णुमत में यह प्रतीपपुत्र होने के बारे में मतभेद नहीं है। इसे शंतनु तथा बाह्लिक नामक दो भाई थे। बचपन में ही इसने विरक्ति स्वीकार की (म. आ. ८९.५२; ९०.४६; ह. वं. १.३२.१०६)।

धर्मज्ञान की इच्छा से विरक्त हो कर, यह वन में गया। बाद में यह देवों का उपाध्याय बना। इसे च्यवन तथा इष्टक नामक दो पुत्र थे (वायु. ९९.२३२; ब्रह्म. १३. ११७)। कुष्ठरोग से पीडित होने के कारण, लोगों ने इसे राजा बनाना अमान्य किया था (मत्स्य. ५०. ३९)।

भागवत में उपरोक्त सारी कथा दे कर, उसमें और कुछ जानकारी भी दी गयी है। शंतनु ने देवापि को राज्य का स्वीकार करने की प्रार्थना की। शंतनु के प्रधानों ने कुछ बुद्धिमान् ब्राह्मणों को भेज कर इसकी मति पाखंड मतों की ओर प्रवृत्त की। अंत में शंतनु के पास आ कर यह वेदमार्ग की निंदा करने लगा। इससे यह पतित सिद्ध हो कर, राज्य के लिये अयोग्य बना, तथा शंतनु का दोष नष्ट हो गया (विष्णु. ४.२०.७)।

बाद में यह कलापिग्राम में रहने लगा। कलियुग में सोमवंश नष्ट होने के बाद, कृतयुगारंभ में इसने पुनः एक बार, सोमवंश की स्थापना की (भा. ९.२२)। कलियुग में वर्णाश्रमधर्म नष्ट होने के बाद, नये कृतयुग के आरंभ में, वर्णाश्रमधर्म की स्थापना इसीके हाथों से होनेवाली है (भा. १२. २; विष्णु. ४. २०. ७; ९; सुवर्चस् देखिये)।

२. चेदि देश का एक क्षत्रिय। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५०)।

३. आर्ष्टिषेण राजा के उपमन्यु नामक पुरोहित का पुत्र (सिंधु देखिये)।

देवार्ह—(सो. विदू.) वायुमत में हृदीक का पुत्र।

देवावृध—(सो. क्रोष्टु) सात्वत राजा का पुत्र। इसका पुत्र बभ्रु। पद्ममत में यह सात्वत का द्वितीय पुत्र था। इसे पुत्र न था, इसलिये इसने पर्णाशा नदी के तट पर तपस्या की। तब नदी ने कन्या का रूप धारण कर इसे वरण किया। पश्चात् उस कन्यारूपधारी नदी से इसे बभ्रु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (पद्म. सृ. १३)। इसने यज्ञ में ब्राह्मणों को कांचनछत्र अर्पण किये था (म. शां. २२६.२१; अनु. २००.७ कुं.)।

देवी—एक अप्सरा।

२. प्रह्लादपुत्र वीरोचन की स्त्री (भा. ६. १८. १६)।

३. वरुण की पत्नी। इसे बल नामक पुत्र एवं सुरा नामक कन्या थी (म. आ. ६०.५१; देवी ४. देखिये)।

४. विश्वव्यापक आदिमाया के लिये प्रयुक्त सामान्य-नाम। देवी का शब्दशः अर्थ 'स्त्री देवता' है। इस अर्थ से, देवों के स्त्रियों के लिये, यह शब्द प्रयुक्त किया जाता है। किंतु 'देवी' यह नाम प्रायः आदिमाया ने पृथ्वी पर लिये नानाविध अवतारों के लिये, अधिकतर प्रयुक्त किया जाता है।

पुराणों में 'देवी' यह देवता अत्यंत प्रभावशाली मानी गयी है। इसलिये किसी भी संकट के समय, देव एवं मानव, इसकी शरण में जा कर संकटमुक्त होते है। स्कंद, पद्म, मत्स्य पुराणों में देवी की पराक्रम की अनेक कथाएँ ग्रथित की गयी हैं। 'कालिका पुराण' एवं 'देवी भागवत' ये ग्रंथ देवीमाहात्म्य बताने के लिये ही केवल लिखे गये है। मार्केडेय पुराण में, देवीमाहात्म्य बताने के लिये 'सप्तशती' नामक उपाख्यान की रचना की गयी है (मार्क. ७८-९०)। उसका पठन देवीभक्त लोग प्रतिदिन किया करते हैं।

मानव एवं सृष्टि में जो शक्तिस्रोत है, उसकी उपासना, 'देवी उपासना' का आद्य अभिधान है। देवगणों में से दत्त, शिव, एवं गणेश इन देवताओं में, एवं स्वयं मनुष्य के शरीर में जो सामर्थ्य एवं शक्ति है, उन्हें एकत्रित कर के कार्यप्रवण बनाना, यह 'देवी उपासना' का मुख्य उद्देश्य है। देवीद्वारा विश्व की उत्पत्ति होती है, एवं विश्व का विस्तार ही उसीके कृपाप्रसाद से होता है। सृष्टिविस्तार के लिये, उस सृष्टि में हरएक प्राणिमात्र की आसक्ति या काम निर्माण होना बहुत जरूरी है। जब तक सृष्टि में मोह नहीं, तब तक सृष्टि का विस्तार नहीं हो सकता। सृष्टि के चराचर वस्तुओं के बारे में, उपासकों के मन में आसक्ति या काम निर्माण करना, एवं पश्चात् उस

आसक्ति को पूरी करना, यह 'देवी उपासना' से ही केवल साध्य हो सकता है।

देवी के अनेक अवतार पृथ्वी पर हो गये हैं। उस हर एक अवतार का प्रभाव एवं रूप अलग है। देवी के उस अवतार का नाम भी इसके उस अवतार के रूप एवं गुणवैशिष्ट्य के अनुसार विभिन्न रखा गया है। देवी के इन विभिन्न अवतारों के नाम एवं उनके गुणवैशिष्ट्य इस प्रकार है:—

(१) त्रिगुणात्मिका—चराचर सृष्टि का स्वरूप सत्त्व, रज एवं तम इन तीनो गुणों से युक्त, अतएव 'त्रिगुणात्मक' है। उन तीनो स्वरूप देवी धारण करती है। इसलिये उसे 'त्रिगुणात्मिका' कहते है। अपने त्रिगुणात्मक स्वरूप के कारण, आध्यात्मिक शक्ति के साथ आदिदैविक एवं आधिभौतिक सामर्थ्य ही, देवी अपने भक्तों को प्रदान करती है। उस कारण, 'देवी उपासना' से भक्तों की आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक उन्नति हो जाती है।

(२) दुर्गा—मार्कडेय पुराणान्तर्गत 'देवी माहात्म्य' में, देवी का निर्देश दुर्गा नाम से किया गया है, एवं उसे काली, लक्ष्मी, एवं सरस्वती का अवतार कहा है।

दुर्गम नामक असुर का वध करने के कारण, देवी को 'दुर्गा' नाम प्राप्त हुआ। देवों के नाश के लिये, दुर्गम तपस्या कर रहा था। ब्रह्मदेव को प्रसन्न कर, उसके वर से दुर्गम ने सारे वेद, पृथ्वी पर से चुरा लिये। उस कारण यज्ञयागादि सारे कर्म बंद हुएँ। पृथ्वी पर अनावृष्टि का भय छा गया। ब्राह्मणों ने विनंती करने पर, देवी ने शतनेत्रयुक्त रूप धारण कर, दुर्गम का वध किया, एवं उसने चुरायें हुएँ वेद मुक्त किये (पद्म. स्व. २८; दे. भा. ७.२८)।

(३) महिषासुर मर्दिनी एवं महालक्ष्मी—महिष नामक राक्षस, ब्रह्मदेव के वर के कारण उन्मत्त हो कर देवों को त्रस्त करने लगा। देवों ने प्रार्थना करने पर आदिमाया ने अष्टादश भुजायुक्तरूप धारण किया, एवं रणांगण में महिषासुर का वध किया। देवी के उस अवतार को 'महिषासुर मर्दिनी' एवं 'महालक्ष्मी' कहते है (महिषासुर देखिये)। महिषासुर का वध करने के बाद, उस स्थान पर महालक्ष्मी ने पापनाशनतीर्थ उत्पन्न किया (स्कंद. १.२.६५; ३.३०)।

(४) चामुंडा—शुंभ-निशुंभ नामक दो दानवों ने, देवी का वध करने के लिये, चण्ड-मुण्ड नामक दो राक्षस भेज दिये। किंतु देवी ने उन दोनों का ही वध किया। उस कारण, इसे 'चामुंडा' नाम प्राप्त हुआ। चण्ड-मुण्ड को मारने के बाद, चामुंडा ने शुंभ-निशुंभ का भी वध किया (स्कंद.५.१.३८; चंड ३. देखिये)।

शुंभ-निशुंभ के पक्ष का रक्तबीज नामक और एक असुर था। ब्रह्मदेव के वरप्रभाव से, उसके रक्त के बिंदु भूमि पर पडते ही उतने ही राक्षस निर्माण होते थे। इस कारण वह युद्ध में अजेय हो गया था। चामुंडा ने उसका सारा रक्त, भूमी पर एक ही रक्तबिंदु छिड़कने का मौका न देते हुये, प्राशन किया। उस कारण रक्तबीज का नाश हुआ (दे. भा. ५.२७-२९; मार्क. ८५; शिव. उमा. ४७; रक्तबीज देखिये)।

(५) शाकंभरी—अपने क्षुधित भक्तों को, देवी ने कंदमूल एवं सब्जियाँ खाने के लिये दी। उस कारण, उसे 'शाकंभरी' नाम प्राप्त हुआ।

(६) सती—दक्ष प्रजापति की कन्या के रूप में आदिमाया ने अवतार लिया, उसे 'सती' कहते है। अपनी इस कन्या का विवाह दक्ष ने महादेव से कर दिया।

पश्चात् दक्ष ने एक पशुयज्ञ प्रारंभ किया। उस यज्ञ के लिये, दक्ष ने अपनी कन्या सती एवं जमाई शिव को निमंत्रण नहीं दिया। फिर भी सती पिता के यज्ञस्थान में यज्ञसमारोह देखने आयी। वहाँ दक्ष ने उसका अपमान किया। तब क्रोधवश सती ने, यज्ञकुंड में अपना देह झोंक दिया।

शिव को यह ज्ञात होते ही, दुखी हो कर सती का अर्धदग्ध शरीर कंधे पर ले कर, वह नृत्य करने लगा। उस नृत्य से समस्त त्रैलोक्य त्रस्त हो गया। पश्चात् विष्णु ने शंकर को नृत्य से परावृत्त करने के लिये, सती के कलेवर का एक एक अवयव शस्त्र से तोड़ना प्रारंभ किया। जिन स्थानों पर सती के अवयव गिरे, उन स्थानों पर सती या शक्ति देवी के इक्कावन स्थान प्रसिद्ध हुएँ। उन्हे 'शक्तिपीठ' कहते है (शक्ति देखिये)।

(७) पार्वती, काली, एवं गौरी—दक्षकन्या सती ने हिमालय के उदर में पुनः जन्म लिया। हिमालय की कन्या होने से, इसे हैमवती, गिरिजा, एवं पार्वती ये पैतृक नाम प्राप्त हुएँ। इसकी शरीरकांति काली होने के कारण, उसे 'काली' नामांतर भी प्राप्त हुआ था।

एक बार शंकर ने मज़ाक के हेतु से, पार्वती की कृष्णवर्ण के उपलक्ष में, उसे 'काली' कह के पुकारा।

इसने यह अपमान समझा, एवं गौरवर्ण प्राप्त करने के लिये तपस्या करने, यह हिमालय पर्वत में गयी। शंकर अत्यंत स्त्रीलंपट होने से, उसके मंदिर में किसी भी स्त्री का प्रवेश न हो, ऐसी व्यवस्था इसने की। अपनी माता की सखी कुसुमामोदिनी एवं शिवगणों में से वीरक को, शंकर की मंदिरद्वार पर कड़ा पहारा रखने के लिये इसने कहा। फिर भी वीरक की दृष्टि बचा कर, अंधकासुर का अड़ि नामक पुत्र सर्प का रूप ले कर शिवमंदिर में पहुँच गया। पश्चात् पार्वती का रूप ले कर उसने शंकर को भुलाने का प्रयत्न किया। किंतु शंकर ने अंतर्ज्ञान से उसे पहचान कर उसका नाश किया।

वीरक पहारे पर होते हुए भी, अड़ि राक्षस को शिवमंदिर में प्रवेश मिल गया। उस लापरवही के लिये पार्वती ने उसे शाप दिया, 'तुम पृथ्वी पर शिला हो कर गिरोगे'। पश्चात् पार्वती की तपस्या से संतुष्ट हो कर, ब्रह्मदेव ने उसे गौरवर्ण प्रदान किया। उससे इसे गौरी नाम प्राप्त हुआ (पद्म. सृ. ४४; मत्स्य. १५५—१५८; कालि. ४७)।

(८) कालिका—दारुक दैत्य का संहार करने के लिये, पार्वती ने शंकर के कंठ से, एक महाभयानक देवी निर्माण की। वह कृष्णवर्णीय होने से उसे 'कालिका' नाम प्राप्त हुआ। कालिका ने एक गर्जना करते ही, दारुक अपने सैन्य के साथ मृत हो गया। शिव के कंठ से उत्पन्न होने के कारण, कालिका के शरीर में शिवकंठ में स्थित विष उतर गया था। उस कारण दारुक के वध पश्चात्, कालिका के उग्र स्वरूप से स्वयं देव त्रस्त हो गये। पश्चात् शंकर ने बालरूप धारण कर, कालिका का स्तनपान किया एवं उसका सारा विष शोषण किया। तब यह शान्त हो गयी (स्कंद. १.२.६२)।

(९) मातृका—देवी का और एक अवतार मातृका है। घंटाकर्णी, त्रैलोक्यमोहिनी आदि सात मातृका (सप्तमातृका) प्राचीनकाल से प्रसिद्ध हैं। मुहेंजोदड़ो एवं हड़प्पा के उत्खनन में उपलब्ध 'सिंधुघाटी संस्कृति' में भी मातृका की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं (मातृका देखिये)।

इसके अतिरिक्त देवी भागवत एवं मत्स्य पुराण में, देवी के अन्य चौदह अवतारों का निर्देश किया गया है। देवी के ये चौदह अवतार इस प्रकार है:—

१. सिद्धांबिका—स्कंद ने उसकी स्थापना की। २. तारा—यह दक्षिण दिशा में स्थित है। ३. भास्करा—यह पश्चिम दिशा का पालन करती है, एवं नक्षत्रों को प्रकाश देती है। ४. योगीश्वरी—यह उत्तर दिशा में रहती है। उसके दृष्टिपात से सनकादिक योगी सिद्ध बने। ५. त्रिपुरा—त्रिपुरासुर का वध करने के लिये, इसने शंकर की मदद की। ६. कोलंबा—यह पूर्व दिशा में वाराहगिरि पर रहती है। ७. कपालेश्वरी—यह कोलंबा के साथ रहती है। ८. सुवर्णाक्षी। ९. चर्चिता। १०. त्रैलोक्यविजया—यह पश्चिम दिशा में रहती है। ११. वीरा। १२. हरसिद्धि—यह प्रलय की देवता है। १३. चंडिका—ईशान्य में रहनेवाली इस देवी ने चंडमुंड का वध किया। १४. भूतमाला अथवा भूतमाता—यह शुद्ध के भ्रूमध्य से निकली (स्कंद १.२.४७; ३.१.१७; मत्स्य. १३; दे. भा. ९)।

देवीपीठ—उपरिनिर्दिष्ट देवी अवतारों के अतिरिक्त, देवी के १०८ नाम, एवं स्थान पुराणों में मिलते हैं। देवी के ये स्थान 'देवीपीठ' नाम से पहचाने जाते हैं। पुराणों में निर्दिष्ट देवीपीठ एवं वहाँ स्थित देवी के अवतार के नाम निम्नलिखित सूची में दिये गये है। इस सूची में से प्रथम नाम देवीपीठ का, एवं उसके बाद कंस में दिया नाम वहाँ स्थित देवी के अवतार का है:—

अच्छोद (सिद्धदायिनी), अट्टहास (फुल्लरा), अमरकंटक (चण्डिका), अम्बर (विश्वकाया), अम्बर (विश्वकाया देवी), अश्वत्थ (वन्दनीया देवी), उज्जयिनी (चण्डिका), उत्कलात (विमला), उत्तरकुरु (औषधि), उत्पलावर्तक (लोला), उष्णतीर्थ (अभया), एकाम्रक (कीर्तिमती), कन्यकाश्रम (शर्वाणी), कपालमोचन (शुद्धा, शुद्धि,), कमलाक्ष (महोत्पलादेवी), कमलालय (कमला, कमलादेवी), करतोया तट (अपर्णा), करवीर (महिषमर्दिनी), करवीर (महालक्ष्मी), कर्कोट (मुकुटेश्वरी), कर्णाट (जयदुर्गा), कर्णिक (पुरुहूता), कश्मीर (महामाया), काञ्ची (देवगर्भा), कार्तिकेय (शाङ्करी, यशस्करी देवी), कान्यकुब्ज (गौरी), कामगिरी (कामाख्या), कायावरोहण (माता), कालंजर (काली), कालमाधव (काली), कालीपीठ (कालिका), काश्मीरमण्डल (मेधा), किरीट (किरीट), किष्किंधा पर्वत (तारा), कुब्जाम्रक (त्रिसंध्या), कुमुद (सत्यवादिनी), कुरुक्षेत्र (सावित्री), कुशद्वीप (कुशोदका), कृतशौच (सिंहिका), केदार (मार्गदायिनी), कोटितीर्थ (कोटवी), गंगाद्वार (हरिप्रिया, रतिप्रिया देवी), गंगा (मंगला), गण्डकी (गण्डकी), गन्धमादन (कामुका, कामाक्षी), गया (मंगला), गोकर्ण (भद्र-

कालिका, भद्रकर्णिका), गोमन्त (गोमती), गोदाश्रमे (त्रिसंध्या), गोदावरी तट (विश्वेशी), चट्टल (भवानी), चन्द्रभागा (काला), चित्त (ब्रह्मकला देवी), चित्रकूट (सीता), चैत्ररथ (मदोत्कटा), छगलाण्ड (प्रचण्डा), जनस्थान (भ्रामरी), जयन्ती (जयन्ती) जालन्धर (त्रिपुरमालिनी), जालन्धर (विश्वमुखी), ज्वालामुखी, (अम्बिका), त्रिकूट (रुद्रसुंदरी), त्रिपुरा (त्रिपुरसुंदरी), त्रिस्रोता (भ्रामरी) देवदारुवन (पुष्टि), देवलोक (इंद्राणी), देविकातट (नन्दिनी), द्वारवती (रुक्मिणी), नंदीपुर (नंदिनी), नलहाटी (नला), नागवंधन (सुगंधा), नैपाल (महामाया), नैमिष (लिंगधारिणी), पञ्चसागर (वाराही), पयोष्णी (पिंगलेश्वरी), पाताल (परमेश्वरी), पारतटे (पारा), पिण्डारक वन (धृति), पुण्ड्रवर्धन (पाटला), पुरुषोत्तम (विमला), पुष्कर (सावित्री, पुरुहूतादेवी), प्रभास (चंद्रभागा), प्रभास (पुष्करावती), प्रयाग (ललिता), बदरी (उर्वशी), बहुला (चण्डिका), बिल्वक (बिल्वपत्रिका), ब्रह्मास्य (सरस्वती), भद्रेश्वर (भद्रा), भरताश्रम (अनंता, अंगना), भैरवपर्वत (अवन्ति), मकरन्दक (चण्डिका), मगध (सर्वानंदकरी), मणिवेदिक (गायत्री), मथुरा (देवकी), मन्दर (कामचारिणी), मर्कोट (मुकुटेश्वरी), मलयपर्वत (रम्भा), मलयाचल (कल्याणी), महाकाल (महेश्वरी), महालय (महापद्मा, महाभागा), महालिंग (कपिला), मांडव्य (माण्डवी देवी), मातृणा (वैष्णवी), माधव वन (सुगन्धा), मानस (दाक्षायणी), मानस (कुमुदा), मायापुरी (नीलोत्पला), मायापुरी (कुमारी), माहेश्वरपुरी (स्वाहा), मिथिला (महादेवी), मुकुट (सत्यवादिनी), यमुना (मृगावती), यशोर (यशोरेश्वरी), युगाद्या (भूतधात्री), रत्नावली (कुमारी), रामगिरि (शिवानी), रामतीर्थ (रमणा), रामा (तिलोत्तमा), रुद्रकोटि (रुद्राणी), लंका (इंद्राक्षी), ललित (संनति), वक्त्रेश्वर (महिषमर्दिनी), वराहशैल (जया), वस्त्रेश्वर (तृष्टि), वाराणसी (विशालाक्षी), विकूट (भद्रसुंदरी), विनायक (उमादेवी), विन्ध्य (विन्ध्यनिवासिनी), विन्ध्य कन्दर (अमृता), विपाशा (अमोघाशी), विपुल (विपुला), विभाव (कपालिनी), विराट (अम्बिका विशालाक्षी), विश्वेश्वर (पुष्टि, विश्वा), वृन्दावन (उमा), वृन्दावन (राधा), वेगल (प्रचण्डा), वेणानदी (अमृता), वेदवदन (गायत्री), वैद्यनाथ (जयदुर्गा), वैद्यनाथ (अरोगा), वैश्रवणालय (निधि), शङ्खोद्धार (ध्वनि), शालिग्राम (महादेवी), शिवकुण्ड (शिवानन्दा), शिवचक्र (शुभा-चण्डा), शिवलिंग (जनप्रिया), शिवसंनिधि (पार्वती), शुचि (नारायणि), शोण (शोणाक्षी), शोणसंगम (सुभद्रा), श्रीपर्वत (श्रीसुंदरी), श्रीशैल (महालक्ष्मी), श्रीशैल (माधवी), संती (अरुन्धती), सन्तान (ललिता), सरस्वती (देवमाता), सर्वशरीरिन (शक्ति), सहस्राक्ष (उत्पलाक्षी), सह्याद्रि (एकवीरा), सह्याद्रि (एकवीरा), सिद्धपुर (मातालक्ष्मी देवी), सिन्धुसंगम (सुभद्रा), सुगन्धा (सुनन्दा), सुपार्श्व (नारायणी), सूर्यबिम्ब (प्रभा), सोमेश्वर (वरारोहा), स्थानेश्वर (भवानी), हरिश्चन्द्र (चन्द्रिका), हस्तिनापुर (जयन्ती), हिंगुला (कोटरी), हिवावतपृष्ठ (नंदा), हिमाद्रि (भीमादेवी), हिरण्याक्ष (महोत्पला), हेमकूट (मन्मथा), कालिका. ६४; मत्स्य. १३; पद्म. सृष्टि. १७; दे. भा. ७.७;) ।

देहिन्--अमिताभ देवों में से एक ।

दैत्य--एक मानवजाति । कश्यप एवं दिती की संतती 'दैत्य' कहलाती थी । उस वंश के लोगों से ही यह मानवजाति उत्पन्न हो गयी होगी ।

दैत्यों का सुप्रसिद्ध राजा वृषपर्वन् था । उसकी कन्या शर्मिष्ठा पुरु राजा ययाति को विवाह में दी गयी थी। उससे आगे पुरु आदि वंश निर्माण हुएँ ।

दैत्यों का पुरोहित शुक्र था । उसके पास मृत को जीवित करनेवाली 'संजीवनी विद्या' थी। वह विद्या देवों ने, अपने पुरोहित बृहस्पति के पुत्र कच के द्वारा शुक्र से संपादित की ।

शुक्र के वंश में से शंड, मर्क, त्वष्टृ, वरुत्रि, त्वष्ट, त्रिशिरस्, विश्वकर्मन वृत्र, वरुचिन् ये पुरुष प्रसिद्ध हैं। ये सारे दैत्यों के पुरोहित एवं इंद्र के शत्रु थे । उनमें से शंड एवं मर्क' दैत्यों को छोड़ कर देवों के पक्ष में जा मिले । उस कारण शुक्र ने उनको शाप दिया ।

आगे चल कर, दानव, दैत्य, राक्षस, नाग, दस्यु आदि शब्द वंशवाचक न रह कर गुणवाचक हो गये ।

दैत्यद्वीप--गरुड का पुत्र (म. उ. ९९.११) ।

दैत्यसेना--दक्ष प्रजापति की कन्या तथा केशी दैत्य की स्त्री (म. व. २१३.१) ।

दैव्यांपति--प्लक्ष का पैतृक नाम (तै. ब्रा. ३.१०.९. ३-५) । अग्निचिति की ईंटें बनाने की विद्या शांडिल्यायन ने इसे सिखायी थी (श. ब्रा. ९.५.१.१४) ।

दैर्घतम--(सो. काश्य.) दीर्घतमा का पुत्र । धन्वंतरि का यह पैतृक नाम था ।

दैर्घतमस--कक्षीवत् देखिये ।

दैव--अथर्वन् का पैतृक नाम ।

दैवत्य--एक ऋषि । 'उपाकर्मांगआचार्यतर्पण' ग्रंथ में इसका उल्लेख है (जैमिनि देखिये) । एक राजा ।

दैवराति--(सू. निमि.) देवरातपुत्र बृहद्रथ का यह पैतृक नाम था । इसके द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में याज्ञवल्क्य का शाकल्य से वाद हुआ था । पश्चात् याज्ञवल्क्य ने इसे तत्त्वज्ञान का उपदेश किया (म. शां. २९८.४) ।

२. (सो. क्रोष्टु.) देवरातपुत्र देवक्षत्र का पैतृक नाम ।

दैवल--एक ऋषि । असित का यह पैतृक नाम था । (पं. ब्रा. १४.११.१८, असित देखिये) ।

दैववात--एक राजा । संजय राजा का यह पैतृक नाम था (ऋ. ४.१५.४) । यह अग्निपूजक था एवं तुर्वश तथा वृचीवत् राजाओं पर इसने विजय प्राप्त किया था (ऋ. ४.१५.४) । त्सिमर के मत में, अभ्यावर्तिन् चायमान पार्थव राजा एवं यह दोनों एक ही थे (अल्टिन्डिशे लेवेन १३३, १३४) । दिवोदास राजा की तरह, इसका राज्य भी सिंधु नदी के पश्चिम में था । कुरु राजा देववात के साथ भी इसका घनिष्ट संबंध था, यह इसके नाम से जाहिर होता है ।

दैवाप--इन्द्रोत का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.५.४.१) ।

दैवावृध--बभ्रु का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.३४) । सायणाचार्य दैवावृध एवं बभ्रु दो व्यक्ति मानते है ।

दैवोदास--भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि ।

दैवोदासि--प्रतर्दन का पैतृक नाम (सां. ब्रा. २६.५. सां. उ. ३.१) । सुदास का भी यह पैतृक नाम रहा होगा (परुच्छेप एवं प्रतर्दन देखिये) ।

दोष--अष्ट वसुओं में से एक ।

दोषा--(स्वा. उत्तान.) पुष्पार्ण राजा की स्त्री । इसे प्रदोष, निशीथ एवं व्युष्ट नामक तीन पुत्र थे ।

दौरेश्रवस--पृथुश्रवस् का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २५.१५.३) ।

दौरेश्रुत--तिमिर्थि का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २५.१५.१) ।

दौर्गह--दुर्गह देखिये ।

दौर्मुखि--यशोधरा का पैतृक नाम ।

दौश्शालेय--दुःशलापुत्र सुरथ का पैतृक नाम ।

दौश्शासनि--दुःशासनपुत्र का पैतृक नाम । अभिमन्यु वध के लिये यह निमित्तमात्र बना ।

दौष्यन्ति तथा दौःष्यन्ति--भरत के पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ८.२३; श. ब्रा. १३.५.४; ११) ।

द्यावापृथिवी--एक देवताद्वय । ऋग्वेद में इन्हें कई बार मातापिता कहा गया है । द्यौ को पिता तथा पृथिवि को माता मानने का संकेत ऋग्वेदकाल से प्रचलित है । यह जोड़ी इन्द्रादि की भी मातापिता है । पृथ्वी के सारे लोगों के मातापिता भी यही हैं ।

द्यु--अष्टवसुओं में से एक । एक बार सारे वसु अपने भार्याओं के साथ वसिष्ठ के आश्रम में क्रीडा करने गये । वहाँ उन्होंने वसिष्ठ की कामधेनु देखी । कामधेनु के रूप एवं गुण देख कर, हरण करने का विचार उन्होंने किया । वसुओं में से द्यु ने कामधेनु चुरा ली ।

कामधेनु के हरण की वार्ता ज्ञात होते ही, वसिष्ट ने उन सब वसुओं को शाप दिया, 'तुम सब मनुष्य योनि में जन्म लो' । इस शाप के अनुसार द्यु ने गंगा के उदर से भीष्म के रूप में जन्म लिया (म. आ. ९३.४४) ।

द्युत--धृत देखिये ।

द्युतान मारुत--एक ऋषि एवं सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.९६; पं. ब्रा. १७.१.७; ६.४.२) । अन्य कई स्थानों में 'वायु देवता' अर्थ से इसका निर्देश प्राप्त है (वा. सं. ५.२७; तै. सं. ५.५.९.४; ६.२.१०.४; क. सं. १५.७; श. ब्रा. ३.६.१.१६) ।

द्युति--द्रुति का नामांतर ।

द्युतिमत्--(सू. इ.) मदिराश्व राजा का पुत्र । इसका पुत्र सुवीर (म. अनु. २.९ कुं.) ।

२. शाल्वदेशीय एक राजा । अपना राज्य इसने ऋचीक को दान दिया था । उस कारण इसे मरणोत्तर सद्गति प्राप्त हुई (म. अनु. १३७. २२-२३; शां. २२६-३३) ।

३. स्वायंभुव मनु का एक पुत्र (पद्म. सृ. ७) ।

४. दक्ष सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक ।

५. आभूतरजस देवों में से एक ।

६. सरस्वती के तट पर स्थित भद्रावती नामक नगर का राजा (पद्म. उ. ४९) ।

७. मणिभद्र तथा पुण्य जनी का पुत्र ।

द्युमत्--स्वायंभुव मन्वन्तर के वसिष्ठ तथा ऊर्जा का पुत्र (भा. ४१.४१) ।

२. स्वारोचिष मनु का एक पुत्र (मनु देखिये) ।

२. प्रतर्दन राजा का नामांतर (प्रतर्दन देखिये)।

४. शाल्व राजा का प्रधान। कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.६)।

द्युमत्सेन--शाल्वदेशीय सत्यवत् वा चित्राश्व राजा का पिता (सावित्री देखिये)।

२. एक राजा। राजसूय दिग्विजय के समय, अर्जुन ने इसे जीता। यह धर्मराज की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.२७; २३.२७०* पंक्ति ४)। यह कृष्ण के द्वारा मारा गया (म. स. परि. १ क्र. २१)।

३. (सो. मगध. भविष्य.) भागवत मत में शम का पुत्र। मत्स्य के मत में त्रिनेत्र का पुत्र (दृढसेन २. देखिये)।

द्युम्न--(स्वा. उत्तान.) चक्षुर्मनु तथा नड्वला का पुत्र (मनु देखिये)।

द्युम्न विश्वचर्षणि आत्रेय--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २३)।

द्युम्नीक वासिष्ठ--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.८७)।

द्योतन--सायण के मत में एक राजा का नाम (ऋ. ६.२०.८)।

२. सुतप देवों में से एक।

द्रविड़--कृष्ण तथा जांबवती का पुत्र।

द्रविड़ा--(सू. दिष्ट.) वायु के मत में वैशाली के तृणबिंदु राजा की कन्या। इड़विड़ा इसीका ही नामांतर था। इसका पुत्र विश्रवस् (वायु. २.२४.१६; विश्रवस् देखिये)।

२. कई जगह इसे विश्रवस् की पत्नी बता कर, कुवेर को इन दोनों का पुत्र कहा है (भा. १.४.३;४.१.३६)।

द्रविण--पृथु तथा अर्चि का पुत्र (भा. ५.२२.२४)।

२. धर नामक वसु का पुत्र (म. आ. ६०.२०)।

३. तुषित देवों में से एक।

द्रविणक--अग्नि को वसोर्धारा से उत्पन्न पुत्र (भा. ६.६.१३)।

द्राह्यायण--(णि) सामवेद के श्रौत तथा गृह्यसूत्र तैयार करनेवाला आचार्य। इसे खादिर भी कहते हैं। रुद्रभूती का यह पैतृक नाम था। इसे राणायनीय शाखा का सूत्रकार माना जाता है। किंतु हेमाद्रि के मत में, राणायनीय तथा कौथुम शाखा का सूत्रकार गोभिल नामक आचार्य है (श्राद्ध कल्प)। इसके द्वारा रचित 'खादिर श्रौतसूत्र' शार्दूलशाखा का माना जाता है (भगवद्दत्तकृत जै. उ. ब्रा. प्रस्तावना पृ. १७)।

द्रुति--(स्वा. प्रिय.) नक्त की पत्नी। इसे गय नामक एक पुत्र था (भा. ५.१५.६)।

द्रुपद--(सो. अज.) पांचाल देश का सुविख्यात राजा एवं द्रौपदी का पिता। उत्तर पांचाल देश के सोमक राजवंश के पृषत् राजा का यह पुत्र था। इस लिये, इसे 'सौमकि' नामांतर भी प्राप्त था (म. आ. परि. १. ७५.२७)।

पांचालाधिपति पृषत् राजा को काफी वर्षों तक पुत्र नहीं हुआ। पुत्रप्राप्ति के लिये उसने तपस्या की। तप करते समय, एक बार मेनका नामक अप्सरा वहाँ आयी। उसका लावण्य देख कर पृषत् मोहित हो गया, एवं उसका वीर्य स्खलित हो गया। उस वीर्य से एक बालक का जन्म हुआ। वही द्रुपद है (म. आ. परि. १ क्र. ७९, पंक्ति १५२-१७५)। यह मरुद्‌गणों के अंश से हुआ (म. आ. ६१.७४)। द्रुपद को यज्ञसेन (म. आ., १२२.२६), पांचाल, तथा पार्षत नामांतर भी प्राप्त थे।

द्रोणविरोध--द्रुपद ने *अस्त्रशिक्षा तथा धनुर्विद्याशिक्षा*, द्रोणाचार्य के पिता भरद्वाज के निरीक्षण में प्राप्त की थी। इसलिये द्रोण द्रुपद का गुरुबंधु था। धनुर्विद्या पूर्ण होने पर, द्रुपद ने भरद्वाज को गुरु दक्षिणा दी, एवं वचन दिया, '*मेरे राज्यारूढ होने पर यदि तुम या तुम्हारा पुत्र द्रोण* मेरे पास सहायता माँगने आओगे, तो मैं तुम्हें अवश्य सहायता करूँगा'। बाद में द्रुपद अपने राज्य में चला गया।

द्रुपद को राज्याधिकार प्राप्त होने के बाद, पूर्ववचनानुसार इसकी सहायता माँगने के लिये, द्रोण इसके पास आया। परन्तु मदांध हो कर, द्रुपद ने सहायता की जगह द्रोण का अत्यंत उपहास किया। इस अपमान का बदला लेने के लिये, द्रोण ने पांडवों का आचार्यत्व मान्य किया, एवं उनके द्वारा द्रुपद से प्रतिशोध लिया (द्रोण देखिये)। बाद में द्रोण ने इसका आधा (उत्तर पांचाल) राज्य स्वयं ले कर, दूसरा आधा (दक्षिण पांचाल) राज्य वापस दे दिया। द्रुपद गंगातट पर दक्षिण पांचाल में माकंदी में राज्य करने लगा (म. आ. १२८.१५)। प्राचीन पांचाल ही आधुनिक रोहिलखंड है।

सोमक एवं सृंजय राजवंश के लोग भी इसके साथ दक्षिण पांचाल पधारे। ये सारे लोग भारतीय युद्ध में द्रुपद के साथ पांडवों के पक्ष में शामिल थे।

धृष्टद्युम्नजन्म--द्रोण ने अपने शिष्यों के द्वारा इसकी दुर्दशा करने के कारण, द्रुपद द्रोण पर अत्यंत

क्रोधित हुआ, तथा उसके नाश के लिये उपाय ढूँढने लगा। द्रोणविनाशक पुत्र की प्राप्ति के लिये यह ऋषियों के एवं ब्राह्मणों के आश्रम में घूमने लगा। एक बार उपयाज ऋषि के कहने पर, याज नामक काश्यपगोत्रीय ब्राह्मण के आश्रम में यह गया। वह ब्राह्मण अत्यंत लोभी होने के कारण, कौनसा भी असूक्त कर्म करने के लिये सदा तैयार रहता था। द्रुपद ने उसे पुत्रप्राप्ति का उपाय पूछा, एवं पुत्र होने पर एक अर्बुद धेनु दान देने का प्रलोभन उसे दिखाया (म. आ. १६.७.२१)। उसपर पुत्रप्राप्ति के लिये, यज्ञ करने की सलाह याज ने इसे दी।

उपयाज के उस सलाह के अनुसार, उपयाज तथा उसका भाई याज दोनों को अपने साथ नगर में ला कर, इसने यज्ञ किया। यज्ञसमाप्ति पर सिद्ध किया गया चरु खाने के लिये, याज ने द्रुपद की पत्नी सौत्रामणि को बुलाया। परन्तु उसके आने में विलंब होने पर, याज ने वह चरु अग्नि में झोंक दिया। तत्काल अग्नि में से एक कवचकुंडल-धारी दिव्य पुरुष, तथा एक श्यामवर्णा स्त्री प्रकट हुई। उन्हें अपने पुत्र एवं पुत्री मान मान कर, इसने उनके नाम धृष्टद्युम्न तथा द्रौपदी रख दिये (म. आ. १५५)।

द्रौपदीस्वयंवर--द्रौपदी उपवर होते ही द्रुपद ने उसके स्वयंवर की तैयारी की। मत्स्ययंत्र का, धनुष्य द्वारा वेध करने वाले को ही द्रौपदी दी जायेगी, ऐसी शर्त इसने रखी थी। ब्राह्मण वेष में पांडव इस स्वयंवर में आये थे। अर्जुन ने शर्त पूरी की। इसे द्रुपद ने द्रौपदी दी। 'क्षत्रियों को छोड़ कर द्रुपद ने एक ब्राह्मण को अपनी कन्या दी, एवं हमारा अपमान किया,' ऐसी सारे क्षत्रिय राजाओं की कल्पना हुई।

उस कारण वे द्रुपद से लड़ने के लिये प्रवृत्त हो गये। किंतु पांडवों ने उन सब का पराजय किया। बाद में द्रुपद ने अपना पुरोहित पांडवों के निवासस्थान पर भेजा। द्रौपदी-स्वयंवर का प्रण जीतने वाले पांडव ही हैं, यह जान कर इसे अत्यंत आनंद हुआ। बाद में बड़े ही समारोह के साथ, इसने पाँच पांडवों के साथ द्रौपदी का विवाह कर दिया (म. आ. १९०)।

भारतीय युद्ध में द्रुपद, पांडवों के पक्ष में प्रमुख था। इसने पांडवों की ओर से मध्यस्थता करने के लिये, अपने पुरोहित को धृतराष्ट्र के पास भेजा था। परंतु समझौते के सारे प्रयत्न निष्फल हो कर युद्ध प्रारंभ हुआ। तब अपने पुत्र, बांधव तथा सेना के सहित द्रुपद, पांडवों की सहायता के लिये, युद्ध में शामिल हुआ। भारतीय युद्ध में इसने काफी पराक्रम दर्शाया। भारतीय युद्ध के पंद्रहवे दिन हुए रात्रियुद्ध में, मार्गशीर्ष वद्य एकादशी के दिन प्रभात समय में, द्रोण के हाथों इसकी मृत्यु हुई (म. द्रो. १६१. ३४; भारत--सावित्री)।

द्रौपदी तथा धृष्टद्युम्न के सिवा, द्रुपद को शिखंडी, सुमित्र, प्रियदर्शन, चित्रकेतु, सुकेतु, ध्वजकेतु (म. आ. परि. १. क्र. १०३. पंक्ति. १०८-११०), वीरकेतु (म. द्रो. ९८. ३३), सुरथ एवं शत्रुंजय (म. द्रो. १३१. १२६) नामक अन्य पुत्र थे। धृष्टकेतु नामक पौत्र भी इसे था। इसके पुत्रों में से शिखंडी, जन्म के समय स्त्री था। बाद में एक यक्ष के प्रसाद से उसे पुरुषत्व प्राप्त हुआ। द्रुपद ने उसे शंकर से भीष्म के वध के लिये माँग लिया था (सौत्रामणि देखिये)।

द्रुम--अधिरथ सूत का पुत्र तथा कर्ण का भाई। भारतीय युद्ध में भीम के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १३०. २३)। भांडारकर संहिता में ध्रुव पाठभेद प्राप्त है।

२. महाभारतकाल का एक राजा। यह शिबि नामक दैत्य के अंश से पैदा हुआ था (म. आ. ६१. ८)।

३. गंधर्वों का पुरोहित (म. स. परि. १. क्र. ३, पंक्ति. १०)। कुबेर सभा में रह कर, यह कुबेर की उपासना करता था (म. सभा. परि. १.३.३०)। भीष्मक-पुत्र रुक्मिन् का यह गुरु था (म. उ. १५५. ७)। इसने उसे विजय नामक धनुष्य दिया था (म. उ. १५५. ११०)।

द्रुमसेन--एक क्षत्रिय राजा। यह गविष्ठ नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१. ३२)। यह शल्य का चक्ररक्षक था। युधिष्ठिर द्वारा इसका वध हुआ (म. श. ११.५२)।

२. दुर्योधनपक्षीय एक राजा (म. आ. ६१. ३२)। यह धृष्टद्युम्न के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १४५. २४)।

द्रुमिल--ऋषभदेव तथा जयंती के शतपुत्रों में से एक। यह भगवद्भक्त था (भा. ५.४; ११.४)।

द्रुह्य--द्रुह्यु का नामांतर।

द्रुह्यु--ऋग्वेदकालीन एक मानवजाति। यदु, तुर्वशु, अनु, पूरु एवं द्रुह्यु ये ऋग्वेदकालीन पाँच सुविख्यात जातियाँ थी (ऋ. १. १०८. ८)। इस 'गण' के लोग भारत के उत्तर पश्चिम विभाग में रहते थे (रॉथ-त्सु. वे. १३१-१३३)। महाभारतकाल में यह लोग

गांधार देश में रहते थे (पार्गि. ज. ए. सो. १९१०. ४९)।

एकवचन तथा बहुवचन में 'द्रुह्यु' का निर्देश ऋग्वेद में कई बार आया है (ऋ. ६. ४६. ८; ७. १८. ६; १२; १४; ८. १०.५)। उनमें से एकवचन का निर्देश द्रुह्यु गण के राजा से संबंधित रहा होगा। यह राजा सुदास का शत्रु था, एवं पानी में डूब कर उसकी मृत्यु हो गयी (ऋ. ७. १८)। दाशराज्ञ युद्ध में इसे काफी महत्त्वपूर्ण स्थान था। इंद्र, अग्नि, एवं अश्वियों का यह भक्त था (ऋ. १.१०८.८; ८.१०.५)।

२. आयुपुत्र नहुष का पौत्र तथा ययाति को शर्मिष्ठा से उत्पन्न तीन पुत्रों में से एक (म. आ. ७८.१०;८४. १०; ९५. ९; गरुड. १.१३९; पद्म. सृ. १२)। अनु तथा पूरु इसके भाई थे। ययाति ने सब पुत्रों को बुला कर, उन्हें अपनी जरा लेने के लिये कहा। शर्मिष्ठा से उत्पन्न पूरू नामक पुत्र ने ही जरा लेना मान्य किया। तब अन्य पुत्रों को शाप दे कर, ययाति ने पूरु को ही गद्दी पर बैठाया।

जरा लेना अमान्य करने के कारण ययाति ने इसे शाप दिया, 'तुम्हारे प्रिय मनोरथ एवं भोग-आशा सदा अतृप्त रहेगी। जहाँ नित्य व्यवहार नावों से होता है, ऐसे दुर्गम देश में तुम्हें रहना पडेगा, एवं वहाँ भी राज्याधिकार से वंचित हो कर, 'भोज' नाम से तुम प्रख्यात होंगे' (वायु. ९४.४९-५०; ह. वं. १.३०.२८-३१; ब्रह्म. १२; १४६; म. आ. ७०)। उस शाप के अनुसार, इसको एवं इसके वंश को म्लेंछ लोगों के प्रदेश में राज्य मिल गया। इसके वंश की जानकारी अधिकांश पुराणों में मिलती है।

ययाति ने सप्तद्वीप पृथ्वी को समुद्र के साथ जीता था। उसके पाँच भाग कर, उसने अपने पुत्रों में बाँट दिये। उनमें से पश्चिमी भाग द्रुह्यु को मिला (ह. वं. १. ३०. १७-१८; विष्णु. ४. १०. १७)। परंतु इसके वंशज भरतखंड के उत्तर की ओर राज्य करते थे। इसके राज्य में म्लेंच्छ लोगों की काफी बस्ती होने का वर्णन प्राप्त है (भा. ९.२३.१६)। द्रुह्यु को पूर्व की ओर का राज्य दिया गया था, ऐसा भी कई जगह उल्लेख प्राप्त है (लिंग. १. ६७)। इसे बभ्रु तथा सेतु नामक दो पुत्र थे (ह. वं. १.३२.१२४; अग्नि. २७६)। मत्स्य के मत में इसे सेतु तथा केतु नामक दो पुत्र थे (मत्स्य. ४८)। द्रुह्यु को बभ्रु नामक एक ही पुत्र था, एवं बभ्रु को सेतु नामक पुत्र हुआ, ऐसा भी निर्देश प्राप्त है (विष्णु. ४.१७.१; भा. ९.२३.१४)। दुष्यन्त ने यह वंश पूरुवंश में मिला दिया। भृगु वंश के ऋषि इसके उपाध्याय थे।

३. पूरुवंश के मतिनार राजा के चार पुत्रों में से एक (म. आ. ९४. ११)।

द्रोण—भारतीय युद्धकालीन सुविख्यात युद्धशास्त्रज्ञ, कौरव एवं पांडवों का गुरु, एवं धर्मज्ञ आचार्य। आंगिरस गोत्रीय भरद्वाज ऋषि का यह पुत्र था। उस कारण, इसे 'द्रोण आंगिरस' भी कहते थे (म. उ. १४९.१७)। वसिष्ठ गोत्रीय शुक्राचार्य, एवं असित देवल, धौम्य, याज, काश्यप आदि ऋषि इसके समकालीन थे। आंगिरस गोत्रीय कृपाचार्य की बहन कृपी इसकी पत्नी थी। उससे इसे अश्वत्थामन् नामक पुत्र हुआ था (म. आ. १२१.१-११२; विष्णु. ४.१९.१८)।

द्रोण के पिता भरद्वाज ऋषि का आश्रम गंगाद्वार पर था (म. आ. १२१.१३३१*; १२३.६८)। एक दिन भरद्वाज मुनि गंगा नदी में स्नान करने के लिये गये थे। वहाँ घृताची नामक अप्सरा पहले से ही स्नान कर के, वस्त्र बदल रही थी। उसका वस्त्र खिसक गया था। उस अवस्था में उसे देख कर, भरद्वाज का वीर्य स्खलित हो गया। भरद्वाज ने उस वीर्य को उठा कर, एक द्रोण में रख दिया। उसी द्रोण से इसका जन्म हुआ। उस कारण इसे 'द्रोण' नाम प्राप्त हुआ। द्रोणकलश में जन्म होने के कारण, इसे 'अयोनिसंभव' (म. आ. ५७.८९; १२९.५; १५४. ५), 'कुंभयोनि' (म. द्रो. १३२.२२), 'कुंभसंभव' (म. द्रो. १३२.३०) आदि नाम प्राप्त हुएँ थे। इसके सिवा, शोणाश्व, रुक्मरथ, तथा भारद्वाज आदि नामांतर से भी इसका उल्लेख पाया जाता है (म. आ. १२२. १)। बृहस्पति एवं नारद के अंश से द्रोण का जन्म हुआ था, ऐसे निर्देश भी विभिन्न ग्रंथो में प्राप्त है (म. आ. ६१.६३; पद्म. सृ. ७६)।

शिक्षा—धनुर्वेद तथा ऋग्वेदादि अन्य वेदों का अध्ययन, इसने अपने पिता के ही पास किया। इसके अग्निवेश नामक चाचा ने इसे 'आग्नेयास्त्र' सिखाया (म. आ. १२१.७)। पिता के पास अध्ययन करते समय, पांचाल देश के पृषत् राजा का पुत्र द्रुपद, द्रोण का सहाध्यायी था। यही द्रुपद आगे इसका सब से बड़ा दुष्मन बन गया। भारतीय युद्ध में, इसका वध द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न ने ही किया।

तपस्या करते समय एक बार द्रोण को पता चला कि, जामदग्न्य परशुराम ब्राह्मणों को संपत्ति बाँट रहा है। द्रव्य-याचना के हेतु से द्रोण परशुराम के पास गया। परंतु परशुराम ने अपनी संपत्ति पहले ही ब्राह्मणों में बाँट डाली थी। अतएव अपने पास की अस्त्रविद्या ही उसने इसे दी। परशुराम से द्रोण को 'ब्रह्मास्त्र' नामक अस्त्र की प्राप्ति हुई (म. आ. १५४.१३; १२१)। परशुराम जामदग्न्य का काल देवराज वसिष्ठ के समकालीन, एवं द्रोण से काफी पूर्वकालीन माना जाता है। इस कारण, महाभारत में दी गयी 'ब्रह्मास्त्र विद्याप्रदान' की यह कहानी अविश्वसनीय मालूम पडती है।

इस प्रकार द्रोण अस्त्रविद्या में पूर्णतः कुशल बन गया। किंतु इतना विद्वान् होने पर भी, यह विपन्न एवं निर्धन ही रहा।

तब द्रव्यसहायताप्राप्ति की इच्छा से, यह अपने पुराने सहाध्यायी द्रुपद राजा के पास गया। परंतु द्रुपद ने इसका अपमान कर, इसे वापस भेज दिया (म. आ. १२२.३५-३७)। तब द्रोण द्रुपद पर अत्यंत क्रोधित हुआ, तथा उससे बदला लेने का विचार करने लगा। इस हेतु से यह हस्तिनापुर में गया एवं गुप्त रूप से अपने पत्नी के भाई कृपाचार्य के पास रहने लगा।

हस्तिनापुर में—एक बार कौरव तथा पांडव गुल्लीडंडा खेल रहे थे। तब उनकी गुल्ली पास ही के एक कुएँ में गिर पड़ी। वे उस गुल्ली को न निकाल सके। पास ही में द्रोण बैठा था। कुमारों ने गुल्ली निकाल देने की प्रार्थना द्रोण से की। द्रोण ने दर्भ की सहायता से गुल्ली निकाल दी। कुमारों ने यह वृत्त भीष्म को बताया। द्रोणाचार्य का मंत्रसामर्थ्य तथा अस्त्रविद्यानैपुण्य भीष्म को पूर्व से ही ज्ञात था। कुमारों के अध्यापन के लिये, द्रोण को नियुक्त करने के लिये, पहले से वह उत्सुक था। द्रोण हस्तिनापुर में आया है, यह ज्ञात होते ही, भीष्म इसे अपने घर में ले आया, एवं राजपुत्रों को धनुर्विद्या सिखाने का काम इसे सौंप दिया (म. आ. १२२)।

द्रोण कौरवपांडवों को धनुर्विद्या सिखाने लगा। इसके शस्त्रविद्याकौशल्य की कीर्ति चारों ओर फैल गई। नाना देशों के राजपुत्र इसके पास शिक्षा पाने के लिये आने लगे। एक बार एकलव्य नामक निषाद का पुत्र इसके पास विद्याध्ययन के लिये आया। किंतु निषादपुत्र होने के कारण, द्रोण ने उसे विद्या नहीं सिखाई।

द्रोण के पास बहुत सारे राजपुत्र विद्याध्ययन के लिये रहते थे। किंतु उन विद्यार्थिओं में अर्जुन इसका सब से अधिक प्रिय शिष्य था। एक बार सारे शिष्यों को ले कर, द्रोण नदी पर स्नान करने गया। उस वक्त एक नक्र ने इसका पैर पकड़ लिया। यह देख कर, अन्य सारे राजपुत्र भाग गये, किंतु अर्जुन ने नक्र से इसकी रक्षा की। तब प्रसन्न हो कर, द्रोण ने उसे ब्रह्मास्त्र सिखाया (म. आ. १२३.७४)।

द्रुपद का पराभव—बाद में द्रोण ने अपने सारे शिष्यों के धनुर्विद्यानैपुण्य की परीक्षा लिवायी। उसे पता चला कि, वे सब धनुर्विद्या में काफी जानकार हो गये हैं। यह देख कर, अपने पुराने शत्रु द्रुपद पर आक्रमण करने का इसने निश्चय किया। काफी दिनों से जो हेतु मन में था, उसे पूर्ण करने के लिये, अपने शिष्यों द्वारा द्रुपद का पराभव करने की तैयारी इसने की। बाद में जल्द ही पांचाल देश पर आक्रमण कर, इसने द्रुपद को जीत लिया। द्रुपद का आधा राज्य (उत्तर पांचाल) अपने पास रख कर, बचा (दक्षिण पांचाल) इसने उसे वापस दे दिया (म. आ. १२८.१२)।

यद्यपि अर्जुन इसका प्रिय शिष्य था, फिर भी 'सेवक' के नाते यह पहले से ही दुर्योधन का पक्षपाती था। पांडवों के अज्ञातवासकाल में, कौरवों ने विराट के गोधनों का हरण करवाया। तब विराटपुत्र उत्तर के साथ अर्जुन गायों की रक्षा के लिये आया। उस समय द्रोण कौरवों के पक्ष में युद्ध कर रहा था। युद्ध में अर्जुन ने द्रोण तथा अन्य रथी महारथियों का पराभव कर, गायों की रक्षा की (म. वि. ५३)। उस युद्ध में, अर्जुन ने स्वयं द्रोण को घायल कर, रणभूमि से पलायन करने के लिये मजबूर किया।

अज्ञातवास पूर्ण होने के बाद, पांडव यथाकाल प्रकट हुएँ। उन्होंने दुर्योधन के पास अपने राज्य की माँग की। उसके लिये उन्होंने कृष्ण को मध्यस्थता के लिये भेजा। उस समय द्रोण ने दुर्योधन को काफी उपदेश किया, पांडवों का हिस्सा उन्हें वापस देने के लिये भी कहा (म. उ. १४६.१५)।

परंतु द्रोण का यह कृत्य कर्णादि को पसंद नहीं आया। कर्ण एवं द्रोण की गरमागरम बहस हो कर, झगड़ा आगे बढ़ा। परंतु भीष्म के द्वारा मध्यस्थता करने पर, उन दोनों का झगड़ा मिट गया (म. उ. १३७-१४८)।

भारतीययुद्ध--दुर्योधन ने किसी का भी उपदेश नहीं सुना। भारतीययुद्ध का प्रसंग निर्माण हुआ। निरुपाय हो कर, द्रोण को कौरवों के पक्ष में लड़ना पड़ा। अनेक वर्ष कौरवों का नमक खाने के बाद, उन्हें सहायता देने का अवसर संपन्न हुआ था। उस अवसर पर उन्हे सहायता न देना, इसे योग्य नहीं प्रतीत हुआ।

भारतीययुद्ध के दसवें दिन, कौरवों का प्रथम सेनापति भीष्म मृत हुआ। तत्पश्चात् दुर्योधन ने द्रोण को सैनापत्य दिया। इसके रथ के ध्वज पर कृष्णाजिन तथा कमंडलु का चिन्ह था (म. द्रो. परि. १. क्र. ५, पंक्ति १-२)। पाँच दिन युद्ध कर के, इसने पांडवसेना में हाहाकार मचा दिया।

द्रोण के सैनापत्य के प्रथम दिन, दुर्योधन ने धर्मराज को जीवित पकड़ लाने की प्रार्थना इसे की। इसने अर्जुन के अतुल सामर्थ्य का वर्णन दुर्योधन के पास किया। उसे सुन कर, दुर्योधन तथा कर्ण ने व्यंग वचनों से इसे कहा, 'पांडवों की जय हो, यही भावना आपके हृदय में है। इस कारण, आप युद्ध में बेमन से लड़ते है' (म. द्रो. १६०)। तब कोपाविष्ट हो कर द्रोण ने प्रतिज्ञा की, 'पांडवपक्ष के किसी न किसी शूर योद्धा का वध मैं कल अवश्य ही करूंगा'। इस प्रतिज्ञा के अनुसार, इसने द्रुपद का वध किया (म. द्रो. १६१.३४)।

अभिमन्युवध की वार्ता सुन, संतप्त हो कर अर्जुन ने जयद्रथवध की प्रतिज्ञा की। तब द्रोण ने एक में एक ऐसे तीन व्यूह रच कर, जयद्रथ के संरक्षण की पराकाष्ठा की। फिर भी अर्जुन ने जयद्रथ वध किया ही। जयद्रथ-वध का बदला लेने के लिये, द्रोण ने अहोरात्र युद्ध चालू रखने की प्रतिज्ञा की, एवं मशालों की सहायता से रात्रि के समय भी युद्ध चालू रखा।

वध---वह युद्ध का पंद्रहवा दिन, अर्थात् द्रोण के सैनापत्याभिषेक का पाँचवाँ दिन था। दिन के युद्ध से सारे वीर थक गये थे, तथापि ईर्ष्यावश, रात्रि के समय भी वीरता से लड़ रहे थे। किंतु धीरे-धीरे सारी सेना को निद्रा ने घेर लिया। यह संधि देख कर, भीम ने इन्द्रवर्म राजा का अश्वत्थामा नामक हाथी मार डाला, एवं अश्वत्थामा मृत हो गया, ऐसी गर्जना की।

चिरंजीव होते हुए भी अश्वत्थामा मृत कैसे हुआ, इस विचार से द्रोण को आश्चर्य हुआ, एवं निर्णय के लिये, यह धर्मराज के पास गया। कृष्ण के कथनानुसार युधिष्ठिर ने द्रोण से कहा, 'अश्वत्थामा मृत हो गया है,'। कृष्ण के मना करने पर भी धर्म ने, अश्वत्थामा के पश्चात् 'हाथी' शब्द का उच्चार किया। परंतु वह उच्चारण इतने धीरे से किया गया कि, द्रोण उसे सुन न सका।

धर्म से यह वार्ता सुनते ही, पुत्रशोक से विव्हल हो कर द्रोण ने शस्त्रसंन्यास किया। इतने में द्रोण के भरद्वाजादि पितर वहाँ आकर उन्होंने इसे कहा, 'ब्राह्मण होते हुएँ भी क्षत्रियों के समान युद्ध कर, अस्त्रों से तुमने पृथ्वी को ताप दिया हैं। यह महत्पाप है। इसलिये विलंब मत करो। शस्त्र नीचे रख कर, योगमार्ग का आलंबन करो'। यह सुन कर, द्रोण ने शस्त्र नीचे रख दिया। अच्छी संधि देख कर, द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न ने निःशस्त्र द्रोण का खड्ग से वध किया (म. द्रो. १६५. ५४)।

पौष वद्य द्वादशी को दोपहर में द्रोण का वध हुआ (भारत-सावित्री)। नीलकंठ का कथन है कि, मृत्यु के समय इसकी उम्र चारसौ वर्ष की थी, परंतु इसकी उम्र पच्यासी वर्ष की होना अधिक संभवनीय है। 'अशीति-कात् परः' पाठभेद इस विषय में प्राप्त हैं। उससे प्रतीत होता है कि, युद्धकाल में द्रोण की आयु अस्सी से पच्यासी वर्ष की थी (म. द्रो. १६५.४९)।

भारतीय युद्ध में, इसने द्रुपदपुत्र शंख (म. भी. ७८. २१), वसुदान (म. द्रो. २०.४३), एवं विराट तथा द्रुपद का वध किया था (म. द्रो. १६१.३४)।

मृत्यु के पश्चात्, द्रोण स्वर्ग में गया, एवं कुछ काल के बाद बृहस्पति के अंश में विलीन हो गया (म. स्व. ४. २१; ५.१२)। श्रीव्यास ने आवाहन करने पर, परलोक-वासी कौरव-पांडव वीरों के साथ, यह गंगाजल से प्रगट हुआ, एवं इसने युधिष्ठिर को दर्शन दिया (म. आश्र. ३२.७)।

इंद्रियसंयम एवं तपस्या के कारण, समाज में इसे काफी मानमान्यता थी। इसका युद्धशास्त्रप्रभुत्व भी परशुराम जामदग्न्य जैसा ही अतुलनीय था। किंतु परशुराम का साहस एवं ज्वलंत स्वाभिमान इसमें न होने के कारण, इसकी सारी आयु सेवावृत्ति में ही व्यतीत हुई। उस दुर्बल सेवावृत्ति से, इसकी उत्तरआयु अयशस्वी एवं असमाधानी साबित हुई।

द्रोण शार्ङ्ग—एक मंत्रद्रष्टा पक्षी (ऋ. १०. १४२. ३-४)। मंदपाल ऋषि को शार्ङ्गी नामक पक्षिणी से उत्पन्न चार पुत्रों में से यह एक था (म. आ. २२८. १७)।

यह ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ होगा, ऐसा मंदपाल ऋषि का इसके विषय में भविष्यकथन था (म. आ. २२९. ९-१०)। उस भविष्यकथन के अनुसार, उत्तर आयु में यह बड़ा ब्रह्मवेत्ता बन गया। इसने खांडववनदाह के समय, अग्नि की प्रार्थना कर, अपनी तथा अपने भाइयों की रक्षा की (म. आ. २२३. १६-१९; अनु. ५३. २२ कुं.)। इसने कंधरकन्या तार्क्षी से विवाह किया था। उससे इसे पिंगाक्ष, विबोध, सुपुत्र तथा सुमुख नामक चार पुत्र हुएँ (मार्क. ३. ३२; १. २४)।

२. एक वसु। इसकी पत्नी का नाम धरा था। अपने अगले जन्म में यह दोनों नंद तथा यशोदा बने (भा. १०. ८.४८-५०)। इसकी अभिमति नामक और एक पत्नी थी। उससे इसे हर्षशोकादि पुत्र हुएँ (भा. ६.६.११)।

द्रौणायन — भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि।

द्रौणायनि तथा **द्रौणि**--अश्वत्थामा का पैतृक नाम। व्यास नाम से इसका निर्देश करते समय, इसी नाम का उपयोग किया जाता है (अश्वत्थामन् देखिये)।

द्रौपदी— द्रुपद राजा की कन्या, एवं पांडवों की पत्नी। स्त्रीजाती का सनातन तेज एवं दुर्बलता की साकार प्रतिमा मान कर, श्री व्यास ने 'महाभारत' में इसका चरित्रचित्रण किया है। स्त्रीस्वभाव में अंतर्भूत प्रीति एवं रति, भक्ति एवं मित्रता, संयम एवं आसक्ति इनके अनादि द्वंद्व का मनोरम चित्रण, 'द्रौपदी' में दिखाई देता है। स्त्रीमन में प्रगट होनेवाली अति शुद्ध भावनाओं की असहनीय तड़पन, अतिरौद्र पाशवी वासनाओं की उठान, एवं नेत्रदीपक बुद्धिमत्ता का तुफान, इनका अत्यंत प्रभावी आविष्कार 'द्रौपदी' में प्रकट होता है। इसी कारण इसकी व्यक्तिरेखा प्राचीन भारतीय इतिहास की एक अमर व्यक्तिरेखा बन गयी है।

याज एवं उपयाज नामक ऋषिओं की सहायता से, द्रुपद ने 'पुत्रकामेष्टि यज्ञ' किया। उस यज्ञ के अग्नि में से, धृष्टद्युम्न एवं द्रौपदी उत्पन्न हुएँ (म. आ. १५५)। यज्ञ में से उत्पन्न होने के कारण, इसे 'अयोनिसंभव' एवं 'याज्ञसेनी' नामांतर प्राप्त हुएँ (म. आ. परि. ९६.११;१५)। पांचाल के राजा द्रुपद की कन्या होने के कारण, इसे 'पांचाली', एवं इसके कृष्णवर्ण के कारण, 'कृष्णा' भी कहते थे। लक्ष्मी के अंश से इसका जन्म हुआ था (म. आ. ६१. ९५-९७; १७५-७७)।

स्वयंवर, पंचपतित्व—द्रौपदी विवाहयोग्य होने के बाद, द्रुपद ने इसके स्वयंवर का निश्चय किया। स्वयंवर में भिन्न भिन्न देशों के राजा आये थे, परंतु मत्स्यवेध की शर्त वे पूरी न कर सके (द्रुपद देखिये)। अर्जुन ने मत्स्यवेध का प्रण जीतने पर, द्रौपदी ने अर्जुन को वरमाला पहनायी। बाद में पांडव इसे अपने निवासस्थान पर ले गये।

धर्म ने कुंती से कहा 'हम भिक्षा ले आये हैं।' उसे सत्य मान कर, कुंती ने सहजभाव से कहा, 'लायी हुई भिक्षा पाँचों में समान रूप में बाँट लो'। पांडवों के द्वारा लायी भिक्षा द्रौपदी है, ऐसा देखने पर कुंती पश्चात्ताप करने लगी। परंतु माता का वचन सत्य सिद्ध करने के लिये, धर्म ने कहा, 'द्रौपदी पाँचों की पत्नी बनेगी'।

द्रुपद को पांडवों के इस निर्णय का पता चला। एक स्त्री पाँच पुरुषों की पत्नी बने, यह अधर्म है, अशास्त्र है, ऐसा सोच कर वह बडे विचार में फँस गया। इतने में व्यासमुनि वहाँ आये, तथा उसने द्रुपद को बताया, 'द्रौपदी को शंकर का वर प्राप्त है कि, तुम्हें पाँच पति प्राप्त होंगे। अतः पाँच पुरुषों से विवाह इसके बारे में अधर्म नहीं है'। द्रुपद ने उसके पूर्वजन्म की कथा पूछी। व्यास ने कहा, 'द्रौपदी पूर्वजन्म में एक ऋषिकन्या थी। अगले जन्म में अच्छा पति मिले, इस इच्छा से उसने शंकर की आराधना की। शंकर ने प्रसन्न हो कर, उसे इच्छित वर माँगने के लिये कहा। तब उसने पाँच बार 'पति दीजिये' यों कहा। तब शंकर ने इसे वर दिया कि, तुम्हें पाँच पति प्राप्त होंगे (म.आ. १८७-१८८)। इसलिये द्रौपदी ने पाँच पांडवों को पति बनाने में अधर्म नहीं है।' यह सुन कर, द्रुपद ने धौम्य ऋषिद्वारा शुभमुहूर्त पर, क्रमशः प्रत्येक पांडव के साथ, द्रौपदी का विवाह कर दिया (म. आ. १९०)।

ब्रह्मवैवर्त पुराण में, द्रौपदी के पंचपतित्व के संबंध में निम्नलिखित उल्लेख हैं। रामपत्नी सीता का हरण रावण द्वारा होनेवाला है, यह अग्नि ने अंतर्ज्ञान से जान लिया। उस अनर्थ को टालने के लिये, सीता की मूर्तिमंत प्रतिकृति अपनी मायासामर्थ्य के द्वारा उसने निर्माण की। सच्ची सीता को छिपा कर, मायावी सीता को ही राम के आश्रम में रखा। इससे सीता को राम का वियोग होने लगा। तब उसने शंकर की आराधना प्रारंभ की। शंकर ने प्रसन्न हो कर उसे वर माँगने के लिये कहा। पाँच बार, 'पति-समागम प्राप्त हो,' ऐसा वर सीता ने माँग लिया। तब शंकर ने उसे कहा, 'अगले जन्म में तुम्हें पाँच पति प्राप्त होंगे' (ब्रह्मवै. २.१४)। पाँचों पांडव एक ही इन्द्र

के अंश होने के कारण, वस्तुतः द्रौपदी एक की ही पत्नी थी (मार्कं. ५)।

द्यूत—विवाहोपरांत काफी वर्ष द्रौपदी ने बडे सुख में बिताये। पांडवों का राजसूययज्ञ भी उसी काल में संपन्न हुआ। पांडवों से इसे प्रतिविंध्यादि पुत्र भी हुएँ। किंतु पांडवों के बढते ऐश्वर्य के कारण, दुर्योधन का मत्सर दिन प्रतिदिन बढता गया। उसने द्यूत का षड्यंत्र रच लिया, एवं द्यूत खेलने के लिये शकुनि को आगे कर, युधिष्ठिर का सारा धन हड़प लिया। अन्त में द्रौपदी को भी युधिष्ठिर ने दाँव पर लगा दिया। उस कमीने वर्तन के लिये उपस्थित राजसभासदों ने युधिष्ठिर का धिक्कार किया। विदुर को द्रौपदी को सभा में लाने का काम सौंपा गया। उसने दुर्योधन को अच्छी तरह से फटकारा, एवं उस काम करने के लिये ना कह दिया। पश्चात् द्रौपदी को सभा में लाने का कार्य प्रतिकामिन् पर सौंपा गया। वह भी हिचकिचाने लगा।

फिर यह काम दुःशासन पर सौंपा गया। दुःशासन का अन्तःपुर में प्रवेश होते ही द्रौपदी भयभीत हो कर स्त्रियों की ओर दौडने लगी। अंत में दौडनेवाली द्रौपदी के केश पकड़ कर, दुःशासन खींचने लगा। उस समय द्रौपदी ने कहा, 'मै रजस्वला हूँ। मेरे शरीर पर एक ही वस्त्र है। ऐसी स्थिति में मुझे सभा में ले जाना अयोग्य है'। उस पर दुःशासन ने कहा, 'तुम्हें द्यूत में जीत कर हमने दासी बनाया हैं। अब किसी भी अवस्था में तुम्हारा राजसभा में आना अयोग्य नहीं है'। इतना कह कर अस्ताव्यस्त केशयुक्त, जिसका पल्ला नीचें गिर पड़ा है, ऐसी द्रौपदी को वह बलपूर्वक केश पकड कर, सभा में ले आया (म. स. ६०.२२-२८)।

द्रौपदी का प्रश्न—सभा में आते ही आक्रोश करते हुए द्रौपदी ने प्रश्न पूछा, 'धर्म ने पहले अपने को दाँव पर लगाया, तथा हारने पर मुझे लगाया। तो क्या मैं दासी बन गई?' इसके प्रश्न का उत्तर कोई भी न दे सका (म. स. ६०.४३-४५)।

भीष्म ने सुनी अनसुनी की। बाकी सभा स्तब्ध रही। यह लगातार प्रश्नों की बौछार कर रही थी। सुन कर भी किसी के कान पर जूँ तक नहीं रेंगी। कर्ण, दुःशासनादि द्रौपदी की 'दासी दासी' कह कर अवहेलना करने लगे। भीम अपना क्रोध न रोक सका। जिन् हाथों से धर्म ने द्रौपदी को दाँव पर लगाया था, उन हाथों को जलाने के लिये, अग्नि लाने को उसने सहदेव से कहा। बडी कठिनाई से अर्जुन ने उसे शांत किया। इस पर धृतराष्ट्रपुत्र विकर्ण सामने आया, तथा द्रौपदी के प्रश्न का उत्तर देने की प्रार्थना उसने भीष्मादिकों से की। परंतु कोई उत्तर न दे सका। तब विकर्ण ने कहा, 'दाँव पर जीते गये धर्म ने चूँकि द्रौपदी को दाँव पर लगाया, अतः सचमुच यह जीती ही नहीं गई'। यह कहते ही सारे सभाजन विकर्ण की वाहवाह करने लगे।

द्रौपदी का यह नैतिक विजय देख कर, कर्ण सामने आ कर बोला, 'संपूर्ण संपत्ति दाँव पर लगाने पर, द्रौपदी अजित रह ही नहीं सकती। इसके अतिरिक्त द्रौपदी अनेक पतिओं की पत्नी होने के कारण, धर्मशास्त्र के अनुसार पत्नी न हो कर, दासी है। इसलिये पूरी संपत्ति के साथ यह भी दासी बन गई है'। पश्चात् द्रौपदी की ओर निर्देश कर के उसने दुःशासन से कहाँ, 'द्रौपदी के वस्त्र खींच लो। पांडवों के वस्त्र भी छीन लों'।

तब पांडवों ने एक वस्त्र छोड़, अन्य सभी वस्त्र उतार डालें। द्रौपदी का वस्त्र खींचने दुःशासन बढा, एवं इसके वस्त्र खींचने लगा। उसपर यह आर्तभाव से भगवान् को पुकारने लगी (म. स. ६१.५४२-५४३*)। भीम क्रोध से लाल हो गया। दुःशासन के रक्तप्राशन की प्रतिज्ञा उसने की। विदुर सामने आया। द्रौपदी के प्रश्न का उसने सभा को पुनः स्मरण दिला कर सुधन्वा की कथा बताई (सुधन्वन् देखिये)। द्रौपदी लगातार आक्रोश कर रही थी, 'स्वयंवर के समय केवल एक बार मैं लोंगों के सामने आई। आज मैं पुनः सब को दृष्टिगत हो रही हूँ। इस शरीर को वायु भी स्पर्श न कर सका, उसकी भरी सभा में आज अवहेलना चालू है'।

दुःशासन इसके वस्त्र खींच ही रहा था, किंतु इसकी लज्जारक्षा के लिये श्रीकृष्ण स्वयं चीररूप हो गये, एवं एक के बाद एक नये चीर उसने प्रकट किये (म. स. ६१. ४१)। द्रौपदी के शील की रक्षा हुई। अपने कृत्य के प्रति लज्जित हो कर, अधोमुख दुःशासन अपने स्थान पर बैठ गया (म. स. ६१. ४८)। अन्त में धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को कडी डाँट लगाई। द्रौपदी को इच्छित वर दे कर, पतियों सहित उसने इसे दास्यमुक्त किया (म. स. ६३. २८-३२)।

वनवास—युधिष्ठिर के द्युत के कारण, पांडवों के साथ वन में जाने का प्रसंग द्रौपदी पर आया। वनवास में कौरवों के कारण, इसे अनेक तरह के कष्ट उठाने पड़े। एक बार इसका सत्वहरण करने के लिये, परमकोपी

दुर्वासस् ऋषि को दुर्योधन ने भेज दिया। दुर्वास ऋषि अपने शिष्यों के साथ, रात्रि के समय पांडवों के घर आया, एवं आधी रात में भोजन माँगने लगा। उस समय द्रौपदी का भोजन हो गया था। इसलिये सूर्यप्रदत्तस्थाली में पुनः अन्न निर्माण करना असंभव था। तब ऋषियों को क्या परोसा जावे, यह धर्मसंकट इसके सामने उपस्थित हुआ। आखिर विवश हो कर, इसने कृष्ण का स्मरण किया। कृष्ण ने भी स्वयं वहाँ आकर, इसके संकट का निवारण किया (म. व. परि. १. क्र. २५. पंक्ति. ५८–११७)।

पांडवों का निवास काम्यकवन में था। एक बार जयद्रथ आश्रम में आया। उस समय पाँचों पांडव मृगया के लिये गये थे। तब अच्छा अवसर देख कर, जयद्रथ ने द्रौपदी का हरण किया। इतने में पांडव वापस आये। जयद्रथ को पराजित कर, उन्होंने द्रौपदी को मुक्त किया। बाद में अपमान का बदला चुकाने के लिये, जयद्रथ के सिर का पाँच हिस्सों में मुंडन कर, उसे छोड़ दिया गया (म. व. २५६. ९; जयद्रथ देखिये)।

अज्ञातवास—वनवास की समाप्ति के बाद, अज्ञातवास के लिये पांडव विराटगृह में रहे। द्रौपदी सैरंध्री बन कर, एवं 'मालिनी' नाम धारण कर, सुदेष्णा के पास रही। उस समय इसने सुदेष्णा से कहा था, 'मैं किसी का पादसंवाहन अथवा उच्छिष्टभक्षण नही करूँगी। कोई मेरी अभिलाषा रखे, तो वह मेरे पाँच गंधर्व पतियों द्वारा मारा जायेगा'। द्रौपदी के इन सारे नियमों के पालन का आश्वासन सुदेष्णा ने इसे दिया (म. वि. ८.३२)। एक बार कीचक नामक सेनापति ने इसकी अभिलाषा रखी, परंतु भीम ने उसका वध किया (म. वि. १२–२२)। वनवास तथा अन्य समयों पर भी, अपनी तेजस्विता तथा बुद्धिमत्ता इसने कई बार व्यक्त की है (म. व. २८; २५२; शां. १४)।

पांडवों का वनवास तथा अज्ञातवास समाप्त होने पर, वे हस्तिनापुर लौट आये, एवं कौरवों के पास राज्य का हिस्सा माँगने लगे। अपने कौरव बांधवों से लड़ने की ईर्ष्या युधिष्ठिर के मन में नहीं थी। उनसे स्नेह जोड़ने के लिये, युधिष्ठिर दूत भेजना चाहता था। किंतु कौरवों के द्वारा किये गये अपमान का शल्य द्रौपदी भूल न सकती थी। कौरवों के साथ दोस्ती सलूक की बातें करनेवाले पांडवों के प्रति यह भड़क उठी। पांडवों के साथ कृष्ण को भी कड़े वचन कह कर, इसने उसको युद्ध के प्रति अनुकुल बनाया (म. उ. ८०)। इसने कृष्ण से कहा, 'कौरवों के प्रति द्वेषाग्नि, तेरह साल तक, मैंने अपने हृदय में, सांसों की फूँकर डाल कर, आज तक प्रज्वलित रखा हैं। कौरवों से युद्ध टाल कर, पांडव आज उस अग्नि को बुझाना चाहते है। उन्हें तुम ठीक तरह से समझा लो। नही तो, मेरे वृद्ध पिता द्रुपद, एवं मेरे पाँच पुत्र के साथ, मैं खुद कौरवों से लड़ाई करूँगी, एवं नष्ट हो जाऊँगी' (म. उ. ८०.४–४१)।

भारतीय युद्ध में अश्वत्थामन् ने द्रौपदी के सारे पुत्रों का वध किया। दारुक से यह वार्ता सुन कर द्रौपदी ने अन्नत्याग कर, प्राणत्याग करने का निश्चय किया। तब भीम ने उसे समझाया। अन्त में अश्वत्थामन् को पराजित कर, उसके मस्तकस्थित मणि ला कर, युधिष्ठिर के मस्तक पर देखने की इच्छा इसने प्रकट की। पश्चात् भीम ने वह कार्य पूरा किया (म. सौ. १५.२८–३०; १६.१९–३६)।

राज्यप्राप्ति—भारतीय युद्ध के बाद, पांडवों को निष्कंटक राज्य मिला। उस समय द्रौपदी ने काफी सुखोपभोग लिया।

बाद में स्त्री तथा बांधवों के साथ, युधिष्ठिर महाप्रस्थान के लिये निकला। राह में ही द्रौपदी का पतन हुआ। अपने पतियों में से, यह अर्जुन पर ही विशेष प्रीति रखती थी (म. महा. २.६)। उस पाप के कारण इसका पतन हुआ। किंतु कृष्ण का स्मरण करते ही, यह स्वर्ग चली गई (भा. १.१५.५०)।

इसे युधिष्ठिर से प्रतिविंध्य, भीम से सुतसोम, अर्जुन से श्रुतकीर्ति, नकुल से शतानीक, तथा सहदेव से श्रुतसेन नामक पुत्र हुएँ (म. आ. ९०.८२; ५८.१०२–१०३; ६१.८८; २१३.७२–७३)। श्रुतसेन के लिये श्रुतकर्म पाठ 'भागवत' में प्राप्त है (भा. ९.२२.२९)।

स्वभाव—द्रौपदी मानिनी थी। स्वयंवर के समय इसका प्रण जीतने कर्ण समर्थ था। किन्तु सूतपुत्र को वरने का इसने इन्कार किया (म. आ. १८६)। वनवास में पांडव तथा कृष्ण को द्रौपदी ने बार बार युद्ध की प्रेरणा दी। कृष्ण के शिष्टाई करने जाते समय, इसने अपने मुक्त केश-संभार की याद उसको दिलाई थी। भारतीय युद्ध में, अपने पुत्रों के वध का समाचार सुनते ही, अश्वत्थामा के वध की चेतावनी इसने पांडवों को दी। युद्ध के पश्चात्, युधिष्ठिर राज्य स्वीकार करने के लिये हिचकिचाने लगा। उस समय भी इसने उसे राजदण्ड धारण करने के लिये समझाया।

महाभारत में द्रौपदी तथा भीम का स्वभावचित्रण विशेष रूप से किया है। द्रौपदी के स्वभावचित्रण में व्यावहारिक विचार, स्त्रीसुलभ अपेक्षा, जोश तथा स्फूर्ति का आविष्कार बडी खूबी से किया गया है। भीम भी द्रौपदी के विचार का समर्थक बताया गया है। द्रौपदी तथा भीम युधिष्ठिर के बर्ताव के बारे में कड़ा विरोध करते हुएँ दिखते है। किंतु आखिर युधिष्ठिर के सौम्य प्रतिपादन से वे दोनों भी चूप बैठने पर विवश होते हैं।

द्वारक--(सू. इ.) भविष्यमत में क्षेमधन्य का पुत्र।

द्विगत भार्गव--एक ऋषि। यह एक साम के पठन से स्वर्ग गया, तथा वहाँ से वह फिर मृत्युलोक में आया। पश्चात् यह पुनः स्वर्ग गया (पं. ब्रा. १४. ९. ३६)।

द्विज--(सो. अनु.) वायुमत में शूरसेन का पुत्र।

द्विजिह्व--रावणपक्षीय एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

द्वित--ब्रह्ममानसपुत्र (भा. १०. ८४)।

२. गौतम ऋषि का पुत्र (त्रित देखिये)। द्वित आप्त्यों के नाम पर एक सूक्त है (ऋ. ९. १०३)।

द्विमीढ--(सो. पूरु.) भागवत, मत्स्य तथा वायुमत में हस्ति का, एवं विष्णुमत में हस्तीनर का पुत्र। पद्मपुराण में इसे देवमीढ कहा गया है। यह एक स्वतंत्र वंश है। विष्णु, गरुड तथा भागवत में इसके बारे में काफी मतभेद है।

द्विमूर्धन्--दनुपुत्र एक दानव। पृथ्वीदोहन के समय यह दोग्धा बना था। विरोचन ने वत्स का काम किया था (म. द्रो. ६९. ३९. कुं.; परि. १. ८. ८०२)।

द्विविद--सुषेण वानर का पुत्र एवं सुग्रीव के प्रधान मैंद का भाई। इसने राम को काफी सहायता की थी। इसमें १०,००० हाथियों का बल था।

२. किष्किंधा का राजा एवं नरकासुर का मित्र। राजसूय यज्ञ के समय, इसने सहदेव को करभार दिया था (मैंद देखिये)।

नरकासुर का बध कृष्ण ने किया, यह सुनते ही यह कृष्ण तथा बलराम को त्रस्त करने लगा। बाद में बलराम से लड़ाई हो कर, यह बलराम के द्वारा मारा गया (म. व. २७३. ४; भा. १०. ६७)।

द्वियेदिन्--काश्यप कण्व को आर्यावती से उत्पन्न पुत्र (भवि. प्रति. १. ६; ४. २१)।

द्वैलरथ--(सो. क्रोष्टु.) वायुमत में हृदीक का पुत्र।

द्वैतवन--ध्वसन् का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३. ५. ४. ९)।

द्वैपायन--पराशरपुत्र व्यास का नामांतर (व्यास देखिये)।

द्व्यक्षी--अशोकवन की एक राक्षसी।

द्व्याख्येय--अंगिरस् कुल का एक गोत्रकार।

ध

धनक--(सो. सह.) भागवतमत में भद्रसेन का पुत्र। विष्णु एवं पद्म के मत में दुर्दम का पुत्र (पद्म. सृ. १२)।

धनंजय--एक प्रमुख नाग। कश्यप एवं कद्रू का यह पुत्र था (म. आ. ३१.५)। यह पाताल में रहता था (भा. ५.२४.३१)।

यह वरुण की सभा में उपस्थित हो कर, भगवान् वरुण की उपासना करता था (म. स. ९.९)। इसे त्रिपुरदाह के समय, भगवान् शिव के रथ में घोड़ों के केसर बाँधने की रस्सी बनाया गया था (म. क. २४.७२)। पूषन् के साथ यह माघ माह में घूमता है (भा. १२.११. ३९)।

२. अर्जुन का एक नाम। संपूर्ण देशों को जीत कर, कररूप में धन ले कर, उसके बीच में स्थित होने के कारण, अर्जुन का नाम धनंजय हुआ था (म. वि. ३९.११; अर्जुन देखिये)।

३. भगवान् शंकरद्वारा स्कंद को दी हुई असुरसेना का नाम (म. श. २७६*)।

२. वसिष्ठकुल का एक ब्राह्मण। इसे १०० स्त्रियाँ तथा अनेक पुत्र थे। इसने अपना धन उनमें बराबर बाँट दिया। फिर भी उन पुत्रों में अनबन बनी रहती थी। उन झंझटों से तंग आ कर, इसका करुण नामक पुत्र, भवनाशिनी नदी के तट पर रहने के लिये गया। अंत में अंत में शिवभस्म से इसका उद्धार हुआ। 'शिवभस्म' का माहात्म्य बताने के लिये यह कथा दी गयी है (पद्म. पा. १.१५२)।

३. एक वैश्य। दक्षिण समुद्र के तट पर यह रहता था। इसकी माता की मृत्यु होने पर, यह उसकी अस्थियाँ ले कर काशी गया। अस्थियाँ ढोनेवाले शबर साथी ने उसे द्रव्य का हाँडा समझ कर चुरा लाया। तब धनंजय पुनः उस शबर के घर गया। उसकी स्त्री को यथेच्छ द्रव्य देना मान्य कर, उसने वह हाँडा माँगा। परंतु शबर ने वह जंगल में ही छोड दिया था। इसलिये इसे वह नहीं मिला (स्कन्द. ४.१.३०)।

४. त्रेतायुग का एक ब्राह्मण। इसने विष्णु की अत्यंत भक्ति की। वस्त्रप्रावरण न होने के कारण, इसने पीपल की एक शाखा तोड़ कर आग जलाई। पीपल को तोड़ते ही, विष्णु के शरीर पर जख्म के घाव पड गये।

इसके भक्ति से प्रसन्न हो कर विष्णु इसके पास आया। इसने विष्णु के शरीर के जख्मों का कारण उसे पूछा। विष्णु ने कहा, 'अश्वत्थ की शाखा तोड़ने के कारण, मेरे शरीर पर ये घाव पड़े है'। तब यह अपनी गर्दन तोड़ने को तैय्यार हो गया। विष्णु ने इसे वर माँगने के लिये कहा। इसने वररूप में 'विष्णुभक्ति' की ही याचना की (पद्म. क्रि. १२)। 'अश्वत्थमाहात्म्य' बताने के लिये यह कथा दी गयी है।

५. अत्रि के कुल की वंशवृद्धि करनेवाला एक ऋषि।

६. वर्तमान मन्वन्तर का सोलहवाँ व्यास (व्यास देखिये)।

७. विश्वामित्रकुल का एक मंत्रद्रष्टा ब्रह्मर्षि (कुशिक देखिये)।

८. कुमारी का पति (म. उ. ११५.४६०* पंक्ति. ५)।

धनद—कुबेर का नाम। तृणबिंदु की कन्या इडविडा का पुत्र (म. स. ११.१३४* पंक्ति. २; भा. ९.२.३१–३२)।

२. मरुद्गणों में से तीसरे गणों में एक।

धनदा—स्कन्द की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.१३)।

धनधर्मन्—(भविष्य.) वायुमत में मथुरा नगरी में राज्य करनेवाला तथा ब्रह्मांडमत में विदेश का नागवंशी राजा। यह नलवान के बाद राजगद्दी पर बैठ गया।

धनपाल—अयोध्या नगरी का एक वैश्य। इसने सूर्य का एक दिव्य मंदिर बनवाया। एक पुराणिक को एक पूरे साल का वेतन दे कर, वहाँ पुराणपठन के लिये कहा। बाद में छः मास में ही इसकी मृत्यु हो गई। इसके संचित पुण्य के कारण, सूर्य ने विमान से इसे ले जा कर अपने आसन पर बिठाया, इसकी पूजा करवाई। पश्चात् इसे ब्रह्मलोक में पहुँचाया (भवि. ब्राह्म. ९४)।

२. (सो.) भविष्यमत में सावित्री का पुत्र। इसने ३००० वर्षों तक राज्य किया।

३. सरस्वती के तट पर भद्रावती नगर में रहनेवाला एक वैश्य। इसे धृष्टबुद्धि नामक दुर्वर्तनी पुत्र था (धृष्टबुद्धि देखिये)।

धनयाति—(सो.) भविष्यमत में संयाति का पुत्र।

धनवर्धन—कृतयुग में पुष्कर क्षेत्र में रहनेवाला एक सदाचारी वैश्य। एक बार वैश्वदेव कर के यह भोजन कर रहा था। बाहर 'अन्नं देहि' ऐसा शब्द इसने सुना। बाहर आ कर इसने देखा तो वहाँ कोई न था। तब वापस जा कर त्यक्त अन्न का भोजन इसने शुरु किया। त्यक्त अन्न खाने के पाप के कारण, उसी क्षण इसके सौ टुकडे हो गये (भवि. ब्राह्म. ३.४२–४७)।

धनशर्मन्—मध्यदेश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। यह एक बार दर्भ, समिधा आदि लाने के लिये अरण्य में गया। अरण्य में इसने तीन पिशाच्च देखे। उन्हें देख कर इसने उनकी दुःस्थिति का कारण पूछा। बाद में उन पिशाच्च के उद्धार के लिये, इसने तिल तथा शहद का दान कर के 'वैशाख स्नान' का व्रत किया। उस व्रत का पुण्य इसने उन पिशाच्चों को दिया। इस पुण्य के बल, उन पिशाच्चों को मोक्षप्राप्ति हुई (पद्म. पा. ९८)।

धनायु—(सो. पुरूरवस्.) मत्स्य के मत में पुरूरवा के पुत्रों में से एक।

धनिष्ठा—सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक तथा प्राचेतसदक्ष की कन्या।

धनिन्—कप नामक देवों का दूत। ब्राह्मणों के पास जा कर इसने 'कप' देवों के सदाचार का वर्णन किया (म. अनु. २६२.८–१६ कुं.)।

धनुर्ग्रह—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक (म. आ. १०८.११)। इसके नाम के 'धनुग्रह' एवं

'धनुर्धर' ये पाठभेद उपलब्ध हैं। भीमसेन ने इसका वध किया (म. क. ८४.२-६)।

धनुर्धर—धनुर्ग्रह का नामांतर (धनुर्ग्रह देखिये)।

धनुर्ध्वज—एक अंत्यज (पद्मावती २. देखिये)।

धनुर्वक्त्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५७)।

धनुष—(सो. ऋक्ष.) एक राजा। मत्स्यमत में यह सत्यधृति का पुत्र था। इसके लिये सुधन्वन् पाठभेद उपलब्ध है।

धनुषाक्ष—(धनुषाख्य) रैभ्यकुलोत्पन्न एक ऋषि। बालधि ऋषि के पुत्र मेधाविन् ने इसका अपमान किया। अतः उसके नाश के लिये इसने शाप दिया, जिसका कुछ परिणाम नहीं हुआ। तब इसने पर्वतशिला गिरा कर उसका विनाश कर दिया। पर्वत गिरने से ही मेधाविन् की मृत्यु होगी ऐसा उसको वर था (म. व. १३६; शां. ३२३.७)।

धनेयु—(सो. पुरूरवस्.) विष्णुमत में रौद्राश्व का पुत्र। इसे अन्यत्र धर्मेयु कहा है।

२. एक ऋषि। उपरिचर वसु के यज्ञ में यह सदस्य था (म. शां. ३२३.७)।

धनेश्वर—अवन्ती नगरी का एक पापी ब्राह्मण। यह निषिद्ध पदार्थों का व्यापार करता था। एक बार व्यापार के लिये यह माहिष्मती नगरी में गया। कार्तिक माह होने के कारण, अनेक पुण्यात्माओं से, तथा कीर्तन, पुराण, भजन, गायन आदि से उसका संबंध सहजवश आ गया। त्रिपुरी पौर्णिमा का दीपोत्सव भी इसने देखा। उसी रात्रि को सर्पदंश के कारण, इसकी मृत्यु हो गयी। यम ने इसे एक कल्प तक नर्क में रखने के लिये कहा। किन्तु उस नर्क के अग्निकुंड में भी यह बिनाकष्ट जीवित रहा। माहिष्मती नगरी में इसने किये हुए पुण्य का यह फल है, ऐसा नारद ने यम को बताया। नारद की सूचनानुसार यम ने इसे यक्ष योनि में भेज दिया। वहाँ यह कुबेर का सेवक बना (पद्म. उ. ११३-११४; स्कंद. २.४.२९)।

धन्या—उत्तानपाद ध्रुव की पत्नी।

धन्व—(सो. काश्य.) काशी देश का राजा। यह दीर्घतपस् के पश्चात् राजगद्दी पर बैठ गया। इसका 'धर्म' पाठभेद भी उपलब्ध है। आयुर्वेदशास्त्र का प्रणेता धन्वन्तरि इसीका पुत्र था (धन्वंतरि २. देखिये)।

धन्वन्तरि—देवताओं का वैद्य एवं 'आयुर्वेदशास्त्र' का प्रवर्तक देवता। समुद्रमंथन के समय, यह अमृत का श्वेत कमंडलु हाथ में रख कर समुद्र से प्रकट हुआ (म. आ. १६.३७)। इसे आदिदेव, अमरवर, अमृतयोनि एवं अब्ज आदि नामांतर भी प्राप्त है।

दुर्वासस् ने इंद्र को शाप दे कर, वैभवहीन बना दिया तब गतवैभव पुनः प्राप्त करने के लिये, देव दैत्यों ने क्षीरसमुद्र का मंथन किया। उस समुद्रमंथन से प्राप्त, चौदह रत्नों में से धन्वन्तरि एक था। समुद्र में से प्रकट होते समय, इसके हाथ में अमृतकलश था। जब यह समुद्र से निकला तब तेज से दिशाएँ जगमगा उठी (ह. वं. २९.१३)। यह विष्णु का अवतार एवं 'आयुर्वेद-प्रवर्तक' देवता था (विष्णु. १.९.९६; भा. १.३.१७; ८.८.३१-३५)। इसे आयुर्वेदशास्त्र का ज्ञान इंद्र के प्रसाद से एवं चिकित्साज्ञान भास्कर के प्रसाद से प्राप्त हुआ था (भवि. १.७२; मत्स्य. २५१.४)।

समुद्रमंथन से निकलने के पश्चात्, विष्णु भगवान् को इसने देखा। उसे देख कर यह ठिठक गया। विष्णु ने इसे 'अब्ज' (पानी से जिसका जनम हुआ) कह कर पुकारा। पश्चात् इसने विष्णु से प्रार्थना की, 'यज्ञ में मेरा भाग एवं स्थान नियत कर दिया जाय'। विष्णु ने कहा, 'यज्ञ के भाग एवं स्थान तो बँट गये है। किंतु अगले जन्म में तुम्हारी यह इच्छा पूरी होगी। उस जन्म में तुम विशेष ख्याति प्राप्त करोंगे। 'अणिमादि' सिद्धियाँ तुम्हें गर्भ से ही प्राप्त होगी, एवं तुम सशरीर देवत्व प्राप्त करोंगे। तुम 'आयुर्वेद' को आठ भागों में विभक्त करोंगे। एवं उस कार्य के लिये, लोग तुम्हें मंत्र से आहुति देने लगेंगे'।

विष्णु के उस आशिर्वचनानुसार, धन्वन्तरि ने द्वापर-युग में काशिराज धन्व (सौनहोत्र) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया। उस जन्म में, इसने भरद्वाज ऋषिप्रणीत 'आयुर्वेद' आठ विभागों में विभक्त किया, एवं प्रजा को रोगमुक्त किया (वायु. ९२.९-२२; धन्वन्तरि २. देखिये)।

उस महान् कार्य के लिये, नित्यकर्मान्तर्गत पंचमहा-यज्ञ 'वैश्वदेव' में बलिहरण के समय, 'धन्वंतरये स्वाहा' कर के इसे यज्ञाहुति मिलने लगी। इस तरह, इसकी विष्णु भगवान् के पास की गयी प्रार्थना सफल हुई। वैद्यक एवं शल्यशास्त्र में पारंगत व्यक्तिओं को आज भी 'धन्वन्तरि' कहा जाता है (उल्लणकृत 'सुश्रुत संहिता टीका' सू. १. ३)।

धन्वन्तरि स्वरूप वर्णन—धन्वन्तरि देवता का स्वरूप वर्णन प्राचीन ग्रंथों में उपलब्ध है (भा. ८. ८. ३१-

३५)। आधुनिक भिषग्वर एवं वैद्य उसे 'धन्वन्तरि स्तोत्र' नाम से नित्य पठन करते हैं:—

अथोदधेर्मथ्यमानात् काश्यपैरमृतार्थिभिः ।
उदतिष्ठन्महाराज पुरुषः परमाद्भुतः ॥
दीर्घपीवरदोर्दण्डः कम्बुग्रीवोऽरुणेक्षणः ।
श्यामलस्तरुणःस्रग्वी सर्वाभरणभूषितः ॥
पीतवासा महोरस्कः सुमृष्टमणिकुण्डलः ।
स्निग्धकुञ्चितकेशान्तः सुभगः सिंहविक्रमः ॥
अमृतापूर्णकलशं बिभ्रद् वलयभूषितः ।
स वै भगवतः साक्षाद् विष्णोरंशांशसंभवः ॥
धन्वन्तरिरिति ख्यातःआयुर्वेददृग् इज्यभाक् ।

धन्वन्तरि की मूर्ति के बारे में, दक्षिण भारतीय तथा उत्तर भारतीय ऐसे कुल दो पाठ उपलब्ध हैं। उस प्रकार की मूर्तियाँ भी प्राप्त हैं। दक्षिण की धन्वन्तरि की मूर्ति आंध्र फार्मसी ने मद्रास में तैयार की है। उत्तर की मूर्ति, गीर्वाणेंद्र सरस्वति कृत 'प्रपंच सार' ग्रंथानुसार तैयार की गयी है, एवं वह काशी में वैद्य त्र्यंबक शास्त्री के पास थी। दोनों मूर्तियों की तुलना करने पर पता चलता है कि, वे समान नहीं हैं। उन में दाहिनी ओर की वस्तुएँ बायीं ओर, तथा बायीं ओर की वस्तुएँ दाहिनी ओर दिखायी दी गयी हैं। दक्षिण की मूर्ति में दाहिने उपरवाले हाथ में चक्र है। काशी की मूर्ति के उसी हाथ में शंख है। दक्षिण के नीचेवाले दाहिने के हाथ में जोंक हैं, तो काशी की मूर्ति के हाथ में अमृतकुंभ है। बाई ओर के हाथों के बारे में भी यही फर्क दिखाई देता हैं।

२. (सो. काश्य.) काशी देश का राजा, एवं 'अष्टांग' आयुर्वेदशास्त्र का प्रवर्तक। यह काशी देश के धन्व (धर्म) राजा का पुत्र एवं दीर्घतपस् राजा का वंशज था। विष्णु भगवान् के आशीर्वाद से, समुद्रमंथन से उत्पन्न धन्वन्तरि नामक विष्णु के अवतार ने पृथ्वी पर पुनर्जन्म लिया। वही पुनरावतार यह था (धन्वन्तरि १. देखिये)।

दूसरे युगपर्यय में से द्वापर युग में, काशिराज धन्व ने पुत्र के लिये, तपस्या एवं अब्जदेव की आराधना की। अब्जदेव ने धन्व के घर स्वयं अवतार लिया। गर्भ में से ही अणिमादि सिद्धियाँ इसे प्राप्त हो गयी थीं। भारद्वाज ऋषि से इसने भिषक् क्रिया के साथ आयुर्वेद सीख लिया, एवं अपनी प्रजा को रोगमुक्त किया। उस महान् कार्य के लिये, इसे देवत्व प्राप्त हो गया।

इसने आयुर्वेदशास्त्र 'अष्टांगों' (आठ विभाग) में विभक्त किया। वे विभाग इस प्रकार हैं:— १. काय (शरीरशास्त्र), २. बाल (बालरोग), ३. ग्रह (भूतप्रेतादि विकार), ४. उर्ध्वांग (शिरोनेत्रादि विकार), ५. शल्य (शस्त्रघातादि विकार), ६. दंष्ट्रा (विषचिकित्सा), ७. जरा (रसायन), ८. वृष (वाजीकरण) (ह. वं. २९.२०)।

इसे केतु नामक पुत्र था। (ब्रह्म. १३.६५; वायु. ९. २२; ९२; ब्रह्मांड. ३.६७; दे. भा. ९.४१)। सुविख्यात आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि दिवोदास इसका पौत्र वा प्रपौत्र था। उसके सिवा, इसके परंपरा के भेल, पालकाप्य आदि भिषग्वर भी 'धन्वन्तरि' नाम से ही संबोधित किये जाते है। विक्रमादित्य के नौ रत्नों में भी धन्वन्तरि नामक एक भिषग्वर था।

धन्वन्तरि—मनसा युद्ध—सर्पदेवता मनसा तथा वैद्यविद्यासंपन्न धन्वन्तरि राजा के परस्परविरोध की एक कथा ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्णजन्मखंड में दी गयी है।

एक दिन, धन्वन्तरि अपने शिष्यों के साथ कैलास की ओर जा रहा था। मार्ग में तक्षक सर्प अपने विषारी फूत्कार डालते हुए, इन पर दौड़ा। शिष्यों में से एक को औषधि मालूम होने के कारण, बड़े ही अभिमान से वह आगे बढ़ा। उसने तक्षक को पकड़ कर, उसके सिर का मणि निकाल कर, जमीन पर फेंक दिया। यह वार्ता सर्पराज वासुकि को ज्ञात हुई। उसने हजारों विषारी सर्प द्रोण, कालीय, कर्कोट, पुंडरीक तथा धनंजय के नेतृत्व में भेजे। उनके श्वासोच्छ्वास के द्वारा बाहर आई विषारी वायु से, धन्वन्तरि के शिष्य मूर्च्छित हो गये। धन्वन्तरि ने, वनस्पतिजन्य औषध से उन्हें सावधान कर के, उन सर्पों को अचेत किया। वासुकि को यह ज्ञात हुआ। उसने शिवशिष्य मनसा को भेजा। मनसा तथा गरुड़ शिवभक्त थे। धन्वन्तरि, गरुड़ का अनुयायी था। जहाँ धन्वन्तरि था, वहाँ मनसा आई। उसने धन्वन्तरि के सब शिष्यों को अचेत कर दिया। इस समय स्वयं धन्वन्तरि भी, शिष्यों को सावधान न कर सका। मनसा ने स्वयं धन्वन्तरि को भी, मंत्रतंत्र से अपाय करने का प्रयत्न किया, किंतु वह असफल रही। तब शिव द्वारा दिया गया त्रिशूल वह इस पर फेंकने ही वाली थी कि, शिव तथा ब्रह्मा वहाँ आये। उन्होंने वह झगड़ा मिटाया। अंत में मनसा तथा धन्वन्तरि ने एक दूसरे की पूजा की। उसके बाद सब सर्प, देव, मनसा तथा धन्वन्तरि, अपने अपने स्थान रवाना हुएँ (ब्रह्मवै. कृष्ण. १.५१)।

धन्वन्तरि के ग्रंथ—धन्वन्तरि के नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्रसिद्ध हैं—१. चिकित्सातत्त्व विज्ञान, २. चिकित्सा-दर्शन, ३. चिकित्साकौमुदी, ४. अजीर्णामृतमंजरी, ५. रोग-निदान, ६. वैद्यचिंतामणि, ७. वैद्य प्रकाश चिकित्सा, ८. विद्याप्रकाशचिकित्सा, ९. धन्वन्तरीय निघंटु, १०. चिकित्सासारसंग्रह, ११. भास्करसंहिता का चिकित्सा-तत्त्व विज्ञानतंत्र, १२. धातुकल्प, १३. वैद्यक स्वरोदय (ब्रह्मवै. २.१६)। इनके सिवा, इसने वृक्षायुर्वेद, अश्वायुर्वेद तथा गजायुर्वेद का भी निर्माण किया था (अग्नि. २८२)।

धन्वन्तरि 'अमृताचार्य'—एक आयुर्वेदशास्त्रज्ञ। यह अंबष्ठ ज्ञाति में पैदा हुआ था। आद्य धन्वन्तरि से इसका निश्चित क्या संबंध है, यह कह नहीं सकते। इसके जन्म के बारे में निम्नलिखित कथा उपलब्ध है:— एक बार गालव ऋषि दर्भ एवं काष्ठ लाने के लिये अरण्य में गया था। अधिक घूमने के कारण, वह तृषार्त हो गया। उतने में पानी ले जानेवाली एक लड़की को इसने देखा। उसने इसे पानी पिलाया। तब गालव ने उसे वर दिया, 'तुम्हें अच्छा पुत्र पैदा होगा'। किंतु उस लड़की ने कहा, 'अभी मेरा विवाह भी नहीं हुआ है'।

पश्चात् गालव ने दर्भ की एक पुरुषाकृति बना कर, उस वीरभद्रा नामक वैश्यकन्या को दी। उस पुरुषाकृति से पुत्र निर्माण करने को उसे कह दिया। वीरभद्रा को उस दर्भपुरुष से एक सुंदर पुत्र हुआ। ब्राह्मण पिता से वैश्य स्त्री को वह पुत्र उत्पन्न हुआ, इस कारण वह अंबष्ठ ज्ञाति का बना। उसका नाम अमृताचार्य रखा गया। वही धन्वन्तरि है (अम्बष्ठाचारचंद्रिका)।

धन्वन्तरि 'दिवोदास'—(सो. काश्य.) काशी के धन्वन्तरि राजा का पौत्र एवं आयुर्वेदशास्त्र का एक प्रमुख आचार्य। बाल्यकाल से ही यह विरक्त था। बड़े प्रयत्न से इसे काशी का राजा बनाया गया (भवि. १.१)।

विश्वामित्र का पुत्र सुश्रुत एवं वृद्ध नामक ब्राह्मण इसके प्रमुख शिष्य थे (भवि. प्रति. ४.२०; अग्नि. २६९.१)। इसने 'काल्पवेद' (काल्प-रोगों से क्षीण हुआ देह) की रचना की। काल्पवेद के दर्शन से रोग नष्ट हो जाते थे। सुश्रुत ने उसका पठन कर, सौ अध्यायों का 'अश्रुत तंत्र' का निर्माण किया (भवि. प्रति. ४.९.१६-२३)।

कई प्राचीन ग्रंथों में, इसे कल्पदत्त ब्राह्मण का पुत्र कहा गया है। विष्णु ने गरुड को आयुर्वेद सिखाया, एवं इसने वह गरुड से सीख लिया (गरुड. १.१९७.५५)। ब्रह्मवैवर्तपुराण में इसे शंकर का उपशिष्य कहा है (ब्रह्मवै. ३.५१)।

अन्य कई स्थानों में, इसे कृष्णचैतन्य का शिष्य कहा है। एक बार यह कृष्णचैतन्य के पास गया। प्रकृति श्रेष्ठ या पुरुष श्रेष्ठ, इसके बारे में, इसका एवं कृष्णचैतन्य का विवाद हुआ। इसका कहना था, 'प्रकृति से पुरुष श्रेष्ठ है'। किन्तु कृष्ण चैतन्य ने कहा, 'दोनों भी श्रेष्ठ हैं'। कृष्णजी का कहना इसे मान्य हुआ एवं यह उसका शिष्य बन गया। कृष्णचैतन्य के शिष्यत्व की यह कहानी धन्वन्तरि 'दिवोदास' की ही है, या किसी अन्य धन्वन्तरि की, यह निश्चित रूप से कहना मुष्किल है।

धन्विन्—तामस मनु का एक पुत्र।

धमाति—अंगिराकुल का एक ऋषि। धूनति पाठभेद है।

धमनी—ह्लाद नामक असुर की पत्नी। इसके पुत्र इल्वल तथा वातापि (भा. ६.१८.१५)।

धमिल्ला—अनुशाल्व राजा की पत्नी (जै. अ. ६१)।

धमधमा—स्कन्द की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. १९)।

धर—धर्म तथा धूम्रा का पुत्र। इसकी पत्नी मनोहरा। इसके पुत्र द्रविण, हुतहव्यवह, शिशिर, प्राण रमण (विष्णु. १.१५) तथा रज (ब्रह्मांड ३.३.२१-२९)। महाभारत के मत में, इसे द्रविण तथा हुतहव्यवह ये केवल दो ही पुत्र थे (म. आ. ६०.२०)।

२. सोम का पुत्र।

३. एक पांडवपक्षीय राजा (म. द्रो. १३३-३७)। यह युधिष्ठिर का संबंधी एवं सहायक था।

धरापाल—विदिशा नगरी का राजा। एक बार देवी ने अपने एक गण को शाप दिया, 'तुम सियार बनोगे'। सियार का स्वरूप प्राप्त हुए उस, गण ने वेतसी तथा वेत्रवती नदी के संगम पर प्राणत्याग किया। पश्चात् उसे ले जाने के लिये यम ने विमान भेज दिया।

यह देख कर धरापाल ने वहाँ एक विष्णुमंदिर बाँधा। एक पुराणज्ञ व्यक्ति को पुराणकथन के लिये नियुक्त किया। उस पुण्यसंचय के कारण, इसकी मृत्यु के बाद इसे ले जाने के लिये, यम ने विमान भेजा, तथा इसे स्वर्ग में पहुँचा दिया (पद्म. उ. २८)।

धरिणी—अग्निष्वात्तादि पितरों की मानसकन्या। इसे वयुना नामक एक बहन थी।

धरुण आंगिरस—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१५)।

धर्म—संपूर्ण लोगों को सुख देनेवाली एक देवता एवं ब्रह्माजी का मानसपुत्र। यह स्वायंभुव मन्वंतर में ब्रह्माजी के दाहिने स्तन से उत्पन्न हुआ (म. आ. ६०. ३०; मत्स्य. ३.१०; भा. ३.१२.२५)। यह एक प्रजापति था, एवं बुद्धि से उत्पन्न हुआ था। इसे भगवान् सूर्य का भी पुत्र कहा गया है (म. आ. ८१. ८९)। इसके वृष, यम आदि नामांतर उपलब्ध हैं।

दक्ष प्रजापति की दस पुत्रियाँ इसकी पत्नी थी (म. आ. ६०.१३-१४)। उनके नामः—कीर्ति, लक्ष्मी, धृति, मेधा, पुष्टि, श्रद्धा, क्रिया, बुद्धि, लज्जा एवं मति। आठो वसु इसके पुत्र थे (म. आ. ६०.१७)। इसके तीन श्रेष्ठ पुत्र थेः शम, काम, हर्ष (म. आ. ६०.३१)। इसे सत्या नामक और एक कन्या भी थी। वह इसने शंयु नामक अग्नि को दी (म. व. २०९.४)।

भागवत एवं पुराणों में, दक्ष प्रजापति की तेरह कन्याएँ इसे भार्यारूप में दी गयी थी, ऐसा निर्देश है (भा. ४. १; ब्रह्मांड. २.९.५०)। उनके नामः—श्रद्धा, मैत्री, दया, शांति, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया, उन्नति, बुद्धि, मेधा, तितिक्षा, ह्री, एवं मूर्ति। इनमें से प्रथम बारह स्त्रियों से इसे बारह पुत्र हुएँ। उनके क्रमशः नामः—शुभ, प्रसाद, अभय, सुख, मुद, स्मय, योग, दर्प, अर्थ, स्मृति, क्षेम तथा प्रश्रय। तेरहवे मूर्ति नामक स्त्री से इसे नर-नारायण ऋषि पुत्ररूप में हुएँ।

इसीके अंश से विदुर एवं युधिष्ठिर पैदा हुएँ थे (म. आ. ६१.८४; ११०; म. व. २९८.२१)। इसने यक्षरूप से नकुल, सहदेव, अर्जुन, एवं भीमसेन को मूर्च्छित किया (म. व. २९८.६)। पश्चात् युधिष्ठिर के साथ इसके प्रश्नोत्तर हो गये (म. व. २९८.६-२५)। इसने युधिष्ठिर से पूछा, 'धर्म के पास पहूँचने के द्वार कौन से है?' युधिष्ठिर ने उत्तर दिया, 'अहिंसा, समता, शान्ति दया, एवं अमत्सर ये धर्म के पास पहूँचने के द्वार हैं। युधिष्ठिर के उस उत्तर से प्रसन्न हो कर, यह धर्मरूप में प्रकट हुआ। इसने युधिष्ठिर को वरदान दिया, 'अज्ञातवास में कौरवों से तुम सुरक्षित रहोंगे' (म. व. २९८.२५)। विदेह का राजा जनक से भी इसका संवाद हुआ था (म. आश्व. ३२)।

पांडवों के महाप्रस्थान के समय, कुत्ते का रूप धारण कर, धर्म उनके पीछे-पीछे गया था (म. महाप्रस्थान. ३.१३)। विदुर एवं युधिष्ठिर के मृत्यु के पश्चात्, वे दोनों धर्म में ही विलीन हो गये (म. स्वर्गा. ५.१९)।

२. भागवत में पुनः दूसरे स्थान पर, धर्म की पत्नी एवं पुत्रपरिवार के बारे में अन्य जानकारी दी गई है। वहाँ लिखा है कि, धर्म को भानु, लंबा, कुकुर, यामी (जामि) विश्वा, साध्या, मरुत्वती, वसु, मुहूर्ता तथा संकल्पा नामक दस पत्नियाँ थी। उनसे इसे देव ऋषभ, विद्योत, संकट, स्वर्ग, विश्वेदेव, साध्यगण, मरुत्वान्, जयंत, मुहूर्ताभिमानी, देवगण, संकल्प, द्रोण, प्राण, ध्रुव, अर्क, अग्नि, दोष। वसु तथा विभावसु नामक पुत्र हुएँ (भा. ६.६.४-१०; मत्स्य. ५.२०३; विष्णु. १.१५. १०६-११०)। अन्य कई जगह, कुकुप् की जगह अरुंधती नाम प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.३.१.४४; वसु देखिये)।

यह जानकारी उस समय की है, जब पहले का धर्म महादेव के शाप से मृत हो गया था, एवं वैवस्वत मन्वंतर में ब्रह्मदेव के द्वारा अन्य धर्म उत्पन्न किया गया था (वायु. ४)। इससे जाहिर होता है कि, धर्म एवं उसका परिवार प्रत्येक युग में नया उत्पन्न हो कर उसी युग में लय भी होता था। युगभेद के अनुसार, जानकारी में फर्क होता है। असंगति भी उसी कारण प्रतीत होती है। पुराणों में भी यह कहा गया है (विष्णु. १.१५.८४; १०६-११०; पितर देखिये)।

३. यम का नाम (भा. ९.२२.२७)।

४. (सो. द्रुह्यु.) गांधार का पुत्र। इसका पुत्र धृत।

५. (सो. यदु. वृष्णि.) लिंग के मत में अक्रूर पुत्र।

६. (सो. यदु. क्रोष्टु.) भागवतमत में पृथुश्रवा का पुत्र (तम देखिये)।

७. (सो. यदु. सह.) हैहय राजा का पुत्र। इसे धर्मतत्व तथा धर्मनेत्र भी कहा गया है।

८. (सो. क्षत्र.) वायु के मत में दीर्घतमस् का पुत्र।

९. एक ब्रह्मर्षि। इसकी पत्नी धृति (म. उ. ११७. १५; ११५.४६१*)।

१०. उत्तम मन्वन्तर के सत्यसेन अवतार का पिता। इसकी पत्नी सूनृता (भा. ८.१.२५)।

११. चाक्षुष मन्वन्तर का अवतार। इसके पुत्र नर-नारायण (दे. भा. ४.१६)।

१२. सुतप देवों में से एक।

१३. ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ का सदस्य (पद्म. सृ. ३४)।

१४. एक धार्मिक वैश्य। यह ग्राहकों से अत्यंत

सचाई से व्यवहार करता था (नरोत्तम देखिये; पद्म. सृ. ५०)।

१५. (पौर. भविष्य.) विष्णु के मत में रामचन्द्र का पुत्र।

१६. (सो. मगध. भविष्य.) विष्णु के मत में सुव्रत का पुत्र। अन्यत्र इसे धर्मनेत्र, धर्मसूत्र तथा सुनेत्र नाम हैं।

१७. एक व्यास (व्यास देखिये)।

धर्मकेतु—(सो. क्षत्र.) भागवतमत में सुकेतन का एवं विष्णु तथा वायु के मत में सुकेतु का पुत्र।

धर्मगुप्त—सोमवंशीय नंद राजा का पुत्र। एक बार यह अरण्य में गया था। संध्यासमय होने के कारण, उसी अरण्य के एक वृक्ष का इसने रातभर के लिये सहारा लिया।

रात के समय, उसी वृक्ष का सहारा लेने एक रीछ आया। उसके पीछे एक सिंह लगा हुआ था। रीछ ने राजा से कहा, 'मित्र, तुम घबराना नहीं। सिंह के डर से मैं यहाँ आया हूँ। हम दोनों इस वृक्ष के सहारे रात बिता लेंगे। आधी रात तक तुम जागो। आधी रात तक मैं जाग कर तुम्हें सम्हालूँगा'। राजा निश्चिंत मन से सो गया।

नीचे खड़ा सिंह, रीछ से बोला, 'तुम राजा को नीचे फेंक दो'। रीछ ने यह अमान्य कर कहा, 'विश्वासघात करना बहुत ही बड़ा पाप है'। बाद में राजा को जाग्रत कर, वह स्वयं सो गया।

सिंह ने राजा से कहा, 'तुम रीछ को नीचे ढकेल दो'। दुर्बुद्धि सूझ कर राजा ने रीछ को नीचे ढकेल दिया, परंतु सावधानी से रीछ ने वृक्षों के डालो में अपने आप को फँसा दिया। पश्चात् इसने क्रोधवश राजा को शाप दिया, 'तुम पागल हो जाओगे'।

रीछ आगे बोला, 'मैं भृगुकुल का ध्यानकाष्ठ नामक ऋषि हूँ। मन चाहा रूप मैं ले सकता हूँ। तुम विश्वासघात से मुझे नीचे ढकेल रहे थे, इसलिये मैंने तुम्हें शाप दिया है'। सिंह से भी उसने कहा, 'तुम भद्र नामक यक्ष तथा कुबेर के सचिव थे। गौतम ऋषि के आश्रम में दोपहर में निर्लज्जता से स्त्री के साथ क्रीड़ा करने के कारण, गौतम ने तुम्हें सिंह बनने का शाप दिया था। मेरे साथ संवाद करने पर पुनः यक्षरूप प्राप्त होने का उःशाप भी, तुम्हे मिला था'। ध्यानकाष्ठ का यह भाषण सुन कर, सिंह पुनः यक्ष बना एवं विमान में बैठ कर अलकापुरी चला गया।

धर्मगुप्त के पागल होने की वार्ता सुन कर, नंद राजा राजधानी में वापस आया। उसने जैमिनि ऋषि को, अपने पुत्र के पागलपन का उपाय पूछा। उसने राजा को पुष्करिणी तीर्थ पर, स्नान करने के लिये कहा। नंद ने वैसा करने पर, उसके पुत्र धर्मगुप्त का पागलपन निकल गया। पश्चात् नंद राजा पुनः तप करने के लिये वन में गया (स्कन्द. २.१.१३)।

धर्मजालिक—त्राल देखिये।

धर्मतत्व—(सो. सह.) वायु मत में हैहय राजा का पुत्र (धर्म ७. देखिये)।

धर्मद—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ६७)।

धर्मदत्त—एक ब्राह्मण। यह करवीर नगर में रहता था। एक बार पूजासाहित्य ले कर, यह मंदिर में जा रहा था। राह में इसे कलहा नामक राक्षसी दिखी। उसे देखते ही यह भय से गर्भगलित हो गया। थोड़ा धीरज बाँध कर, इसने पास का पूजासाहित्य उस के मुख पर फेंक दिया। उस साहित्य में से एक तुलसीपत्र कलहा के शरीर पर गिरा, एवं उस से उसे पूर्वजन्म का स्मरण हो गया।

अपना क्रूर स्वभाव त्याग कर, दुष्ट राक्षसयोनि से मुक्ति का उपाय, कलहा ने धर्मदत्त से पूछा। धर्मदत्त के हृदय में कलहा के प्रति दया उत्पन्न हो गयी, एवं इसने अपने कार्तिक व्रत का पुण्य उसे दे दिया। इससे उसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. १०६–१०८; स्कन्द. २. ४. २४–२५)।

कार्तिकव्रत के पुण्य के कारण, अगले जन्म में यह दशरथ बना। कलहा इसके आधे पुण्य के कारण, इसकी पत्नी कैकयी बनी (दशरथ देखिये; आ. रा. सार. ५)।

२. कश्यप का स्नेही। कश्यपपुत्र गजानन को यह हमेशा अपने घर भोजन के लिये बुलाता था (गणेश. २.१४)।

धर्मदृश्—(सो. वृष्णि.) विष्णुमत में श्वफल्कपुत्र।

धर्मद्रवा—गंगा नदी का नामांतर। यह ब्रह्मदेव की सात भार्याओं में से एक थी। इसे ब्रह्मदेव ने अपने कमंडलु में रखा था। वामनावतार द्वारा विष्णु ने बली को बाँध कर देवों को निर्भय कर दिया। तत्पश्चात् ब्रह्मदेव ने इसे विष्णु के पैरों पर डाल कर, उसके पाँव धो डाले।

यह आकाश से हेमकूट पर्वत पर गिरी, तब शंकर ने इसे जटा में धारण किया। भगीरथ द्वारा ऐरावत की प्रार्थना की जाने पर, उसने अपने दाँतों से हेमकूट पर्वत में तीन छेद खोद डाले। उनमें से गंगा बहने लगी। उस कारण इसे 'त्रिस्रोता' भी कहते हैं (पद्म. सृ. ६२)।

धर्मध्वज--रथध्वज राजा का पुत्र। इसे तुलसी नामक कन्या थी।

२. (सू. निमि.) विदेह देश का राजा। भागवतमत में यह कुशध्वज जनक का पुत्र था। इसे कृतध्वज तथा मितध्वज नामक दो पुत्र थे। यह पंचशिख का शिष्य था (म. शां. ३०८; ४-२४)। यही जनदेव होगा। महाभारत में दिये गये, 'धर्मध्वज-सुलभासंवाद' में मोक्ष का प्रतिपादन है (म. शां. ३०८)।

धर्मध्वजिन्--विदेह देश के जनककुल का एक क्षत्रिय। इसे असित ने पृथ्वीगीता बताई (विष्णु. ४.२४)। परंतु पृथ्वीगीता का प्रतिपादन इसे देवल ने किया, ऐसा भी निर्देश प्राप्त है (पद्म. उ. १९७.२७)।

धर्मन्--(सू. इ. भविष्य.) विष्णु के मत में यह बृहद्राज का पुत्र। इसके लिये धर्मिन् तथा बर्हि नाम भी है।

धर्मनारायण--एक व्यास (व्यास देखिये)।

धर्मनेत्र--(सो. सह.) हैहय वंश का एक राजा। विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मत में यह हैहय राजा का पुत्र था (पद्म. सृ. १२; धर्म ७. देखिये)।

२. (सो. मगध. भविष्य.) वायुमत में सुवन का पुत्र तथा ब्रह्मांड मत में सुव्रत का पुत्र। इसने पांच वर्षों तक राज्य किया (धर्म १३. देखिये)।

३. (सो. पूरु.) कुरु का प्रपौत्र एवं जनमेजय धृतराष्ट्र का पुत्र (म. आ. ८९.८९२*)।

धर्मपाल--दशरथ का अमात्य (वा. रा. अयो. ७)।

२. (सो.) भविष्यमत में आनंदवर्धन का पुत्र। इसने २७०० वर्षों तक राज्य किया।

धर्मबुद्धि--एक चोलवंशीय राजा। नास्तिकों के सहवास के कारण, दूसरे जन्म में यह गेंड़ा बना। उस जन्म में सुलोचना ने इसका वध किया। उस समय सुलोचना ने वीरवर नामक पुरुष का वेष धारण किया था। गंगासागर संगम तीर्थ में मरने के कारण, उस गेंडे का उद्धार हुआ। विष्णुदूतों के साथ स्वर्ग में जाते समय, सुलोचना को इसने वर दिया, 'तुम्हारा पति से मिलन होगा' (पद्म. क्रि. ६)।

धर्मभृत्--दंडकारण्यवासी एक ऋषि। पंचाप्सर सरोवर में की जानकारी इसने राम को बतायी, एवं उस सरोवर में से आनेवाले चमत्कृतिजनक आवाज का कारण भी इसने उसे बताया (वा. रा. अर. ११)।

२. मत्स्यमत में अक्रूर का तथा वायुमत में श्वफल्क का पुत्र।

धर्ममूर्ति--बृहत्कल्प का एक राजा। इसकी पत्नी भानुमती। उसके सिवा इसे १०००० स्त्रियाँ थी। इसका कुलगुरु वसिष्ठ था। पूर्वजन्म में एक वेश्या के घर में स्वर्णकार का जन्म इसे मिला था। इसके द्वारा बनाया गया सुवर्णवृक्ष, उस वेश्या ने ब्राह्मणों को दान किया। अतः सद्यः जन्म में यह वैभवसंपन्न राजा बना। यही कथा पद्मपुराण में कुछ अलग ढंग से दी गयी है। पहले यह शूद्र था। उसके बाद के जन्म में यह केंकडा बना, एवं स्वर्ग द्वारेश्वर के सामने मृत हो गया। उस पुण्यसंचय के कारण, यह सद्यःजन्म में वैभवसंपन्न राजा बन गया (पद्म. सृ. २१; स्कन्द. ५. २. २२)।

धर्मरथ--(सो. अनु.) अनुवंश का एक राजा। यह दिविरथ राजा का पुत्र था। इसका पुत्र चित्ररथ उर्फ रोमपाद वा लोमपाद।

२. (सू. इ.) सगर का एक पुत्र, जो कपिल के शाप से बचा था (पद्म. उ. २०)।

धर्मराज--गौड़ देश का राजा। यह गौड़ाधिपति गुणशेखर का पुत्र था। जैन धर्म का वैदिक धर्म पर हमला चालू था। तब इसने स्वयं वैदिक धर्म का स्वीकार किया, तथा अपनी कृति से वैदिक धर्म का श्रेष्ठत्व सब को दर्शा दिया। इसने अपने पिता का भी उद्धार किया (भवि. प्रति. २. १०)।

धर्मवर्ण--एक ब्राह्मण। कलियुग के अन्तिम काल में यह आनर्त देश में रहता था। एक बार यह पितृलोक गया। वहाँ इसने देखा कि, इसके पितर दूर्वांकुर के आधार पर लटक रहे हैं। उन्होंने अपने उद्धार के लिये इसे विवाह करने के लिये कहा। तब इसने विवाह किया। पश्चात् पुत्रजन्म होते ही, यह गंधमादन पर तपस्या करने चला गया (स्कन्द. २. ७. २२)।

धर्मवर्मन्--(सो. वृष्णि.) मत्स्यमत में अक्रूर का पुत्र।

धर्मवल्लभ--पुण्यपुर का राजा। अपने सत्यप्रकाश नामक मंत्री के साथ, इसका अध्यात्म के विषय में संभाषण हुआ था (भवि. प्रति. २.११)।

धर्मवृद्ध—(सो. वृष्णि.) श्वफल्क के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४.१६)।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा। वायुमत में यह आयु का पुत्र था। क्षत्रवृद्ध इसीका नामांतर था। वायु पुराण के क्षत्रवृद्ध वंश का प्रारंभ इसी राजा से हुआ है।

धर्मव्याध—मिथिला नगरी में रहनेवाला एक धर्मपरायण व्याध। इसने कौशिक नामक गर्वोद्धत ब्राह्मण को, मातापिता की सेवा का माहात्म्य बता कर विदा किया (म. व. १९७.२०६)। इसे अर्जुन तथा अर्जुनी नामक अपत्य थे। उनमें से अर्जुनी विवाह योग्य होने के पश्चात्, मतंग ऋषि के पुत्र प्रसन्न से उसका विवाह हुआ।

धर्मव्याध अत्यंत धार्मिक था। पंच महायज्ञ, अग्नि परिचर्या तथा श्राद्धादि कर्म यह बहुत ही भाविकता से हररोज करता था। परंतु यह सारे धर्मकृत्य यह मृगया करते करते ही करता था। एक बार, अर्जुनी की सास ने उसे व्यंग वचन कहे, 'यह तो जीवघात करनेवालों की कन्या है। यह, तप करने वालों के आचार भला क्या समझेगी?

धर्मव्याध को इसका पता चल गया। मतंग को इसने समझाया, 'शाकाहरी होते हुए भी तुम जीवघातक हो'। पश्चात् इसने संसार के सास ससुरों को शाप दिया, साससुर पर बहुएँ कभी भी विश्वास नही रखेगी, तथा यह भी न चाहेंगी कि उन्हें साससुर हों (वराह. ८.)।

पूर्वजन्म में यह एक सामान्य व्याध था। काश्मीराधिपति वसु राजा को इसने पूर्वजन्म का ज्ञान दिया। उस कारण वसु राजा ने इसे वर दिया, 'अगले जन्म में तुम धर्मव्याध बनोगे' (वराह. ६)।

महाभारत में यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। पूर्व जन्म में यह एक वेद पारंगत ब्राह्मण था। परंतु एक राजा की संगत में आ कर क्षात्रधर्म में एवं धनुर्विद्या में इसे रुची उत्पन्न हो गयी। एक बार यह उस राजा के साथ शिकार के लिये गया। अनजाने में इसके हाथ एक ऋषि का वध हो गया। ऋषि ने इसे शाप दिया, 'तुम शूद्रयोनि में व्याध बनोगे'। अनजाने में अपराध हो गया आदि प्रार्थना ऋषि से करने पर, उसने उःशाप दिया, 'व्याध होते हुए भी तुम धर्मज्ञ बनोंगे। पूर्वजन्म का स्मरण तुम्हें रहेगा, एवं अपने मातापिता की सेवा तुम करोगे' (म. व. २०५; कौशिक ७, देखिये)।

महाभारत में धर्मव्याध के द्वारा, निम्नलिखित विषयों पर विवरण किया गया है :— वर्णधर्म का वर्णन (म. व. १९८.१९-५५); शिष्टाचार का वर्णन (म. व. १९८. ५७-९४); हिंसा एवं अहिंसा का वर्णन (म. व. १९९); धर्मकर्मविषयक मीमांसा (म. व. २००); विषयसेवन से हानी एवं ब्राह्मीविद्या का वर्णन (म. व. २०१); इंद्रियनिग्रह का वर्णन (म. व. २०२)।

कालंजरगिरि पर इन्द्र के साथ सोम पीने का सम्मान इसे मिला था (ब्रह्म. १३.३९)।

धर्मव्रता--धर्म को धर्मवती से उत्पन्न कन्या। ब्रह्मपुत्र मरीचि की यह पत्नी थी। एक बार मरीचि ऋषि सोया हुआ था, उस वक्त ब्रह्मदेव इसके घर आया। इसने उसका सत्कार किया। किंतु उस प्रसंग के कारण, मरीचि को इसके चारित्र्य पर शक आ गया। उसने क्रोधवश इसे शाप दिया, 'तुम शिला बन जाओगी'। उसी शिला पर गया की विष्णुमूर्ति स्थित है। इसे देवव्रता नाम भी प्राप्त है (अग्नि. ११४)।

धर्मशर्मन्--एक ब्राह्मण। कश्यपकुल के विद्याधर ब्राह्मण के तीन पुत्रों में से, यह सब से कनिष्ठ था। इसके भाईयों में से वसुशर्मा तथा नामशर्मा ये दोनों बड़े भाई विद्वान् थे। किंतु इसे विद्याध्ययन में रुचि नहीं थी।

वृद्धापकाल में इसे अपने कृतकर्म पर पश्चात्ताप हुआ। पश्चात् एक सिद्ध के उपदेश के कारण, इसे आत्मज्ञान प्राप्त हुआ।

इसने अपने मनोरंजन के लिये एक तोता पाल रखा था। एक बार उस तोते को बिल्ली ने खा लिया। तब अत्यंत दुखित हो कर, यह मृत हो गया। दूसरे जन्म में इसे शुक का ही जन्म प्राप्त हो गया, एवं पूर्वसंचित के कारण यह जन्मतः आत्मज्ञानी बना (पद्म. भू. १-३)।

२. वायुमत में व्यास की ऋक्‌शिष्य परंपरा के शाकपूर्ण रथीतर का शिष्य (व्यास देखिये)।

धर्मसख—केकयवंश का एक राजा। इसे सौ पत्नियाँ थी परंतु संतान नहीं थी। अन्त में वृद्धापकाल में सुचन्द्रा नामक ज्येष्ठ स्त्री से इसे एक पुत्र हुआ। परंतु अन्य स्त्रियाँ वैसी ही संतानहीन रही। उनका दुख मन ही मन जान कर, धर्मसख राजा ने अपने मंत्रियों की सलाह के अनुसार, पुत्रकामेष्टि यज्ञ करने का निश्चय किया। दक्षिण समुद्र के पास के हनुमत्कुंड के पास यह यज्ञ प्रपन्न हुआ। उस यज्ञ के फलस्वरूप, इसकी सौ स्त्रियों को सौ पुत्र हुएँ (स्कन्द. ३.१.१५)।

धर्मसारथि--(सो. आयु.) त्रिककुद् राजा का पुत्र। इसका पुत्र शांतरय।

धर्मसावर्णि--एक मनु। धर्म तथा दक्षकन्या सुव्रता को यह चाक्षुष मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ। ग्यारहवें मन्वन्तर का यह अधिपति था। वायुपुराण में लिखा है कि, यह दसवें मन्वन्तर का अधिपति था (मनु देखिये)। देवी भागवत में उस मन्वन्तर का नाम 'सूर्यसावर्णि' दे कर, उसके अधिप का नाम वैवस्वतपुत्र 'नाभाग' दिया गया है (दे. भा. १०.१३)।

धर्मसूत्र--(सो. मगध. भविष्य.) भागवतमत में सुव्रत का पुत्र (धर्म १३. देखिये)।

धर्मसेतु--एक विष्णुअवतार। यह आर्यक तथा वैधृता से धर्मसावर्णि मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ था (भा. ८.१३.२६)।

धर्मसेन--(सू. इ.) मांधातापुत्र अंबरीष का नामांतर।

धर्मस्व--एक ब्राह्मण। एक बार गंगा की डोली ले कर, यह घर जा रहा था। रास्ते में एक बैल ने, रत्नाकर नामक व्यापारी के कापकल्प नामक नौकर की हत्या की। कापकल्प स्वयं अत्यंत पापी था। किंतु उसकी अचानक मृत्यु के कारण, धर्मस्व के हृदय में उसकी प्रति दया उत्पन्न हुई। इसने उसके शरीर पर तुलसीपत्र से गंगोदक छिड़क दिया। इससे कापकल्प का उद्धार हो गया। गंगोदक का यह प्रभाव देख, धर्मस्व ने स्वयं गंगा की आराधना की, एवं वर प्राप्त किया, 'गंगा का नाम लेते लेते ही मुझे मृत्यु प्राप्त हो' (पद्म. क्रि. ७)।

धर्मांकर--एक धार्मिक गृहस्थ। एक राजपुत्र ने अपनी सुस्वरूप भार्या, सुरक्षितता के उद्देश्य से छः महिनों तक इसके पास रख दी। फिर भी इस सच्चरित्र पुरुष के मन में उस स्त्री के बारे में कामवासना उत्पन्न नहीं हुई। छः महिने के बाद राजपुत्र वापस लौटा। कुत्सित लोगों ने राजपुत्र के हृदय में संशय उत्पन्न करने का प्रयत्न किया, परंतु कुछ लाभ नहीं हुआ। बाद में लोकनिंदा से त्रस्त हो कर, यह चिताप्रवेश करने लगा। उस अग्निपरिक्षा में से यह विनाकष्ट बाहर आया, एवं इसके निंदकों के मुख पर कोढ हो गया। देवों ने इसे 'सज्जनाद्रोहक' पदवी दी थी (पद्म. सृ. ५०)।

धर्मांगद--एक राजा। विदिशा नगरी के ऋतुध्वज-पुत्र रुक्मभूषण को संध्यावली नामक भार्या से यह उत्पन्न हुआ था। पिता की इच्छा पूर्ण करने के लिये, इसने अपना मस्तक मोहिनी को अर्पण किया। यही धर्मांगद अगले जन्म में सुव्रत बना (पद्म. भू. २२)।

धर्मात्मन्--वायु तथा ब्रह्मांड के मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा का हिरण्यनाभ का शिष्य।

२. ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

धर्मारण्य--एक ब्राह्मण (म. शां. ३४९.५)। पद्मनाभ नामक नाग से इसने अध्यात्मविद्या प्राप्त की तथा उसके कारण यह कृतार्थ हो गया।

धर्मिन्--(सू. इ. भविष्य.) वायु के मत में भरद्वाज-पुत्र (धर्मन् देखिये)।

धर्मेयु--(सो. पूरु.) एक राजा। भागवत, मत्स्य तथा वायुमत में यह रौद्राश्व का पुत्र था। उसे यह मिश्रकेशी नामक अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न हुआ (म. आ. ८९.१०; धनयु देखिये।

धातकि--प्रियव्रतपुत्र वीतिहोत्र का पुत्र। वीतिहोत्र ने इसे पुष्करद्वीप का आधा भाग दिया था (भा. ५. २०.३१)।

धातु--मरुतों के तीसरे गणों में से एक।

धातृ--वैवस्वत मन्वन्तर के बारह आदित्यों में से एक (भा. ६.६.३९; पद्म. सृ. ६)। इसकी माता का नाम अदिति, एवं पिता का नाम कश्यप था (म. आ. ५९. १५)। खाण्डववनदाह के समय, श्रीकृष्ण एवं अर्जुन के बीच युद्ध का संभव उत्पन्न हुआ था। उस समय, यह देवताओं की ओर से आया था (म. आ. २१८.३३)।

इसके द्वारा स्कंद को पाँच पार्षद प्रदान किये गये थे। उनके नाम :--कुन्द, कुसुम, कुमुद, डम्बर, एवं आडम्बर (म. श. ४४.३५)।

इसे कुहू, सीनीवाली, अनुमति, एवं राका नामक चार पत्नियाँ थी। उनसे इसे, सायंकाल, दर्श, पूर्णमास, एवं प्रातःकाल नामक चार पुत्र हुएँ (भा. ६.१८.३)। इसके पुत्रों के ये नाम रूपकात्मक प्रतीत होते है।

आदित्य के नाते, यह हरसाल कार्तिक मास में प्रकाशित होता है, एवं इसके ११०० किरणें रहती हैं (भवि. ब्राह्म. १.७८)। भागवतमत में, यह चैत्रमास ('मधुमास') में प्रकाशित होता है (भा. १२.११.३३; विवस्वत् देखिये)।

२. ब्रह्माजी का पुत्र। भागवतमत में, यह भृगु ऋषि को ख्याति से उत्पन्न हुआ था। इसके दूसरे भाई का नाम विधाता, एवं बहन का नाम लक्ष्मी (श्री) था।

विधाता एवं यह मनु के साथ रहते थे (म. आदि. ६०.५०)।

मेरूकन्या आयति इसकी पत्नी थी। उससे इसे मृकण्डु नामक पुत्र हुआ था (भा. ४.१.४३-४४)।

हस्तिनापुर जाते समय, मार्ग में श्रीकृष्ण से इसकी भेंट हुई थी (म. उ. ८१.३८८)।

३. भृगु का पुत्र।

धात्र--एक पौराणिक योद्धा। 'द्वादश-संग्राम' में से धात्र नामक दशम-संग्राम में, इसने भाग लिया था। वार्त इसीका नामांतर था (मत्स्य. ४७.४४-४५)।

धात्रेय--अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

धात्रेयिका--द्रौपदी की दासी। जयद्रथ द्वारा द्रौपदी के अपहरण का समाचार इसने पांडवों को बताया था (म. व. २५३.१५)।

धानंजय्य--अंशु का पैतृक नाम।

२. एक आचार्य का पैतृक नाम (ला. श्रौ. १.१.२५; २.१.२; ९.१०)।

धानाक--लुश देखिये।

धान्यमालिनी--रावण की पत्नी। इसका पुत्र अतिकाय (वा. रा. सुं. २२)।

२. एक अप्सरा। शाप के कारण, यह मगर बनी थी। कालनेमि राक्षस के वध के समय, हनुमान ने इसका उद्धार किया।

धान्यायनि--अंगिराकुल का एक ऋषि।

धान्व--असित नामक असुरों के ऋषि का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.४.३.११)। इसका 'धान्वन्' नामांतर भी प्राप्त है (शां. श्रौ. १६.२.२०)।

धाम--एक ऋषिसमुदाय का नाम। उत्तर दिशा में रह कर, श्री गंगा-महाद्वार का ये रक्षण करते है (म. उ. १०९.१४)।

धामन्--अमिताभ देवों में से एक।

२. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. एक नक्षत्र (ऋ. ९.६६.२)।

धारण--चन्द्रवत्सकुल में उत्पन्न एक कुलांगार नरेश। अपने दुर्वर्तन के कारण, यह स्वजनोंसमेत नष्ट हो गया (म. उ. ७२.१६)।

२. एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.१६)।

धारिणी--(स्वा.) स्वधा को पितरों से उत्पन्न कन्या। यह ब्रह्मचारिणी तथा ब्रह्मनिष्ठ थी (भा. ४.१.६४)।

धार्मिक--रामचन्द्र के सुज्ञ नामक मंत्रि का पुत्र।

धार्ष्टक--धृष्ट १. देखिये।

धिषणा--कृशाश्व ऋषि की पत्नी।

२. एक देवी। इसने स्कंद के अभिषेक के समय पदार्पण किया था (म. श. ४४.१२)।

धिष्ण्य--प्रतर्दन देवों में से एक।

२. अग्नि धिष्ण्य ऐश्वर देखिये।

धीमत्--(सो. पुरूरवस्.) पुरूरवा को उर्वशी से उत्पन्न पुत्रों में से द्वितीय पुत्र (म. आ. ७०.२२)।

२. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. अगस्त्य का पुत्र। पुलस्त्य ने इसे दत्तक लिया था। यह अगस्त्यगोत्रीय था।

धीर शातपर्णेय--शतपर्ण का वंशज, एक ऋषि। यह महाशाल का शिष्य था (श. ब्रा. १०.३.३.१)।

धीरधी--काशी का एक शिवभक्त ब्राह्मण। अनन्य शिवोपासना करने के कारण, शिवजी इसपर प्रसन्न हुएँ, एवं इसकी हरप्रकार सहायता करने लगे।

शिवजी का इस पर प्रेम देख कर, शिवगणों को आश्चर्य हुआ। तब इसकी पूर्वजन्म की कहानी शिवजी ने अपने गणों से कथन की। शिवजी बोले, 'यह ब्राह्मण पूर्वजन्म में एक हंस था। एक बार यह एक सरोवर के उपर से जा रहा था। यकायक यह थक गया, एवं जमीन पर गिर पडा। पश्चात् इसका सफेद रंग बदल कर, यह कृष्णवर्ण हो गया। इसका सफेद रंग बदलने का कारण, सरोवर में स्थित एक कमलिनी ने इसे बताया, एवं गीता के दसवें अध्याय का पठन करते हुए शिवोपासना करने को उसे कहा। इस पुण्यसंचय के कारण, उस हंस को अगले जनम में ब्राह्मणजन्म प्राप्त हुआ है'।

शिवजी ने आगे कहा, 'पूर्वकथा में निर्देश किया हुआ हंस, अपने पूर्वजन्म में ब्राह्मण ही था। किंतु गलती से गुरु को पादस्पर्श करने के पाप के कारण, उसे हंस की योनि प्राप्त हुई'।

पश्चात् शिवकृपा से यह जीवन्मुक्त हुआ, एवं स्वर्ग चला गया (पद्म. उ. १८४)।

धीरोष्णी--एक पुरातन विश्वेदेव (म. अनु. १३८. ३२. कुं.)।

धुनि--इन्द्र से शत्रुत्व रखनेवाला एक आदिवासी प्रधान। यह एवं चुमुरि, इंद्र एवं दभीति के शत्रुपक्ष में थे (ऋ. २.१५.९; ६.१८.८; १०.१३; ७.१९.४; इन्द्र देखिये)।

धुंधु--एक राक्षस। यह मधुकैटभों का पुत्र, एवं 'उदकराक्षस' था (म. व. १९५.१)। देवताओं एवं हिरण्याक्ष राक्षस के युद्ध में, यह हिरण्याक्ष के पक्ष में शामिल था (पद्म. सृ. ६५)।

उज्जालक नामक वालुकामय प्रदेश में खुद अपने को वालूका में दबा कर यह रहता था। इसकी तपस्या से संतुष्ट हो कर, ब्रह्मदेव ने इसे अवध्यत्व प्रदान किया। उस वरदान से उन्मत्त हो कर, यह सबको सताने लगा। सूर्यवंशीय कुवलाश्व राजा के पुत्रों को इसने दग्ध किया। फिर उत्तंक ऋषि की प्रेरणा से कुवलाश्व ने इसका वध किया (वायु. ८८; विष्णुधर्म. १.१६; ब्रह्मांड. ३.६३.३१; ब्रह्म. ७.५४.८६; विष्णु. ४.२; ह. वं. १.११; भा. ९.६; कुवलाश्व देखिये)। इसे अरु का पुत्र भी कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६.३१)।

२. एक राजा। इसने जीवन में कभी मांस नही खाया (म. अनु. १७७,७३. कुं.)। इस पुण्यसंचय के कारण, यह स्वर्ग गया।

३. (सो. पुरूरवस्.) मत्स्यमत में पीतायुध का पुत्र तथा वायुमत में जयद का पुत्र।

धुंधुकारिन्--आत्मदेव का पुत्र। यह अत्यंत दुर्वर्तनी होने के कारण, इसका पिता आत्मदेव अरण्य में चला गया (पद्म. उ. १९६; धुंधुली देखिये)।

धुंधुमत्--(सू. दिष्ट.) विष्णुमत में केवल का पुत्र। इसे बंधुमत् भी कहते थे।

धुंधुमार--सूर्यवंशी बृहदश्वपुत्र कुवलाश्व का नामांतर (म. द्रो. ९४.४२)। धुंधु दैत्य का वध करने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ (म. व. १९५.२९)। ऐड़विड़ राजा ने रुद्र से प्राप्त हुआ खड्ग इसे प्रदान किया (म. शां. १६६.७६)। उसी खड्ग से इसने धुंधु का वध किया।

अगस्त्य ऋषि के कमलों की चोरी होने पर, इसने शपथ खायी थी (म. आ. १४.३)। कई जगह, इसे कुवलाश्व का पुत्र भी कहा है (पद्म. सृ. ८)। इसे दृढाश्व, घृण (भद्राश्व), तथा कपिलाश्व नामक तीन पुत्र थे। धुंधु के साथ हुएँ युद्ध में, इसके एक हजार, इक्कीस पुत्रों में से, केवल उपरोक्त तीन पुत्र बचे (वायु. ८८; म. व. १९३. ५-६; १९५.३६; भा. ९.६.२३)। इसने 'वरुथिनी एकादशी' का व्रत किया था। इस कारण इसे स्वर्गप्राप्ति हुई (पद्म. ४८; कुवलाश्व तथा धुंधु देखिये)।

धुंधुमूक--एक राजा। यह मेघवाहन कल्प में तीसरे त्रेतायुग में उत्पन्न हुआ था। इसकी पत्नी का नाम विशाल्या था। उसके द्वारा अत्यंत कुअवसर पर, इसे एक पुत्र पैदा हुआ।

उस पुत्र का विवाह होने पर भी, वह एक शूद्र स्त्री से रत हुआ। बाद में उसने उस स्त्री का वध किया। उस स्त्री के भाई ने धुंधुमूक राजा का, एवं विशाल्या का वध किया। शूद्रोंद्वारा वध होने के कारण, धुंधुमूक के सारे घराने का नाश हुआ।

पश्चात् धुंधुमूक के दुराचारी पुत्र को किसी ने 'लिंग-पूजाव्रत' का माहात्म्य बताया। शिवपंचाक्षर मंत्र ('शिवतराय') तथा शिवषडाक्षर मंत्र ('ॐ नमः-शिवाय') का अखंड जाप करने के कारण, उसका तथा उसके सारे मृत बांधवों का उद्धार हो गया (लिंग. २.८)।

धुंधुर--एक दैत्य। कश्यपगृह में अवतीर्ण गणेशजी का विनाश करने के लिये, इसने एक तोते का रूप धारण किया, एवं यह कश्यप के घर आया। किंतु गणेशजी ने इसका नाश किया (गणेश. २.८)।

धुंधुली--आत्मदेव की पत्नी। एक सिद्ध ने आत्मदेव को पुत्रप्राप्ति के लिये फल दिया था। वह फल उसने अपनी पत्नी धुंधली को भक्षण करने के लिये दिया। परंतु अपनी बहन की बूरी सलाह मान कर, इसने वह फल गाय को खिला दिया, एवं स्वयं गर्भवती होने का स्वाँग रचा दिया। पश्चात् अपनी बहन का पुत्र स्वयं ले कर, इसने झूटमूठ ही पति को बता दिया, 'मुझे पुत्र हुआ है'। उस पुत्र का नाम धुंधुकारी रख दिया गया (पद्म. उ. १९६)।

धूमती--अंगिराकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

धूमपा--पितरों एवं ऋषियों के एक समुदाय का नाम। ये लोग दक्ष के यज्ञ में उपस्थित थे (म. शां. २८४.८-९)।

धूमिनी--(सो.) पूरुवंशी अजमीढ राजा की पत्नी। इसका पुत्र ऋक्ष (म. आ. ८९.२८)।

धूमोर्णा--यमराज की भार्या (म. अनु. २७१.११. कुं.)।

२. मार्कंडेय ऋषि की पत्नी (म. अनु. २४८.४.कुं.)।

धूम्र--रामसेना के गद्गद् नामक वानर का पुत्र।

२. एक ऋषि। यह इंद्र की सभा में विराजमान होता था (म. स. ७.१६*)।

३. स्कंद का सैनिक (म. श. ४४.५९)।

धूम्र पराशर--पराशर कुलोत्पन्न एक कुल।

धूम्रकेतु--(स्वा. प्रिय.) भरत तथा पंचजनी का पुत्र।

२. (सू. दिष्ट.) भागवतमत में तृणबिंदु तथा अलंबुषा का पुत्र।

धूम्रकेश--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

२. (स्वा. प्रिय.) वेनपुत्र पृथु तथा वेनकन्या अर्चि के पाँच पुत्रों में से तीसरा (भा. ४.२२.५४)। पृथु की मृत्यु के पश्चात्, उसके ज्येष्ठ पुत्र विजिताश्व ने इसे दक्षिण दिशा का स्वामित्व प्रदान किया (भा. ४.२४.२)।

३. कृशाश्व तथा दक्षकन्या अर्चि का पुत्र (भा. ६.६.२०)।

धूम्रलोचन--शुंभनिशुंभ दैत्यों का एक प्रधान। कालिका देवी ने इसका वध किया।

धूम्रा--दक्ष प्रजापति की कन्या, एवं धर्म नामक वसु की पत्नी। इसे धर एवं ध्रुव नामक दो पुत्र थे (म. आ. ६०.१८)।

धूम्राक्ष--धूम्राश्व का नामांतर।

२. रावण का प्रधान। हनुमानजी ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ५२.१; म. व. २७०.१४)।

३. (सू. दिष्ट.) भागवत मत में हेमचंद्र का पुत्र। इसे धूम्राश्व नामांतर भी प्राप्त है।

धूम्रानीक--(स्वा. प्रिय.) मेधातिथि का पुत्र।

धूम्राश्व--(सू. दिष्ट.) वैशाली के सुचंद्र राजा का पुत्र। इसे धूम्राक्ष भी कहते थे।

धूम्रित--कश्यप एवं खशा का पुत्र।

धूर्त--प्रियव्रत राजा का प्रधान (गणेश. २.३२.१४)।

२. एक प्राचीन क्षत्रिय नरेश (म. आ. १.१७८)।

धूर्तक--कौरव्यकुल में उत्पन्न एक नाग। जनमेजय के सर्पसत्र में यह जल कर मारा गया (म. आ. ५२.१२)।

धृत--(सो. द्रुह्यु.) धर्म का पुत्र। धृत वा द्युत इसीके ही पाठभेद है।

धृतक--(सो. इ.) वायुमत में रुरूक का पुत्र। वृक इसका पाठभेद है।

धृतदेवा--(सो. वृष्णि.) देवक राजा की कन्या। यह वसुदेव से ब्याही गयी थी। इसे विपृष्ठ नामक एक पुत्र था (भा. ९.२४)।

धृतधर्मन्--प्रतर्दन देवों में से एक।

धृतराष्ट्र--(सो. कुरु.) दुर्योधन, दुःशासन आदि सौ कौरवों का जन्मांध पिता, एवं महाभारत की अमर व्यक्तिरेखाओं में से एक। अशांत, शंकाकुल एवं द्विधा स्वभाव का अंध एवं अपंग पुरुष मान कर, श्रीव्यास ने 'महाभारत' में धृतराष्ट्र का चरित्रचित्रण किया है। अंध व्यक्तिओं में प्रत्यहि दिखनेवाली लाचारी, परावलंबित्व एवं प्रत्यक्षेयनेय बुद्धि के साथ, उसका संशयाकुल स्वभाव एवं झूटेपन, इन सारे स्वभावगुणों से धृतराष्ट्र का व्यक्तिमत्त्व ओतप्रोत भरा हुआ था। इस कारण, यद्यपि यह मूह से, 'पांडव एवं कौरव मेरे लिये एक सरीखे है,' ऐसा कहता था, फिर भी इसका प्रत्यक्ष आचरण कौरवों के प्रति सदा पक्षपाती ही रहता था। 'अपंगत्त्व के कारण मेरा राज्यसुख चला गया, मेरे पुत्रों का भी यही हाल न हो,' यह एक ही चिंता से यह रातदिन तड़पता था। इस कारण, वृद्ध एवं अपंग हो कर भी, इसके प्रति अनुकंपा एवं प्रेम नहीं प्रतीत होता है।

कुरुवंश का सुविख्यात राजा विचित्रवीर्य का धृतराष्ट्र 'क्षेत्रज' पुत्र था। विचित्रवीर्य राजा निपुत्रिक अवस्था में मृत हो गया। तत्पश्चात् कुरुवंश का क्षय न हो, इस हेतु से सत्यवती की आज्ञानुसार, विचित्रवीर्य की पत्नी अंबिका के गर्भ से, व्यास ने इसे उत्पन्न किया। गर्भाधान प्रसंग में व्यास का तेज सहन न हो कर, अंबिका ने आँखे मूँद ली। इसीलिये धृतराष्ट्र जन्म से अंधा पैदा हुआ (म. आ. १.९८)। हँस नामक गंधर्व के अंश से इसका जन्म हुआ था (म. आ. ६१.७-८; ९९-१००; भा. ९.२२.२५)।

धृतराष्ट्र का पालनपोषण तथा विद्याभ्यास भीष्म की खास निगरानी में हुआ (म. आ. १०२.१५-१८)। जन्मतः बुद्धिवान् होने के कारण, यह शीघ्र ही वेदशास्त्रों में निष्णात हुआ। शिक्षा पूर्ण होने के बाद, भीष्म ने सुबल राजा की कन्या गांधारी से इसका विवाह कर दिया (म. आ. १०३)। गांधारी के सिवा, इसे निम्नलिखित स्त्रियाँ थीः--सत्यव्रता, सत्यसेना, सुदेष्णा, सुसंहिता, तेजःश्रवा, सुश्रवा, निकृति, शंभुवा तथा दशार्णा (म. आ. १०४-१११३ परि. पंक्ति. ५)।

गांधारी से धृतराष्ट्र को दुर्योधनादि सौ पुत्र, तथा दुःशला नामक एक कन्या हुई (म. आ. १०७.३७)। दुःशला का विवाह सिंधुराज जयद्रथ से किया गया था (म. आ. १०८.१८)। इन अपत्यों के अतिरिक्त, इसे युयुत्सु नामक एक दासीपुत्र भी था (म. आ. १०७.३६)। कौरवों में दुर्योधन, दुःशासन, विकर्ण तथा चित्रसेन प्रमुख थे (म. आ. ९०.३२)।

धृतराष्ट्र का भाई पाण्डु शापग्रस्त होने के कारण, वानप्रस्थाश्रम में चला गया, एवं अंधा हो कर भी धृतराष्ट्र कुरु देश का राजा बना। पश्चात् पाण्डु एवं उसकी पत्नी माद्री एकसाथ मर गये, एवं पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर को यौवराज्याभिषेक किया गया (म. आ. परि. १.८०.२)। अपने पश्चात् युधिष्ठिर ही हस्तिनापुर का राजा बनेगा, एवं अपने पुत्र राज्य से वंचित होंगे, इस चिंता से धृतराष्ट्र अस्वस्थ हो गया। इतने में कणीक नामक इसके अमात्य ने पांडवविनाश की राह बतलानेवाला 'कूटनीति' का उपदेश इसे किया (म. आ. परि. १. ८१.१.१९०; कणिक देखिये)। उस उपदेश के अनुसार पांडवों के प्रति प्रेमभावना का दिखावा कर, उनके विनाश का षड्यंत्र रचने का काम इसने एवं इसके दुर्योधनादि पुत्रों ने शुरू किया।

पांडवों का नाश करने के लिये, धृतराष्ट्र ने उन्हें वारणावत नगरी में भेज दिया। उस नगरी में तयार किये 'लाक्षागृह' में, पांडवों को जला कर मार डालने का इसके पुत्र दुर्योधन का षड्यंत्र था। उसीके अनुसार, पांडवों के मृत्यु कि खबर भी इसे मिलगयी (म. आ. १३७.४), पांडवों के लिये इसने मिथ्या विलाप किया (म. आ. १३७. १०), एवं उनको 'जलांजली' भी प्रदान की (म. आ. १३७.११)।

पश्चात् पांडव जीवित है, यह देख कर भीष्म, द्रोण एवं विदूर के आग्रह के खातिर, पांडवों को आधा राज्य देना, धृतराष्ट्र ने बड़े ही कष्ट से मान्य किया (म. आ. १९९.२५)। युधिष्ठिर को इसने आधे राज्य का अभिषेक किया, एवं अपने भाइयोंसहित खाण्डवप्रस्थ में रहने के लिये उसे कह दिया (म. आ. १९९.२६)। युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ में भी यह उपस्थित था (म. स. ३१.५)।

पांडवों को आधा राज्य मिला, यह दुर्योधन को अच्छा नहीं लगा। द्यूत खेल कर, वह पांडवों से छीन लेने का विचार उसने किया। धृतराष्ट्र ने भी दुर्योधन के इस विचार को मूकसंमति दी। इसने विदूर के द्वारा, पांडवों को द्यूत के लिये आमंत्रण दिया (म. स. ५१.२०-२१) द्यूतक्रीडा में दुर्योधन ने पांडवों को जीत लिया, यह सुन कर इसे आनंद हुआ। द्रौपदीवस्त्रहरण के प्रसंग में भी, इसने दुर्योधनादि को परावृत्त नही किया (म. आ. ६१. ५१)। किंतु पश्चात् द्रौपदी ने विनंति करने पर, दास बने हुएँ पांडवों को धृतराष्ट्र ने मुक्त कर दिया (म. स. ६३. २८-३२)।

पांडवों के वनवासकाल में भी, धृतराष्ट्र पांडवों के पराक्रम की वार्ताएँ सुन कर, कभी संतप्त होता था (म. व. ४६), या कभी भयभीत होता था (म. व. ४८. १-१०)। पांडवों को फजिहत करने के हेतु से, इसने दुर्योधन के घोषयात्रा के प्रस्ताव को संमति दी (म. व. २३९.२२)। घोषयात्रा में पांडवों ने किये पराक्रम के कारण, धृतराष्ट्र चिन्ताग्रस्त हो गया, एवं सारी रात जागता बैठा। पश्चात् इसने विदुर को बुलवा कर, उससे कल्याण का मार्ग पूछ लिया (म. उ. ३३.९-११)। विदुर ने इसे पांडवों का राज्य उन्हें वापस देने के लिये कहा। किंतु विदुर की यह सलाह धृतराष्ट्र एवं दुर्योधन दोनों को ही अप्रिय सी लगी।

पांडवों का वनवासकाल समाप्त हुआ। कृष्ण ने दुर्योधन से कहा, 'राज्य का योग्य हिस्सा पांडवों को दे दो'। वह न देने पर, युद्ध करने की धमकी भी कृष्ण ने दुर्योधन को दी। उस समय धृतराष्ट्र ने संजय द्वारा युधिष्ठिर को उपदेश किया, 'अपनी तेरह वर्ष की तपश्चर्या का नाश कर के, तुम दुर्योधन के साथ युद्ध मत करो। दुर्योधन द्वारा कुछ न मिलने पर, भिक्षा माँग कर अपना निर्वाह करो'। धृतराष्ट्र के इस उपदेश से, इसकी कौरवों के प्रति पक्षपाती वृत्ति, एवं इसके स्वार्थीपन के बारे में, श्रीकृष्ण की खातरजमा हो गयी। 'कृष्णशिष्टाई' की सभा में, श्रीकृष्ण को कैद करने का दुर्योधन का विचार था। किंतु धृतराष्ट्र ने उसे इस विचार से परावृत्त किया (म. उ. १२९)। पश्चात् विश्वरूपदर्शन के लिये, इसने श्रीकृष्ण से आँखों की याचना की, एवं श्रीकृष्ण के कृपा से नेत्र पा कर, यह भगवत्स्वरूप दर्शन से कृतार्थ हुआ (म. उ. १२९.४९५*)।

बाद में अल्प ही कालावधि में भारतीय युद्ध छिड़ा। धृतराष्ट्र अंध होने के कारन, यह युद्ध में भाग न ले सका। युद्धप्रसंग प्रत्यक्ष देख भी न सका। युद्ध की घटनायें संजय के मुख से इसने सुनी। भीष्मद्रोणादि तथा इसी प्रकार अन्य कई वीर योद्धाओं के वध की वार्ता इसने सुनी। इसे प्रतीत होने लगा, 'कुरुकुल का क्षय होनेवाला है, कृष्ण की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध होनेवाली है'।

धृतराष्ट्र दुर्योधन को कहने लगा, 'युद्ध से परावृत्त हो कर पांडवों का उचित अंश उन्हें दे दो'। परंतु अब बहुत देर हो चुकी थी। दुर्योधन ने पूरी जिद ठान ली थी। धृतराष्ट्र के उपदेश का कुछ लाभ नहीं हुआ। बाद में भारतीय युद्ध में इसके दुर्योधनादि सौ पुत्र तथा काफी

रथीमहारथी मृत हो गये। कौरवसेना में केवल अश्वत्थामा, कृपाचार्य तथा कृतवर्मा ये ही बड़े योद्धा बचे।

यह सुन कर धृतराष्ट्र, पुत्रशोक से विव्हल हो गया। पांडवों पर यह अत्यंत क्रोधित हुआ, तथा भीम से बदला चुकाने के लिये, इसने उसे कपट से आलिंगन के लिये बुलाया। परंतु इसका कपट कृष्ण ने पहचान लिया। उसने भीम के बदले, एक लोहे की मूर्ति धृतराष्ट्र के सामने रखी। उस मूर्ति को क्रोध से आलिंगन दे कर, धृतराष्ट्र ने उसे चूरचूर कर दिया। अपनी फज़ीहत देख कर, यह अत्यंत लज्जित हुआ। बाद में लोकलज्जास्तव यह पांडवों से प्रेमपूर्ण व्यवहार करने लगा (म. स्त्री. ११)।

युधिष्ठिर हस्तिनापुर का राज्य करने लगा। उस समय धृतराष्ट्र काफी दिनों तक वहीं रहा। उस समय युधिष्ठिर को इसने राजनीति का उपदेश किया (म. आश्व. ९–१२)। युधिष्ठिर भी धृतराष्ट्र के साथ बडे आदर से व्यवहार करता था। किंतु भीम के मर्मभेदिनी बातों से व्यथित हो कर धृतराष्ट्र ने वन में जाने का निश्चय किया। अपने वनगमन के समय, गांधारी, कुन्ती तथा विदुर आदि को यह साथ ले गया था। वनभ्रमण में व्यास से इसकी मुलाकात हुई। उस समय धृतराष्ट्र की प्रार्थनानुसार, व्यास ने इसके सारे मृत बांधवों का दर्शन इसे करवाया।

बाद में धृतराष्ट्र ने उग्र तप प्रारंभ किया। तप करते समय दावाग्नि में घिर कर इसकी मृत्यु हो गई (म. आश्र. ४५. ३४; भा. १. १३. ५६)। मृत्यु के पश्चात्, यह कुबेरलोक गया (म. आश्र. २७. ११)।

धृतराष्ट्र की मृत्यु के समय, उसके औरसपुत्रों में से एक भी जीवित न था। अतः इसके बाद पांडवकुल प्रारंभ हुआ।

स्वभाव—धृतराष्ट्र स्वभाव से बड़ा ही सीधा तथा गुणों का पक्षपाती था। इसके मन में कृष्ण, विदुर आदि के लिये बडा आदर था। किंकर्तव्यमूढ अवस्था में यह विदुर से सलाह प्राप्त करता था। एक दिन, पांडवों के साथ युद्ध टालने के विषय में बातचीत चल रही थी। इतने में पांडवों से बातचीत कर संजय वापस लौटा। दूसरे दिन राजसभा में वह पांडवों का मनोगत करनेवाला था। धृतराष्ट्र को इस बात का पता लगने पर, यह रात भर सुख की नींद न सो सका। इसने विदुर को आमंत्रित कर उससे सलाह पूँछी। विदुर ने उचित राजनीति बताकर, युद्ध टालने का उपदेश किया। यह कथाभाग उद्योग पर्वस्थित 'विदुर नीति' में काफी विस्तार के साथ दिया गया है। पूरी रात जाग कर, यह विदुर की सलाह लेता रहा। उस कारण, महाभारत के इस पर्व का नाम 'प्रजागर पर्व' रखा गया है।

शूद्र होने के कारण, विदुर को ब्रह्मज्ञान-कथन का अधिकार नहीं था। अतः उसने सनत्सुजात ऋषि के द्वारा, धृतराष्ट्र को तत्त्वज्ञान की बाते सुनवायी। अन्त में धृतराष्ट्र ने कहा, 'यह सब सत्य है, न्याय्य है, उचित है, किन्तु दुर्योधन की उपस्थिति में, मैं अपने मन को सम्हाल नहीं सकता (म. उ. ४०.२८–३०)।

धृतराष्ट्र के पुत्र—धृतराष्ट्र को गांधारी से कुल सौ पुत्र हुएँ। उन्हे 'कुरुवंश के' इस अर्थ से 'कौरव' कहते थे। उन सौ कौरवों की नामावलि महाभारत में ही अलग अलग ढंग से दी गयी है। उनमें से तीन नामावलियाँ अकारादि क्रम से नीचे दी गयीं हैं। इनमें प्रारंभ में दिया क्रमांक 'पुत्रक्रम' का है:—

नामावलि क्र. १:—९०. अनाधृष्य, ७६. अनुयायिन्, १३. अनुविंद, ५७. अनूदर, ६५. अपराजित, ८७. अभय, ४२. अयोबाहु, ८६. अलोलुप, ७३. आदित्यकेतु, ८२. उग्र, ६२. उग्रश्रवस्, ६३. उग्रसेन, ५० उग्रायुध, २२. उपचित्र, ३३. उपनंदक, ३०. ऊर्णनाभ, ९७. कनकध्वज, ५२. कनकायु, २०. कर्ण, ७७. कवचिन्, ९८. कुंडाशी, ९१. कुंडभेदिन्, ३६. कुंडोदर, ६४. क्षेममूर्ति, २४. चारूचित्रांगद, २१. चित्र, ९९. चित्रक, ४४. चित्रचाप, ३८. चित्रबाहु, ३९. चित्रवर्मन्, २३. चित्राक्ष, ५८. जरासंध, ९ जलसंध, ८०. दंडधार, ७९. दंडिन्पाशी, ९४. दीर्घबाहु, ९३. दीर्घलोचन, ६७. दुराधर, १४. दुर्धर्ष, १८. दुर्मख, २५. दुर्मद, १७. दुर्मर्षण, ६. दुर्मुख, १. दुर्योधन, ४१. दुर्विमोचन, ५. दुःशल, ३. दुःशासन, १९. दुष्कर्ण, १६. दुष्प्रधर्षण, २६. दुष्प्रहर्ष, ४. दुःसह, ५५. दृढक्षत्र, ८४. दृढरथ, ५४. दृढवर्मन्, ५९. दृढसंध, ६९. दृढहस्त, ५३. दृढायुध, ८१. धनुर्ग्रह, ३२. नंद, ७५. नागदन्त; ७८. निषंगिन्, ६६. पंडितक, ३१. सुनाभ, ७. अपर, ४८. बलाकिन्, ७४. बह्वाशी, ४७. भीमबल, ८३. भीमरथ, ४९. भीमविक्रम (बलवर्धन), ४६. भीमवेग, ५१. भीमशर, ९५. महाबाहु, ४३. महाबाहु, ३७. महोदर, २. युयुत्सु, ८८. रौद्रकर्मन्, ७१. वातवेग, २८. विकट, ९. विकर्ण, १२. विंद, ९२. विराविन्, २७. विवित्सु, ८. विविंशति, ६७. विशालाक्ष,

८४. वीर, ८५. वीरबाहु, ९६. व्यूढोरू, ६०. सत्यसंध, २९. सम, ६१. सहस्रवाक, ४५. सुकुंडल, १५. सुबाहु, ११. सुलोचन, ७२. सुवर्चस्, ४०. सुवर्मन्, ३५. सुषेण, ७०. सुहस्त, ३४. सेनापति, ५६. सोमकीर्ति, १००. दुःशला, (कन्या) तथा, १०१. युयुत्सु (वैश्यापुत्र) (म. आ. ६८. परि. १ क्र. ४१.)।

नामावलि क्र. २:— ७८. अग्रयायिन्, ९१. अनाधृष्य, १०. अनुविंद, ५७. अनूदर, ६७. अपराजित, ८८. अभय, ४०. अयोबाहु, ८७. अलोलुप, ७५. आदित्यकेतु, ८४. उग्र, ६३. उग्रश्रवस्, ६४. उग्रसेन (अश्वउग्रसेन), ४७. उग्रायुध, २४. उपचित्र, ३५. उपनंदक, ३२. ऊर्णनाभ, १००. कनकध्वज, १७. कर्ण, ७९. कवचिन्, ४९, ८२. कुंडधार, ९२. कुंडभेदिन्, ६८. कुंडशायिन्, १०१. कुंडाशिन्, ८१. कुंडिन्, ८०. क्रथन, २६. चारुचित्र, २३. चित्र, ४२, ९४. चित्रकुंडल, ३६. चित्रबाण, ३७. चित्रवर्मन्, २५. चित्राक्ष, ४१. चित्रांग, ५० चित्रायुध, ५९. जरासंध, ६. जलसंध, ९८. दीर्घबाहु, ९७. दीर्घरोमन, ७०. दुराधर, ११. दुर्धर्ष, २८. दुर्मद, १४. दूर्मर्षण, १५. दुर्मुख, १. दुर्योधन, २९. दुर्विगाह, ३९. दुर्विमोचन, ५. दुःशल, ३. दुःशासन, ४. दुःसह, १६. दुष्कर्ण, ६६. दुष्पराजय, १३. दुष्प्रधर्षण, ५५. दृढक्षत्र, ९०. दृढरथाश्रय, ५४. दृढवर्मन्, ५८. दृढसंध, ७१. दृढहस्त, ८३. धनुर्धर, ३४. नंद, ७७. नागदत्त, ५१. निषंगिन्, ५२. पाशिन्, ९५. प्रमथ, ९६. प्रमाथिन्, ४६. बलवर्धन, ४५. बलाकिन्, ७६. बह्वाशी, ४४. भीमबल, ८५. भीमरथ, ४३. भीमवेग, २. युयुत्सु, ८९. रौद्रकर्मन्, ७३. वातवेग, १३. विकटानन, १९. विकर्ण, ९. विंद, १०२. विरजस्, ९३. विराविन्, २०. विवित्सु, १८. विविंशति, ६९. विशालाक्ष, ८६. वीरबाहु, ५३. वृंदारक, ९६. व्यूढोरस्, ९७. शरासन, २०. शल (शरसंध), ६०. सत्यसंध, २१. सत्व, ६१. सद, ७. सम, ८. सह, ३३. सुनाथ, १२. सुबाहु, २२. सुलोचन, ७४. सुवर्चस्, ३८. सुवर्मन्, ६२. सुवाक, ४८. सुषेण, ७२. सुहस्त, ६५. सेनानी, ५६. सोमकीर्ति, एवं १०३. दुःशला (कन्या) (म. आ. १०७.२–१४)।

नामावलि क्र. ३—अनाधृष्टि, अयोभुज, अलंबु, उपनंद, करकायु, कुंडक, कुंडभेदिन्, कुंडलिन्, क्राथ, खड्गिन्, चित्रदर्शन, चित्रसेन, चित्रोपचित्र, जयसेन, जैत्र, तुहुंड, दीप्तलोचन, दीर्घनेत्र, दुर्जय, दुर्धर, दुर्धर्षण, दुर्विषह, दुष्प्रधर्ष, दृढ, नंदक, पंडित, बाहुशालिन्, भीम, भीमवेगरव, भूरिबल, मकरध्वज, रवि, वायुवेग, विराज, विरोचन, शत्रुंजय, शत्रुसह, श्रुतधर्मन्, श्रुतायु, श्रुतांत, संजय, सुचारू, सुचित्र, सुजात, सुदर्शन, सुलोचन।

इनका उल्लेख द्रौपदी स्वयंवर, घोषयात्रा, उत्तरगोग्रहण भारतीय युद्ध आदि प्रसंग में आया है (म. आ. १७७, भी. ६०, ७३, ७५, ८४; द्रो. १३१; १३२; वि. ३३; क. ६२; श. २५)।

उपरिनिर्दिष्ट नामावलियों में कुछ नाम बार बार आये हैं। कई जगह समानार्थक दूसरे शब्द का उपयोग किया गया है। इन नामावलि में प्राप्त पुत्रों की कुल संख्या भी सौ से अधिक है। किंतु उन में से सही नाम कौन से है, इसका निर्णय करने का कुछ भी साधन प्राप्त नहीं है।

२. नागकुल का एक नाग। यह वासुकि का पुत्र था।

अर्जुन के अश्वमेध-यज्ञ के समय, अर्जुन एवं उसका पुत्र बभ्रुवाहन में युद्ध संपन्न हुआ। उस युद्ध में, अर्जुन का सिर बभ्रुवाहन ने तोड़ दिया। फिर अर्जुन को पुनः जीवित करने के लिये, 'मृतसंजीवक' नामक मणि की खोज, बभ्रुवाहन ने शुरू की। वह मणि शेष नाग के पास था, एवं उसके रक्षण का काम धृतराष्ट्र नाग पर सौंपा गया था। उसने बभ्रुवाहन को वह मणि देने से इन्कार कर दिया।

पश्चात् धृतराष्ट्र एवं बभ्रुवाहन का युद्ध हो कर, बभ्रुवाहन ने वह मणि छीन लिया। उस मणि के कारण, अर्जुन पुनः जीवित हो जावेगा, यह धृतराष्ट्र को अच्छा न लगा। इसने अपने पुत्रों के द्वारा अर्जुन का सिर चुरा लिया, एवं उसे बक दाल्भ्य के आश्रम में फेंक दिया (जै. अ. ३९)।

३. कश्यप एवं कद्रू से उत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.१३)। यह वरुण की सभा में रह कर, उसकी उपासना करता था (म. स. ९.९)। नागों द्वारा पृथ्वी के दोहन के समय, यह दोग्धा बनाया गया था (म. द्रो. परि. १.८.८०६)। इसे शिवजी के रथ के 'ईषादण्ड' में स्थान दिया गया था (म. क. २४.७२)। बलराम के शरीरत्याग के समय, उस 'भगवान् अनंतनाग' के स्वागत के लिये, यह प्रभासक्षेत्र के समुद्र में उपस्थित हुआ था (म. मौ. ५.१४)।

४. एक देवगंधर्व। यह कश्यप एवं मुनि का पुत्र था (म. आ. ५९.४१)। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४४)। देवराज इन्द्र ने इसे दूत के नाते मरुत्त के पास भेजा था (म. आश्व. १०.२–८)।

यही देवगंधर्व भूतल पर धृतराष्ट्र राजा के रूप में उत्पन्न हुआ था (म. स्व. ४.१२)।

५. जनमेजय पारिक्षित (प्रथम) राजा का पुत्र, एवं भरतवंशी पूरु राजा का पौत्र (म. आ. ८९.४९)। जनमेजय के पश्चात् यह राजगद्दी पर बैठा। ये कुल आठ भाई थे। उनके नामः— पांडु, बाह्लीक, निषध, जांबूनद, कुंडोदर, पदाति, एवं वसाति। इसे 'कुण्डिक' आदि पुत्र थे (म. आ. ८९.४९-५०)। उनके नामः— कुण्डिक, हस्तिन्, वितर्क, क्राथ, कुण्डल, हविःश्रवस्, इंद्राभ, सुमन्यु, अपराजित।

६. कश्यप एवं दनु का पुत्र।

७. पार्थुश्रवस का नामांतर (जै. उ. ब्रा. ४. २६. १५; पार्थश्रवस देखिये)।

धृतराष्ट्र ऐरावत—एक सर्पदैत्य। धृतराष्ट्र इसका नाम हो कर, ऐरावत (इरावत् का वंशज) इसका पैतृक नाम था (अथर्व. ८. १०. २९; पं. ब्रा. २५. १५. ३)। सर्पसत्र में यह 'ब्रह्मा' था।

धृतराष्ट्र पांचाल—एक राजा। बक दाल्भ्य ऋषि ने इसका गर्वहरण किया था (बक दाल्भ्य देखिये)।

धृतराष्ट्र पार्थुश्रवस—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ४. २६. १५)।

धृतराष्ट्र वैचित्रवीर्य—काशी का राजा (श. ब्रा. १३. ५. ४. २२)। इसने किये अश्वमेध यज्ञ के दिग्विजय के समय, शतानीक सत्राजित ने इसका पराजय किया, एवं इसके अश्वमेध का घोडा चुरा लिया। शतानीक सत्राजित पांचाल देश का राजा था (क. सं. १०. ६; श. ब्रा. १३. ५. ४. १८-२३)। उससे ज्ञात होत है कि, धृतराष्ट्र वैचित्रवीर्य का राज्य कुरुपांचाल से कुछ अलग, एवं उससे कही दूर बसा हुआ था।

'वैचित्रवीर्य' यह इसका पैतृक नाम था। उसका अर्थ 'विचित्रवीर्य का वंशज' ऐसा प्रतीत होता है।

बक दाल्भ्य नामक पांचाल देश में रहनेवाले ऋषि से इसका संवाद हुआ था (क. सं. १०.६)।

धृतराष्ट्रिका—धृतराष्ट्री देखिये।

धृतराष्ट्री—ताम्रा की कन्या, एवं गरुड की पत्नी। इसने सभी प्रकारों के हंस, कलहंस, तथा चक्रवाकों को जन्म दिया था (म. आ. ६०.५६)।

धृतवर्मन—त्रिगर्तराज सूर्यवर्मन् एवं केतुवर्मन् का भाई (म. आश्व. ७४. २२)। कौरवों के पक्ष का यह अत्यंत पराक्रमी महारथि था।

पांडवों के अश्वमेध यज्ञ के समय, अर्जुन ने त्रिगर्त देश पर हमला किया। तत्पश्चात् संपन्न हुए युद्ध में, त्रिगर्त देश का राजा सूर्यवर्मा पराजित हुआ, एवं उसका भाई केतुवर्मा मारा गया। उस अवसर पर, सूर्यवर्मा एवं केतुवर्मा का भाई धृतवर्मा, अर्जुन के साथ युद्ध करने के लिये स्वयं आगे बढा। इसने अर्जुन पर बाणों की वर्षा की। इसके तेजस्वी बाण से अर्जुन के हाथ में गहरी चोट लगी, एवं गाण्डीव धनुष उसके हाथ से गिर गया। पश्चात् रोष से भरे हुए अर्जुन ने धृतवर्मा पर बाणों की वर्षा की। धृतवर्मा को बचाने के लिये त्रिगर्त योद्धाओं ने अर्जुन पर एकसाथ हमला किया। किंतु अर्जुन ने अठारह त्रैगर्त वीरों को मार कर, युद्ध में विजय संपादन किया। पश्चात् धृतवर्मा आदि सारे त्रिगर्त, दास बन कर अर्जुन की शरण में आये (म. आश्व. ७३.१६-२८)।

धृतव्रत—स्वायंभुव मन्वन्तर के अथर्वण ऋषि का चित्ति नामक भार्या से उत्पन्न पुत्र।

२. चक्षुर्मनु का नड्वला से उत्पन्न पुत्र।

३. (सो. अनु.) धृति राजा का पुत्र। इसका पुत्र सुकर्मा।

४. अंगिरा ऋषि के पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामुहिक नाम (म. आ. ६०.५)।

धृतसेन—दुर्योधन के पक्ष का एक राजा (म. श. ४.३)।

धृति—दक्ष प्रजापति की कन्या, एवं धर्म की पत्नी (म. आ. ६०.१४; धर्म देखिये)। नकुल तथा सहदेव की माता माद्री इसीका अवतार मानी जाती है (म. आ. ६१.९८)।

२. सावर्णि मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

३. (सो. अनु.) भागवत तथा विष्णुमत में विजय का पुत्र।

४. (सू. निमि.) विदेह देश का राजा। यह वीतहव्य जनक का पुत्र था। कुरुपौरव राजा विचित्रवीर्य एवं कृष्ण द्वैपायन व्यास ये दोनों इसके समकालीन थे। इसका पुत्र बहुलाश्व।

५. (सो. कुकुर.) वायुमत में आहुक का पुत्र।

६. ब्रह्मधाना का पुत्र।

७. सृष्टि तथा छाया का पुत्र।

८. सुतप देवों में से एक।

९. सुधामन् देवों में से एक।

१०. (सो. कुकुर.) मत्स्यमत में वृष्णि का, तथा पद्म-मत में वृष्टि का पुत्र (पद्म. सृ. १३)।

११. (सो. वसु.) सारण राजा का पुत्र, एवं कृष्ण तथा रोहिणी का पौत्र। सारण को सत्य एवं धृति नामक दो पुत्र थे। इसके नाम का 'सत्यधृति' पाठभेद भी प्राप्त है (विष्णु. ४.१५.४)।

१२. (सो. क्रोष्टु.) विष्णुमत में रोमपादपुत्र बभ्रु का पुत्र (ज्ञाति देखिये)।

१३. (सू. निमि.) महाधृति का नामांतर।

१४. कुशद्वीप का राजा एवं ज्योतिष्मत् का पुत्र। इसका देश इसीके नाम से प्रसिद्ध था (विष्णु. २.४)।

१५. मनु नामक रुद्र की पत्नी।

१६. एक सनातन विश्वेदेव।

धृतिमत्--रैवत मनु का पुत्र।

२. सुदरिद्र ब्राह्मण का पुत्र (पितृवर्तिन् देखिये)।

३. (सो. पुरूरवस्.) मत्स्य तथा पद्ममत में पुरूरवा को उर्वशी से उत्पन्न पुत्रों में से एक (पद्म. सृ. १२)।

४. (सो. द्विमीढ.) द्विमीढ राजवंश के यवीनर राजा का पुत्र। भागवत में इसे 'कृतिमत्' कहा गया है।

५. (सू. निमि.) एक राजा। वायुमत में यह महावीर्य जनक का पुत्र था। सत्यधृति एवं सुधृति इसीके नामांतर है।

धृतिमत् अंगिरस्-एक अग्नि। यह भानु का पुत्र था, एवं इसका गोत्र अंगिरस था (म. व. २११.१२)। इसके लिये दर्श तथा पौर्णमास याग में 'हविष्य' समर्पण किया जाता है। विष्णु इसीका नामांतर है।

धृष्ट--वैवस्वत मनु के नौ पुत्रों में से एक (भा. ८. १.१२)। हरिवंश, लिंग, एवं शिवपुराणों में इसे धृष्णु कहा गया है (ह. वं. १.१०.१)। महाभारत (भांडारकर इन्स्टिटयूट संहिता) में भी 'धृष्णु' पाठ प्राप्त है (म. आ. ७०.१३)।

इसे धृष्टकेतु, स्वधर्मन् एवं रणधृष्ट नामक तीन पुत्र थे (मत्स्य. १२.२०-२१; पद्म. सृ. ८; लिंग. १.६६.४६)। उन पुत्रों से 'धृष्टक' नामक मानवज्ञातियाँ निर्माण हुई। 'धृष्टक' ज्ञाति के लोग क्षत्रिय थे, एवं बाह्लीक देश (आधुनिक पंजाब प्रांत में स्थित वाल्हीक प्रदेश) में रहते थे (पार्गि. मार्क. पृ. ३११; शिव. ७.६०.२०; वायु. ८८. ४-५; ब्रह्म. ७.२५; विष्णु. ४.२.२)। धृष्टक लोग पहले क्षत्रिय थे, किंतु तपःसामर्थ्य से ब्राह्मण बन गये, ऐसा भी निर्देश प्राप्त है (मा. ९.२.१७)। गरुड पुराण के मत में वे वैश्य बन गये (गरुड. १.१३८.१५)। धृष्टक लोगों के लिये 'धार्ष्टक' नामांतर भी प्राप्त है।

२. हिरण्यकशिपु की सभा का एक दैत्य (भा. ७.२. १८)।

३. (सो. सह.) मत्स्यमत में सहस्रार्जुन का पुत्र।

४. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा। वायु तथा मत्स्य मत में यह कुंति राजा का पुत्र था। धृष्टि तथा वृष्णि इसी के नामांतर हैं।

५. (सो. कुकुर.) विष्णुमत में कुकर राजा का पुत्र। इसे वह्नि, वृष्टि तथा वृष्णि भी कहा गया है।

धृष्टकेतु--(सो. चक्ष.) चेदिराज शिशुपाल का पुत्र, एवं एक पराक्रमी पांडवपक्षीय राजा। हिरण्यकशिपु का पुत्र अनुह्लाद के अंश से यह उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१. ७)। यह एवं इसके पुत्र अत्यंत शूर थे (म. उ. १६८. ८)। इसके साथ रण में युद्ध करने की किसी की हिम्मत न होती थी (म. उ. ७८. १४)।

भीम के द्वारा शिशुपाल का वध होने पर, धृष्टकेतु को चेदि देश के राजसिंहासन पर अभिषिक्त किया गया (म. स. ४२. ३१)। यह पहले से ही पांडवों का पक्षपाती एवं मित्र था। पांडवों के वनवास में, यह उन्हें मिलने के लिये गया था (म. व. १३. २)।

भारतीय युद्ध शुरू होते ही, पांडवों की ओर से धृष्टकेतु को रणनिमंत्रण दिया गया (म. उ. ४. ८)। एक अक्षौहिणी सेना के साथ, यह पांडवों के पक्ष में शामिल हुआ (म. उ. १९. ७)। इसके पास कांबोज देश के सफेद-काले रंग के अत्युत्कृष्ट अश्व थे। वे भी इसने युद्ध के लिये लाये थे (म. द्रो. २२. १६)।

पांडवों के सात सेनापतियों में से एक के पद पर, इसे नियुक्त किया गया था (म. उ. १५४. १०-११)। अर्जुन के रथ का चक्ररक्षण का काम इस पर सौंपा गया था। वह कार्य भी इसने उत्कृष्ट तरह से निभाया (म. भी. १९. १८)।

भारतीय युद्ध में, इसने निम्नलिखित प्रतिपक्षीय वीरों से युद्ध कर के पराक्रम दिखाया था:--(१) बाह्लीक (म. भी. ४३. ३५-३६); (२) भूरिश्रवा (म. भी. ३८०. ३५-३७); (३) पौरव (म. भी. ११२. १३-२४); (४) कृपाचार्य (म. द्रो. १३. ३१-३२); (५) अंबष्ठ (म. द्रो. २४. ४७-४८); (६) वीरधन्वन् (म. द्रो. ८१. ९-१०)।

एक बार यह तथा केकय देश का राजा बृहत्क्षत्र द्रोणाचार्य पर आक्रमण कर रहे थे। उस वक्त, त्रिगर्तराज वीरधन्वन् ने इन्हे रोकने की कोशिश की। फिर धृष्टकेतु एवं वीरधन्वन् इन वीरों में भयंकर युद्ध हुआ। वीरधन्वन् ने एक बाण छोड़ कर, इसका धनुष तोड़ दिया। फिर अपना टूटा हुआ धनुष फेंक, इसने सुवर्ण की मूठवाली एक महावीर्यशाली फौलादी शक्ति दोनों हाथों में पकड ली, एवं बराबर लक्ष्य वेध कर वह वीरधन्वन् के रथ पर फेंक दी। उस शक्ति के भयंकर प्रहार से वीरधन्वन् का सीना विदीर्ण हो गया, एवं वह तत्काल मृत हो गया (म. द्रो. ८२. ९–१७)।

पश्चात् द्रोण से लड़ते-लड़ते, इसका मित्र केकयराज बृहत्क्षत्र मृत हो गया। फिर इसने अपने सारथी को अपना रथ द्रोण के रथ की ओर बढ़ाने को कहा। पतंग जिस प्रकार अग्नि ज्योति पर झपटता है, उस प्रकार इसने द्रोण पर आक्रमण किया। किंतु इसके सीने पर एक तीक्ष्ण बाण मार कर द्रोण ने इसका वध किया (म. द्रो. १०१.२२–३८)।

मृत्यु के पश्चात्, यह स्वर्गलोक में जा कर विश्वेदेवों में विलीन हो गया (म. स्व. ५.१३–१५)। व्यासजी ने आवाहन करने पर, परलोकवासी कौरवपांडव वीरों के साथ, यह भी गंगाजल से प्रगट हुआ था (म. आश्र. ४०.११)।

इसे करेणुमती नामक एक बहन, एवं रेणुमती नामक एक कन्या थी। उनमें से रेणुमती नकुल से ब्याहीं गयी थी (म. आ. ९०.८६)। वीतहोत्र नामक एक पुत्र भी इसे था (गरुड. १.१३९)।

२. (सू. निमि.) विष्णुमत में सत्यधृति का पुत्र। भागवत तथा वायुमत में यह सुधृति का पुत्र था।

३. (सो. काश्य.) भागवतमत में सत्यकेतु का एवं विष्णु तथा वायुमत में सुकुमार का पुत्र (गरुड. १.१३९)।

४. (सो. अज.) भागवत, विष्णु तथा वायुमत में धृष्टद्युम्न का पुत्र। यह भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में था। द्रोण ने इसका वध किया। इसकी मृत्यु से पांचाल वंश समाप्त हुआ (म. द्रो. १३०.१२)।

५. केकय देश का राजा। इसकी स्त्री श्रुतकीर्ति। इसे संतर्दन (विष्णु. ४.१४; भा. ९.२४.३८), चेकितान, बृहत्क्षत्र, विंद तथा अनुविंद (वायु. ९६.१५६) नामक पाँच पुत्र थे।

६. (सू.) एक राजा। वायु, मत्स्य तथा पद्ममत में यह धृष्ट का पुत्र, एवं वैवस्वत मनु का पौत्र था (पद्म. सृ. ८)।

७. नृग का पुत्र (लिंग. १.६६.४६)।

धृष्टद्युम्न—(सो. अज) पांचालराज द्रुपद का अग्नितुल्य तेजस्वी पुत्र। यह पृषत् अथवा जंतु राजा का नाती, एवं द्रुपद राजा का पुत्र था। द्रोणाचार्य का विनाश करने के लिये, प्रज्वलित अग्निकुंड से इसका प्रादुर्भाव हुआ था। फिर उसी वेदी में से द्रौपदी प्रकट हुई थी। अतः इन दोनों को 'अयोनिसंभव,' एवं इसे द्रौपदी का 'अग्रज बंधु' कहा जाता है (म. आ. ५७.९१)। अग्नि के अंश से इसका जन्म हुआ था (म. आ. ६१.८७)। इसे 'याज्ञसेनि', अथवा 'यज्ञसेनसुत' भी कहते थे।

द्रोण से बदला लेने के लिये, द्रुपद ने याज एवं उपयाज नामक मुनियों के द्वारा एक यज्ञ करवाया। उस यज्ञ के 'हविष्य' सिद्ध होते ही, याज ने द्रुपद की रानी सौत्रामणी को, उसका ग्रहण करने के लिये बुलाया। महारानी के आने में जरा देर हुई। फिर याज ने क्रोध से कहा, 'रानी! इस हविष्य को याज ने तयार किया है, एवं उपयाज ने उसका संस्कार किया है। इस कारण इससे संतान की उत्पत्ति अनिवार्य है। तुम इसे लेने आवो, या न आओ'। इतना कह कर, याज ने उस हविष्य की अग्नि में आहुति दी। फिर उस प्रज्वलित अग्नि से, यह एक तेजस्वी वीरपुरुष के रूप में प्रकट हुआ (म. आ. १५५. ३७–४०)। इसके अंगों की कांति अग्निज्वाला के समान तेजस्वी थी। इसके मस्तक पर किरीट, अंगों में उत्तम कवच, एवं हाथों में खड्ग, बाण एवं धनुष थे।

अग्नि से बाहर आते ही, यह गर्जना करता हुआ एक रथ पर जा चढ़ा, मानो कहीं युद्ध के लिये जा रहा हो (म. आ. १५५.४०)। उसी समय, आकाशवाणी हुई, 'यह कुमार पांचालों का दुःख दूर करेगा। द्रोणवध के लिये इसका अवतार हुआ है (म. आ. १५५.४४)'। यह आकाशवाणी सुन कर, उपस्थित पांचालों को बड़ी प्रसन्नता हुई। वे 'साधु, साधु' कह कर, इसे शाबाशी देने लगे।

द्रौपदी स्वयंवर के समय, 'मत्स्यवेध' के प्रण की घोषणा द्रुपद ने धृष्टद्युम्न के द्वारा ही करवायी थी (म. आ. १७६–१७९)। स्वयंवर के लिये, पांडव ब्राह्मणों के वेश में आये थे। अर्जुन द्वारा द्रौपदी जीति जाने पर, 'एक ब्राह्मण ने क्षत्रियकन्या को जीत लिया', यह बात सारे राजमंडल में फैल गयी। सारा क्षत्रिय राजमंडल क्रुद्ध हो

गया। बात युद्ध तक आ गयी। फिर इसने गुप्तरूप से पांडवों के व्यवहार का निरीक्षण किया (म. आ. १७९), एवं सारे राजाओं को विश्वास दिलाया 'ब्राह्मणरूपधारी व्यक्तियाँ पांडव राजपुत्र ही है' (म. आ. १८४)।

धृष्टद्युम्न अत्यंत पराक्रमी था। इसे द्रोणाचार्य ने धनुर्विद्या सिखाई। भारतीय युद्ध में यह पांडवपक्ष में था। प्रथम यह पांडवों की सेना में एक अतिरथी था। इसकी युद्धचपलता देख कर, युधिष्ठिर ने इसे कृष्ण की सलाह से सेनापति बना दिया (म. उ. १४९.५४१)।

युद्धप्रसंग में धृष्टद्युम्न ने बडे ही कौशल्य से अपना उत्तरदायित्व सम्हाला था। द्रोण सेनापति था, तब भीम ने अश्वत्थामा नामक हाथी को मार कर, किंवदंती फैला दी कि, 'अश्वत्थामा मृत हो गया'। तब पुत्रवध की वार्ता सत्य मान कर, उद्विग्न मन से द्रोणाचार्य ने शस्त्रसंन्यास किया। तब अच्छा अवसर पा कर, धृष्टद्युम्न ने द्रोण का शिरच्छेद किया (म. द्रो. १६४; १६५.४७)।

धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य की असहाय स्थिति में उसका वध किया। यह देख कर सात्यकि ने धृष्टद्युम्न की बहुत भर्त्सना की। तब दोनों में युद्ध छिड़ने की स्थिति आ गयी। परंतु कृष्ण ने वह प्रसंग टाल दिया।

आगे चल कर, युद्ध की अठारहवे दिन, द्रोणपुत्र अश्वत्थामन् ने अपने पिता के वध का बदला लेने के लिये, कौरवसेना का सैनापत्य स्वीकार किया। उसी रात को, त्वेष एवं क्रोध के कारण पागलसा हो कर, वह पांडवों के शिबिर में सर्वसंहार के हेतु घुस गया। सर्वप्रथम अपने पिता के खूनी धृष्टद्युम्न के निवास में वह गया। उस समय यह सो रहा था। अश्वत्थामन् ने इसे लत्ताप्रकार कर के जागृत किया। फिर धृष्टद्युम्न शस्त्रप्रहार से मृत्यु स्वीकारने के लिये तयार हुआ। किंतु अश्वत्थामन् ने कहा, 'मेरे पिता को निःशस्त्र अवस्था में तुमने मारा हैं। इसलिये शस्त्र से मरने के लायक तुम नहीं हो'।

पश्चात् अश्वत्थामन् ने इसे लाथ एवं मुक्के से कुचल कर, इसका वध किया (म. सौ. ८.२६)। बाद में उसने पांडवकुल का ही पूरा संहार किया। केवल पांडव ही उसमें से बच गये (म. सौ. ८.१७-२४)। यह घटना पौष वद्य अमावस को हुई (भारतसावित्री)।

धृष्टद्युम्न के कुल पाँच पुत्र थे। उनके नामः—क्षत्रंजय, क्षत्रवर्मन्, क्षत्रधर्मन्, क्षत्रदेव, एवं धृष्टकेतु। ये सारे धृष्टद्युम्नपुत्र द्रोण के हाथों मारे गये (म. द्रो. १०१. ६२; १३०.१२), एवं द्रुपद के पांचाल राजकुल का निर्वंश हो गया (म. द्रो. १५६; धृष्टकेतु देखिये)।

धृष्टबुद्धि—भद्रावती का वैश्य। वैशाख शुक्ल एकादशी का व्रत आचरने के कारण, यह मुक्त हुआ (पद्म. उ. ४९)।

धृष्टसुत—(सो. क्रोष्टु.) धृष्ट का नामांतर। वायुमत में यह कुति राजा का पुत्र था। धृष्ट राजा के लिये 'धृष्टसुत' यह पाठ गलत मालूम पडता है। संभवतः धृष्ट नामक सुत' की जगह धृष्ट का पुत्र ('धृष्टसुत') असावधानी से लिखा गया होगा (धृष्ट ४. देखिये)।

धृष्टि—दशरथ का प्रधान (वा. रा. अयो. ७)।

२. (सो. क्रोष्टु.) भागवत मत में कुंति राजा का पुत्र। इसका पुत्र विदूरथ था (धृष्ट ४. देखिये)।

धृष्णि—अंगिरस एवं पथ्या का पुत्र। इसका पुत्र सुधन्वा (ब्रह्मांड. ३. १)।

धृष्णु—एक कवि। यह वारुणि कवि के पुत्रों में से एक था। यह ब्रह्मज्ञानी एवं शुभलक्षणी था (म.अ. ८५.११३)।

२. यादव राजा धृष्ट का नामांतर (धृष्ट ४. देखिये)।

३. वैवस्वत मनु का द्वितीय पुत्र (म. आ. ६९. १८; ह. वं. १. १०. १; २९)। 'धार्ष्टक' नामक क्षत्रिय वंश इसीसे उत्पन्न हुआ।

धेना—बृहस्पति की पत्नी।

धेनुक—एक असुर। यह तालवन में निवास करता था, एवं गधे का रूप धारण कर रहता था। जो लोग वन में फल लेने आते थे, उन्हें यह मार डालता था। एक समय कई ग्वालबाल अपनी गायें चराते हुएँ तालवन के पास गये। फलों की सुगंध के कारण, सबके मन में उन फलों को खाने की इच्छा हुई। फिर बलराम ने वहाँ के फल चुराये। इतने में वन का रक्षक धेनुक, गधे का रूप धारण कर बलराम पर झपटा। किंतु बलराम नें इसे पटक कर, इसका वध किया (भा. १०. १२)।

धेनुमती—(स्वा. प्रिय.) देवद्युम्न राजा की स्त्री। इसका पुत्र परमेष्ठिन् (भा. ५. १५. ३)।

धौतमूलक—चीन देश का राजा। इसने अपनी मूर्खता के कारण, अपना एवं अपने कुल का नाश कर लिया (म. उ. ७२. १४)।

धौंधुमारि—धुंधुमार कुवलाश्व राजा के पुत्रों का पैतृक नाम।

धौम्य—देवल ऋषि का कनिष्ठ भ्राता, एवं पांडवों का पुरोहित। यह अपोद ऋषि का पुत्र था, एवं गंगानदी के तट पर, उत्कोचक तीर्थ में इसका आश्रम था (म. आ. १७४.६)। इसके पिता ने अन्नग्रहण वर्ज्य कर, केवल पानी पी कर ही सारा जीवन व्यतीत किया। उस कारण, उसे 'अपोद' नाम प्राप्त हुआ। अपोद ऋषि का पुत्र होने के कारण, धौम्य को 'आपोद' यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ३.१९)। इसे 'अग्निवेश्य' भी कहते थे (म. आश्व. ६३.९)।

चित्ररथ गंधर्व की मध्यस्थता के कारण, धौम्य ऋषि पांडवों का पुरोहित बन गया। लाक्षागृहदाह से बच कर, अर्जुन अपने भाईयों के साथ द्रौपदी स्वयंवर के लिये जा रहा था। उस वक्त, मार्ग में उसे चित्ररथ गंधर्व मिला। उसने अर्जुन से कहा, 'पुरोहित के सिवा राजा ने कहीं भी नहीं जाना चाहिये। देवल मुनि का छोटा भाई धौम्य उत्कोचक तीर्थ पर तपश्चर्या कर रहा है। उसे तुम अपना पुरोहित बना लो'। फिर अर्जुन ने धौम्य से प्रार्थना कर, उसे अपना पुरोहित बना लिया (म. आ. १७४.६)।

पांडवों का पौरोहित्य स्वीकारने के बाद, धौम्य ऋषि पांडवों के परिवार में रहने लगा (म. स. २.७)। पांडवों के घर के सारे धर्मकृत्य भी, इसी के हाथों से होने लगे। पांडव एवं द्रौपदी का विवाह तय होने पर, उनका विवाहकार्य इसीने संपन्न किया। उस कार्य के लिये, इसने वेदी पर प्रज्वलित अग्नि की स्थापना कर के, उस में मंत्रों द्वारा आहुति दी, एवं युधिष्ठिर तथा द्रौपदी का गँठ-बंधन कर दिया। पश्चात् उन दोनों का पाणिग्रहण करा कर, उनसे अग्नि की परिक्रमा करवायी, एवं अन्य शास्त्रोक्त विधियों का अनुष्ठान करवाया। इसी प्रकार क्रमशः सभी पांडवों का विवाह इसने द्रौपदी के साथ कराया (म. आ. १९०.१०-१२)।

पांडवों के सारे पुत्रों के उपनयनादि संस्कार धौम्य ने ही कराये थे (म. आदि. २२०.८७)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में धौम्य 'होता' बना था (म. स. ३०.३५)। युधिष्ठिर को 'अर्धराज्याभिषेक' भी धौम्य ने ही किया था (म. स. ४९.१०)।

पांडवों के वनगमन के समय, महर्षि धौम्य हाथ में कुश ले कर, यमसाम एवं रुद्रसाम का गान करता हुआ, वनगमन के लिये उद्युक्त हुआ (म. स. ७१.७)। इसे उस अवस्था में देख कर, युधिष्ठिर को अत्यंत दुख हुआ। वह बोला, 'आप वन में न आयें। मैं भला वहाँ आप को क्या दे सकता हूँ?' फिर धौम्य ने युधिष्ठिर को सूर्योपासना के लिये प्रेरणा दी (म. व. ३.४-१२), एवं उसे सूर्य के 'अष्टोत्तरशत' नामों का वर्णन भी बताया (म. व. ३.१७-२९)। धौम्य ने युधिष्ठिर से कहा, 'हे राजन्, तुम घबराओ नहीं। तुम सूर्य का अनुष्ठान करो। सूर्य प्रसन्न हो कर, तुम्हारी चिन्ता दूर करेगा'।

धौम्य के कथनानुसार युधिष्ठिर ने सूर्य की स्तुति की। उससे प्रसन्न हो कर, सूर्यनारायण ने उसे 'अक्षयपात्र' प्रदान किया, एवं कहा, 'यह पात्र तुम द्रौपदी के पास दे दो। उससे वनवास में तुम्हे अन्न की कमी कभी भी महसूस नहीं होगी'। फिर धर्म ने वह पात्र द्रौपदी के पास दे दिया (म. व. ४; द्रौपदी देखिये)।

पांडवों के वनवासगमन के बाद, अर्जुन अस्त्रप्राप्ति के हेतु इन्द्रलोक चला गया। अर्जुन के जाने से युधिष्ठिर अत्यंत चिंताग्रस्त हो गया। फिर धौम्य ने उसे भिन्न-भिन्न तीर्थो, देशों, पर्वतों, एवं प्रदेशों के वर्णन बताये, एवं कहा, 'तुम तीर्थयात्रा करो'। उससे तुम्हारे अंतःकरण को शांति मिलेगी' (म. व. ८४-८८)।

वनवास में जयद्रथ राजा ने द्रौपदी का अपहरण करने का प्रयत्न किया। उस वक्त धौम्य ने जयद्रथ को फटकारा, एवं द्रौपदी की रक्षा करने का प्रयत्न किया (म. व. २५२.२५-२६)।

पांडवों के वनवास के बारह वर्ष के काल में, धौम्य ऋषि अखंड उनके साथ ही था। पांडवों के अग्निहोत्र-रक्षण की जिम्मावारी धौम्य ऋषि पर थी। वह इसने अच्छी तरह से निभायी (म. व. ५. १३९)। वनवास समाप्त हो कर अज्ञातवास प्रारंभ होने पर, युधिष्ठिर ने बडे ही दुख से धौम्य से कहा, 'अज्ञातवास के काल में हम आपके साथ न रह सकेंगे। इसलिये हमें बिदा कीजिये'।

उस समय धौम्य ने युधिष्ठिर को अत्यंत मौल्यवान् उपदेश किया, एवं युधिष्ठिर की सांत्वना की। धौम्य ने कहा, 'भाग्यचक्र की उलटी तेढी गती से देव भी बच न सके, फिर पांडव तो मानव ही है'। अज्ञातवास काल में विराट के राजदरबार में किस तरह रहना चाहिये, इसका भी बहुमूल्य उपदेश धौम्य ने युधिष्ठिर को किया (म. वि. ४.६-४३)। फिर पांडवों के अग्निहोत्र का अग्नि को प्रज्वलित कर, धौम्य ने उनकी समृद्धि, वृद्धि, राज्यलाभ तथा भूलोक-विजय के लिये, वेदमंत्र पढ कर

हवन किया। जब पांडव अज्ञातवास के लिये, चले गये, तब उनका अग्निहोत्र का अग्नि साथ लेकर, धौम्य पांचाल देश चला गया (म. वि. ४. ५४–५७)।

भारतीय युद्ध में, भीष्मनिर्याण के समय, धौम्य ऋषि युधिष्ठिर के साथ उसे मिलने गया था। युद्ध समाप्त होने पर, श्रीकृष्ण ने पांडवों से बिदा ली। उस समय भी धौम्य उपस्थित था (भा. १. ९)। भारतीय युद्ध में मारे गये पांडवपक्ष के संबंधी जनों का दाहकर्म धौम्य ने ही किया था (म. स्त्री. २६. २७)।

युधिष्ठिर राजगद्दी पर बैठने के पश्चात्, उसनें धौम्य की धार्मिक कार्यों के लिये नियुक्ति की (म. शां. ४१. १४)। धृतराष्ट्र, गांधारी एवं कुंती वन में जाने के बाद, एक बार युधिष्ठिर युयुत्सु के साथ उन्हे मिलने गया। उस वक्त हस्तिनापुर की व्यवस्था युधिष्ठिर ने धौम्य पर सौंपी थी (म. आश्र. ३०. १५)।

धौम्य ने धर्म का रहस्य युधिष्ठिर को बताया था (म. अनु. १९९)। धर्मरहस्य वर्णन करते समय, धौम्य कहता है, 'टूटे हुएँ बर्तन, टूटी खाटें, मुर्गियाँ, कुत्ते आदि को घर में रखना, एवं घर में वृक्ष लगाना अप्रशस्त है। फूटे बर्तनों में कलि वास करता है, टूटी खाट में दुर्दशा रहती है, तथा वृक्षों के आसपास जंतु रहते हैं। इसलिये उन सब से बचना चाहिये'। धौम्य ने 'धौम्यस्मृति' नामक एक ग्रंथ की रचना भी की थी (C. C.)।

२. एक ऋषि। व्याघ्रपाद ऋषि के दो पुत्रों में से यह एक था। इसके ज्येष्ठ भाई का नाम उपमन्यु था (म. अनु. ४५. ९६. कुं.)। हस्तिनापुर के मार्ग में श्रीकृष्ण से इसकी भेट हुई थी (म. उ. ३८८*)।

सत्यवान का पिता द्युमत्सेन अपने प्रिय पुत्र तथा स्नुषा को ढूँढ़ते–ढूँढ़ते, इस ऋषि के आश्रम में आया था। फिर इसने उसे भविष्य बताया, 'तुम्हारा पुत्र शीघ्र ही स्नुषा के साथ जीवित वापस आयेगा' (म. व. २८२. १९)।

४. एक मध्यमाध्वर्यु।

धौम्र––एक ऋषि। शरशय्या पर पडे हुए भीष्म से यह मिलने गया था (म. शां. ४७.६६* पंक्ति. ९)।

ध्यातकाष्ठ––भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि (धर्मगुप्त देखिये)।

ध्युषिताश्व––(सू. इ.) वायु मत में शंखण राजा का पुत्र। भागवत में इसे विधृति, एवं विष्णु में इसे व्युषिताश्व कहा गया है।

ध्रुक––(शुंग. भविष्य.) वायु मत में वसुमित्र राजा का पुत्र। इसे अंतक, आर्द्रक, भद्र, एवं भद्रक नामांतर भी प्राप्त थे।

ध्रुव––(स्वा. उत्तान.) उत्तानपाद राजा एवं सुनीति का पुत्र, एवं एक प्रातःस्मरणीय राजा (म. अनु. १५०)। अपने दृढनिश्चय एवं लगन की कारण, पाँच वर्ष की छोटी उम्र में, इसने ऋषियों को भी अप्राप्य 'श्रीविष्णुदर्शन' एवं नक्षत्रमंडल में ध्रुवपद प्राप्त किया। नक्षत्रमंडल में सप्तर्षिओं के पास स्थित 'ध्रुव तारा' यही है (भा. ४. १२.४२–४३)।

उत्तानपाद राजा की सुरुचि एवं सुनीति नामक दो रानियाँ थी। उनमें से सुरुचि उसकी प्रिय रानी थी, एवं सुनीति (सुनृता) से वह नफ़रत करता था। राजा के अप्रिय पत्नी का पुत्र होने के कारण, बालक ध्रुव को भी प्रतिदिन अपमान एवं मानहानि सहन करनी पडती थी।

एक बार उत्तानपाद राजा की गोद में, सुरुचि का पुत्र उत्तम खेल रहा था। यह देख, ध्रुव को भी पिता की गोद में खेलने की इच्छा हुई। अतः यह अपने पिता के गोद पर चढने लगा। किंतु राजा ने ध्रुव के तरफ देखा तक नही। ध्रुव की सौतेली माता सुरुचि ने ध्रुव का हाथ पकड कर कहा 'ईश्वर की आराधना कर के तुम मेरे उदर से पुनः जन्म लो। तभीं तुम राजा की गोद में खेल सकोगे'।

सौतेली माता का कठोर भाषण सुन कर, ध्रुव अत्यंत खिन्न हुआ। उस समय राजा भी चूपचाप बैठ गया। फिर ध्रुव रोते रोते अपनी माता के पास गया। सुनीति ने इसे गोद में उठा लिया। सौत का कठोर भाषण पुत्र के द्वारा सुन कर, उसे अत्यंत दुख हुआ। अपने कमनसीब को दोष देते हुई, वह फूट फूट कर रोने लगी।

पश्चात् ईश्वराराधना का निश्चय कर, ध्रुव ने अपने पिता के नगर का त्याग किया। यह बात नारद को ज्ञात हुई। ध्रुव का ईप्सित जान लेने पर, उसने अपना वरदहस्त ध्रुव के सिर पर रखा। ध्रुव का स्वाभिमानी स्वभाव तथा क्षात्रतेज देख कर, नारद आश्चर्यचकित हो गया। उसने ध्रुव से कहा "तुम अभी छोटे हो। इतनी छोटी उम्र में तुम इतने स्वाभिमानी हो, यह बडी खुषी की बात है। किंतु मान-अपमान के झँझटों में पड कर, मन में असंतुष्टता का अग्नि सिलगाना ठीक नही है। क्यों कि, असंतोष का कारण मोह है, तथा मोह से दुःख ही दुःख पैदा होते है। भाग्य से जो भी मिले, उस पर संतोष मानना चाहिये। ईश्वर के आराधना का तुम्हारा निश्चय

बड़ा ही कठिन हैं। उसमें बड़ेबड़ों ने हार खाई है। अतः यह मार्ग त्याग कर, तुम घर लौट जाओ।

नारद का भाषण सुन कर ध्रुव ने कहा, 'मैं ने न्याय-निष्ठुर क्षत्रिय वंश में जन्म लिया है। मेरे स्वभाव में लाचारी नहीं है। सुरूचि के अपशब्दों से मेरा हृदय भग्न हो गया है। अतः आपके उपदेश का परिणाम मेरे उपर होना असंभव है। त्रिभुवन में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करने की आकांक्षा मेरे मन में जाग उठी है। वह स्थान मुझे कैसे प्राप्त होगा, यह आप मुझे बताइये। आप त्रैलोक्य में घूमते हैं। उस कारण मेरी समस्या का सुझाव, केवल आप ही कर सकते है।'

ध्रुव का यह भाषण सुन कर, नारद के अन्तःकरण में ध्रुव के प्रति अनुकंपा उत्पन्न हुअी। उसने कहा, 'अपने माता की आज्ञानुसार तुम श्रीहरि की कृपा संपादन करो। उसके लिये यमुना के किनारे मधुवन में जा कर, तुम इन्द्रिय-दमन करो'। इतना कह कर नारद ने ध्रुव से 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' नामक द्वादशाक्षरी गुप्तमंत्र प्रदान किया, एवं आशीर्वाद दे कर वह चला गया। स्कन्द तथा विष्णु पुराण में लिखा गया है कि, यह मंत्रोपदेश ध्रुव को सप्तर्षियों द्वारा प्राप्त हुआ। बाद में उत्तानपाद राजा को अपने कृतकर्म का पश्चात्ताप हुआ, एवं वह ध्रुव को वापस लाने के लिया घर से निकला। किंतु उसे नारद ने कहा, 'तुम्हारा पुत्र शीघ्र ही महत्कार्य कर के वापस आनेवाला है। इसलिये उसे वापस बुलवाने की कोशिश, इस समय तुम मत करो।'

नारद के कथनानुसार, ध्रुव ने मथुरा के पास यमुना के तट पर मधुवन में तपस्या प्रारंभ की, एवं 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' यह द्वादशाक्षरी मंत्र का जाप प्रारंभ किया। तपस्या के समय ध्रुव की उम्र केवळ पाँच साल की थी।

फलाहार, उदकपान, एवं वायुभक्षण क्रमशः कर के, एक पैर पर खड़ा हो कर, ध्रुव श्रीविष्णु की आराधना करने लगा। तपस्या के पहले दिन ध्रुव ने 'अनशन' किया। दूसरे दिन से यह विधिपूर्वक आराधना करने लगा।

तपस्या के पहले महीने में, तीन दिन में एक बार यह कैथ एवं बेर के फल खा कर गुजारा करता था। दूसरे महीने में, हर छठे दिन सूखे पत्ते एवं कुछ तिनखे खाने का क्रम इसने शुरू किया। तीसरे महीने में केवल पानी पर रहना इसने प्रारंभ किया। वह पानी भी यह हर नवे दिन पीता था। चौथे महीने में, इसने पानी पीना भी छोड़ दिया, एवं केवल वायु पी कर, यह रहने लगा।

तपस्या के पाँचवे महीने में, प्राणवायु भी इसके वश में आ गया, एवं वायु पीना भी ध्रुव ने बंद किया। एक पाँव पर खड़ा हो कर, अहोरात्र यह श्रीविष्णु के ध्यान में मगन होने लगा।

छः महीनों तक ऐसी कड़ी तपस्या करने के पश्चात्, तपस्या की सिद्धि ध्रुव को प्राप्त हुई। इसकी अंगूठे के भार से पृथ्वी दबने लगी, एवं इन्द्रादिकों के श्वासों का अवरोध होने लगा। फिर सारे देव श्रीविष्णु की शरण में गये। विष्णु ने ध्रुव को तपश्चर्या से परावृत्त करने का आश्वासन देवजनों को दिया। उस आश्वासन से सारे देव संतुष्ट हुएँ, एवं अपने अपने स्थान पर वापस लौटे।

पश्चात् गरुड़ पर आरूढ हो कर, श्रीविष्णु मधुवन में ध्रुव के पास आये, एवं उन्होंने सगुण स्वरूप में इसे दर्शन दिया। जिसके ध्यान में छः महीनों तक ध्रुव मग्न था, उसे साक्षात् देख कर वह अवाक् हो गया (भा. ४.८-९)। श्रीविष्णु का गुणवर्णन करने की बहुत सारी कोशिश ध्रुव ने की। किंतु वह करने में इसे असमर्थता प्रतीत हुई।

फिर श्रीविष्णु ने ध्रुव के कपोल को वेदस्वरूपी शंख से स्पर्श किया। पश्चात् उस शंख के कारण प्राप्त हुएँ वेदमय वाणी से, ध्रुव ने विष्णु का स्तवन किया। इससे प्रसन्न हो कर, विष्णु ने इसे इच्छित वर माँगने के लिये कहा। ध्रुव ने नक्षत्रमंडल में अचल स्थान प्राप्त करने का वर श्रीविष्णु से माँग लिया। विष्णु ने वह वर इसे दिया, एवं कहा, 'उत्तानपाद राजा तुम्हें राजगद्दी पर बैठा कर वन में जावेगा। तुम छत्तिस हजार वर्षों तक राज्य करने के बाद, नक्षत्रमंडल में अचल-स्थान प्राप्त करोगे। तुम्हारा सौतेला भाई उत्तम। मृगया के लिये वन में जावेगा, तब वहीं उसका नाश होगा। उत्तम की माता सुरुचि उसके मृत्यु के दुख के कारण, अरण्य में दावानल में प्रविष्ट होगी। तुम अनेक यज्ञ कर के सब को वंद्य तथा संसारमुक्त हो जाओगे'। बाद में ध्रुव ने श्रीविष्णु की पूजा की, तथा पश्चात् यह स्वनगर चला आया।

ध्रुव के आगमन की वार्ता उत्तानपाद को ज्ञात होते ही वह अत्यंत आनंदित हुआ। ध्रुव महत्कार्य कर के वापस आनेवाला है, यह नारद के भविष्यद्वाणी से उत्तानपाद पहले से जानता ही था। ध्रुव ने राजधानी में प्रवेश करते

ही, इसे शृंगारित हाथी पर बैठा कर, नगर में लाया गया। पिता नें इसके मस्तक का अवघ्राण किया। ध्रुव दोनों माताओं से मिला। सुरुचि ने इसे 'चिरंजीव हो' ऐसा आशीर्वाद दिया। माता, पिता तथा बंधुओं के साथ ध्रुव सुख से कालक्रमणा करने लगा। पश्चात् राजा ने इसे राज्याभिषेक किया, तथा स्वयं वन में चला गया।

एक बार ध्रुव का सौतेला भाई उत्तम, पर्वत पर मृगया के हेतु से गया। एक बलाढ्य यक्ष ने उसका वध किया। यह सुन कर ध्रुव ने अत्यंत क्रोधित हो कर, यक्षों के पारिपत्य के लिये विजयशाली रथ में बैठ कर, यक्षनगरी अल्का पर आक्रमण किया। वहाँ घमासान युद्ध हुआ। यक्ष ने मायाजाल फैला कर, ध्रुव को निर्बल बना दिया। फिर ऋषियों ने ध्रुव को आशीर्वाद दिया, 'तुम्हारे शत्रु का निःपात होगा'। बादमें 'नारायणास्त्र' के योग से, ध्रुव ने यक्षो का मायापटल दूर कर के, यक्षों को पराजित किया।

इस प्रकार ध्रव गुह्यक नामक यक्षों का नाश कर रहा था। तब स्वायंभुव मनु को यक्षों पर दया आई। अपने नाती ध्रुव को उसने युद्ध से तथा गुह्य के हनन से परावृत्त किया। इतना ही नहीं, यक्षवध के कारण क्रोधित हुए कुबेर को प्रसन्न करने के लिये, मनु ने इसे कहा। फिर ध्रुव ने युद्ध बंद किया, एवं पितामह के कथनानुसार कुबेर का स्नेहभाव संपादित किया। कुबेर ध्रुव पर प्रसन्न हुआ एवं उसने इसे वर माँगने के लिये कहा। तब ध्रुव ने वर माँगा, 'मैं श्रीहरि का अखंड स्मरण करता रहूँ'।

छत्तिस हजार वर्षों तक राज्य करने के बाद, अपने वत्सर नामक पुत्र को गद्दी पर बैठा कर, ध्रुव बदरिकाश्रम में गया। इसे स्वर्ग में ले जाने के लिये एक विमान आया। उसमें बैठने के लिये यह जैसे ही तैयार हुआ, वैसे ही मृत्यु ने आ कर इससे कहा, 'स्वर्ग में जाने से पहले तुम्हें देहत्याग करना पडेगा'। परंतु यह मान्य न कर, मृत्यु के सिर पर पाँव रख कर, ध्रुव विमान में बैठ गया। स्वर्ग जाते समय, इसे अपने सुनीति माता का स्मरण हुआ, तथा उसे भी अपने साथ स्वर्ग ले जाने की इच्छा हुई। इतने में इसने देखा कि, सुनीति इसके पहले ही स्वर्ग जा पहूँची है।

अन्त में इसे सप्तर्षियों के समीप अचल ध्रुवपद प्राप्त हुआ। यह तारा 'ध्रुव' नाम से प्रसिद्ध है (भा. ४.८-१२; विष्णु. १.११-१२; मत्स्य. ४.३५-३८; लिं. १. ६२; स्कन्द. ४.१.१९-२१; ह. वं. १.२.९-१३)।

अपने पूर्वजन्म में ध्रुव एक ब्राह्मणपुत्र था। इसने मातापिता की योग्य शुश्रूषा तथा धर्मपालन किया। पश्चात् एक राजपुत्र से इसकी मित्रता हुई। उसका वैभव देख कर इसे भी राजपुत्र बनने की इच्छा हुई। अपने पूर्वसंचित पुण्य के कारण, अगले जन्म में, यह उत्तानपाद राजा का पुत्र बना। (विष्णु. १.१२.८४-९०)।

ध्रुव ने पक्षवर्धिनी एकादशी का व्रत किया था (पद्म. उ. ३६)।

ध्रुवपरिवार—ध्रुव के कुल चार पत्नीयों का निर्देश प्राचीन ग्रंथों में प्राप्त है। उनके नाम इसप्रकार हैः—

(१) भ्रमि—यह शिशुमार प्रजापति की कन्या थी। इससे ध्रुव को कल्प एवं वत्सर नामक दो पुत्र हुएँ। उनमें से वत्सर ध्रुव के पश्चात् राजगद्दी पर बैठा।

(२) इला—यह वायु ऋषि की कन्या थी। इससे ध्रुव को उत्कल (विरक्त) नामक एक पुत्र हुआ।

(३) शंभु—इससे ध्रुव को श्लिष्टि एवं भव्य नामक दो पुत्र हुएँ (विष्णु. १.१३.१; ह. वं. १.२-१४)।

(४) धन्या—यह मनु की कन्या थी। इससे ध्रुव को शिष्टि नामक एक पुत्र हुआ (मत्स्य. ४.३८)।

२. (सो. पुरूरवस्.) नहुष का पुत्र, एवं ययाति का भाई (म. आ. ७०.२८)। इसके नाम के लिये 'उद्धव' पाठभेद उपलब्ध है।

३. पांडवपक्षीय एक राजा। भारतीय युद्ध में पांडवों का ही विजय होगा, यह कर्ण को बताते समय, कृपाचार्य ने जिन पांडवपक्षीय राजाओं के नाम बताये, उनमें से यह एक था।

४. एक राजा। यमसभा में बैठ कर, यह सूर्यपुत्र यम की उपासना करता था (म. स. ८.१०)। इसके नाम के लिये 'भव' पाठभेद भी उपलब्ध है।

५. कौरवपक्ष का एक योद्धा। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १३०.२३)।

६. सुख देवों में से एक।

७. विकुंठ देवों में से एक।

८. लेख देवों में से एक।

९. धर्म एवं वसु का पुत्र।

१०. धर्म को धूम्रा के गर्भ से उत्पन्न द्वितीय वसु (म. आ. ६०.१८)।

११. मधुवन के शाकुनि ऋषि के नौ पुत्रों में से ज्येष्ठ।

ध्रुव आंगिरस---सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१७३)। इसके सूक्तों में राष्ट्र तथा राजा के संबंध में प्रजातंत्रात्मक विचार दिखाई देते हैं।

ध्रुवक---स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६०)।

ध्रुवक्षिति---लेख देवों में से एक।

ध्रुवरत्ना---स्कन्द की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.४)।

ध्रुवसंधि---(सू. इ.) कोशल देश के पुष्य राजा का पुत्र। इसे 'पौष्य' भी कहते थे। इसे लीलावती तथा मनोरमा नामक दो स्त्रियाँ थी। एक बार यह ससैन्य मृगया के हेतु वन में गया। वहाँ इसकी एक क्रूर सिंह से मुठभेड़ हुई। उस में यह मारा गया। इसे लीलावती से शत्रुजित, तथा मनोरमा से सुदर्शन नामक पुत्र हुएँ थे (दे. भा. ३. १४)। भविष्य में इसके नाम का 'ध्रुवसेधि' पाठ प्राप्त है।

ध्रुवसंधि, सुसंधि एवं शंखण, ये इक्ष्वाकु वंश के राजा, दाशरथि राम के पूर्वकाल में हुएँ थे, ऐसा रामायण का कहना है। किंतु पुराणों में उन्हें दाशरथि राम के वंशज बताया गया है (पार्गि. ९३)।

ध्रुवसेधि---ध्रुवसंधि देखिये ।

ध्रुवाश्व---(सू. इ.) भानुमान राजा का नामांतर।

२. (सू. इ. भविष्य.) मत्स्यमत में सहदेव का पुत्र। इसका बृहदश्व नामांतर भी प्राप्त है।

ध्वज---प्रधान राजा का नाम (सांब ३. देखिये)।

ध्वजकेतु---द्रुपद का पुत्र (म. आ. २१८.१९)।

ध्वजवती---सूर्यदेव की आज्ञा से आकाश में ठहरनेवाली हरिमेधा ऋषि की कन्या (म. उ. १०८.१३)।

ध्वजसेन---द्रुपद का पुत्र (म. आ. परि. १०३. पंक्ति.१०९)।

ध्वजग्रीव---रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

ध्वजवती---हरिमेधा ऋषि की कन्या (म. उ. १०८. १३)।

ध्वनि---सुधामन् देवों में से एक।

ध्वन्य---एक राजा। यह लक्ष्मण का पुत्र था। प्रजापति पुत्र संवरण ऋषि ने, दान देने के कारण राजा की प्रशंसा की है (ऋ. ५.३३.१०)। त्रसदस्यु एवं मारुताश्व ऋषि ध्वन्य के आश्रय में थे।

ध्वसन द्वैतवन---मत्स्य देश का एक राजा। सरस्वती नदी के तट पर इसने अश्वमेध यज्ञ किया (श. ब्रा. १३. ५.४.९)।

ध्वसन्ति---ऋग्वेदकालीन एक राजा। इंद्र के शत्रु पुरुषंति के साथ इसका उल्लेख प्राप्त है। यह दोनों कश्यप कुल के अवत्सार ऋषि के आश्रयदाता थे। अवत्सार ऋषि ने उल्लेख किया है कि, इन दोनों राजाओं से उसे धन मिला था (ऋ. ९.५८.३)। अश्विनों द्वारा इसे सहायता दी गयी थी (ऋ. १.११२.२३)। ध्वस्त्र तथा ध्वसंति एक ही होने की संभावना है। पुरुषंति के साथ भी ध्वस्र का उल्लेख प्राप्त है (ऋ. ९.५८.३; साम. २. ४०९)।

ध्वस्रे यह स्त्रीलिंगी द्विवचन भी प्राप्त है (पं. ब्रा. १३.७.१२), किंतु वे किसी स्त्रियों के नाम होंगे या नहीं, यह कहना मुश्किल है (ध्वस्त्र देखिये)।

ध्वस्त्र---ऋग्वेदकालीन एक राजा। ध्वस्र एवं पुरुषन्ति राजाओं से विपुल संपत्ति प्राप्त करने का उल्लेख, अवत्सार काश्यप ने किया है (ऋ. ९.५८.३–४)। इसने तरंत तथा पुरुमिळ्ह को दान दिया था (पं. ब्रा. १३.७.१२; जै. ब्रा. ३.१३९)। सायण ने शाट्यायन ब्राह्मण से उद्धरण ले कर इसका उल्लेख किया है (ऋ. ९. ५८. ३)। इसका उल्लेख द्विवचन की तरह भी कभी कभी किया जाता है। सायण के मत में वह आर्ष स्त्रीलिंग है। ध्वस्र एवं ध्वसंति एक ही व्यक्ति रहे होगें।

न

नकवत्—(सो. क्रोष्टु.) वायुमत में हृदीक का पुत्र।

नकुल—(सो. कुरु.) हस्तिनापुर के पांडु राजा के पुत्रों में से एक, एवं पाँच पांडवों में से चौथा पांडव। अश्विनी कुमारों के द्वारा पांडुपत्नी माद्री के गर्भ से नकुल एवं सहदेव ये जुडवें पुत्र उत्पन्न हुएँ। उनमें से नकुल ज्येष्ठ था।

नकुल एवं सहदेव, ये दोनों अनुपम रूपशाली एवं परम मनोहर थे (म. आ. १.१४४)। नकुल स्वयं अश्वविद्यानिपुण भी था। कुरुकुल में नकुल जैसा रूपशाली और कोई नहीं था, इस कारण इसे 'नकुल' नाम प्राप्त हुआ था (म. वि. ५.१६७*)।

युधिष्ठिर, अर्जुन, एवं भीमसेन इन पांडवों के हर विचार एवं कृति में सहाय करनेवाले, मितभाषी एवं आज्ञापालक बंधुओं के रूप में, नकुल एवं सहदेव का चरित्रचित्रण 'महाभारत' में किया गया है। ये दोनों बंधु पराक्रमी हैं। किंतु उस पराक्रम को स्वतंत्र अस्तित्व न हो कर, वह अन्य पांडवों के पराक्रम में विलीन सा हुआ है। ये दोनों बंधु परम मातृभक्त हैं। किंतु उस मातृभक्ति का सारा झुकाव इनकी सापत्न माता कुंती की ओर है, एवं इनके बदले कुंती के ही चरित्र को, वह अधिक उठाव देता है। अपनी पत्नी द्रौपदी पर इन दोनों बंधुओं का काफी प्रेम है। किंतु द्रौपदी की इनके प्रति भावना मातृवत् वात्सल्य की थी। इस कारण, अन्य पांडवों की तुलना में ये दोनों बंधु फीके से प्रतीत होते हैं।

नकुल का जन्म शतशृंग नामक हिमालय के एक शिखर पर हुआ (म. आ. ११५)। शतशृंगनिवासी ऋषियों ने इसका नामकरणविधि किया (म. आ. ११५. १९)। कृष्णपिता वसुदेव ने काश्यप ऋषि द्वारा, अन्य पांडवों के साथ नकुल का भी उपनयन करवाया। शुकाचार्य द्वारा इसने अस्त्रविद्या एवं ढालतरवार चलाने की कला में निपुणता प्राप्त की (म. आ. १२३.३१)।

पांडु की मृत्यु के पश्चात्, नकुल की माता माद्री ने इसे एवं सहदेव को कुन्ती के हाथों सौंप दिया। वह स्वयं पति के साथ चिता पर आरूढ हो गयी (म. आ. १२४)। अन्य पांडवों की अपेक्षा, कुन्ती की नकुल सहदेव से विशेष प्रीति थी। पांडवों के वनवासगमन के समय, कुन्ती ने द्रौपदी से नकुल एवं सहदेव की विशेष देखभाल करने को कहा था।

पांडवों के उपनयन के बाद, शतशृंगनिवासी ऋषि उन्हें हस्तिनापूर ले आये, एवं उन्हें भीष्माचार्य के हाथों में सौंप दिया गया (म. आ. ११७.२९)। अन्य पांडवों के साथ, नकुल को भी द्रोणाचार्य ने नानाप्रकार के दिव्य एवं मानव अस्त्रों की शिक्षा प्रदान की (म. आ. १२२.२९)। विचित्र प्रकार से युद्ध करने में, नकुल विशेष प्रवीण हो गया। इस कारण, इसे 'अतिरथी' उपाधि प्राप्त हुई (म. आ. १३८.३०), एवं द्रुपद के साथ किये गये युद्ध में, इसे सहदेव के साथ पांडवपक्ष का 'चक्ररक्षक' बना दिया गया (म. आ. १३७.२७)। नकुल के शंख का नाम 'सुघोष' था (म. भी. २३.१६)।

अन्य पांडवों के साथ, धौम्य ऋषि ने नकुल का भी विवाह द्रौपदी से लगा दिया (म. आ. १९०.१०-१२)। द्रौपदी से नकुल को शतानीक नामक पुत्र हुआ (म. आ. २२०. ७९)। द्रौपदी के सिवा, शिशुपाल की कन्या एवं धृष्टकेतु की बहन रेणुमती अथवा करेणुमती नकुल को विवाह में दी गयी थी (म. आ. ९०.८६)। उससे इसे निरमित्र नामक पुत्र हुआ था (भा. ९.२२)।

युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ के समय, नकुल दिग्विजय करने, पश्चिम दिशा में गया था। अपने 'पश्चिम दिग्विजय' में, इसने वहाँ के राजाओं को जीत कर अगणित करभार लाया। इसने जीत कर लाये हुए खजाने का बोझ दस हजार ऊँट, बड़ी कठिनाई से ढो कर ला सके थे (म. स. २९.१७-१८)।

अपने पश्चिम दिग्विजय के लिये, खांडवप्रस्थ से बाहर निकलने पर, नकुल सर्वप्रथम कार्तिकेय को प्रिय रोहीतक पर्वत पर गया। वहाँ इसने मत्तमयूरकों से युद्ध किया। मत्तमयूरकों को जीत कर, इसने मरुभूमि, बहुधान्यक, शैरीषक तथा महेत्थ आदि देशों को जीत लिया। आक्रोश नामक राजर्षि का पराजय किया। बाद में दशार्ण, शिबि, त्रिगर्त, अंबष्ठ, मालव, कर्पट, मध्यमकेय, वाटधान तथा द्विज देशों को जीत कर यह वापस आया।

दिग्विजय के दूसरे भाग में, इसने पुष्करवन के लोग, उत्सवसंकेतगण, सिंधु तीर के ग्रामणीय, सरस्वती तीर के मत्स्याहारी शूद्र, एवं आभीर, पंचनद, अमर पर्वत,

उत्तर ज्योतिष, दिव्यकटपूर, द्वारपाल, रामठ, हारहूण, सुराष्ट्र, मद्र आदि देशों के राजाओं को अपनी सत्ता मान्य करने के लिये, इसने विवश किया एवं उनसे करभार लिया।

अपने इस 'दिग्विजय' में, इसने पांडवों के पितृतुल्य मित्र भगवान् श्रीकृष्ण एवं अपने मातुल मद्रराज शल्य को भी नहीं छोड़ा।

बाद में समुद्र के किनारे रहनेवाले पह्लव, वर्षक, किरात, यवन तथा शक लोगों से इसने करभार लिया, एवं हजारों उँटों पर वह लाद कर यह इन्द्रप्रस्थ वापस आया (म. स. २९; भा. १०.७२)।

युधिष्ठिर एवं दुर्योधन में हुए द्यूतसमारोह में, युधिष्ठिर ने इसे जूए के दाँव पर रखा, एवं वह इसे हार बैठा (म. स. ५८.११)। फिर अन्य पांडवों के साथ, अपने शरीर पर धूल लपेट कर, यह भी वनवास के लिये चला गया। वनवास में इसने क्षेमंकर, महामुख एवं सुरथ नामक राक्षसों का वध किया (म. व. २७१.१६–२२)। किंतु द्वैतवन के 'यक्षप्रश्न' के प्रसंग में, यह अर्जुन, भीम आदि के साथ बूरी तरह से हारा गया एवं सरोवर पर गिर पड़ा। पश्चात् युधिष्ठिर ने अपने सारे बंधुओं की मुक्तता की (म. व. ३१२.१३)।

अज्ञातवासकाल में यह विराट दरबार में, ग्रंथिक अथवा दामग्रंथिक नाम धारण कर के रहा था। इसका गुप्त नाम जयत्सेन था। यह पहले से ही अश्वविद्या में कुशल था। उस विद्या का उपयोग इसे विराट के दरबार में हुआ। अश्वों के रोग सुधारना, उनकी बुरी आदतें निकालना, एवं उन्हें शिक्षा देना आदि कामों में यह प्रवीण था। इस कारण, विराट ने अपनी अश्वशाला नकुल के हाथों सौंप दी थी (म. वि. १२.८)।

'कृष्णदौत्य' के समय, नकुल ने श्रीकृष्ण से समयोचित वर्तन कर युद्ध टालने की प्रार्थना की थी। नकुल ने कहा, 'कौरवों से संधि कर, युद्ध रुका देने की संभावना अभी तक बाकी है। इसलिये कौरवों से सुलह का प्रयत्न आखिर तक करना जरूरी है।' (म. उ. ७८)।

भारतीय युद्ध में, नकुल ने कौरव पक्ष के निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध कर, पराक्रम दिखाया था :–(१) दुःशासन (म. भी. ४३.२०–२२); (२) गांधारराज शकुनि (म. भी. १०१.३०–३१); (३) धृतराष्ट्रपुत्र विकर्ण (म. भी. १०६.११); (४) बाल्हीकराज शल्य (म. द्रो. १४.३०–३२); (५) दुर्योधन (म. द्रो. १६३.५१–५२)। इनमें से दुर्योधन के साथ हुए युद्ध में, इसने दुर्योधन पर सैंकडों बाण छोड़ कर, उसे बहुत ही जर्जर किया था। कर्ण के चित्रसेन, सत्यसेन, एवं सुषेण आदि तीन पुत्रों का नकुल ने वध किया (म. श. ९.१७–४९)।

कर्ण के साथ हुए युद्ध में, नकुल बुरी तरह से हारा गया था। उस युद्ध में, कर्ण नकुल को मारनेवाला ही था। किंतु अपनी माता कुंती को दिये वचन के अनुसार, कर्ण ने इसे जीवितदान दिया, एवं रण से पलायन करते हुए नकुल को जीवित छोड़ दिया (म. क. १७.९५)।

युधिष्ठिर हस्तिनापुर का राजा होने के पश्चात्, उसने नकुल को सेनाध्यक्ष पद पर नियुक्त किया (म. शां. ४१.११)। इसे धृतराष्ट्रपुत्र दुर्मर्षण का सुंदर महल रहने के लिये दिया (म. शां. ४४.१०–११)। युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञ के समय, नकुल एवं भीम पर हस्तिनापुर की रक्षा का काम सौंपा गया था (म. आश्व. ७१.२५)। उस यज्ञ के पहले, नकुल 'दक्षिणदिग्विजय' के लिये गया था। उस दिग्विजय में, इसने साभ्रमती नदी के किनारे देवी 'पांडुरार्या' नामक, तीर्थ की स्थापना की (पद्म. उ. १६१)।

महाप्रस्थान के समय; पांडव पृथ्वीप्रदक्षिणा करने निकले। हिमालय पर्वत पार कर, उत्तर की ओर जाते समय, उन्हे वालुकामय सागर दिखा। उस सागर में से, वे द्रुतगती से जा रहे थे। राह में सर्वप्रथम द्रौपदी की, एवं तत्पश्चात् नकुल की मृत्यु हुई।

नकुल के इस अकाली मृत्यु का कारण भीम ने युधिष्ठिर से पूछा। युधिष्ठिर ने कहा, 'अपने देहसौंदर्य का नकुल को बड़ा ही गरूर था। उस कारण, इसकी मार्ग में ही मृत्यु हो गयी है (म. महा. २.१२.१६)। मृत्यु के समय, इसकी आयु १०५ वर्षों की थी (युधिष्ठिर देखिये)।

स्वर्ग जाने पर, युधिष्ठिर ने नकुल को देखने की इच्छा प्रगट की (म. स्व. २.१०)। फिर नकुल एवं सहदेव तेजस्वी रूप में अश्विनीकुमारों के स्थान पर विराजमान होते हुएँ युधिष्ठिर को दिख पड़े (म. स्व. ४.९)।

नकुल के नाम पर 'वैद्यकसर्वस्व' नामक एक ग्रंथ उपलब्ध है (ब्रह्मवै. २.१६)।

२. युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ को तुच्छ बतानेवाला एक नेवला (म. आश्व. ९२)।

नकुलीश—पाशुपत दर्शनकार। इसका कारावन से संबंध आया था (लकुलिन् देखिये)।

नक्त—(स्वा. प्रिय.) पृथुषेण राजा का पुत्र। इसकी माता का नाम आकुति। द्रुति नामक पत्नी से इसे गय नामक पुत्र हुआ था (भा. ५. १५. ६)।

नखवत्—(भविष्य.) वायु के मतानुसार मथुरा में राज्य करनेवाला एक राजा।

२. (भविष्य.) ब्रह्मांड के मतानुसार वैदेश का एक नागवंशीय राजा।

नग—शत्रुघ्न का सेनापति।

नगरिन् जानश्रुतेय— उदित होमवादी एक आचार्य (ऐ. ब्रा. ५. ३०)। इसका पूरा नाम नगरिन् जानश्रुतेय काण्ड्विय था (जै. उ. ब्रा. ३. ४०. २)। *सायण ने नगरिन् का अर्थ 'नगर में रहनेवाला'* यों किया है। इसका ऐकदिशाक्ष मानुतंतव्य के साथ निर्देश कई जगह प्राप्त है।

नगृहु—नग्रह देखिये।

नग्नक—एक निषाद ज्ञातिसमुदाय। अमृत लाने गये गरुड़ ने, क्षुधाशमनार्थ पृथ्वी पर के कई निषाद खा लिये। पश्चात् गले में जलन होने के कारण, खाये हुएँ सारे निषाद उसने बाहर उगले (गरुड़ देखिये)।

गरुड़ ने उगले हुएँ वे निषाद म्लेंछ बन गये। उनमें से आग्नेय दिशा की ओर जो निषाद गिरे, उन्हे 'नग्नक' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. सृ. ४७)।

नग्नजित्—गांधार देश का एक क्षत्रिय राजा, एवं कृष्ण की पत्नी सत्या का पिता। यह 'इषुपाद' नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२१; पापजित् पाठ)। कर्ण के दिग्विजय में, उसने इसका पराभव किया था (म. व. परि. १.२४.७०)।

भगवान् श्रीकृष्ण ने नग्नजित् के समस्त पुत्रों को पराजित किया था (म. उ. ४७. ६९)। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में था।

भांडारकर संहिता में इसके नाम के लिये 'पापजित्' पाठभेद उपलब्ध है।

२. एक वास्तुशास्त्रज्ञ। इसने वास्तुशास्त्र पर एक ग्रंथ लिखा था (मत्स्य. २५२)।

३. प्रल्हाद का शिष्य, एक दैत्य। पृथ्वी पर, राजा 'सुबल' नाम से इसने अवतार लिया था।

नग्नजित् गांधार—गांधार देश का एक यज्ञवेत्ता राजा। पर्वत एवं नारद ने इसकी राजगद्दी पर प्रतिष्ठापना की थी (ऐ. ब्रा. ७. ३४)। 'शतपथ ब्राह्मण' में अपने स्वर्जित नामक पुत्र के साथ इसका उल्लेख प्राप्त है (श. ब्रा. ८. १. ४. १०)। उस ग्रंथ में, संस्कार विषयक इस राजा के किसी वक्तव्य का व्यंग्योक्तिपूर्ण दृष्टि से निर्देश किया गया है।

'नग्नजित् गांधार,' यह एक ही व्यक्ति मान कर 'शतपथ ब्राह्मण' एवं 'ऐतरेय ब्राह्मण' में इसका निर्देश किया गया है। फिर भी सायणाचार्य 'नग्नजित्' एवं 'गांधार' को दो *अलग व्यक्तियाँ मानते है। 'शतपथ ब्राह्मण'* के जिस परिच्छेद में इसका निर्देश आया है, वहाँ अनेक राजाओं के ही नाम इकठे दिये गये हैं। उनमें से प्रत्येक व्यक्ति अलग मान कर अर्थ किया जाये, तो वह यथार्थ नहीं होगा।

नग्नहु--नग्नहू देखिये।

नग्नहु—एक ऋषिक (वायु. ५९.९२–९४)। इसके 'नग्नहू' एवं 'नगृहू' नामांतर भी प्राप्त हैं (मत्स्य. १४५.९५–९९; ब्रह्मांड. १.३२.१०१–१०३)।

नचक्षु—(सो.) भविष्यमत में मयपाल का शिष्य।

नचिकेतस्—ऋग्वेदकालीन सुविख्यात ऋषिकुमार। यह वाजश्रवस् का पुत्र एवं एक 'गोतम' था (तै. ब्रा. ३.११.८)। कठोपनिषद में इसे वाजश्रवस् के साथ उद्दालक का पुत्र भी कहा गया है (क. उ. १.१; १. ११)। उद्दालक के पुत्र होने के कारण, एवं 'आरुणि उद्दालकि' दोनों एक ही थे, ऐसा निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. अनु. ७१)। किंतु यह मत सर्वथा असंभव, एवं प्रसिद्ध आरुणि से नचिकेतस् का संबंध लगाने के उद्देश्य से प्रसृत किया गया प्रतीत होता है।

ऋग्वेद के सुविख्यात 'यमसूक्त' में, 'कुमार' नाम से संबोधित किया गया ऋषिकुमार नचिकेतस् ही है ऐसा सायणाचार्य का कहना है (ऋ. १०.१३५)। वाजश्रवस् का पुत्र नचिकेतस् अपने पिता की आज्ञा के अनुसार यम के पास गया, एवं यम को प्रसन्न कर वापस आया। यह कथा नचिकेतस् के नाम का स्पष्ट निर्देश न करते हुए, उस सूक्त में दी गयी है।

नचिकेतस् का यह आख्यान विस्तृत रूप से तैत्तिरीय ब्राह्मण में दिया गया है। नचिकेतस् का पिता उद्दालक 'विश्वजित्' नामक यज्ञ कर रहा था। नचिकेतस् उम्र से छोटा हो कर भी, बड़ा ही परिणतप्रज्ञ एवं श्रद्धावंत था।

अपने पिता का यज्ञ यथासांग संपन्न होने में, यह हर तरह की सहायता करता था।

'विश्वजित्' यज्ञ में, याजक को सर्वस्व का दान करना पड़ता है। नचिकेत ने सोचा, 'यदि सर्वस्व दान करना है, तो मेरे पिता को मेरा दान भी कर देना चाहिये उसके सर्वस्व में मेरा प्रमुख रूप से अंतर्भाव होता है'। अपनी इस शंका का समाधान पूछने के लिये यह पिता के पास गया। इसका पिता अनेक प्रकार के दान दे रहा था। किंतु अच्छी गायों के बदले दूध न देनेवाली दुबली गायें वह दान में दे रहा था। इस पापकर्म के कारण, यज्ञ यथासांग न हो कर पिता को दोष लगेगा एवं उसका प्रायश्चित्त पिता के साथ मुझे भी भुगतना पडेगा, इस चिंता से नचिकेतस् शोकाकुल हो गया। अपने पिता को ऐसे गिरे हुए दान से परावृत्त करने की दृष्टि से नचिकेतस् ने पूछा, 'कस्मै मां दास्यसि? मुझे किसको दोगे?' इसे बालक समझ कर पिता ने इसका प्रश्न का कोई भी जवाब नहीं दिया। फिर भी नचिकेतस् ने उसका पीछा नहीं छोडा। तब उद्दालक ने डाँट कर इसे कहा, मैं तुम्हें मृत्यु को दे देना चाहता हूँ'।

उसी समय आकाशवाणी हुई, "हे गौतमकुमार नचिकेतस्, तुम्हारे पिता का उद्देश्य है कि, तुम यमगृह जाओ। यम घर में न हो एवं प्रवास के लिये गया हो, उसी दिन तुम यमगृह में जाना। यम घर में न होने के कारण, उसकी पत्नी एवं पुत्र तुम्हें भोजन के लिये प्रार्थना करेंगे। किंतु उस भोजन का तुम स्वीकार नहीं करना। वापस आने पर यम तुम्हारी पूछताछ करेगा। फिर उसे कहना, 'तीन रात्रि हो गई हैं'। फिर यम तुम्हें पूछेगा, 'पहले दिन क्या खाया?' फिर तुम उसे जबाब देना, 'तुम्हारी प्रजा खाई'। इससे यम को पता चलेगा कि, अतिथि यदि एक दिन अपने घर में भूखा रहा, तो प्रजा का क्षय होता है। दूसरे तथा तीसरे दिन के बारे में भी ऐसा ही प्रश्न पूछे जाने पर जवाब देना, 'दूसरे दिन तुम्हारे पशु, एवं तीसरे दिन तुम्हारा सुकृत खाया'। इससे यम को पत्ता चलेगा कि, अतिथि दूसरे तथा तीसरे दिन भूखा रहने पर घरसंसार के एवं पशु सुकृत की भी हानि होती हैं।"

आकाशवाणी के कथनानुसार नचिकेतस् यमगृह गया। यम के घर पहुँचने पर इसने यम के प्रश्नों को 'आकाशवाणी' ने कहे मुताबिक जबाब दिये। फिर यम ने सोचा, 'यह कोई बड़ा अधिकारी' बालक मालूम होता है। इसे मारना ठीक नहीं है। फिर यम ने आदर से नचिकेतस् सेकहा, 'भगवन्, मैं प्रसन्न हो गया हूँ। आप जो चाहे वह वर माँग लो।'

नचिकेतस् ने यम से निम्नलिखित तीन वर माँग लिये, १. जीवित वापस जा कर मैं अपने पिता से मिलूँ; २. मेरे द्वारा श्रौतस्मार्त कर्म अक्षय रहे; ३. मैं मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकूँ' इस तरह, 'ब्रह्मविद्या' एवं 'योगविधि' प्राप्त कर के नचिकेतस् घर वापस आया (तै. ब्रा. ३. ११. ८; क. उ. ६. १८)।

'कठोपनिषद' में दिये गये 'नचिकेतस् आख्यान' में नचिकेतस् की यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। नचिकेतस् के पिता ने क्रोधवश, इसे यम के यहाँ जाने के लिये कहा। अपने पिता की आज्ञा प्रमाण मान कर, नचिकेतस् यम के पास गया, एवं अपने प्रगाढ़ एवं वक्तृत्वपूर्ण भाषण के कारण, इसने यमधर्म को प्रसन्न किया। यम ने इसे तीन वर दिये। उनमें से द्वितीय वर के कारण, अग्नि का ज्ञान एवं उसके चयन की सिद्धि नचिकेतस् को प्राप्त हो गयी। यम ने इसे वर दिया था, 'तुम्हारे द्वारा चयन किया गया अग्नि, तुम्हारे ही नाम से प्रसिद्ध होगा' (एतमग्निं तवैव प्रवक्ष्यन्ति जनासः) (क. उ. १. १९)। इस वर के अनुसार, अग्नि के चयन की इसकी पद्धति 'नचिकेतचयन' नाम से प्रसिद्ध हो गयी।

'तैत्तिरीय ब्राह्मण' के 'नचिकेताख्यान' में दिया गया, आकाशवाणीद्वारा इसे हुए मार्गदर्शन का कथाभाग 'कठोपनिषद' में नही दिया गया है।

'नाचिकेत आख्यान' का यही कथाभाग 'वराह-पुराण' एवं 'महाभारत' में कुछ फर्क के साथ दिया गया है (वराह. १७०-१७६; म. अनु. ७१)। एक बार नाचिकेत का पिता उद्दालकि नदी पर स्नान करने के लिये गया। स्नान तथा वेदाध्ययन में मग्न होने के कारण, नदी तट से समिधा, दर्भ, कलश, भोजन-सामग्री आदि लाने का स्मरण उसे नहीं रहा। तब उसने अपने पुत्र नाचिकेत से वह सामग्री लाने के लिये कहा। पिता की आज्ञानुसार यह नदी के किनारे गया। किंतु इसके जाने के पहले ही, पिता द्वारा माँगी गयी सारी वस्तुएँ पानी में बह गईं थीं। उस कारण, यह पिता की कोई भी चीज वापस न ला सका। यह सारी दुर्घटना इसने पिता को बतायी। फिर श्रम तथा क्षुधा से व्याकुल उद्दालकि के मुख से, 'मरो' शब्द निकला। शाप के कारण,

नाचिकेत तत्काल मृत हो गया। पुत्रमृत्यु के कारण, उद्दालकि अत्यंत शोकाकुल हुआ, एवं उसी शोकमग्न स्थिति में वह दिन तथा रात्रि इसने बिताई। दूसरे दिन नाचिकेत यमगृह से वापस आया एवं उसने यम के द्वारा बताया गया 'गोदानमाहात्म्य' अपने पिता को बताया। 'गोदानमाहात्म्य' बताने के लिये, नाचिकेत की यह पुरानी कथा 'महाभारत' में भीष्म ने युधिष्ठिर को बतायी है। नचिकेतस् अंगिरस कुल में पैदा हुआ था ऐसा कई अभ्यासकों का मत है। इसे नाचिकेत एवं नचिकेत नामांतर भी प्राप्त थे।

नड़ नैषध—एक राजा। इसके विजयों के कारण, अपने शत्रुपक्षीयों को यह मृत्यु के देवता 'यम' के समान प्रतीत होता था (श. ब्रा. २.२.४.१–२)। 'शतपथ ब्राह्मण' में दक्षिण के यज्ञाग्नि से इसकी तुलना की गयी है। इस रूपकात्मक वर्णन का यथार्थ अर्थ क्या है, यह नहीं समझ पाता। संभवतः यह दक्षिण देश का कोई राजा होगा। उसी कारण, दक्षिण दिशा का स्वामी 'यम' से इसकी तुलना की गयी सी दिखती है।

नड़ एवं दमयंती का पति नल एक ही होंगे। 'डलयोर भेदः' इस नियमानुसार, 'नड़' का बाद में प्रचार में आया रूप नल होगा। नल राजा निषध देश का सम्राट था, एवं इसी लिये 'नैषध' नाम से प्रसिद्ध था, यह बात यहाँ ध्यान में रखना जरूरी है। इसके नाम का 'नड़ नैषिध' पाठभेद भी कई जगह प्राप्त है।

नड़ायन—भृगुकुल का एक गोत्रकार। इसके नाम का नवप्रभ पाठभेद भी प्राप्त है।

नड्वला—वीरण प्रजापति की कन्या, तथा चक्षुर्मनु की पत्नी (भा. ४.१३.१६)।

नदाकि—जिह्वक का नामांतर।

नदिवर्मन्—(ऐति.) परिहरवंशीय शांतिवर्मा का पुत्र (भवि. प्रति. ४.४)।

नदीज—एक प्राचीन राजा। पांडवों की ओर से इसे 'रणनिमंत्रण' भेजा गया था (म. उ. ४.२०)।

नंद—गोकुल एवं नंदगाँव में रहनेवाला गोपों का राजा एवं कृष्ण का पालक पिता (म. स. परि. १.२१. ७४५–७४७)। इसकी पत्नी यशोदा। यह द्रोणनामक वसु के अंश से उत्पन्न हुआ था (भा. १०.८.४८; पद्म. सृ. १३; ब्र. १३)। वसुदेव ने अपने नवजात बालक श्रीहरि को इसके घर में छिपा दिया था (भा. १०.३. ५१)। एक बार यह गुप्त रूप से वसुदेव से मिला भी था (भा. १०.४६.२७-३०)।

श्रीकृष्ण बहुत वर्षों तक नंद गोप के घर रहा था। एक बार यह पानी में डूब रहा था। किंतु कृष्ण ने इसे बाहर निकाला (भा. १०.२८.२–९)। यह स्यमन्त–पंचक क्षेत्र में कृष्ण से मिलने गया था (भा. १०.८२. ३१)। यह हरसाल 'इंद्रयाग' नामक इंद्र का उत्सव करता था। किंतु वह उत्सव बंद कर, कृष्ण ने इससे कार्तिक शुद्ध प्रतिपदा के दिन 'अन्नकूट' का उत्सव प्रारंभ किया (भवि. प्रति. ४.१९.६१)। यह जब कृष्ण विरह से व्याकुल हुआ। तब उद्धव ने इसका सांत्वन किया (भा. १०.४६.२७–३०)।

नंदगोप के कुल में यशोदा के गर्भ से एक कन्या उत्पन्न हुई थी। यह साक्षात् जगज्जननी दुर्गा का स्वरूप मानी जाती हैं। युधिष्ठिर ने विराटनगर जाते समय, उस देवी का चिंतन किया, एवं देवी ने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर उसे वर दिया (म. वि. परि. १.४)। अर्जुन ने भी नंदगोप के कुल में उत्पन्न इस देवी का स्तवन किया, एवं उसे विजयसूचक आशीर्वाद प्राप्त हुआ (म. भी. २३)।

यह मधुपुरी उर्फ मथुरा के आसपास के महावन में रहनेवाले आभीर भानु नामक गोपों का मुखिया था। आभीर भाबु–चन्द्रसुरभि–सुश्रवस्–कालमेदु–चित्रसेन–नंद इस क्रम से इसकी वंशावलि महाभारत में दी गयी है। इसके पिता चित्रसेन को कुल नौ पुत्र थेः—१. सुनंद, २. उपनंद, ३. महानंद, ४. नंदन. ५. कुलनंद, ६. बंधुनंद, ७. केलिनंद, ८. प्राणनंद, ९. नंद (आदि. ११)।

२. एक विष्णुभक्त राजा। इसकी भक्ति से संतुष्ट हो कर विष्णु ने इसे एक सुंदर विमान दिया था। एक बार इसे मानससरोवर के सुवर्णकमलों का अपहार करने की दुर्बुद्धि हुई। तत्काल इसका विमान नष्ट हो कर इसके सारे शरीर पर कोढ़ हुआ। पश्चात् वसिष्ठ की सलाह के अनुसार, इसने प्रभासक्षेत्र में तप किया। उस तप के पुण्यसंचय के कारण यह मुक्त हो गया (स्कन्द. ७.१.२५६)।

३. वसुदेव को मदिरा से उत्पन्न पुत्र (भा. ९. २४. ८)।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. क. ३५.१७)।

५. (नंद. भविष्य.) मगध देश का राजा। महानंदिन् के समय, शिशुनाग वंश का अंत हो कर शूद्रापुत्र नंद

गद्दी पर बैठा। इसने महानंदी का वध कर राज्य छीना था। इसके वंश में सुमाल्यादि आठ पुरुषों ने सौ वर्षोंतक राज्य किया। कौटिल्य ने नंद के आठ राजपुत्रों का वध कर, चन्द्रगुप्त को गद्दी पर बैठाया। (भा. १२.१)

कई पुराणों में, 'सुमाल्या' दि के बदले 'सुकल्पा' दि पाठ प्राप्त है (विष्णु. ४.२२-२४; वायु. २.३७; ब्रह्मांड. ३.७४)। नंद के जीवितकाल में ही कौटिल्य का विरोध प्रारंभ हो कर, नंद तथा उसके आठ पुत्र कौटिल्य के षड्यंत्र के कारण मारे गये, तथा नवनंदों का नाश हो कर चन्द्रगुप्त गद्दी पर बैठा (मत्स्य. २७२)।

कलि के तीन हजार तीन सौ दस वर्ष समाप्त होने पर, नंदराज्य का प्रारंभ हुआ था (स्कन्द. १.२.४०)।

६. एक पिशाच। इसके पिशाच योनि में जाने पर मुनिशर्मा नामक ब्राह्मण ने इसका उद्धार किया (पद्म. पा. ९४)।

७. विष्णु का एक पार्षद (भा. ४.१२.२२)।

८. एक कश्यपवंशी नाग (म. उ. १०१.१२)।

९. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६३)।

१०. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६४)।

नंदक—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र (म. भी. ६०. ६)। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था। भीम ने इसका वध किया।

२. वसुदेव को वृकदेवी से उत्पन्न पुत्र।

३. एक दुर्योधनपक्षीय योद्धा (म. भी. ६०.२१)।

४. एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.११)।

नंदन—(सो. क्रोष्टु.) वायु के मतानुसार मनुवश राजा का पुत्र।

२. हिरण्यकशिपु का पुत्र। यह श्वेतद्वीप में राज्य करता था। शंकर के वर के कारण, यह सबको अजित हो गया था। दस हजार वर्ष राज्य करने के बाद, कैलास में जा कर यह शिवगणों में से एक बन गया (शिव. उ. २)।

३. मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र।

४. अश्विनीकुमारों द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदो में से एक। दूसरे पार्षद का नाम वर्धन था (म. श. ४४.३३-३४)।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६०)।

नंदनोदरदुंदुभि—(सो. कुकुर.) नल राजा का नामांतर (नल ४. देखिये)।

नंदपाल—न्यूहवंशीय चन्द्रदेव राजा का पुत्र। इसका पुत्र कुंभपाल था (भवि. प्रति. ४.३)।

नंदभद्र—एक धार्मिक वैश्य। काफी वर्षों तक इसे संतति नहीं हुई। इसकी कपिलेश्वर पर अत्यंत भक्ति थी। वृद्धापकाल में इसे एक पुत्र हुआ, परंतु विवाह होते ही कुछ दिनो में वह भी मृत हो गया।

इससे वैराग्य की इच्छा उत्पन्न हो कर, यह अध्यात्मज्ञान संपादन करने का प्रयत्न करने लगा। कुछ दिनों के बाद, एक सात वर्ष का बालक इसे मिला। तथा उसने इसकी अध्यात्मज्ञान की लालसा तृप्त की। बाद में सूर्य तथा रुद्र की उपासना कर के यह स्वर्ग पहुँच गया (स्कन्द. १. २.४६)।

नंदवर्धन—मागधवंशीय उदापाश्व राजा का पुत्र। इसका पुत्र नंदसुत (भवि. प्रति. २.६)।

२. (प्रद्योत. भविष्य.) भागवत मतानुसार जनक का पुत्र। इसके नाम के लिये नंदिवर्धन तथा वर्तिवर्धन पाठभेद प्राप्त हैं।

नंदसुत—नंदवर्धन १. देखिये।

नंदा—धर्मप्रजापति के तीसरे पुत्र हर्ष की पत्नी (म. आ. ६०.३२)। भांडारकर संहिता में, इसके नाम के लिये 'नंदी' पाठभेद उपलब्ध है।

२. पाताल के कपोत नाग की कन्या (मार्क. ६८.१९)।

नंदायनीय—वायुमत में व्यास की ऋक्शिष्य-परंपरा के बाष्कलि भारद्वाज का पुत्र तथा शिष्य।

नंदि—धर्म का पौत्र तथा स्वर्ग का पुत्र (भा. ६.६. ६)।

२. उत्कल देश का राजा। इसने सुरथ के कोला नामक नगरी को घेरा डाला तथा सुरथ को जीता। किंतु अन्त में सुरथ ने इसका पराजय किया। पराजित हो कर भागते समय, पुष्पभद्रा नदी तट पर इसकी मुलाकात एक वैश्य से हुई। उसे ले कर यह मेधसाश्रम गया, एवं उससे इसे मंत्रोपदेश प्राप्त हुआ (ब्रह्मवै. २. ६२; दे. भा. ५. ३२-३५)।

३. एक देवगंधर्व। अर्जुन के जन्मकालिक उत्सव में यह शामिल हुआ था (म. आ. १४४.४५)।

नंदिन्—भगवान शिव का दिव्य पार्षद एवं वाहन। यह शालंकायनपुत्र शिलाद ऋषि का पुत्र था। इसे शैलादि पैतृक नाम प्राप्त है। निपुत्रिक होने के कारण, इसके पिता शिलाद ने पुत्रप्राप्ति के लिये तपस्या की। उस तपस्या से प्रसन्न हो कर शंकर ने उसे पुत्रप्राप्ति का वर

दिया। उस वर के अनुसार, यज्ञ के लिये जमीन जोतते समय, शिलाद को तीन आँखोंवाला, चार हाथोंवाला, एवं जटामुकुटधारी शंकररूप बालक प्राप्त हुआ। यही नंदिन् है।

शिलाद इसे घर ले आया। तत्काल इसका रूप बदल कर, यह अन्य मनुष्यों के समान हुआ। नंदी आठ दस वर्षों का होने पर, मित्रावरुणों द्वारा इसे पता चला, 'यह अल्पायु है'। तब अपमृत्यु से बचने के लिये, इसने शंकर की आराधना की एवं अमरत्व प्राप्त किया। इसके तप से प्रसन्न हो कर शंकर ने इसे पुत्र माना, तथा अपने पार्षद गणों में इसे स्थान दिया।

नंदिन् ने मरुतों की कन्या सुयशा से विवाह किया था (शिव. पा. ७)। दक्षयज्ञ विध्वंस के प्रसंग में, इसने भग नामक ऋत्विज को बद्ध किया था (भा. ४. ५. १७)। दक्ष को भी तत्त्वविमुख होने का शाप दिया था (भा. ४. २. २१)। इसने रावण को भी शाप दिया था (वा. रा. उ. ५०)। अपने पितामह शालंकायन से इसने स्कन्दपुराण का 'अरुणाचलमाहात्म्य' सुना, तथा वह मार्कंडेय ऋषि को बताया (स्कन्द. १. ३. २. १६)। राम के अश्वमेध प्रसंग में इसका हनुमान से युद्ध हुआ था (पद्म. पा. ४३)।

नंदिन् ऋषिपुत्र था, एवं स्वयं भी एक ऋषि ही था। फिर भी जनमानस में, शिव का वाहन नंदी 'बैल' माना जाता है। इस जनरीति का प्रारंभ कैसे हुआ, यह कहना मुष्किल है। शिव के पार्षद, नृत्यके समय, अश्व, बैल आदि प्राणियों के वेष परिधान करते थे। उसी कारण, उस प्राणियों से उनका साधर्म्य प्रस्थापित किया गया होगा।

२. इन्द्रग्राम में रहनेवाला एक ब्राह्मण। महाकाल नामक किरात के भक्तियोग से इसे शिवदर्शन का लाभ हुआ, एवं इसका उद्धार हुआ। पश्चात् यह शिवगणों में से एक बन गया (पद्म. उ. १४४)। कई ग्रंथों में इसे वैश्य कहा गया है (स्कन्द. १. १. ५)।

३. कश्यप को मुनी नामक स्त्री से उत्पन्नपुत्र।

नंदियशस्—(नाग. भविष्य.) एक राजा। वायु के मत में यह मथुरा नगरी के मधुनंद राजा का, तथा ब्रह्मांडमत में यह वैदेश नगरी के भूतिनंद का पुत्र था।

नंदिनी—कश्यप के द्वारा सुरभि के गर्भ से उत्पन्न एक गौ (म. आ. ९३.८)। समस्त जगत् पर अनुग्रह करने के लिये इस गौ का अवतार हुआ था, एवं पूजको की कामनाएँ पूरी करने के कारण इसे 'कामधेनु' कहते थे। जो मनुष्य इसका दूध पीता था, वह दस हजार वर्षों तक युवावस्था में जीवित रहता था (म. आ. ९३. १९)।

यह वरुणपुत्र वसिष्ठ की 'होमधेनु' थी (म. आ. ९३.९)। उसके तापसवन में यह चरती रहती थी। एकबार, द्यु नामक वसु ने इसका अपहरण किया। इस कारण वसिष्ठ ने वसुओं को शाप दिया (म. आ. ९३.४४ द्यु देखिये)

इसके प्राप्ति के लिये, विश्वामित्र ने वसिष्ठ से याचना की थी। वसिष्ठ ने उसका इन्कार करने पर, विश्वामित्र ने इसका हरण किया (म. आ. १६५.२१)। पश्चात् अपने विभिन्न अंगों से हूण, यवन, किरात आदि की सृष्टि निर्माण कर, नंदिनी ने विश्वामित्र के सेना को पराजित किया एवं उस सेना को नष्ट कर दिया (म. श. ३९.२०–२१)।

नंदिवर्धन—(सू. निमि.) एक राजा। यह उदावसु का पुत्र था। इसका पुत्र सुकेतु जनक।

२. (प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा। भागवत के मतानुसार यह राजक का, मत्स्य के मतानुसार सूर्यक का तथा ब्रह्मांड के मतानुसार अजक का पुत्र था। मत्स्य मतानुसार इसने तीस वर्ष तथा ब्रह्मांडमतानुसार बीस वर्ष राज्य किया।

३. (शिशु. भविष्य.) एक राजा। भागवतमत में यह अजय का, विष्णुमत में उदयन का, वायु तथा ब्रह्मांड के मत में उदयिन् का तथा मत्स्यमत में उदासीन का पुत्र था। इसने चालीस वर्षों तक राज्य किया।

नंदिवेग—एक क्षत्रियवंश, जिसमें 'शम' नामक कुलांगार नरेश पैदा हुआ था (म. उ. ७२; १७)।

नंदिषेण—ब्रह्माजी के द्वारा स्कंद को दिये चार पार्षदों में से एक। शेष तीन पार्षदों के नामः– लोहिताक्ष, घंटाकर्ण, कुमुदमालिन् (म. श. ४४. २२)।

नंदीश—वास्तुशास्त्र पर लिखनेवाला एक ग्रंथकार (मत्स्य. २५२)।

नंदीश्वर—भगवान् शिव का एक दिव्य पार्षद। नन्दिन् इसीका ही नामांतर है (नन्दिन् १. देखिये)। यह कुबेर सभा में उपस्थित हुए शिव का, वाहन था (म. स. परि. १.४.९)।

नप्तृ—एक सनातन विश्वदेव (म. अनु. ९१. ३७. कुं.)।

नभ—स्वारोचिष मनु का पुत्र।

२. उत्तम मनु का पुत्र।

३. चाक्षुषमनु का पुत्र।

४. वैवस्वतमनु का पुत्र।

५. काश्यपकुल का एक गोत्रकार।

६. भार्गवकुल का एक मंत्रकार।

७. (सू. इ.) एक राजा। भागवतमत में यह निषध का, तथा वायु मतानुसार यह नल का पुत्र था। इसका पुत्र पुंडरीक।

नभःप्रभेदन वैरूप—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११२)।

नभग—वैवस्वत मनु का पुत्र। इसका पुत्र नाभाग (भा. ८.१३.२; ९.४.१)। भागवत में नाभाग के नाम पर दी गई कथा, शिवपुराण में इसके नाम पर दी गई है (शिव. शत. २९)। इसके नाम के लिये नभग, नाभाग, नाभागारिष्ट, नाभानेदिष्ट आदि पाठभेद प्राप्त है।

नभस्—(सू. इ.) एक राजा। विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मत में यह नल का पुत्र था (पद्म. सृ. ८)। भागवत तथा वायुपुराण में इसे नभ भी कहा है।

२. उत्तममनु का पुत्र।

३. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

४. (सो. ऋक्ष.) एक राजा। वायुमत में यह ऊर्ज का पुत्र था (संभव देखिये)।

नभस्य—स्वारोचिष मनु का पुत्र।

२. उत्तममनु का पुत्र।

नभस्वत्—मुर दैत्य का एक पुत्र। कृष्ण ने इसका वध किया था (भा. १०. ५९.१२)।

नभस्वती—(स्वा. उत्तान.) विजिताश्व राजा की पत्नी। इसका पुत्र हविर्धान (भा. ४.२४.५)।

नभाक—एक ऋषि (ऋ. ८.४०.४-५)। इसने तयार किये ऋचाओं के द्वारा, देवों ने वल के कब्जे में गये अपनी गायों को बचा लिया (ऐ. ब्रा. ६.२४)। ऋग्वेद अनुक्रमणी में इसके नाम का निर्देश 'नाभाक' नाम से किया गया है। 'नाभाक काण्व' के नाम पर भी ऋग्वेद में दो सूक्त हैं (ऋ. १०.३९; ४२)।

नभाग तथा **नभागदिष्ट**—नभग देखिये।

नभोग—ब्रह्म सावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

नभोद—एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३४)।

नमस्यु—(सो. पूरु.) भागवतमतानुसार प्रवीर राजा का पुत्र। इसका पुत्र चारुपद (मनस्यु देखिये)।

नमी साप्य—ऋग्वेद में निर्देश किया गया एक राजा (ऋ. ६.२०.६)।

'नमुचि' राक्षस के साथ इंद्र ने किये युद्ध में, इसने इंद्र को काफी मदद की थी (ऋ. १०.४८.९)। ऋग्वेद में कई जगह, इसका निर्देश केवल 'नमी' नाम से ही किया गया है (ऋ. १.५३.७)। सायण का कथन है कि, यह एक ऋषि था। परंतु पंचविंश ब्राह्मण के मतानुसार यह विदेह का राजा होगा (पं. ब्रा. २५.१०.१७; निमि देखिये)।

नमुचि—इंद्र का शत्रु एक राक्षस। समुद्र के 'फेन' (फेंस) के द्वारा इंद्र ने इसका वध किया। पौराणिक नृसिंह अवतार की कल्पना का मूल, इंद्र एवं नमुचि के युद्ध में ही है (ऋ. ८.१४.१३)। समुद्र के फेंस के द्वारा इसकी मृत्यु होने का कथाभाग, कुछ रूपकात्मक प्रतीत होता है। पं. सातवलेकरजी के मत में, यह समुद्र के फेंस से ठीक होनेवाला कोई रोग होगा।

महाभारत में, नमुचि को कश्यप एवं दनु का पुत्र कहा गया है (म. आ. ५९.२२)। हिरण्यकशिपु ने देवों पर आक्रमण किया एवं उनका पराभव कर दिया। इस युद्ध में, नमुचि हिरण्यकशिपु राक्षस का सेनापति था (म. स. परि. १. क्र. २१; पंक्ति. ३५८)। यह वृत्र का अनुयायी था (भा. ६.१०.१९)। स्वर्भानुकन्या सुप्रभा इसकी भार्या थी (भा. ६.६.३२)।

एक बार भयभीत हो कर, यह सूर्यकिरण में प्रविष्ट हुआ तथा इसने इन्द्र से मैत्री की। उस समय इंद्र ने इससे बहुत सारे विषयों पर चर्चा की। संकट के कारण उत्पन्न होनेवाला दुख भगवत्-चिंतन से किस प्रकार दूर हो जाता है, इस विषय पर दोनों का संभाषण हुआ (म. शां. २१९)। फिर इसके वाक्पटुत्व एवं विद्वत्ता के कारण, प्रसन्न हो कर इंद्र ने इसे वरप्रदान किया, 'तुम आर्द्र अथवा सूखें किसी भी शस्त्र से मृत न होगे'। परंतु बाद में इंद्र ने सागरजल के फेन से इसका शिरच्छेद किया, तब उसके केवल सिर ने ही इंद्र का पीछा किया (म. श. ४२.३२)। पश्चात् ब्रह्मदेव के कहने पर, नमुचि ने जिस तीर्थ में गुप्त रूप से स्नान किया था, उसी 'अरुणासंगम' नामक तीर्थ में इंद्र ने स्नान किया। फिर इंद्र के पीछे पीछे नमुचि का सिर भी उस तीर्थ में आ गिरा। उस स्नान के कारण, नमुचि को समस्तक सद्गति मिली, एवं इच्छित अक्षय लोक उसे प्राप्त हुआ (म. शं. ४२.२९-३२)। वामनावतार में, वामन-

स्वरूप विष्णु ने बलि के साथ नमुचि को भी पाताल में गाड़ रखा था (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति. ३५८-३५९)।

२. हिरण्याक्ष का सेनापति। इंद्र को मूर्च्छित कर इसने ऐरावत को नीचे गिराया, तथा माया से अनेक जंतु उत्पन्न किये। वे जंतु विष्णु ने अपने चक्र से नष्ट किये। पश्चात् इंद्र ने वज्र से इसका वध किया (पद्म. सृ. ६९)।

३. हिरण्याक्ष का एक और सेनापति। इंद्र पर इसने पाँच बाण छोड़े। परंतु इंद्र ने उन्हें बीच में ही तोड़ दिया। बाद में इसने अपनी माया से अंधकार उत्पन्न किया। परंतु अपने एक अस्त्र के द्वारा, इंद्र ने उस अंधकार को नष्ट किया। बाद में इंद्र के समीप आ कर, इसने उसके ऐरावत हाथी के दाँत पकड़े एवं इंद्र को नीचे गिरा दिया। परंतु उस काम में उसे मग्न देख कर, इंद्र ने अपने खड्ग से इसका सिर काट दिया (पद्म. सृ. ६९)।

४. तेरह सैंहिकेयों में से एक। विप्रचित्ति एवं सिंहिका का यह पुत्र था। परशुराम ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ६७)।

नय— रौच्य मनु का पुत्र।

२. तुषित साध्य देवों में से एक।

नर—'नरनारायण' नामक भगवत्स्वरूप देवताद्वयों में से एक। भगवान् नारायण इसका भाई था। नारायण एवं दोनों भगवान् वासुदेव के अवतार तथा धर्म के पुत्र थे। पांडुपुत्र अर्जुन इसीका अवतार बताया गया है (म. आ. .१; नरनारायण देखिये)।

दैत्यों को अमृत से वंचित करने के कारण हुए देवासुर-संग्राम में, नर ने अपने दिव्य धनुष से असुरों से संग्राम किया था। उस महाभयंकर संग्राम में इसने पंखयुक्त बाणों द्वारा पर्वत शिखरों को विदीर्ण किया, एवं समस्त आकाश-मार्ग को आच्छादित कर दिया। इस संग्राम के पश्चात्, देवों को प्राप्त अमृत की निधि, उन्होंने किरीटधारी नर के पास रक्षा के लिये सौंप दी।

दक्षयज्ञ के विध्वंस के लिये, शिव ने प्रज्वलित त्रिशूल चलाया था। यज्ञ का नाश करने के पश्चात्, वह नर के भाई नारायण की छाती में आ लगा। उस कारण शिव एवं नरनारायणों के दरमियान युद्ध शुरू हुआ। उस युद्ध में नर ने शिव पर सींक चलायी। परशु बन कर वह शिव के शरीर पर चली। किंतु शिव ने उसे खंडित कर दिया। अतः नर को 'खंडपरशु' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. ३३०.४९)।

पश्चात् नर अपने बंधु नारायण के समवेत बदरिकाश्रम में तपस्या करने लगे। उस तपस्या के कारण, यह महान् तपस्वी बन गये (म. व. १२२४*) दंभोद्भव नामक असुर सम्राट से इसका एवं इसके भाई नारायण का महान् युद्ध हुआ था। उस युद्ध में दंभोद्भव का पराजय हुआ। पश्चात् पराजित हुए दंभोद्भव को इसने उपदेश प्रदान किया (म. उ. ९४)।

द्रौपदी वस्त्रहरण के समय, द्रौपदी ने अपनी लाज़ बचाने के लिये भगवान् श्रीकृष्ण के साथ, नर को भी पुकारा था (म. स. ६१.५४२*)।

२. एक गंधर्व। यह कुबेर की सभा में रह कर, उसकी उपासना करता था (म. स. १०.१४)।

३. एक प्राचीन नरेश। इसने जीवन में कभी मांस नहीं खाया था (म. अनु. ११५.६४)।

३. तामस मनु का पुत्र।

४. (सू. दिष्ट.) सुधृति राजा का पुत्र।

५. (सो. अनु.) विष्णु के मत में उशीनर राजा का पुत्र। इसके नाम के लिये 'नववत्' पाठभेद उपलब्ध है।

६. एक वीरपुरुष। शंकर ने ब्रह्मदेव का पंचम मस्तक तोड़ दिया। फिर शंकर को सजा देने के लिये ब्रह्मदेव ने अपने पसीने से एक उग्र पुरुष निर्माण किया। उसने शंकर को अत्यंत त्रस्त किया। फिर शंकर ने स्वरक्षणार्थ विष्णु की प्रार्थना की। विष्णु ने अपनी अंगुलि काट कर रक्त से एक पुरुष निर्माण किया। उसी का नाम नर है। ब्रह्माजी के पसीने से निर्माण हुए उग्र पुरुष का वध कर, इसने शंकर को निर्भय बना दिया (पद्म. सृ. १४; भवि. ब्राह्म. २३)।

७. तुषित साध्य देवों में से एक।

८. (स्वा. नाभि.) विष्णुमत में गय का पुत्र।

९. (सो. पूरु.) भागवतमत में मन्युपुत्र। विष्णु, वायु तथा मत्स्यमत में भुवन्मन्यु पुत्र है।

नर भारद्वाज—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.३५.१६)। भरद्वाज के पाँच पुत्रों में से एक। भरत ने भरद्वाज को दत्तक लेने के कारण, इसे बृहस्पति तथा भरत नामक दो दादा थे (ऋग्वेद वेदार्थदीपिका ६.५२)।

नरक—एक दानव। यह कश्यप तथा दनु का पुत्र था (म. आ. ५९.२८)। इंद्र ने इसे परास्त किया था।

२. तेरह सैंहिकेयों में से एक। यह विप्रचिति दानव तथा दितिकन्या सिंहिका का पुत्र था।

३. एक असुर, एवं प्राग्ज्योतिषपुर का राजा। पृथ्वी का पुत्र (भूमिपुत्र) होने के कारण, इसे भौम नाम भी प्राप्त था। इसकी माता भूदेवी ने विष्णु को प्रसन्न कर, इसके लिये 'वैष्णवास्त्र' प्राप्त किया था। उसी अस्त्र के कारण, नरकासुर बलाढ्य एवं अवध्य बना था। अपनी मृत्यु के पश्चात्, यही अस्त्र इसने अपने पुत्र भगदत्त को प्रदान किया (म. द्रो. २८)।

नरक का राज्य नील समुद्र के किनारें था। इसकी राजधानी प्राग्ज्योतिषपुर अथवा मूर्तिलिंग नगर में थी। इसके पाँच राज्यपाल थेः-- हयग्रीव, निशुंभ, पंचजन, विरुपाक्ष एवं मुर (म. स. परि. १क्र. २१ पंक्ति. १००६)। पृथ्वी भर की सुंदर स्त्रियाँ, उत्तम रत्न एवं विविध वस्त्र आदि का हरण कर, नरक अपने नगर में रख देता था। किंतु उन में से किसी भी चीज का यह स्वयं उपभोग नहीं लेता था।

गंधर्व, देवता, एवं मनुष्यो की सोलह हजार एक सौ कन्याएँ, एवं अप्सराओं के समुदाय में से सात अप्सराओं का नरक ने हरण किया था। त्वष्ट्रा की चौदह वर्ष की कन्या कशेरु का, उसे मुर्च्छित कर नरक ने अपहरण किया था। उस समय इसने हाथी का मायावी रूप धारण किया था (म. स. परि. १क्र. २१पंक्ति. ९३८-९४०)। इंद्र का ऐरावत हाथी एवं उच्चैःश्रवा नामक अश्व का भी इसने हरण किया था। देवमाता अदिति के कुंडलों का भी नरक ने अपहरण किया था।

नरक ने पृथ्वी से अपहरण किया सारा धन, एवं स्त्रियाएँ अलका नगरी के पास मणिपर्वत पर 'औदका' नामक स्थान में रखी हुई थी। मुर के दस पुत्र एवं अन्य प्रधान राक्षस, उस अंतःपुर की रक्षा करते थे। इसके राज्य की सीमा पर, मुर दैत्य के बनाये हुएँ छः हजार पाश लगाएँ गये थे। उन पाशों के किनारों के भागों में छुरे लगाएँ हुए थे। इस के बाद बड़े पर्वतों के चट्टानों के ढेर से एक बाड़ लगाई गयी थी। इस ढेर का रक्षक निशुंभ था। औदका के अंतर्गत लोहित गंगा नदी के बीच विरूपाक्ष एवं पंचजन ये राक्षस उस नगरी के रक्षक थे। (म. स. १.२१.९५३)।

नरक का वर्तन हमेशा ही देव तथा ऋषिओं के खिलाफ ही रहता था। स्वयं श्रीकृष्ण का भी इसने अपमान किया था। एक बार सारे यादव दाशार्ही सभा में बैठे हुएँ थे। उस समय समस्त देवमंडल को साथ ले कर इंद्र वहाँ आया। उस ने कृष्ण से पापी नरकासुर का वध करने की प्रार्थना की। श्रीकृष्ण ने भी नरक का वध करने की प्रतिज्ञा की।

पश्चात् सत्यभामा एवं इंद्र को साथ ले कर तथा गरुड पर आरुढ हो कर, श्रीकृष्ण प्राग्ज्योतिषपुर राज्य के सीमा पर पहुँच गया। उस राज्य की सीमा पर मुर दैत्य की चतुरंगसेना खड़ी थी। उस सेना के पीछे मुर दैत्य के बनाये हुएँ छः हजार तीक्ष्ण पाश थे। श्रीकृष्ण ने उन पाशों को काट कर, एवं मुर को मार कर राज्य की सीमा में प्रवेश किया। पश्चात् पर्वतों के चट्टानों के घेरे के रक्षक, निशुंभ पर श्रीकृष्ण ने हमला किया। इस युद्ध में निशुंभ, हयग्रीव आदि आठ लाख दानवों का वध कर श्रीकृष्ण आगे बढ़ा। पश्चात् औदका के अंतर्गत विरुपाक्ष एवं पंचजन नाम से प्रसिद्ध पाँच भयंकर राक्षसों से श्रीकृष्ण का युद्ध हुआ। उनको मार कर श्रीकृष्ण ने प्राग्ज्योतिषपुर नगर में प्रवेश किया।

प्राग्ज्योतिषपूर नगरी में, श्रीकृष्ण को दैत्यों के साथ बिकट युद्ध करना पड़ा। उस युद्ध में लक्षावधि दानवों को मार कर, श्रीकृष्ण पाताल गुफा में गया। वहाँ नरकासुर रहता था। वहाँ कुछ देर युद्ध करने के बाद, श्रीकृष्ण ने चक्र से नरकासुर का मस्तक काट दिया (म. स. परि. १क्र. २१ पंक्ति. ९९५-११५५)। इसका वध करने के पहले, श्रीकृष्ण ने इसे ब्रह्मद्रोही, लोककंटक एवं नराधम कह कर पुकारा (म. स. परि. १क्र. २१ पंक्ति. १०३५)।

नरकासुर एवं श्रीकृष्ण कें युद्ध की कथा हरिवंश में कुछ अलग ढंग से दी गयी हैं। पंचजन दैत्य का वध करने के पश्चात्, श्रीकृष्ण ने प्राग्ज्योतिषपुर नगरी पर हमला किया।

नरकासुर से युद्ध शुरु करने के पहले श्रीकृष्ण ने पांचजन्य शंख फूँका। उस शंख की आवाज़ सुन कर नरक अत्यंत क्रोधित हुआ, एवं अपने रथ में बैठ कर युद्ध के लिये बाहर चला आया। नरक का रथ अत्यंत विस्तृत, मौल्यवान एवं अजस्त्र था। इसके रथ को हजार घोडे जोते गये थे। इस प्रकार सुसज्ज हो कर, नरकासुर युद्धभूमि में आया, एवं श्रीकृष्ण से उसका तुमुल युद्ध हुआ। आखिर श्रीकृष्ण ने सुदर्शन चक्र से उसका सिर काट लिया। फिर नरकासुर की माता ने, श्रीकृष्ण के पास आ कर, अदिति के कुंडल एवं प्राग्ज्योतिषपुर का राज्य उसे अर्पण कर दिया (ह. वं. २.६३; भा. १०.५९)। पश्चात्

श्रीकृष्ण ने नरकासुर के महल में प्रवेश कर बंदीगृह में रखी गयी सोलह हजार एक सौ स्त्रियों की मुक्तता की (पद्म. उ. २८८)। उन स्त्रियों को एवं काफी संपत्ति ले कर श्रीकृष्ण द्वारका लौट आया (भा. १०.५९)।

नरकासुर वध की कथा पद्मपुराण में भी दी गयी है। किंतु उस में 'नरकचतुर्दशी माहात्म्य' को अधिक महत्त्व दिया गया हैं।

नरकासुर ने तप तथा अध्ययन कर, तपःसिद्धि प्राप्त की थी। फिर इन्द्र को इससे भीति उत्पन्न हुई, एवं उसने नरकासुर का वध करने की प्रार्थना कृष्ण से की। पश्चात् श्रीकृष्ण ने इस तपःसिद्ध नरकासुर को हस्ततल से प्रहार कर के इसका वध किया। यह मरणोन्मुख हो कर भूमि पर गिरा तब इसने कृष्ण की स्तुति की। कृष्ण ने इसे वर माँगने के लिये कहा। इसने वर माँगा 'मेरे मृत्युदिन के तिथि को, जो सूर्योदय के पहले मंगलस्नान करेंगे, उन्हें नरक की पीड़ा न हो'। यह कार्तिक वद्य चतुर्दशी को मृत हुआ। इसलिये उस दिन को 'नरक चतुर्दशी' कहने की प्रथात शुरु हुई। उस दिन किया प्रातःस्नान पुण्यप्रद मानने की जनरीति प्रचलित हुई (पद्म. उ. ७६.६७)।

लोमश ऋषि के साथ पांडव तीर्थाटन के लिये गये थे। अलकनंदा नदी के पास जाने पर, शुभ्र पर्वत के समान प्रतीत होनेवाला शिखर लोमश ने उन्हें दिखाया। वे नरकासुर की अस्थियाँ थी (म. व. परि. १. क्र. १६. पंक्ति. २८-३१)। वरुण सभा में नरकासुर को सम्माननीय स्थान प्राप्त हुआ था (म. स. ९.१२)।

नरकासुर के वध के बाद उसकी माता के कथनानुसार, कृष्ण ने इसके पुत्र भगदत्त को अभयदान दिया। उस पर वरदहस्त रखा तथा उसे राज्य दिया (भा. १०.५९)।

नरकासुर की कथा कालिकापुराण में निम्नलिखित ढंग से दी गयी है। त्रेतायुग के उत्तरार्ध में यह वराहरूपी विष्णु को भूमि के द्वारा उत्पन्न हुआ। विदेह देश के राजा जनक ने सोलह वर्षों तक इसका पालन किया। प्राग्ज्योतिषपुर के किरातों से युद्ध कर के, इसने उनका नाश किया। बाद में राज्यश्री के कारण मदोन्मत्त होने पर, द्वापार युग में कृष्ण ने इसका नाश किया (कालि. ३९-४०)।

नरनारायण—एक भगवत्स्वरूप देवताद्वय। स्वायंभुव मन्वन्तर के सत्ययुग में भगवान् वासुदेव के चार अवतार धर्म के पुत्र के रूप में प्रगट हुएँ (म. शां. ३३४.९-१२) उनके नाम क्रमशः नर, नारायण, हरि एवं कृष्ण थे। उनमें से नर एवं नारायण यह बंधुद्वय पहले देवतारूप में, पश्चात् ऋषिरूप में, एवं महाभारतकाल में अर्जुन एवं कृष्ण के रूप में, अपने पराक्रम एवं क्षात्रतेज के कारण अधिकतम सुविख्यात है (नर एवं नारायण देखिये)।

नरनारायण की उपासना काफी प्राचीन है। महाभारत काल में अर्जुन एवं कृष्ण को, नरनारायणों का अवतार समझने के कारण, नरनारायणों की उपासना को नया रूप प्राप्त हो गया। पाणिनि में नरनारायणों के भक्तिसंप्रदाय का निर्देश किया है।

देवी भागवत के मत में, नरनारायण चाक्षुष मन्वन्तर में उत्पन्न हुएँ थे (दे. भा. ४.१६)। ये धर्म को दक्ष-कन्या मूर्ति से उत्पन्न हुये थे (भा. २.७)। ये धर्म को कला नामक स्त्री से उत्पन्न हुए थे, ऐसा भी उल्लेख प्राप्त है। पूर्ण शांति प्राप्ति के लिये, इन दोनों ने दुर्घट तप किया था (भा. १.३)। नरनारायण के दुर्घट तप से भयभीत हो कर, इन्द्र ने इनके तपोभंग के लिये कुछ अप्सराएँ भेजी। यह देख कर नारायण शाप देने के लिये सिद्ध हो गया, परंतु नर ने उसका सांत्वन किया (दे. भा. ४.१६; भा. २.७; पद्म. सृ. २२)। पश्चात् नारायण ने अपनी जंघा से उर्वशी नामक अप्सरा निर्माण कर, वह इन्द्र को प्रदान की (भा. ११.४.७)। इन्द्र द्वारा भेजी गई अप्सराओं को अगले अवतार में विवाह करने का आश्वासन दे कर इसने विदा किया (दे. भा. ४.१६)। बाद में इन्होंने कृष्ण तथा अर्जुनरूप से अवतार लिया। कृष्णार्जुनों को दर्शन दे कर इन्होंने उपदेश भी दिया (दे. भा. ४.१७; भा. १०.८९.६०)। यह बदरि-काश्रम में रहते थे (भा. ११.४.७)। इन दोनों ने नारद से किये अनेक संवादों का निर्देश प्राप्त है (म. शां. ३२१-३२४)।

एक बार हिरण्यकश्यपु का पुत्र प्रह्लाद ससैन्य तीर्थयात्रा करते करते, नरनारायण के आश्रम के पास आया। उस स्थान पर उसने बाण, तरकस आदि युद्धोपयोगी चीजें देखीं। इससे उसे लगा कि, इस आश्रम के मुनि शांत न हो कर दांभिक होंगे। उसने इन्हें वैसा कहा भी। इससे गर्मागर्म बातें हो कर, युद्ध करने तक नौबत आ गयी। पश्चात् नरनारायण एवं प्रह्लाद का काफी दिनों तक तुमुल युद्ध हुआ। उसमें कोई भी नहीं हारा। इस युद्ध के कारण देवलोक एवं पृथ्वी लोक के सारे लोगों को तकलीफ होने

लगी। फिर विष्णु ने मध्यस्थ का काम किया तथा यह युद्ध रोक लिया (दे. भा. ४.४.९)।

नरवाहन--कुबेर का नाम।

नरसिंह--गौड देश का राजा। इसके सेनापति का नाम सरभभेरुंड था। वह गीतापाठ करने के कारण मुक्त हुआ (सरभभेरुंड देखिये)।

नरांतक--अंगद द्वारा मारा गया रावण का पुत्र (भा. ९.१.१८; वा. रा. यु. ६९)।

२. रावण के प्रहस्त नामक प्रधान का पुत्र। यह द्विविद वानर के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ५-८)।

३. रौद्रकेतु दैत्य का पुत्र। अपने दुष्कृत्यों से इसने सारे त्रैलोक्य को अत्यंत त्रस्त किया था। बाद में इसे पता चला कि, कश्यपगृहोत्पन्न विनायक के द्वारा अपनी मृत्यु होगी। तब विनायक के नाश के लिये इसने काफी प्रयत्न किये। परंतु वे निष्फल हो कर, विनायक ने इसका वध किया (गणेश. २.६१)।

४. कालनेमि राक्षस का पुत्र। हिरण्याक्ष के साथ हुए देवों के संग्राम में, जयंत ने इसका पराभव किया था (पद्म. सृ. ७५)।

नरामित्र--त्रिधामन् नामक शिवावतार का शिष्य।

नरि--(सो. कुकुर.) बहुपुत्र राजा का पुत्र। इसका पुत्र अभिजित् (पद्म. सृ. १३)।

नरिन्--वनरस नगर के तालन राजा का पुत्र (भवि. प्रति. ३.७)।

नरिष्यन्त--वैवस्वत मनु का पुत्र, एक राजा (म. आ. ७०-१३)। इसका पुत्र शुक (पद्म. सृ. ८)। उसके सिवा, इसे चित्रसेन, ऋक्ष, मीढ्वस, कूर्च, इंद्रसेन आदि पुत्र भी थे। पश्चात् इसीके कुल में अग्निवेश्यायन ब्राह्मण पैदा हुएँ (भा. ९.२.१९-२२)। 'शक' लोग भी इसीके पुत्र कहलाते थे (ब्रह्म. ७.२४)। इसका पूरा वंश 'भागवत' में दिया गया है (भा. ९. २. १९-२२)।

२. (सो. दिष्ट.) एक राजा। वायु एवं विष्णुमत में यह मरुत्त का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम बाभ्रवी इंद्रसेना, एवं पुत्र का नाम दम था (मार्क. १३०.२)। वानप्रस्थाश्रम में रहते हुए इस राजा का वपुष्मत् ने वध किया। इसकी मृत्यु के बाद, इसकी पत्नी इंद्रसेना सती गयी (मार्क. १३१)।

नरोत्तम--एक ब्राह्मण। यह अपने मातापितरों का अनादर करता था। फिर भी तीर्थयात्रादिकों के योग से काफी पुण्य संपादन किया था। इसके गीले वस्त्र आकाश में अधर सूखते थे।

एक बार एक बगुले को शाप देने के कारण, इसका काफी पुण्य तथा दैवी सामर्थ्य नष्ट हो गया। इसे काफी दुख हुआ। इतने में इसने आकाशवाणी सुनी, 'तुम मूक नामक धार्मिक चांडाल के पास जाओ। वह तुम्हें धर्म का उपदेश करेगा'। यह उस चांडाल के पास गया। उस समय मूक अपने मातापितरों की सेवा कर रहा था। उसने इसे रुकने के लिये कहा। फिर भी यह नहीं रुका। फिर मूक ने इसे एक पतिव्रता के पास जाने के लिये कहा।

इतने में ब्राह्मण रूपधारी विष्णु अपने घर से बाहर निकला तथा उसने इसे पतिव्रता के घर पहुचा दिया। वह पतिसेवा करने में मग्न होने के कारण, उसने भी इसे रुकने के लिये कहा। इसे रुकने के लिये समय न होने के कारण, उसने इसे धर्म वैश्य के पास जाने के लिये कहा। वह ग्राहकों को माल देने में मग्न था, इसलिये उसने इसे धर्माकर के पास जाने के लिये कहा। उसने इसे एक वैष्णव के पास भेजा। वैष्णव के पास जाने पर उसने कहा, कि 'अवश्य ही तुम्हें विष्णु का दर्शन हुआ है। अब तुम्हारे वस्त्र अधर सूखेंगे'।

परंतु इस पर नरोत्तम ने कहा, मुझे अब तक विष्णु का दर्शन नहीं हुआ है। फिर वह वैष्णव इसे पूजागृह में ले गया। पूजागृह में इसे पतिव्रता का घर दिखानेवाला ब्राह्मण कमलासन पर बैठा हुआ दिखा। फिर नरोत्तम उसकी शरण में गया। पश्चात् विष्णु ने इसे मातापिता की सेवा करने के लिये कहा। उस सेवाधर्म के कारण, यह स्वर्लोक पहुँच गया (पद्म. सृ. ४७)।

नर्मदा--सोमप नामक पितरों की मानसकन्या।

२. एक गंधर्वी। अपनी तीन कन्याएँ इसने सुकेश राक्षस के तीन पुत्रों को दीं थीं (वा. रा. अर. ५)।

३. (सू. इ.) मांधातृ राजा की स्नुषा तथा पुरुकुत्स राजा की पत्नी। यह सर्पकन्या थी जो सर्पों ने पुरुकुत्स राजा को विवाह में दी थी (विष्णु. ४.३.१२-१३; भा. ९.७.२)। किंतु यह पुरुकुत्सपुत्र त्रसदस्यु की पत्नी थी, ऐसा भी निर्देश कई ग्रंथों में प्राप्त है।

४. एक नदी। एक बार, इक्ष्वाकु कुलोत्पन्न दुर्योधन राजा से विवाह करने की इच्छा इसे हुई। तब मनुष्य रूप धारण कर इसने उससे विवाह किया (म. अनु. २.१८)। दुर्योधन राजा से, इसे सुदर्शना नामक

कन्या पैदा हुई। किसी और समय, इसने मान्धातृ का पुत्र पुरुकुत्स को अपना पति बनाया था (म. आश्र. २०. १२-१३; नर्मदा ३. देखिये)।

नर्य—एक दानी पुरुष। इंद्र ने इसकी रक्षा की थी (ऋ. १.५४.६; ११२.९; नार्य देखिये)।

नल--निषध देश का सुविख्यात राजा। यह वीरसेन राजा का पुत्र था (पद्म; सृ. ८; लिंग. १.६६.२४-२५; वायु. ८८; १७४; मत्स्य. १२.५६; ह. वं. १.१५; ब्रह्मांड. २.६३.१७३-१७४)। मत्स्य तथा पद्म के मतानुसार वीरसेनपुत्र नल तथा निषधपुत्र नल दोनों इक्ष्वाकु वंश के ही हैं। किंतु लिंग, वायु तथा ब्रह्मांड एवं हरिवंश में वीरसेनपुत्र नल का वंश नहीं दिया गया है।

पांडवो के वनवासकाल में, युधिष्ठिर ने बृहदश्व ऋषि से कहा, 'मेरे जैसा बदनसीब राजा इस दुनिया में कोई नहीं होगा'। फिर बृहदश्व ने, युधिष्ठिर की सांत्वना के लिये उससे भी ज्यादा बदनसीब राजा की एक कथा सुनायी। वही नल राजा की कथा है (म. व. ५०)।

नल राजा निषध देश का अधिपति था, एवं युद्ध में अजेय था (म. आ. १.२२६-२३५)। एक बार, नल ने सुवर्ण पंखों से विभूषित बहुत से हंस देखे। उनमें से एक हंस को इसने पकड़ लिया (म. व. ५०.१९)। फिर उस हंस ने नल से कहा, 'आप मुझे छोड़ दें। मैं आपका प्रिय काम करूँगा। विदर्भनरेश भीम राजा की कन्या दमयंती को आप के गुण बताउँगा, जिससे वह आपके सिवा दूसरे का वरण नहीं करेंगी'।

हंस का यह वचन सुन कर, नल ने उसे छोड़ दिया (म. व. ५०.२०-२२)। पश्चात् हंस ने दमयंती के पास जा कर, नल के गुणों का बर्णन किया। उससे दमयंती नल के प्रति अनुरक्त हो गयी (म. व. ५०-५१)।

यथावकाश दमयंती-स्वयंवर की घोषणा विदर्भाधिपति भीम राजा ने की। उसे सुन कर, नल राजा स्वयंवर के लिये विदर्भ देश की ओर रवाना हुआ। नारद द्वारा दमयंती स्वयंवर की हकीकत इंद्रादि लोकपालों को भी ज्ञात हुई। वे भी स्वयंवर के लिये विदर्भ देश चले आये। नल को देखते ही इसके असामान्य सौंदर्य के कारण, दमयंतीप्राप्ति की आशा इंद्रादि लोकपालों ने छोड़ दी। बाद में इंद्र ने नल राजा को सहायता के वचन में फँसाया, एवं उसे दूत बनाकर दमयंती को बताने के लिये कहा, 'लोकपाल तुम्हारा वरण करना चाहते है।'

इंद्र के आशीर्वाद के कारण, अदृश्य रूप में यह कुंडिनपुर में दमयंती के मंदिर में प्रविष्ट हो गया। वहाँ दमयंती तथा उसकी सखियों के सिवा यह किसी को भी नहीं दिखा। इस कारण, यह दमयंती तक सरलता से पहुँच सका। दमयंती के मंदिर में नल के प्रविष्ट होते ही, उसकी सारी सखियाँ स्तब्ध हो गई तथा दमयंती भी इस पर मोहित हो गई। बाद में दमयंती द्वारा पूछा जाने पर नल ने अपना नाम बता कर देवों का संदेशा भी उसे बताया (म. व. ५१-५२) फिर भी दमयंती का नल को पति बनाने का निश्चय अटल रहा।

दमयंती स्वयंवर में, उसकी परीक्षा लेने के लिये, नल के ही समान रूप धारण कर, इंद्रादि देव सभा में बैठ गये। स्वयंवर के लिये आये सहस्रावधि राजाओं का वरण न कर, दमयंती उस स्थान पर आई जहाँ नल बैठ था। वहाँ उसने देखा, पाँच पुरुष एक ही स्वरूप धारण कर एक साथ बैठे हैं। उसके सामने बड़ी ही समस्या उपस्थित हो गई। बाद में उसने कहा कि 'नल के प्रति मेरा अनन्य प्रेम हो, तो वह मुझे गोचर हो।' इतना कहते ही उसके पातिव्रत्यबल से सारे देव उनके 'वास्तव देवता स्वरूप' में उसे दिख पडे। धर्मबिंदुविरहित स्तब्ध दृष्टिवाले, प्रफुल्ल पुष्पमाला धारण करनेवाले, धूलिस्पर्शविरहित, तथा भूमि को स्पर्श न करते हुएँ खडे देव उसने देखे'। उन देवों को नमन कर, दमयंती ने नल को वरमाला पहनायी।

नल का वरण दमयंती द्वारा किये जाने के कारण, देवों को भी आनंद हुआ तथा उन्होंने इसे दो दो वर दिये। इंद्र ने इसे वर दिया, 'तुम्हे यज्ञ में मेरा प्रत्यक्ष दर्शन होगा, तथा सद्गति प्राप्त होगी'। अग्नि ने वर दिया, 'चाहे जिस स्थान पर तुम मेरी उत्पत्ति कर सकोंगे, तथा मेरे समान तेजस्वी लोक की प्राप्ति तुम्हें होगी'। यम ने इसे अन्नरस तथा धर्म के उपर पूर्ण निष्ठा रहने का, उसी प्रकार वरुण ने इच्छित स्थल पर जल उत्पन्न करने की शक्ति का वर दिया। वरुण ने इसे एक सुगंधी पुष्पमाला भी प्रदान की, एवं वर दिया, 'तुम्हारे पास के पुष्प कभी भी नहीं कुम्हलायेंगे'। इन वरों के अतिरिक्त, देवताप्रसाद से कहीं भी प्रवेश होने पर इसे भरपूर जगह मिलती थी, ऐसी भी कल्पना है।

पश्चात् भीमराज ने दमयंती विवाह का बड़ा समारोह किया। काफी दिनों तक नल को अपने पास रख लेने के बाद, इसे दमयंती सहित निषध देश में पहुँचा दिया।

निषध आने के बाद, इसने प्रजा का उत्तम पालन किया तथा अश्वमेधादि यज्ञ कर देवों को भी तृप्त किया। कुछ काल के बाद, दमयंती से इसे इंद्रसेन नामक पुत्र, तथा इंद्रसेना नामक कन्या ये अपत्य भी पैदा हुएँ (म. व. ५३–५४)।

एक बार देवसभा में, इंद्रादि देवों ने नल की स्तुति की। वह स्तुति वहाँ बैठे कलिपुरुष को सहन नहीं हुई। देवों के जाने के बाद वह द्वापर नामक युगपुरुष के पास गया, एवं उसने कहा, 'अगर तुम द्यूत के प्यादों' में मुझे प्रविष्ट होने दोंगे, एवं मेरी सहायता करोंगे, तो मैं नल को राज्य भ्रष्ट कर दूँगा' (म. व. ५५-१३)।

द्वापर के द्वारा मान्यता मिलने पर, उसे ले कर कलिपुरुष निषध देश में गया। वहाँ नल के शरीर में प्रविष्ट होने की संधि देखते हुए, गुप्तरूप से वह अनेक वर्षों तक रहा। एक दिन मूत्रोत्सर्ग करने के बाद, पादप्रक्षालन न करते हुए ही नल संध्योपासना करने बैठा। यह संधि देख, कली ने इसके शरीर में प्रवेश किया।

शरीर में कलि प्रविष्ट होते ही, नल को द्यूत खेलने की इच्छा हुई। इसने तत्काल अपने पुष्कर नामक भ्राता को द्यूत खेलने के लिये बुलाया। पुष्कर ने पास ही वृषभ रूप ले कर खडे कलि को दाँव पर लगा कर, नल को खेलने का आह्वान दिया। दमयंती के सामने दिया यह आह्वान अपना अपमान समझ कर, नल ने दाँव पर दाँव लगाना शुरू किया। यह वृत्त नागरिकजनों को ज्ञात होते ही उन्होंने, मंत्रियों ने तथा स्वयं दमयंती ने हर प्रकार से इसे द्युत से परावृत्त करने की कोशिश की। शरीर में स्थित कलि के प्रभाव के कारण, नल द्यूत खेलता ही रहा। उस कारण, इसकी सारी संपत्ति, सुवर्ण, वाहन, रथ, घोडे तथा वस्त्र दूसरे पक्ष ने जीत लिये। अपना तथा अन्य किसी का भी उपदेश राजा नहीं सुन रहा है यह देख, दमयंती ने अपने पुत्र तथा कन्या को वार्ष्णेय नामक सारथि के साथ रथ में बैठा कर, अपने पिता के यहाँ कुंडिनपुर भेज दिया (म. व. ५६–५७)।

नल का समस्त राज्य हरण कर लेने के बाद, पुष्कर ने इसे एक वस्त्र दे कर राज्य के बाहर निकाल दिया। इसके साथ दमयंती भी एक वस्त्र पहन कर निकल पडी। नगर के बाहर नल तीन दिनों तक रहा। पुष्कर ने ढिंढोरा पिटवाया, 'जो नल का सत्कार करेंगे, या उससे सज्जनता का व्यवहार करेंगे, उन्हें मृत्यु की सजा दी जावेगी'। इस कारण किसीने नल की सहायता नहीं की।

पश्चात् अपना राज्य छोड़ कर, नल एवं दमयंती अरण्य के मार्ग से जाने लगे। काफी दिन इसी प्रकार व्यतीत होने पर, क्षुधाग्रस्त नल को सुवर्णमय पंखयुक्त कुछ पंछी दिखे। खाने के लिये तथा धनप्राप्ति के हेतु से, वे पक्षी पकडने की इच्छा नल को हुई। इसलिये इसने उन्हें अपने वस्त्र में पकड़ लिया किंतु दुर्दैववशात् द्यूत के प्यादे ही नल का पीछा करते हुए, पक्षीरूप धारण कर के आये हुए थे। वे इसका वस्त्र ले कर उड गये। परिणामतः नल के पास जो एक वस्त्र था, वह भी चला गया एवं नग्न स्थिति में यह आगे जाने लगा।

जाते जाते नल ने दमयंती को कोसल तथा विदर्भ देश की ओर जानेवाला मार्ग दर्शाया, एवं कहा, 'तुम अपने पिता के घर विदर्भ देश चली जाओ'। फिर दमयंती ने नल से कहा, 'हम दोनों ही विदर्भ देश को जायें' किंतु नल को यह अच्छा न लगा।

पश्चात् मार्ग में नल एवं दमयंती को एक घर दिखा। दोनों उस घर में गये। थकावट के कारण दमयंती शीघ्र ही निद्राधीन हो गई। यह देख, उसे छोड़ कर अकेले चले जाने की इच्छा नल के मन में उत्पन्न हुई। तलवार से दमयंती का आधा वस्त्र काट कर, वह इसने परिधान किया। तथा चुपचाप उसे वहीं छोड़ कर, यह चला गया (म. व. ५८.५९; दमयंती देखिये)। बाद में चेदि देश के सुबाहु राजा की पत्नी की सैरंध्री बन कर दमयंती ने अपने बुरे दिन व्यतीत किये।

दमयंती को छोड़ कर चले जाने के बाद, नल ने एक स्थान पर प्रदीप्त दावाग्नि देखा। उससे करुण ध्वनि निकल रही थी, 'हे नल! मेरी रक्षा करो'। फिर अग्नि में घिरे कर्कोटक नाग को इसने बाहर निकाला। तब वह नाग प्रसन्न हो कर उसने नल से कहा, 'एक, दो, तीन, इस क्रम से तुम चलना शुरू करो। मैं तुम्हारा कुछ कल्याण करना चाहता हूँ। तुम्हारा चलना शुरू होते ही, वह कार्य मैं पूरा करूँगा।

कर्कोटक के आदेशानुसार यह कदम गिनते गिनते चलने लगा। अपने दसवें कदम पर इसने 'दश' कहा। 'दश' कहते ही कर्कोटक नाग ने इसे दंश किया, जिससे इस का रूप बदल कर, यह कृष्णवर्ण एवं कुरूप बन गया। फिर नल ने व्याकुल हो कर कर्कोटक से पूछा, 'तुमने यह क्या किया?' कर्कोटक ने इस पर कहा, 'तुम नाराज न हो। तुम्हारे लाभ के लिये ही मैंने तुम्हें दंश किया है। तुम्हारे ये बदले हुए रूप से अब तुम्हें कोई भी पहचान नहीं

सकेगा। इतना ही नहीं, मेरे विष की बाधा तुम्हारे शरीरस्थ कलि को ही हो जायेगी'। नल को एक वस्त्र प्रदान कर कर्कोटक ने आगे कहा, 'अब तुम बाहुक नामांतर से अयोध्या के राजा ऋतुपर्ण के पास जा कर वास करो। जब पूर्ववत् सुरूप होने की इच्छा तुम करोगे, तब स्नान करके यह वस्त्र ओढ लेना। इससे तुम्हे पूर्वस्वरूप प्राप्त होगा'। इतना कह कर कर्कोटक अंतर्धान हो गया (म. व. ६३. १९-२३)।

कर्कोटक के गुप्त होने के बाद नल दस दिनों से अयोध्या जा पहुँचा। ऋतुपर्ण राजा से मिल कर इसने कहा, 'मुझे अश्वविद्या तथा सारथ्य का पूर्ण ज्ञान है। आप मुझे आश्रय दें, तो मैं अपने पास रहने के लिये तैयार हूँ। ऋतुपर्ण ने इसे अपने आश्रय में रखा, एवं इसे अपनी अश्वशाला का प्रमुख बना दिया। नल के पुराने सारथि वार्ष्णेय तथा जीवल पहले से ही ऋतुपर्ण की अश्वशाला में काम करते थे। संयोगवश नल के ये पुराने नौकर इसके सहायक बना दिये गये। किंतु इसके नये रंगरूप में वे इसे पहचान नहीं सके।

अपनी पत्नी दमयंती, कन्या, तथा पुत्र का स्मरण कर के यह रोज विलाप करता था। एक दिन जीवल ने इसे पूछा, 'किसके लिये तुम हररोज शोक करते हो?' कुछ न कह कर यह स्तब्ध रह गया (म. व. ६४.१२-१९)।

ऋतुपर्ण राजा के यहाँ नौकरी करने से पहले ही वार्ष्णेय ने दमयंती के कथनानुसार उसके पुत्र तथा कन्या को कुंडिनपुर में भीमराजा के पास पहुँचा दिया था, तथा कहाँ था, कि 'नलराजा द्यूतासक्त हो गया अब उसका कोई भरोसा नहीं है'। बाद में भीमराजा को ज्ञात हुआ कि राज्यभ्रष्ट हो कर नल दमयन्ती सह अरण्य में चला गया है।

अपनी कन्या एवं जमाई को ढूँढ़ने के लिये भीमराजा ने सारे देशों में ब्राह्मण भेजे। उनमें से सुदेव नामक ब्राह्मण घूमते घूमते वहाँ गया, जहाँ दमयंती राजपत्नी की सैरंध्री बन कर दिन काट रही थी। दमयंती के पीपलपत्ते के समान ताम्रवर्णीय दाग के कारण उसने दमयंती को पहचान लिया, तथा कहा, 'तुम्हारे पिता की आज्ञानुसार मैं तुम्हें ढूँढ़ने आया हूँ'। यह सुन कर दमयंती अपने आपको सम्हाल न सकी, एवं फूट फूट कर रोने लगी। यह सारा वृत्त चेदिराजपत्नी सुनंदा ने राजमाता को बताया, उसे दमयंती की दुखभरी कहानी सुन कर बहुत ही खेद हुआ। बाद में उसने दमयंती का बड़ा सत्कार कर तथा साथ में सेना दे कर पालकी से इसे कुंडिनपुर पहुँचा दिया। दमयंती को देख कर भीम को अत्यंत आनंद हुआ। कन्या का शोध लगने के कारण एक चिंता से भीमराजा मुक्त हुआ। केवल नल ही को मालूम हो ऐसे संकेतदर्शक वाक्यों के साथ भीमराजा ने अनेक ब्राह्मण देश देश में नल को ढूँढने के लिये भेज दिये (म. व. ६४-६६)।

उनमें से पर्णाद नामक ब्राह्मण अयोध्या नगरी में आया। वहाँ पहुँचने के बाद दमयंती द्वारा बताये गये पूर्वस्मृति-निदर्शक तथा कर्तव्यबुद्धि जाग्रत करनेवाले अनेक वाक्य कहते कहते, वह नगर की वस्ती वस्ती में घूमने लगा। वे वाक्य सुन कर नल को अत्यंत दुख हुआ तथा एकांत में पर्णाद से मिल कर इसने कहा 'हीन दशा प्राप्त होने के कारण मैंने पत्नी का त्याग किया, इसलिये वह मुझे दोष न दे'। इतना होते ही पर्णाद द्रुतगति से अयोध्या से चला गया, एवं कुंडिनपुर आ कर यह वृत्त उसने दमयंती को बताया।

यह वृत्त सुन, दमयंती को अत्यंत आनंद हुआ, किंतु पर्णाद द्वारा किये गये बाहुक के रूपवर्णन के कारण वह संदेह में पड गयी। उस संदेह की निष्कृति करने के लिये उसने अपनी माता के द्वारा ऋतुपर्ण को संदेसा भेजा, 'नल जीवित है या मृत यह न समझने के कारण दमयंती अपना दूसरा स्वयंवर कल सूर्योदय के समय कर रही है; इसलिये अगर इच्छा हो तो आप वहाँ आयें' (म. व. ६५)।

कुंडिनपुर से अयोध्या काफी दूर होने के कारण, एक दिन में वहाँ पहुँचना ऋतुपर्ण को अशक्यप्रायसा लगा। फिर भी अपने सारथि बाहुक से उसने पूछा। बाहुक ने एक दिन में रथ से अयोध्या पहुँचने की शर्त मान्य की एवं बडी ही तेजी से रथ हाँका। मार्ग में ऋतुपर्ण का उत्तरीय गिर पड़ा। उसे उठाने के लिये राजा ने बाहुक को रथ खडा करने के लिये कहा। फिर बाहुक ने कहा 'आपका वस्त्र एक योजन पीछे रह गया है'। यह देख कर ऋतुपर्ण बाहुक के सारथ्यकौशल्य पर बहुत ही खुष हुआ। बाद में बाहुक से अश्वहृदयविद्या सीख कर, ऋतुपर्ण ने उसे 'अक्षहृदयविद्या' (द्यूत खेलने की कला) प्रदान की (म. व. ७०.२६)। इस प्रकार ये दोनों परम मित्र बन गये (ह. वं. १. १५; वायु. २६; विष्णु. ४. ४. १८; ब्रह्म. ८. ८०)।

अक्षहृदय विद्या प्राप्त होते ही, कलिपुरुष नल के शरीर से बाहर निकला। उसे देख कर जब नल उसे शाप देने के लिये उद्युक्त हुआ, तब कलि ने इसकी प्रार्थना करते हुए कहा "हे पुण्यश्लोक नल! तुम मुझे शाप मत दो। कर्कोटक नाग के विष से मेरा शरीर दग्ध हो गया है। दमयंती के शाप से भी मैं पीड़ित हूँ। आयदा से, कर्कोटक, दमयंती, नल तथा ऋतुपर्ण का नामसंकीर्तन करनेवालों को कलि की बाधा न होगी (म. व. ७८)। इतना कहते हुए वह बेड़ेलि के वृक्ष में प्रविष्ट हुआ। इस 'कलिप्रवेश' के कारण, बेहड़े (बिभीतक) का वृक्ष अपवित्र माना जाने लगा (म. व. ७०.३६)।

सायंकाल होने के पहले ही, बाहुक ने रथ कुंडिनपुर पहुँचाया। किंतु वहाँ स्वयंवरसमारोह का कुछ भी चिह्न मौजुद नहीं था। इस कारण, ऋतुपर्ण मन ही मन शरमा गया, एवं अपना मुँह बचाने के लिये कहा, 'यूँ ही मिलने के लिये मैं आया हूँ'। आये हुएँ लोगों में दमयंती को नल नहीं दिखा। किंतु ऋतुपर्ण के त्वरित आगमन का कारण नल ही है ऐसा विश्वास उसे हो गया, तथा जादा पूँछताछ के लिये, उसने अपने केशिनी नामक दासी को बाहुक के पास भेज दिया। उस दासी ने बड़े ही चातुर्य से, बाहुक के साथ दमयंती के बारे में प्रश्नोत्तर किये। फिर नल का हृदय दुख से भर आया, तथा वह रुदन करने लगा। यह सब वृत्त केशिनी ने दमयंती को बताया (म. व. ७१-७२)।

बाद में दमयंती ने केशिनी को बाहुक की हलचल पर सक्त नजर रखने के लिये कहा। बाहुक की एक बार परीक्षा लेने के लिये, दमयंती ने अग्नि तथा उदक न देते हुए अन्य पाकसाहित्य दिलाया। वह ले कर एवं जल तथा अग्नि स्वयं उत्पन्न कर बाहुक ने पाकसिद्धि की। उसी प्रकार बाहुक को अवगत 'पुष्पविद्या' (मसलने पर भी पुष्पों का न कुम्हलाना) तथा आकृतिविद्या ('छोटी चीज बडी बनाना') आदि बातें केशिनी ने स्वयं देखी (म. व. ७३.९; १६)।

बाद में दमयंती ने अपने पुत्र एवं पुत्री को दासी के साथ बाहुक के पास भेज दिये। नल अपना शोक संयमित न कर सका। बाद में ही बाहुक ने फिर दासी से कहा 'मेरे भी पुत्र ऐसे होने के कारण मुझे उनकी याद आयी (म. व. ७३.२६-२७)।

फिर दमयंती ने अपनी माता के पास संदेश भिजवाया, 'यद्यपि नल के अधिकांश चिह्न बाहुक में हैं, तथापि रूप के कारण मुझे कुछ शंका हो रही है। अगर आपकी आज्ञा मिले तो उसे बुला कर, मैं कुछ परीक्षा ले लूँ'। माता की आज्ञा प्राप्त होते ही उसने बाहुक से कहा, 'प्रतिव्रता तथा निरपराध स्त्री को अरण्य में अकेली छोड जानेवाला पुरुष पृथ्वी पर नल राजा के सिवा अन्य कोई नहीं है'। यह सुनते ही बाहुक ने कहा, 'पति सदाचारी तथा जीवित होते हुए भी, स्वयंवर करनेवाली स्त्री तुम्हारे सिवा अन्य कोई नहीं है'। फिर नल एवं दमयंती ने एक दूसरी को पहचान लिया। दमयंती ने कहा, 'यह सारा नाटक तुम्हे ढूँढने के लिये ही मैंने रचाया था। दूसरी बार स्वयंवर करने की ही लालसा मुझे होती, तो क्या मैं अन्य राजाओं को निमंत्रित नहीं करती?' इतना कह कर वह स्तब्ध हो गई। इतने में वायु द्वारा आकाशवाणी हुई 'दमयंती निर्दोष है। तुम उसका स्वीकार करो'। उसे सुनते ही नल ने कर्कोटक नाग का स्मरण किया एवं उसने दिये दिव्य वस्त्र परिधान कर लिया। उस वस्त्र के कारण, नल का कुरूपत्व नष्ट हो कर, वह सुस्वरूप दिखने लगा। फिर नल ने दमयंती तथा पुत्रों का आलिंगन किया (म. व. ७३-७४)।

नल एवं दमयंती का मीलन होने के पश्चात् भीमराजा ने उनको एक माह तक अपने पास रख लिया। तब बाद में दमयंती एवं पुत्रों को साथ ले कर, नल राजा निषध देश की ओर मार्गस्थ हुआ। वहाँ पहुँचते ही नल ने पुष्कर को बुलावा भेजा, तथा उससे द्यूत खेल कर अपना राज्य हासिल किया (म. व. ७७)। मृत्यु के पश्चात्, नल यमसभा में उपस्थित हो कर, यम की उपासना करने लगा (म. स. ८.१०)। भारतीय युद्ध के समय, यह देवराज इंद्र के विमान में बैठ कर, युद्ध देखने आया था (म. वि. ५१.१०)।

पूर्वजन्म—पूर्वजन्म में, नल राजा गौड देश के सीमा पर स्थित एक देश के पिप्पल नामक नगर में, एक वैश्य था। संसार से विरक्त हो, यह एक बार अरण्य में चला गया। वहाँ एक ऋषि के उपदेशानुसार, 'गणेशव्रत' करने के कारण यह अगले जन्म में नल राजा बन गया (गणेश. २.५२)। इसके ही पहले के जन्म में, नल एवं दमयंती आहुक एवं आहुका नामक भील तथा भीलनी थे। शिवप्रसाद से उन्हें राजकुल में जन्म प्राप्त हुआ। शंकर ने हंस का अवतार ले कर उन्हें सहायता दी थी (यतिनाथ देखिये)।

पाकशास्त्र तथा अश्वविद्या पर लिखित, नल राजा के कई ग्रंथ प्रसिद्ध हैं।

२. (सू. इ.) अयोध्या के ऋतुपर्ण राजा का पुत्र। इसे सुदास नामक पुत्र था। इसका मूल नाम सर्वकर्मन् अथवा सर्वकाम था (लिंग. १.६६.१)।

इसका पिता ऋतुपर्ण, निषध देश के नल राजा का मित्र था (नल १. देखिये)। वायुपुराण के मत में, प्राचीन भारतीय इतिहास में दो नल सुविख्यात थेः— १. अयोध्या का राजा इक्ष्वाकुवंशज नल—यह ऋतुपर्ण का पुत्र था। २. वीरसेन का पुत्र नैषध नल (वायु. ८८. १७४-१७५)।

३. (सो. क्रोष्टु.) भागवतमत में यदु राजा का पुत्र। इसे 'नील' नामांतर भी प्राप्त था।

४. (सो. कुकुर.) यादव राजा विलोमन् (तित्तिरि) का पुत्र। इसे 'नंदनोदरदुंदुभि' नामान्तर भी प्राप्त था (मत्स्य. ४४.६३)। मत्स्यमत में यह सर्प था।

५. इन्द्रसभा में उपस्थित एक ऋषि।

६. (सू. इ.) दल का नामान्तर।

७. तेरह सैंहिकेयों में से एक (ब्रह्म. ३)।

८. निषध राजा का पुत्र। इसका पुत्र नभ अथवा नभस् (ह. वं. १. १५. २८; ब्रह्म. ८; पद्म. सृ. ८; मत्स्य. १२. ५६)।

९. रामसेना का एक वानर, एवं रामसेतु बाँधनेवाला स्थापत्यविशारद। यह देवों के शिल्पी विश्वकर्मा एवं घृताची नामक अप्सरा का पुत्र था (म. व. २६७. ४१)। ऋतुध्वज मुनि के शाप से, विश्वकर्मा को वानरयोनि प्राप्त हुई। उसी जन्म में उसे यह पुत्र गोदावरी नदी के तट पर पैदा हुआ (वामन. ६२)। इसे अग्नि का पुत्र भी कहा है (स्कंद. ३. १. ४२)।

जो चाहे वह वस्तु निर्माण करने की शक्ति का वर, इसके पिता ने इसे दिया था (वा. रा. यु. २२)। राम की आज्ञा से इसने दक्षिण समुद्र पर सौ योजन लंबे एवं दस योजन चौड़े सेतु का निर्माण किया। वह सेतु 'रामसेतु' अथवा 'नलसेतु' नाम से प्रसिद्ध है (म. व. २६७-४६)। इसने एक ब्राह्मण को जाह्नवी नदी में शालिग्राम विसर्जन करने के कार्य में मदद की थी। इस पुण्यकार्य के कारण, उस ब्राह्मण ने इसे वर दिया, 'तुम्हारे पत्थर पानी में तर सकेंगे।' इसी सिद्धि के कारण, सेतुबंधन का कार्य यह सफलता से कर सका। सेतु बांधने का कार्य शुरु करने से पहले इसने गणेश तथा नवग्रहों की पूजा की थी (आ. रा. सार. १०)। प्रतपन, अकंपन, तथा प्रहस्त आदि रावणपक्षीय राक्षसों से युद्ध करते समय इसने काफी पराक्रम दर्शाया था (कुशलव देखिये)। राम केअश्वमेध यज्ञ के समय, यह अश्वरक्षण के लिये शत्रुघ्न के साथ गया था (पद्म. पा. ११)।

नलकूबर—देवों के धनाध्यक्ष कुबेर का पुत्र (म. स. १०. १८)। इसे मणिग्रीव नामक ज्येष्ठ बंधु था।

एकबार ये दोनों भाई अपने स्त्रियों के साथ गंगानदी के तट पर कैलास पर्वत के उपवन में क्रीडा कर रहे थे। सुरापान की नशा के कारण, इन में से किसी के शरीर पर वस्त्र न था। उसी मार्ग से नारद जा रहे थे। नारद को देखते ही शाप के भय से, इसकी स्त्रियों ने बाहर आ कर अपने अपने वस्त्र परिधान कर लिये। परंतु नलकूबर तथा मणिग्रीव इतने बेहोश थे कि, उन्होंने देवर्षि की कुछ भी मर्यादा न रखी। नग्नस्थिति में इन्हें देखते ही इन दोनों को अच्छा सबक सिखाने का विचार नारद ने किया। अपने शरीर पर वस्त्र है या नहीं, इसका भी होश जिन्हें नहीं है, उनके लिये वृक्षयोनि ही ठीक है, ऐसा विचार नारद ने किया, एवं इन्हे सौ वर्षोंतक वृक्ष होने का शाप दिया। नारद की कृपा से, उस स्थिति में भी इन्हें अपने पूर्वजन्म का स्मरण रहा, तथा कृष्ण के सान्निध्य से इनकी मुक्ति हो गयी।

कृष्णावतार में नंदगोप के घर के द्वार में स्थित 'अर्जुनवृक्षों' का जन्म इन्हें प्राप्त हुआ था। एक बार नटखट कृष्ण की शैतानी से तंग आ कर, यशोदा ने कृष्ण को ऊखल से बाँध दिया। कृष्ण ऊखल को खींचते खींचते धीरे धीरे चलने लगा। चलते चलते आँगन में खड़े अर्जुनवृक्ष की जोड़ी के बीच, वह ऊखल अटक गया। फिर कृष्ण ने ऊखल जोर से खींचते ही दोनो वृक्ष आमूलाग्र गिर पड़े तथा नल कूबर एवं मणिग्रीव वृक्षयोनि से मुक्त हो गये (भा. १०. ९-१०; ह. वं. २.७.१४-१९; पौलस्त्य देखिये)।

एक बार इसकी प्रेयसी रंभा इसे मिलने जा रही थी। राह में, रावण ने रंभा पर बलात्कार किया। फिर इसने रावण को शाप दिया, 'तुम्हें न चाहनेवाली किसी भी स्त्री को तुम स्पर्श नहीं कर सकोगे (म. व. २६४.६८-६९)। बलात्कार करते ही तुम्हारी मृत्यु हो जायेगी' (वा. रा. उ. २६; रावण देखिये)।

नव—(सो. अनु.) मत्स्यमत में उशीनर राजा का पुत्र (नर ४. देखिये)।

नवक—एक ऋषि। विभिंदुक राजा के सत्र में इसने पत्नी के लिये इच्छा दर्शायी थी (जै. ब्रा. २.२३३)।

नवग्व—अंगिरसों में से एक वर्ग का नाम। इन्होंने इन्द्र की स्तुति की है (ऋ. ५.२९.१२)। नौ महीनों में ये यज्ञ समाप्त करते थे इसलिये इन्हें नवग्व कहते है (ऋ. १०.६२.४–६; दशग्व देखिये)।

२. एक श्रेष्ठतम अंगिरस ऋषि। यह प्राचीनकालीन रहस्यवादी जाति के लोगों एवं अंगिरसों के साथ संबंधित थे (ऋ. ४.५१.४; ९.१०८.४)।

नवतन्तु—विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५८)।

नवप्रभ—नड़ायन देखिये।

नवरथ—(सो. क्रोष्टु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मतानुसार भीमरथ राजा का पुत्र। वायु तथा ब्रह्मांड मतानुसार यह रथवर राजा का पुत्र था।

नववास्त्व—अग्नि का आश्रित। घोरपुत्र कण्व ने अग्नि की प्रार्थना कर, नववास्त्व को अपने पास भेजने के लिये कहा है (ऋ. १.३६.१८)। संभवतः यह उशनस् का पुत्र एवं इंद्र के प्रियपात्रों में से एक था। किंतु ऋग्वेद में कई अन्य स्थानों में इंद्र द्वारा इसका वध होने का निर्देश भी प्राप्त है। भरद्वाज ने इन्द्र के द्वारा इसका वध करवा कर उशनस् का पुत्र वापस ला दिया (ऋ. ६. २०.११)। ऋग्वेद में तीसरे एक स्थान पर, 'नववास्त्व बृहद्रथ' नाम से इसका निर्देश आया है। इंद्र ने इसका नाश किया (ऋ. १०.४९.६)।

नहुस्—ऋग्वेदकालीन एक व्यक्ति (ऋ. १.१२२.१५)। 'नहुस्' एवं यह दोनों एक ही रहे होंगे।

नहुष—एक राजा। यह संभवतः 'पृथुश्रवस् कानीत' का कोई रिश्तेदार रहा होगा (ऋ. ८.४६.२७; नाहुष देखिये)।

२. (सो. पुरूरवस्.) प्रतिष्ठान (प्रयाग) देश का सुविख्यात सम्राट्, एवं वैवस्वत मनु की कन्या इला का प्रपौत्र। यह पुरूरवस् ऐल राजा का पौत्र, आयु राजा का पुत्र एवं ययाति राजा का पिता था (लिंग. १.६६.५९–६०; कूर्म. १.२२.३–४)। इसे कुल चार भाई थे। उनके नामः—क्षत्रवृद्ध (वृद्धशर्मन्), रंभ, रजि, अनेनस् (विपाप्मन्) (वायु. ९२.१–२; ब्रह्म. ११. १–२)।

यह आयु राजा को दानव राजा राहु या स्वर्भानु की कन्या प्रभा (स्वर्भानवी) नामक पत्नी से उत्पन्न हुआ था (ह. वं. १.२८.१; म. आ. ७०.२३)। किंतु पद्ममत में, यह आयु की पत्नी इंदुमती को दत्त आत्रेय की कृपा से पैदा हुआ था (पद्म. भू. १०५)। वायुमत में, यह आयु को विरजा नामक पत्नी से उत्पन्न हुआ था (वायु. ९४; ब्रह्म. १२.३४)। सुस्वधा पितरों की कन्या विरजा इसकी पत्नी थी। उससे इसे ययाति नामक पुत्र पैदा हुआ (मत्स्य. १५.२३)।

पद्मपुराण में, नहुष की जन्मकथा इस प्रकार दी गयी है। दत्तकृपा से आयु राजा की पत्नी इंदुमती गर्भवती रही। उस समय, हुंड राक्षस की कन्या अपनी सखियों के साथ नंदनवन में क्रीडा करने के लिये गयी। वहाँ सिद्ध चारणों के मुख से उसने सुना कि, अपने पिता हुंड की मृत्यु आयुपुत्र नहुष के द्वारा होनेवाली है। तत्काल घर जा कर इसने यह वृत्त अपने पिता को बताया।

इन्दुमती के गर्भ का नाश करने के उद्देश से, दैत्येंद्र हुंड एक अमंगल दासी के शरीर में प्रविष्ट हुआ, तथा नहुष का जन्म होते ही रात्रि के समय, इसे अपने घर ले आया। बाद में अपनी विपुला नामक भार्या के पास, नहुष को स्वाधीन कर, हुंड ने कहा, यह मेरा शत्रु है। इसलिये इसका मास पका कर, तुम मुझे खिला दो विपुला ने इस बालक को अपने रसोइये को सौंपा। किंतु रसोइये को इस पर दिया आ कर उसने इसे वसिष्ठ ऋषि के घर में पहुँचा दिया तथा हुंड को हिरन का माँस पका कर खाने के लिये दिया।

इस बालक को देखते ही, वसिष्ठ ने दिव्य दृष्टि से इसका सारा पूर्वेतिहास जान लिया तथा इसे 'नहुष' नाम प्रदान किया। वसिष्ठ ने ही इसका उपनयन करवाया एवं इसे वेद तथा धनुर्विद्या सिखाई।

पश्चात् वसिष्ठ के कथनानुसार इसने हुंड राक्षस पर आक्रमण किया। उस समय सारे देवों ने इसकी सहायता की। इस युद्ध में नहुष का विजय हो कर, इसने हुंड का वध किया। बाद में वसिष्ठ की अनुज्ञा से, इसके विरह में रातदिन व्याकुल हुआी अशोकसुंदरी नामक स्त्री से, इसने विवाह किया, तथा उसे लेकर यह अपनी राजधानी लौट आया (पद्म भू. १०५–११७)।

एक बार, च्यवन ऋषि मछुओं के जाल में फँस गया। उसे मछुओं के हाँथ से छुड़ाने के लिये, नहुष ने च्यवन से उसके सही मूल्य के बारे में चर्चा की, एवं लाखों की संख्या में गौअें मछुओं को दे कर, च्यवन की मुक्तता की (म. अनु. ८९.६)। फिर च्यवन ने संतुष्ट हो कर नहुष

को वर दे दिया। घर आये त्वष्टृ का नहुष ने सम्मान किया था, एवं उस कार्य के लिये 'गवालंभन' भी किया था (म. शां. २६०.६)।

इंद्रपदप्राप्ति—अपने पराक्रम, गुण एवं पुण्यकर्म के कारण, देवताओं को भी दुर्लभ 'इंद्रपद' प्राप्त होने का सौभाग्य नहुष को प्राप्त हुआ। इतने में देवों का राजा इंद्र ने त्रिशिर नामक ब्राह्मण का वध किया। इस 'ब्रह्महत्या' के पातक के कारण, पागल सा हो कर, इंद्र इधर उधर घूमने लगा, एवं इंद्रपद की राजगद्दी खाली हो गयी।

इस अवसर पर, सारे देव एवं ऋषियों ने अपनी तपश्चर्या का बल नहुष को दे कर, इसे 'इंद्रपद' प्रदान किया, एवं आशीर्वाद दिया, 'तुम जिसकी ओर देखोगे, उसके तेज का हरण करोंगे' (म. आ. ७०.२७)।

'इंद्रपद' पर आरूढ होने के बाद, कुछ काल तक, नहुष ने बहुत ही निष्ठा, नेकी, एवं धर्म से राज्य किया। स्वर्ग का राज्य प्राप्त होने के बाद भी, यह देवताओं को दीपदान, प्रणिपात, एवं पूजा आदि नित्यकर्म मनोभाव से करता रहा।

किंतु बाद में, 'मै देवेंद्र हूँ' ऐसा तामसी अभिमान इसके मन में धीरे धीरे छाने लगा। फिर सारी धार्मिक विधियाँ छोड़ कर, यह मतिभ्रष्ट एवं विषयलंपट बन गया। रोज भिन्न भिन्न उपवन में जा कर, यह स्त्रियोंके साथ क्रीडाएँ करने लगा। इस प्रकार कुछ दिन बीतने पर, इसने भूतपूर्व इंद्र की पत्नी इंद्राणी को देखा। उसका मोहक रूपयौवन देख कर यह कामोत्सुक हुआ, एवं इसने देवों को हुकुम दिया, 'इंद्राणी को मेरे पास ले आओ' (म. आ. ७५)।

फिर डर के मारे भागती हुई इंद्राणी बृहस्पति के पास गयी। बृहस्पति ने उसे आश्वासन दिया, 'मैं नहुष से तुम्हारी रक्षा करूँगा'। बाद में सारे देवों के सलाह के अनुसार, इंद्राणी नहुष के पास आयी, एवं उसने कहा, 'आपकी माँग पूरी करने के लिये, मुझे कुछ वक्त आप दें दे। उस अवधि में, मैं अपने खोये हुए पति को ढूँढना चाहती हूँ'।

नहुष ने इंद्राणी की यह शर्त मान्य की। फिर देवों की कृपा से, इंद्राणी ने इंद्र को ढूँढ निकाला, एवं सारा वृत्तांत उसे बता दिया। फिर इंद्र ने उसे कहा, "तुम नहुष के पास जा कर उसे कहो, 'अगर सप्तर्षिओं ने जोती हुए पालकी में बैठ कर, तुम मुझे मिलने आओगे तो मैं तुम्हारा वरण करूंगी'"।

इंद्राणी नहुष के पास आयी, एवं उसने अपनी शर्त उसे बतायी। नहुष ने यह शर्त बड़े ही आनंद से मान्य की। इसने सप्तर्षिओं को अपने पालकी को जोत लिया, तथा स्वयं पालकी में बैठ कर, यह इंद्राणी से मिलने अपने घर से निकला। मार्ग में पालकी और तेज़ी से भगाने के लिये, कामातुर नहुष ने सप्तर्षिओं में से अगस्त्य ऋषि को लत्ताप्रहार किया, एवं बड़े क्रोध से कहा, 'सर्प, सर्प' ('जल्दी चलो')।

इस पर अगस्त्य ऋषि ने इसे क्रोध से शाप दिया, 'हे मदोन्मत्त! सप्तर्षिओं को पालकी को जोतनेवाला तू स्वयंही पृथ्वी पर दस हजार वर्षों तक सर्प बन कर पड़े रहेगी'। अगस्त्य के इस शाप के अनुसार, नहुष तत्काल सर्प बन गया, एवं पालकी के बाहर गिरने लगा। फिर अगस्त्य को इसकी दया आयीं, एवं उसने इसे उःशाप दिया, 'पांडुपुत्र युधिष्ठिर तुम्हें इस हीन सर्पयोनि से मुक्त कर देगा (म. उ. ११.१७; अनु. १५६-१५७; भा. ६.१८.२-३; दे. भा. ६.७-८; विष्णु. १.२४)। अगस्त्य स्वयं सप्तर्षियों में से एक नहीं था। किंतु उसके जटासंभार में छिपा हुआ भृगु ऋषि सप्तर्षियों में से एक था। संभवतः इसी भृगु के कारण अगस्त्य को नहुष ने अपने पालकी का वाहन बनाया होगा।

महाभारत के मत में, भृगु ऋषि के कारण ही नहुष का स्वर्ग से पतन हुआ था। नहुष को सारे देवों ने तथा ऋषियों ने वर दिया था, 'तुम जिसकी ओर देखोगे, उसका तेज हरण कर लोगे'। उस वर के कारण अन्य सप्तर्षियों के साथ, अगस्त्य ऋषि का तेज नहुष ने हरण किया, एवं उसे अपने पालकी का वाहन बनाया। किंतु अगस्त्य की जटा में गुप्तरूप से बैठे भृगु को नहुष कुछ न कर सका, एवं उसका तेज कायम रहा। नहुष ने लत्ताप्रहार करते ही बाकी ऋषि चुपचाप बैठ गये। किंतु भृगु ने उसे शाप दिया (म. अनु. १५७)।

शापमुक्ति—बाद में सरस्वती नदी के तट पर द्वैतवन में पांडव अपने वनवास का काल व्यतीत करने आये। एक दिन भीमसेन हाथ में धनुष्य ले कर वन में मृगया के लिये निकला। यमुनागिरि पर घूमते घूमते, उसने एक गुफा के मुख में चित्रविचित्र रंग का एक अजगर देखा। भीम को देखते ही उस अजगर ने उसके ऊपर झडप डाली, तथा उसकी दोनों बाहें जोर से पकड़ ली। दश-सहस्र नागों का बल अपने भुजाओं में धारण करनेवाले भीम की शक्ति उस अजगर के सामने व्यर्थ हो गई।

तब भीम ने पूछा, 'हे सर्पराज, तुम कौन हो? मेरा तेज हरण करने की शक्ति तुझमें कैसी पैदा हो गई?' फिर अजगर ने कहा, 'मैं नहुष नामक एक राजर्षि हूँ। अनेक विद्या, यज्ञ, कुलीनता, तथा पराक्रम के कारण, मैंने त्रैलोक्य का आधिपत्य प्राप्त किया था। किंतु पश्चात् मदोन्मत्त हो कर, मैंने सप्तर्षियों को अपने पालकी का वाहन बनाया। इसलिये अगस्त्य ऋषि ने शाप दे कर, मुझे इस हीन सर्पयोनि में जाने के लिये कहा। उःशाप माँगने पर उसने मुझे कहा, 'तुम जिस प्राणी पर झपटोगे, उसकी शक्ति हरण कर लोगे। आत्मनात्माविवेक के ज्ञान से परिपूर्ण पुरुष से मुलाकात होने पर, तुम शापमुक्त हो जाओगे'। 'तबसे ऐसे ही पुरुष का मैं इन्तजार कर रहा हूँ'।

इतने में युधिष्ठिर भीम को ढूँढते ढूँढते वहाँ पहुचा। अजगर के द्वारा भीम को पकड़ा हुआ देख कर, उसने सर्प से पूछा, 'तुम कौन हो? भीम को तुमने क्यों पकड लिया है?' तब अजगरस्वरूपी नहुष ने कहा, 'मैं तुम्हारा पूर्वज, एवं आयु नामक राजा का पुत्र हूँ। तुम्हारे द्वारा मेरे प्रश्नों के उत्तर दिये जाने पर मैं भीम को छोड़ दूँगा'।

बाद में नहुष ने युधिष्ठिर से प्रश्न किया, 'ब्राह्मण किस को कहते है?' युधिष्ठिर ने उत्तर दिया, 'सत्य, दान, क्षमा, सच्छीलत्व, एवं इंद्रियदमन जिसके पास हो, वह मानव ब्राह्मण कहलाता है'। फिर सर्प ने पूछा, 'पृथ्वी में सर्वश्रेष्ठ ज्ञान कौनसा है'। युधिष्ठिर ने जवाब दिया, 'ब्रह्म का ज्ञान सर्वश्रेष्ठ कहलाता है'। इन उत्तरों से प्रसन्न हो कर, इसने भीम को छोड़ दिया, एवं इसका भी उद्धार हो कर, यह स्वर्ग में चला गया (म. व. १७९-१७८)।

पुत्र—नहुष के पुत्रों की संख्या एवं नामों के बारे में, पुराणों में एकवाक्यता नहीं है। अधिकांश पुराणों एवं महाभारत के मत में, नहुष को कुल छः पुत्र थे (म. आ. ७०.२८; ह. वं. १.३०.२; ब्रह्म. १२; विष्णु. ४.१०; भा. ९.१८.१; लिंग. १.६६)। कूर्म एवं पद्म के मत में, इसे कुल पाँच पुत्र थे (कूर्म. १.२२; पद्म. सृ. १२)। मत्स्य एवं अग्नि में, नहुष के सात पुत्रों के नाम दिये गये है (मत्स्य. २४.५०; अग्नि. २७४)।

पुराणों में दिये गये नहुष के पुत्रों के नाम इन प्रकार है —

(१) यति—यह नहुष का ज्येष्ठ पुत्र था।

(२) ययाति—यह नहुष के पश्चात् प्रतिष्ठान देश के राजगद्दी पर बैठ गया। इसी के नाम से 'पुरुवस् वंश' को 'ययाति वंश' यह नया नाम प्राप्त हुआ।

(३) संयाति—यह उत्तर आयु में 'परिव्राजक' बन गया। इसके नाम के लिये, 'शर्याति' नामांतर भी प्राप्त है (पद्म. सृ. १२; अग्नि. २७४)।

(४) आयति या अयति—इसके नाम के लिये, 'उद्भव' नामांतर प्राप्त है (मत्स्य. २४.५०; पद्म. सृ. १२; अग्नि. २७४)।

(५) अधक (कूर्म. १.२२)—इसके नाम के लिये, पार्श्वक (ब्रह्म. १२), अंधक (लिंग. १.६६), वियति (विष्णु. ४.१०; भा. ९.१८.१; पद्म. सृ. १२) नामांतर प्राप्त है।

(६) वियाति (मत्स्य. २४)—इसके नाम के लिये विजाति (लिंग. १.६६), सुयाति (ह. वं. १.३०.२; ब्रह्म. १२), कृति (विष्णु. ४.१०; भा. ९.१८.१), ध्रुव (म. आ. ७०.२८) नामांतर प्राप्त है।

(७) मेवजाति (मत्स्य. २४.५०)—इसके नाम के लिये, मेघपालक नामांतर प्राप्त है (अग्नि. २७४)।

३. कश्यप एवं कद्रू से उत्पन्न एक प्रमुख नाग।

४. वैवस्वत मनु का पुत्र।

नहुष मानव—एक मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०१.७-९)।

नाक—दक्षसावर्णि मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

नाक मौद्गल्य—एक तत्त्वज्ञ आचार्य। ब्राह्मणों में कई बार इसका निर्देश प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. ३.१३.५; श. ब्रा. १२.५.२.१) अधिकांश स्थानों पर इसका निर्देश केवल 'नाक' नाम से आता है। किंतु नाक मौद्गल्य ऐसा स्पष्ट निर्देश एक ही स्थान पर है (बृ. उ. ६.४.४)। इसका ग्लाव मैत्रेय ऋषि से वाद हुआ था (गो. ब्रा. १.१.३१)। वेदों का अध्ययन तथा अध्यापन एक तरह की तपःसाधना है, ऐसा इसका प्रतिपादन था (तै. उ. १.९)।

नाकुरय—कश्यप कुल का गोत्रकार।

नाकुलि—भृगुकुल का एक गोत्रकार। इसके नाम के लिये, 'लिंबुकि' पाठभेद उपलब्ध है।

२. नकुल का नामांतर।

नाग—कश्यप तथा कद्रु का पुत्र। यह मेरुकर्णिका नामक स्थान पर रहता था (भा. ५.१६.२६)। यह वरुण की सभा का सभासद था (म. स. ९.८; सर्प देखिये)।

२. प्राचीन मानव जातियों में से एक। दक्षकन्या कद्रू

को कश्यप ऋषि से एक सहस्र सर्प पैदा हुएँ। उन पुत्रों से ही आगे चल कर, नागजाति के लोग निर्माण हुएँ।

कश्यप के नागपुत्रों में निम्नलिखित नाग प्रमुख थेः— अनन्त, वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, शंख तथा कलिक।

एक बार ये प्रजा को बहुत कष्ट देने लगे। फिर ब्रह्मदेव ने इन्हें शाप दिया, 'जनमेजय के सर्पसत्र के द्वारा, एवं तुम्हारे सापत्न बंधु गरुड के द्वारा तुम्हारा नाश होगा'। शरण आने पर ब्रह्मदेव ने इन्हें उःशाप दिया, एवं एक सुरक्षित स्थान इनके लिये नियुक्त कर, वहाँ रहने के लिये इन्हें कहा। वहाँ 'नागतीर्थ' निर्माण हुआ। जिस दिन ये ब्रह्मदेव से मिलने गये, वह सावन माह के पंचमी का दिन था। नागमुक्ति का दिन होने के कारण, वह दिन 'नागपंचमी' नाम से प्रसिद्ध हुआ (पद्म. सृ. ३१)।

प्रमुख नागपुत्रों के बारे में पुराणों में प्राप्त जानकारी 'परिपत्रक' के रूप में, नीचे दी गई है:—

नाम	वर्ण	रंग	दृष्टि	दिशा	चिह्न
अनन्त	ब्राह्मण	शुक्ल	सामने	पूर्व	पद्म
वासुकि	क्षत्रिय	आरक्त	बायीं ओर	आग्नेय	उत्पल
तक्षक	वैश्य	पीत	दायी ओर	दक्षिण	स्वस्तिक
कर्कोटक	शूद्र	कृष्ण	पीछे	नैर्ऋत्य	कमल
पद्म (नाग)	शूद्र	कृष्ण	चंचल	पश्चिम	पद्म
महापद्म	वैश्य	पीत	नीचे	वायव्य	शूल
शंखपाल	क्षत्रिय	आरक्त	बार बार निश्चिंत	उत्तर	छत्र
कुलिक (कंबल)	ब्राह्मण	शुक्ल	सर्वत्र (कपिल)	ईशान्य	अर्धचन्द्र

इन नागों के वंश आदि की विस्तृत जानकारी भविष्य पुराण में दी गयी है (भवि. ब्राह्म. ३२-३६)।

सर्पसत्र में दग्ध हुएँ नाग—जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुएँ, नाग वंश एवं नागों की विस्तृत नामावलि 'महाभारत' में दी गयी है। उन में से प्रमुख नागवंश एवं नागों के नाम इस प्रकार है।

वासुकिवंश—कोटिक, मानस, पूर्ण, सह, पैल, हलीसक, पिच्छिल, कोणप, चक्र, कोणवेग, प्रकालन, हिरण्यावाह, शरण, कक्षक, कालदन्तक, (म. आ. ५२. ५-६)।

तक्षकवंश—पुच्छाण्डक, मण्डलक, पिण्डभेतृ, रभेणक, उच्छिख, सुरस, द्रङ्ग, बलहेड, विरोहण, शिलीशिलकर, मूक, सुकुमार, प्रवपन, मुद्गर, शशरोमन्, सुमनस्, वेगवाहन (म. आ. ५२.७-९)।

ऐरावतवंश—पारिवात, पारिमात्र, पाण्डर, हरिण, कृश, विहंग, शरभ, मोद, प्रमोद, संहतांङ्ग, (म. आ. ५२.१०)।

कौरव्यवंश—ऐण्डिल, कुण्डल, मुण्ड, वेणिस्कन्ध, कुमारक, बाहुक, शृङ्गवेग, धूर्तक, पात, पातर (म. आ. ५२.१२)।

धृतराष्ट्रवंश—शङ्कुकर्ण, पिङ्गलक, कुठारमुख, पेचक, पूर्णाङ्गद, पूर्णमुख, प्रहस, शकुनि, हरि, अमाठक, कोमठक, श्वसन, मानव, वट, भैरव, मुण्डवेगाङ्ग, पिशङ्ग, उद्रपारथ, ऋषभ, वेगवत्, पिण्डारक, महाहनु, रक्ताङ्ग, सर्वसारङ्ग, समृद्ध, पाट, राक्षस, वराहक, वारणक, सुमित्र, चित्रवेदिक, पराशर, तरुणक, मणिस्कन्ध, आरुणि (म. आ. ५२.१४-१७)।

निवासस्थान—नागों के तीन प्रमुख निवासस्थानों का निर्देश महाभारत में प्राप्त है। वे स्थान इस प्रकार हैं:—

(१) **नागलोक**—यह नागों का प्रमुख निवासस्थान था (म. उ. ९७.१)। नागराज वासुकि इस देश के राजा थे। इस लोक की स्थिति भूतल से हजारो योजन दूर थी (म. आश्व.५७.३३)। यह लोक सहस्त्र योजन विस्तृत था।

(२) **नागधन्वातीर्थ**—सरस्वती नदी के तटवर्ती एक प्राचीन तीर्थ, जहाँ नागराज वासुकि का निवासस्थान था। यहीं उसको नागराज के पद पर अभिषेक हुआ था।

(३) **नागपुर**—नैमिषारण्य में गोमती नदी के तट पर स्थित एक नगर, जहाँ पद्मनाभ नामक नाग का निवासस्थान था (म. शां. ३४३.२-४)।

२. मथुरा का एक राजवंश (भोगिन् देखिये)।

नागदत्त--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३२. ११३५*)।

नागदत्ता--एक अप्सरा।

नागवीथी--धर्म ऋषि की यामी से उत्पन्न कन्या।

नागाशिन्--गरुड की एक प्रमुख संतान (म. उ. ९९.९।)

नागेय--वसिष्ठ कुल का गोत्रकार।

नागेश्वर--शंकर का एक अवतार। दारुक नामक राक्षस को मार कर, इसने सुप्रिय नामक वैश्यनाथ का संरक्षण किया था। यही अवतार 'औढ्य नागनाथ है नाम से प्रसिद्ध है (शिव. शत. ४२)। भूतेश्वर इसका उपलिंग है (शिव. कोटि. ४.१)।

नाग्नजित--स्वर्जित का पैतृक नाम।

नाग्नजिती--सत्य ५. देखिये।

नाचिक(कि)--विश्वामित्र का पुत्र।

नाचिकेत--नचिकेतस् ऋषि का नामांतर (नचिकेतस् देखिये)।

नाडापिती--शकुंतला के लिये प्रयुक्त विशेषण। इसका अर्थ निश्चित रूप से बताया नहीं जा सकता (श. ब्रा. १३.५.४.१३)।

नाडायनीय--ब्रह्मांडमत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के लोकाक्षि का शिष्य (व्यास देखिये)।

नाडायन--अंगिराकुल का गोत्रकार।

नाडीजंघ--एक बकराज। यह कश्यप ऋषि का पुत्र, एवं ब्रह्माजी का मित्र था। इसे 'राजधर्मन्' नामांतर भी प्राप्त था।

देवकन्या के गर्भ से जन्म लेने के कारण, इसकी शरीर की कान्ति देवता के समान दिखायी देती थी। यह बड़ा विद्वान्, एवं दिव्य तेज से संपन्न था (म. शां. १६३.१९-२०)।

गौतम नामक कृतघ्न ब्राह्मण ने इसका वध किया। किंतु सुरभि के फेन से यह पुनः जीवित हुआ (गौतम ५. देखिये)।

२. इंद्रद्युम्न सरोवर पर रहनेवाला एक चिरजीवि बक (म. व.)।

नाड्वलायन एवं **नाड्वलेय**--नड्वला के पुत्रों का मातृक नाम।

नाथ--विकुंठ देवों में से एक।

नान्यादृश--मरुद्गणों के छठवें गणों में से एक।

नाभ--नाभाक राजा का नामान्तर (नाभाक २. देखिये)।

२. चाक्षुष मन्वंतर का एक ऋषि।

३. (सो.) एक राजा। यह नल राजा का पुत्र था। इसने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

नाभावत्ति--भागवत्ति देखिये।

नाभाक--एक सूक्तद्रष्टा ऋषि (ऋ. ८.३९-४१)। यह 'नभाक' ऋषि का पुत्र था। ऋग्वेद के तीन या चार सूक्तों के प्रणयन का श्रेय इसे दिया गया है (ऋ. ८.४१. २)।

'नाभाक काण्व' नाम से इसका निर्देश, कई जगह प्राप्त है। किंतु लुडविग के मत में, यह 'काण्व' न हो कर, 'आंगिरस' वंश का था (लुड. ऋग्वेद अनुवाद. ३. १०७)। इसके एक सूक्त में, यह सूर्यवंशी आंगिरस होने का निर्देश भी प्राप्त है।

अपने एक सूक्त में इसने कहा है, मेरे पिता नभाक, अंगिरस, मांधातृ एवं अग्नी के तरह, नये स्तोत्र तयार कर मैं इंद्र एवं अग्नि की स्तुति कर रहा हूँ (ऋ. ८.४०. १२)। इस निर्देश के कारण, ऋषि इस काल मांधातृ के पश्चात् का था, यह शाबित होता है।

२. (सू. इ.) अयोध्या देश का एक राजा। वायु, भागवत, तथा विष्णुमत में, यह श्रुत का पुत्र था। मत्स्य मत में यह भगीरथ का पुत्र था। मत्स्य में इक्ष्वाकु राजा 'श्रुत' का निर्देश ही नहीं है।

विष्णु एवं वायु में इसे 'नाभाग', एवं भागवत में इसे 'नाभ' कहा गया है।

नाभाग--वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से एक, एवं प्राचीनकाल के एक महाप्रतापी राजा (पद्म. सृ. ८)। कई ग्रंथों में, इसे वैवस्वत मनु का पौत्र, एवं नभग राजा का पुत्र कहा गया है (म. आ. ७७.१४; भा. ९.४)।

इसने समुद्रपर्यंत पृथ्वी को सात दिन में जीता था, एवं सत्य के द्वारा उत्तम लोकों पर विजय पायी थी (म. व. २६.११)। पृथ्वी को जीतने के बाद, इसने उसे दक्षिणा के रूप में ब्राह्मणों को दे दिया (म. शां. ९७. २१)। किंतु शीलवान् एवं दयालु होने के कारण, दी हुअी पृथ्वी स्वयं इसके पास वापस आ गयी (म. शां. १२४.१६-१७)।

इसने जीवन में कभी मांस नहीं खाया था। मांसभक्षण के त्याग के इस पुण्य के कारण, इसे 'परावरतत्त्व' का

ज्ञान हो गया, एवं ब्रह्मलोक में इसे प्रवेश मिल गया (म. अनु. ११५.५८-६८)।

इसके सत्याचरण एवं उदारता की एक कथा पद्मपुराण में दी गयी है। अपने कुमारआयु में, यह गुरुगृह में विद्यार्जन कर रहा था। यह मौका देख, वैवस्वत मनु के अन्य पुत्रों ने उसका राज्य आपस में बाँट लिया। नाभाग को उसके राज्य के हिस्से से वंचित कर, इसे इसका पिता हिस्से के रूप में दिया। फिर इसके पिता ने इसे कहा, 'तुम चिंता मत करो। विपुल धनार्जन का रास्ता मैं तुम्हे दिखाता हूँ। आंगिरस ऋषि यज्ञ कर रहे है। यज्ञ के छठवें दिन उन्हे कुछ भ्रम सा हो कर, यज्ञ के मंत्र की उन्हे विस्मृति हो जाती है। उस वक्त, तुम उसे दो 'वैश्वदेवसूक्त' गा कर बताओ। उससे उसका यज्ञ पूरा होगा, एवं प्रसन्न हो कर, यज्ञ के लिये एकत्रित किया सारा धन वह तुम्हे दे देंगा।'

पिता के कथनानुसार, इसने अंगिरस् को 'मंत्रस्मरण के बारे में सहायता दी' एवं अंगिरस् ने भी यज्ञ का सारा धन इसे दे दिया। किंतु इसी वक्त एक कृष्णवर्णीय पुरुष का रूप धारण कर, रुद्र वहाँ उपस्थित हुआ, एवं यज्ञधन माँगने लगा। यज्ञ का अवशिष्ट धन पर रुद्र का ही अधिकार रहता है, यह जानते ही नाभाग ने सारा द्रव्य रुद्र को दे दिया। इसकी इस उदारता से प्रसन्न हो कर, रुद्र ने आंगिरस के यज्ञ की सारी संपत्ति नाभाग को प्रदान की एवं इसे 'ब्रह्मविद्या' भी सिखायी (पद्म. सृ. ८)।

बिल्कुल यही कथा नाभानेदिष्ठ के नाम पर प्राचीन वैदिक ग्रंथों में दी गयी है (ऋ. १०.६१-६२)। ऋग्वेद के उन सूक्तों की रचना 'नाभाक्काण्व' ने की हैं (ऋ. ८.३९-४१; नि. १०.५)।

नाभाग को अंबरीष नामक एक पुत्र था। इसके वंश की विस्तृत जानकारी बारह पुराणों में दी गयी है (वायु. ८९; विष्णु. ४.२; अग्नि. २७२; ब्रह्मांड. ३.६३; ब्रह्म. ७; मत्स्य. १२; ह. वं. १.१०; भा. ९.४-६)।

२. (सू. इ.) अयोध्या देश का राजा। विष्णु, वायु एवं भागवतमत में, यह श्रुत राजा का पुत्र था। मत्स्यमत में, भगीरथ राजा के दो पुत्रों में से यह कनिष्ठ पुत्र था। भागवत में इसका 'नाभ' नामांतर प्राप्त हैं। इसके पुत्र का नाम अंबरीष था। किंतु रामायण में अंबरीष इसके पूर्वकालीन बताया गया है।

इसके नाभागारिष्ट, नाभानेदिष्ट, एवं नाभागदिष्ट नामांतर भी प्राप्त हैं (अग्नि. २७२. १७१; नभग देखिये)।

३. (सू. दिष्ट.) वैशाली देश का राजा। यह वैवस्वत मनु का पौत्र, एवं दिष्ट राजा का पुत्र था। विष्णुमत में यह 'नेदिष्ट' का भागवतमत में यह 'दिष्ट' का, एवं वायुमत में यह मनु का पुत्र था (सुप्रभा ३. देखिये)।

नाभानेदिष्ठ मानव—एक सूक्तद्रष्टा ऋषि (ऋ. १०. ६१-६२)। यह स्वायंभुव मनु का पुत्र था। पुराणों में 'नाभाग' के नाम पर दी गयी 'आंगिरस यज्ञ' की कथा वैदिक ग्रंथों में इसके नाम पर दी गयी है (ऐ. ब्रा. ५. १४; तै. सं. ३. १. ९. ४-६; सां. ब्रा. २८. ४; ३०. ४; सां. श्रौ. २६. ११. २८-३०)।

'पंचविंशब्राह्मण' में इसके नाम का निर्देश 'नाभानेदिष्ठी' नाम से कर, इसने प्रणयित ऋग्वेद सूक्तों को 'नाभानेदिष्ठीय सूक्त' कहा गया है (पं. ब्रा. २०. ९. २)।

नाभि—एक राजा। प्रियव्रतपुत्र आग्नीध्र राजा को पूर्वचित्ति नामक अप्सरा से यह उत्पन्न हुआ था। इसे मेरुदेवी नामक स्त्री थी, जिससे इसे ऋषभदेव नामक पुत्र हुआ। इसके नाम से, इसके 'वर्ष' (राज्य) को 'अजनाभवर्ष' नाम प्राप्त हुआ (भा. ५. २. १९; ४. २)।

नाभिगुप्त—कुशद्वीप का राजा 'प्रैयव्रत' हिरण्यरेतस् के सात पुत्रों में से एक। हिरण्यरेतस् ने अपने राज्य के सात भाग कर, वे अपने सात पुत्रों में बाँट दिये थे (भा. ५.२०.१४; हिरण्यरेतस् देखिये)।

नायकि—अंगिरसकुल का गोत्रकार।

नायु—दक्ष एवं असिक्नी की कन्या, तथा कश्यप की पत्नी।

नारद—एक वैदिक द्रष्टा एवं यज्ञवेत्ता (अ. वे. ५. १९.९; १२.४.१६; २४; ४१; मै. सं. १.५.८)। यह हरिश्चंद्र राजा का पुरोहित था, एवं पुरुषमेध करने की राय इसीने उसे दी थी (ऐ. ब्रा. ७.१३)। वशा धेनु का मांस ब्राह्मण ने भक्षण करना योग्य है या अयोग्य, इस विषय में इसका नामनिर्देश अथर्ववेद में कई बार आया है।

यह बृहस्पति का शिष्य था (सां. ब्रा. ३.९)। यद्यपि सारी विद्याएँ इसने बृहस्पति से प्राप्त की थी, तथापि 'ब्रह्मज्ञान' के प्राप्ति के लिये, यह सनत्कुमार के पास गया था (छां. उ. ७.१.१)।

सोमक साहदेव्य नामक अपने शिष्य को, इसने 'सोमविद्या' सिखायी थी (ऐ. ब्रा. ७.३४)। पर्वत नामक अन्य आचार्य के साथ, इसने आंबष्ठय एवं युधांश्रौष्टि राजाओं को 'ऐंद्रमहाभिषेक' किया था (ऐ. ब्रा. ८.२१)।

२. एक देवर्षि एवं ब्रह्माजी का मानसपुत्र। एक धर्मज्ञ तत्त्वज्ञ, वेदांतज्ञ, राजनीतिज्ञ एवं संगीतज्ञ के नाते, नारद का चरित्रचित्रण महाभारत में किया गया है (म. आ. परि. १. १११)। जी चाहे वहाँ भ्रमण करनेवाले एक ऋषि के नाते, नारद तीनों त्रिकाल आकाशमार्ग से प्रवास करता था, एवं इसका संचार तीनों लोकों में रहता था। यह वेद एवं वेदांत में पारंगत, ब्रह्मज्ञानयुक्त, एवं नयनीतिज्ञ था। राजाओं के घर में इसे बृहस्पति जैसा मान था। यह 'नानार्थकुशल', एवं लोगों के धर्म, राजनीति एवं नित्यव्यवहार आदि विषयों के संशय दूर करने में प्रवीण था। स्वभाव से यह पुण्यशील सीदासादा एवं मृदुभाषणी था। यह उत्कृष्ट प्रवचनकार एवं संगीतकार था।

स्वरूपवर्णन—नारद की शरीरकांति श्वेत एवं तेजस्वी थी। इंद्र ने प्रदान किये सफेद, मृदु एवं धूत वस्त्र यह परिधान करता था। कानों में सुवर्णकुंडल, कंधों पर वीणा, एवं सिर पर, 'श्लक्ष्ण शिखा' (मृदु चोटी) से, यह अलंकृत रहता था।

जन्म—नारद ब्रह्माजी का मानसपुत्र एवं विष्णु का तीसरा अवतार था (भा. १.३.८; मत्स्य. ३.६–८)। यह ब्रह्माजी की जंघा से उत्पन्न हुआ था (भा. ३.१२. २८)। यह नरनारायणों का उपासक था (भा. १.३), एवं दर्शन तथा जिज्ञासापूर्ति के हेतु, यह उनके पास हमेशा जाता था (म. शां. ३२१.१३–१४)। यह चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षिओं में से एक था।

पुनर्जन्म—नारद ने दक्ष के 'हर्यश्व' नामक दस हजार पुत्रों को सांख्यज्ञान का उपदेश दिया, जिस कारण वे सारे विरक्त हो कर घर से निकल गये (म. आ. ७०. ५–६)। अपने पुत्रों को प्रजोत्पादन से परावृत्त करने के कारण, दक्ष नारद पर अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इसे शाप दिया (विष्णु. १.१५)। इस शाप के कारण, नारद ब्रह्मचारी रह कर हमेशा भटकता रहा, एवं सारी दुनिया में झगड़े लगाता रहा (भा. ६.५.३७–३९)। दक्ष का शाप इसे जन्मजन्मांतर के लिये मिला था। इस कारण कश्यप प्रजापति के घर लिये अपने अगले जन्म में भी, दक्ष के शाप की पीड़ा इसे पूर्ववत् ही भुगतनी पड़ी।

दक्ष के शाप की यही कहानी, अन्य पुराणों में कुछ अलग ढंग से दी गयी है। हरिवंश के मत में, दक्ष ने नारद को शाप दिया, 'तुम नष्ट हो कर, पुनः गर्भवास का दुख सहन करोगे' (ह. वं. १.१५)। परमेष्ठी ने अन्य ब्रह्मर्षियों को आगे कर, नारद को उःशाप देने की प्रार्थना दक्ष से की। फिर दक्ष ने परमेष्ठी से कहा, 'मैं अपनी कन्या तुम्हें विवाह में दे दूँगा, एवं उस कन्या के गर्भ से नारद का पुनर्जन्म हो जायेगा (वायु. ६६.१३५–१५०; ब्रह्मांड. ३.२.१८)। इस उःशाप के अनुसार, परमेष्ठी का विवाह दक्षकन्या से होने के पश्चात्, उन्हे नारद पुत्ररूप में प्राप्त हो गया (ब्रह्म. १२.१२–१५)।

देवी भागवत के मत में, दक्ष ने नारद को शाप दिया, 'तुम्हारा नाश हो कर, अगला जन्म तुम्हें मेरे ही पुत्र के नाते लेना पडेगा'। इस शाप के अनुसार, नारद मृत हो गया एवं 'दक्ष' एवं वीरिणी के पुत्र के नाते, नया जन्म लेने पर विवश हो गया (दे. भा. ७.१)।

वायुपुराण के मत में, शिवजी के शाप के कारण जिन प्रजापतियों की मृत्यु हो गयी, उनमें नारद भी एक था (वायु. ६६.९)। अपने अगले जन्म में, यह कश्यप प्रजापति का पुत्र एवं अरुंधती तथा पर्वत इन कश्यप संतति का भाई बन गया (वायु. ७१. ७८. ८०)। महाभारत के मत में, पर्वत नारद का भाई न हो कर, भतीजा था (म. शां. ३०. ५; दे. भा. ६. २७)।

ब्रह्मवैवर्तपुराण में, नारद के पुनर्जन्म की कहानी कुछ अलग ढंग से दी गयी है। दक्ष के शाप के कारण, एक शूद्रस्त्रीगर्भ से यह पुनः उत्पन्न हुआ। इस नये जन्म में, इसकी माता कलावती नामक शूद्र स्त्री थी। द्रमिल नामक शूद्र की वह पत्नी थी। अपने पति की अनुमति से, कलावती ने पुत्रप्राप्ति के हेतु, कश्यप प्रजापति का वीर्य प्राशन किया। बाद में द्रमिल ने देहत्याग किया, एवं कलावती एक ब्राह्मण के घर प्रसूत हो कर, उसे एक पुत्र हुआ। वही नारद है। बाद में इसे कश्यप ऋषि को अर्पण किया गया। कृष्णस्तव के कारण, यह शापमुक्त हुआ, एवं ब्रह्मदेव ने इसे सृष्टि उत्पन्न करने की अनुज्ञा भी दी। किंतु यह आजन्म ब्रह्मचारी ही रहा।

महाभारत में, कश्यप एवं मुनि के पुत्र के रूप में,

नारद ने पुनः जन्म लिया, ऐसा निर्देश प्राप्त है (म. आ. ५९. ४३)।

देवों का वार्ताहर—त्रैलोक्य के राजाओं का वार्ताहर, एवं सलाहगार ऋषि मान कर, नारद का चरित्रचित्रण महाभारत में किया गया है। अर्जुन के जन्म के समय नारद उपस्थित था (म. आ. ११४.४६)। द्रौपदी के स्वयंवर में, अन्य गंधर्व एवं अप्सराओं के साथ, यह गया था (म. आ. १७८.७)। पश्चात् द्रौपदी के निमित्त, पांडवों का आपसमें कोई मतभेद न हो, इस उद्देश्य से नारद इंद्रप्रस्थ चला आया। पांडवों के प्रति, सुंद एवं उपसुंद की कथा का वर्णन कर, द्रौपदी के विषय में झगड़े से बचने के लिये कोई नियम बनाने की प्रेरणा, इसने पांड्वों को दे दी (म. आ. २०४)।

युधिष्ठिर इंद्रप्रस्थ का राजा होने के पश्चात्, नारद ने उसे हरिश्चंद्र की कथा सुना कर, राजसूय यज्ञ की प्रेरणा दी (म. स. ११.७०)। राजसूययज्ञ में अवभृथस्नान के समय, नारद ने स्वयं युधिष्ठिर को अभिषेक किया (म. स. ४९.१०)।

विदर्भ देश की राजकन्या दमयंती के स्वयंवर की वार्ता, इंद्र को नारद ने ही कथन की थी (म. व. ५१.२०-२४)। राजा अश्वपति के पास जा कर, सत्यवान् एवं सावित्री के विवाह का प्रस्ताव नारद ने ही प्रस्तुत किया था (म. व. २७८.११-३२)।

प्राचीन राजाओं की अनेक कथाएँ नारद के द्वारा 'महाभारत' में कथन की गयी हैं। उनमें से इसने सृंजय राजा को कथन किये, 'षोडश राजकीय उपाख्यान' की कथाएँ विशेष महत्त्वपूर्ण मानी जाती है (म. द्रो. परि. १.८.३२५-८७२)। उन कथाओं में निम्नलिखित राजाओं के चरित्र, पराक्रम, महत्ता, दानशीलता, एवं उत्कर्ष का वर्णन किया गया है:—१. आविक्षित मरुत्त, २. वैदिथिन सुहोत्र, ३. पौरव, ४. औशीनर शिबि, ५. दाशरथि राम, ६. ऐक्ष्वाकु भगीरथ, ७. ऐलविल दिलीप, ८. यौवनाश्व मान्धातृ, ९. नाहुष ययाति, १०. नाभाग अंबरीष, ११. यादव शशबिंदु, १२. आमूर्तरयस गय, १३. सांकृति रंतिदेव, १४. दौष्यन्ति भरत, १५. वैन्य पृथु, १६. जामदग्न्य परशुराम। नारद ने कथन की हुयी येही कथाएँ, भारतीय युद्ध के बाद, श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से निवेदन की थी (म. शां. २९)।

भारतीय युद्ध के रात्रियुद्ध में, नारद ने कौरवपांडवों की सेनाओं में दीपक का प्रकाश निर्माण किया था (म. द्रो. १३८)। भारतीय युद्ध में हुए कौरवों के संपूर्ण विनाश की वार्ता, बलराम को नारद ने ही सुनायी थी (म. श. ५३. २३-३१)। अर्जुन एवं अश्वत्थामा के युद्ध में ब्रह्मास्त्र को शांत करने के लिये नारद प्रकट हुआ था (म. सौ. १४. ११-१२)। युद्ध के पश्चात्, युधिष्ठिर के पास आ कर, उसका कुशल समाचार नारद ने पूछा था (म. शां. ९-१२)।

युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञ के समय नारद उपस्थित था (म. आश्व. ९०. ३८)। प्राचीन ऋषिओं की तपःसिद्धि का दृष्टान्त दे कर, नारद ने धृतराष्ट्र की तपस्याविषयक श्रद्धा को बढाया था (म. आश्र. २६.१)। वन में धृतराष्ट्र, कुन्ती, एवं गांधारी दावानल से दग्ध होने का समाचार, नारद ने ही युधिष्ठिर को कथन किया था (म. आश्र. ४५. ९-३१)। नारद ने युधिष्ठिर से कहा, 'धृतराष्ट्र लौकिक अग्नि से नहीं, किंतु अपने ही अग्नि से दग्ध हो गया है'। इतना कह कर, इसने युधिष्ठिर से धृतराष्ट्र को जलांजली प्रदान करने की आज्ञा दी (म. आश्र. ४७. १-९)। सांब के पेट से मुसल पैदा होने का शाप देनेवाले ऋषिओं में, नारद एक था (म. मौ. २. ४)।

तत्त्वज्ञ नारद—एक तत्त्वज्ञ के नाते, नारद श्रेष्ठ विभूति थे। तत्त्वज्ञ नारद ने दिये उपदेश के अनेक कथाभाग 'महाभारत' में निर्देश किये गये है। तीस लाख श्लोकोंवाला 'महाभारत' नारद ने देवताओं को सुनाया था (म. आ. परि. १. ४) 'पंचरात्र' नामक आत्मतत्त्व का उपदेश नारद ने व्यास को दिया था (म. शां. ३२६)। इसने सूर्य के अष्टोत्तरशत नाम का उपदेश धौम्य को दिया था (म. व. ३. १७-२९)। इसने शुकदेव को वैराग्य, ज्ञान आदि विविध विषयों का उपदेश दिया था (म. शां. ३१६-३१८)। मार्कंडेय को नारद ने धर्मशास्त्र एवं तत्त्वज्ञान के बारे में जानकारी दी थी (म. अनु. ५४-६३ कुं.)। पूजनीय पुरुषों के लक्षण, एवं उनके आदरसत्कार से होनेवाले लाभ का वर्णन इसने श्रीकृष्ण को बताया था (म. अनु. ३१. ५-२५)। श्रीकृष्ण की माता देवकी को, विभिन्न नक्षत्रों में विभिन्न वस्तुओं के दान का महत्व नारद ने कथन किया था (म. अनु. ६४. ५-३५)।

'श्रेयःप्राप्ति' के लिये नारायण की उपासना करने का उपदेश, नारद ने पुंडरीक को दिया था (म. अनु. १२४)। समुद्र के किनारे ब्रह्मसत्र करनेवाले ज्ञानी

प्रचेताओं को नारद ने ज्ञानोपदेश दिया था (म. शां. ३१६-३१९)। सृष्टि की उत्पत्ति तथा लय के बारे में जानकारी इसीने देवल को बतायी थी (म. शां. २६७)। समंग के साथ इसका ज्ञानविषयक संवाद हुआ था (म. शां. २७५)। पुत्रशोक करनेवाले अकंपन राजा को, मृत्यु की कथा बता कर इसने शांत किया था (म. शां. २४८-२५०)। शास्त्रश्रवण से क्या लाभ होता है, इसकी जानकारी इसने गालव को दी थी (म. शां. २७६)।

प्राणापान में से प्रथम क्या उत्पन्न होता है, इसका ज्ञान नारद ने देवमत को प्रदान किया (म. आश्व. २४)। शतयूपा को इसने स्वर्ग के बारे में जानकारी दी (म. आश्व. २७)।

भागवत आदि ग्रंथों में भी तत्त्वज्ञ नारद के अनेक निर्देश दिये गये है। सावर्णि मनु को 'पंचरात्रागमतंत्र' का उपदेश नारद ने दिया था (भा. १.३.८; ५.१९.१०)। इसने व्यास को 'भागवत' ग्रंथ लिखने की प्रेरणा दी थी (भा. १.५.८)। ऋषिओं को इसने 'भागवतमाहात्म्य' बताया था (पद्म. उ. १९३-१९५)।

संगीतकलातज्ज्ञ—नारद श्रेष्ठ श्रेणी का संगीतकलातज्ज्ञ एवं 'स्वरज्ञ' था (म. आ. परि. १११.४०)। इसका 'नारदसंहिता' नामक संगीतशास्त्रसंबंधी एक ग्रंथ भी प्राप्त है।

नारद ने संगीत कला कैसी प्राप्त की, इसके बारे में कल्पनारम्य कथा अध्यात्मरामायण में दी गई है (अ. रा. ७)। एक बार लक्ष्मी के यहाँ संगीत का समारोह हुआ। उस समय गायनकला न आने के कारण, लक्ष्मी ने नारद को दासियों के द्वारा बेंत एवं धक्के मार कर सभास्थान से निकाल दिया, एवं संगीतकलाप्रवीण होने के कारण तुंबरु का सम्मान किया। यह अपमान सहन न हो कर, इसने लक्ष्मी को शाप दिया, 'तुम राक्षसकन्या बनोगी। मटके में इकठ्ठा किया गया खून पी कर रहनेवाली स्त्री के उदर से तुम्हारा जन्म होगा। अपने माता के नीच कृत्य के कारण, तुम्हें घर से निकाल दिया जायेगा'।

गायन सीखने के लिये यह गानबंधुओं के पास गया। वहाँ यह गानविद्याप्रवीण बन गया, एवं इसे स्वरज्ञान हो कर, संगीतकला में अन्तर्गत दशसहस्र स्वरों का सूक्ष्म भेदाभेद यह समझने लगा। किन्तु इसका संगीत ज्ञान केवल ग्रांथिक ही रहा। इसके गले से निकलनेवाले स्वर अभी तक बेढंगे ही रहे। अपने अधुरे संगीतज्ञान का प्रदर्शन करने के हेतु, यह तुंबरु के पास गया। वहाँ इसे सारी रागिनियाँ टूटी मरोडीं अवस्था में दिखाई पडीं। इसने उन्हें उनकी यह विकल अवस्था का कारण पूछा। फिर उन्होंने कहाँ, 'तुम्हारे बेढंगे' गायन के कारण, हमारी यह हालत हो चुकी है। तुंबरु का गायन सुनने के बाद हमें पूर्वस्थिति प्राप्त होगी'।

रागिनियों के इस वक्रोक्तिपूर्ण भाषण से लज्जित हो कर, यह श्वेतद्वीप में गया। वहाँ इसने विष्णु की आराधना की। उस आराधना से प्रसन्न हो कर श्रीविष्णु ने इससे कहा, 'कृष्णावतार में मैं खुद तुम्हें गायन सिखाऊंगा'। इस वर के अनुसार, कृष्णावतार के समय, यह कृष्ण के पास गया। वह जांबवती, सत्यभामा एवं रुक्मिणी, इन कृष्णपत्नियों ने तथा बाद में स्वयं कृष्ण ने इसे गायनकला में पूर्ण पारंगत किया। श्रीकृष्ण के पास जाने के पहले यह पुनः एक बार तुंबरु के पास गया था। परंतु वहाँ धैवतों के साथ षड्जादि छः देवकन्याओं को इसने देखा, एवं शरम के मारे यह वहाँसे वापस चला आया।

नारद-नारदी—पुराणों में नारद का व्यक्तिचित्रण, एक धर्मज्ञ देवर्षि की अपेक्षा, एक हास्यजनक व्यक्ति के नाते भी किया गया प्रतीत होता है।

विष्णु की माया के कारण, नारद का रूपांतर कुछ काल के लिये 'नारदी' नामक एक स्त्री में हो गया था। यह कथा विभिन्न पुराणों में, अलग अलग ढंग से दी गई है। 'नारदपुराण' के मत में, वृंदा के कहने पर नारद ने एक बार सरोवर में डुबकी लगाई। उस सरोवरस्नान के कारण, इसका रूपांतर नारदी नामक स्त्री में हो गया। इसी नारदी का कृष्ण से वैवाहिक समागम हो गया। पश्चात् अन्य एक सरोवर में स्नान करने पर, इसे पुरुषरूप फिर वापस मिल गया (नारद. २. ८७; पद्म-पा. ७५)।

यही कथा 'ब्रह्मपुराण' में इस प्रकार दी गयी है। एक बार श्वेतद्वीप में जा कर, नारद ने श्रीविष्णु की स्तुति की। उसने प्रसन्न हो कर इसे वर माँगने के लिये कहा। फिर इसने कहा, 'भगवन् मुझे अपनी माया दिखाओ'। इसे गरुड पर बैठा कर विष्णु कान्यकुब्ज देश ले गया, तथा एक सरोवर में स्नान करने के लिये उसने इसे कहा। स्नान के लिये सरोवर में डुबकी लगाते ही इसे पता चला कि, इसका रूपांतर काशिराज की कन्या सुशीला नामक स्त्री में हो गया है। बाद में सुशीला का रूप धारण किये हुए नारद का ब्याह विदर्भ राजा सुशर्मा से हुआ। पश्चात्

विदर्भ राजा सुशर्मा, तथा काशिराज का आपस में युद्ध हो कर, दोनों का ही नाश हो गया। जनककुल तथा भर्तृकुल दोनों का ही नाश देख कर, दुःखातिरेक से इसने चिता में प्रवेश किया।

बात यहाँ तक बढ़ते ही यह पानी से बाहर आया एवं यह सारा कथाभाग इसे सपने जैसा प्रतीत होने लगा। किन्तु उस प्रसंग के चिह्नस्वरूप जलने की निशानी इसकी जाँघ पर रह गई, तथा उसके दुःख से यह लगातार तड़पने लगा। सरोवर के किनारे बैठे हुए विष्णु का दर्शन लेते ही, इसकी वेदना शान्त हो गयी (ब्रह्म. २२८)।

'देवीभागवत' के कथनानुसार, अपने नारीअवतार में नारद तालजंघ राजा की पत्नी बना था, जिससे इसे बीस पुत्र पैदा हुएँ थे (दे. भा. ६. २८-३०)।

एक बार गाने की मधुर आवाज सुन कर, नारद ने वृंदा से पूछा, 'यह गाने की आवाज कहाँ से आ रही है?' फिर उसने इसे गीतगायन में तल्लीन कुब्जा दिखाई, एवं कुब्जा का जन्मवृत्तांत इसे बताया (नारद २.८०)।

विवाह—शिबिराज संजय की दमयंती नामक कन्या के साथ नारद का विवाह हुआ था, ऐसा कथाभाग कई पुराणों में दिया गया है। 'नारदविवाह' की ब्रह्मवैवर्त पुराण में दी गयी कथा इस प्रकार है (ब्रह्मवै. ४.१३०.१०-१५)। एक बार नारद तथा उसका भतीजा पर्वत घूमते घूमते शैब्यपुत्र संजय (संजय) के घर आये, एवं वहाँ कुछ काल तक रह गये। संजय ने इनका स्वागत किया, एवं अपनी कन्या दमयंती को इनके सेवा में नियुक्त किया। उस समय नारद तथा पर्वत में ऐसा करार हुआ था, 'इन दोनों के मन में जो भी बात आवेगी, वह छिपाना नहीं बल्कि तत्काल दूसरे को कथन करना, अगर कोई कुछ छिपाने की कोशिश करे, तो दूसरा उसे शाप दे सकता है'।

कई दिन बीतने के बाद, नारद दमयन्ती पर प्रेम करने लगा, किन्तु यह बात इसने पर्वत से छिपा रखी। नारद की इस दगाबाजी को देख कर, पर्वत इस पर अत्यंत क्रोधित हुआ, एवं उसने इसे शाप दिया, 'तेरा मुख वानर के सदृश हो जावेगा, एवं अन्यों को तुम साक्षात् मृत्यु के समान दिखाई दोगे'। यह शाप सुन कर, नारद ने भी पर्वत को प्रतिशाप दिया, 'तुम्हें स्वर्गप्राप्ति नहीं होगी'।

इस पर पर्वत दीन हो कर नारद की शरण में आया, तथा इसे अपना शाप वापस लेने के लिये प्रार्थना करने लगा। फिर नारद एवं पर्वत ने अपने अपने शाप वापस ले लिये। पश्चात् संजय की कन्या दमयंती से नारद का ब्याह हो गया (दमयंती देखिये)।

सुवर्णष्ठीविन् कथा—संजय की सेवा से संतुष्ट हो कर, नारद ने उसे वर माँगने के लिये कहा। संजय ने सर्वगुणसंपन्न पुत्र माँगा। नारद के वरानुसार कुछ दिनों के बाद संजय को एक पुत्र हुआ। महाभारत द्रोणपर्व के अनुसार, जिसके मूत्रपूरीषादि उत्सृष्ट पदार्थ सुवर्ण के है, ऐसा पुत्र संजय ने नारद से माँगा। नारद के आशीर्वाद से उसे वैसा ही सुवर्णष्ठीविन् नामक पुत्र पैदा हुआ। सुवर्णमय मलमूत्र विसर्जन करनेवाले उस बालक को कई चोर चुरा ले गये तथा उसका उदर उन्होंने विदीर्ण किया। किन्तु इच्छित सुवर्णप्राप्ति न होने के कारण, क्रोधित होकर वे आपस में ही लड़ कर मर गये (म. द्रो. ५५)।

शान्तिपर्व में यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गई है। 'अपना पुत्र इंद्र का पराजय करनेवाला हो,' ऐसी संजय की इच्छा थी। 'तुम्हारा पुत्र दीर्घायु नहीं होगा' ऐसा शाप पर्वत ने संजय को दिया था। फिर संजय अत्यंत निराश हो गया। उसका दीनवदन देख कर नारद ने उसे कहा, 'पर्वत के शाप से तुम्हारा पुत्र मृत होते ही, मेरा स्मरण करो। मैं तुम्हे उसी रूपगुण का दूसरा पुत्र प्रदान करूँगा।'

नारद के वर के अनुसार संजय को एक पुत्र हुआ। उसका नाम सुवर्णष्ठीविन् रख दिया गया। वह अपना पराभव करेगा ऐसा भय इंद्र को लगा। इसलिये इंद्र ने उस पुत्र के पीछे वज्र छोडा, जिससे कुछ फायदा नहीं हुआ। बाद में एक दाई के साथ वह पुत्र सरोवर की ओर घूमने गया। उस समय उसे एक शेर ने मार डाला। पुत्रशोक से पागल से हुए, संजय ने नारद का स्मरण किया। फिर नारद प्रकट हुआ, एवं संजय के शोकहरणार्थ इसने उसे काफी उपदेश किया। उपदेश करते समय इसने मरुत्तादि राजाओं का चरित्र कथन कर के उसका दुःख कम किया। उसका शोक दूर होने पर, नारद ने उसे उसका मृत पुत्र वापस दिया (म. द्रो. परि. १. क्र. ५८)।

शत्रुघ्न को चेतावनी—रामायणकाल में राम का अश्वमेधीय अश्व वीरमणि ने पकड़ लिया। उस समय वहाँ प्रकट हो कर, नारद ने अश्व की रक्षा करनेवाले शत्रुघ्न को चेतावनी दी, एवं सावधानी से युद्ध करने के लिये कहा। 'युद्धभूमि में विजय अत्यंत प्रयत्न से ही प्राप्त होता है,' ऐसा इसके उपदेश का सार था।

कलियुग में—एक बार पुष्करक्षेत्र में ऋषिओं का सत्र चालू था। वहाँ अनेक प्रकार की चर्चाएँ चल रही थीं। उस में कलियुग के बारे में चर्चा करते वक्त एक ऋषि ने कहा, 'अन्य कौन से ही युग से कलियुग अच्छा है, क्यों कि उसमें फलप्राप्ति शीघ्र होती है।' इतने में नारद एक हाथ में शिश्न, तथा एक हाथ में जबान पकड़ कर वहाँ आया। इसने ऋषियों से कहा, 'ये दो इन्द्रिय कलियुग में अनिवार्य होती है। इसलिये इस पाखंड-प्रचुर भारत का त्याग कर आप अन्यत्र चलें'। यह सुनते ही ऋषियों ने सत्र समाप्त कर दिया, तथा वे वहाँ से चले गये (स्कन्द. २. ७. २२)। जिस समय ब्रह्मदेव ने सत्र किया, उस समय उपस्थित ब्राह्मणों में नारद एक था (पद्म. सृ. ३४)। इसने कोटितीर्थ, जयादित्य, नवदेवी, भट्टादित्य इ. तीर्थों की स्थापना की (स्कन्द. १. ४३-४७)।

कृष्णकथाओं में नारद—एक बार नारद नंद के घर गया। वहाँ इसने सोचा कि, कृष्ण जब प्रत्यक्ष विष्णु है, तो उसकी पत्नी लक्ष्मी ने भी यहीं कहीं अवतार अवश्य लिया होगा। इसी विचार से इसने नंद के परिवार में लक्ष्मी का तलाश करना प्रारंभ किया। पश्चात् इसने देखा कि, भानु नामक गोप की अंधी, लूली, एवं बहरी कन्या बन कर, लक्ष्मी ने नंदपरिवार में जन्म लिया है (पद्म. पा. ७१)।

कृष्णजन्म के समय, उसके पिता वसुदेव एवं माता देवकी मथुरा का राजा कंस के कारागार में कैद किये गये थे। उस समय, वसुदेव एवं देवकी के आँठवे पुत्र से *अपने को धोखा है, यह समझ कर*, कारागार में पैदा हुएँ उनके पहले छः पुत्रों को कंस छोड़ देना चाहता था। किंतु कंस की पापराशि बढ़ाने के हेतु, उन सारे पुत्रों का वध करने की प्रेरणा नारद ने कंसराजा को दी। उस उपदेश के अनुसार, कंस ने देवकी के छः पुत्रों का, जन्मते ही वध किया (भा. १.१.६४)।

नरकासुर के बंदीखाने से मुक्त किये सोलह हजार स्त्रियों से, कृष्ण ने भिन्न भिन्न मंडपों में एक ही मुहूर्त पर विवाह किया। यह चमत्कृतिजनक वृत्त सुन कर नारद को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। इस वार्ता की सत्यता अजमाने के लिये, यह कृष्ण के घर स्वयं चला आया, एवं हरएक कृष्णपत्नी की कोठी में जा कर जाँच लेने लगा। वहाँ इसने देखा कि, अपने हरएक पत्नी के कोठी में, कृष्ण उपस्थित है, एवं किसी न किसी कार्य में वह मग्न है। फिर फजिहत हो कर, नारद कृष्ण की शरण में गया (भा. १०.५९.३३-४५)।

एक बार श्रीकृष्ण अपनी पत्नी रुक्मिणी के पास बैठा था। उस वक्त नारद ने प्रकट हो कर, उसे स्वर्ग का पारिजातक पुष्प दिया। श्रीकृष्ण ने उसे रुक्मिणी को दिया। इस कारण सत्यभामा तथा कृष्ण में झगड़ा हो गया (ह. वं. २.६५-७३; विष्णु. ५.३०)। 'पति का दान करने पर वही पति जन्मजन्मान्तर में प्राप्त होता है', आदि कह कर, इसने सत्यभामा से स्वयं ही श्रीकृष्ण का दान ले लिया। पश्चात् कृष्ण तथा पारिजातक वृक्ष के भार का सुवर्ण ले कर, इसने उसे लौटा दिया (पद्म. उ. ८८)।

पार्वती का विवाह शंकर के साथ करने की सलाह नारद ने हिमालय को दी थी (पद्म. सृ. ४३)।

इंद्रसभा में—एक बार इन्द्र अपनी सभा में अप्सराओं के साथ बैठा था। उस वक्त नारद वहाँ गया। उत्थापन के द्वारा योग्य मान देने के बाद, इन्द्र ने नारद से पूछा, 'मैं किस अप्सरा को नृत्य करने का आदेश दूँ'? नारद ने कहा 'गुणरूप में जो खुद को श्रेष्ठ समझती हो वही नृत्य करें'। तब मैं श्रेष्ठ, मैं श्रेष्ठ कह कर सारी अप्सराएँ आपस में झगड़ने लगी। यह देख इन्द्र ने उन्हें कहा, 'इसका *निर्णय नारद ही कर देंगे'। नारद से पूछा* जाते ही इसने कहा, 'तप करनेवाले दुर्वासस् को जो मोहित कर सके उसे ही मैं श्रेष्ठ कहूँगा'। पश्चात् वपु नामक एक अप्सरा ही इस काम के लिये तैयार हुई (मार्क. १.३०-४७)।

इनके अतिरिक्त अनेक पौराणिक व्यक्तिओं के साथ नारद का संबंध आता है (नलकूबर, प्रह्लाद, रुद्रकेतु, शेष तथा वृन्दा देखिये)।

धर्मशास्त्रकार—धर्मव्यवहार पर नारद के 'लघुनारदीय' एवं 'बृहन्नारदीय' ऐसे दो ग्रंथ उपलब्ध हैं। मनु तथा नारद के मतों में काफी साम्य है। याज्ञवल्क्य तथा पराशर ने प्राचीन धर्मशास्त्रकारों में नारद का उल्लेख नहीं किया है। किंतु विश्वरूप ने, वृद्धयाज्ञवल्क्य का (याज्ञ. १.४-५) एक श्लोक उद्धृत कर, नारद को दस धर्मशास्त्रकारों में से आद्य धर्मशास्त्रकार मान लिया है। विश्वरूप ने अन्यत्र भी इसका उल्लेख अनेक बार किया है (याज्ञ. २.१९०; १९६; २२६; ३.२५२)।

मेधातिथि ने नारद का एक गद्य उद्धरण ले कर, इसका अनेक बार उल्लेख किया है। अग्निपुराण में नारदस्मृति का काफी भाग आया है। 'स्मृतिचन्द्रिका', 'हेमाद्रि'

'पराशरमाधवीय' आदि ग्रंथों में, नारद के काफी श्लोक लिये गये हैं।

नारद याज्ञवल्क्य का परवर्ती होगा। नारद ने सात प्रकार के दिव्य दिये हैं। याज्ञवल्क्य ने पाँच ही प्रकार के दिये हैं। नारद ने न्यायशास्त्र का सुसंगत विवेचन नहीं किया। याज्ञवल्क्य ने उसे व्यवस्थित ढँग से किया है।

नारद किस प्रदेश का रहनेवाला था, यह बताना कठिन है। इसने कार्षापण (सिक्का) का उल्लेख किया है। यह सिक्का पंजाब में प्रचलित था। कुछ लोग कहते हैं कि, यह नेपाल का निवासी होगा।

भट्टोजी दीक्षित ने 'ज्योतिर्नारद' नामक ग्रंथ का उल्लेख किया है (चतुर्विंशतिमत. ११)। रघुनंदन ने 'बृहन्नारद' का एवं 'निर्णयसिंधु', 'संस्कारकौस्तुभ' आदि ग्रंथों में 'लघुनारद' का निर्देश किया है। 'खुले आम किये गये पातक की अपेक्षा, गुप्तरूप से किया गया पातक कई गुना कम दोषार्ह है, क्यों कि, उसमें कम से कम पातक करनेवाले आदमी की धर्म के प्रति भीरूता प्रकट होती है', ऐसा धर्मशास्त्रकार के नाते नारद का कहना था (नारद. १३.२७)।

शिक्षाकार—नारद ने सामवेद पर एक 'शिक्षा' की रचना की। यह शिक्षा प्रायः श्लोकबद्ध है। 'भट्टशोभाकर' ने उस पर भाष्य लिखा है।

अन्य ग्रंथ—नारद के नाम पर 'नारदपुराण' एवं वास्तुशास्त्रसंबंधी अन्य एक ग्रंथ उपलब्ध हैं। उनमें से 'नारदपुराण' इसने 'सारस्वत कल्प' में बताया था (नारद. २.८२)।

३. विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५९)।

४. राम की सभा का एक धर्मशास्त्री। इसने शूद्र हो कर भी तपस्या करनेवाले शंबूक नामक शूद्र का, राम के द्वारा वध करवाया। सोलह साल की छोटी उम्र में मृत हुए एक ब्राह्मणपुत्र को इसने पुनः जीवित कर दिया (वा. रा. उ. ७४)।

नारद काण्व--एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१३; ९. १०४-१०५)।

नारद-पर्वत—वैदिक ऋषिद्वय (ऐ. ब्रा. ७.३४; ८.२१; नारद १. देखिये)।

नारदिन्--विश्वामित्र का पुत्र।

नारदी—नारद ने एक बार वृंदारण्य के कौसुम सरोवर में स्नान किया, जिस कारण उसका पुरुषत्व नष्ट हो कर वह स्त्री बना। उस समय उसे नारदी नाम प्राप्त हुआ (नारद. उ. ८०; नारद देखिये)।

नारायण--एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.९०)।

२. एक भगवत्स्वरूप देवता, एवं स्वायंभुव मन्वंतर के सत्ययुग में प्रकट हुएँ भगवान् वासुदेव के चार अवतारों में से एक। यह एवं इसके तीन भाई नर, हरि एवं कृष्ण धर्म ऋषि के पुत्र के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुएँ थे (म. शां. ३३४.९.१२; नरनारायण एवं नर देखिये)। देवकीपुत्र कृष्ण इसीका ही अवतार बताया गया है (म. आ. १.१)।

दक्षयज्ञ के समय, भगवान् शंकर ने एक प्रज्वलित त्रिशूल चलाया। दक्षयज्ञ का विध्वंस कर के, वह भगवान् नारायण की छाती में आ लगा। फिर नारायण ने हुंकार किया, एवं वह त्रिशूल शंकर के हाथ में लौटा दिया। अपने त्रिशूल के अवमान से क्रुद्ध हो कर, शंकर ने नर एवं नारायण पर आक्रमण किया। पश्चात् हुए रुद्र-नारायण युद्ध में, नारायण ने रुद्र का गला दबा दिया। अतः रुद्र 'नीलकंठ' हो गया (म. शां. ३३०.४९)।

नारायण ने देव एंव दानवों को समुद्रमंथन के लिये प्रवृत्त किया (म. आ. १५.११-१३)। पश्चात् इसने मोहिनी का रूप धारण कर, देवताओं को अमृत पिलाया (म. आ. १६.३९-४०)। देवासुरसंग्राम में इसने असुरों का संहार किया था (म. आ. १७.१९-३०)।

नारायण के कृष्ण एवं श्वेत केश, श्रीकृष्ण एवं बलराम के रूप में प्रगट हुए थे। महाभारत काल में, यह अपने भाई नर के साथ, बदरिकाश्रम में सुवर्णमय रथ पर बैठ कर तपस्या करता था (म. शां. १२२४*)।

महाभारत में, श्रीविष्णु के वाराह, नृसिंह आदि अवतार नारायण के ही अवतार बताये गये हैं (म. स. ३८)। पृथ्वीलोक से श्रीकृष्ण का निर्याण होने के बाद, अपने नारायणस्वरूप में वह बिलीन हो गया (म. स्वर्गा. ५.२४*)।

पौष मास में नारायण के पूजन से प्राप्त होनेवाले पुण्यफल का वर्णन महाभारत में दिया गया है (म. अ. १०९.४)।

पद्ममत में, पुष्करक्षेत्र में हुए ब्रह्माजी के यज्ञ में, उद्गातृगणों में से एक प्रतिहर्ता के नाते, नारायण उपस्थित था (पद्म. सृ. ३४)।

३. तुषित एवं साध्य देवों में से एक।

४. (कण्व. भविष्य.) एक राजा। भागवत तथा

विष्णु मत में यह भूमित्र का, वायुमत में भूतिमित्र का, तथा मत्स्य तथा ब्रह्मांड के मत में भूमिमित्र का पुत्र था।

नारायणि—अंगिरा कुल का गोत्रकार। 'परस्परायणि' इसका ही पाठभेद है।

नारायणी—मुद्गल ऋषि की स्त्री। इसी को 'इंद्रसेना' कहते थे।

२. दुर्गा का एक नाम। मार्कंडेय पुराण में इसका माहात्म्य दिया गया है (मार्कं. ८८)।

नारी—मेरु की कन्या, तथा अग्नीध्रपुत्र करू की स्त्री (भा. ५. २. २३)।

नारीकवच—(सू. इ.) अश्मक देश के मूलक राजा का नामांतर (मूलक १. देखिये)। परशुराम के भय के कारण, यह सदैव नारीसमुदाय में रहता था। इस कारण इसे यह नाम प्राप्त हुआ।

नार्मर—एक वैदिक राजा। यह 'उर्जयन्ती' का राजा था। सहवसु के राजा के साथ इन्द्रशत्रु के रूप में, इसका उल्लेख प्राप्त है (ऋ. २. १३.८)।

नार्मेध—एक सूक्तद्रष्टा (शकपूत देखिये)।

नार्य—एक उदार वैदिक राजा। नर्य का वंशज होने से इसे नार्य नाम प्राप्त हुआ।

नार्षद—कण्व ऋषि का पैतृक नाम (ऋ. १०. ३१. ११; अ. वे. ४. १९. २)।

२. इन्द्र का शत्रु एक असुर (ऋ. १०. ६१. १३)।

३. अश्विनों का आश्रित। इसकी पत्नी का नाम रूशती था (ऋ. १. ११७. ८)।

नालायनी—इन्द्रसेना का नामांतर (मौद्गल्य ३. देखिये)।

नालीजंघ—नाड़ीजंघ देखिये।

नासत्य—अश्विनीकुमारों में से एक का नाम। दूसरे का नाम दस्र था (म. शां. २०१.१७)। मार्तण्ड नामक आठवें प्रजापति के ये पुत्र थे।

नाविक—विदुर का मित्र। लाक्षागृह से बाहर आने के बाद, पांडवों को अपनी नौका के सहारे, इसने गंगा के पार पहुँचाया (म. आ. परि. १. क्र. ८५. पंक्ति. ७)। यह सामान्यनाम होगा।

नाहुष—एक सूक्तद्रष्टा (ययाति देखिये)।

२. एक राजा। यह नहुस् जाति के लोगों का राजा था। इसके पास अच्छे अश्व थे (ऋ. ८. ६.२४)।

निकुंत—भविष्य के मत में शोणाश्व का पुत्र।

निकुंभ—कृष्ण के द्वारा मारा गया एक दानव (ह. वं. २. ८५-९०; षट्पुर देखिये)।

२. प्रह्लाद का तृतीय पुत्र (म. आ. ५९. १९)। इसके सुंद एवं उपसुंद नामक दो पुत्र थे (म. आ. २०१. २०००)।

३. (सू. इ.) अयोध्या के हर्यश्व राजा का पुत्र (वायु. ८८.६२)। इसे संहिताश्व नामक एक पुत्र था (पद्म. सृ. ८; क्षेमक देखिये)। भागवत में इसके पुत्र का नाम बर्हणाश्व दिया हैं।

४. गणेश का प्राचीन नाम। वाराणसी में इसका मंदिर था। इसकी पूजाआराधना करने पर भी, दिवोदास की स्त्री सुयशा को पुत्र न हुआ। इसलिये उसने इसका देवालय तथा देवमूर्ति को उद्ध्वस्त किया। फिर क्रुद्ध हो कर, निकुंभ ने वाराणसी उद्ध्वस्त होने का शाप दिया (ब्रह्मांड. ६७. ३०-५५; वायु. ९०.२७.५२; ब्रह्म. ११.४३; गणपति देखिये)। उस शाप के अनुसार, क्षेमक राक्षस के द्वारा, वाराणसी उद्ध्वस्त हो गयी।

५. कश्यप एवं दनु का पुत्र, एक दानव (म. आ. ५८.२६)।

६. कुंभकर्ण के वृत्रज्वाला से उत्पन्न हुए दो पुत्रों में से दूसरा पुत्र (भा. ९.१०.१८) हनुमानजी ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ७५)।

७. रावण के पक्ष का एक राक्षस। नील नामक वानर ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ९.४३)।

८. दुर्योधन के पक्ष का एक योद्धा (म. द्रो. १३१. ८४)।

९. स्कन्द का एक सैनिक (म. श. ४४.५२)।

निकुंभनाभ—बलि दैत्य के सौ पुत्रों में से एक।

निकुषज—ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र।

निकृषज—कश्यप कुल का एक ब्रह्मर्षि। 'निकृतिज' इसका नामांतर हैं।

निकृति—सुबल राजा की कन्या, गांधारी की बहन, तथा धृतराष्ट्र की भार्या (म. आ; १०३. १११३; पंक्ति. ४)।

२. दंभ एवं माया की कन्या (भा. ४.८.३)।

निकृतिज—निकृतज देखिये।

निकोथक भायजात्य—एक ऋषि। भयजात का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ। यह प्रतिथि देवतरथ का शिष्य था (वं. ब्रा. २)

निक्षुभा--स्वर्गलोक की एक अप्सरा। सूर्य के शाप के कारण, इसे मृत्युलोक में जन्म प्राप्त हुआ, एवं सुजिह्व नामक मिहिर गोत्रीय सदाचारी ब्राह्मण के घर, कन्यारूप से इसका जन्म हुआ।

अपने पिता की आज्ञानुसार, यह हमेशा अग्नि प्रज्वलित कर लाया करती थी। एक दिन, इसके हाथ में स्थित अग्नि भड़क उठा, एवं उसकी फड़कती ज्वाला में, इसका अपूर्व रूपयौवन सूर्य को दिख पड़ा। सूर्य को इसके प्रति कामवासना जाग्रत हुई।

पश्चात् सूर्य मनुष्यरूप धारण कर, सुजिह्व के पास आया, एवं कहने लगा, 'मैंने निक्षुभा का पाणिग्रहण किया है, एवं मुझसे उसे गर्भधारणा भी हुयी है'। फिर क्रुद्ध हो कर सुजिह्व ने निक्षुभा को शाप दिया, 'तुम्हारा गर्भ अग्नि से आवृत होने के कारण, तुम्हारी होनेवाली संतति, लोगों के लिये निंद्य एवं तिरस्करणीय होगी'।

फिर सूर्य अग्नि का रूप धारण कर, निक्षुभा के पास आया एवं उसने इसे कहा, 'तुम्हारी संतति अपूज्य होने पर भी, वह सद्विद्य एवं सदाचारी रहेंगी, एवं मेरे पूजा का अधिकार उसे प्राप्त होगा।

बाद में इसे सूर्य की गर्भ से अनेक पुत्र हुएँ। मग, द्विजातीय, भोजक आदि उनके नाम थे, एवं शाकद्वीप में वे रहते थे। पश्चात् कृष्णपुत्र सांब ने, उन्हे जम्बुद्वीप में से सांबपुर में स्थित सूर्यमंदिर में पूजाअर्चा का काम करने के लिये, नियुक्त किया। उनके साथ, उनके अठारह कुल सांबपुर में आये एवं बस्ती बना उधर ही रहने लगे। सांब ने भोजकुल में पैदा हुई कन्याएँ उन्हे प्रदान की (भवि. ब्राह्म. १३९-१४०; मग देखिये)।

भविष्यपुराण में दी गयी सूर्यवंशीय एवं मिहिरकुलीय लोगों की यह कथा रूपकात्मक प्रतीत होती है। शुरू में जातिबहिष्कृत माने गये वे लोग, बाद में आनर्त देश के भोजवंश में सम्मीलित हो गये से दिखते है।

निखर्वट--रावण के पक्ष का एक राक्षस। तार नामक वानर ने इसका वध किया (म. व. २६९. ८)।

निगद पार्णवल्कि--एक वैदिक ऋषि। यह पर्णवल्क का वंशज, एवं गिरिशर्मन् काण्ठेविद्धि का शिष्य था (वं. ब्रा. १)।

निघ्न--(सू. इ.) अयोध्या का राजा। यह अनरण्य राजा का पुत्र था। इसे अनमित्र तथा रघूत्तम नामक दो पुत्र थे (पद्म. सृ. ८)।

२. (सो. वृष्णि) एक यादव राजा। विष्णु, मत्स्य एवं वायु के मतानुसार, यह अनमित्र राजा का पुत्र था। इसे 'निम्न' नामांतर भी प्राप्त था।

निचक्नु--(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा। विष्णु मत में यह अधिसामकृष्ण का पुत्र था (निमिचक्र देखिये)।

निचंद्र--कश्यप एवं दनु का पुत्र, एक दानव (म. आ. ५९. २६)।

नितंभू--एक महर्षि। यह शरशय्या पर पडे हुए भीष्मजी को देखने आया था (म. अनु. २६. ८)।

नितान मारुत--एक वैदिक व्यक्तिनाम (क. सं. २५. १०)।

नित्य--मरीचिकुलोत्पन्न एक ऋषि।

२. कश्यप कुल का मंत्रकार।

३. शांडिल्यकुल का एक ऋषि। यह मंत्रद्रष्टा था।

निदाघ--कश्यपकुल का गोत्रकार। यह भृगु ऋषि का शिष्य था।

२. पुलस्त्य का पुत्र, एक ऋषि। यह ब्रह्मपुत्र ऋभु का शिष्य था (नारद. १.४९)।

निदाज--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। वायुमत में यह शूरराजा का पुत्र था।

निद्राधर--कश्यप तथा दनु का पुत्र, एक दानव।

निधि--सुख देवों में से एक।

निध्रुव काण्व--एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.६३)। कश्यपवंश के वत्सार ऋषि का यह पुत्र था। च्यवन ऋषि तथा सुकन्या की कन्या सुमेधस्, इसकी स्त्री थी। कुंड-पायिन् नामक सुविख्यात आचार्य इसीका ही पुत्र था। (ब्रह्मांड. ३.८.३१; वायु. ७.२७)।

निंदिताश्व--एक वैदिक राजा। यह मेध्यातिथि का आश्रयदाता था (ऋ. ८.१;२०)।

'तिरस्कार्य अश्वोंवाला,' ऐसा इसका नाम का अर्थ लगाया जाये, तो यह कोई ईरानी राजा प्रतीत होता है। किंतु सायणाचार्य इसके नाम का अर्थ, 'अपने विपक्षियों के अश्वों को लज्जित करनेवाला,' ऐसा लगाते है।

निबंधन--(सू. इ.) अयोध्या के अरुण राजा का पुत्र। इसका पुत्र सत्यव्रत 'त्रिशंकु' नाम से प्रसिद्ध हुआ था (त्रिशंकु देखिये)। इसे त्रिबंधन भी कहते थे (भा. ९.७.४; त्रिधन्वन् देखिये)।

२. एक ऋषि। इसकी माता भोगवती के साथ इसका अध्यात्म विषय पर हुआ संवाद मनन करने योग्य है (म. शां. परि. १. क्र. १५; पंक्ति. ६)।

निमि ' विदेह '—अयोध्यापति इक्ष्वाकु राजा का बारहवाँ पुत्र, एवं ' विदेह ' देश तथा राजवंश का पहला राजा (वा. रा. उ. ५५; म. स. ८.९)। यह एवं इसका पुरोहित वसिष्ठ के दरम्यान हुए झगडे में, इन दोनों ने परस्पर को विदेह (देहरहित) बनने का शाप दिया था। उस विदेहत्व की अवस्था के कारण, इसे एवं इसके राजवंश को ' विदेह ' नाम प्राप्त हुआ (मत्स्य. ६१.३२-३६; पद्म. पा. २२; २४-३७; वायु. ८९.४)। इसके नाम के लिये, ' नेमि ' पाठभेद भी उपलब्ध है।

इसका पिता इक्ष्वाकु मध्यदेश (आधुनिक उत्तर प्रदेश) का राजा था। इक्ष्वाकु के पुत्रों में विकुक्षि शशाद एवं निमि, ये दो प्रमुख थे। उनमे से विकुक्षि इक्ष्वाकु के पश्चात् अयोध्या का राजा बना, एवं उसने सुविख्यात इक्ष्वाकुवंश की स्थापना की। निमि को विदेह का राज्य मिला, एवं इसने विदेह राजवंश की स्थापना की।

गौतम ऋषि के आश्रम के पास, निमि ने इंद्र के अमरावती के समान सुंदर एवं समृद्ध नगरी की स्थापना की थी। उस नगरी का नाम ' वैजयंत ' या ' जयंत ' था। यह नगरी दक्षिण दंडकारण्य प्रदेश में थी, एवं रामायण काल में, वहाँ तिमिध्वज नामक राजा राज्य करता था (वा. रा. अयो. ९.१२)। ' जयंत ' नगरी निश्चितरूप में कहाँ बसी थी, यह कहना मुश्किल है। डॉ. भांडारकर के मत में, आधुनिक विजयदुर्ग ही प्राचीन जयंतनगरी होगी। श्री. नंदलाल दे के मत में आधुनिक वनवासी शहर की जगह जयंतनगरी बसी हुयी थी।

निमि की राजधानी ' मिथिला ' नामक नगरी में थी। उस नगरी का मिथिला नाम, इसके पुत्र ' मिथि जनक ' के नाम से दिया गया था (वायु. ८९.१-२; ब्रह्मांड. ३. ६४.१-२)।

एक बार, निमि ने सहस्र वर्षों तक चलनेवाले एक महान् यज्ञ का आयोजन किया। उस यज्ञ का ' होता ' (प्रमुख आचार्य) बनने के लिये इसने बड़े सम्मान से अपने कुलगुरु वसिष्ठ को निमंत्रण दिया। उस समय वसिष्ठ और कोई यज्ञ में व्यस्त था। उसने इससे कहा, ' पाँचसौ वर्षों तक चलनेवाले एक यज्ञ के कार्य में, मैं अभी व्यस्त हूँ। इसलिये वह यज्ञ समाप्त होने तक तुम ठहर जाओ। उस यज्ञ समाप्त होते ही, मैं तुम्हारे यज्ञ का ऋत्विज बन जाऊँगा।

वसिष्ठ के इस कहने पर, निमि चुपचाप बैठ गया। उस मौनता से वसिष्ठ की कल्पना हुयी कि, यज्ञ पाँचसौ वर्षों तक रुकाने की अपनी सूचना निमि ने मान्य की है। इस कारण, वह इंद्र का यज्ञ करने चला गया।

इंद्र का यज्ञ समाप्त करने के बाद, वसिष्ठ निमि के घर वापस आया। वहाँ उसने देखा कि, राजा ने उसके कहने को न मान कर, पहले ही यज्ञ शुरू कर दिया है, एवं गौतम ऋषि को मुख्य ऋत्विज बनाया है। फिर क्रुद्ध हो कर वसिष्ठ ने पर्यंक पर सोये हुये निमि को शाप दिया, ' अपने देह से तुम्हारा वियोग हो कर, तुम विदेह बनोगे '। जागते ही इसे वसिष्ठ के शाप का वृत्तांत विदित हुआ। फिर निद्रित अवस्था में शाप देनेवाले दुष्ट वसिष्ठ गुरु से यह संतप्त हुआ, एवं इसने भी उसे वही शाप दिया (विष्णु. ४.५.१-५; भा. ९.१३.१-६; वा. रा. उ. ५५-५७)।

पद्म पुराण में ' वसिष्ठशाप ' की यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। अपने स्त्रियों के साथ, निमि द्यूत खेल रहा था। इतने में वसिष्ठ ऋषि यकायक वहाँ आ गया। द्यूत-क्रीडा में निमग्न रहने के कारण, निमि ने उसे उत्थापन आदि नहीं दिया। उस अपमान के कारण, वसिष्ठ ने इसे ' विदेह ' बनने का शाप दिया (पद्म. पा. ५.२२)।

वसिष्ठ के शाप के कारण, निमि का शरीर अचेतन हो कर गिर पड़ा, एवं इसके प्राण इधर-उधर भटकने लगे। इसका अचेतन शरीर सुगंधि तैलादि के उपयोग से स्वच्छ एवं ताज़ा रख दिया गया। निमि का यज्ञ समाप्त होने पर, यज्ञ के हविर्भाग को स्वीकार करने देवतागण उपस्थित हुये। फिर उन्होंने निमि से कुछ आशीर्वाद माँगने के लिये कहा। निमि ने कहा, ' शरीर एवं प्राण के वियोग के समान दुःखदायी घटना दुनिया में और नहीं है। एक बार ' विदेह ' होने के बाद, मैं पुनः शरीर-ग्रहण करना नहीं चाहता। दुनिया हर व्यक्ति की आँखो में मेरी स्थापना हो जाये, जिससे मानवी शरीर से मैं कभी भी जुदा न हो सकूँ '। निमि की इस प्रार्थना के अनुसार, देवों ने मानवी आँखों में इसे जगह दिलवायी। आँखों में स्थित निमि के कारण, उस दिन से मानवों की आँखे झपाने लगी, एवं आँख झपाने की उस क्रिया को ' निमिष ' कहने लगे (विष्णुधर्म. १.११७)।

मत्स्य एवं पद्मपुराण के मत में, ' विदेह अवस्था ' के शाप से मुक्ति पाने के लिये, निमि एवं वसिष्ठ ब्रह्माजी के पास गये। ब्रह्माजी ने वर प्रदान कर, निमि को मानवों

के आँखों में रहने के लिये कहा, एवं वसिष्ठ को मित्र एवं वरुण के अंश से जन्म लेने के लिये कह दिया (मत्स्य. २०१.१७-२२; पद्म. पा. २२.३७-४०)।

मृत्यु के समय निमि निसंतान था, और भावी युवराज के न होने के कारण, अराजकता फैलने का धोखा था। निमि के अचेतन शरीर से पुत्र निर्माण करने के हेतु, उसे यज्ञ की 'अरणी' बनायी गयी। उस 'अरणी' का मंथन करने के बाद, उससे एक तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ। वह 'अरणी' के मंथन से निकला, इसलिये उसे 'मिथि' कहने लगे (वायु. ८०)। माता के विना, केवल पिता से ही उसका जन्म हुआ, इस कारण उसे 'जनक' की उपाधि प्राप्त हुयी। 'विदेह' पिता का पुत्र होने के कारण, मिथि जनक को 'वैदेह' नामांतर भी प्राप्त था (वा. रा. उ. ५७)।

मृत्यु के पश्चात्, निमि यमसभा में प्रविष्ट हुआ, एवं सूर्यपुत्र यम की उपासना करने लगा (म. स. ८.९)।

२. विदर्भ देश का राजा। इसने अगस्त्य ऋषि को अपनी कन्या एवं राज्य अर्पित किया था। उस पुण्य के कारण, इसे स्वर्गलोक प्राप्त हुआ (म. अनु. १३७. ११)।

३. अत्रि कुल में उत्पन्न एक ऋषि। यह दत्त आत्रेय का पुत्र था (म. अनु. ९१.५)। इसने श्रीमान् नामक अपने मृतपुत्र को पिंडदान किया, एवं इस तरह मृतों के लिये 'श्राद्ध' करने का संस्कार सर्व प्रथम आरंभ किया (म. अनु. ९१.१४-१५)। इसके द्वारा स्मरण करने पर, इसके पितामह अत्रि ऋषि ने इसे दर्शन दिया था, एवं इससे संभाषण किया था (म. अनु. ९१.१८)।

४. एक यादव राजा। विष्णु, वायु, एवं मत्स्यमत में, यह अंधक राजा का बंधु सात्वत भजमान का पुत्र था। भागवत में इसे 'निम्लोचि' कहा गया है (भा. ९.२४. ६-८)।

५. (सो. कुरु. भविष्य) एक राजा। भागवतमत में यह दंडपाणि राजा का पुत्र था।

निमिचक्र—(सो. कुरु. भविष्य) कुरु देश का राजा। अधिसासकृष्ण का पुत्र था। इसके राज्यकाल में, यमुना नदी में बाढ आ गयी। इस कारण हस्तिनापुर छोड कर, इसने कौशांबी नगर में अपनी नयी राजधानी बसायी। इसका पुत्र चित्ररथ। इसे निचक्नु, निर्वक्र, एवं विवक्षु आदि नामांतर भी प्राप्त थे।

निमिष—अमृतरक्षक देवों में से एक। इसका पक्षीराज गरुड से युद्ध हुआ था (म. आ. २८.१९)। इसके नाम के लिये, भांडारकर संहिता में 'निमेष' पाठभेद प्राप्त है।

निमेष—गरुड के पुत्रों में से एक।

निम्न—(सो. वृष्णि) एक यादव राजा। भागवतमत में यह अनमित्र राजा का पुत्र था (निघ्न देखिये)।

निम्लोचि—एक यादव राजा (निमि. ४. देखिये)।

नियज्ञ—(सू. इ.) अयोध्या का एक राजा। यह विश्वसह राजा का पुत्र था। इसके राज्यकाल में अधार्मिकता के कारण भयानक अनावृष्टि उत्पन्न हुयी, एवं उससे इसका राज्य नष्ट हुआ। इसकी रानी के द्वारा प्रार्थना करने पर, वसिष्ठ ऋषि ने एक यज्ञ किया। उस यज्ञ के कारण, इसे खट्वांग नामक पुत्र पैदा हुआ, एवं इसके राज्य में पुनः एक बार सुखसमृद्धि उत्पन्न हुयी (भवि. प्रति. १.१)।

नियति—ब्रह्माजी के सभा में रह कर, उसकी उपासना करनेवाली एक देवी। यह मेरु की कन्या एवं स्वायंभुव मन्वंतर के विधाता की पत्नी थी (भा. ४ १.४४)।

२. रौच्य मनु का पुत्र।

३. (सो. आयु.) एक राजा। यह नहुष का कनिष्ठ पुत्र था (पद्म. सृ. १२)।

नियम—सुख देवों में से एक।

२. आभूतरजस् देवों में से एक।

नियुतायु—कलिंग देश के श्रुतायु राजा का पुत्र। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ६८.२७; २९; 'अयुतायु' भांडारकर संहिता)।

नियुत्सर्पि—शिव नामक रुद्र की पत्नी (भा. ३. १२.१३)।

नियुत्सा—प्रस्ताव राजा की स्त्री। इसे विभु नामक एक पुत्र था।

नियोधक—विराट राजा के दरबार में उपस्थित एक दंगली पहलवान (म. वि. २.५)। यह सामान्य नाम होगा।

निरताल—एक मध्यमाध्वर्यु।

निरमित्र—(सो. कुरु.) पांडुपुत्र नकुल का पुत्र। इसकी माता करेणुमती (म, आ, ९०.८४)।

२. सहदेव द्वारा मारा गया एक त्रिगर्तदेशीय राजकुमार। इसके पिता का नाम वीरधन्वन् (म. द्रो. ८२. २६)।

३. (सो. मगध भविष्य.) भागवत और विष्णु मतानुसार अयतायु का पुत्र। निरामित्र पाठभेद है।

निरय--एक प्रकार की म्लेंच्छ जाति। गरुड ने बहुत से निषाद खाये। उन्हें उगलने के बाद, वे सारे के सारे म्लेच्छ बन गये उनमें से ईशान में जो निषाद गिरे उन्हें 'निरय' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. सृ. ४७)।

निराकृति--दक्षसावर्णि मनु का पुत्र। निरामय इसी का ही पाठभेद है।

निरामय--एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१७७)।

निरामर्द--एक प्राचीन राजा (म. आ. १. १७७)।

निरामित्र--ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र।

२. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा। मत्स्यमत में यह अप्रतीपिन् राजा का पुत्र था। वायु तथा ब्रह्मांड मत में यह अयुतायु का पुत्र था। मत्स्य तथा ब्रह्मांड मत में इसने १०० वर्ष राज्य किया, किंतु वायु के मतानुसार इसने ४० वर्ष राज्य किया (निरमित्र ३. देखिये)।

३. (सो. पूरु. भविष्य.) एक राजा। मत्स्य एवं वायु मत में यह दंडपाणि राजा का पुत्र था।

निराच--वसुदेव का पौरवी से उत्पन्न पुत्र।

निरावृत्ति--(सो.) एक राजा। भविष्यमत में यह वृष्णि का पुत्र था। इसने पांच हजार वर्षों तक राज्य किया।

निरुक्तकृत्--विष्णुमत में व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा के शाकपूणि का निरुक्ताध्यायी शिष्य।

निरुत्सुक--रैवतमनु का एक पुत्र (पद्म. सृ. ७)।

२. रौच्य मनु का एक पुत्र।

निरुद्ध--ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर का देवगण।

निर्ऋता--कश्यप एवं खशा की कन्या।

निर्ऋति--कश्यप एवं सुरभि का पुत्र।

२. एकादश रुद्रों में से एक (पद्म. सृ. ४०)। यह ब्रह्माजी का पौत्र एवं स्थाणु का पुत्र था (म. आ. ६०.२)। यह नैर्ऋत, भूत, राक्षस तथा दिक्पाल लोगों का अधिपति था। शत्रुनाश करने की इच्छा करनेवाले राजा इसकी उपासना करते थे (भा. २.३.९)। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.५७)।

३. वरुणपुत्र अधर्म को इसे भय, महाभय तथा मृत्यु नामक तीन पुत्र थे (म. आ. ६०. ५२-५३)। ये सारे पुत्र 'नैर्ऋत' जनपद के रहनेवाले थे एवं भूत, राक्षससदृश योनि के समझे जाते थे।

निर्भय--रौच्य मनु का पुत्र।

निर्मित्र--(सो.) एक राजा। भविष्यमत में यह अहीनर का पुत्र था।

निर्मोक--सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

२. देवसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

निर्मोहक--रैवत मनुका पुत्र।

२. सावर्णि मनु का पुत्र।

३. रौच्य मन्वंतर का ऋषि।

४. मधुवन के शकुनि ऋषि का पुत्र। यह महान् विरक्त था तथा संन्यास वृत्ति से रहता था।

निर्वक्र--(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा। वायु मत में यह अधिसामकृष्ण का पुत्र था (निमिचक्र देखिये)।

निर्वृत्ति--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा। भागवतमत में, यह धृष्टि का, मत्स्य एवं वायुमत में धृष्ट का, विष्णुमत में वृष्णि का तथा पद्ममत में सृष्टि का पुत्र था।

२. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा। मत्स्यमत में यह सुनेत्र का पुत्र था। इसके नाम के लिये, 'नृपति' पाठभेद प्राप्त है। इसने ५८ वर्षों तक राज्य किया।

निल--राक्षसराज बिभीषण का एक प्रधान।

निवात--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा। वायुमत में यह शूर राजा का पुत्र था।

निवातकवच--दैत्यों का एक दल। हिरण्यकशिपु पुत्र संह्राद के पुत्रों को यह 'सामूहिक' नाम प्राप्त था। इस दल के दैत्य रावण के मित्र थे, एवं इंद्र को भी अजेय थे (वा. रा. उ. २३)।

पांडवों के वनवासकाल में अर्जुन के साथ इनका युद्ध हुआ, एवं अर्जुन ने इनका संहार किया (म. व. १६७. १०; १६९.२; भा. ५.२४; ६.६; पद्म. सृ. ६)।

२. कश्यप एवं पुलोमा के पौलोम तथा कालकेय नामक दैत्य पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामूहिक नाम। इनकी संख्या साठ सहस्र या चौहत्तर सहस्र थी (कश्यप देखिये)।

निवावरी--एक सूक्तद्रष्टा (सिकता देखिये)।

निशठ--एक वृष्णिवंशी राजकुमार (भा. ११.३०. १७; म. आ. २११.१०)। हरिवंश के अनुसार यह बलराम एवं रेवती का पुत्र था। यह सुभद्रा के लिये दहेज ले कर खांडवप्रस्थ में आया था। युधिष्ठिर के राजसूय एवं अश्वमेध यज्ञ में यह उपस्थित था (म. स. ३१.१६; ६५.४)। उपप्लव्यनगर में अभिमन्यु के विवाह में भी यह उपस्थित था (म. वि. ६७.२१)।

मृत्यु के पश्चात्, यह विश्वेदेवों में विलीन हो गया (म. स्व. ५.१६)।

२. यमसभा में रह कर, सूर्यपुत्र यम की उपासना करनेवाला एक प्राचीन राजा (म. स. ८.९०*)।

निशा—भानु (मनु) नामक अग्नि की तीसरी पत्नी। इसने अग्नि एवं सोम नामक दो पुत्र, एवं रोहिणी नामक कन्या को जन्म दिया था। उनके अतिरिक्त, इसे पाँच अग्निस्वरूप पुत्र भी थे। उनके नाम-वैश्वानर, विश्वपति, संनिहित, कपिल, एवं अग्रणी।

निशाकर—गरुड के प्रमुख पुत्रों में से एक (म. उ. ९९.१४)।

निशुंभ—शुंभ असुर का भाई, एवं जालंधर दैत्य का सेनापति (शुंभनिशुंभ देखिये)। इंद्र की अमरावती जीतने के बाद, जालंधर ने इसे युवराज्याभिषेक किया था (पद्म. उ. ८)। चंडिका देवी ने इसका वध किया (मार्क. ८६.३२)।

२. नरकासुर के चार प्रमुख राज्यपालों में से एक। यह भूतल से ले कर देवयान तक का मार्ग रोक कर खड़ा रहता था। श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति. १५३६)।

निश्चक—(सो.) एक राजा। भविष्य के अनुसार यह यज्ञदत्त राजा का पुत्र था। इसने एक सहस्र वर्षों तक राज्य किया।

निश्चर—धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षिओं में से एक।

२. बृहस्पतिपुत्र निश्चवन का नामांतर।

निश्च्यवन—बृहस्पति के तारा में उत्पन्न सात पुत्रों में से एक। यह अग्नि के समान यश, वर्चस् एवं कान्तियुक्त था। यह निष्पाप, निर्मल, विशुद्ध एवं तेजःपुंज था। इसके पुत्र का नाम विपाप्मन् या निष्कृति था (म. व. २०९. १२)। इसके पौत्र का नाम सत्य था।

२. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षिओं में से एक।

निषंगिन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. क. ६२.५)।

निषध—(सू. इ.) अयोध्या का एक राजा। यह अतिथि राजा का पुत्र था।

२. (सो. पूरु.) भरतवंशी कुरु राजा का पौत्र, एवं जनमेजय राजा के चार पुत्रों में से चौथा पुत्र (म. आ. ८९.५०)। यह धर्म, अर्थ में कुशल, एवं समस्त प्राणिमात्रों के हित में संलग्न रहता था (म. आ. ९.५०)।

निषधाश्व—(सो. अज.) एक राजा। भागवत के अनुसार, यह कुरु राजा का पुत्र था।

निषाद—(स्वा. उत्तान.) एक म्लेच्छ राजा। यह मृत्यु की मानसी कन्या सुरथा का पौत्र एवं वेन राजा का पुत्र था। वेन राजा की मृत्यु के पश्चात्, ऋषियों ने उसके दाहिने जाँघ का मंथन किया। उस मंथन के कारण, एक 'ह्रस्वाकार' एवं कृष्णवर्ण पुरुष बाहर निकला। ऋषियों ने उसे कहा, 'निषीद (बैठ जाओ)'। उस कारण उस पुरुष का नाम 'निषाद' हो गया। आगे चल कर, इससे वन में रहनेवाले 'निषाद' नामक म्लेच्छ जाति की उत्पत्ति हुयी (म. शां. ५९.१०३; भा. ४.१४.४५; वेन देखिये)।

२. एक म्लेच्छ जाति (तै. सं. ४.५.४.२; का. सं. १७. १३; ऐ. ब्रा. ८.११)। संभवतः आधुनिक भिल्ल लोग यही होंगे। इनके एक ग्राम का एवं 'स्थपति' (नेता) का उल्लेख प्राप्त है (ला. श्रौ. ८.२.८)।

३. एक राजा। यह कालेय एवं क्रोधहंता नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ४८.६१)।

निष्कम्प—रौच्य मन्वंतर के सप्तर्षिओं में से एक।

निष्किरीय—एक वैदिक पुरोहितवर्ग का सामुहिक नाम (पं. ब्रा. १२.५.१४)।

निष्कुटिका—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.१२)।

निष्कृति—एक अग्नि। यह निश्च्यवन का पुत्र था, एवं इसे 'विपाप्मन्' नामांतर था। लोगों को संकट से 'निष्कृति' (छुटकारा) दिलाने के कारण, इसे निष्कृति नाम प्राप्त हुआ। इसका पुत्र स्वन (म. व. २०९.१४; विपाप्मन् देखिये)।

निष्ठानक—कश्यप एवं कद्रू से उत्पन्न एक नाग।

निष्ठुर—एक व्याध। कार्तिक माह में, चंद्रशर्मा नामक ब्राह्मण से 'दीपमाहात्म्य' सुनने के कारण, इसे मुक्ति मिल गयी (स्कंद. २.४.७)।

२. अत्रिकुल का एक मंत्रकार। इसे 'गविष्ठिर' भी कहते थे।

निष्ठूरिक—एक कश्यप वंशी नाग (म. उ. १०१. १२)।

निष्प्रकम्प्य—रौच्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

निसंदि—एक असुर (वा. रा. उ. २२. २५)।

निसुंद—नरकासुर के परिवार में से एक दैत्य। यह श्रीकृष्ण द्वारा मारा गया (म. व. १३.२६)।

निह्राद--जालंधर की सेना का एक राक्षस। कुबेर ने इसका वध किया (पद्म. उ. ६)।

नीच्य--सिंधु एवं पंजाब प्रदेश में रहनेवाले लोगों का सामुहिक नाम (ऐ. ब्रा. ८-१४)।

नीतिन—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

नीथ--एक वृष्णिवंशी राजकुमार (म. व. १२०. १८)।

नीप--(सो. पुरु.) पुरुवंश का सुविख्यात राजा। भागवत, वायु एवं विष्णुके अनुसार यह पार (प्रथम) राजा का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार, यह पौर का पुत्र था। इसके पत्नी का नाम कृती अथवा कीर्तिमती था। उससे इसे ब्रह्मदत्त नामक पुत्र हुआ (भा. ९.२१.२४)।

इसके कीर्तिवर्धन आदि सौ पुत्र थे। वे सारे 'नीप' नाम से ही प्रसिद्ध थे। आगे चल कर, उन्हीसे सुविख्यात 'नीप वंश' का निर्माण हुआ।

२. नीप राजा से प्रारंभ हुआ क्षत्रियवंश। इसी वंश में, जनमेजय दुर्बुद्धि नामक कुलांगार राजा निर्माण हुआ (म. उ. ७२.१३)। उस राजा के दुर्वर्तन के कारण, उग्रायुध ने उसका वध किया, एवं नीपवंश नष्ट हो कर, द्विमीढ वंश में शामिल हो गया (मत्स्य. ४९; ह. वं १. २०; वायु. ९९. १७८)।

३. (सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंश का एक राजा। भागवत के अनुसार यह कृती राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों में इसका उल्लेख प्राप्त नहीं है। यह धनुर्धर एवं तीक्ष्णशस्त्रधारी था। इसका पुत्र भल्लाट था (भा. ९. २१.२-८)।

नीपातिथि 'काण्व'— एक वैदिक ऋषि एवं सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ३४. १; १५)। किसी एक युद्ध में, इंद्र ने इसका रक्षण किया था (ऋ. ८. ४९. ९)। यह एक ख्यातिप्राप्त 'होता' था, एवं स्वयं इंद्र ने इसके घर आ कर सोम प्राशन किया था (ऋ. ८. ५१. १)। एक 'सामन्' का भी यह रचयिता था (पं. ब्रा. १४. १०. ४)।

नील— कश्यप एवं कद्रू से उत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.७)

२. विश्वकर्मा के अंश से उत्पन्न हुआ रामसेना का एक वानर (भा. ९. १०. १६; म. व. २७४. २५)। इसने दूषण का छोटा भाई प्रमाथि का वध किया था।

३. अग्नि के अंश से उत्पन्न हुआ रामसेना एक वानर (वा. रा. कि. ३१)। बिभीषण से मिलने के लिये, राम लंकानगरी जा रहे थे। उस समय किष्किंधा नगरी में, यह राम के दर्शन के लिये आया था (पद्म. सृ. ३८)।

रामरावण युद्ध में, इसने निकुंभ, प्रहस्त, एवं महोदर राक्षसों से घनघोर युद्ध किया; एवं निकुंभ तथा महोदर का वध किया (वा. रा. यु. ४३; ५८; ७०)। बाद में राम के अश्वमेधयज्ञ के समय, यह शत्रुघ्न के साथ अश्वरक्षणार्थ देशविदेश गया था (पद्म. पा. ११)।

४. (सो. सह.) अनूप देश का एक राजा एवं पांडवपक्ष का महान् योद्धा। यह उदार, रथी, संपूर्ण अस्त्रों का ज्ञाता, एवं महामनस्वी था (म. आ. १७७.१०)।

भारतीय युद्ध में, इसका अश्वत्थामन् के साथ दो बार युद्ध हुआ था। पहली बार अश्वत्थामन् ने इसके सीने में प्रहार कर, इसे घायल किया (म. भी. ९०.३३); एवं दूसरी बार इसका वध किया (म. द्रो. ३०.२५)। धृतराष्ट्रपुत्र दुर्जय से भी इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. २५. ४३)।

५. (सो. पुरु.) पुरुवंश का सुविख्यात राजा। यह अजमीढ एवं नलिनी का पुत्र था। इसका पुत्र शांति।

नील ने उत्तर पांचाल देश में स्वतंत्र राज्य स्थापित किया। इसकी राजधानी अहिच्छत्र नगरी थी। इसने उत्तर पांचाल के सुविख्यात 'नीलराजवंश' की नींव डाली।

६. उत्तर पांचाल देश का सुविख्यात राजवंश। इस वंश के नील से पृषत् तक के सोलह राजाओं का निर्देश पुराणों में अनेक स्थानोंपर प्राप्त है (वायु. ९९.१९४-२११; मत्स्य. ५०.१-१६)। उन राजाओं के नाम इस प्रकार है:--१. नील, २. सुशांति, ३. पुरुजानु ४. रिक्ष, ५. भर्म्याश्व, ६. मुद्गल, ७. वध्र्यश्व, ८. दिवोदास, ९. मित्रयु, १०. मैत्रेय, ११. च्यवन, १२. पंचजन, १३. सुदास, १४. सहदेव, १५. सोमक, १६. पृषत्

यह राजवंश बहुत ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है, क्यों कि, इनमें से अनेक राजाओं का निर्देश वैदिक ग्रंथों में मिलता है। इस वंश के मुद्गल, वध्र्यश्व, दिवोदास, सुदास, च्यवन, सहदेव, सोमक, पिजवन (पंचजन) आदि राजाओं का निर्देश ऋग्वेद एवं ब्राह्मणादि ग्रंथों में प्राप्त है। ऋग्वेद में वर्णित दाशराज्ञ युद्ध 'सुदास' ने किया था।

पृषत् राजा का उत्तराधिकारी द्रुपद था। द्रुपद राजा एवं द्रोणाचार्य के संघर्ष के कारण, पांचाल देश उत्तर

एवं दक्षिण विभागों में पुनः एक बार बाँट दिया गया (द्रुपद एवं द्रोण देखिये)।

७. दक्षिणापथ में से माहिष्मती नगरी का राजा, एवं दुर्योधनपक्ष का महान् योद्धा। यह क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था। यह द्रौपदीस्वयंवर के लिये गया था (म. आ. १७७.१०)। संभवतः 'नीलध्वज' इसीका ही नामांतर था (नीलध्वज देखिये)।

पांडवों के राजसूय यज्ञ के समय, सहदेव द्वारा किये गये दक्षिण दिग्विजय में, इसका उससे भीषण युद्ध हुआ था (म. स. २८.१८)। उस युद्ध के समय, अग्निदेव ने इसे सहायता की थी। अग्नि को इसने अपनी कन्या प्रदान की थी। उस कारण, अग्नि ने इसकी सेना को अभयदान दिया था। फिर भी सहदेव ने इसे पराजित किया, एवं यह सहदेव की शरण में गया (म. स. २८.३६-३७)।

इसने नर्मदा नदी को भार्यारूप में पा कर, उसके गर्भ से सुदर्शना नामक कन्या उत्पन्न की। उसे अग्नि चाहने लगा। फिर इसने उन दोनों का विवाह करा दिया। उन्हें सुदर्शन नामक पुत्र हुआ (म. अनु. २)।

भारतीययुद्ध में, यह दुर्योधन के पक्ष में शामिल था (म. उ. १९.२३)। यह कौरवों के पक्ष का एक ख्यातिप्राप्त रथी था (म. उ. १६३.४)।

८. (सो.) एक राजा एवं यदुपुत्रों में से तीसरा पुत्र।

९. भृगुकुल का एक गोत्रकार।

१०. भृगुकुल का एक ब्रह्मर्षि।

नीलकंठ--शिवजी का एक नामांतर। समुद्र से निकला हुआ 'हलाहल विष' शिवजी ने प्राशन किया। इसीसे जल कर उनके कंठ का वर्ण नीला हो गया। इसलिये उन्हे यह नाम प्राप्त हुआ (भा. ८.७)।

शिवजी एवं नारायण के बीच में हुये युद्ध में, नारायण ने शिवजी का गला घोंट दिया। इस कारण उसका गला नीला पड़ गया, ऐसी भी कथा प्राप्त है (नारायण देखिये)।

नीलध्वज--हस्तिनापुर के दक्षिण में नर्मदा नदी के किनारे स्थित माहिष्मती नगरी का राजा (जै. अ. १४. १४)। महाभारत में निर्दिष्ट नील राजा एवं यह दोनों संभवतः एक ही होंगे (नील ७. देखिये)।

'जैमिनि अश्वमेध' के अनुसार, इसकी पत्नी का नाम सुनंदा, एवं पुत्र का नाम प्रवीर था। पांडवों के द्वारा छोड़ा गया अश्वमेधीय अश्व प्रवीर ने पकड़ लिया, एवं अश्वरक्षणार्थ नियुक्त किये वृषकेतु को पराजित किया। किंतु पश्चात् अनुशाल्व ने प्रवीर को पराजित किया। फिर नीलध्वज स्वयं युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ, एवं उसका अर्जुन से घमासान युद्ध प्रारंभ हुआ।

अपने ससुर नीलध्वज की सहायता के लिये, अग्नि युद्धभूमी में प्रविष्ट हुआ, एवं वह अर्जुन की सेना को दग्ध करने लगा। अर्जुन अग्नि की शरण में गया। फिर अग्नि ने नीलध्वज एवं अर्जुन इन दोनों के बीच में मित्रत्व स्थापित किया। बाद में, नीलध्वज अर्जुन की सहायता के लिये, उसके साथ दक्षिणदिग्विजय में शामिल हुआ (जै. अ. १४.१४)।

नीलपराशर--पराशरकुलोत्पन्न एक ऋषिगण (पराशर देखिये)।

नीलरत्न--राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्व के संरक्षणार्थ शत्रुघ्न के साथ गया हुआ एक वीर (पद्म. पा. ११)।

नीला--कपिल तथा केशिनी की कन्या। इसके द्वारा आलंबेय ने 'नैल' उत्पन्न किये। इसकी विकचा नामक कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.७.१४७-१४८)।

२. (सत्या ५. देखिये)।

नीलिनी--अजमीढ़ राजा की एक पत्नी।

नीली--अजमीढ़ राजा की पत्नी। इसके दुष्यन्त तथा परमेष्ठिन् नामक दो पुत्र थे (म. आ. ८९.२८)।

नीवार--वेदकालीन एक जंगली जाति (का. सं. १२.४; मै. सं. ३.४.१०; श. ब्रा. ५.१.४.१४)।

नृग 'ऐक्ष्वाक'--(सू. इ.) एक प्राचीन दानी राजा। भागवत एवं महाभारत के अनुसार, यह इक्ष्वाकु के शतपुत्रों में से एक था (म. स. ८.८)। इक्ष्वाकु के ४८ पुत्रों को दक्षिणापथ में राज्य प्राप्त हुआ था। उनमें से नृग का राज्य पयोष्णी (तापी) नदी के तट पर था (म. व. ८६.४-६)।

नृग ने पयोष्णी नदी के किनारे वाराहतीर्थ में यज्ञ किया था। उस समय इसने एक कोटि के उपर गौ का दान किया। उनमें से एक गौ गलती से पुनः एक बार राजा के गोसमूह में वापस आयी, एवं दूसरे ब्राह्मण को पुनः दान में दी गयी। इससे उन दो ब्राह्मणों में झगड़ा शुरू हो कर, वे दोनों राजा के पास फैसले के लिये आये।

उस झगड़े का फैसला देने में नृग को देर हुई। उस कारण, उन ब्राह्मणों ने इसे शाप दिया, 'तुम गिरगिट बनोंगे'। राजा ने प्रार्थना कर 'उःशाप' माँगा।

फिर ब्राह्मणों ने 'उःशाप' दिया, 'भगवान् कृष्ण के द्वारा तुम्हारा उद्धार होगा'।

पश्चात् अपने वसु नामक पुत्र को गद्दी पर बैठा कर, यह वन में गया। बाद में कृष्ण के हस्तस्पर्श से, गिरगिट-योनि से इसका उद्धार हो गया (म. अनु. ७०; भा. १०.६४; वा. रा. उ. ५३-५४)।

शौर्य एवं दान के कारण, मृत्यु के पश्चात् नृग को उत्तम लोकों की प्राप्ति हो गयी (म. भी. १७.१०)।

इसने आजन्म मांसभक्षण का निषेध किया था। उस कारण, इसे 'परावरतत्त्व' का ज्ञान हो कर, यह यमराज की सभा में विराजमान हो गया (म. अनु. ११५.६०)।

नृग 'औशीनर'--(सो. अनु.) एक राजा। भागवत एवं मत्स्य के अनुसार, यह उशीनर राजा का पुत्र था। वायु में इसे 'मृग' कहा गया हैं।

नृग 'मानव'--(सू.) पद्म के अनुसार मनु के दस पुत्रों में से दूसरा पुत्र। पुराणों में कई जगह मनुपुत्र नाभाग एवं नृग एक ही माने गये है (लिंग. १.६६.४५)। इसके पुत्र का नाम सुमति था।

भागवत में नृग राजा की 'वंशावलि' विस्तृतरूप से दी गयी है (भा. ९.२.१७-१८)। किंतु वह विश्वासार्ह नहीं प्रतीत होती है। नृग एवं उसका पितामह ओघवंत के पूर्वपुरुषों के महाभारत में दिये गये नाम, इस 'वंशावलि' में नृग के 'वंशज' के नाते दिये गये है।

नृचक्षु--(सो. पूरु. भविष्य.) पूरुवंश का एक राजा। भागवत तथा मत्स्य के अनुसार यह सुनीथ का, एवं विष्णु के अनुसार ऋच का पुत्र था (त्रिचक्षु देखिये)।

नृत्यप्रिया--स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.१०)।

नृपंजय--(सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंश का एक राजा। विष्णु के अनुसार यह सुवीर का, एवं मत्स्य के अनुसार सुनीथ का पुत्र था।

२. (सो. पूरु. भविष्य.) पूरुवंशीय एक राजा। विष्णु, भागवत, एवं भविष्य के अनुसार यह मेधाविन् का पुत्र था। इसे 'पुरंजय' नामांतर भी प्राप्त है।

नृपति--(सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजा। वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, यह धर्मनेत्र का पुत्र था। इसने ५८ वर्षों तक राज्य किया (निर्वृत्ति देखिये)।

नृमेध आंगिरस--अग्नि का एक आश्रित, एवं सामद्रष्टा ऋषि (ऋ. १०.८०.३, पं. ब्रा. ८.८.२१)। ऋग्वेद के अनेक सूक्तों का प्रणयन इसने किया था (ऋ. ८.८९; ९०; ९८; ९९; ९.२७; २९)। अग्नि के कृपा से इसे शकपूत आदि पुत्र प्राप्त हुये। मित्रावरुणों ने इसका एवं सुमेधस् का रक्षण किया था (ऋ. १०.१३२.७)। परुच्छेप ऋषि ने इसके साथ स्पर्धा करने की कोशिश की, किंतु इसने उसको पराजित किया (तै. सं. २.५.८.३)।

नृषद--एक वैदिक ऋषि (ऋ. १०. ३१. ११)। यह कण्व ऋषि का पिता था, एवं इसके नाम से उसे 'नार्षद कण्व' नाम प्राप्त हुआ था।

नृसिंह--भगवान् विष्णु का चौदहवाँ अवतार। इसका आधा शरीर सिंह का, एवं आधा मनुष्य का था। इस कारण, इसे 'नृसिंह' नाम प्राप्त हुआ। इसका अवतार चौथे युग में हुआ था (दे. भा. ४.१६)। पुराणों में निर्देश किये गये बारह देवासुर संग्रामों में, 'नारसिंहसंग्राम' पहले क्रमांक में दिया गया है (मत्स्य. ४७.४२)।

हिरण्यकशिपु नामक एक राक्षस ने ग्यारह हजार पाँच सौ वर्षों तक तप कर, ब्रह्माजी को प्रसन्न किया, एवं ब्रह्माजी से अमरत्व का वर प्राप्त कर लिया। उस वर के कारण, देव, ऋषि, एवं ब्राह्मण अत्यंत त्रस्त हुये, एवं उन्होंने हिरण्यकशिपु का नाश करने के लिये अवतार लेने की प्रार्थना श्रीविष्णु से की। हिरण्यकशिपु का पुत्र प्रह्लाद भगवद्भक्त था। उसको भी उसके पिता ने अत्यंत तंग किया था। फिर प्रह्लाद के संरक्षण के लिये, एवं देवों को अभय देने के लिये, श्रीविष्णु 'नृसिंह अवतार' ले कर, प्रगट हुये।

हिरण्यकशिपु के प्रासाद के खंभे तोड़ कर, नृसिंह प्रगट हुआ (नृसिंह. ४४.१६), एवं सायंकाल में इसने उसका वध किया (भा. २.७; ह. वं. १.४१; ३९.७१; लिंग. १.९४; मत्स्य. ४७.४६; पद्म. उ. २३८)। गंगा नदी के उत्तर किनारे पर हिरण्यकशिपु का वध कर, नृसिंह दक्षिण हिंदुस्थान में गोतमी (गोदावरी) नदी के किनारे पर गया, एवं उसने वहाँ दण्डक देश का राजा अंबर्य का वध किया (ब्रह्म. १४९)। इस प्रकार वध करने से इसे खून चढ़ गया। फिर शिवजी ने शरभ का अवतार ले कर, नृसिंह का वध किया (लिंग. १.९५)।

वेदों में प्राप्त नमुचि की एवं नृसिंह की कथा अनेक दृष्टि से समान है। 'नृसिंह अवतार' का निर्देश 'तैत्तिरीय आरण्यक' में भी प्राप्त है। 'नृसिंहतापिनी' नामक एक उपनिषद् भी उपलब्ध है। नृसिंह की कथा प्रायः सभी पुराणों में दी गयी है। किन्तु प्रह्लाद की संकटपरंपरा एवं

नृसिंह का खंभे से प्रगट होने का निर्देश, कई पुराणों में अप्राप्य है (म. स. परि. १. क्र. २१; पंक्ति. २८५–२९५; ह. वं. ३.४१–४७; मत्स्य. १६१–१६४; ब्रह्मांड. ३.५; वायु. ३८.६६)।

नृसिंह की उपासना—नृसिंह की उपासना भारतवर्ष में आज भी अनेक स्थानों पर बड़ी श्रद्धा से की जाती है। नृसिंह के मंदिर एवं वहाँ पूजित नृसिंह के नाम, स्थानीय परंपरा के अनुसार, अलग अलग दिये जाते हैं। इन नृसिंहस्थानों की एवं वहाँ पूजित नृसिंहदेवता के स्थानीय नामों की सूचि नीचे दी गयी है। उनमें से पहला नाम नृसिंहस्थान का, एवं 'कोष्ठक' में दिया गया नाम नृसिंह का स्थानीय नाम का है।

नृसिंहस्थान—अयोध्या (लोकनाथ), आढ्य (विष्णुपद), उज्जयिनी (त्रिविक्रम), ऋषभ (महाविष्णु), कपिलद्वीप (अनन्त), कसेरट (महाबाहु), कावेरी (नागशायिन्), कुण्डिन (कुण्डिनेश्वर), कुब्ज (वामन), कुब्जागार (हृषीकेश), कुमारतीर्थ (कौमार), कुरुक्षेत्र (विश्वरूप), केदार (माधव), केरल (बाल), कोकामुख (वराह), क्षिराब्धि (पद्मनाथ), गंधद्वार (पयोधर), गन्धमादन (अचिन्त्य), गया (गदाधर), गवांनिष्क्रमण (हरि), गुह्यक्षेत्र (हरि), चक्रतीर्थ (सुदर्शन), चित्रकूट (नराधिप), तृणबिंदुवन (वीर), तैजसवन (अमृत), त्रिकूट (नागमोक्ष), दण्डक (श्यामल), दशपुर (पुरुषोत्तम), देवदारुवन (गुह्य), देवशाला (त्रिविक्रम), द्वारका (भूपति), धृष्टद्युम्न (जयध्वज), निमिष (पीतवासस्), पयोष्णी (सुदर्शन), पाण्डुसह्य (देवेश), पुष्कर (पुष्कराक्ष), पुष्पभद्र (विरज), प्रभास (रविनन्दन), प्रयाग (योगमूर्ति), भद्रा (हरिहर), भाण्डार (वासुदेव), मणिकुण्ड (हलायुध), मथुरा (स्वयंभुव), मन्दर (मधुसूदन), महावन (नरसिंह), महेन्द्र (नृपात्मज), मानसतीर्थ (ब्रह्मेश), माहिष्मती (हुताशन), मेरुपृष्ठ (भास्कर), लिङ्गकूट (चतुर्भुज), लोहित (हयशीर्षक), वल्लीवट (महायोग), वसुरूढ (जगत्पति), वाराणसी (केशव), वाराह (धरणीधर) वितस्ता (विद्याधर), विपाशा (यशस्कर), विमल (सनातन), विश्वासयूप (विश्वेश), वृंदावन (गोपाल), वैकुण्ठ (माल्योदपान), शालग्राम (तपोवास), शिवनदी (शिवकर), शूकरक्षेत्र (शूकर), सकल (गरुडध्वज), सायक (गोविंद), सिंधुसागर (अशोक), हलाङ्गर (रिपुहर), (नृसिंह. ६५)।

नेतिष्य (नेतिण्य)—भृगुकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

नेत्र—(सो. सह.) एक राजा। भागवत के अनुसार यह धर्म राजा का पुत्र था।

नेदिष्ठ—वैवस्वत मनु का पुत्र।

नेम भार्गव—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. १००)।

नेमि—बलि के पक्ष का एक दैत्य (भा. ८. ६. २२)

२. (सू. इ.) एक राजा। वायु के अनुसार यह इक्ष्वाकु के पुत्रों में से एक था। अन्य पुराणों में, इसे 'निमि' कहा गया है।

नेमिकृष्ण—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा। वायु के अनुसार, यह पट्टुमत् राजा का पुत्र था। इसने २५ वर्षों तक राज्य किया।

नेमिचक्र—(सो. पूरु. भविष्य.) हस्तिनापुर का एक राजा। यह असीमकृष्ण राजा का पुत्र था। यमुना नदी के बाढ़ से हस्तिनापुर नगर बह जाने के बाद, इसने अपनी नयी राजधानी कौशांबी नगर में बसायी। इसका पुत्र चित्ररथ (भा. ९. २२. ३९)।

नैकजिह्व—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

नैकदृश्—विश्वामित्र का पुत्र।

नैकशि—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

नैगम—शाकपूर्ण रथीतर ऋषि के चार प्रमुख शिष्यों में से एक। अन्य तीन शिष्यों के नाम—केतव, दालकि, शतबलाक।

नैगमेश—कुमार कार्तिकेय का तृतीय भ्राता। इसके पिता का नाम अनल था (म. आ. ६०.२२)।

२. कार्तिकेय के चार मूर्तियों में से एक मूर्ति का नाम। अन्य दो मूर्तियों के नाम शाख एवं विशाख थे (म. श. ४३.३७)।

३. अनल वसु का पुत्र।

नैद्राणि—अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

नैध्रुव—कश्यपकुल का गोत्रकार। यह कश्यप ऋषि का पौत्र, एवं अवत्सार ऋषि का पुत्र था। यह छः कश्यप 'ब्रह्मवादिनों' में से एक था। अन्य ब्रह्मवादिनों के नाम–कश्यप, अवत्सार, रैभ्य, असित, देवल (वायु. ५९.१०३; मत्स्य. १४५. १०६–१०७; कश्यप देखिये)।

२. काश्यपवंश में से एक प्रमुख गोत्र का नाम। अन्य दो प्रमुख गोत्र–शांडिल्य, एवं रैभ्य।

नैध्रुवि—कश्यप ऋषि का पैतृक नाम (बृ. उ. ६.४. ३३)।

नैर्ऋत—एक सूक्तद्रष्टा (कपोत नैर्ऋत देखिये)।

२. एक राक्षस। यह पृथ्वी के प्राचीन शासकों में से एक था (म. शा. २२०.५१-५३)।

३. एक 'रात्रीराक्षस' गण। उस गण के अन्य राक्षस समूह-पौलस्त्य, आगस्त्य, कौशिक (पार्गि. २४२)।

नैमिशि—शितिबाहु ऐष नामक वैदिक ऋषि की उपाधि (जै. ब्रा. १.३६३)। शितिबाहु 'नैमिश' वन का रहनेवाला होने से, उसे यह उपाधि मिली होगी।

नैमिशीय—नैमिशवन में रहनेवाले लोगों का सामूहिक नाम (पं. ब्रा. २५. ६. ४; जै. ब्रा. १. ३६३)। ये लोग बहुत ही पूज्य माने जाते थे (कौ. ब्रा. २६. ५)। इस कारण नैमिशारण्यवासी ऋषियों को महाभारत सुनाया गया था।

नैल—एक ऋग्वेदी श्रुतर्षि।

२. एक ज्ञातिसमूह (नीला १. देखिये)।

नैषध--दुर्योधन पक्ष के 'पौरव' राजा का नामांतर। यह निषध देश का राजा होने के कारण, उसे यह नाम प्राप्त हुआ था (पौरव देखिये)। धृष्टद्युम्न ने इसका वध किया (म. द्रो. ३१. ६३)।

२. दक्षिण देश के नड राजा की उपाधि (नैषिध देखिये)

नैषाद--निषाद् जाति का एक व्यक्ति (कौ. ब्रा. २५. १५; वा. सं. ३०. ८)।

नैषादि-- द्रोणशिष्य एकलव्य का नामांतर (म. द्रो. १५६. १७)।

२. भविष्य एक राजवंश। नल नैषध राजा के वंश में उत्पन्न नौ राजा इस वंश में शामिल थे। उन्हें 'मेघ' नामांतर भी प्राप्त था। वे कोमला नामक नगरी में रहते थे।

नैषिध—दक्षिण देश के नड राजा का पैतृक नाम एवं उपाधि (श. ब्रा. २. ३. २. १-२)। इस नाम का बाद का रूप 'नैषध' है।

नोधस्—एक वैदिक कवि एवं सूक्तद्रष्टा (ऋ. १. ६१. १४; ६२. १३; एकद्यू देखिये)। यह पुरुकुत्स राजा का समकालीन था।

नोधस् गौतम--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१.५८-६४; ८. ८८; ९. ९३)। यह कक्षीवत् ऋषि का वंशज (पं. ब्रा. ७. १०. १०; २१. ९.१२; ऐ. ब्रा. ४. २७; अ. वे. १५. २. ४; ४.४), एवं गोतम ऋषि का पुत्र था (ऋ. १. ६०. ५; ४. ३२. ९; ८. ८८. ४)।

नौकर्णी--स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. २८)। इसके नाम के लिये, सुकर्णी एवं नैककर्णी पाठभेद भी उपलब्ध हैं।

न्यग्रोध--(सो. कुकुर) भागवत के अनुसार मथुरा के उग्रसेन राजा का पुत्र, एवं कंस का भाई। धनुर्याग के समय, कृष्ण ने कंस का वध किया। फिर अपने भाई के मृत्यु का बदला लेने के लिये, यह आगे दौड़ा। उस समय, बलराम ने 'परिघ' फेंक कर इसका वध किया।

प

पक्थ--एक वैदिक ज्ञातिसमूह (ऋ. ७.१८.७)। इस जाति के लोगों ने दाशराज्ञयुद्ध में तृत्सु-भरतों का विरोध किया था। त्सिमर के मत में, आधुनिक अफ़गानिस्तान में स्थित 'पख्तून' जाति के लोग यही होंगे (त्सिमर-अल्टिन्डिशे लेबेन पृ. ४३०)।

२. पक्थ लोगों का एक राजा, एवं अश्विनों का आश्रित (ऋ. ८.२२.१०)। इसपर इंद्र की कृपा थी (ऋ. ८. ४९.१०)। दाशराज्ञयुद्ध में यह त्रसदस्यु के पक्ष में, एवं सुदास के विरोधी पक्ष में शामिल था (ऋ. ७.१८.७।) ऋग्वेद में एक जगह, इसका नाम 'तूर्वायण' बताया है, एवं इसे च्यवान ऋषि का शत्रु कहा है (ऋ. १०.६१.१-२)।

पक्ष—देवयोनि के अंतर्गत 'गुह्यक' जाति में से एक पुरुष। यह मणिवर एवं देवजनी के तीस पुत्रों में से एक था (मणिवर देखिये)।

२. (सो. अनु) एक राजा। वायु के अनुसार, अनु राजा का पुत्र चक्षु एवं यह, दोनों एक ही थे (चक्षु देखिये)।

पक्षगंत—एक ऋग्वेदी श्रुतर्षिगण।

पक्षालिका—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१९)।

पंकजित्—गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९.१० पाठ)।

पंकदिग्धांग—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६३)।

पंचक—इंद्र द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे का नाम उत्क्रोश था (म. श. ४४.३२ पाठ)।

पंचकर्ण वात्स्यायन—एक वैदिक गुरु। 'वात्स्य' का वंशज होने के कारण, इसे 'वात्स्यायन' नाम प्राप्त हुआ था।

मनुष्य के मस्तक में रहनेवाले सात प्राण, योगशास्त्र की परिभाषा में, 'सप्तसूर्य' कहलाते हैं। उन सप्तसूर्यों का दर्शन पंचकर्ण को हुआ था। इस अपूर्व अनुभव का वर्णन भी इसने दिया है (तै. आ. १.७.२)। 'वात्स्यायन कामसूत्र' नामक विश्वविख्यात कामशास्त्रविषयक ग्रंथ का रचयिता संभवतः यही होगा।

पंचचूडा—पाँच जूडोंवाली एक अप्सरा (म. व. १३४.११)। यह कुबेरसभा में विराजमान रहती थी (म. स. १०.११२*)।

परमपदप्राप्ति के लिये ऊपर की ओर जाते हुए शुकदेव को, एक बार इसने देखा, एवं यह आश्चर्यचकित हो उठी (म. शां. ३३२.१९-२०)।

नारी स्वभाव की निंद्यता का वर्णन इसने नारद के समक्ष किया था (म. अनु. ३८.११-३०)। पश्चात् वही नारीस्वभाव-वर्णन भीष्म ने युधिष्ठिर को बताया था। इसे 'पुँश्चली' एवं 'ब्राह्मी' नामांतर भी प्राप्त है।

पंचजन—वेदकालीन पाँच प्रमुख ज्ञातियों का सामूहिक नाम (ऐ. ब्रा. ३.३१; ४.२७; तै. सं. १.६.१.२; का. सं. ५.६; १२.६)। ऋग्वेद के प्रत्येक मंडल में 'पंचजनों' का उल्लेख मिलता है:—मंडल क्रमांक २, एवं ४ में एक एक बार; मंडल क्र. १.५.६.७. एवं ८ में दो दो बार; मंडल क्रमांक ३ एवं ९ में तीन-तीन बार; तथा मंडल क्रमांक १० में चार बार।

एक यौगिक शब्द के रूप में 'पंचजनों' का निर्देश उपनिषद में मिलता है (बृ. उ. ४.४.१७)। ये लोग सरस्वती नदी के तट पर रहते थे (ऋ. ६.६१.१२)।

'पंचजनों' के निम्नलिखित नामांतर वैदिक ग्रंथों में मिलते है:—

(१) पंचमानुष—(ऋ. ८.९.२)।

(२) पंचमानव—(अ. वे. ३.२१.५, २४.३; १२. १.१५)।

(३) पंचकृष्टि—(ऋ. २.२.१०; ३.५३.१६; ४. ३८.१०; अ. वे. ३.२४.३)।

(४) पंचक्षिति—(ऋ. १.७.९; ५.३५.२; ७.७५.४)

(५) पंचचर्षणि—(ऋ. ५.८६.२; ७.१५.२; ९. १०१.९)।

'पंचजन कौन थे—वैदिक वाङ्मय निर्दिष्ट, 'पंचजन' (पाँच जातियाँ) निश्चित कौन लोग थे, यह अत्यंत अनिश्चित है। इस बारे में कुछ मतांतर नीचे दिये गये हैं:—

ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, देवता, मनुष्य, गंधर्व, सर्प एवं पितृगण ये पाँच ज्ञातिसमूह 'पंचजन' कहलाते थे (ऐ. ब्रा. ३.३१)।

औपमन्यव एवं सायणके अनुसार, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र एवं निषाद थे पाँच वर्ण 'पंचजन' थे (नि. ३. ८; ऋ. १. ७. ९)।

यास्क के अनुसार, गंधर्व, पितरः, देव, असुर, एवं रक्षस् इनका ही केवल 'पंचजनों' में समावेश होता था (निरुक्त. ३.८; बृ. उ.४.४.१७ शांकरभाष्य)।

रॉथ एवं गेल्डनर—के अनुसार, पृथ्वी के उत्तर, दक्षिण पूर्व, पश्चिम इन चार दिशाओं में रहनेवाले लोग एवं उनके बीच में स्थित आर्यगण ये पाँच पंचजन। 'पंचजन' में अभिप्रेत है (सेन्ट पीटर्सबर्ग कोश)। अपने मत की परिपुष्टि के लिये, उन्होंने अथर्ववेद में प्राप्त, 'पंच प्रदिशो मानवीः पंच कृष्टयः' (अ. वे. ३.२४.३) ऋचा का उद्धरण दिया है।

त्सिमर—के अनुसार, वैदिक 'पंचजनों' में केवल आर्य लोगों का समावेश अभिप्रेत है। इस कारण, अनु, द्रुह्यु, यदु, तुर्वश एवं पूरु इन आर्य जातियों को ही वैदिक ग्रंथों में 'पंचजन' कहलाना अधिकतम ठीक होगा।

उपरिनिर्दिष्ट मतांतरों में से त्सिमर का मत, सब से अधिक मान्य है। 'ब्राह्मण' ग्रंथों के काल में, पंचजनों के अंतर्गत पाँच जातियों को संभवतः 'पंचाल' यह नया नाम प्राप्त हुआ। पश्चात् कुरु लोगों का पंचजनों में समावेश हो कर, 'कुरु पंचाल' थे लोग 'सप्तजन' नये नाम से प्रसिद्ध हुये (श. ब्रा. १३.५.४.१४; ऐ. ब्रा. ८.२३; वेबर-इन्डिशे स्टुडियन १.२०२)।

२. नरकासुर के परिवार में स्थित पाँच राक्षसों का समूह। श्रीकृष्ण ने इनका वध किया (नरक देखिये)।

३. (सो. नील.) उत्तर पांचाल देश का सुविख्यात राजा। इसे 'च्यवन' नामांतर भी प्राप्त है। ऋग्वेद में इसका निर्देश 'पिजवन' नाम से किया गया प्रतीत होता है (ऋ. ७.१८.२२)। 'पंचजन' यह संभवतः 'पिजवन' का ही अपभ्रष्ट रूप होगा। अग्नि पुराण में, इसके नाम के लिये 'पंचधनुष' पाठभेद उपलब्ध है।

यह संजय राजा का पुत्र था। इसका पुत्र सोमदत्त (ब्रह्म. १३.९८; ह. वं. १.३२.७७)।

४. एक दैत्य। यह संह्लाद नामक दैत्य का पुत्र था। यह शंख का रूप धारण कर समुद्र में रहता था। सांदीपनि ऋषि के मरे हुए पुत्र को, समुद्र में से वापस लाने के लिये श्रीकृष्ण समुद्र में गया। उस समय, उसने पंचजन का वध किया, एवं इसके अस्थियों से एक शंख बनाया। भगवान् श्रीकृष्ण का सुविख्यात 'पांचजन्य' शंख वही है (भा. ६.१८.१४; १०.४५.४०)।

५. एक प्रजापति। इसके 'पांचजनी' (असिक्नी) नामक एक कन्या थी। वह प्राचेतस दक्ष को पत्नी के रूप में दी गयी थी (भा. ६.४.५१)।

६. कपिल ऋषि के शाप से बचे हुये सगर के चार पुत्रों में से एक (पद्म. उ. २०; ब्रह्म. ८.६३)।

पंचजनी—ऋषभ राजा का पुत्र भरत की पत्नी। इसके कुल पाँच पुत्र थे। उनके नाम—सुमति, राष्ट्रभृत्, सुदर्शन, आवरण, एवं धूम्रकेतु हैं (भा. ५.७.१-३)।

२. दक्ष की पत्नी (मत्स्य. ५.४)।

पंचधनुष—(सो. नील.) उत्तर पंचाल के पंचजन राजा का नामांतर।

पंचपत्तलक—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा। ब्रह्मांड के अनुसार यह हाल राजा का पुत्र था (तलक देखिये)।

पंचम—वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)।

पंचमेढ्र—एक राक्षस। इसकी पाँच इंद्रियाँ, पाँच पैर, दस हाथ तथा आठ सिर थे। यह असाधारण आहार लेता था। इसलिये वाली से युद्ध करते समय, इसने उसे निगल लिया था। वाली के बंधु सुग्रीव, तथा दधीचि कश्यपादि ऋषियों को भी इसने निगल लिया था। परंतु वीरभद्र ने इससे युद्ध कर, इसके पेट का विच्छेद किया एवं इन सबको बाहर निकाला (पद्म. पा. १०६)।

पंचयाम—भागवत के अनुसार, अष्ट वसुओं में से विभावसु का पौत्र, एवं आतप का पुत्र। इसकी माता का नाम उषा था। इसीके कारण पृथ्वी पर से सारे प्राणी कर्मप्रवृत्त हो जाते है (भा. ६.६.१६)।

पंचवक्त्र—स्कन्द का एक सैनिक (म. श. ४४. ७१)।

पंचवीर्य—एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१. १६)।

पंचशिख—एक प्राचीन ऋषि। इसे 'पंच कोशों' का एवं उन कोशों के बीच में स्थित ब्रह्म का अग्निशिखा के समान तेजस्वी ज्ञान था। इसलिये इसे 'पंचशिख' नाम प्राप्त हुआ था (म. शां. २११.६१२*)।

इसकी माता का नाम कपिला था। कपिला इसकी जन्मदात्री माता नहीं थी। उसका दूध पी कर यह बड़ा हुआ था। इसकी माता के नाम से, इसे 'कापिलेय' मातृक नाम प्राप्त हुआ। सांख्य ग्रंथों में इसे 'कपिल' कहा गया है (मत्स्य. ३.२९)।

गुरुपरंपरा—यह याज्ञवल्क्यशिष्य आसुरि ऋषि का प्रमुख शिष्य था (म. शां. २११.१०)। 'बृहदारण्यक उपनिषद' में इसकी गुरुपरंपरा इसप्रकार दी गयी है:—उपवेशी, अरुण, उद्दालक, याज्ञवल्क्य, आसुरि, पंचशिख (बृहदारण्यक. ६.५.२-३)। पुराणों में इसकी गुरुपरंपरा कुछ अलग दी गयी है, जो इस प्रकार है:—वोढु, कपिल, आसुरि, पंचशिख (वायु. १०१.३३८)।

इस गुरुपरंपरा में से कपिल ऋषि पंचशिख ऋषि का परात्पर गुरु (आसुरि नामक गुरु का गुरु) था। महाभारत में, कपिल एवं पंचशिख इन दोनों को एक ही मानने की भूल की गयी है (म. शां. ३२७.६४)। उस भूल के कारण, पंचशिख को चिरंजीव उपाधि दी गयी, जो वस्तुतः कपिल ऋषि की उपाधि थी (म. शां. २११. १०)। सांख्यशास्त्र के अभ्यासक, कपिल ऋषि को ब्रह्माजी का अवतार समझते हैं, एवं पंचशिख को कपिल का पुनरावतार मानते हैं।

शिष्य—मिथिला देश का राजा जनदेव जनक पंचशिख ऋषि का शिष्य था। उससे इसका 'नास्तिकता' के बारे में संवाद हुआ था (नारद. १. ४५)। इस संवाद के पश्चात्, जनदेव जनक ने अपने सौ गुरुओं को त्याग कर, पंचशिख को अपना गुरु बनाया। फिर इसने उसे सांख्य तत्त्वज्ञान के अनुसार, मोक्षप्राप्ति का मार्ग बताया। निवृत्तिमार्ग के आचरण से जनन-मरण के फेरे से मुक्ति एवं परलोक की सिद्धि कैसी प्राप्त हो सकती है, इसका

उपदेश पंचशिख ने जनदेव जनक को दिया (म. शां. २११-२१२)।

पंचशिख का एक और शिष्य धर्मध्वज जनक राजा था (म. शां. ३०८)। महाभारत में प्राप्त 'सुलभा धर्मध्वज जनक संवाद' में, धर्मध्वज ने इसे अपना गुरु कहलाया है।

भारतीय षड्-दर्शनों की परंपरा में 'सांख्यदर्शन' सब से प्राचीन है। उस शास्त्र के दर्शनकारों में पंचशिख पहला दार्शनिक आचार्य माना जाता है। निम्नलिखित लोगों को पंचशिख ने 'सांख्यशास्त्र' सिखाया थाः— (१) धर्मध्वज जनक; (२) विश्वावसु गंधर्व (म. शां. ३०६. ५८); (३) काशिराज संयमन (म. शां. परि. १. क्र. २९)।

पंचशिख 'पराशरगोत्रीय' था। संन्यासधर्म एवं तत्त्वज्ञान का इसे पूर्ण ज्ञान था। यह ब्रह्मनिष्ठ था, एवं इसमें 'उहापोह' (ब्रह्मज्ञान का ग्रहण एवं प्रदान) की शक्ति थी। इसने एक सहस्त्र वर्षों तक 'मानसयज्ञ' किया था। 'पंचरात्र' नामक यज्ञ करने में यह निष्णात था (म. शां. २११; नारद. १. ४५)।

शुक्लयजुर्वेदियों के 'ब्रह्मयज्ञांगतर्पण' में इसका निर्देश प्राप्त है (पारस्करगृह्य. परिशिष्ट; मत्स्य. १०२. १८)।

ग्रंथ—'सांख्यशास्त्र' पर इसने 'षष्टितंत्र' नामक एक ग्रंथ भी लिखा था (योगसूत्रभाष्य. १. ४; २. १३; ३. १३)। वह ग्रंथ आज उपलब्ध नहीं है। सांख्यदर्शन पर उपलब्ध होनेवाला प्राचीनतम ग्रंथ ईश्वरकृष्ण का 'सांख्यकारिका' है। ईश्वरकृष्ण का काल चौथी शताब्दी के लगभग माना जाता है।

सांख्यतत्त्वज्ञान—सांख्य अनीश्वरवादी दर्शन है। पुरुष एवं प्रकृति ही उसके प्रतिपादन के प्रमुख विषय हैं। सांख्य के अनुसार, प्रकृति एवं पुरुष अनादि से प्रभुत्ववान् है। 'मैं सुखदुःखातिरिक्त तीन गुणों से रहित हूँ, इस प्रकार का विवेक प्रकृति एवं पुरुष में उत्पन्न होता है, तब ज्ञानोपलब्धि होती है। जब प्रारब्ध कर्म का भोग समाप्त हो कर आत्मतत्त्व का साक्षात्कार हो जाता है, तब मोक्षप्राप्ति हो जाती है।

सांख्य सत्कार्यवादी दर्शन है। सत्कार्यवाद की स्थापना के लिये, उस दर्शन में, असदकरण, उपादानग्रहण, सर्वसंभवाभाव, शक्यकरण एवं कारणाभव ये पाँच हेतु दिये गये है (सांख्यकारिका)। शंकराचार्यजी ने भी न्याय के असत्कार्यवाद के खंडनार्थ जो युक्तियाँ कथन की है, उन पर सांख्यकारिका का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। (वेदान्तसूत्र २.१.१८)।

कनिष्ठ अधिकारियों के लिये वैशेषिक एवं न्याय, मध्यम अधिकारियों के लिये सांख्य, और उत्तम अधिकारियों के लिये वेदान्त का कथन किया गया है। सांख्यदर्शन में प्रकृति के विभिन्न रूपगुणों की व्याख्या परिमाणवाद या विकासवाद का प्रतिपादन, पुरुष एवं प्रकृति का विवेचन, पुनर्जन्म, मोक्ष एवं परमतत्त्व का विश्लेषण, बहुत ही सूक्ष्म एवं वैज्ञानिक दृष्टि से किया गया है (गेरौला-संस्कृत साहित्य का इतिहास ४७१-४७३)।

२. दधिवाहन नामक शिवावतार का शिष्य।

पंचहस्त—दक्षसावर्णि मनु का पुत्र।

पंचाल—शतपथ ब्राह्मण कालीन एक लोकसमूह (श. ब्रा. १३. ५. ४. ७; जै. ब्रा. ३.२९.१)। ऋग्वेदकाल में यही लोग 'क्रिवि' नाम से, एवं महाभारतकाल में ये लोग 'पांचाल नाम से प्रसिद्ध थे (म. आ. ५५.२१; पांचाल देखिये)।

पंचाल लोगों का निर्देश प्रायः कुरु लोगों के साथ आता है। कुरु पंचालों के राजाओं का निर्देश 'ऐतरेय ब्राह्मण' में प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.१४)। उनमें से क्रैव्य, दुर्मुख प्रवाहण जैवलि, एवं शोन ये पंचाल राजा प्रधान एवं महत्त्वपूर्ण है। केशिन् दाल्भ्य नामक और एक पंचाल राजा का निर्देश 'काठक संहिता' में प्राप्त है (का. सं. ३.२)। इन लोगों के नगरों में, 'परिचक्रा,' 'कांपील,' 'कौशांबी' ये प्रमुख थे (श. ब्रा. १३.५. ४.७)।

पंचाल लोगों के अंतर्गत 'क्रिवियों' के अतिरिक्त अन्य जातियाँ भी सम्मीलित थीं। 'पंचाल' नाम से पाँच जातियों का संदर्भ प्रतीत होता हैं। ऋग्वेद में निर्देशित पाँच जातियाँ ('पंचजन') एवं 'पंचाल' एक ही थे, ऐसा कई अभ्यासकों का कहना है (पंचजन देखिये)।

पंचाल देश के ब्राह्मण दार्शनिक एवं भाषाशास्त्रीय वादविवादों में प्रवीण रहते थे (बृ. उ. ६.१;१. छां. उ. ५.३.१)। महाभारतकाल में पंचाल देश का उत्तर एवं दक्षिण के रूप में विभाजन किया गया था। किंतु वैदिक साहित्य में उस विभाजन का कुछ उल्लेख नहीं मिलता।

२. (सो. नील.) भद्राश्व (भर्म्याश्व) राजा के पाँच पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामूहिक नाम। 'पंच अलम्'

(पाँच पराक्रमी) के अर्थ से यह नाम भद्राश्व के पुत्रों के लिये प्रयुक्त किया जाता था। उन्ही के नाम से, उनके राज्य को 'पंचाल' नाम प्राप्त हुआ (पार्गि. ७५)।

पंचालचंड—पंचाल देश में उत्पन्न एक वैदिक ऋषि। वाणी के द्वारा ही वैदिक संहिताएँ 'संहित' की जाती है, ऐसा इसका मत था (ऐ. आ. ३.१.६; सां. आ. ७.१९)।

पंचिक—दक्षिण पांचाल देश के 'ब्राभ्रव्य पांचाल' आचार्य का नामांतर (ह. वं. २३.१२९६; बाभ्रव्य पांचाल देखिये)।

पज्र—एक वैदिक कुलनाम। पज्रिय कक्षीवत् ऋषि इसी कुल में पैदा हुआ था (ऋ. १.१२६.२-५)। यह कुल 'अंगिरस कुल' की ही एक उपशाखा थी (ऋ. १.५१.४ सायण.)। सोम को 'पज्रागर्भ' कहा गया है (ऋ. ९.८२.४)।

पज्रिय वा **पज्र्य**—'कक्षीवत् दीर्घतमस् औशिज' ऋषि का पैतृक नाम (ऋ. १.११६; ११७.१०; १२२.७८)। इसके सूक्त में उत्तर पांचाल देश का राजा दिवोदास का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.११६.१८)। यह ऋषि भरत राजा के समकालीन, कक्षीवत् ऋषि से अलग एवं पश्चात्कालीन था, ऐसा पार्गिटर का कहना है (पार्गि. २२३)।

पटच्चर—'पटच्चर' देश के निवासियोंका सामूहिक नाम। ये लोग जरासंध की भय से दक्षिण की ओर भाग गये थे (म. स. १३.२५)। सहदेव ने इन्हें दक्षिण-दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २८.४)। भारतीय युद्ध में, ये लोग युधिष्ठिर के पक्ष में लड़ने आये थे, एवं उसके साथ क्रौंचव्यूह के पृष्ठभाग में खड़े थे (म. भी. ४६.४७)।

२. एक राक्षस। रथसेन राजा ने इसका वध किया (म. द्रो. २२.५३)।

पटवासक—धृतराष्ट्र के कुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जल कर मर गया (म. आ. ५७.१८; भांडारकर संहिता पाठ-'पटवासन')।

पटुमत्—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा। विष्णु के अनुसार यह मेघस्वाति का, ब्रह्मांड के अनुसार आपोलव का, एवं वायु के अनुसार आपादबद्ध का पुत्र था। भागवत में इसे अटमान कहा गया है। इसने २४ वर्षों तक राज्य किया।

पटुमित्र—(किलकिला. भविष्य.) विष्णु के अनुसार एक राजा।

पट्टिश—एक राक्षस, जिसने श्रीरामसेना के पनस नामक वानर से युद्ध किया था (म. व. २६९.८)।

पट्टमित्र—(भविष्य.) ब्रह्मांड एवं वायु के अनुसार पुष्पमित्र के बाद के तेरह राजाओं का सामूहिक नाम।

पठर्वन्—अश्वियों का कृपापात्र एक राजा (ऋ. १.११२.१७ सायणभाष्य)।

पड्गृभि—एक वैदिक असुर (ऋ. १०.४९.५): 'पड्गृभि' का शब्दशः अर्थ 'पैर को पकड़ लेनेवाला', ऐसा होता है। श्रुतवर्मन् राजा के रक्षणार्थ, इंद्र ने इसको पराजित किया था।

पणव—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। वायु के अनुसार यह भजमान का पुत्र था।

पणि—एक वैदिक जाति। इस जाति के लोग वैदिक ऋषियों के देवताओं की उपासना न करनेवाले लोगों में से थे। संभवतः ये कही आदिवासी अनार्य वा दैत्य रहे होंगे। इनके राजा का नाम 'बृबु' था। (ऋ. ६.४५.३१-३३; बृबु देखिये)

रॉथ के अनुसार, 'पणि' शब्द 'पण' (विनिमय) धातु से व्युत्पन्न हुआ था, एवं 'पणि' ऐसे जाति के लोग थे, जो बिना किसी प्रतिप्राप्ति के अपना कुछ नहीं देते थे, अतः ये ऐसे कृपण लोग थे जो न तो देवों की उपासना करते थे, और न पुरोहितों को दक्षिणाएँ देते थे (रॉथ-सेंट पिटर्सबर्ग कोश)। यास्क एवं सायणाचार्य भी पणि को वणिज जाति का कहते हैं (निरुक्त. २.१७; ६.२६)।

ऋग्वेद के सूक्तकार अपने विरोधियों को 'इंद्रशत्रु,' 'अयज्वन्' आदि अपमान दर्शक शब्दों से संबोधित करते हैं। इस प्रकार पणियों को भी संबोधित किया गया है। इन्हे गंदे, कंजूस आदि विशेषणों से संबोधित किया गया है (ऋ. १०.१०८)। इन पर आक्रमण करने की प्रार्थना देवों से की गयी हैं एवं वामदेव ने अपनी प्रार्थना में कहा है, 'अत्यंत निबिड अंधकार में पणि गिरें (ऋ. ४.५१.३)। ऋग्वेद में एक स्थल पर, इन्हें शत्रु के नाते भेड़िया कहा गया है (ऋ. ६.५१.१४); एवं दूसरे एक स्थल पर इन्हें 'बेकनाट' (व्याज खानेवाला) कहा है (ऋ. ८-६६.१०) एक अन्य स्थल पर, इन्हें 'दस्यु' कह कर, इनके लिये 'मृध्रवाच' (कटु वाणी बोलनेवाला, एवं 'ग्रथिन्' (अपरिचित वाणी बोलनेवाला) शब्दों का

प्रयोग किया गया हैं (ऋ. ७.६.३)। इन्हें 'वैरदेय' कह कर मनुष्यों से हीन माना गया है (ऋ. ५.६१.८)।

कृपण के रूप में, पणि वैदिक यज्ञकर्ताओं के विरोधी थे (ऋ.१.१२४.१०; ४.५१.३)। दैत्यों के रूप में आ कर ये आकाश की गायों या जलों को रोक रखते थे (ऋ. १.३२.११; श. ब्रा. १३.८.२.३)। ऋग्वेद के 'सरमा-पणि-संवाद' में ऐसी ही एक कथा दी गयी हैं (ऋ. १० १०८)। पणियों ने इंद्र की गायों का हरण किया। फिर इंद्र के दूत बन कर, सरमा पणियों के पास आयी, एवं इंद्र की गायें लौटाने की धमकी उसने इन्हें दे दी। वही 'सरमा-पणि-संवाद' है।

पणियों का वध कर के देवों ने उन्हें पराजित किया था। फिर पणियों की सारी संपत्ति कब्जे में ले कर, देवों ने उसे अंगिरसों को दे दी (ऋ. १.८३.४)। अथर्वन् अंगिरस इंद्र का गुरु था, एवं उसने अग्नि उत्पन्न कर, उसे हवि अर्पण किया था। इस पुण्य के कारण, देवों ने अंगिरसों पर कृपा की।

लुडविग के अनुसार, 'पणि' लोग आदिवासी व्यवसायी थे एवं काफिलों में चलते थे (लुडविग-ऋग्वेद अनुवाद ३.२१३-२१५)। हिलेब्रान्ट के अनुसार ये लोग इराण में रहनेवाले थे, एवं स्ट्राबो के 'पर्नियन', टॉलेमी के 'पारूपेताइ,' अर्रियन के 'बारसायन्टेस' से समीकृत थे (हिलेब्रान्ट-वेदिशे माइथॉलोजी १.८३)। दिवोदास राजा के साथ हुए पणियो के युद्ध का संबंध भी हिलेब्रान्ट ने इराण से ही लगाया है। किंतु दिवोदास एवं पणियों का यह स्थानान्तर असंभाव्य प्रतीत होता है।

२. पाताल का एक असुर (भा. ५.२४.३०)।

पण्डक—धर्मसावर्णि मन्वंतर के मनु का पुत्र।

पण्डित--एक विद्वान् व्यक्ति के अर्थ से प्रयुक्त सामान्य नाम (बृ. उ. ३.४.१; छां. उ. ६.१४.२)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भीमसेन ने इसका वध किया (म. भी. ८४.२४; पाठभेद पण्डितक)।

पतंग प्राजापत्य—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १७७)। यह प्रजापति के वंश में उत्पन्न हुआ था। इसलिये इससे 'प्राजापत्य' उपाधि प्राप्त हुअी थी। ऋग्वेद के उस सूक्त की रचना इसने की है, जिसमें 'पतंग' का अर्थ 'सूर्य पक्षी' है (ऋ. १०.१७७.१)। इससे प्रणयन किये साम के कारण, 'उच्चैःश्रवस् कौपेय' को मृत्यु के पश्चात् 'धूम्रशरीर' की प्राप्ति हो गयी (जै. उ. ब्रा. ३.३०.३)।

पतंचल 'काप्य'—एक वैदिक ऋषि। अंगिरसकुल के कपि नामक क्षत्रिय ब्राह्मणवंश में इसका जन्म हुआ था।

यह मद्र देश में रहता था। एकबार भुज्यु लाह्यायनि नामक याज्ञवल्क्य का समकालीन ऋषि, घूमते घूमते इसके घर आया। वहाँ उसकी मुलाकात पतंजल की कन्या से हो गयी। उस कन्या के शरीर में सुधन्वन् अंगिरस नामक एक गंधर्व वास करता था। सुधन्वन् की कृपा से भुज्यु को विशेष ज्ञान की प्राप्ति हो गयी। इसी ज्ञान विषयक प्रश्न, 'याज्ञवल्क्य-भुज्यु संवाद' में भुज्यु ने याज्ञवल्क्य से पूछे (बृ. उ. ३.३.१; ७.१)। किंतु अंत में याज्ञवल्क्य ने उसे पराजित किया।

पतंजलि—संस्कृत भाषा का सुविख्यात व्याकरणकार एवं पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' नामक व्याकरणग्रंथ का प्रामाणिक व्याख्याकार। संस्कृत व्याकरणशास्त्र के बृहद् नियमों एवं भाषाशास्त्र के गंभीर विचारों के निर्माता के नाते पाणिनि, व्याडि, कात्यायन, एवं पतंजलि इन चार आचार्यों के नाम आदर से स्मरण किये जाते है। उनमें से पाणिनी का काल ५०० ख्रि पू. हो कर, शेष वैय्याकरण मौर्य युग के (४०० ख्रि. पू.-२०० ई. पू.) माने जाते है।

वैदिकयुगीन साहित्यिक भाषा ('छंदस्' या 'नैगम') एवं प्रचलित लोकभाषा ('लौकिक') में पर्याप्त अंतर था। 'देववाक्' या 'देववाणी' नाम से प्रचलित साहित्यिक संस्कृत भाषा को लौकिक श्रेणी में लाने का युग-प्रवर्तक कार्य आचार्य पाणिनि ने किया। पाणिनीय व्याकरण के अद्वितीय व्याख्याता के नाते, पाणिनि की महान् ख्याति को आगे बढ़ाने का दुष्कर कार्य पतंजलि ने किया। व्याकरणशास्त्र के विषयक नये उपलब्धियों के स्रष्टा, एवं नये उपादनों का जन्मदाता पतंजलि एक ऐसा मेधावी वैय्याकरण था कि, जिसके कारण ब्रह्माजी से ले कर पाणिनि तक की संस्कृत व्याकरणपरंपरा अनेक विचार वीथियों में फैल कर, चरमोन्नत अवस्था में पहुँची।

पतंजलि पाणिनीय व्याकरण का केवल व्याख्याता ही न हो कर, स्वयं एक महान् मनस्वी विचारक भी था। इसकी उँची सूझ एवं मौलिक विचार इसके 'व्याकरण महाभाष्य' में अनेक स्थानों पर दिखाई देते हैं। इसीलिये इसको स्वतंत्र विचारक की कोटि में खड़ा करते हैं। अपने निर्भीक विचार एवं असामान्य प्रतिभा के कारण, इसने

पाणिनीय व्याकरण की महत्ता बढ़ायी, एवं 'वैयाकरण पाणिनि' को 'भगवान् पाणिनि' के उँची स्तर तक पहुँचा दिया।

नामांतर—प्राचीन ग्रंथों एवं कोशों में, पतंजलि के निम्नलिखित नामांतर मिलते है:— गोनर्दीय, गोणिकापुत्र नागनाथ, अहिपति, फणिभृत्, फणिपति, चूर्णिकाकार, पदकार, शेष, वासुकि, भोगींद्र (विश्वप्रकाशकोश १.१६; १९; महाभाष्यप्रदीप. ४.२.९२; अभिधान. पृ. १०१)।

इन नामों में से, 'गोनर्दीय' संभवतः इसका देशनाम था, एवं 'गोणिकापुत्र' इसका मातृकनाम था। उत्तर प्रदेश के गोंडा जिला को प्राचीन गोनर्द देश कहा गया है। कल्हणकृत 'राजतरंगिणी' में, गोनर्द नाम से काश्मीर के तीन राजाओं का निर्देश किया गया है। 'गोनर्दीय' उपाधि के कारण, पतंजलि कश्मीर या उत्तर प्रदेश का रहनेवाला प्रतीत होता है। 'चूर्णिकाकार' एवं 'पदकार' इन नामों का निर्वचन नहीं मिलता।

पतंजलि के बाकी सारे नामांतर कि वह भगवान शेष का अवतार था, इसी एक ही कल्पना पर आधारित है। शेष, वासुकि, फणिपति आदि पतंजलि के बाकी सारे नाम इसी एक कल्पना को दोहराते है।

काल—पतंजलि की 'व्याकरण महाभाष्य' में पुष्यमित्र एवं चंद्रगुप्त राजाओं की सभाओं का निर्देश प्राप्त है (महा. १.१.६८)। मिनॅन्डर नामक यवनों के द्वारा साकेत नगर घेरे जाने का निर्देश भी, 'अरुणद्यवनः साकेतम्' इस रूप में, किया गया है। पुष्यमित्र राजा का यज्ञ संप्रति चालू है ('पुष्यमित्रं याजयामः') इस वर्तमानकालीन क्रियारूप के निर्देश से पतंजलि उस राजा का समकालीन प्रमाणित होता है। इसी के कारण, डॉ. रा. गो. भांडारकर, डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ. प्रभातचंद्र चक्रवर्ति प्रभृति विद्वानों का अभिमत है कि, पतंजलि का काल १५० ख्रि. पू. के लगभग था।

जीवनचरित्र—पतंजलि का जीवनचरित्र कई पुराणों में प्राप्त है। भविष्य के अनुसार, यह बुद्धिमान् ब्राह्मण एवं उपाध्याय था। यह सारे शास्त्रों में पारंगत था, फिर भी इसे कात्यायन ने काशी में पराजित किया। प्रथम यह विष्णुभक्त था। किंतु बाद में इसने देवी की उपासना की, जिसके फलस्वरूप, आगे चल कर, इसने कात्यायन को वादचर्चा में पराजित किया। इसने 'कृष्णमंत्र' का काफी प्रचार किया। इसने 'व्याकरणभाष्य' नामक ग्रंथ की रचना की। आखिर 'विष्णुमाया' के योग से, यह चिरंजीव बन गया (भवि. प्रति. २.३५)।

व्याकरणमहाभाष्य—पाणिनि का 'अष्टाध्यायी' का ग्रंथ लोगों को समझने के लिये कठिन मालूम पड़ता था। इस लिये अपने 'व्याकरणमहाभाष्य' की रचना पतंजलि ने की।

पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में आठ अध्याय एवं प्रत्येक अध्याय में चार पाद हैं। इस तरह कुल ३२ पादों में 'अष्टाध्यायी' ग्रंथ का विभाजन कर दिया गया है।

पतंजलि के महाभाष्य की रचना 'आह्निकात्मक' है। इस ग्रंथ में कुल ८५ आह्निक है। 'आह्निक' का शब्दशः अर्थ 'एक दिन में दिया गया व्याख्यान' है। हर एक आह्निक को स्वतंत्र नाम दिया है। उन में से प्रमुख आह्निकों के नाम इस प्रकार है:— १. पस्पशा (प्रस्ताव), २. प्रत्याहार (शिवसूत्र-अइउण् आदि), ३. गुणवृद्धि संज्ञा, ४. संयोगादि संज्ञा, ५. प्रगृह्यादि संज्ञा, ६. सर्वनामाव्ययादि संज्ञा, ७. आगमादेशादिव्यवस्था, ८. स्थानिवद्भाव, ९. परिभाषा।

पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' पर सर्वप्रथम कात्यायन ने 'वार्तिकों' की रचना की। उन 'वार्तिकों' को उपर पतंजलि ने दिये व्याख्यान 'महाभाष्य' नाम से प्रसिद्ध है। पाणिनि-सूत्र एवं वार्तिकों में जो व्याकरणविषयक भाग है उसका स्पष्टीकरण महाभाष्य में तो है ही, किन्तु उसके साथ, जिन व्याकरणविषयक सिद्धान्त उन में रह गये है, उनको महाभाष्य में पूरा किया गया है। उसके साथ, पूर्वग्रंथों में जो भाग अनावश्यक एवं अप्रस्तुत है, यह पतंजलि ने निकाल दिया है। उसी कारण, पतंजलि के ग्रंथ को महाभाष्य कहा गया है। अन्य भाष्यग्रंथों में मूलग्रंथ का स्पष्टीकरण मात्र मिलता है, किन्तु पतंजलि के महाभाष्य में मूलग्रंथ की अपूर्णता पूरित की गयी है।

इसी कारण पाणिनि, कात्यायन एवं पतंजलि के व्याकरणविषयक ग्रंथों में पतंजलि का महाभाष्य ग्रंथ सर्वाधिक प्रमाण माना जाता है। अन्य शास्त्रों में सर्वाधिक पूर्वकालीन ('पूर्वं पूर्वं') आचार्य का मत प्रमाण माना जाता है। किन्तु व्याकरण शास्त्र में पतंजलि ने की हुई महत्त्वपूर्ण ग्रंथ की रचना के कारण, सर्वाधिक उत्तरकालीन आचार्य (पतंजलि) का मत प्रमाण माना जाता हैं। 'यथोत्तरं मुनीनां प्रामाण्यम्' इस अधिनियम व्याकरण-शास्त्र में प्रस्थापित करने का सारा श्रेय पतंजलि को ही है।

व्याकरण जैसे क्लिष्ट एवं शुष्क विषय को पतंजलि ने अपने महाभाष्य में अत्यंत सरल, सरस, एवं हृदयंगम ढंग से प्रस्तुत किया है। भाषा की सरलता, प्रांजलता, स्वाभाविकता एवं विषयप्रतिपादन शैली की दृष्टि से इसका महाभाष्य, समस्त संस्कृत वाङ्मय में आदर्शभूत है। इस ग्रंथ में तत्कालीन राजकीय, सामाजिक, आर्थिक एवं भौगोलिक परिस्थिति की यथातथ्य जानकारी मिलती है। भगवान् पाणिनि के जीवन पर भी महाभाष्य में काफी महत्त्वपूर्ण जानकारी मिलती है।

शुद्ध उच्चारण का महत्त्व--कृष्ण यजुर्वेद के अनुयायी, कठ लोगों का पाठ, पतंजलि के काल में परम शुद्ध माना जाता था। उनके बारे में पतंजलि ने कहा है, 'प्रत्येक नगर में कठ लोगों के द्वारा निर्धारित पाठ का प्रचलन है। उनका 'काठकधर्मसूत्र' नामक धर्मशास्त्रग्रंथ बहुत प्रसिद्ध है, एवं 'विष्णुस्मृति' उसी के आधार पर बनी है। आर्य साहित्य में जब तक उपनिषदों का महत्त्व रहेगा तब तक कठ लोगों का नाम भी बराबर बना रहेगा (महा. ४.३.१०१)।

'पाणिनि-शिक्षा की तरह, पतंजलि ने भी वेदपाठ के शुद्धोच्चारण, शुद्ध स्वरक्रिया एवं विधिपूर्वक संपन्न किये 'याग' पर बड़ा ज़ोर दिया है। इसका कहना है, अच्छा जाना हुआ, एवं अच्छी विधि से प्रयोग किया हुआ एक ही शब्द, स्वर्ग तथा मृत्यु दोनों लोकों की कामना पूर्ण करता है (एकः शब्दः सम्यग् ज्ञातः सुष्ठ प्रयुक्तः स्वर्गे लोके च कामधुग् भवति)।

पतंजलि के महाभाष्य में 'काठक', 'कालापक', 'मौदक', 'पैप्पलाद' एवं 'आथर्वण' नामक प्राचीन धर्मसूत्रों का निर्देश किया है। ये सभी धर्मसूत्र संप्रति अनुपलब्ध है। किन्तु इन विलुप्त धर्मसूत्रों का काल ७०० खिस्त. पू. माना जाता है। भारतीय युद्ध का निर्देश पतंजलि ने अपने 'महाभाष्य' में दिया है। 'कंसवध' एवं 'बलिबंध' नामक दो नाटक कृतियों का निर्देश भी 'महाभाष्य' में दिया गया है। 'वासवदत्ता', 'सुमनोत्तरा', 'भैमरथी', आदि आख्यायिकाएँ पतंजलि को ज्ञात थी एवं उनमें अपने हाथ से यह काफी उलट पुलट चुका था (महा. ४.३.८७)। पाटलिपुत्रादि नगरों का निर्देश भी महाभाष्य में अनेक बार आया है।

पूर्वाचार्य--पाणिनि के अष्टाध्यायी पर लिखे गये अनेक वार्तिक भाष्यों का निर्देश, पतंजलि ने 'महाभाष्य' में किया है। अकेले कात्यायन के पाठ पर तीन व्याख्याएँ पतंजलि के पहले लिखी जा चुकी थी। इसी प्रकार भारद्वाज, सौनाग आदि के वार्तिकपाठों पर भी अनेक भाष्य लिखे गये थे (महा. १.३.३; ३.४.६७; ६.३.६१)।

पतंजलि के महाभाष्य में निम्नलिखित वैयाकरणों के एवं पूर्वाचार्यों के मत उद्धृत किये गये हैं--

१. गोनर्दीय (महा. १. २. २१, २९, ३.१.९२)--कैयट, राजशेखर, एवं वैजयन्ती कोश के अनुसार, यह स्वयं पतंजलि का ही नाम है।

२. गोणिकापुत्र (महा. १.४.५१)--वात्स्यायन के कामसूत्रों में भी, इस आचार्य का निर्देश है (काम. १.१.१६)।

३. सौर्यभगवत् (महा. ८. २. १०६)--कैयट के अनुसार, यह सौर्य नगर का रहिवासी था (महाभाष्य प्रदीप. ८.२.१०६; काशिका. २.४.७)।

४. कुणरवाडव (महा. ३.२.१४; ७.३.१)।

टीकाकार--पतंजलि के महाभाष्य पर निम्नलिखित टीकाकारों की टीकाएँ लिखी जा चुकी थी। उनमें से कुछ टीकाएँ नष्ट हो चुकी हैं--

१. **भर्तृहरि**--महाभाष्य की उपलब्ध टीकाओं में सर्वाधिक प्राचीन एवं प्रामाणिक टीका भर्तृहरि की है। इसने लिखे हुए टीकाग्रंथ का नाम 'महाभाष्यदीपिका' था। मीमांसकजी के अनुसार, भर्तृहरि का काल ४५० वि. पू. था।

२. **कैयट**--महाभाष्य पर कैयट ने लिखे हुए टीकाग्रंथ का नाम 'महाभाष्यप्रदीप' था। कैयट स्वयं कश्मीरी था, एवं उसका काल ११०० माना जाता है।

३. **मैत्रेयरक्षित** (१२ वीं शती)--टीका का नाम-'धातुप्रदीप'।

४. **पुरुषोत्तमदेव** (१२ वीं शती वि.)- टीका का नाम-'प्राणपणित'।

५. **शेषनारायण** (१६ वीं शती)-टीका का नाम-'सुक्तिरत्नाकर'।

६. **विष्णुमित्र** (१६ वीं शती)--टीका का नाम-'महाभाष्यटिप्पण'।

७. **नीलकंठ** (१७ वी शती)--टीका का नाम-'भाषातत्त्वविवेक'।

८. **शिवरामेंद्र सरस्वती** (१७ वीं शती वि.)--टीका का नाम-'महाभाष्यरत्नाकर'।

८. शेषविष्णु (१७ वीं शती)–टीका का नाम–महाभाष्यप्रकाशिका'।

१७ वीं शताब्दी में तंजोर के शहाजी राजा के आश्रित 'रामभद्र' नामक कवि ने पतंजलि के जीवन पर 'पतंजलि चरित' नामक एक काव्य लिखा था।

महाभाष्य का पुनरुद्धार—इतिहास से विदित होता है कि, महाभाष्य का लोप कम से कम तीन बार अवश्य हुआ है। भर्तृहरि के लेख से विदित होता है कि बैजि, सौभव, हर्यक्ष आदि शुष्क तार्किकों ने महाभाष्य का प्रचार नष्ट कर दिया था। चन्द्राचार्य ने महान् परिश्रम कर के दक्षिण से किसी पार्वत्य प्रदेश से एक हस्तलेख प्राप्त कर के उसका पुनः प्रचार किया।

कल्हण की 'राजतरंगिणी' से ज्ञात होता है कि, विक्रम की ८ वीं शती में महाभाष्य का प्रचार पुनः नष्ट हो गया था। कश्मीर के महाराज जयापीड ने देशान्तर से 'क्षीर' संज्ञक शब्दविद्योपाध्याय को बुला कर विच्छिन्न महाभाष्य का पुनः प्रचार कराया।

विक्रम की १८ वीं तथा १९ वीं शती में सिद्धांतकौमुदी तथा लघुशब्देंदुशेखर आदि अर्वाचीन ग्रंथों के अत्यधिक प्रचार के कारण, महाभाष्य का पठन प्रायः लुप्तसा हो गया था। स्वामी विरजानंद तथा उनके शिष्य स्वामी दयानंद सरस्वती ने महाभाष्य का उद्धार किया, तथा उसे पूर्वस्थान प्राप्त कराया।

'महाभाष्य' के उपलब्ध मुद्रित आवृत्तियों में, डॉ. फ्रॉन्झ कीलहॉर्नद्वारा १८८९ ई. स. में संपादित त्रिखण्डात्मक आवृत्ति सर्वोत्कृष्ट है। उसमें वार्तिकादिकों का निर्णय बहुत ही शास्त्रीय पद्धति से किया गया है। 'महाभाष्य' में उपलब्ध शब्दों की सूचि म. म. श्रीधरशास्त्री पाठक, एवं म. म. सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव इन ग्रंथकारों ने तयार की है, एवं पूना के भांडारकर इन्स्टिट्यूट ने उसे प्रसिद्ध किया है।

ये सारे ग्रंथ महाभाष्य की महत्ता को पुष्ट करते है।

अन्य ग्रंथ—व्याकरण के अतिरिक्त, सांख्य, न्याय, काव्य आदि विषयों पर पतंजलि का प्रभुत्त्व था। 'व्याकरण महाभाष्य' के अतिरिक्त पतंजलि के नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैः– (१) सांख्यप्रवचन, (२) छंदोविचिति, (३) सामवेदीय निदान सूत्र (C.C.)

२. 'चरक संहिता' नामक आयुर्वेदीय ग्रंथ का प्रतिसंस्करण करनेवाला आयुर्वेदाचार्य। 'चरकसंहिता' पर इसने 'पातंजलवार्तिक' नामक ग्रंथ की रचना की थी। आषाढवर्मा के 'परिहारवार्तिक' एवं रामचंद्र दीक्षित के 'पतंजलि चरित' में पतंजलि के इस ग्रंथ का निर्देश है ('वैद्यकशास्त्रे वार्तिकानि च ततः')। पतंजलिरचित 'वातस्कंध–पैत्तस्कंधोपेत–सिद्धांतसारावलि' नामक और एक वैद्यकशास्त्रीय ग्रंथ लंदन के इंडिया ऑफिस लायब्रेरी में उपलब्ध है।

आयुर्वेदाचार्य पतंजलि के द्वारा कनिष्क राजा की कन्या को रोगमुक्त करने का निर्देश प्राप्त है। इससे इसका काल २०० ई०, माना जाता है।

पतंजलि ने 'रसशास्त्र' पर भी एक ग्रंथ लिखा था, ऐसा कई लोग मानते है। किंतु रसतंत्र का प्रचार छठी शताब्दी के पश्चात् होने के कारण, वह पतंजलि एवं चरकसंहिता पर भाष्य लिखनेवाले पतंजलि एक ही थे, ऐसा निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता।

३. 'पातंजलयोगसूत्र' (या सांख्यप्रवचन) नामक सुविख्यात योगशास्त्रीय ग्रंथ का कर्ता। कई विद्वानों ने 'पातंजल योगसूत्रों' को षड्-दर्शनों में सर्वाधिक प्राचीन बताया है, एवं यह अभिमत व्यक्त किया है कि, उसकी रचना बौद्धयुग से पहले लगभग ७०० ई. पू. में हो चुकी थी ('पतंजलि योगदर्शन' की भूमिका पृ. २)। किंतु डॉ. राधाकृष्णन् आदि आधुनिक तत्वज्ञों के अनुसार 'योगसूत्र' का काल लगभग ३०० ई. है ('इंडियन फिलॉसफी २.३४१-३४२)। उस ग्रंथ पर लिखे गये प्राचीनतम बादरायण, भाष्य की रचना व्यास ने की थी उस भाष्य की भाषा अन्य बौद्ध ग्रंथों की तरह है, एवं उसमें न्याय आदि दर्शनों के मतों का उल्लेख किया गया है। 'योगसूत्रों' पर लिखे गये 'व्यासभाष्य' का निर्देश 'वात्स्यायनभाष्य' में एवं कनिष्क के समकालीन भदन्त धर्मत्रात के ग्रंथों में उपलब्ध है।

योगसूत्र परिचय—विभिन्न प्राचीन ग्रंथों में बिखरे हुए योगसंधी विचारों का संग्रह कर, एवं उनको अपनी प्रतिभा से संयोज कर, पतंजलि ने अपने 'योगसूत्र' ग्रंथ की रचना की। 'योगदर्शन' के विषय पर, 'योगसूत्रों' जैसा तर्कसंमत, गंभीर एवं सर्वांगीण ग्रंथ संसार में दूसरा नहीं है। उस ग्रंथ की युक्तिशृंखला एवं प्रांजल दृष्टिकोण अतुलनीय है, एवं प्राचीन भारत की दार्शनिक श्रेष्ठता सिद्ध करता है।

'पातंजल योगसूत्र' ग्रंथ समाधि, साधन, विभूति एवं कैवल्य इन चार पादों (अध्यायों) में विभक्त किया गया है। उस ग्रंथ में समाविष्ट कुल सुत्रों की संख्या १९५ है।

समाधिपाद--में योग का उद्देश्य, उसका लक्षण एवं साधन वर्णन किया है। चित्त को एकाग्र करने की पद्धति इस 'पाद' में बतायी गयी है।

साधन पाद—में क्लेश, कर्म एवं कर्मफल का वर्णन है। इंद्रियदमन कर के ज्ञानप्राप्ति कैसी की जा सकती है, उसका मार्ग इस 'पाद' में बताया गया है।

विभूति पाद—में योग के अंग, उनका परिणाम, एवं 'अणिमा', 'महिमा' आदि सिद्धियों का वर्णन किया गया है।

कैवल्य पाद--में मोक्ष का विवेचन है। ज्ञानप्राप्ति के बाद आत्मा कैवल्यरूप कैसे बनती है, इसकी जानकारी इस 'पाद' में दी गयी है।

योग-दर्शन--आत्मा एवं जगत् के संबंध में, सांख्य-दर्शन जिन सिद्धांतो का प्रतिपादन करता है, 'योगदर्शन' भी उन्ही का समर्थक है। 'सांख्य' के अनुसार 'योग' ने भी पच्चीस तत्त्वों का स्वीकार किया है। किंतु 'योग-दर्शन' में एक छब्बीसवाँ तत्त्व 'पुरुषविशेष' शामिल करा दिया है, जिससे 'योग-दर्शन' सांख्यदर्शन जैसा निरीश्वरवादी बनने से बच गया है। फिर भी 'ईश्वर-प्रणिधानाद्वा' (१.२३) सूत्र के आधार पर कई विद्वान पतंजलि को 'निरीश्वरवादी' मानते है।

'योग-सूत्रों' के सिद्धांत अद्वैती है या द्वैती, इस विषय पर विद्वानों का एकमत नहीं हैं। 'ब्रह्मसूत्रकार' व्यास एवं शंकराचार्य ने पतंजलि को 'द्वैतवादी' समझ कर, सांख्य के साथ इसका भी खंडन किया है।

'योग सूत्र' के सिद्धांतो के अनुसार, चित्तवृत्तियों का निरोध ही योग है (योग. १.२)। इन चित्तवृत्तियों का निरोध अभ्यास एवं वैराग्य से होता है (योग. १.१२; १५)। पुरुषार्थविरहीत गुण जब अपने कारण में लय हो जाते है, तब 'कैवल्यप्राप्ति' होती है (योग. ४.३४)। योगदर्शन का यह अंतिम सूत्र है।

अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष एवं अभिनिवेश इन पंचविध क्लेशों से योग के द्वारा विमुक्त हो कर, मोक्ष प्राप्त करना, यह 'योगदर्शन' का उद्देश्य है। चंचल चित्तवृत्तियों को रोकने एवं योगसिद्धि के लिये, 'योगसूत्र' कार ने ग्यारह साधनों का कथन किया है। वे साधन इस प्रकार है:— यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, अभ्यास, वैराग्य, ईश्वर प्रणिधान, समाधि एवं विषयविरक्ति।

'योग-दर्शन' के अनुसार, संसार दुःखमय है। जीवात्मा को मोक्षप्राप्ति के लिये 'योग' एकमात्र ही उपाय है। 'योगदर्शन' का दूसरा नाम कर्मयोग भी है, क्यों कि साधक को वह 'मुक्तिमार्ग' सुझाता है।

४. 'इलावृतवर्ष' (भारतवर्ष) के उत्तर के मध्यदेश में उत्पन्न एक आचार्य।

५. कश्यप एवं कद्रू का पुत्र, एक नाग।

६. अंगिराकुल में उत्पन्न एक गोत्रकार।

७. वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य-परंपरा के कौथुम पाराशर्य ऋषि का शिष्य (व्यास देखिये)।

पतत्रि---कौरवपक्षीय योद्धा। भीमसेन ने इसको रथहीन किया था (म. क. ३२.५२)।

पतन--एक राक्षस। यह रावण के पक्ष में था (म. व. २६९.२; भांडारकर संहिता पाठ-'पूतन')।

पताकिन्--एक सर्प। वरुण का यह उपासक था (म. स. ९.१०)।

२. कौरवपक्षीय एक योद्धा। इसे साथ ले कर अर्जुन पर आक्रमण करने का आदेश दुर्योधन ने शकुनि को दिया था (म. द्रो. १३१.८५)।

पत्तलक---(आं‌ध्र. भविष्य.) विष्णुमत में हल का पुत्र (तलक देखिये)।

पथिन् सौभर--एक ऋषि। यह अयास्य आंगिरस का शिष्य एवं वत्सनपात् बाभ्रव का गुरु था (बृ. उ. २. ६.३; ४.६.३. काण्व)।

पथ्य—विष्णु, वायु एवं भागवत के अनुसार, व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा के कबंध का शिष्य (व्यास देखिये)। कबंध ने इसे एवं देवदर्श को अथर्ववेद सिखाया था। इसके तीन प्रमुख शिष्य थे। जिनके नाम:— जाजलि, कुमुदादि, शौनक हैं।

पथ्यवत्—रौच्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

पथ्या—मनु की कन्या तथा अथर्वन् आंगिरस ऋषि की पत्नी। इसका पुत्र धृष्णि (ब्रह्मांड. ३.१.१०५)।

पदाति—पारिक्षित जनमेजय (प्रथम) राजा का सातवाँ पुत्र (म. आ. ८९.५०)।

पद्म—कश्यप एवं कद्रू के पुत्र, दो नाग। इन्हें संवर्तक और पद्मनाभ नामांतर प्राप्त थे (म. आ. ३१. १०; म. शां. ३६५.४)। ये बहुत धार्मिक थे तथा वरुण की सभा के सभासद थे (म. स. ९.८)। ये दोनों सूर्य का रथ खींचने के लिये गये थे। (म. शां. ३४५.८)।